शिक्षा के सामान्य सिद्धान्त

[बी० एड० परीक्षा के नवीन पाठ्यक्रमानुसार]

आठवाँ संस्करण : पूर्णतया संशोधित एवं परिमार्जित

लेखक

पी० डी० पाठक, एम० ए० (अंग्रेजी व इतिहास)
बी० टी०, एम० आर० एस० टी० (लन्दन)

एवं

जी० एस० डी० त्यागी, एम० ए०, एम० एड०
लेक्चरार इन एजूकेशन
आर० ई० आई० टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज,
दयालबाग़

विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

प्रकाशक
विनोद पुस्तक मन्दिर
कार्यालय : रांगेय राघव मार्ग, आगरा–2
बिक्री-केन्द्र : हॉस्पिटल रोड, आगरा–3

आठवाँ संस्करण : 1975

मूल्य : 15·00

कम्पोजिंग : रावत कम्पोजिंग हाउस, आगरा
मुद्रण : कैलाश प्रिंटिंग प्रेस, आगरा
[3275]

आठवें संस्करण की भूमिका

हम "शिक्षा के सामान्य सिद्धान्त" का आठवाँ संस्करण आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं। इस संस्करण में विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों को ध्यान में रख कर, पुस्तक की विषय-सामग्री को परिवर्तित एवं अभिवृद्धित करके, पुनः आयोजित करने की यथाशक्ति चेष्टा की गई है। साथ ही, पुस्तक की उपयोगिता में वृद्धि करने के लिए, उसमें "शंकराचार्य का वेदान्त-दर्शन एवं शिक्षा" नामक एक नए अध्याय को स्थान दिया गया है।

हमें विश्वास है कि पुस्तक सदैव के समान शिक्षकों एवं छात्राध्यापकों की सभी आवश्यकताओं को पूर्ण करेगी। पर फिर भी, यदि उनको इसमें कहीं कोई अभाव खटके, तो उनके सभी सुझावों को मान्यता प्रदान की जायगी।

पी० डी० पाठक
जी० एस० डी० त्यागी

विषय-सूची

खण्ड एक

शिक्षा का अर्थ, कार्य व उद्देश्य
Education—Meaning, Functions & Aims

1. शिक्षा का अर्थ, प्रक्रिया, स्वरूप व परिभाषा 3–21
Meaning, Process, Form & Definition of Education

विषय-प्रवेश : 'शिक्षा' शब्द का प्रयोग, शिक्षा का अर्थ, शिक्षा की विभिन्न *धारणाएँ, शिक्षा की सत्य धारणा, शिक्षा की प्रक्रिया, शिक्षा के आवश्यक अंग,* शिक्षा व निर्देश मे अन्तर, शिक्षा के स्वरूप, शिक्षा की परिभाषाएँ, परिभाषाओं की आलोचना, शिक्षा की आधुनिक परिभाषा, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

2. शिक्षा के कार्य 22–37
Functions of Education

विषय-प्रवेश, शिक्षा के सामान्य कार्य, मानव-जीवन में शिक्षा के कार्य, राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा के कार्य, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

3. शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण व वर्गीकरण और जीवन व समाज के आदर्शों से उनका सम्बन्ध 38-50
Formulation & Classification of Educational Aims & Their Relation to Life & Ideals of Society

विषय-प्रवेश, शिक्षा के उद्देश्यों के निर्माण के आधार, शिक्षा के उद्देश्यों का वर्गीकरण, सार्वभौमिक व विशिष्ट उद्देश्यों में सन्तुलन, वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्यों मे समन्वय, शिक्षा के उद्देश्यों का जीवन व समाज के आदर्शों से सम्बन्ध, शिक्षा के उद्देश्यों का समाज के आदर्शों से सम्बन्ध, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

4. शिक्षा के वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्य 51–66
Individual & Social Aims of Education

विषय-प्रवेश, शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य, शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य, वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्यों में समन्वय, उपसहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

5. शिक्षा के सामान्य व महत्त्वपूर्ण उद्देश्य 67–94
General & Important Aims of Education

विषय-प्रवेश; शिक्षा के उद्देश्यों की आवश्यकता, शिक्षा के सामान्य उद्देश्य, शिक्षा के महत्त्वपूर्ण उद्देश्य, सब उद्देश्यों का एक उद्देश्य में समन्वय, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

6 आधुनिक लोकतंत्रीय भारत में शिक्षा के उद्देश्य 95–107
Aims of Education in Modern Democratic India

विषय-प्रवेश, भारत की शैक्षिक आवश्यकताएँ, शिक्षा-आयोगों के अनुसार जनतंत्रीय भारत में शिक्षा के उद्देश्य, आधुनिक लोकतंत्रीय भारत के शैक्षिक उद्देश्य :—(क) व्यक्ति-सम्बन्धी शैक्षिक उद्देश्य, (ख) समाज-सम्बन्धी शैक्षिक उद्देश्य, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

खण्ड दो

शिक्षा के साधन
Agencies of Education

7. शिक्षा के साधन 111–116
Agencies of Education

शिक्षा के साधनों का अर्थ, शिक्षा के साधनों का वर्गीकरण :—(i) औपचारिक और अनौपचारिक साधन, (ii) सक्रिय और निष्क्रिय साधन, शिक्षा के औपचारिक व अनौपचारिक साधनो में अन्तर, औपचारिक व अनौपचारिक साधनों में सन्तुलन, सक्रिय व निष्क्रिय साधन, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

8. विद्यालय : सक्रिय व औपचारिक साधन 117–131
School : Active & Formal Agency

विद्यालय का अर्थ व परिभाषा, समाज में विद्यालय का स्थान—उसका महत्त्व व आवश्यकता, विद्यालय की आधुनिक धारणा, नवीन विद्यालयों की प्रमुख विशेषताएँ, विद्यालय के कार्य, विद्यालय को शिक्षा का प्रभावशाली साधन बनाने के उपाय, सामान्य भारतीय विद्यालय, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

9. घर या परिवार : सक्रिय व अनौपचारिक साधन 132–141
Home or Family : Active & Informal Agency

परिवार का अर्थ व परिभाषा, अतीत व वर्तमान मे परिवार के कार्य, बालक के जीवन मे परिवार का महत्त्व, घर के कार्य व महत्त्व पर विभिन्न विचार, घर या परिवार के शैक्षिक प्रभाव या शैक्षिक कार्य, घर को शिक्षा का प्रभावशाली साधन बनाने के उपाय, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

10. चर्च या धर्म : सक्रिय व अनौपचारिक साधन 142–148
Church or Religion . Active & Informal Agency

धर्म का अर्थ व परिभाषा, जीवन व समाज में धर्म का कार्य, शिक्षा में धर्म का स्थान, धर्म-निरपेक्ष राज्य में धार्मिक शिक्षा का स्थान, धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता व महत्त्व, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

11. समुदाय : सक्रिय व अनौपचरिक साधन 149–156

समुदाय का अर्थ व परिभाषा, बालक की शिक्षा में समुदाय का महत्त्व, बालक पर समुदाय के शैक्षिक प्रभाव, शिक्षा में समुदाय का दायित्व, शिक्षा पर भारतीय समुदाय का प्रभाव, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

12. राज्य : सक्रिय व अनौपचारिक साधन 157–163
State : Active & Informal Agency

राज्य का शिक्षा से सम्बन्ध, शिक्षा पर राजकीय नियन्त्रण, राज्य के शैक्षिक कार्य; राज्य : शैक्षिक साधन के रूप में, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

खण्ड तीन

शिक्षा की समस्याएँ
Problems of Education

13. राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा
Education for National Integration 167–181

विषय-प्रवेश, राष्ट्रीयता का अर्थ, राष्ट्रीयता व शिक्षा, राष्ट्रीयता की शिक्षा की आलोचना, राष्ट्रीय एकता का आधार, भारत में राष्ट्रीय एकता की समस्या, राष्ट्रीय एकता का अर्थ, राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता, राष्ट्रीय एकता में बाधाएँ, बाधाओं को दूर करने के उपाय, राष्ट्रीय एकता के लिए शैक्षिक कार्यक्रम, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

14. अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए शिक्षा 182–191
Education for International Understanding

विषय-प्रवेश, अन्तर्राष्ट्रीयता का अर्थ, अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए प्रयास, यूनेस्को व अन्तर्राष्ट्रीय भावना, अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास के सिद्धान्त, अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए शिक्षा की आवश्यकता, अन्तर्राष्ट्रीय भावना का एकमात्र साधन : शिक्षा, अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए शिक्षा के उद्देश्य, अन्तर्राष्ट्रीयता व शैक्षिक कार्यक्रम, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

15. अन्तर-सांस्कृतिक भावना के लिए शिक्षा 192–197
Education for Inter-Cultural Understanding

विषय-प्रवेश, अन्तर-सांस्कृतिक भावना का अर्थ, अन्तर-सांस्कृतिक शिक्षा का अर्थ, अन्तर-सांस्कृतिक शिक्षा (भावना) की आवश्यकता, अन्तर-सांस्कृतिक भावना व शैक्षिक कार्यक्रम, अन्तर-सांस्कृतिक भावना के विकास के उपाय, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

16. भावात्मक एकता के लिए शिक्षा 198–205
Education for Emotional Integration

विषय-प्रवेश, भावात्मक एकता का अर्थ, भावात्मक एकता की आवश्यकता, भावात्मक एकता में बाधाएँ, भावात्मक एकता व शैक्षिक कार्यक्रम, भावात्मक एकता के विकास के उपाय, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

17. नागरिकता के लिए शिक्षा 206–216
Education for Citizenship

विषय-प्रवेश, भारत में नागरिकता की शिक्षा की आवश्यकता, नागरिकता का अर्थ व परिभाषा, उत्तम नागरिक कौन है ? नागरिकता के लिए शिक्षा की आवश्यकता, नागरिकता की शिक्षा के अंग, नागरिकता व शैक्षिक कार्यक्रम, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

18. लोकतन्त्र व शिक्षा 217–227
Democracy & Education

विषय-प्रवेश, लोकतन्त्र का अर्थ, लोकतन्त्र के लिए शिक्षा की आवश्यकता, लोकतन्त्रीय शिक्षा के उद्देश्य, लोकतन्त्र व पाठ्यक्रम, लोकतन्त्र व शिक्षण-विधि, लोकतन्त्र व विद्यालय, लोकतन्त्र व अनुशासन, लोकतन्त्र व शिक्षक, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

19. स्वतन्त्रता व अनुशासन 228–243
Freedom & Discipline

विषय-प्रवेश, अनुशासन का अर्थ, स्वतन्त्रता व अनुशासन का सम्बन्ध, अनुशासन के दार्शनिक सिद्धान्त, अनुशासन के विभिन्न सिद्धान्तों में समन्वय, अनुशासन के स्वरूप, अनुशासनहीनता के कारण, विद्यालयों में अनुशासन रखने के लिए सुझाव, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

20. धार्मिक व नैतिक शिक्षा *244–257*
Religious & Moral Education

विषय-प्रवेश, धार्मिक व नैतिक शिक्षा की माँग, शिक्षा, धर्म व नैतिकता में

सम्बन्ध, धार्मिक व नैतिक शिक्षा की आवश्यकता, धार्मिक व नैतिक शिक्षा की विषय-सामग्री, धार्मिक व नैतिक शिक्षा की विधियाँ, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

खण्ड चार

शिक्षा के दार्शनिक आधार
Philosophical Bases of Education

21. दर्शन व शिक्षा 261–279
Philosophy & Education

विषय-प्रवेश, दर्शन का अर्थ व परिभाषा, दर्शन का विषय-क्षेत्र, शिक्षा का अर्थ, शिक्षा-दर्शन का अर्थ व परिभाषा, दार्शनिक दृष्टिकोण, दार्शनिक दृष्टिकोण के लक्षण, शिक्षा व दर्शन में सम्बन्ध, दर्शन की आवश्यकता, दर्शन व शिक्षा के उद्देश्य, दर्शन व पाठ्यक्रम, दर्शन व शिक्षण-विधियाँ, दर्शन व अनुशासन, दर्शन व पाठ्य-पुस्तकें, दर्शन व शैक्षिक प्रशासन, निष्कर्ष, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

22. शिक्षा में आदर्शवाद 280–293
Idealism in Education

आदर्शवाद का अर्थ व परिभाषा, आदर्शवाद का दार्शनिक दृष्टिकोण, आदर्शवाद के प्रमुख सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व, आदर्शवाद व शिक्षा के उद्देश्य, आदर्शवाद व पाठ्यक्रम, पाठ्यक्रम के बारे में प्रसिद्ध आदर्शवादियों के विचार, आदर्शवाद व शिक्षण-विधियाँ, आदर्शवाद व शिक्षक, आदर्शवाद व बालक, आदर्शवाद व अनुशासन, आदर्शवाद का मूल्यांकन, निष्कर्ष, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

23. शिक्षा में प्रकृतिवाद 294–307
Naturalism in Education

प्रकृतिवाद का अर्थ व परिभाषा, प्रकृतिवाद का दार्शनिक दृष्टिकोण, प्रकृतिवाद के रूप, प्रकृतिवादियों के सम्प्रदाय, प्रकृतिवाद के प्रमुख सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व, प्रकृतिवाद व शिक्षा, प्रकृतिवाद व शिक्षा के उद्देश्य, प्रकृतिवाद व पाठ्यक्रम, प्रकृतिवाद व शिक्षण-विधियाँ, प्रकृतिवाद व शिक्षक, प्रकृतिवाद व अनुशासन, प्रकृतिवाद व विद्यालय, प्रकृतिवाद का मूल्यांकन, निष्कर्ष, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

24. शिक्षा में प्रयोगवाद व प्रयोजनवाद 308–327
Pragmatism in Education

प्रयोजनवाद का अर्थ व परिभाषा, प्रयोजनवाद का दार्शनिक दृष्टिकोण, दर्शन के रूप में प्रयोजनवाद का विकास, प्रयोजनवाद के रूप, प्रयोजनवाद के मुख्य सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व, प्रयोजनवाद व शिक्षा, प्रयोजनवाद व शिक्षा के उद्देश्य, प्रयोजनवाद

व शिक्षण-विधियाँ, प्रयोजनवाद व पाठ्यक्रम, प्रयोजनवाद व शिक्षक, प्रयोजनवाद व अनुशासन, प्रयोजनवाद व विद्यालय, प्रयोजनवाद का मूल्यांकन, निष्कर्ष, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

25. शिक्षा में यथार्थवाद 328–350
Realism in Education

विषय-प्रवेश, यथार्थवाद की उत्पत्ति, अर्थ व परिभाषा, यथार्थवाद का दार्शनिक दृष्टिकोण, यथार्थवाद के रूप, यथार्थवाद के मूल सिद्धान्त, यथार्थवादी शिक्षा की प्रमुख विशेषताएँ, शिक्षा में यथार्थवाद के रूप, यथार्थवाद व शिक्षा, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

खण्ड पाँच

भारतीय शिक्षाशास्त्री
Indian Educators

26. स्वामी विवेकानन्द की शैक्षिक विचारधारा 353–360
Educational Philosophy of Swami Vivekananda

जीवन-परिचय, जीवन-दर्शन, शिक्षा-दर्शन, शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व, शिक्षा का अर्थ, शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि, शिक्षक का स्थान, स्त्री-शिक्षा, जन-शिक्षा, शिक्षा दर्शन का मूल्याकन, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

27. महात्मा गांधी की शैक्षिक विचारधारा 361–368
Educational Philosophy of Mahatma Gandhi

जीवन-परिचय, जीवन-दर्शन, शिक्षा-दर्शन, शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व, शिक्षा का अर्थ, शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि, शिक्षक का स्थान, शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

28. रवीन्द्रनाथ टैगोर की शैक्षिक विचारधारा 369–376
Educational Philosophy of Rabindranath Tagore

जीवन-परिचय, जीवन-दर्शन, शिक्षा-दर्शन, शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व, शिक्षा का अर्थ, शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि, शिक्षक का स्थान, शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

29. श्री अरविन्द घोष की शैक्षिक विचारधारा 377–383
Educational Philosophy of Shri Aurobindo Ghosh

जीवन-परिचय, जीवन-दर्शन, शिक्षा-दर्शन, शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व, शिक्षा का अर्थ, शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि, शिक्षक का स्थान, बालक का स्थान, शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

30. शंकराचार्य का वेदान्त-दर्शन व शिक्षा 384–393
Shankaracharya's Vedanta Philosophy & Education

जीवन-परिचय, शंकराचार्य का दर्शन, वेदान्त-दर्शन व शिक्षा, शिक्षा का उद्देश्य, ब्रह्म-ज्ञान का अधिकारी, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधियाँ, बालक, शिक्षक, अनुशासन, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

खण्ड छः

शिक्षा के सामाजिक आधार
Sociological Bases of Education

31. शिक्षा का समाज-विज्ञान 397–404
The Sociology of Education

विषय-प्रवेश, शैक्षिक समाजशास्त्र का अर्थ व परिभाषा, शैक्षिक समाजशास्त्र के उद्देश्य, शैक्षिक समाज-शास्त्र का क्षेत्र, शैक्षिक समाजशास्त्र का योगदान, शिक्षा : सामाजिक विज्ञान के रूप में, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

32. शिक्षा व समाज 405–414
Education & Society

विषय-प्रवेश, समाज का अर्थ व परिभाषा, शिक्षा का समाज में स्थान, शिक्षा व समाज का सम्बन्ध, शिक्षा का समाज पर प्रभाव, समाज का शिक्षा पर प्रभाव, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

33. शिक्षा व सामाजिक परिवर्तन 415–422
Education & Social Change

विषय-प्रवेश, सामाजिक परिवर्तन का अर्थ व परिभाषा, शैक्षिक व सामाजिक परिवर्तन में सम्बन्ध, शिक्षा द्वारा सामाजिक परिवर्तन, शिक्षा द्वारा सामाजिक परिवर्तन का अनुगमन, सामाजिक परिवर्तन में शिक्षा का वास्तविक कार्य, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

34. शिक्षा व संस्कृति 423–428
Education & Culture

विषय-प्रवेश, संस्कृति का अर्थ व परिभाषा, भौतिक व अभौतिक संस्कृति, सास्कृतिक उपकरण व सांस्कृतिक संकुल, शिक्षा व संस्कृति का सम्बन्ध, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

35. भारतीय समाज का स्वरूप 429–437
Nature of Indian Society

विषय-प्रवेश, मानव-समाज का आधार, भारतीय समाज का स्वरूप :—

1. भारतीय समाज का परम्परागत स्वरूप, 2. भारतीय समाज का आधुनिक स्वरूप, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

36. बालक के विकास पर भारतीय समाज का प्रभाव 438–443
Impact of Indian Society on the Development of Child

विषय-प्रवेश, बालक पर भारतीय समाज का प्रभाव :—1. बालक के शारीरिक विकास पर प्रभाव, 2. बालक के मानसिक विकास पर प्रभाव, 3. बालक के आध्यात्मिक विकास पर प्रभाव, 4. बालक के संवेगात्मक व सौन्दर्यात्मक विकास पर प्रभाव, 5. दरिद्रता का प्रभाव, 6. सांस्कृतिक वियोजन का प्रभाव, पारिवारिक विघटन का प्रभाव, 8 अपराध का प्रभाव, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

37. बालक का समाजीकरण 444–449
Socialization of the Child

समाजीकरण का अर्थ व परिभाषा, बालक का समाजीकरण करने वाले तत्त्व, बालक के समाजीकरण मे बाधा डालने वाले तत्त्व, समाजीकरण की प्रक्रिया में शिक्षक का कार्य, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

38. विद्यालय व समुदाय 450–466
School & Community

विषय-प्रवेश, विद्यालय व समुदाय का सम्बन्ध, समुदाय का विद्यालय पर प्रभाव, विद्यालय का समुदाय पर प्रभाव, विद्यालय : सामुदायिक केन्द्र के रूप में, स्थानीय साधनो का उपयोग, विद्यालय का सामूहिक जीवन, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

39. सामाजिक गतिशीलता व शिक्षा 467–475
Social Mobility & Education

विषय-प्रवेश, सामाजिक गतिशीलता का अर्थ व परिभाषा, सामाजिक गतिशीलता के रूप, सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करने वाले कारक, शिक्षा व सामाजिक गतिशीलता, शिक्षा व अधोमुखी गतिशीलता, सामाजिक गतिशीलता के गुण व दोष, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

खण्ड सात

शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त, सूत्र, प्रणालियाँ, प्रविधियाँ व प्रक्रियाएँ
General Principles, Maxims, Devices, Techniques & Procedures of Teaching

40. शिक्षण के सामान्य या आधारभूत सिद्धान्त 479–485
General or Basic Principles of Teaching

विषय-प्रवेश, शिक्षण के सामान्य या आधारभूत सिद्धान्त :—1. क्रियाशीलता

या करके सीखने का सिद्धान्त, 2. प्रेरणा का सिद्धान्त, 3. जीवन से सम्बन्ध स्थापित करने का सिद्धान्त, 4. रुचि का सिद्धान्त, 5. निश्चित उद्देश्य का सिद्धान्त, 6. चयन का सिद्धान्त, 7. नियोजन का सिद्धान्त, 8. वैयक्तिक विभिन्नताओं को स्वीकार करने का सिद्धान्त, 9. लोकतन्त्रीय व्यवहार का सिद्धान्त, 10. विभाजन का सिद्धान्त, 11. आवृत्ति का सिद्धान्त, 12. निर्माण व मनोरंजन का सिद्धान्त, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

41. शिक्षण-सूत्र 486–492
Maxims of Teaching

विषय-प्रवेश, शिक्षण-सूत्र :—1. सरल से जटिल की ओर, 2. ज्ञात से अज्ञात की ओर, 3. स्थूल से सूक्ष्म की ओर, 4. पूर्ण से अंश की ओर, 8. अनिश्चित से निश्चित की ओर, 6. प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर, 7. विशिष्ट से सामान्य की ओर, 8. विश्लेपण से संश्लेपण की ओर, 9. मनोवैज्ञानिक से तर्क-सम्मत की ओर, 10. अनुभूत से युक्तियुक्त की ओर, 11. प्रकृति का अनुसरण, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

42. शिक्षण-प्रणालियाँ व प्रविधियाँ 493–498
Devices & Techniques of Teaching

विषय-प्रवेश, शिक्षण की विभिन्न प्रणालियों व प्रविधियाँ :—1. व्याख्या-प्रणाली, 2. निदर्शन या स्पष्टीकरण प्रणाली, 3. विवरण-प्रणाली, 4. वर्णनात्मक प्रणाली, 5. उदाहरण प्रणाली, 6. प्रश्नोत्तर प्रणाली, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

43. प्रश्न पूछना 499–509
Questioning

प्रश्नों का महत्त्व, प्रश्न पूछना—एक कला है, प्रश्न पूछने के उद्देश्य, प्रश्नों के दो स्पष्ट विभेद, प्रश्नों के प्रकार, अच्छे प्रश्नों की विशेषताएँ, दोषपूर्ण प्रश्न, प्रश्न पूछने की विधि, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

44. उत्तर निकलवाना 510–515
Receiving Answers

उत्तर का महत्त्व, उत्तर निकलवाना, अच्छे उत्तरों की विशेषताएँ, अशुद्ध उत्तरों को शुद्ध करने की विधियाँ, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

45. शिक्षण-प्रक्रियाएँ 516–526
Teaching Procedures

विषय-प्रवेश, हरबर्ट के क्रमबद्ध पाँच पद, पाँच पदों का प्रयोग, हरबर्ट की प्रणाली की आलोचना, ग्लोवर की योजना, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

खण्ड आठ

पाठ्यक्रम का निर्माण
Construction of Curriculum

46. पाठ्यक्रम का अर्थ व निर्माण के सिद्धान्त 529–538
Meaning & Principles of Curriculum Construction

पाठ्यक्रम का अर्थ व परिभाषा, प्रचलित पाठ्यक्रम के दोष, पाठ्यक्रम के उद्देश्य, पाठ्यक्रम के आधार, पाठ्यक्रम-निर्माण के सिद्धान्त, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

47. पाठ्यकम के प्रकार 539–545
Types of Curriculum

विषय-प्रवेश, पाठ्यक्रम के प्रकार, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

48. एकीकृत पाठ्यक्रम 546–548
Integrated Curriculum

एकीकृत पाठ्यक्रम का अर्थ व परिभाषा, प्रचलित पाठ्यक्रम में एकीकरण का अभाव, एकीकृत पाठ्यक्रम के प्रयोग में कठिनाइयाँ, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

खण्ड नौ

शिक्षा में नवीन प्रवृत्तियाँ
New Tendencies in Education

49. शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति 551–559
Psychological Tendency in Education

विषय-प्रवेश, मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का अर्थ, मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताएँ, मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का प्रमुख प्रवर्त्तक : पेस्टॉलॉजी, पेस्टॉलॉजी के शैक्षिक विचार, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

50. शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति 560–566
Scientific Tendency in Education

विषय-प्रवेश, वैज्ञानिक प्रवृत्ति का अर्थ, वैज्ञानिक प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताएँ, वैज्ञानिक प्रवृत्ति का प्रमुख प्रवर्त्तक : हरबर्ट स्पेन्सर, हरबर्ट स्पेन्सर के शैक्षिक विचार, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स।

51. शिक्षा में समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति 567–572
Sociological Tendency in Education

विषय-प्रवेश, समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति का अर्थ, समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विकास के कारण, समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताएँ, समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति का शिक्षा पर प्रभाव, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

52. शिक्षा में समाहारक प्रवृत्ति 573–576
Eclectic Tendency in Education

समाहारक प्रवृत्ति का अर्थ, समाहारक प्रवृत्ति का शिक्षा पर प्रभाव, समाहारक प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताएँ, उपसंहार, यूनीवर्सिटी क्वेश्चन्स ।

खण्ड एक

शिक्षा का अर्थ, कार्य व उद्देश्य

EDUCATION—MEANING, FUNCTIONS & AIMS

"हमें जिस व्यक्ति को शिक्षित करना है, वह सामाजिक व्यक्ति है और समाज, व्यक्तियों की आंगिक एकता है। यदि हम बच्चे में से सामाजिक तत्त्व को निकाल दें, तो हमारे पास व्यक्ति की केवल कल्पना रह जाती है। यदि हम समाज से वैयक्तिक तत्त्व को निकाल दें, तो हमारे पास केवल निर्जीव समूह रह जाता है। इसलिए, शिक्षा—बालक की क्षमताओं, रुचियों *तथा आदतों की मनोवैज्ञानिक सूझबूझ से प्रारम्भ होनी चाहिए।"*

—John Dewey.

- शिक्षा का अर्थ, प्रक्रिया, स्वरूप व परिभाषा
  Meaning, Process, Form & Definition of Education.
- शिक्षा के कार्य
  Functions of Education.
  - (अ) सामान्य कार्य : **General Functions.**
  - (ब) मानव-जीवन में कार्य : **Functions in Human Life.**
  - (स) राष्ट्रीय जीवन में कार्य : **Functions in National Life.**
- शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण व वर्गीकरण और जीवन व समाज के आदर्शों से उनका सम्बन्ध
  Formulation & Classification of Educational Aims and their Relation to Life & Ideals of Society.
- शिक्षा के वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्य
  Individual & Social Aims of Education.
- शिक्षा के सामान्य व महत्त्वपूर्ण उद्देश्य
  General & Important Aims of Education.
- आधुनिक लोकतन्त्रीय भारत में शिक्षा के उद्देश्य
  Aims of Education in Modern Democratic India.

1

शिक्षा का अर्थ, प्रक्रिया, स्वरूप व परिभाषा
MEANING, PROCESS, FORM & DEFINITION OF EDUCATION

"शिक्षा सीखना नहीं है, वरन् मस्तिष्क की शक्तियों का अभ्यास और विकास है।"

"Education is not learning ; it is the exercise and development of the powers of the mind."—*Princeton Review.*

विषय-प्रवेश : 'शिक्षा' शब्द का प्रयोग

संसार में ऐसे बहुत कम व्यक्ति हैं, जिन्हें शिक्षा में रुचि न हो। शिक्षक, अभिभावक, विद्यालय-प्रबन्धक, शिक्षा-मंत्री, राजनीतिज्ञ आदि—सभी के मुख से यह शब्द प्रायः सुना जाता है। आजकल ही नहीं, वरन् अति प्राचीन काल से 'शिक्षा' शब्द का प्रयोग किसी-न-किसी अर्थ में होता चला आया है। इसकी पुष्टि में हम कुछ विद्वानों के विचारों को नीचे दे रहे हैं; यथा :—

1. प्लेटो (Plato) :—"शिक्षा से मेरा अभिप्राय उस प्रशिक्षण से है, जो अच्छी आदतों के द्वारा बच्चों में अच्छी नैतिकता का विकास करती है।"

2. अरस्तू (Aristotle) :—"शिक्षा—स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण करती है।"

3. कॉण्ट (Kant) :—"शिक्षा—व्यक्ति की उस पूर्णता का विकास है, जिस पर वह पहुँच सकता है।"

4. स्वामी विवेकानन्द :—"हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है, जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।"

"We want that education by which character is formed, strength of mind is increased, intellect is expanded and by which one can stand on one's own feet."—Swami Vivekananda.

शिक्षा के सम्बन्ध में जो विचार ऊपर व्यक्त किये गए हैं, उनसे शिक्षा के प्रभाव और महत्त्व को भली प्रकार समझा जा सकता है। अब प्रश्न यह उठता है कि आखिर 'शिक्षा' है क्या ? इस बात को जानने के लिए हमें 'शिक्षा' के अर्थ पर विचार करना आवश्यक हो जाता है।

शिक्षा का अर्थ
Meaning of Education

1. 'शिक्षा' का शाब्दिक अर्थ : Etymological Meaning of 'Education'

'Education' शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा के तीन शब्दों से मानी गई है; यथा :—

(i) 'Educatum'—इसका अर्थ है—'Act of teaching or training'.

(ii) 'Educare'—इसका अर्थ है—'To educate', 'To bring up', 'To raise'.

(iii) 'Educere'—इसका अर्थ है—'To bring forth', 'To lead out'.

उपर्युक्त के आधार पर हम यह कह सकते है कि 'Education' शब्द का अर्थ है—'The act of training, bringing up, and leading out.' इस प्रकार, 'शिक्षा' शब्द का अर्थ है—प्रशिक्षण, संवर्द्धन, और पथ-प्रदर्शन करने का कार्य।

सरल शब्दों में हम कह सकते है कि 'शिक्षा' का अर्थ है—बालक की जन्मजात शक्तियों या गुणों को विकसित करके उसका सर्वाङ्गीण विकास करना, न कि उसके मस्तिष्क में ज्ञान को ठूँसना।

2. प्राचीन समय में 'शिक्षा' का अर्थ : Meaning of 'Education' in the Past

प्राचीन समय मे विभिन्न देशों में समाज के आदर्शों और उद्देश्यों के अनुसार 'शिक्षा' को विभिन्न अर्थ दिए गए थे; उदाहरणार्थ—प्राचीन भारत में 'शिक्षा' को आत्म-ज्ञान और आत्म-प्रकाश का साधन माना गया था। प्राचीन चीन में 'शिक्षा' द्वारा व्यक्तियों को सामाजिक व्यवस्था का आदर करने का प्रशिक्षण दिया जाता था। प्राचीन यूनान में व्यक्ति को राजनीतिक, मानसिक, नैतिक और सौन्दर्य-ज्ञान के लिए शिक्षा दी जाती थी। प्राचीन रोम में 'शिक्षा' व्यक्ति को जीवन के व्यावहारिक कार्यों के लिए तैयार करती थी। इस प्रकार, प्राचीन समय के सभी सभ्य देशों में 'शिक्षा' का अर्थ भिन्न था।

3. 'शिक्षा' का व्यापक अर्थ : Wider Meaning of 'Education'

शिक्षा के व्यापक अर्थ के अनुसार—'शिक्षा' आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है। दूसरे शब्दों में, व्यक्ति अपने जन्म से मृत्यु तक जो कुछ सीखता और अनुभव

करता है, वह सब 'शिक्षा' के व्यापक अर्थ के अन्तर्गत माना जाता है। उसके सीखने और अनुभव करने का परिणाम यह होता है कि वह धीरे-धीरे विभिन्न प्रकार से अपने भौतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक वातावरण से अपना सामंजस्य स्थापित करता है।

इस सम्बन्ध में टी० रेमॉण्ट (T. Raymont) का यह कथन उल्लेखनीय है :—"शिक्षा, विकास का वह क्रम है, जिससे व्यक्ति अपने को धीरे-धीरे विभिन्न प्रकार से अपने भौतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक वातावरण के अनुकूल बना लेता है। जीवन ही वास्तव में शिक्षित करता है। व्यक्ति अपने व्यवसाय, पारिवारिक जीवन, मित्रता, विवाह, पितृत्व, मनोरंजन, यात्रा आदि के द्वारा शिक्षित किया जाता है।"

व्यापक अर्थ में शिक्षा का कार्य—जीवन-भर चलता रहता है। व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्यु तक कुछ-न-कुछ सीखता रहता है। वास्तव में, उसका सम्पूर्ण जीवन ही शिक्षा का काल है। बालक अपने माता-पिता, भाई-बहिनों, मित्रों और अध्यापकों से हर समय और हर जगह कुछ-न-कुछ सीखता है। बड़ा होने पर वह जीवन में प्रवेश करता है और विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों के सम्पर्क मे आता है।

जिस प्रकार बालक घर मे, स्कूल में, और खेल के मैदान में दूसरों से सदैव कोई-न-कोई बात सीखता रहता है, उसी प्रकार वयस्क के रूप में वह दूकान, दफ़्तर, पार्क आदि में हर समय किसी-न-किसी प्रकार की शिक्षा अवश्य प्राप्त करता है।

इस प्रकार, शिक्षा का क्षेत्र अति विस्तृत है। अतः शिक्षा उस विकास का नाम है, जो बचपन से लेकर जीवन के अन्तिम क्षण तक चलती रहती है। इसी विकास के कारण व्यक्ति अपनी परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करता है, जीवन की विभिन्न समस्याओं को सुलझाता है और अपने कर्त्तव्यों का पालन करता है। इस विकास के बिना उसका जीवन सफल नहीं होता है। 'शिक्षा' शब्द का व्यापक अर्थ यही है।

शिक्षा के व्यापक अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम कुछ विद्वानों के विचारों को नीचे अंकित कर रहे हैं; यथा :—

1. लॉज (Lodge) :—"बच्चा अपने माता-पिता को, और छात्र अपने शिक्षकों को शिक्षित करता है। प्रत्येक बात, जो हम कहते, सोचते या करते हैं, हमें किसी प्रकार भी दूसरे व्यक्तियों के द्वारा कही, सोची या की गई बात से कम शिक्षित नहीं करती है। इस व्यापक अर्थ में जीवन—शिक्षा है; और शिक्षा—जीवन है।"

2. जे० एस० मेकेंजी (J. S. Mackenzie) :—"व्यापक अर्थ में 'शिक्षा' एक ऐसी प्रक्रिया है, जो आजीवन चलती रहती है, और जीवन के प्रायः प्रत्येक अनुभव से उसके भण्डार में वृद्धि होती है।"

3. मार्क हॉपकिन्स (Mark Hopkins) :—"अपने अति व्यापक अर्थ में शिक्षा में वे सभी बातें आ जाती हैं, जो निर्माणकारी प्रभाव डालती हैं।"

4. प्रोफ़ेसर डमविल :—"शिक्षा के व्यापक अर्थ में वे सभी प्रभाव आते हैं, जो व्यक्ति को जन्म से लेकर मृत्यु तक प्रभावित करते हैं।"

"Education in its wider sense includes all the influences which act upon an individual during his passage from the cradle to the grave."—**Prof. Dumville.**

4. 'शिक्षा' का संकुचित अर्थ : Narrower Meaning of 'Education'

शिक्षा के संकुचित या सीमित अर्थ के अनुसार—शिक्षा का अभिप्राय, बालक को स्कूल में दी जाने वाली शिक्षा से है। दूसरे शब्दों में, बालक को एक निश्चित योजना के अनुसार, एक निश्चित समय तक और निश्चित विधियों से निश्चित प्रकार का ज्ञान दिया जाता है। उसकी शिक्षा कुछ विशेष प्रभावों और कुछ विशेष विषयों तक ही सीमित रहती है। उसकी वही शिक्षा दी जाती है, जिसे समाज के वयस्क उसके जीवन के लिए लाभप्रद समझते हैं।

बालक इस शिक्षा को केवल कुछ ही वर्षों तक प्राप्त कर सकता है। उसको प्राप्त करने का मुख्य स्थान, विद्यालय होता है। विद्यालय में एक विशेष प्रकार का व्यक्ति, शिक्षा देने का कार्य करता है, जिसे शिक्षक कहते हैं। उस पर बालक की शिक्षा का उत्तरदायित्व होता है। बालक, विद्यालय में कई विषयों की शिक्षा प्राप्त कर सकता है। अतः साधारणतः शिक्षा का अर्थ—विशेष प्रकार की पुस्तकें पढ़ना समझा जाता है। 'शिक्षा' शब्द का सकुचित अर्थ यही है।

इस शिक्षा से बालक को किसी प्रकार का लाभ नहीं होता है। वह तोते के समान विषयों को रट तो लेता है, पर उसे उनका व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त नहीं होता है। उसे पुस्तकीय ज्ञान तो प्राप्त हो जाता है, पर उसके मस्तिष्क और चरित्र का विकास नहीं हो पाता है। अतः इस प्रकार की शिक्षा को 'शिक्षा' न कहकर 'अध्यापन' या 'निर्देश' (Instruction) के नाम से पुकारा जाता है।

'शिक्षा' के सकुचित अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम कुछ विद्वानों के विचारों को नीचे अङ्कित कर रहे हैं; यथा :—

1. टी० रेमॉण्ट (T. Raymont) :—"संकुचित अर्थ में शिक्षा का प्रयोग बोलचाल की भाषा और कानून में किया जाता है। इस अर्थ में शिक्षा, व्यक्ति के आत्म-विकास और वातावरण के सामान्य प्रभावों को अपने में कोई स्थान नहीं देती है। इसके विपरीत, यह केवल उन विशेष प्रभावों को अपने में स्थान देती है, जो समाज के अधिक आयु के व्यक्ति जान-बूझकर और नियोजित रूप में अपने से छोटों पर डालते हैं, भले ही ये प्रभाव—परिवार, धर्म, या राज्य द्वारा डाले जायें।"

2. जे० एस० मेकेंजी :—"संकुचित अर्थ में शिक्षा का अभिप्राय—हमारी शक्तियों के विकास और उन्नति के लिए चेतनापूर्वक किये गए किसी भी प्रयास से हो सकता है।"

"In narrow sense, education may be taken to mean any consciously directed effort to develop and cultivate our powers."

—**J. S. Mackenzie.**

5. 'शिक्षा' का विश्लेषणात्मक अर्थ : Analytical Meaning of 'Education'

हमने ऊपर की पंक्तियों में शिक्षा के विभिन्न अर्थों का वर्णन किया है। यहाँ हम उसके अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए, उसके अर्थ-सम्बन्धी विभिन्न तत्त्वों पर प्रकाश डाल रहे हैं; यथा :—

(i) शिक्षा का अर्थ केवल विद्यालयों में दिए जाने वाले ज्ञान तक सीमित नहीं : Meaning of Education not Limited to Knowledge Imparted in Schools—शिक्षा का अर्थ इतना संकुचित नहीं है, जितना कि लोग समझते है। शिक्षा, विद्यालय तक ही सीमित नही रहती है। इसके विपरीत, शिक्षा का कार्यक्रम जन्म से मृत्यु-पर्यन्त चलता रहता है।

मानव प्रत्येक अनुभव से सीखता है। उसके लिए प्रत्येक प्राणी किसी-न-किसी रूप में शिक्षक का कार्य करता है। इस सम्बन्ध में भारत के महर्षि कणाद का उदाहरण दिया जा सकता है। वे चींटी और इस प्रकार के अन्य जीव-जन्तुओं को विशेष गुणों के कारण अपना गुरू मानते थे।

(ii) शिक्षा का अर्थ : बालक की जन्मजात शक्तियों के विकास के रूप में : Meaning of Education as the Development of Child's Innate Powers—आधुनिक समय में शिक्षा-मनोविज्ञान में इतनी प्रगति हुई है कि उसने शिक्षा के प्रति लोगों के दृष्टिकोण को बिल्कुल बदल दिया है। अब शिक्षा का अर्थ यह नहीं समझा जाता है कि बालक के मस्तिष्क को बाहरी ज्ञान से ठूँस-ठूँसकर भर दिया जाय।

इसके विपरीत, शिक्षा का अभिप्राय यह है कि वह बालक की जन्मजात शक्तियों का सर्वाङ्गीण विकास करके उसके जीवन को सफल बनाये। शिक्षा के इस पहलू पर बल देते हुए एडिसन (Addison) ने लिखा है :—"शिक्षा वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनुष्य में निहित उन शक्तियों और गुणों का दिग्दर्शन होता है, जिनका ऐसा होना शिक्षा के बिना असम्भव है।"

(iii) शिक्षा : गतिशील प्रक्रिया : Education a Dynamic Process—शिक्षा को स्थिर नहीं समझा जाना चाहिए। वास्तव में, यह गतिशील प्रक्रिया है, जो सदैव आगे की ओर बढ़ती रहती है और इस प्रकार मनुष्य को जीवन मे प्रगति करने के लिए तैयार करती है। मनुष्य, शिक्षा के द्वारा ही अपने जीवन को उत्तम और प्रगतिशील बना सकता है।

(iv) शिक्षा : द्विमुखी प्रक्रिया : Education a Bipolar Process—शिक्षा का अर्थ यह कदापि नहीं है कि शिक्षक स्वयं सक्रिय होकर बालक के मस्तिष्क

को ज्ञान से भर दे। शिक्षा की प्रक्रिया में बालक निष्क्रिय नहीं रहता है। इसके विपरीत, शिक्षक और छात्र—दोनों सक्रिय रहते है।

इस प्रकार, शिक्षा द्विमुखी प्रक्रिया है। शिक्षक और छात्र में परस्पर आदान-प्रदान का होना—शिक्षा की प्रक्रिया के लिए आवश्यक है।

(v) शिक्षा : सामाजिक विकास की प्रक्रिया : Education a Process of Social Development—शिक्षा का अभिप्राय केवल व्यक्तिगत विकास नही है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है, और उसे समाज में ही अपना जीवन व्यतीत करना पड़ता हैं। अतः शिक्षा द्वारा उसका सामाजिक विकास किया जाना अति आवश्यक है। यह तभी सम्भव है, जब उसे उचित प्रकार की शिक्षा दी जाय।

इसलिए, ड्यूवी ने शिक्षा को 'द्विमुखी प्रक्रिया' न मानकर 'त्रिमुखी प्रक्रिया' (Tri-Polar Process) माना है। उसका कहना है कि शिक्षक, विद्यार्थी और समाज—शिक्षा की तीन भुजाएँ है। उसने समाज की जगह पाठ्यक्रम को रखा है, क्योंकि पाठ्यक्रम ही शिक्षक और छात्र को समाज-सम्बन्धी सामग्री देता है।

6. 'शिक्षा' का वास्तविक अर्थ : True Meaning of 'Education'

हमने ऊपर की पंक्तियों मे 'शिक्षा' के अर्थों पर प्रकाश डाला है। इनसे पाठक के मन मे भ्रम उत्पन्न हो सकता है और वह पूछ सकता है कि आखिर, शिक्षा का वास्तविक अर्थ क्या है? उपर्युक्त किसी भी अर्थ को शिक्षा का वास्तविक अर्थ नहीं कहा जा सकता है।

जहाँ तक शिक्षा के शाब्दिक अर्थ की बात है, उसे बिल्कुल ठीक मान लेना उचित नही है, क्योंकि यह आवश्यक नही है कि जो किसी बात का शाब्दिक अर्थ हो, वही उसका वास्तविक अर्थ भी हो।

रही प्राचीन काल में शिक्षा के अर्थ की बात, उसे आधुनिक विचारक पूर्ण रूप में मानने को तैयार नहीं है। अब वे मानते हैं—शिक्षा के व्यापक और संकुचित अर्थ को। ये दोनों अर्थ शिक्षा के प्रति अपनाये जाने वाले दो दृष्टिकोणों को प्रस्तुत करत है। शिक्षा का वास्तविक अर्थ इन्ही दोनों के बीच में कहीं-न-कहीं है।

अतः हम शिक्षा के वास्तविक अर्थ को इन शब्दों में व्यक्त कर सकते है :—

"शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है, जो मनुष्य की जन्मजात शक्तियों के स्वाभाविक और सामञ्जस्यपूर्ण विकास में योग देती है, उसकी वैयक्तिकता का पूर्ण विकास करती है, उसे अपने वातावरण से सामञ्जस्य स्थापित करने में सहायता देती है, उसे जीवन और नागरिकता के कर्त्तव्यों और दायित्वों के लिए तैयार करती है, और उसके व्यवहार, विचार और दृष्टिकोण में ऐसा परिवर्तन करती है—जो समाज, देश और विश्व के लिए हितकर होता है।"

शिक्षा की विभिन्न धारणाएँ
Different Conceptions of Education

शिक्षा के अर्थ को समझने के बाद उसके बारे मे प्रचलित विभिन्न धारणाओं

को जान लेना अच्छा होगा। इसी विचार से हम निम्नलिखित पंक्तियों में उनका वर्णन कर रहे हैं; यथा :—

1. शिक्षा : मानव का विकास है : Education is Development of Man

शिक्षा के इस पहलू पर बहुत अधिक बल दिया गया है। इस सम्बन्ध में जॉन ड्यूवी ने लिखा है :—"शिक्षा, व्यक्ति की उन सब शक्तियों का विकास है, जिनसे वह अपने वातावरण पर अधिकार प्राप्त कर सके और अपनी भावी आशाओं को पूरा कर सके।"

"Education is the development of all those capacities in an individual which will enable him to control his environment and fulfil his possibilities."—**John Dewey.**

जिस व्यक्ति में सोचने-समझने की शक्ति होती है, उसी को विकसित कहा जा सकता है। जो व्यक्ति अपने चारों ओर होने वाली घटनाओं की आलोचना कर सकता है, वही व्यक्ति समाज को कुछ योगदान दे सकता है। ऐसे व्यक्ति को सदैव बदलने वाले समाज से अपना सामंजस्य स्थापित करने में कोई कठिनाई नहीं होती है। उसे इस स्थिति में शिक्षा द्वारा ही पहुँचाया जाता है। दूसरे शब्दों में, शिक्षा द्वारा ही उसका विकास किया जाता है।

यूनानी दार्शनिक प्लेटो ने इस बात पर बल दिया है कि 'शिक्षा' व्यक्ति को विकसित करने का प्रयत्न है। प्लेटो (Plato) ने लिखा है :—"शिक्षा, छात्र के शरीर और आत्मा में उस सब सौन्दर्य और पूर्णता का विकास करती है, जिसके योग्य वह है।"

अरस्तू (Aristotle) ने भी क़रीब-क़रीब इसी विचार को इन शब्दों में व्यक्त किया है :—"शिक्षा—मनुष्य की शक्ति का, विशेष रूप से मानसिक शक्ति का विकास करती है, जिससे कि वह परम सत्य, शिव और सुन्दरम् का चिन्तन करने के योग्य बन सके।"

संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि शिक्षा, व्यक्ति का विकास करने में सहायता देती है। यह उसकी जन्मजात शक्तियों का शैशव से प्रौढ़ता तक इस प्रकार विकास करती है कि वह अपने वातावरण से अपना सामंजस्य स्थापित कर सकता है और उस पर अधिकार प्राप्त करके उसे उत्तम भी बना सकता है।

2. शिक्षा : प्रशिक्षण-कार्य है : Education is an Act of Training

कुछ विचारकों का मत है कि शिक्षा—प्रशिक्षण का कार्य है, जिसके द्वारा व्यक्ति को सामाजिक जीवन में अपना उचित स्थान ग्रहण करने के योग्य बनाया जाता है। मनुष्य मूलतः पशु होता है; अर्थात् वह पशु-प्रवृत्ति रखता है। अतः उसे प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, जिससे कि वह अपनी भावनाओं, अभिलाषाओं और व्यवहारों पर अधिकार करना सीख जाय। ऐसा प्रशिक्षण प्राप्त करके ही वह समाज का

त्तरदायी सदस्य बन सकता है। उसे यह प्रशिक्षण, शिक्षा द्वारा ही दिया जाता है। स प्रशिक्षण के बिना वह नैतिक और व्यवस्थित जीवन व्यतीत करने में कठिनाई का नुभव कर सकते हैं।

यह कहा गया है कि शिक्षा, नेत्रों और मस्तिष्क को प्रशिक्षित करती है। पर स प्रकार ? यदि एक व्यक्ति अपने से बड़ों को अपने सामने देखकर नमस्कार करता , तो हम उसे प्रशिक्षित व्यक्ति कहते हैं। पर यदि वह सम्मान से नतमस्तक हो ाता है, तो हम उसको शिक्षित व्यक्ति कहते हैं। व्यक्ति के पहले कार्य का सम्बन्ध सके शरीर से, और दूसरे का उसके मस्तिष्क से है। दूसरे शब्दों में, प्रशिक्षण का म्बन्ध शरीर से, और शिक्षा का सम्बन्ध मस्तिष्क से होता है।

पर क्योंकि शिक्षा, प्रशिक्षण का कार्य है, इसलिए सच्ची शिक्षा का अर्थ :—मनुष्य को शारीरिक और मानसिक प्रतिक्रियाओं के स्तरों पर अच्छे और बुरे अन्तर को समझने के योग्य बनाना। यह प्रशिक्षण शरीर और मस्तिष्क को इस कार अनुशासित करता है कि व्यक्ति ठीक काम को ठीक अवसर पर, ठीक प्रकार करते है। संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि शिक्षा—शरीर, मस्तिष्क और आत्मा का शिक्षण है।

. शिक्षा : मार्ग-प्रदर्शन है : Education is Direction

बालकों को शिक्षा देने का अर्थ है—उनका उचित मार्ग-प्रदर्शन करना। शक्षा का मुख्य उद्देश्य—बच्चों की अविकसित योग्यताओं, क्षमताओं, शक्तियों और चियो को इस प्रकार निर्देशित करना है कि वे अधिक-से-अधिक लाभप्रद बन सकें। सी दशा में ही बच्चे दूसरो को ठेस पहुँचाये और स्वयं अपमानित हुए बिना अपनी च्छाओं को पूर्ण कर सकते है।

अतः यह आवश्यक है कि बच्चों का कुशलता से मार्ग-प्रदर्शन किया जाए। सके लिए निम्नांकित आठ बातें आवश्यक है :—

1. निर्देशन, बालक के स्वभाव के विरुद्ध नहीं होना चाहिए।
2. बालक के ऊपर कोई अनावश्यक विचार नही लादा जाना चाहिए।
3. निर्देशन के समय भय, दण्ड और डाँट-डपट का प्रयोग नही किया जाना चाहिए।
4. जिस लक्ष्य पर बालक पहुँचना चाहता है, उसका उसे ठीक ज्ञान होना चाहिए।
5. निर्देशन करने वाले, अर्थात् शिक्षक को साध्य और साधन का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।
6. *शिक्षक को उस साँचे का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए, जिसमे समाज, बालक को ढालना चाहता है।*
7. निर्देशन से पहले बालक की आवश्यकताओ, योग्यताओ, क्षमताओं और रुचियों का अध्ययन कर लेना चाहिए।

8. शिक्षक को उस समाज की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए, जिसका सदस्य, बालक है।

4. शिक्षा : अभिवृद्धि है : Education is Growth

अभिवृद्धि क्या है ? अभिवृद्धि का अर्थ है—शारीरिक अंगों और मानसिक शक्तियों का विस्तार। अभिवृद्धि के दो महत्त्वपूर्ण तत्त्व है : (1) प्रशिक्षण (Training), और (2) वातावरण (Environment)।

प्रत्येक व्यक्ति अपने प्रशिक्षण और वातावरण के अनुसार क्रिया और प्रतिक्रिया करता है। फलतः वह अपने प्रारम्भिक रूप और स्वभाव से परिवर्तित होकर एक नई सूरत में आ जाता है। परिवर्तन की ये सब प्रक्रियायें, अभिवृद्धि की प्रक्रियायें हैं, और इसलिए शिक्षा की प्रक्रियायें कहलाती है। अतः शारीरिक, मानसिक और संवेगात्मक ढांचे की अभिवृद्धि—शिक्षा है, और शिक्षा प्राप्त करना—अभिवृद्धि करना है।

अब प्रश्न यह उठता है—'अभिवृद्धि कौन कर सकता है ?' इसका केवल एक ही उत्तर है—'केवल वही व्यक्ति जो अपरिपक्व या अविकसित है।' पर इसको जाना किस प्रकार जा सकता है ? इसको जानने के लिए दो बातें हैं—(1) निर्भरता (Dependence), और (2) लचीलापन (Elasticity)।

प्रत्येक अपरिपक्व व्यक्ति में इन दोनों बातों का पाया जाना आवश्यक है। अपरिपक्व व्यक्ति, परिपक्व व्यक्ति पर निर्भर रहता है, क्योंकि उसे जीवन का अनुभव नही होता है। इसके साथ ही, वह परिपक्व व्यक्ति के अनुभव से कुछ-न-कुछ सीखने के लिए सदैव तैयार रहता है। इसी को 'लचीलापन' कहते है। व्यक्ति में जितना अधिक लचीलापन होता है, उतना ही अधिक ज्ञान वह प्राप्त कर सकता है। उसमें जितने अधिक समय तक लचीलापन रहता है, उतने ही अधिक परिवर्तन उसमें होते हैं। फलस्वरूप, उसका व्यक्तित्व उतना ही अधिक 'संतुलित और संगठित' हो सकता है।

वयस्क की अपेक्षा बच्चे में लचीलापन अधिक होता है। लचीलापन ही उसे आदतों का निर्माण करने में सहायता देता है। आदतें ही उसकी कुशलता को बढ़ावा देकर, उसकी अभिवृद्धि में योग देती है। अतः बच्चे और वयस्क—दोनों की अभिवृद्धि के लिए यह आवश्यक है कि वे आदतों का निर्माण करें। पर ये आदतें अच्छी होनी चाहिए। ये आदतें नैतिक, मानसिक और संवेगात्मक हो सकती है। नैतिक आदतों को मानसिक आदतो से बल प्राप्त होता है। बुद्धि का जितना ही अधिक प्रयोग किया जायगा, कार्य-कुशलता उतनी ही अधिक होगी। परिणामतः उतनी ही अधिक अभिवृद्धि होगी। अतः हम कह सकते हैं कि अधिक-से-अधिक बुद्धि के प्रयोग से अधिक-से-अधिक अभिवृद्धि होती है।

अब प्रश्न यह उठता है—'अभिवृद्धि किस प्रकार की होनी चाहिए ?' इसका उत्तर केवल यह है कि अभिवृद्धि उचित प्रकार की होनी चाहिए। बच्चो का निर्देशन

इस प्रकार किया जाना चाहिए कि उनके व्यक्तिगत गुणों और सामाजिक सम्बन्धों का विकास हो। उनकी अभिवृद्धि, जीवन के उचित लक्ष्यों, उच्चतम मूल्यों, आकांक्षाओं और महानताओं की दिशा में होनी चाहिए। उन्हें श्रेष्ठतम मानव-चरित्र की दिशा में प्रशसनीय अभिवृद्धि करनी चाहिए।

प्रशंसनीय अभिवृद्धि से कहीं अधिक आवश्यक संतुलित, सामंजस्यपूर्ण और सुसगठित अभिवृद्धि है। ऐसी अभिवृद्धि तभी सम्भव है, जब बालक के व्यक्तित्व के सभी पहलुओं—शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक, सौन्दर्यात्मक, और सामाजिक—का समान रूप से सम्पूर्ण विकास किया जाय।

अन्त में, हम कह सकते हैं कि सम्पूर्ण विकास का अर्थ है—बालक के व्यक्तित्व के सभी पहलुओं का समान रूप से अधिकतम विकास। इसमें उसकी शक्तियाँ—जन्मजात, प्रकट और अप्रकट आ जाती हैं। उसे स्वयं यह अनुभव करना चाहिए कि वह अपने भाग्य का निर्माता है; और वह जिस प्रकार का व्यक्ति बनना चाहे, बन सकता है।

5. शिक्षा : सामाजिक कार्य है : Education is a Social Function

शिक्षा—सामाजिक कार्य है। इसका अर्थ यह है कि शिक्षा की प्रक्रिया सामाजिक है। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते हैं कि व्यक्ति को सामाजिक वातावरण में ही अत्यधिक लाभप्रद ढंग से शिक्षा दी जा सकती है। जॉन ड्यूवी का कथन है :—"सामाजिक वातावरण में उसके प्रत्येक सदस्य की सभी क्रियायें आ जाती हैं। इसका प्रभाव उतनी ही मात्रा में वास्तविक रूप से शिक्षाप्रद होता है, जितनी मात्रा में एक व्यक्ति—समाज की सहयोगी क्रियाओं में भाग लेता है।"

"The social environment consists of all the activities of any one of its members. It is truly educative in its effect in the degree in which an individual shares or participates in some conjoint activity."—**John Dewey.**

इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक वातावरण ही व्यक्ति को वास्तव में शिक्षित करता है। ऐसा प्राचीन समाज में भी था और आज भी है। प्राचीन काल में बालक अपने माता-पिता के कार्यों को देखते थे और अपने खेल या कार्य में उनका अनुकरण करते थे। माता-पिता उनके खेल या कार्य में सुधार करते थे और कुछ कार्यों को स्वयं करके दिखाते थे। इस प्रकार, बालक उनसे शिक्षा ग्रहण करते थे।

आज का समाज बहुत जटिल हो गया है। फिर भी, इस विचारधारा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है कि 'शिक्षा—सामाजिक कार्य है'। बच्चे अब भी अपने माता-पिता का अनुकरण करते हैं। उन्हें अब भी अपने माता-पिता के द्वारा शिक्षा दी जाती है। वास्तव में, माता-पिता ही उनके प्रथम शिक्षक होते हैं। पर आज की सांस्कृतिक विरासत में इतने कुशल कार्य आ गये हैं कि सभी माता-पिता कुशलतापूर्वक

उन कार्यों की शिक्षा अपने बच्चों को नहीं दे सकते हैं। यही कारण है कि शिक्षा की विधि में परिवर्तन हो गया है।

शिक्षा की सत्य धारणा
True Conception of Education

हमने जो कुछ ऊपर लिखा है, उससे यह भ्रम उत्पन्न हो सकता है कि शिक्षा का कार्य सांस्कृतिक विरासत को एक पीढ़ी से दूसरी को पहुँचाना और उसमें उन्नति करना है। ऐसा समझना शिक्षा की गलत धारणा पर पहुँचना है। हैंडरसन (Henderson) का कथन है :—

"यदि शिक्षा केवल सामाजिक विरासत को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करती है, तो यह केवल अतीत की पुनरावृत्ति करती है। यदि शिक्षा केवल बच्चों की अभिवृद्धि और विकास करती है, तो यह सामाजिक विरासत को अवहेलना करती है। पर यदि शिक्षा, अभिवृद्धि और विकास की प्रक्रिया; अर्थात् एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें सामाजिक वातावरण के अंग के रूप में सामाजिक विरासत को उत्तम और बुद्धिमान पुरुषों एवं स्त्रियों के विकास के लिए प्रयोग किया जा सकता है, तो यह शिक्षा की वही प्रक्रिया है, जिसका समर्थन दार्शनिकों और शिक्षा-सुधारकों ने किया है। यही शिक्षा की सत्य धारणा है।"

शिक्षा की प्रक्रिया
The Process of Education

शिक्षा की दो प्रक्रियाएं हैं—(1) द्विमुखी प्रक्रिया, और (2) त्रिमुखी प्रक्रिया।

1. द्विमुखी प्रक्रिया : Bi-Polor Process

एडम्स पहला व्यक्ति था, जिसने बताया कि "शिक्षा—द्विमुखी प्रक्रिया है।"

"Education is a bi-polar process."—Adams.

एडम्स ने बताया कि शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को ज्ञान प्रदान करके उसके व्यवहार को विकसित और परिवर्तित करता है। आधुनिक काल में रॉस ने भी शिक्षा को द्विमुखी प्रक्रिया मानते हुए लिखा है :— "चुम्बक के समान शिक्षा में भी दो ध्रुवों का होना आवश्यक है। इसलिए, यह द्विध्रुवीय (द्विमुखी) प्रक्रिया है।"

"Like a magnet, education must have two poles, it is a bi-polar process."—Ross.

द्विमुखी प्रक्रिया में दो व्यक्ति होते हैं। एक ध्रुव पर शिक्षक होता है, और दूसरे पर शिष्य। दोनों के कार्यों का समान महत्त्व होता है। एक बोलता है; दूसरा सुनता है। एक पढ़ाता है; दूसरा पढ़ता है। एक पथ-प्रदर्शन करता है; दूसरा अनुगमन करता है। उनके कार्यों का एक-दूसरे से सम्बन्ध होता है। सहयोग के बिना वे अपने लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सकते हैं। उनके व्यक्तित्व एक-दूसरे पर क्रिया और प्रतिक्रिया करते हैं। इसका परिणाम होता है—शिक्षा।

इस प्रक्रिया को चलाने के लिए शिक्षक और शिष्य को एक-दूसरे का स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए। शिक्षक को शिष्य के स्तर पर, और शिष्य को शिक्षक के स्तर पर पहुँचना आवश्यक है। ऐसा किये बिना शिक्षा देने और शिक्षा लेने का कार्य नहीं चल सकता है। इस प्रकार, शिक्षा एक चेतन और विचारपूर्ण प्रक्रिया (Conscious and Deliberate Process) है। इस प्रक्रिया में 'कर्ता और कर्म का सम्बन्ध' (Subject-Object Relationship) होता है।

2. त्रिमुखी प्रक्रिया : Tri-Polar Process

जॉन ड्यूवी शिक्षा को द्विमुखी प्रक्रिया न मानकर, त्रिमुखी प्रक्रिया मानता है। उसका कथन है कि शिक्षा में शिक्षक और शिष्य के अतिरिक्त एक तीसरा तत्त्व भी है। यह तत्त्व 'सामाजिक शक्तियाँ' हैं। शिक्षा में इन तीनों तत्त्वों की पारस्परिक क्रिया निहित है। सामाजिक शक्तियाँ समाज या सामाजिक वातावरण के माध्यम से शिक्षक और शिष्य को विषय-सामग्री देती हैं। इसी विषय-सामग्री को हम विस्तृत अर्थ में 'पाठ्यक्रम' कहते हैं।

सामाजिक तत्त्व पर बल देते हुए, ड्यूवी ने लिखा है कि बालक को उस समाज में और उस समाज के लिए रहना है, जिसका कि वह सदस्य है। अतः उसका विकास समाज में और समाज के द्वारा ही हो सकता है। ड्यूवी ने शिक्षा के सामाजिक तत्त्व को महत्त्व दिया है, क्योंकि समाज के द्वारा ही बच्चों में सामाजिक कुशलता और समाज-स्वीकृत आचरण का विकास होता है। इसी के फलस्वरूप, वे सामाजिक प्राणी बनते हैं। उन्हें ऐसा बनाना ही सच्ची शिक्षा है। अतः 'सामाजिक तत्त्व' शिक्षा की प्रक्रिया का आवश्यक अंग है।

शिक्षा के आवश्यक अंग
Essential Parts of Education

अमरीकी शिक्षाविद् हैंडरसन (Henderson) के अनुसार :—शिक्षा के तीन आवश्यक अंग हैं—(1) प्रशिक्षण, (2) निर्देश, और (3) प्रेरणा।

1. प्रशिक्षण : **Training**—'प्रशिक्षण' का मुख्य ध्येय—आदतों का निर्माण करना है। हम बालकों को अच्छी आदतें डालने में जितनी अधिक सहायता देंगे, उतने ही अधिक अच्छे ढंग से वे जीवन के लिए तैयार होंगे। पर केवल प्रशिक्षण ही काफी नहीं है।

2. निर्देश : **Instruction**—'निर्देश' बालक को ज्ञान प्राप्त करने और अपनी बुद्धि का विकास करने में सहायता देता है। बालक, शिक्षक से बहुत-कुछ सुनता है, और उसके निर्देश के अनुसार पुस्तकों और विभिन्न विषयों को पढ़ता है। फलतः उसके ज्ञान की वृद्धि होती है और वह अच्छे व बुरे कार्यों में अन्तर करने लगता है। पर यह आवश्यक नहीं है कि सभी बालक ऐसा करें। अतः केवल निर्देश ही काफ़ी नहीं है।

3. प्रेरणा : **Inspiration**—बालक में प्रशिक्षण द्वारा अच्छी आदतों का निर्माण हो जाता है। निर्देश द्वारा उसकी बुद्धि का विकास हो जाता है। पर अच्छी

आदतों और ज्ञान पर आधारित अच्छे कार्यों को करने के लिए उसे 'प्रेरणा' की आवश्यकता है। इसलिए, 'प्रेरणा' को शिक्षा का सबसे आवश्यक और महत्त्वपूर्ण अंग माना गया है।

शिक्षा व निर्देश में अन्तर
Distinction between Education & Instruction

शिक्षा और निर्देश या अध्यापन में निम्नलिखित अन्तर हैं :—

1. शिक्षा' एक विस्तृत वस्तु है। 'निर्देश' शिक्षा का एक अंग है।
2. 'शिक्षा' शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया जाता है। 'निर्देश' शब्द का प्रयोग शिक्षा के संकुचित अर्थ में किया जाता है।
3. 'शिक्षा' का कार्य जन्म-भर चलता है। 'निर्देश' का कार्य केवल उसी समय तक चलता है जब तक बालक विद्यालय में रहता है।
4. 'शिक्षा' एक स्वाभाविक और असीमित प्रक्रिया है। 'निर्देश' एक कृत्रिम और सीमित प्रक्रिया है।
5. 'शिक्षा' में बालक का स्थान मुख्य होता है। 'निर्देश' या 'अध्यापन' में अध्यापक का स्थान मुख्य होता है
6. भाटिया व भाटिया (Bhatia & Bhatia) के अनुसार :—"शिक्षा निर्देश से अधिक श्रेष्ठ और उत्तम है। निर्देश ज्ञान प्रदान करने या किसी उपयोगी कौशल को सीखने तक सीमित है। शिक्षा का क्षेत्र इससे विशाल है।"
7. एफ० डब्ल्यू० रॉबर्टसन के अनुसार :—"निर्देश, कक्षा में समाप्त हो जाता है, पर शिक्षा केवल जीवन के साथ समाप्त होती है।"
   "Instruction ends in the class-room but education ends only with life."—F. W. Robertson.

शिक्षा के स्वरूप
Forms of Education

हम शिक्षा के विभिन्न रूपों का नीचे की पंक्तियों में संक्षिप्त वर्णन कर रहे हैं।

1. नियमित व अनियमित शिक्षा : Formal & Informal Education

(अ) नियमित शिक्षा : Formal Education—नियमित शिक्षा वह शिक्षा है, जो जान-बूझकर और विचारपूर्वक दी जाती है। इस शिक्षा को बालक भी जान बूझकर प्राप्त करता है। इस शिक्षा की योजना पहले ही बना ली जाती है और इसका ध्येय भी निश्चित कर लिया जाता है। इसमें बालक को निश्चित समय पर और नियमित रूप से निश्चित ज्ञान दिया जाता है।

(1) यह शिक्षा विशेष प्रकार की संस्थाओं में दी जाती है। (2) इसका आरम्भ अनियमित शिक्षा के बाद होता है। साधारणतः जब बालक, वयस्क हो जाता है, तब इसका अन्त हो जाता है। इस शिक्षा का प्रमुख स्थान 'स्कूल' है। 'स्कूल' के अतिरिक्त, चर्च पुस्तकालय, अजायबघर, चित्र-भवन और पुस्तकें भी नियमित शिक्षा के साधन (Agencies) है।

(ब) अनियमित शिक्षा : Informal Education—हिन्दू संस्कृति के अनुसार यह शिक्षा बालक के जन्म से कुछ मास पहले ही प्रारम्भ हो जाती है। इसीलिए, होने वाली माताओं से यह आशा की जाती है कि वे अपने आचरण को अच्छा बनायें। अभिमन्यु ने अपनी माता के गर्भ में ही चक्रव्यूह को तोडना सीख लिया था।

अनियमित शिक्षा—बालक को अनायास और आकस्मिक रूप में प्राप्त होती है। यह शिक्षा जीवन-भर चलती रहती है। इसे बालक घर में, घर से बाहर, खेल के मैदान मे, अपने मित्रों के साथ बातचीत करने में, उठते-बैठते, खेलते-कूदते हर समय किसी-न-किसी रूप में प्राप्त करता है। वह अपने माता-पिता, भाई-बहिनों, मित्रों, शिक्षकों आदि को कुछ करते हुए देखता है और उसका अनुकरण करता है।

इस शिक्षा की कोई निश्चित योजना, कोई निश्चित स्थान, कोई निश्चित समय और कोई निश्चित नियम नही होता है। यह शिक्षा हर समय और हर स्थान पर किसी-न-किसी रूप मे चलती रहती है। इस शिक्षा के साधन है—परिवार, धर्म समाज, राज्य, रेडियो, समाचार-पत्र, खेल के मैदान, दल, गुट, युवक-समूह आदि।

2. प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष शिक्षा : Direct & Indirect Education

(अ) प्रत्यक्ष शिक्षा Direct Education—इस शिक्षा को 'वैयक्तिक शिक्षा' (Personal Education) भी कहा जाता है। यह शिक्षा अध्यापक और छात्र के बीच होती रहती है। अध्यापक अपने ज्ञान, आदर्शों और उद्देश्यों से छात्र के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है।

(ब) अप्रत्यक्ष शिक्षा : Indirect Education—इस शिक्षा को 'अवैयक्तिक शिक्षा' (Impersonal Education) भी कहा जाता है। जब छात्र पर अध्यापक के उपदेश का प्रभाव नही पडता है, तब वह विभिन्न प्रकार के अप्रत्यक्ष साधनों को अपना कर छात्र के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है।

हम 'प्रत्यक्ष' और 'अप्रत्यक्ष' विधियों के अन्तर को उदाहरण द्वारा स्पष्ट कर सकते है। मान लीजिए, शिक्षक बालकों में समय-तत्परता और नियमबद्धता की आदतों का विकास करना चाहता है। वह इस कार्य को दो प्रकार से कर सकता है :—

1. वह समय-तत्परता और नियमबद्धता पर उपदेश दे सकता है।
2. वह अपने कार्यों में समय-तत्पर और नियमबद्ध हो सकता है।

इन दोनों विधियों मे पहली 'प्रत्यक्ष' और दूसरी 'अप्रत्यक्ष' है। इनमें दूसरी विधि पहली से अच्छी है, क्योंकि उदाहरण उपदेश से अच्छा होता है। उदाहरण का प्रभाव स्थायी होता है, जबकि उपदेश का प्रभाव क्षणिक होता है।

कुछ दशाओं में प्रत्यक्ष विधि को भी अपनाया जा सकता है; उदाहरणार्थ—बच्चे से कहना चाहिए कि यदि वह गर्मी के मौसम में धूप में खेलेगा, तो बीमार हो सकता है। उससे यह भी कहा जा सकता है कि जाड़े के मौसम में पानी में भीगने से सर्दी लग सकती है। फिर भी, बालक को इन बातों का स्वयं अनुभव करने देना चाहिए, क्योंकि तभी वह उपदेश के महत्त्व को समझ सकता है।

अतः शिक्षक का यह कर्त्तव्य है कि वह बच्चों में कार्य करने की आन्तरिक इच्छा उत्पन्न करे और उन पर उसे करने के लिए किसी प्रकार का बल प्रयोग न करे। ऐसी दशा में ही मार्ग-प्रदर्शन को सफल माना जाता है। यही वास्तव में सच्ची शिक्षा है। अतः हम यह कह सकते हैं कि शिक्षा—विवेकपूर्ण और ज्ञानपूर्ण पथप्रदर्शन है।

3. वैयक्तिक व सामूहिक शिक्षा : Individual & Collective Education

(अ) वैयक्तिक शिक्षा : Individual Education—वैयक्तिक शिक्षा का सम्बन्ध केवल एक बालक से होता है। यह शिक्षा उसको व्यक्तिगत रूप से और अकेले दी जाती है। शिक्षा देते समय उसकी रुचि, प्रकृति, योग्यता और व्यक्तिगत विभिन्नता का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता है। शिक्षा देते समय इन बातों के अनुकूल ही शिक्षा-विधियों का प्रयोग किया जाता है। आधुनिक समय में वैयक्तिक शिक्षा पर बहुत बल दिया जा रहा है। परिणामतः अनेक वैयक्तिक शिक्षण-पद्धतियों की खोज की गई है।

(ब) सामूहिक शिक्षा : Collective Education—सामूहिक शिक्षा का सम्बन्ध एक बालक से न होकर, बालकों के समूह से होता है। बहुत-से बालकों के एक समूह को, एक कक्षा में—एक साथ शिक्षा दी जाती है। इस शिक्षा में बालकों की व्यक्तिगत रुचियों, प्रवृत्तियों, योग्यताओं और विभिन्नताओं की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है। आजकल सभी देशों के, सभी प्रकार के स्कूलों में शिक्षा का यही स्वरूप प्रचलित है।

4. सामान्य व विशिष्ट शिक्षा : General & Specific Education

(अ) सामान्य शिक्षा : General Education—इस शिक्षा को उदार शिक्षा भी कहते हैं। आजकल के भारतीय हाई और हायर सेकण्डरी स्कूलों में इसी प्रकार की शिक्षा दी जाती है। इस शिक्षा क कोई विशेष उद्देश्य नहीं होता है। यह बालकों को केवल सामान्य जीवन के लिए तैयार करती है। इसका उद्देश्य—केवल उनकी सामान्य बुद्धि तो तीव्र करना है। यह उनको किसी विशेष व्यवसाय के लिए तैयार नहीं करती है।

(ब) विशिष्ट शिक्षा : Specific Education—यह शिक्षा किसी विशेष लक्ष्य को ध्यान में रखकर दी जाती है। इसका उद्देश्य—बालकों को किसी विशेष व्यवसाय या निश्चित कार्य के लिए तैयार करना होता है। इस शिक्षा को प्राप्त

करने के बाद बालक जीवन के एक विशेष या निश्चित क्षेत्र में कार्य करने के लिए कुशल समझा जाने लगता है। बालक को इंजीनियर, डाक्टर, वकील या एकाउन्टेन्ट बनाना विशिष्ट शिक्षा के उदाहरण है।

शिक्षा की परिभाषाएँ
Definitions of Education

शिक्षा के बारे में इतना सब-कुछ लिखने के बाद, हम शिक्षा के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषायें दे रहे है। इनसे स्पष्ट हो जायगा कि विभिन्न शिक्षा-शास्त्रियो के अनुसार शिक्षा का अर्थ क्या है।

1. शिक्षा : जन्मजात शक्तियों को व्यक्त करने की प्रक्रिया के अर्थ में : Education as the Process of Drawing Out the Innate Powers

(i) सुकरात :—"शिक्षा का अर्थ है—"प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क में अदृश्य रूप में विद्यमान संसार के सर्वमान्य विचारों को प्रकाश में लाना।"

"Education means the bringing out of the ideas of universal validity which are latent in the mind of every man."—**Socrates.**

(ii) एडीसन :—"जब शिक्षा मानव-मस्तिष्क को प्रभावित करती है, तब वह उसके प्रत्येक अदृश्य गुण और पूर्णता को बाहर लाकर व्यक्त करती है।"

"When education works on a noble mind, it draws out to view every latent virtue and perfection."—**Addison.**

(iii) फ्रॉबेल :—"शिक्षा वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा बालक की जन्मजात शक्तियाँ बाहर प्रकट होती हैं।"

"Education is a process by which the child makes its internal external."—**Froebel.**

2. शिक्षा : वैयक्तिकता के पूर्ण विकास के अर्थ में : Education as the Complete Development of Individuality

(i) टी० पी० नन :—"शिक्षा, वैयक्तिकता का पूर्ण विकास है, जिससे कि व्यक्ति अपनी पूर्ण योग्यता के अनुसार मानव-जीवन को योग दे सके।"

"Education is the complete development of individuality, so that man can make an original contribution to human life according to his best capacity."—**T. P. Nunn.**

(ii) पेस्टॉलाजी :—"शिक्षा, मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का स्वाभाविक, सामंजस्यपूर्ण और प्रगतिशील विकास है।"

"Education is the natural, harmonious and progressive development of man's innate powers."—**Pestalozzi.**

(iii) कॉण्ट :—"शिक्षा, व्यक्ति की उस सब पूर्णता का विकास है, जिसकी उसमें क्षमता है।"

"Education is the development in the individual of all the perfection of which he is capable."—**Kant.**

3. शिक्षा : समूह में परिवर्तन करने के अर्थ में : Education as Producing Change in the Group

(i) ब्राउन :—"शिक्षा चैतन्य रूप में एक नियन्त्रित प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन किये जाते हैं और व्यक्ति के द्वारा समूह में।"

"Education is the consciously controlled process whereby changes in behaviour are produced in the person, and through the person within the group."—**Brown.**

(ii) "रिआरगेनिजेशन ऑफ़ सेकण्डरी स्कूल-रिपोर्ट" :—"शिक्षा का उद्देश्य हर व्यक्ति के ज्ञान, रुचियों, आदर्शों, आदतों और शक्तियों का विकास करना है, ताकि उसे अपना उचित स्थान मिल सके और वह उस स्थान का प्रयोग स्वयं और समाज को उच्च उद्देश्यों की ओर ले जाने के लिए कर सके।"

"The purpose of education is to develop in each individual the knowledge, interests, ideals, habits and powers whereby he will find his place and use that place to shape both himself and society toward even nobler ends."—*Report of the Commission on the Reorganization of Secondary Schools,* U. S. A.

4. शिक्षा : वातावरण से सामंजस्य करने के अर्थ में : Education as Adjustment to Environment

(i) हार्न :—"शिक्षा शारीरिक और मानसिक रूप से विकसित सचेत मानव का अपने मानसिक, संवेगात्मक और संकल्पित वातावरण से उत्तम सामंजस्य स्थापित करना है।"

"Education is the superior adjustment of a physically developed conscious human being to his intellectual, emotional and volitional environment."—**Horne.**

(ii) बॉसिंग :—शिक्षा का कार्य—व्यक्ति का वातावरण से उस सीमा तक सामंजस्य स्थापित करना है, जिससे व्यक्ति और समाज—दोनों को स्थायी सन्तोष प्राप्त हो सके।"

"The function of education is conceived to be the adjustment of man to his environment to the end that the most enduring satisfaction may accrue to the individual and to the society."

—**Bossing.**

(iii) जेम्स :—"शिक्षा, कार्य-सम्बन्धी अर्जित आदतों का संगठन है, जो व्यक्ति को उसके भौतिक और सामाजिक वातावरण में उचित स्थान देती है।"

"Education is the organization of acquired habits of such action as will fit the individual to his physical and social environment."—James.

परिभाषाओं की आलोचना : Criticism of Definitions

शिक्षा की जो परिभाषाएँ ऊपर दी गई हैं, उनमें से किसी को भी पूर्ण नहीं कहा जा सकता है। सभी परिभाषाएँ शिक्षा के एक विशेष पहलू पर बल देती हैं। शिक्षा केवल बालक की जन्मजात शक्तियों को बाहर लाने की प्रक्रिया नहीं है। शिक्षा का सम्बन्ध केवल बालक के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास से भी नहीं है। शिक्षा का कार्य केवल यही नहीं है कि वह समूह में परिवर्तन उत्पन्न करे। शिक्षा का कार्य केवल यही नहीं माना जा सकता है कि वह व्यक्ति का वातावरण से सामंजस्य स्थापित करे।

शिक्षा का अर्थ और कार्य इससे कहीं अधिक व्यापक है। इसलिए, शिक्षा की उपर्युक्त सभी परिभाषाएँ अधूरी हैं। शिक्षा के अन्तर्गत व्यक्ति, समाज, वातावरण, सामाजिक विरासत आदि सभी कुछ आ जाते हैं। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर हम शिक्षा की आधुनिक परिभाषा नीचे दे रहे हैं।

शिक्षा की आधुनिक परिभाषा : Modern Definition of Education

शिक्षा के सम्बन्ध में अपने विचारों को शब्दबद्ध करते हुए, डॉ० एस० राधाकृष्णन् ने लिखा है :—"अब यह बात अधिकाधिक स्वीकार की जाने लगी है कि शिक्षा के प्रति सन्तुलित दृष्टिकोण का विकास किया जाना चाहिए। मानसिक प्रशिक्षण के साथ-साथ, कल्पना-शक्ति और मनोभावों को निर्मल बनाया जाना चाहिए। जिज्ञासु मस्तिष्क, अन्तर्ज्ञानी हृदय, चेतनाशील आत्मा और छान-बीन करने वाले विवेक का विकास किया जाना चाहिए। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इस युग में हमें यह याद रखना चाहिए कि जीवन का वृक्ष, लोहे के ढाँचे से बिल्कुल भिन्न है। यदि हम विज्ञान और प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके निर्धनता को दूर करना चाहते हैं, तो ललित कलाओं द्वारा मस्तिष्क की हीनता को भी दूर किया जाना चाहिए। केवल भौतिक दरिद्रता ही दुःख का कारण नहीं है। हमें समाज के शक्तिशाली हितों को ही नहीं, वरन् मानव-हितों को भी सन्तुष्ट करना चाहिए। सौन्दर्यात्मक और आध्यात्मिक उत्कर्ष—पूर्ण मानव के निर्माण में योग देता है। मानव के निर्माणकारी पहलू का विकास, कला के द्वारा होता है।"

अपने शिक्षा-सम्बन्धी विचारों के आधार पर, डा० राधाकृष्णन् ने शिक्षा की आधुनिकतम परिभाषा को थोड़े-से पर सारगर्भित शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया है :—"शिक्षा को मनुष्य और समाज का निर्माण करना चाहिए।"

"Education should be man-making and society-making."
—S. Radhakrishnan : *Occasional Speeches & Writings*, p. 191.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss the place and importance of social environment in the education of the child.

बालक की शिक्षा में सामाजिक वातावरण के स्थान एवं महत्त्व की विवेचना कीजिए।

2. What is education ? How can it be interpreted in broader and narrower sense ?

शिक्षा क्या है ? संकुचित और व्यापक दृष्टिकोण से इसकी व्याख्या कैसे की जा सकती है ?

3. What do you understand by education ? Point out its essential parts and forms.

'शिक्षा' से आप क्या समझते है ? इसके आवश्यक अगों एवं स्वरूपों का उल्लेख कीजिए।

4. Comment on the following :—
   (i) "Education is a bi-polar process."
   (ii) "Education is not a bi-polar, but a tri-polar process."
   (iii) "Formal and Informal Education."

अधोलिखित की व्याख्या कीजिए :—
(i) "शिक्षा—द्विमुखी प्रक्रिया है।"
(ii) "शिक्षा—द्विमुखी प्रक्रिया न होकर त्रिमुखी प्रक्रिया है।"
(iii) "नियमित और अनियमित शिक्षा।"

2

शिक्षा के कार्य

FUNCTIONS OF EDUCATION

"शिक्षा से सन्तुलित मानव का विकास करने, और बालकों को समाज के लिए लाभप्रद कार्यों को करने और सामूहिक जीवन में भाग लेने के लिए तैयार करने की आशा की जाती है।"

"Education is supposed to develop an integrated human being and to prepare young people to perform useful functions for society ann to take part in collective life."—**Jawaharlal Nehru.**

विषय-प्रवेश

'शिक्षा' गतिशील है। अति प्राचीन समय से लेकर आज तक शिक्षा अपनी लम्बी यात्रा मे अनेक परिवर्तन देख चुकी है। ये परिवर्तन उसमें इसलिए हुए है, ताकि वह समय की आवश्यकताओ को पूरा कर सके और उन कार्यों को कर सके, जो विशेष समय मे—विशेष समाज के लिए आवश्यक हैं। यही कारण है कि शिक्षा के कार्यो के बारे में विचारको और शिक्षाविदो में मतभेद रहा है और अब भी है; उदाहरणार्थ—डेनियल वेबस्टर (Daniel Webster) के अनुसार :—"शिक्षा का कार्य भावनाओं को अनुशासित, संवेगों को नियन्त्रित, प्रेरणाओं को उत्तेजित, धार्मिक भावना को विकसित और नैतिकता को अभिवृद्धित करना है।"

इसी प्रकार, जॉन ड्यूवी का कथन है :—"शिक्षा का कार्य—असहाय प्राणी के विकास में सहायता पहुँचाना है, ताकि वह सुखी, नैतिक और कुशल मानव बन सके।"

"The function of education is to help the growing of a helpless young animal into a happy, moral and efficient human being."

—John Dewey.

शिक्षा के कार्यों के बारे में इस प्रकार के अनेक विचार दिए जा सकते है। यहाँ हम भारतीय दशाओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के सामान्य कार्यों का वर्णन कर रहे है।

शिक्षा के सामान्य कार्य
General Functions of Education

1. जन्मजात शक्तियों का प्रगतिशील विकास : Progressive Development of Innate Powers—शिक्षा के क्षेत्र में मनोविज्ञान को महत्त्वपूर्ण स्थान देने वाले शिक्षा-शास्त्रियों का कहना है कि शिक्षा का मुख्य कार्य—बालक की जन्मजात शक्तियो का विकास करना है। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि बालक—प्रेम, जिज्ञासा, तर्क, कल्पना, आत्म-सम्मान आदि शक्तियों को लेकर जन्म लेता है।

अतः शिक्षा द्वारा इन शक्तियों का विकास किया जाना आवश्यक है। पेस्टालॉजी (Pestalozzi) ने इसका समर्थन करते हुए लिखा है :—"शिक्षा—मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का स्वाभाविक, सामंजस्यपूर्ण और प्रगतिशील विकास है।"

2. सन्तुलित व्यक्तित्व का विकास : Development of Balanced Personality—शिक्षा का एक मुख्य कार्य है—बालक के व्यक्तित्व का विकास करना। व्यक्तित्व के अन्तर्गत व्यक्ति के सभी पहलू आ जाते है; जैसे—शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक, संवेगात्मक आदि। शिक्षा द्वारा इन सभी पहलुओ का सन्तुलित विकास किया जाना चाहिए। इनमें से एक भी पहलू के विकृत होने से व्यक्तित्व का सन्तुलित विकास नही हो सकता है।

3. मूल-प्रवृत्तियों का नियन्त्रण, पुनर्निर्देशन व शोधन : Control, Redirection & Sublimation of Instincts—बालक मे कुछ मूल-प्रवृत्तियाँ होती है; जैसे—जिज्ञासा, आत्म-प्रदर्शन और सामूहिक जीवन। ये और अन्य सभी मूल-प्रवृत्तियाँ जन्मजात होती है। इनको सीखा नही जाता है। इनमें स्थिरता होती है। ये मनुष्य के जीवन में सदैव बनी रहती है। प्रत्येक मूल-प्रवृत्ति का कोई-न-कोई लक्ष्य अवश्य होता है और उसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मनुष्य कार्य करता है। क्योंकि मनुष्य सामाजिक प्राणी है और उसे समाज में अन्य व्यक्तियों के साथ रहना है, इसलिए यह आवश्यक है कि उसके द्वारा किये गये कार्य अच्छे हो। इन कार्यों को यह रूप शिक्षा के द्वारा दिया जा सकता है।

अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा—व्यक्ति को उन पर नियन्त्रण करना सिखाये, उनका पुनर्निर्देशन करे अथवा उनकी शक्ति को अच्छी दिशा में मोड़े और उनका शोधन करे अथवा उनकी शक्ति को अच्छे कार्यों में लगाए। शिक्षा के इस कार्य पर

बल देते हुए डेनियल वेबस्टर (Daniel Webster) ने लिखा है :—**"शिक्षा के द्वारा भावनाओं को अनुशासित, आवेगों को नियन्त्रित और अच्छी प्रेरणाओं को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।"**

4. वयस्क जीवन की तैयारी : Preparation for Adult Life—शिक्षा वालक को वयस्क जीवन के लिए तैयार करती है। "आज का बालक कल का नागरिक है।" दूसरे शब्दों में, बालक बड़ा होकर नागरिक बनेगा। इस स्थिति में उसके कुछ कर्त्तव्य, कुछ दायित्व और कुछ अधिकार होंगे। शिक्षा के द्वारा उसे इस प्रकार तैयार किया जाना चाहिए कि वह इनका निर्वाह कर सके। शिक्षा के इस पहलू पर बल देते हुए मिल्टन ने लिखा है :—**"मैं उसी को पूर्ण शिक्षा कहता हूँ, जो मनुष्य को शान्ति और युद्ध के समय व्यक्तिगत और सार्वजनिक—दोनों प्रकार के सब कार्यों को उचित रूप से करने के योग्य बनाती है।"**

"I call a complete education that which fits a man to perform justly all the offices, both private and public, of peace and war."

—Milton.

5. राजनीतिक व राष्ट्रीय सुरक्षा : Political & National Security—शिक्षा का कार्य—राजनीतिक और राष्ट्रीय सुरक्षा को बनाये रखना है। शिक्षा के अभाव में इस सुरक्षा की प्राप्ति या इसका अन्त होना स्वाभाविक है। भारत पर अंग्रेजों के लम्बे शासन-काल में शिक्षा ने यह कार्य नहीं किया। यही कारण था कि हमारे देश को इस बात का बड़ी कठिनता से आभास हुआ कि इस प्रकार की भी कोई सुरक्षा होती है।

आज जब भारत स्वतन्त्र है, इस सुरक्षा की अत्यधिक आवश्यकता है। देश पर चीन और पाकिस्तान के आक्रमण हो चुके हैं और भारत की राजनीतिक तथा राष्ट्रीय सुरक्षा सकट में पड़ चुकी है। अतः शिक्षा का प्रमुख कार्य है—व्यक्तियों को इस सुरक्षा को बनाये रखने के लिए तैयार करना। एच० मैन (H. Mann) का कथन है :—**"केवल शिक्षा से ही हमारी राजनीतिक सुरक्षा सम्भव है।"**

6. संस्कृति व सभ्यता का संरक्षण : Preservation of Culture & Civilization—शिक्षा का एक सामान्य कार्य—संस्कृति और सभ्यता का संरक्षण है। प्रत्येक समाज के अपने रीति-रिवाज, परम्परायें, नैतिकता, धर्म, विश्वास आदि होते है, जिनको उसने अति प्राचीन समय से लेकर आज तक अर्जित किया है। प्रत्येक समाज को अपनी सस्कृति और सभ्यता पर गर्व होता है और वह उन्हें किसी प्रकार भी नष्ट नहीं होने देना चाहता है।

अतः शिक्षा का कार्य न केवल इनका संरक्षण करना है, वरन् इनकी प्रगति भी करना है। शिक्षा के इस कार्य पर अपने विचारों को व्यक्त करते हुए ओटावे (Ottaway) ने लिखा है :—**"शिक्षा का एक कार्य—समाज के सांस्कृतिक मूल्यों**

और व्यवहार के प्रतिमानों को अपने तरुण और कार्यशील सदस्यों को प्रदान करना है।"

7. चरित्र-निर्माण व नैतिक विकास : **Character Formation & Moral Development**—शिक्षा का एक अति महत्त्वपूर्ण कार्य—बालक के चरित्र का निर्माण और उसका नैतिक विकास करना है। शिक्षा के इस कार्य पर डा० राधाकृष्णन् ने बल देते हुए लिखा है :—"चरित्र, भाग्य है। चरित्र वह वस्तु है, जिस पर राष्ट्र के भाग्य का निर्माण होता है। तुच्छ चरित्र वाले मनुष्य श्रेष्ठ राष्ट्र का निर्माण नहीं कर सकते हैं।"

"Character is destiny. Character is that on which the destiny of a nation is built. One cannot have a great nation with men of small character."—**Dr. Radhakrishnan.**

8. सामाजिक भावना का समावेश : **Inculcation of Social Feeling**—व्यक्ति और समाज का एक-दूसरे से अटूट सम्बन्ध है। व्यक्ति अपने जन्म से लेकर मृत्यु तक समाज में रहता है। समाज में रहकर ही वह उन्नति कर सकता है, यश प्राप्त कर सकता है और दूसरों की भलाई कर सकता है।

यह सब वह तभी कर सकता है, जब उसमें प्रेम, दया, परोपकार, सहानुभूति आदि के सामाजिक गुण हों। इन गुणों का विकास शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है। एच० गार्डन (H. Gordon) के अनुसार :—"शिक्षक को यह जानना आवश्यक है कि उसे सामाजिक प्रक्रिया को उन व्यक्तियों को समझाना चाहिए, जो इसे समझने में असमर्थ हैं।"

9. उत्तम नागरिक का निर्माण : **Creation of Good Citizens**—उत्तम नागरिक, उत्तम राज्य का आधार-स्तम्भ है। यही कारण है कि प्रत्येक राज्य इस दिशा में प्रयत्नशील रहता है कि उसके नागरिक अच्छे हों। वह आशा करता है कि उसके नागरिक—ईमानदार, परिश्रमी, देशभक्त और अपने कर्त्तव्यों तथा दायित्वों को भली प्रकार समझने वाले हों। इन गुणों का विकास, शिक्षा द्वारा किया जाना ही सम्भव है।

इसीलिए, शिक्षा का यह अनिवार्य कार्य समझा जाता है कि वह व्यक्तियों में इन गुणों का विकास करके उनको उत्तम नागरिक बनाये। 'न्यूयार्क की वैधानिक समिति' (*Revolutionary Radicalism*, Vol. III, p. 2343) ने अपनी एक रिपोर्ट में लिखा है :—"सार्वजनिक शिक्षा-व्यवस्था का मुख्य कार्य—छात्रों को राज्य में नागरिकता के दायित्वों और कर्त्तव्यों को निभाने के लिए तैयार करना है।"

10. सामाजिक सुधार व उन्नति : **Social Reform & Progress**—समाज द्वारा बालक की शिक्षा का आयोजन इसलिए किया जाता है, ताकि बालक न केवल अपने को समाज के अनुकूल बनाए, वरन् समाज के नियमों और सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त करके उसका सुधार करे और उसे उचित दिशा में आगे बढ़ाये। शिक्षा के

इस कार्य को महत्त्वपूर्ण बताते हुए ड्यूवी (Dewey) ने लिखा है :—"**शिक्षा में अति निश्चित और अल्पतम साधनों द्वारा सामाजिक और संस्थागत उद्देश्य के साथ-साथ समाज के कल्याण, प्रगति और सुधार में रुचि का पुष्पित होना पाया जाता है।**"

हमने ऊपर की पंक्तियों मे शिक्षा के कुछ कार्यों का वर्णन किया है, पर शिक्षा के कार्य केवल इन्हीं तक सीमित नही है। कारण यह है कि शिक्षा का कार्य-क्षेत्र अति व्यापक है। इसके कार्य-क्षेत्र में वे सभी बातें आ जाती है, जो व्यक्ति पर निर्माणकारी प्रभाव डालती है, और उसे जीवन तथा समाज के उचित कार्यों को उचित समय पर और उचित प्रकार से करने के योग्य बनाती हैं। ये उचित कार्य क्या है? इनको सदैव के लिए निश्चित कर देना असम्भव है। ये कार्य समय की गति के साथ प्रत्येक देश और प्रत्येक समाज में बदलते रहते हैं।

शिक्षा के कार्यों को निर्धारित करने मे एक दूसरी कठिनाई यह है कि शिक्षा की प्रक्रिया स्थिर न होकर सदैव चलने वाली है। डा० जाकिर हुसेन (Zakir Husain) ने ठीक ही लिखा है :—"**शिक्षा की प्रक्रिया सदैव चलने वाली प्रक्रिया है, जिसमें यात्रा उतनी ही महत्त्वपूर्ण है, जितना कि निर्दिष्ट स्थान। और निर्दिष्ट स्थान पर कोई कभी पहुँचता नहीं है। अतः शिक्षा की प्रत्येक मंजिल की अपनी विशेषता और महत्त्व होता है।**"

डा० जाकिर हुसेन ने जो कुछ लिखा है, उसको ध्यान में रखकर हम उन्हीं के शब्दों में कह सकते है कि शिक्षा का प्रमुख कार्य यह है :—"**शिक्षा का कार्य बालक के मस्तिष्क को शुद्ध, नैतिक और बौद्धिक मूल्यों का अनुभव करने में इस प्रकार सहायता देना है कि वह इन मूल्यों से प्रेरित होकर, इनको सर्वोत्तम प्रकार से अपने कार्य और अपने जीवन में प्राप्त करे।**" शिक्षा के इस कार्य के अन्दर प्रायः सभी कार्यों का समावेश हो जाता है।

"The function of education is to help the mind of the educand to experience the absolute moral and intellectual values, so that they in turn urge him to realize them, as best as he may, in his work and in his life."—**Dr. Zakir Husain.**

मानव-जीवन में शिक्षा के कार्य
Functions of Education in Human Life

परतन्त्र भारत में अंग्रेजों ने हमारे सामने शिक्षा का जो रूप रखा था, वह हमारे लिए नया था, यद्यपि हम अशिक्षित नही थे। उन्होंने स्कूलों और कॉलिजों में अंग्रेजी के अध्ययन पर बल देकर एक नये भारतीय वर्ग का निर्माण किया। इस प्रकार, इस देश के निवासी दो वर्गों मे बँट गये। एक ओर तो मुट्ठी भर वे लोग थे, जो अंग्रेजी पढ जाने के कारण अपने को अंग्रेजों से कम नही समझते थे। दूसरी ओर जन-साधारण का वह विशाल समूह था, जिसे अंग्रेजी से कोई प्रयोजन नही था।

अंग्रेज़ों के भारत छोड़ने के बाद अंग्रेज़ी पढ़े और बिना अंग्रेजी पढ़े व्यक्तियों में सामाजिक अन्तर को मानव और राष्ट्र के लिए हितकर नहीं समझा गया। अतः स्वतन्त्रता-प्राप्ति के समय से शिक्षा के रूप को इस प्रकार बदलने का प्रयास किया जा रहा है, जिससे कि वह मानव और राष्ट्र—दोनों का हित करे। यह शिक्षा को कुछ निश्चित कार्यों को सौंप कर किया जा सकता है। ये कार्य क्या हैं, इन्हीं पर हम यहाँ विचार करेंगे।

1. आवश्यकताओं की पूर्ति : Satisfaction of Naeds—आज के भारतीय समाज में शिक्षा का मुख्य कार्य—व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। जीवधारी होने के कारण, उसे भोजन, मकान और वस्त्र की जैविक आवश्यकताएँ है। सामाजिक प्राणी होने के कारण, उसे समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने की आवश्यकता है।

उसे कार्य की आवश्यकता है, जिससे कि वह अपने को लाभप्रद समझ सके। उसे अवकाश की आवश्यकता है, जिससे कि वह मनोरंजन कर सके। उसे संघर्ष की आवश्यकता है, जिससे कि वह उन्नति कर सके। उसे अवसर की आवश्यकता है, जिससे कि वह अपनी विशेष योग्यता को विकसित कर सके। उसे धर्म और जीवन-दर्शन की आवश्यकता है, जिससे कि उसके जीवन का पथ-प्रदर्शन हो सके।

इन सब आवश्यकताओं को पूर्ण करना—शिक्षा का आवश्यक कार्य है। मानव-जीवन में शिक्षा के इस कार्य का महत्व बताते हुए **स्वामी विवेकानन्द** (Swami Vivekananda) ने लिखा है :—"**शिक्षा का कार्य यह पता लगाना है कि जीवन की समस्याओं को किस प्रकार हल किया जाय, और आधुनिक सभ्य समाज का गम्भीर ध्यान इसी बात में लगा हुआ है।**"

2. आत्म-निर्भरता की प्राप्ति : Achievement of Self-Sufficiency—मानव-जीवन में शिक्षा का कार्य—व्यक्ति को आत्म-निर्भर बनाना है। ऐसा व्यक्ति समाज के लिए भार नही होता है। वह अपना भार स्वयं अपने ऊपर लेता है। इससे न केवल उसका, वरन् समाज का भी हित होता है। वह अपने कार्यों को सफलतापूर्वक करता है। परिणाम यह होता है कि वह जीवन में उन्नति करता है। साथ ही, अपने कार्यों को सफलतापूर्वक करने के कारण वह समाज की उन्नति में भी योग देता है।

आज भारतीय समाज कठिन समय में से होकर गुजर रहा है। अतः उसे आत्म-निर्भर मनुष्यों की ही आवश्यकता है, न कि ऐसे निकम्मे मनुष्यों की जो दूसरों का सहारा ढूँढ़ते हैं। आज से कई वर्ष पहले **स्वामी विवेकानन्द** (Swami Vivekananda) ने शिक्षा के इसी कार्य की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कहा था :—"**केवल पुस्तकीय ज्ञान से काम नहीं चलेगा। हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है, जिससे कि व्यक्ति अपने स्वय के पैरों पर खड़ा हो सकता है।**"

3. व्यावसायिक कुशलता की प्राप्ति : Achievement of Vocational Efficiency—मानव-जीवन में शिक्षा का कार्य—छात्रों को व्यावसायिक कुशलता की प्राप्ति में सहायता देना है। इस समय हमारे देश का बड़ी तेजी से औद्योगीकरण हो रहा है। इसलिए, वैज्ञानिकों, शिल्पियो और इन्जीनियरों की बहुत बड़ी संख्या में आवश्यकता है।

यदि शिक्षा—छात्रों को किसी व्यवसाय में कुशल बना देगी, तो इससे दो लाभ होंगे। छात्र, देश के उत्पादन में वृद्धि करेंगे। इसके अतिरिक्त, उन्हें नौकरी मिलने में कोई कठिनाई नहीं होगी। फलस्वरूप, उनकी जीविका की समस्या हल हो जावेगी ?

डा० राधाकृष्णन् (Radhakrishnan) का कथन है : **"प्रयोगात्मक विषयों में प्रशिक्षित व्यक्ति, कृषि और उद्योग के उत्पादन को बढ़ाने में सहायता देते हैं। ये विषय सरलतापूर्वक रोजगार पाने में भी सहायता देते हैं। छात्रों को जीविका उपार्जन करने में सहायता देना, शिक्षा का एक कार्य है—अर्थकारिका विद्या।"**

4. भौतिक सम्पन्नता की प्राप्ति : Achievement of Material Prosperity—शिक्षा का कार्य—व्यक्तियों को भौतिक सम्पन्नता प्राप्त करने में सहायता देना है। आज के भौतिकवादी युग में यदि शिक्षा यह कार्य नहीं करती है तो उसे व्यर्थ समझा जाता है। आजकल सभी माता-पिता यह चाहते हैं कि उनके बच्चे, शिक्षा प्राप्त करने के बाद जीवन में उच्च स्थान प्राप्त करें और ठाट-बाट से रहें।

शिक्षा के इस कार्य का उल्लेख करते हुए जॉन रस्किन (John Ruskin) ने लिखा है :—**"माता-पिता कहते हैं कि शिक्षा का मुख्य कार्य—उनके बच्चों को जीवन में अच्छे स्थान प्राप्त करने, बड़े और धनी व्यक्तियों के समाज में महत्त्वपूर्ण बनने और आराम तथा ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत करने के लिए तैयार करना है।"**

5. अच्छे नागरिकों का निर्माण : Creation of Good Citizens—शिक्षा का कार्य—उत्तम नागरिकों का निर्माण करना है। आज हमारा देश धर्म-निरपेक्ष प्रजातन्त्र है। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा—छात्रों में स्पष्ट विचार, अनुशासन, सहनशीलता, सहयोग, देश-प्रेम आदि गुणों का विकास करे। तभी शिक्षा, छात्रों को उत्तम नागरिक बनाकर प्रजातन्त्र को सफल बना सकेगी।

भारतीय प्रजातन्त्र में, जिसका उद्देश्य—कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है, ये उत्तम नागरिक किस प्रकार के हों, इसके बारे में डा० राधाकृष्णन् (Radhakrishnan) का कथन है :—**"कल्याणकारी राज्य में हमारा उद्देश्य—अपने सब नागरिकों की भोजन, कपड़ा और मकान की प्रारम्भिक आवश्यकताओं को पूरा करना ही नहीं होना चाहिए, वरन् उनको भाइयों के समान रहना सिखाना चाहिए—भले ही वे विभिन्न प्रजातियों, धर्मों और प्रान्तों के क्यों न हों।"**

6. व्यक्तित्व का विकास : Development of Personality—शिक्षा का कार्य—छात्रों के व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण विकास करना है। शिक्षा के इस कार्य पर

प्रायः सभी शिक्षाविदों द्वारा बल दिया गया है। फ्रेडरिक ट्रेसी (Frederick Tracy) के अनुसार :—"समस्त शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य—व्यक्तित्व के आदर्श की पूर्ण प्राप्ति है। यह आदर्श—संतुलित व्यक्तित्व है।"

7. चरित्र का विकास : Development of Character—यह कहना गलत न होगा कि आज के संसार में नैतिकता का प्रायः अभाव हो गया है। झूठ, छल, धोखेबाजी, स्वार्थ और घृणा का साम्राज्य दिखाई देने लगा है। इन सब बातों से मानव भले ही प्रगति करे, पर वह स्थायी कदापि नहीं हो सकती है।

अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा—व्यक्ति, समाज और संसार की बुराइयों को दूर करके उनमें नैतिकता का समावेश करे। शिक्षा ने इस कार्य की ओर संकेत करते हुए हरबर्ट (Herbart) ने लिखा है :—"शिक्षा का कार्य—उत्तम नैतिक चरित्र का विकास करना है।"

8. जीवन के लिए तैयारी : Preparation for Life—विलमॉट (Willmott) का कथन है :—"शिक्षा जीवन की तैयारी है।" ("Education is the apprenticeship of life.")। अब यदि शिक्षा—जीवन की तैयारी है, तो शिक्षा का कार्य है—बच्चों को जीवन के लिए तैयार करना। यदि शिक्षा यह कार्य नहीं करती है, तो बच्चे बड़े होकर जीवन की कठिनाइयों का सामना नहीं कर सकेंगे, उन संघर्षों से लोहा न ले सकेंगे, जो उनके सामने आयेंगे।

शिक्षा के इस कार्य पर अपने- विचार व्यक्त करते हुए स्वामी विवेकानन्द (Swami Vivekananda) ने लिखा है : —"यदि कोई मनुष्य केवल कुछ परीक्षाएँ पास कर सकता है और अच्छे व्याख्यान दे सकता है, तो आप उसको शिक्षित समझते हैं। क्या वह शिक्षा—शिक्षा कहलाने के योग्य है, जो सामान्य जनसमूह को जीवन के संघर्ष के लिए अपने आप को तैयार करने में सहायता नहीं देती है, और उनमें शेर का-सा साहस उत्पन्न नहीं करती हैं ?"

9. अनुभवों का पुनर्गठन : Reorganization of Experiences—व्यक्ति अपने जीवन में अनेक अनुभव प्राप्त करता है। शिक्षा का कार्य है—इन अनुभवों का पुनर्गठन और पुनर्रचना करना। यदि शिक्षा यह कार्य करती है, तो व्यक्ति अपनी भावी प्रगति के लिए अतीत का उपयोग कर सकता है, अन्यथा नहीं। ड्यूवी (Dewey) ने सत्य ही लिखा है :—"जीवन का मुख्य कार्य है—प्रत्येक पग पर अपने अनुभवों द्वारा जीवन को समृद्ध बनाना।"

10. वातावरण से अनुकूलन : Adaptation to Environment—वातावरण जड और चेतन—दोनों को शिक्षा देने वाला है। वातावरण से अनुकूलन न कर सकने के कारण निम्न वर्ग के पशु नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार, वातावरण व्यक्ति के केवल उन्हीं कार्यों को प्रोत्साहित करता है, जो उसके अनुकूल होते है।

अतः शिक्षा का यह कार्य है कि वह व्यक्ति को वातावरण के अनुकूल बनाये। इस सम्बन्ध में टॉमसन (Thomson) ने लिखा है :—"वातावरण, शिक्षक है, और

शिक्षा का कार्य है—छात्र को उस वातावरण के अनुकूल बनाना, जिससे कि वह जीवित रह सके और अपनी मूल-प्रवृत्तियों को सन्तुष्ट करने के लिए अधिक-से-अधिक सम्भव अवसर प्राप्त कर सके।"

11. वातावरण का रूप-परिवर्तन : Modification of Environment—शिक्षा का कार्य—व्यक्ति को वातावरण का रूप-परिवर्तन करने या उसमें सुधार करने के *योग्य बनाना है। यदि शिक्षा द्वारा व्यक्ति में अच्छी आदतों का निर्माण कर दिया* जाय, तो वह अपने वातावरण में परिवर्तन कर सकता है। बिल्ली चटकनी को दबाकर दरवाजा खोलकर अपने लिए नये वातावरण का निर्माण करना सीख लेती है। इसी प्रकार, व्यक्ति भी नई और अच्छी आदतों का निर्माण करके अपने सामाजिक वातावरण को बदल सकता है और उसे अच्छा बना सकता है। इस प्रकार, शिक्षा का कार्य—केवल यही नही है कि वह व्यक्ति को वातावरण से अनुकूल करना सिखाये, वरन् उसे वातावरण को अपने अनुकूल बदलने के लिए भी प्रशिक्षित करे।

आज के संघर्षपूर्ण ससार में वह बहुत आवश्यक हो गया है। भारत में भी इस *आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा है। विभिन्न जातियों, प्रजातियो, धर्मों* और भाषाओं ने हमारे देश में जिस वातावरण का निर्माण कर दिया है, वह देश के लिए तनिक भी हितकर नही है। इस वातावरण में सुधार तभी हो सकता है, जब देश के बालक-बालक को शिक्षा देकर इस प्रकार तैयार कर दिया जाय कि वह इस वातावरण को परिवर्तित करने के लिए कमर कस ले।

वातावरण का रूप-परिवर्तन करके उस पर अधिकार रखने की आवश्यकता की ओर सकेत करते हुए जॉन ड्यूवी (John Dewey) ने लिखा है :—**"वातावरण से पूर्ण अनुकूलन करने का अर्थ है—मृत्यु। आवश्यकता इस बात की है कि वातावरण पर नियन्त्रण रखा जाय।"**

12. कार्य का व्यावहारिक ज्ञान : Practical Knowledge of Work—शिक्षा का अन्तिम और महत्त्वपूर्ण कार्य है—बालकों को विभिन्न कार्य-क्षेत्रों का व्यावहारिक ज्ञान देना। सभी प्रगतिशील देशो में शिक्षा के इस कार्य पर बल दिया जा रहा है। *रूस में तो स्कूल के हर बालक के लिए किसी-न-किसी फैक्ट्री या वर्कशॉप* में कार्य करना आवश्यक है। वहाँ उसको विभिन्न कार्यों का व्यावहारिक ज्ञान सरलता से प्राप्त हो जाता है।

हमारे देश में शिक्षा इस कार्य को न करके *मानव का बहुत अहित कर रही* है। सिद्धान्त पर आवश्यकता से अधिक बल दिया जाता है। फलतः बालक को जीवन के किसी भी कार्य-क्षेत्र का व्यावहारिक ज्ञान नही प्राप्त होता है। स्वामी *विवेकानन्द (Swami Vivekananda) ने इस ज्ञान की आवश्यकता पर बल देते हुए* कहा है :—**"तुमको कार्य के सब क्षेत्रों का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। सिद्धान्तों के ढेरों से देश का नाश हो गया है।"**

अन्त में, हम कह सकते है कि मानव-जीवन में शिक्षा का कार्य—समाज के सदस्यों की उन सब शक्तियों, क्षमताओं और गुणों का विकास करना है, जो उनमें है, जिससे कि वे निर्दिष्ट लक्ष्य की ओर बढ़ सकें। एमरसन ने उचित ही लिखा है :— "शिक्षा इतनी विशद् होनी चाहिए, जितना कि मनुष्य। उसमें जो भी शक्तियाँ हैं, शिक्षा को उन्हें पोषित और प्रदर्शित करना चाहिए।"

"Education should be as broad as man. Whatever elements are in him, it should foster and demonstrate."—Emerson.

राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा के कार्य
Functions of Education in National Life

'भू-भाग' राष्ट्र का शरीर और 'व्यक्ति' उसके प्राण होते हैं। व्यक्तियों की श्रेष्ठता और हीनता—राष्ट्र के उत्थान और पतन का कारण होती है। मेकाइवर ने ठीक ही लिखा है :—"राष्ट्र का गुण, उसकी सामाजिक इकाइयों का गुण है; अर्थात् सामाजिक इकाइयों का सामूहिक जीवन ही राष्ट्रीय जीवन है। यदि ईंधन ही खराब है, तो ज्योति कैसे तेज हो सकती है—अर्थात् यदि सामाजिक इकाइयाँ निर्बल हैं, तो राष्ट्र कैसे देदीप्यमान हो सकता है ?"

"The quality of the nation is the quality of the social units whose common life it is—if the fuel is poor, how can the flame be bright ?"—MacIver.

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्र और उसके निवासियों का एक-दूसरे से घनिष्ठ सम्बन्ध है। राष्ट्र की उन्नति तभी हो सकती है, जब उसके नागरिक श्रेष्ठ हों। उनको ऐसा बनाना ही राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का कार्य है। हम भारतीय समाज के लोकतन्त्रीय समाजवादी आदर्शों को ध्यान में रखकर शिक्षा के कार्यों की समीक्षा कर रहे हैं।

(1) नेतृत्व के लिए प्रशिक्षण : Training for Leadership—लोकतन्त्र तब तक सफल नही हो सकता है, जब तक कि उसके नागरिक अपने कर्त्तव्यों का पालन करने के लिए प्रशिक्षित न किये गए हो। इसका अर्थ यह है कि उनको अनुशासन और नेतृत्व में प्रशिक्षण मिलना चाहिए। राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का मुख्य कार्य है—व्यक्तियों को इस प्रकार प्रशिक्षित करना कि वे सामाजिक, राजनीतिक, औद्योगिक और सास्कृतिक क्षेत्रों में नेतृत्व का कार्य कर सकें।

भारत में अति प्राचीन काल से लेकर आज तक नेतृत्व का अभाव नही रहा है। आधुनिक भारत में जिस नेतृत्व की आवश्यकता है, उसके बारे में डा० आर० एस० मणि (R. S. Mani) ने लिखा है :—"विशेष रूप से इस समय जबकि देश में लोकतन्त्र, जीवन का ढंग हो गया है, अच्छे नेतृत्व की आवश्यकता है। सच्चे नेतृत्व के लिए सेवा की भावना के साथ-साथ, अच्छे प्रशिक्षण की आवश्यकता है।"

(2) **कुशल श्रमिकों की पूर्ति : Supply of Skilled Workers**—राष्ट्रीय जीवन मे शिक्षा का कार्य—कुशल श्रमिकों की पूर्ति करना है। ऐसे श्रमिक व्यापार और उद्योग के उत्पादन को बढ़ायेंगे। फलतः राष्ट्रीय सम्पत्ति में वृद्धि होगी।

शिक्षा के इस कार्य से जो सुन्दर परिणाम निकालेंगे, उनको अंकित करते हुए हुमायूँ कबीर (Humayun Kabir) ने लिखा है :—**"शिक्षित श्रमिक अधिक उत्पादन में योग देंगे और इस प्रकार उद्योग तथा व्यवसाय—दोनों की अधिक उन्नति होगी।"**

(3) **व्यक्तिगत हित की सार्वजनिक हित से निम्नता : Subordination of Private Welfare to General Welfare**—राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण कार्य यह है कि वह लोगों को ऐसा प्रशिक्षण दे कि वे अपने हितों को अपने समूह, समाज, देश और राष्ट्र के हितों से निम्न समझें। आज का भारतीय समाज अनेक जातियों, वर्गों, धर्मों और राजनीतिक दलों में बँटा हुआ है। फलतः भारतीयों मे पारस्परिक द्वेष, कटुता, शत्रुता इत्यादि अनेक बुराइयाँ आ गई है। ऐसी परिस्थिति में शिक्षा का सर्वप्रथम कार्य है—इन बुराइयों को समूल नष्ट करना।

इससे भी कही महत्त्वपूर्ण कार्य है—मनुष्य को इस प्रकार का प्रशिक्षण देना कि वह अपनी स्वयं की इच्छा से अनुशासन में रहे और हर प्रकार का बलिदान करने के लिए तैयार रहे। तभी वह सार्वजनिक हित में योग देकर देश का कल्याण कर सकता है। डा० राधाकृष्णन् (Radhakrishnan) ने ठीक लिखा है :—**"एशिया में प्रजातन्त्र की सफलता हमारी अनुशासन में रहने की इच्छा और व्यक्तिगत बलिदान पर आधारित है। यदि भारत, संयुक्त और लोकतन्त्रीय रहना चाहता है, तो शिक्षा को लोगों को एकता के लिए, न कि प्रादेशिकता के लिए, प्रजातन्त्र के लिए, न कि तानाशाही के लिए प्रशिक्षित करना चाहिए।"**

(4) **नागरिक व सामाजिक कर्त्तव्यों की भावना का समावेश : Inculcation of Civic & Social Duties**—नागरिक और सामाजिक कर्त्तव्य—लोकतन्त्र की आधारशिला हैं। इनके अभाव में भारत जैसे—धर्म-निरपेक्ष राज्य की सफलता के बारे में सोचना—केवल स्वप्न देखना है।

अत. शिक्षा का कार्य है कि वह लोगों को इस प्रकार प्रशिक्षित करे कि वे नागरिक के रूप में अपने देश के प्रति; और व्यक्ति के रूप में समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों को समझें और करें। इस विषय में डा० जाकिर हुसेन का कथन है :—**"प्रजातन्त्रीय समाज में यह आवश्यक है कि व्यक्ति नैतिक और भौतिक—दोनों प्रकार से समाज के जीवन को उत्तम बनाने के सम्मिलित उत्तरदायित्व को सहर्ष स्वीकार करे।"**

"In a democratic society it is essential that the individual should cheerfully share the responsibility of making the life of society a better life, both morally and materially."—**Dr. Zakir Husain.**

(5) सामाजिक कुशलता की उन्नति : **Promotion of Social Efficiency**—आधुनिक विचारधारा के अनुसार कुशल सामाजिक व्यक्ति वह है, जो अपने समाज या राष्ट्र के लिए भार न हो, दूसरों के कार्यों में हस्तक्षेप न करे, और समाज की उन्नति में योग दे।

अतः आधुनिक भारत में शिक्षा का कार्य यह है कि वह छात्रों को उन व्यवसायों और उद्योगों में कुशल बनाये, जो न केवल उनके लिए वरन् समाज और राष्ट्र के लिए उपयोगी सिद्ध हों। डा० एल्फ्रेड एडलर (Alfred Adler) का कथन है :— **"मनुष्य के उचित कार्य केवल वही हैं, जो समाज के लिए उपयोगी हैं।"**

(6) राष्ट्रीय विकास : **National Development**—शिक्षा के द्वारा ही राष्ट्रीय विकास सम्भव है। इसलिए, यदि भारत राष्ट्रीय विकास चाहता है, तो उसे शिक्षा की योजनाओं को प्राथमिकता देनी पड़ेगी। इन योजनाओं में शिक्षा का कार्य होना चाहिए—एक निश्चित स्तर तक सभी व्यक्तियों को शिक्षा देना। यदि शिक्षा इस कार्य को कर सकेगी, तो नागरिक गुप्त मतदान द्वारा योग्य नेताओं को चुन सकेंगे और सरकार के कार्यों को सफल बना सकेंगे। जब शिक्षा इस कार्य को पूर्ण कर देगी, तब राष्ट्र का विकास होना—एक स्वाभाविक बात हो जायगी।

राष्ट्रीय विकास में शिक्षा का स्थान कितना महत्त्वपूर्ण है ? इस पर प्रकाश डालते हुए उत्तर प्रदेश के भू० पू० शिक्षा-मन्त्री, कमलापति त्रिपाठी ने कहा था :— **"हमने अपने देश में धर्म-निरपेक्ष कल्याणकारी लोकतन्त्र की स्थापना की है। हमें उसे सुदृढ़ एवं शक्तिशाली बनाना है, किन्तु यह सब तब तक सम्भव नहीं हो सकता है, जब तक कि उसकी आधारशिला ही सुदृढ़ एवं शक्तिशाली न हो। और यह आधारशिला है—इस देश की वह समस्त जनता जिसके ऊपर कि आज राज्य-सरकारों का सुयोग्य निर्वाचन निर्भर है तथा समूचे राष्ट्र के मंगलमय स्वरूप का निर्धारण अवलम्बित है। इस उद्देश्य के लिए आवश्यक हैं—उस दिशा की ओर अग्रसर करने वाली जन-जन की उपयुक्त शिक्षा एवं उपयुक्त साहित्य।"**

(7) राष्ट्रीय एकता : **National Integration**—शिक्षा को राष्ट्रीय एकता का आधार कहा गया है। पर प्रश्न यह उठता है कि 'शिक्षा राष्ट्रीय एकता के कार्य को किस प्रकार कर सकती है ?' यदि हम अपने देश की वर्तमान स्थिति पर ध्यान दें, तो हम दुःख से सराबोर हो जाते हैं। आज हम प्रान्तीयता, साम्प्रदायिकता, जातीयता और क्षेत्रीयता में विश्वास करते हैं। हम भाषा के प्रश्न पर लड़ते हैं।

इन सब बातों ने हमारे दृष्टिकोण को संकीर्ण बना दिया है, और हमें विभाजित करके हम में शत्रुता की भावना उत्पन्न कर दी है। यदि हम इन बुराइयों से अपने को मुक्त करना चाहते हैं, तो हमें शिक्षा का सहारा लेना पड़ेगा। शिक्षा ही हमें दोषमुक्त करके राष्ट्रीय एकता के सूत्र में बाँध सकती है।

अतः शिक्षा के इस महत्त्वपूर्ण कार्य की ओर हमें शीघ्र से शीघ्र ध्यान देना चाहिए। ऐसा करते समय हमें जवाहरलाल नेहरू के इस कथन को ध्यान में रखना चाहिए :—"राष्ट्रीय एकता के प्रश्न में जीवन की प्रत्येक वस्तु आ जाती है। शिक्षा का स्थान इन सबसे ऊपर है।"

"The question of integration covers in a sense almost everything in life. Above all, it covers education."—Jawaharlal Nehru.

(8) भावात्मक एकता : Emotional Integration—भारत में अनेक विभिन्नताएँ पाई जाती है। इनमें बहुत-से धर्म, परम्परायें, भाषायें, रीति-रिवाज और रहन-सहन के ढंग है। हम अपने धर्म, परम्परा, भाषा आदि को अपना समझते हैं और इन पर गर्व भी करते है। इनके प्रति हमारे हृदय में भक्ति का भाव निश्चित है। पर हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि इनसे भी ऊपर हमारी राष्ट्रीय महत्वाकांक्षाएँ है, जो हमें एकता के सूत्र में बाँधती है और जो किसी समाज या समुदाय की एकमात्र सम्पत्ति नही हैं। वही भावात्मक एकता का आदर्श और राष्ट्रीय उन्नति का सोपान है।

इस आदर्श को प्राप्त करने में शिक्षा बहुत सहायता प्रदान कर सकती है। शिक्षा द्वारा ही भावात्मक वातावरण का निर्माण किया जा सकता है। शिक्षा उचित प्रकार के दृष्टिकोणों को विकसित कर सकती है। इसके साथ ही, उचित प्रकार के संवेगों का निर्माण करके उनको उचित प्रकार के कार्यों से सम्बन्धित कर सकती है। अतः यह आवश्यक है कि हम अपने छात्रों के लिए ऐसे पाठ्यक्रमों का निर्माण करें, जिनसे उनके दृष्टिकोणों और संवेगो का उचित दिशा में विकास हो। केवल तभी, वे देश के प्रति अपने कर्त्तव्यो को समझ सकेंगे और लोकतन्त्र को शक्तिशाली बना सकेंगे।

शिक्षा द्वारा भावात्मक एकता का कार्य किया जाना कितना आवश्यक है, इसके बारे में जवाहरलाल नेहरू (Jawaharlal Nehru) ने 1957 में अपने एक भाषण मे त्रिचूर (Trichur) में कहा था :—"जहाँ कहीं मै जाता हूँ, वहीं मैं भारत की एकता पर बल देता हूँ, न केवल राजनीतिक एकता पर, वरन् भावात्मक एकता पर, अपने मनों और हृदयों की एकता पर और पृथकता की भावनाओं के दमन पर।"

(9) मानव-प्रकृति व चरित्र का प्रशिक्षण : Training of Human Nature & Character—शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण कार्य है—मानव-प्रकृति और चरित्र का प्रशिक्षण। पर क्यो ? क्योकि आज सभ्य कहलाने वाले मानव की प्रकृति और चरित्र का पतन हो चुका है। पिछले दोनो विश्व-युद्ध इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं। इन युद्धों में मानव ने जितने अमानवीय और पाशविक कार्य किये हैं, उनके उदाहरण इतिहास में मिलने कठिन है।

यदि मानव-सभ्यता को भावी विनाश से बचाया जाना है, तो मानव की प्रकृति और चरित्र में सुधार किया जाना अनिवार्य है। यह सुधार शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है। शिक्षा की ऐसी व्यवस्था की जाय, जिससे व्यक्ति के शरीर,

इच्छा और बुद्धि को प्रशिक्षित किया जा सके। प्लेटो का कथन है :—"शिक्षा का सर्वश्रेष्ठ उद्देश्य और कार्य—मानव-प्रकृति और चरित्र को प्रशिक्षित करना है।"

"The ultimate aim and function of education is the training of human nature and character."—**Plato.**

(10) नैतिकता का प्रशिक्षण : Training in Morality—सभी युगों और देशों में नैतिकता को महत्त्व दिया गया है। चार्ल्स ब्रुक्स (Charles Brooks) के अनुसार :—नैतिकता में वे सभी गुण आ जाते हैं, जो मनुष्यों के आचरण को नियमित करते है। इन गुणों से युक्त व्यक्ति राष्ट्र की बहुमूल्य सम्पत्ति बन जाता है।

अत: शिक्षा का मुख्य कार्य—लोगों को नैतिकता में प्रशिक्षित करना होना चाहिए। इस प्रशिक्षण के बिना हमारे देशवासियों का किसी भी कार्य में सफल होना यदि असम्भव नही तो कठिन अवश्य है। बीचर (H. W. Beecher) ने ठीक ही कहा है :—**"प्रत्येक युवक को यह याद रखना चाहिए कि सभी सफल कार्यों का आधार—नैतिकता है।"**

(11) राष्ट्रीय अनुशासन : National Discipline—शिक्षा द्वारा राष्ट्रीय अनुशासन के कार्य पर बहुत बल दिया गया है। हमने अपनी स्वतन्त्रता कुछ ही वर्षों पहले प्राप्त की है। उसे बनाये रखने के लिए बहुत परिश्रम और सतर्कता की आवश्यकता है। पर केवल इन्हीं से काम नही चलेगा। हममें से प्रत्येक में संगठन, कुशलता और बलिदान के गुण होने चाहिए।

इन गुणों की सहायता से ही हम राष्ट्रीय एकता और स्वतन्त्रता को बनाए रख सकते हैं। इन गुणों के विकास का आधार है—राष्ट्रीय अनुशासन। अत: शिक्षा को राष्ट्रीय अनुशासन के कार्य की अवहेलना नही करनी चाहिए। डा० राधाकृष्णन् ने सत्य ही कहा है :—**"राष्ट्रीय एकता और मेल का आधार है—राष्ट्रीय अनुशासन।"**

"National discipline is the way to national unity and coherence."—**Dr. S. Radhakrishnan.**

(12) संस्कृति की सामग्री से सम्पर्क : Contact with Goods of Culture—राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का अन्तिम, पर महत्त्वपूर्ण कार्य है—बालक को राष्ट्र की संस्कृति की सामग्री के सम्पर्क में लाना। पर यह कार्य किया कैसे जाय ?

डा० ज़ाकिर हुसैन ने इसकी दो विधियां बताई हैं। उन्होंने बताया है कि यदि बालक को केवल सैद्धान्तिक बातों में रुचि है, तो उसे संस्कृति की बातें सैद्धान्तिक रूप से बताई जानी चाहिए। पर यदि वह क्रियात्मक बातों में रुचि रखता है, तो क्रियात्मक विधि को अपनाया जाना चाहिए। दोनों विधियों में सौन्दर्य-सम्बन्धी बातों को विशेष रूप से बताया जाना चाहिए।

इसका परिणाम यह होगा कि बालक को संस्कृति में रुचि हो जायगी और वह स्वयं ही संस्कृति की अन्य बातों का ज्ञान प्राप्त करेगा और उनको अपने जीवन में स्थान देगा। राष्ट्र की संस्कृति को बनाये रखने का इससे अच्छा उपाय और कोई नहीं है। डा० जाकिर हुसेन का मत है :—**"केवल संस्कृति को सामग्री द्वारा ही शिक्षा की प्रक्रिया को गति दी जा सकती है। केवल इसी सामग्री से मानव-मस्तिष्क का विकास हो सकता है।"**

"The goods of culture are the only means of setting the educational process into motion. They are the only food for the nourishment of the human mind."—**Dr. Zakir Husain.**

उपसंहार

अन्त में, हम कह सकते हैं कि शिक्षा का राष्ट्रीय जीवन में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। कोई भी राष्ट्र तब तक प्रगति नहीं कर सकता है, जब तक कि वह अपने नागरिकों के शरीर, मस्तिष्क, चरित्र और नैतिकता को प्रशिक्षण न दे। यदि विभिन्न धर्मों, जातियों और सम्प्रदायों वाला लोकतन्त्रीय भारत अपने को जीवित रखना और विकसित करना चाहता है, तो उसे अपनी शिक्षा-पद्धति में ऊपर लिखे सभी कार्यों को स्थान देना पड़ेगा।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss briefly the functions of education. Which of them, in your opinion, are more important ?

शिक्षा के कार्यों का संक्षेप में विवेचन कीजिए। आपकी राय में उनमें से कौन-से अधिक महत्त्वपूर्ण है ?

2. "Indian education", says Dr. Zakir Husain, "has been like a stagnant pond for quite a while." Keeping in view this remark, point out some of the important general functions of education.

"भारतीय शिक्षा अवरुद्ध ताल की भाँति रही है।" डा० जाकिर हुसेन के इस कथन को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के कुछ महत्त्वपूर्ण सामान्य कार्यों की विवेचना कीजिए।

3. What, in your opinion, should be the functions of education in human life ?

आपके मतानुसार मानव-जीवन में शिक्षा के क्या कार्य होने चाहिए ?

4. Discuss the meaning and role of education in human life.

मानव-जीवन में शिक्षा के अर्थ और कार्य की व्याख्या कीजिए।

5. Keeping in view the life of the common man in India, discuss in detail some of the essential functions of education.

भारत में जनसाधारण के जीवन को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के कुछ आवश्यक कार्यों का विस्तारपूर्वक उल्लेख कीजिए।

6. Discuss some of the important functions of education in national life and assign reasons for their being so.

राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा के कुछ महत्त्वपूर्ण कार्यों की विवेचना कारणों सहित कीजिए।

3

शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण व वर्गीकरण
और
जीवन व समाज के आदर्शों से उनका सम्बन्ध

FORMULATION & CLASSIFICATION OF EDUCATIONAL AIMS & THEIR RELATION TO LIFE & IDEALS OF SOCIETY

"शिक्षा—अर्थपूर्ण और नैतिक क्रिया है। अतः यह कल्पना ही नहीं की जा सकती है कि यह उद्देश्यहीन है।"

"Education is a purposeful and ethical activity. Hence, it is unthinkable without aims."—Rivlin.

विषय-प्रवेश

"शिक्षा" समाज की आधारशिला है। समाज में जिस प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था होगी, उसी प्रकार के समाज का निर्माण होगा। अतः इस बात का सदैव प्रयत्न किया गया है कि शिक्षा के उद्देश्य समाज के उद्देश्यों के अनुकूल हो। इसी बात को ध्यान मे रखकर विभिन्न देशों के विभिन्न विचारको के विभिन्न कालों में शिक्षा के विभिन्न उद्देश्यो पर बल दिया है।

उदाहरणार्थ—प्राचीन भारत मे शिक्षा का उद्देश्य—मनुष्य का सर्वाङ्गीण विकास करना था। यूनानी दार्शनिको ने शिक्षा के नैतिक, सामाजिक और बौद्धिक उद्देश्यों पर बल दिया। प्राचीन रोम मे शिक्षा का उद्देश्य—राज्य का कल्याण बताया गया। मध्यकालीन योरोप में शिक्षा का उद्देश्य—मृत्यु के बाद के जीवन की तैयारी करना था। आधुनिक योरोप, शिक्षा के इस उद्देश्य में विश्वास नही करता है।

शिक्षा के उद्देश्यों के निर्माण के आधार
Bases of the Formulation of Educational Aims

हमने शिक्षा के उद्देश्यों के बारे में ऊपर जो कुछ लिखा है, उससे यह प्रश्न उपस्थित होता है कि—"शिक्षा के उद्देश्य भिन्न क्यों है ?" इसका उत्तर यह है कि इनके निर्माण के अनेक आधार हो सकते हैं। मोटे तौर पर हम उनको दो भागों में बाँट सकते हैं; यथा :—

1. आदर्शवादी आधार : Idealistic Basis
2. यथार्थवादी आधार : Realistic Basis

1. आदर्शवादी आधार : Idealistic Basis

आदर्शवादी—सार्वभौमिक मूल्यों और आदर्शों को सबसे ऊँचा स्थान देते हैं। अतः आदर्शवादी समाज में शिक्षा का मुख्य लक्ष्य है—सार्वभौमिक मूल्यों और आदर्शों की प्राप्ति। क्योंकि ये मूल्य और आदर्श सार्वभौमिक होते है, इसलिए आदर्श और उन्नत समाज में शिक्षा के उद्देश्य "व्यक्तिगत या निश्चित" (Individual or Specific) न होकर, 'सामान्य' या 'सार्वभौमिक' (General or Universal) होते है। इसका अर्थ यह है कि इन उद्देश्यों का निर्माण किसी ख़ास व्यक्ति के तात्कालिक हित के लिए नहीं किया जाता है। इसके विपरीत, इनका निर्माण सभी व्यक्तियों के अन्तिम हित के लिए किया जाता है।

आदर्शवादी समाज में शिक्षा की व्यवस्था—व्यक्ति के सामान्य विकास के लिए की जाती है। इसका संगठन—उसके चरित्र और उसके समाज को विकसित करने के लिए किया जाता है। यह मानव-गुणों का विकास करती है। यह समाज की प्रगति के साथ-साथ व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर बल देती है। यह संस्कृति की सुरक्षा और उसकी प्रगति करती है।

उपर्युक्त सभी आदर्शों के आधार पर शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण किया जाता है। क्योंकि इनका निर्माण आदर्शवादी ढंग पर होता है, इसलिए ये सार्वभौमिक होते हैं। इनका 'वास्तविक मूल्य' (Intrinsic Value) होता है। इनके बारे में समस्त दर्शन और शिक्षा-सिद्धान्त एकमत हैं।

2. यथार्थवादी आधार : Realistic Basis

यह आधार, आदर्शवादी आधार का उल्टा है। इसमें समाज की भौतिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण किया जाता है। ये परिस्थितियाँ अधोलिखित है :—

(i) जीवन-दर्शन (Philosophy of Life)
(ii) राजनीतिक विचारधारायें (Political Ideologies)
(iii) प्रौद्योगिक प्रगति (Technological Progress) और
(iv) सामाजिक व आर्थिक दशायें (Social & Economic Conditions)

(i) जीवन-दर्शन : **Philosophy of Life**—जिस जीवन-दर्शन में किसी समाज या समाज के लोग विश्वास करते है, उसका प्रभाव शिक्षा के उद्देश्यों के निर्माण पर बहुत अधिक पड़ता है; उदाहरणार्थ—जिस समय यूनान शान्ति और वैभव के युग में से गुजर रहा था, उस समय प्लेटो (Plato) ने बताया कि—"राज्य के संरक्षक—दार्शनिक, उत्साही, तीव्रगामी और बलवान होने चाहिए।"

17वी शताब्दी में जब इङ्गलैण्ड मे गृह-युद्ध चल रहा था, तब प्यूरिटन धर्म के समर्थक, मिल्टन (Milton) ने बताया कि—"शिक्षा का उद्देश्य—शान्ति और युद्ध के समय निजी और सार्वजनिक कार्यों को उचित प्रकार से करने के लिए व्यक्ति को तैयार करना है।"

नैपोलियन के समय में फ्रांस में शिक्षा के उद्देश्य—ईसाई धर्म के सिद्धान्तों को पढ़ाना, राज्य के शासन में भक्ति उत्पन्न कराना, और विश्वविद्यालय के नियमों का पालन करना था।

प्रथम विश्व-युद्ध के समय थ्योडोर रूजवेल्ट (Theodore Roosevelt) के अनुसार :—"अमरीकी शिक्षा के उद्देश्य थे—शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक, आध्यात्मिक और नैतिक प्रशिक्षण देना।"

हेण्डरसन के अनुसार :—"आजकल अमरीकी शिक्षा के उद्देश्य हैं—व्यक्ति के व्यक्तित्व को विकसित करना, उसे अवकाश का सदुपयोग करने के लिए तैयार करना और उसे भावी नागरिक और उत्पादक बनाना।"

इस प्रकार, हम देखते है कि जीवन के विभिन्न दर्शन, शिक्षा के विभिन्न उद्देश्यों पर बल देते हैं।

(ii) राजनीतिक विचारधारायें : **Political Ideologies**—जे० एफ़० ब्राउन का कथन है :—"किसी भी देश की और सभी युगों की शिक्षा, शासक-वर्ग की विशेषताओं को व्यक्त करती है।"

"Education in any country and at all periods reflects values of the ruling class."—**J. F. Brown.**

संसार का इतिहास ब्राउन के कथन का साक्षी है। स्वेच्छाचारी, लोकतान्त्रिक, फासिस्टवादी और कम्यूनिस्ट—सभी प्रकार की सरकार अपने ध्येय को प्राप्त करने के लिए शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण करती है।

स्वेच्छाचारी राज्य में चाहे वह राजतन्त्र हो या तानाशाही, शिक्षा के वैयक्तिक पक्षों (Individualistic phases) की अपेक्षा राजनीतिक पक्ष को प्रधानता दी जाती है। बालक को राज्य के हित के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित किया जाता है। आज रूस में ऐसा ही है।

इसके विपरीत, प्रजातन्त्र मे शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्यों (Individual Aims) पर बल दिया जाता है। राजनीतिक और सामाजिक उद्देश्यों पर केवल उतना ही

बल दिया जाता है, जितना सामाजिक एकता के लिए आवश्यक समझा जाता है। अमरीका की शिक्षा-प्रणाली इसका प्रमाण है।

इस प्रकार, हम देखते है कि स्वेच्छाचारी और प्रजातन्त्र राज्यों में शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण भिन्न प्रकार से किया जाता है।

(iii) प्रौद्योगिक प्रगति : Technological Progress—शिक्षा के उद्देश्यों के निर्माण में प्रौद्योगिक प्रगति का स्थान महत्त्वपूर्ण है; उदाहरणार्थ—प्रौद्योगिक रूप से पिछड़े हुए देश में शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य—विज्ञान और प्रौद्योगिक की शिक्षा देना हो सकता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि जो देश प्रौद्योगिक प्रगति कर चुके हैं, वे ऐसा न करें। वस्तुतः वे ऐसा अधिक प्रौद्योगिक प्रगति के लिए करते हैं। आज अमरीका, इंगलैण्ड, रूस, जापान—सभी ऐसा कर रहे है।

हमारा देश प्रौद्योगिक और प्राविधिक प्रगति में पीछे होने के कारण पश्चिम के देशों के पद-चिह्नों पर चल रहा है, और ऐसी प्रगति करने का पूरा-पूरा प्रयत्न कर रहा है। इसको ध्यान में रखकर ही "माध्यमिक शिक्षा-आयोग" ने सिफ़ारिश की है :—"शिक्षा का उद्देश्य—तकनीकी प्रशिक्षण के लिए विस्तृत सुविधाएँ प्रदान करना होना चाहिए।"

"The aim of education should be to spread widely the facilities for technical training."—*Secondary Education Commission.*

(iv) सामाजिक व आर्थिक दशाएँ : Social & Economic Conditions—किसी भी देश की सामाजिक और आर्थिक दशाएँ वहाँ की शिक्षा के उद्देश्यों के निर्माण में महत्वपूर्ण भाग लेती है; उदाहरण के लिए—भारत को ले लीजिये। यहाँ की सामाजिक दशा जितनी शोचनीय है, उससे अधिक शोचनीय उसकी आर्थिक दशा है। इस दशा को बदलने के लिए ही भारत ने अपने को 'समाजवादी राज्य' में विकसित करने का निर्णय किया है। यह तभी सम्भव हो सकेगा, जब शिक्षा के नये उद्देश्यों का निर्माण किया जाय।

ये नये उद्देश्य क्या हों ?—इनके बारे में "माध्यमिक शिक्षा-आयोग" ने अपने विचारों को इस प्रकार व्यक्त किया है :—"**छात्रों को इस प्रकार का चारित्रिक प्रशिक्षण दिया जाय कि वे नागरिकों के रूप में भावी प्रजातान्त्रिक, सामाजिक व्यवस्था में रचनात्मक ढंग से भाग ले सकें और उनकी व्यावहारिक तथा व्यावसायिक कुशलता में उन्नति की जाय, जिससे कि वे अपने देश की आर्थिक प्रगति करने में अपना योग दे सकें।**"

शिक्षा के उद्देश्यों का वर्गीकरण
Classification of Aims of Education

जॉन ड्यूवी का कथन है :—"शिक्षा के अपने कोई उद्देश्य नहीं हैं।"

"Education as such has no aims."—**John Dewey.**

यद्यपि शिक्षा के अपने कोई उद्देश्य नहीं हैं, तथापि व्यक्ति या समाज की

आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर उनका निर्माण किया जाता है। वे या तो लोगों की उन्नति के लिए या समाज के आदर्शों की प्राप्ति के लिए, या इन दोनों के लिए निश्चित किए जाते हैं। इस प्रकार, शिक्षा के उद्देश्यों के विभिन्न प्रयोजन होते हैं और इन्ही प्रयोजनों के आधार पर उनका निर्माण किया जाता है। इसीलिए, उनके स्वरूप भिन्न होते है। हम शिक्षा के सब उद्देश्यों का निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकरण कर सकते है :—

1. सार्वभौमिक उद्देश्य : Universal Aims
2. विशिष्ट उद्देश्य : Particular Aims
3. वैयक्तिक उद्देश्य : Individual Aims
4. सामाजिक उद्देश्य : Social Aims

1 सार्वभौमिक उद्देश्य : Universal Aims—शिक्षा के सार्वभौमिक उद्देश्य वे है, जो सामान्य रूप से सम्पूर्ण मानव-जाति पर लागू होते है। इस प्रकार के कुछ महत्त्वपूर्ण उद्देश्य वे है, जिनसे मानव-गुणों का विकास होता है; जैसे—प्रेम, अहिंसा, मानव के व्यक्तित्व का संतुलित विकास, उचित शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, समाज की प्रगति, आदि।

सभी शिक्षा-दर्शन और सिद्धान्त इनके बारे में एकमत हैं। यदि इनमें कोई अन्तर पाया जाता है, तो वह केवल भाषा का है। विभिन्न भाषाओं द्वारा इनको विभिन्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है, पर इनका सार एक ही है। इनका महत्त्व सार्वभौमिक है। ये शिक्षा को सार्वभौमिक रूप देते है।

2 विशिष्ट उद्देश्य : Particular Aims—विशिष्ट उद्देश्यों को 'निश्चित उद्देश्य' (Specific Aims) भी कहते हैं। सार्वभौमिक उद्देश्यों की तुलना में इनका क्षेत्र सीमित होता है। इसी प्रकार, इनकी प्रकृति (Nature) भी सीमित होती है। इन उद्देश्यो पर समय और परिस्थितियों का विशेष प्रभाव पड़ता है। इनका निर्माण किसी विशेष कारण से होता है।

उदाहरणार्थ—एक पिछड़ा हुआ देश—विज्ञान और तकनीकी विषयों के अध्ययन पर बल देता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि इन विषयों को 'आधारभूत मानवीय मूल्यो' (Basic Human Values) से अधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाता है। इसका अर्थ केवल यह है कि मानवीय मूल्यों को उन्नत बनाने के लिए विज्ञान और तकनीकी विषयों के अध्ययन पर अधिक बल दिया जाय, जिससे देश की भौतिक उन्नति हो सके। यदि कोई देश या समाज मानवीय मूल्यों की चिन्ता न करके केवल भौतिक प्रगति पर ध्यान देता है तो इसका परिणाम भयंकर हो सकता है।

सार्वभौमिक व विशिष्ट उद्देश्यों में सन्तुलन
Balance between Universal & Particular Aims

शिक्षा के सार्वभौमिक और विशिष्ट उद्देश्यों में सन्तुलन और सामंजस्य रखा

जाना बहुत आवश्यक है। ऐसा न करने से उनमें से किसी की भी क्षति हो सकती है। साधारणतः ऐसा होता है कि विशेष परिस्थितियों में भी सार्वभौमिक उद्देश्यों पर बल दिया जाता है, जब कि इन परिस्थितियों में विशिष्ट उद्देश्यों की ओर ध्यान देकर विशेष विषयों के शिक्षण की आवश्यकता होती है।

इसके विपरीत, कभी-कभी सार्वभौमिक विषयो की चिन्ता न करके विशिष्ट उद्देश्यों पर ही ध्यान केन्द्रित रखा जाता है। ऐसा करना व्यक्ति और समाज—दोनों के लिए हानिकारक हो सकता है, उदाहरणार्थ—यदि भारत पूर्ण रूप से अपना ध्यान आर्थिक और औद्योगिक प्रगति में लगा दे, तो वह आध्यात्मिक दृष्टि से दिवालिया हो सकता है। इसी प्रकार, यदि वह आध्यात्मिक गति पर अधिक बल दे, तो वह आर्थिक और औद्योगिक उन्नति नहीं कर सकता है। इसका परिणाम यह हो सकता है कि उसके करोड़ों निवासी गरीबी और अभाव में जीवन व्यतीत करें।

अतः शिक्षा के सार्वभौमिक और विशिष्ट उद्देश्यों में उचित सन्तुलन स्थापित किया जाना चाहिए। यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि विशिष्ट उद्देश्यों का महत्त्व साधन के रूप में है। इनका मुख्य कार्य—जीवन के उच्च मूल्यों को प्राप्त करने में सहायता देना है। अतः शिक्षा के विशिष्ट उद्देश्य इन मूल्यों के विपरीत नहीं होने चाहिए। इनका शिक्षा के सार्वभौमिक उद्देश्यो से सामंजस्य होना बहुत आवश्यक है।

3. वैयक्तिक उद्देश्य : Individual Aims—वैयक्तिक उद्देश्य—व्यक्ति की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए सामग्री जुटाता है। यह उसकी वैयक्तिकता (Individuality) का सफल, समर्थ और शक्तिशाली बनाने का प्रयास करता है।

इस उद्देश्य के महत्त्व को बताते हुए "ब्रिटिश बोर्ड ऑफ़ ऐजूकेशन" ने लिखा है :—"हर प्रकार के स्कूल तब तक अपना उचित कार्य करते हैं—जब तक वे वैयक्तिकता के स्वतन्त्र विकास का अवसर देते हैं, और प्रत्येक बालक तथा बालिका को अधिक-से-अधिक मात्रा में वैयक्तिक विकास करने में सहायता देते हैं।"

शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य का सर पर्सी नन (Sir Percy Nunn) ने प्रबल समर्थन करते हुए लिखा है :—"शिक्षा को ऐसी दशाएँ उत्पन्न करनी चाहिए, जिनसे वैयक्तिकता का पूर्ण विकास हो सके, और व्यक्ति—मानव-जीवन को अपना मौलिक योग दे सके।"

यहाँ यह बताना आवश्यक है कि नन की वैयक्तिकता की धारणा दार्शनिक है। यह एक आदर्श है, जो अभी तक प्राप्त नही हुआ है, पर जिसे प्राप्त किया जा सकता है।

4. सामाजिक उद्देश्य : Social Aims—सामाजिक उद्देश्य के समर्थकों का विश्वास है कि इसके द्वारा सामाजिक एकता और सहयोग उत्पन्न होते हैं। वे यह नही मानते है कि व्यक्ति समाज से दूर रहकर अपना विकास कर सकता है। रेमॉन्ट के अनुसार :—"समाज-विहीन व्यक्ति कोरी कल्पना है।"

"The isolated individual is a figmant of the imagination."

—Raymont.

जब तक व्यक्ति सामाजिक प्राणी है और जब तक वह समाज में रहता है, तब तक उसे उपनी वैयक्तिकता को सामाजिक आवश्यकताओं के अधीन रखना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त, समाज की आवश्यकताओं के अनुसार उसकी वैयक्तिकता का निर्माण होगा। फलस्वरूप, उसकी वैयक्तिकता का दमन होता रहेगा। शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य का साधारणतः यही अर्थ समझा जाता है।

अमरीका के **प्रोफ़ेसर बेगले** (Bagley) **और डा० ड्यूवी** (Dewey) के अनुसार शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य का अर्थ है—सामाजिक कुशलता की प्राप्ति। अत. शिक्षा का उद्देश्य—प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक रूप से कुशल बनाना है, जिससे वह अपनी जीविका की समस्या को हल कर सके और समाज पर भार न बने।

वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्यों में समन्वय
Synthesis between Individual & Social Aims

शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों का विषय बहुत विवादपूर्ण है। शिक्षा-शास्त्री और राजनीतिज्ञ उनके बारे में एकमत नही है। कुछ का कहना है कि शिक्षा पर प्रथम अधिकार व्यक्ति का है। अतः शिक्षा को व्यक्ति की आवश्यकताएँ पूरी करनी चाहिए। इसके विपरीत, दूसरों का कहना है कि समाज व्यक्ति से श्रेष्ठ है। इसलिए, शिक्षा को व्यक्ति की ओर ध्यान देने से पहले, समाज की ओर ध्यान देना चाहिए।

आधुनिक विचारधारा, व्यक्ति और समाज—दोनों को बराबर महत्व देती है। व्यक्ति समाज का, और समाज व्यक्ति का निर्माण करता है। एक की प्रगति के लिए दूसरे की प्रगति आवश्यक है। इस दृष्टिकोण से देखने पर शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों में कोई विरोध नही रह जाता है। इसकी पुष्टि रस्क के इस कथन से हो जाती है :—**"आत्म-विकास केवल समाज-सेवा द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है, वास्तविक महत्त्व का सामाजिक आदर्श केवल उन स्वतन्त्र व्यक्तियों द्वारा स्थापित किया जा सकता है, जिन्होने महत्त्वपूर्ण वैयक्तिकता का विकास किया है।"**

"Self-realization can be achieved only through social service. and social ideal of real value can come into being only through free individuals who have developed valuable individuality."—**Rusk.**

उपर्युक्त कथन के आधार पर हम कह सकते है कि शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों मे कोई विरोध नही है। व्यक्ति और समाज—दोनों का शिक्षा पर समान अधिकार है। अतः दोनो उद्देश्यों मे समन्वय आवश्यक है। केवल ऐसा करने पर ही वे आदर्श दशायें उत्पन्न होगी, जो व्यक्ति और समाज—दोनों की प्रगति के लिए उपयुक्त होंगी।

शिक्षा के उद्देश्यों का जीवन व समाज के आदर्शों से सम्बन्ध
Relation of Educational Aims to Life & Ideals of Society

शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण—व्यक्ति और समाज की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए किया जाता है; उदाहरणार्थ—पिछड़े हुए देशों में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य —लोगों को ऐसा व्यावसायिक प्रशिक्षण देना है, जिससे वे अपनी और अपने देश की आर्थिक उन्नति कर सकें।

कभी-कभी शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण करते समय केवल समाज के हित का ध्यान रखा जाता है। राजतन्त्र और अधिनायकतन्त्र में ऐसा ही किया जाता है; उदाहरणार्थ—हिटलर के समय में जर्मनी की जनता में देश-प्रेम की भावना को कूट-कूट कर भरना—शिक्षा का उद्देश्य था। जनता को यह भी शिक्षा दी जाती थी कि राज्य के हित के लिए अपने सब हितों का बलिदान करना, उसका सर्वश्रेष्ठ कर्त्तव्य है।

हमने जो कुछ लिखा है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा के उद्देश्यों का व्यक्ति के जीवन और समाज के आदर्शों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में सम्बन्ध होता है। अब हम इस सम्बन्ध के स्वरूप पर विचार करेंगे; यथा :—

शिक्षा के उद्देश्यों का व्यक्ति के जीवन से सम्बन्ध
Relation of Educational Aims to the Life of Individual

शिक्षा के उद्देश्यों का निम्नांकित प्रकार से व्यक्ति के जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है :—

(1) संतुलित व्यक्तित्व का विकास : Development of Balanced Personality—शिक्षा के उद्देश्यों का व्यक्ति के जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि ये उद्देश्य उपयुक्त हैं, तो उसके व्यक्तित्व का संतुलित विकास होता है। ऐसा न होने पर, उसका व्यक्तित्व विकृत हो जाता है।

(2) मानसिक व आध्यात्मिक विकास : Intellectual & Spiritual Growth—शिक्षा के उचित उद्देश्य—व्यक्ति का मानसिक और आध्यात्मिक विकास करते हैं। मानव-जीवन—आत्म-प्रदर्शन, क्षमता और अनुभव की निरन्तर वृद्धि से पूर्णता प्राप्त करता है। इसका अर्थ यह है कि शिक्षा के उद्देश्य, जीवन की आवश्यकताओं के अनुसार बदलते रहने चाहिए। यदि ऐसा है, तो जीवन से उनका सम्बन्ध सामंजस्यपूर्ण होगा, अन्यथा नहीं।

(3) उचित निर्णय व मूल्यांकन की प्राप्ति : Attainment of Right Judgment & Appreciation—शिक्षा के उत्तम उद्देश्य—मनुष्य को उचित निर्णय और मूल्यांकन करने की क्षमता देते हैं। यदि शिक्षा के उद्देश्य उत्तम नहीं है, तो मनुष्य अच्छे-बुरे, सत्य-असत्य, नैतिक-अनैतिक, हितकर-अहितकर कार्यों और विचार में अन्तर नहीं कर सकता है।

(4) जीवन-मूल्यों पर नियन्त्रण : Control on the V
शिक्षा के अच्छे उद्देश्य—व्यक्ति को जीवन-मूल्यों पर नियन्त्रण
मता देते हैं। यदि शिक्षा के उद्देश्य अच्छे नहीं हैं, तो वह इन मूल्यों
करने में असफल रहता है।

(5) मानव-पूर्णता की प्राप्ति : Achievement of Hum
शिक्षा के श्रेष्ठ उद्देश्य, व्यक्ति को मानव-जीवन की पूर्णता की प्रा
है। पर इसकी प्राप्ति तभी हो सकती है, जब शिक्षा के उद्देश्य, व्य
शासन, सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् की प्राप्ति के योग्य बनायें।

(6) आत्म-सुरक्षा की तैयारी : Preparation for Self-
शिक्षा के उच्च उद्देश्य व्यक्ति को आत्म-सुरक्षा के लिए तैयार करते
जीवन की आकस्मिक विनाश से रक्षा करते हैं और अनुचित सम्ब
क्षति को दूर करते हैं।

(7) मानव-आत्मा का पोषण : Nurture of Human Sp
अच्छे उद्देश्य, मानव-आत्मा का पोषण करते हैं। इनके अभाव में म
विकास सम्भव नहीं है। हरबार्ट (Herbart) और फ्रॉबेल (Froebe
पर बहुत बल दिया है।

(8) सामाजिक संगठन का [illegible] : Building a Soci
ration—[illegible] समाज का संग
[illegible] से प्राप्त कर सके
[illegible] और व्यक्ति के जीव
[illegible]

(9) [illegible] की वृद्धि : Promotion of Common Welfare
[illegible] भावना का वि
[illegible] सामान्य हि
[illegible]

(10) [illegible] : Development of
[illegible]

भी कोई समाज शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण करता है, तब वह अपने आदर्शों को अपने सामने रखता है। इसका अर्थ यह है कि शिक्षा के उद्देश्यों का सामाजिक आदर्शों से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। यह सम्बन्ध विभिन्न समाजों में विभिन्न रूपों में दिखाई देता है, जैसा कि अग्रलिखित वर्णन से स्पष्ट हो जायगा :—

(1) **भौतिकवादी समाज में सम्बन्ध : Relationship in Materialistic Society**—भौतिकवादी समाज में शिक्षा के उद्देश्यों और समाज के आदर्शों का आधार—लोगों का भौतिकवादी दृष्टिकोण होता है। इस सम्बन्ध में नैतिक आदर्शों, आध्यात्मिक मूल्यों, रचनात्मक कार्यों और विवेक के लिए कोई स्थान नही होता है।

(2) **प्रयोजनवादी समाज में सम्बन्ध : Relationship in Pragmatic Society**—इस समाज में राज्य को विभिन्न सामाजिक संगठनों के समान एक संगठन माना जाता है। अतः राज्य का शिक्षा पर एकमात्र अधिकार नही होता है। कोई भी संगठन शिक्षा देने का कार्य कर सकता है, और इसके लिए वह किसी भी विधि या पाठ्यक्रम को अपना सकता है।

इस प्रकार, समाज व्यक्तियों को विभिन्न शिक्षण-विधियों और पाठ्यक्रमों मे से किसी को चुनने की स्वतन्त्रता देता है। व्यक्ति से सम्बन्धित समाज का यही मुख्य आदर्श है। अतः यह आदर्श शिक्षा के उद्देश्यों और समाज के आदर्शों के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है।

(3) **आदर्शवादी समाज में सम्बन्ध : Relationship in Idealistic Society**—आदर्शवादी विचारधारा के अनुसार—प्राकृतिक मनुष्य (Natural Man) को आदर्श मनुष्य (Ideal Man) में विकसित किया जाना चाहिए और आध्यात्मिक मूल्यों पर बल दिया जाना चाहिए। इसी आदर्श को ध्यान मे रखकर आदर्शवादी समाज में शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण किया जाता है। इन उद्देश्यों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है—व्यक्ति की धार्मिक और नैतिक शिक्षा, जिससे उसका आध्यात्मिक विकास हो सके।

(4) **फ़ासिस्ट समाज में सम्बन्ध : Relationship in Fascist Society**—फ़ासिस्ट समाज के आदर्श हैं :—

1. राज्य का हित सर्वोपरि होता है।
2. राज्य के हित के लिए व्यक्ति को अपना बलिदान देना पड़ता है।
3. स्वतन्त्रता—व्यक्ति का मौलिक अधिकार नहीं होता है।
4. उसे स्वतन्त्रता का अधिकार राज्य द्वारा दिया जाता है और इसका स्थान कर्त्तव्य से नीचे है, और
5. फ़ासिस्ट समाज या राज्य पर श्रेष्ठ व्यक्तियों द्वारा शासन किया जाता है। इन व्यक्तियों का स्थान जनसाधारण से बहुत ऊँचा होता है।

उपर्युक्त आदर्शों को ध्यान में रखकर शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण किया जाता है। उद्देश्य असाधारण गुणों वाले व्यक्तियों को प्राथमिकता देते हैं और जन-

(4) जीवन-मूल्यों पर नियन्त्रण : Control on the Values of Life—शिक्षा के अच्छे उद्देश्य—व्यक्ति को जीवन-मूल्यों पर नियन्त्रण प्राप्त करने में सहायता देते है। यदि शिक्षा के उद्देश्य अच्छे नही हैं, तो वह इन मूल्यों पर नियन्त्रण प्राप्त करने में असफल रहता है।

(5) मानव-पूर्णता की प्राप्ति : Achievement of Human Perfection–शिक्षा के श्रेष्ठ उद्देश्य, व्यक्ति को मानव-जीवन की पूर्णता की प्राप्ति की ओर बढ़ाते है। पर इसकी प्राप्ति तभी हो सकती है, जब शिक्षा के उद्देश्य, व्यक्ति को ज्ञान, अनुशासन, सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् की प्राप्ति के योग्य बनायें।

(6) आत्म-सुरक्षा की तैयारी : Preparation for Self-Preservation–शिक्षा के उच्च उद्देश्य व्यक्ति को आत्म-सुरक्षा के लिए तैयार करते है। वे व्यक्ति के जीवन की आकस्मिक विनाश से रक्षा करते है और अनुचित सम्बन्ध द्वारा की गई क्षति को दूर करते है।

(7) मानव-आत्मा का पोषण : Nurture of Human Spirit—शिक्षा के अच्छे उद्देश्य, मानव-आत्मा का पोषण करते हैं। इसके अभाव में मानव-आत्मा का विकास सम्भव नही है। हरबार्ट (Herbart) और फ्रॉबेल (Froebel) ने इस बात पर बहुत बल दिया है।

(8) सामाजिक संगठन का निर्माण : Building a Social Organization—इस संसार में व्यक्ति का मुख्य कार्य—ऐसे समाज का संगठन करना है, जिसमें वह अपनी श्रेष्ठतम योग्यताओ को पूर्ण रूप से प्राप्त कर सके। यह तभी सम्भव हो सकता है, जब शिक्षा के उद्देश्यों और व्यक्ति के जीवन में घनिष्ठ सम्बन्ध हो।

(9) जनहित की वृद्धि : Promotion of Common Welfare—शिक्षा के वांछित उद्देश्य, बालक और बालिकाओं में सामाजिक भावना का विकास करके, उन्हें सामूहिक जीवन में भाग लेने के योग्य बनाते है। फलतः सामान्य हित की वृद्धि होती है।

(10) आचरण व नैतिक चरित्र की उन्नति : Development of Conduct & Moral Character—यदि शिक्षा के उद्देश्यो का निर्माण, धर्म और दर्शन के सिद्धान्तों के अनुरूप किया जाता है, तो जीवन से उनका सम्बन्ध प्रशंसनीय होता है। ऐसे उद्देश्य बच्चो में श्रेष्ठ आचरण और उत्तम नैतिक चरित्र प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न करते हैं।

शिक्षा के उद्देश्यों का समाज के आदर्शों से सम्बन्ध
Relation of Educational Aims to the Ideals of Society

मानव-सभ्यता का इतिहास—समाज और व्यक्तियों के हितो के संघर्ष की लम्बी कहानी है। अधिकांश समाजों ने अपने आदर्शों को व्यक्ति के आदर्शों से श्रेष्ठ माना है। फलतः व्यक्तियो को कुचला गया है, और कुचला जा रहा है। जब कभी

भी कोई समाज शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण करता है, तब वह अपने आदर्शों को अपने सामने रखता है। इसका अर्थ यह है कि शिक्षा के उद्देश्यों का सामाजिक आदर्शों से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। यह सम्बन्ध विभिन्न समाजों में विभिन्न रूपों में दिखाई देता है, जैसा कि अग्रलिखित वर्णन से स्पष्ट हो जायगा :—

(1) भौतिकवादी समाज में सम्बन्ध : **Relationship in Materialistic Society**—भौतिकवादी समाज में शिक्षा के उद्देश्यों और समाज के आदर्शों का आधार—लोगों का भौतिकवादी दृष्टिकोण होता है। इस सम्बन्ध में नैतिक आदर्शों, आध्यात्मिक मूल्यों, रचनात्मक कार्यों और विवेक के लिए कोई स्थान नहीं होता है।

(2) प्रयोजनवादी समाज में सम्बन्ध : **Relationship in Pragmatic Society**—इस समाज में राज्य को विभिन्न सामाजिक संगठनों के समान एक संगठन माना जाता है। अतः राज्य का शिक्षा पर एकमात्र अधिकार नहीं होता है। कोई भी संगठन शिक्षा देने का कार्य कर सकता है, और इसके लिए वह किसी भी विधि या पाठ्यक्रम को अपना सकता है।

इस प्रकार, समाज व्यक्तियों को विभिन्न शिक्षण-विधियों और पाठ्यक्रमों में से किसी को चुनने की स्वतन्त्रता देता है। व्यक्ति से सम्बन्धित समाज का यही मुख्य आदर्श है। अतः यह आदर्श शिक्षा के उद्देश्यों और समाज के आदर्शों के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है।

(3) आदर्शवादी समाज में सम्बन्ध : **Relationship in Idealistic Society**—आदर्शवादी विचारधारा के अनुसार—प्राकृतिक मनुष्य (Natural Man) को आदर्श मनुष्य (Ideal Man) में विकसित किया जाना चाहिए और आध्यात्मिक मूल्यों पर बल दिया जाना चाहिए। इसी आदर्श को ध्यान में रखकर आदर्शवादी समाज में शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण किया जाता है। इन उद्देश्यों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है—व्यक्ति की धार्मिक और नैतिक शिक्षा, जिससे उसका आध्यात्मिक विकास हो सके।

(4) फ़ासिस्ट समाज में सम्बन्ध : **Relationship in Fascist Society**—फासिस्ट समाज के आदर्श हैं :—

1. राज्य का हित सर्वोपरि होता है।
2. राज्य के हित के लिए व्यक्ति को अपना बलिदान देना पड़ता है।
3. स्वतन्त्रता—व्यक्ति का मौलिक अधिकार नहीं होता है।
4. उसे स्वतन्त्रता का अधिकार राज्य द्वारा दिया जाता है और इसका स्थान कर्त्तव्य से नीचे है, और
5. फ़ासिस्ट समाज या राज्य पर श्रेष्ठ व्यक्तियों द्वारा शासन किया जाता है। इन व्यक्तियों का स्थान जनसाधारण से बहुत ऊँचा होता है।

उपर्युक्त आदर्शों को ध्यान में रखकर शिक्षा के उद्देश्यों का निर्माण किया जाता है। उद्देश्य असाधारण गुणों वाले व्यक्तियों को प्राथमिकता देते हैं और जन-

साधारण तथा प्रतिभाशाली व्यक्तियों के बीच के अन्तर को अधिक स्पष्ट करते हैं। इस ध्येय को प्राप्त करने के लिए सबको शिक्षा के समान अवसर नहीं दिये जाते हैं।

(5) **साम्यवादी समाज में सम्बन्ध : Relationship in Communist Society**—साम्यवादी समाज के आदर्श हैं :—

1. सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं का स्वरूप—भौतिक वस्तुओं के उत्पादन के ढंग के अनुसार निश्चित किया जाता है।
2. वस्तुओं का मूल्य—उनके बनाने में किए गए परिश्रम के अनुसार रखा जाता है, और
3. शारीरिक तथा मानसिक कार्य करने वालों में कोई भेद-भाव नहीं किया जाता है।

साम्यवादी समाज में उपर्युक्त आदर्शों से सम्बन्धित शिक्षा के उद्देश्य इस प्रकार होते हैं—शिक्षा में श्रम को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। छात्रों को अपने को परिश्रम करने वाले समाज का श्रमिक समझना पड़ता है। यही कारण है कि साम्यवादी समाज मे विद्यालय का स्थानीय फैक्ट्री या पोस्ट-आफ़िस और समीप के सहकारी फार्म से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। इसके अतिरिक्त, शिक्षा पर शासक वर्ग का पूर्ण अधिकार होता है। अतः छात्रो को दल की नीति के विषयों में पूर्ण जानकारी कराई जाती है। उन्हें आलोचना करने की स्वतन्त्रता नही दी जाती है।

(6) **लोकतन्त्रीय समाज में सम्बन्ध : Relationship in Democratic Society**—लोकतन्त्रीय समाज मे मानव के व्यक्तित्व को महत्त्व दिया जाता है, और यह विश्वास किया जाता है कि मनुष्य अपने कार्यों को इस प्रकार कर सकते हैं, जिससे सबका हित हो। ऐसे समाज में सब व्यक्तियों के समान अधिकार और उनसे सम्बन्धित कार्य होते है। इस समाज में बल के स्थान पर विवेक का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार, लोकतन्त्र के आदर्श मनुष्य के लिए सबसे उत्तम है। पर इसके साथ ही, वे कठिन भी है, क्योंकि उनको तभी प्राप्त किया जा सकता है, जब व्यक्ति सभी गुणो से सम्पन्न हो।

उपरिलिखित गुणों को विकसित करने के लिए शिक्षा के निम्नांकित उद्देश्यो का निर्माण किया जाता है :—

1. छात्रो को मानव-व्यक्तित्व का आदर करना सिखाना।
2. उनको ज्ञान देकर सामाजिक विरासत को ग्रहण करने के लिए तैयार करना।
3. उनको आत्म-अनुशासन (Self-Discipline) और जन-कल्याण को समझने में सहायता देना।
4. उनको सत्य की सीमा के अन्दर अपने बारे में सोचने की शक्ति देना।
5. उनको लोकतन्त्र का पूरा-पूरा ज्ञान प्राप्त करने में सहायता देना, और

6. उनको यह शिक्षा देना कि समाज को उन्नत करना—उनके जीवन का ध्येय है।

उपसंहार

उपर्युक्त के आधार पर हम कह सकते हैं कि शिक्षा के उद्देश्यों का व्यक्ति के जीवन और समाज के आदर्शों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्रत्येक व्यक्ति और समाज पर एक विशेष प्रकार की छाप होती है। दोनों ही शिक्षा के उद्देश्यों को व्यक्त करते हैं, चाहे उनका निर्माण व्यक्ति के हित के लिए या समाज के लाभ के लिए किया गया हो। शिक्षा के उद्देश्यों का व्यक्ति पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है, और उनका समाज से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। वे व्यक्ति को एक विशेष साँचे में ढालते हैं और स्वयं सामाजिक आदर्शों के द्वारा ढाले जाते हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discucs briefly the basis of the formulation of educational aims.

शिक्षा के उद्देश्यों के निर्माण के आधार की संक्षेप में विवेचना कीजिए।

2. Can the realistic way of the formulation of educational aims be held superior to the idealistic way ? Give reasons in support of your answer.

क्या शिक्षा के उद्देश्यो के निर्माण का यथार्थवादी ढङ्ग, आदर्शवादी ढंग से उत्तम माना जा सकता है ? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दीजिए।

3. Can the aims of education be classified ? If so, give a classification which you consider suitable.

क्या शिक्षा के उद्देश्यो को वर्गीकृत किया जा सकता है ? यदि हाँ, तो आप एक उपयुक्त वर्गीकरण दीजिए।

4. Write short notes on the following :—

(a) Universal & Particular Aims of Education, and (b) Individual & Social Aims of Education.

अधोलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :—

(अ) शिक्षा के सार्वभौमिक तथा विशिष्ट उद्देश्य, तथा (ब) शिक्षा के वैयक्तिक तथा सामाजिक उद्देश्य।

5. How do political, social and economic conditions prevailing in a society help in the formulation of the aims of education ? Should they be the sole criteria for determining educational aims ? Express your views for or against it.

शिक्षा के उद्देश्यों के निर्माण में समाज में प्रचलित राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ किस प्रकार सहायक हैं ? क्या इनको शिक्षा के उद्देश्यों के निर्माण के लिए एकमात्र आधार स्वीकार करना चाहिए ? इसके पक्ष या विपक्ष में अपने विचार प्रकट कीजिए ।

6. What, in your opinion, is the relation of educational aims to life and social· ideas ? With which of the two should the relation be deeper, and why ?

आपके मतानुसार जीवन तथा सामाजिक आदर्शों से शिक्षा के उद्देश्यों के कैसे सम्बन्ध होने चाहिए ? इन दोनों में किसके साथ अधिक गहन सम्बन्ध होना चाहिए, और क्यों ?

7. Give a critical estimate of the relation of educational aims to the ideals of society.

शिक्षा के उद्देश्यों का समाज के आदर्शों से सम्बन्ध का मूल्यांकन कीजिए ।

4

शिक्षा के वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्य

INDIVIDUAL & SOCIAL AIMS OF EDUCATION

"सामाजिक वातावरण से अलग वैयक्तिकता का कोई मूल्य नहीं है; और व्यक्तित्व अर्थहीन शब्द है, क्योंकि इसी में इनको विकसित और कुशल बनाया जाता है।"

"Individuality is of no value, and personality is a meaningless term apart from the social environment in which they are developed and made efficient."—Ross.

विषय-प्रवेश

शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों ने तीव्र विवाद को जन्म दिया है, जो अभी तक पूरी तरह शान्त नहीं हो पाया है। यह विवाद निम्नलिखित तीन मुख्य बातों पर है :—

1. शिक्षा को अच्छे व्यक्तियों का निर्माण करना चाहिए या नागरिकों का ?
2. शिक्षा को व्यक्ति की आवश्यकताएँ पूरी करनी चाहिए या समाज की ?
3. शिक्षा पर व्यक्ति का प्रथम अधिकार होना चाहिए या समाज का ?

उपर्युक्त प्रश्नों के बाह्य रूपों को देखकर यह कहना कठिन है कि व्यक्ति और समाज या शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों में विरोध है या समन्वय। हम किसी भी एक निष्कर्ष पर तभी पहुँच सकते हैं, जब हम इन उद्देश्यों का अध्ययन कर लें। अतः हम इनकी ओर ध्यान दे रहे हैं।

शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य
Individual Aim of Education

1. वैयक्तिक उद्देश्य का अर्थ : Meaning of Individual Aim—(संसार के विभिन्न समाजों में प्राचीन काल से लेकर आज तक शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य पर किसी-न-किसी रूप मे विचार होता आया है ।) पर आधुनिक शिक्षा-मनोविज्ञान की प्रगति के कारण इस उद्देश्य पर ख़ास-तौर से बल दिया जाने लगा है । प्राचीन समय में यूनान के सोफिस्टो (Sophists) ने इस उद्देश्य का बलपूर्वक समर्थन किया था । (आधुनिक समय में इसके समर्थक रूसो, फ्रॉबेल, पेस्टालॉजी और नन आदि है । इनमें नन का स्थान प्रमुख है । नन (Nunn) ने वैयक्तिक उद्देश्य का समर्थन करते हुए लिखा है :—**"मानव-जगत में प्रत्येक अच्छाई व्यक्तिगत पुरुषों और स्त्रियों के स्वतन्त्र कार्यों द्वारा आती है । इसलिए, शिक्षा-पद्धति को इस सत्य के अनुरूप बनाया जाना चाहिए ।"**)

नन ने व्यक्ति के महत्त्व पर बल देते हुए लिखा है :—**"शिक्षा को ऐसी दशायें उत्पन्न करनी चाहिए, जिनसे वैयक्तिकता का पूर्ण विकास हो सके और व्यक्ति मानव-जीवन को अपना मौलिक योग दे सके ।"**

"Education must secure conditions conducive to the complete development of individuality and enable the individual to make his original contribution to the variegated whole to human life."

—**T. P. Nunn.**

शिक्षा के इस महत्त्वपूर्ण उद्देश्य की प्राप्ति के लिए राज्य, समाज, शिक्षा-संस्थाओं—सभी को प्रयत्न करना चाहिए । (उन्हें चाहिए कि वे बालकों की रुचियों, प्रवृत्तियो और आवश्यकताओं को ध्यान मे रखकर ऐसी दशायें उत्पन्न करें, जिनसे उनकी वैयक्तिकता का पूर्ण विकास हो और वे भविष्य में सुखी जीवन व्यतीत कर सकें ।) सभी का एकमात्र उद्देश्य होना चाहिए—बालकों को स्वतन्त्र रूप से अपनी प्रगति का अवसर देना ।

(यूकेन (Eucken) ने वैयक्तिकता को जैवकीय (Biological) अर्थ न देकर आध्यात्मिक (Spiritual) अर्थ दिया है । उसका कथन है :—**"वैयक्तिकता का अर्थ है—आध्यात्मिक वैयक्तिकता ।"**)

इसके साथ-साथ, हम यूकेन की 'व्यक्तित्व' की धारणा को भी स्वीकार कर सकते हैं । उसका कथन है :—**"न तो हम आध्यात्मिक वैयक्तिकता के साथ जन्म लेते हैं, और न हम प्रारम्भ से ही व्यक्तित्व वाले मनुष्य होते हैं । हममें केवल व्यक्तित्व का निर्माण करने की शक्ति होती है ।"**

इस प्रकार, यूकेन के मतानुसार—आध्यात्मिक वैयक्तिकता और व्यक्तित्व जन्मजात नहीं होते हैं, वरन् उन्हें प्राप्त किया जाता है । अतः हम कह सकते हैं कि शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य का अर्थ है—उत्तम व्यक्तित्व और आध्यात्मिक वैयक्तिकता

का विकास। हमारे इस कथन की पुष्टि रॉस के इन शब्दों से हो जाती है :—"शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य का अर्थ जो हमारे स्वीकार करने के योग्य है, वह केवल यह है—महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व और आध्यात्मिक वैयक्तिकता का विकास।"

"The only meaning of the individual aim in education that is worthy of our acceptation is the development of valuable personality and spiritual individuality."—J. S. Ross.

2. वैयक्तिक उद्देश्य के रूप : **Forms of Individual Aim**—शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य के दो रूप हैं—(1) आत्माभिव्यक्ति, और (2) आत्मानुभूति।

(1) **आत्माभिव्यक्ति का उद्देश्य : Aim of Self-Expression**—जो शिक्षाशास्त्री वैयक्तिक विकास को अतिवादी (Extreme) रूप में मानते हैं, उनके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य—आत्माभिव्यक्ति है। इसका अर्थ यह है कि वे आत्म-प्रकाशन पर विशेष बल देते हैं। उनका कहना है कि व्यक्ति अपनी इच्छा के अनुसार चाहे जैसा भी कार्य या व्यवहार कर सकता है, भले ही उससे दूसरों को हानि हो।

मनोविश्लेपणवादियों का कहना है कि आत्म-प्रकाशन से व्यक्ति का मस्तिष्क रोग से मुक्त हो जाता है, और उसे स्वतन्त्र रूप से विकसित होने का अवसर मिलता है। इस दृष्टिकोण से आत्म-प्रकाशन का उद्देश्य भले ही ठीक मान लिया जाय, पर इससे पाशविक प्रवृत्तियों का विकास होता है।

अतः यदि सब व्यक्तियों को आत्म-प्रकाशन की स्वतन्त्रता दे दी जाय, तो समाज उस प्राचीन अवस्था में पहुँच जायगा, जब उसका विशेष लक्षण संघर्ष था। ऐसी दशा में समाज की प्रगति होना तो असम्भव हो ही जायगा, पर इससे भी अधिक ख़राब बात यह होगी कि वह धूल में मिल जायगा।

(2) **आत्मानुभूति का उद्देश्य : Aim of Self-Realization**—आत्मानुभूति का आदर्श—आत्माभिव्यक्ति से भिन्न है। आत्माभिव्यक्ति में 'स्व' (Self) का अभिप्राय है—'जैसा मैं उसे जानता हूँ।' ('Self' as I know it.)। आत्मानुभूति के 'स्व' का अभिप्राय है—'जैसा मैं उसका होना चाहता हूँ' ('Self' as I would have it to be,)। आत्माभिव्यक्ति में 'स्व' व्यक्ति का 'मूर्त्त स्व' (Concrete Self) है। आत्मानुभूति में 'स्व' वह 'आदर्श स्व' (Ideal Self) है, जिसके बारे में हम कल्पना कर सकते हैं। आत्माभिव्यक्ति में समाज के लाभ या हानि का कोई ध्यान नहीं रखा जाता है। एडम्स का कथन है :—"आत्मानुभूति के आदर्श में 'स्व' समाज-विरोधी व्यवहार करके अपनी अनुभूति नहीं कर सकता है।"

"The self in the ideal of self-realization cannot realize itself against society."—Adams.

इसी प्रकार, आत्मानुभूति के उद्देश्य में समाज और सामाजिक वातावरण के महत्त्व को स्वीकार किया जाता है।

3. वैयक्तिक उद्देश्य के पक्ष में तर्क : Arguments for Individual Aim—इस उद्देश्य के पक्ष में निम्नलिखित तर्क दिये जाते हैं :—

(1) प्रजातन्त्र, व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर बल देता है। इसलिए, शिक्षा का उद्देश्य—व्यक्ति का विकास करना होना चाहिए।

(2) संसार में जितनी भी अच्छी बातें हैं, उनकी उत्पत्ति मनुष्य के स्वतन्त्र प्रयत्नों के कारण हुई है। इसलिए, शिक्षा का उद्देश्य—मनुष्य का हित और विकास होना चाहिए।

(3) हर समाज की सभ्यता और संस्कृति को उन्नत रूप देकर व्यक्ति ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को बढ़ाते है। इसलिए, शिक्षा में वैयक्तिक विकास को महत्त्व दिया जाना चाहिए।

(4) जीव-विज्ञान के अनुसार—संसार का हर-एक प्राणी अपना पूर्ण विकास करने के लिए स्वतन्त्र और प्रयत्नशील है। अतः व्यक्ति को भी अपने विकास का अवसर मिलना चाहिए।

(5) समाज का निर्माण, व्यक्ति अपने हित के लिए करते हैं। अतः शिक्षा का उद्देश्य—व्यक्ति का विकास होना चाहिए।

(6) मनोविज्ञान के अनुसार—यदि किसी व्यक्ति पर समाज के आदर्शों को बलपूर्वक लादा जाता है, तो वह विभिन्न प्रकार के मानसिक रोगों का शिकार हो जायगा। अतः यह आवश्यक है कि व्यक्ति की मूल-प्रवृत्तियों (Instincts) को ध्यान में रखकर ऐसी दशाओं का निर्माण किया जाय, जिनसे उसका स्वतन्त्र विकास हो सके।

(7) इतिहास हमे बताता है कि जब-जब व्यक्ति की स्वतन्त्रता का दमन किया गया, है, तब-तब उसके परिणाम अच्छे नही निकले है। जर्मनी में यही किया गया, जिसके परिणामस्वरूप प्रथम और द्वितीय विश्व-युद्ध हुए। इसलिए, व्यक्ति की स्वतन्त्रता का दमन नही किया जाना चाहिए और उसे अपना विकास करने का पूरा अवसर दिया जाना चाहिए।

(8) नन के अनुसार :—**"वैयक्तिकता जीवन का आदर्श है। शिक्षा की किसी भी योजना का महत्त्व उसको उच्चतम वैयक्तिक श्रेष्ठता का विकास करने की सफलता से आंका जाना चाहिए।"**

"Individuality is the ideal of life. A scheme of education is to be valued by its success fostering the highest degree of individual excellence."—**T. P. Nunn.**

4. वैयक्तिक उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against Individual Aim—आत्मानुभूति के रूप में शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य को उचित माना जा सकता है। पर आत्माभिव्यक्ति के रूप में इसमें अग्रलिखित दोष मिलते हैं :—

(1) व्यक्तिवाद को प्रोत्साहन : Encouragement to Individualism—इस बारे में दो मत नही हो सकते हैं कि शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य व्यक्तिवाद को प्रोत्साहन देना है। ऐसी दशा में समाज को व्यक्तिवाद के भयंकर परिणामों का सामना करना पड़ता है।

(2) समाजवाद का शत्रु : Enemy of Socialism—समाजवाद और व्यक्तिवाद—दो विरोधी विचारधाराएँ हैं। अतः वैयक्तिक उद्देश्य को समाजवाद का शत्रु कहना अनुचित नहीं होगा। इस दृष्टि से कम-से-कम भारत में तो शिक्षा के इस उद्देश्य को कोई जगह नहीं है। कारण यह है कि हमारा ध्येय—समाजवादी समाज की स्थापना करना है।

(3) सामाजिक विघटन : Social Disorganization—वैयक्तिक उद्देश्य व्यक्ति के विकास के लिए सब तरह की स्वतन्त्रता देने के पक्ष मे है। इस स्वतन्त्रता का परिणाम समाज के लिए हानिकारक हो सकता है। कारण यह है कि हर व्यक्ति अपनी मनमानी कर सकता है। फलतः न केवल व्यक्ति का, वरन् समाज का भी विकास रुक सकता है और सामाजिक विघटन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो सकती है।

(4) वातावरण में अनुचित परिवर्तन : Undesirable Change in Environment—शिक्षा के अनेक कार्यों में से एक कार्य यह है कि वह व्यक्ति को वातावरण से सामंजस्य करना सिखाये। इससे अधिक अच्छा कार्य यह है कि वह व्यक्ति को वातावरण में अच्छा परिवर्तन करने के लिए प्रशिक्षित करे। शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य इस कार्य में सहायता नही कर सकता है, क्योकि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के कारण वातावरण पर बुरा प्रभाव पड़ता है। दूसरे शब्दों में, उसका रूप परिवर्तित होकर अनुचित या अवाछनीय हो जाता है।

(5) तर्क-शक्ति के विकास में बाधा : Hindrance to the Development of Reasoning Power—शिक्षा का उद्देश्य—व्यक्ति में तर्क-शक्ति का विकास करना है, जिससे वह भले-बुरे और उचित-अनुचित में अन्तर कर सके। शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य व्यक्ति की निरंकुश स्वतन्त्रता का समर्थन करने के कारण उसकी तर्क-शक्ति का उचित विकास नहीं होने देता है।

(6) वास्तविक जीवन के लिए अव्यावहारिक : Inapplicable to Real Life—शिक्षा में वैयक्तिक उद्देश्य को सिद्धान्त रूप में भले ही ठीक मान लिया जाय, पर वास्तविक जीवन में इसको व्यावहारिक रूप देना असम्भव है। यह सम्भव नही है कि प्रत्येक छात्र के वैयक्तिक विकास के लिए विशेष प्रकार के पाठ्यक्रम और विशेष प्रकार के स्कूल की व्यवस्था की जाय। इस समस्या का हल बताते हुए नन (Nunn) ने कहा है कि अध्यापक को शिक्षण का कार्य कुछ आवश्यक सीमाओं में करना पड़ेगा, पर इससे छात्रों की वैयक्तिकता का विकास भी कुछ सीमाओं में ही होगा।

(7) नैतिक गुणों की उपेक्षा : Disregard of Moral Virtues—शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य आत्म-प्रदर्शन की ग़लत धारणा पर आधारित है। निट्शे (Nietzche) व्यक्तिवादी दर्शन का प्रमुख समर्थक है। उसका कहना है कि व्यक्ति को अपनी इच्छा-शक्ति के अलावा और किसी भी नैतिकता को स्वीकार किये बिना अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना चाहिए। ऐसी दशा में प्रेम, दया, सहानुभूति, बलिदान आदि नैतिक गुणों की उपेक्षा होना आवश्यक है।

(8) मनुष्य के सामाजिक स्वरूप की उपेक्षा : *Disregard of Man's Social Nature*—हमें यह नहीं भूल जाना चाहिए कि मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह समाज में रहकर ही अपनी पाशविक प्रवृत्ति से ऊँचा उठता है। केयर्ड का कथन है :—"मनुष्य सामाजिक जीवन को अपना समर्पण करके ही अपनी पाशविक प्रवृत्ति से ऊँचा उठता है।"

"It is through the surrender of himself to social life that man is first lifted above his animal individuality."—Caird.

इस कथन के अनुसार—व्यक्ति को समाज से श्रेष्ठ नहीं समझा जा सकता है। फिर, जैसा कि इफ़ेशियस (Ephasius) ने कहा है :—"मानव-प्रकृति उतनी ही सामाजिक है, जितनी स्वाभिमानी।" ऐसी स्थिति में मनुष्य और समाज का महत्त्व बराबर है। अतः वैयक्तिक उद्देश्य के नारे लगाना व्यर्थ है।

(9) दार्शनिक विचारों के प्रतिकूल : Contrary to Philosophical Views—अन्तिम सत्ता के आधार पर दर्शन के तीन वाद है—अद्वैतवाद (Monism), द्वैतवाद (*Dualism*), और बहुवाद (*Pluralism*)। रायबर्न (*Ryburn*) के अनुसार :—आज के युग में ये सभी वाद स्वीकार करते है कि—"ज्ञान के विकास की दिशा सम्पूर्णता की ओर है।" इसके अतिरिक्त, दर्शन का मुख्य सिद्धान्त है—'विभिन्नता में एकता' (Unity in Diversity)। इस प्रकार, शिक्षा का वैयक्तिक उद्देश्य दार्शनिक विचारों के प्रतिकूल है।

(10) पर्यावरण की उपेक्षा : Disregard of Environment—वैयक्तिक उद्देश्य के समर्थक वंशानुक्रम से प्राप्त पाशविक प्रवृत्तियों के विकास पर बहुत बल देते हैं। ऐसा करते समय वे पर्यावरण को बिलकुल भूल जाते हैं। सत्य यह है कि मनुष्य के निर्माण में पर्यावरण का हाथ अधिक है। लेंडिस और लेंडिस ने ठीक ही लिखा है :—"वंशानुक्रम, मनुष्य के पशु रूप की व्याख्या करता है, पर्यावरण—मनुष्य के मानव रूप की।"

"*Heredity explains man the animal, environment man the human being.*"—Landis & Landis.

जब मनुष्य के निर्माण मे पर्यावरण का इतना अधिक हाथ है, तब सामाजिक पर्यावरण की उपेक्षा करके *मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास की बात सोचना कोरी* कल्पना है। रॉस का कथन सत्य है :—"सामाजिक पर्यावरण से अलग वैयक्तिकता

का कोई मूल्य नहीं है और व्यक्तित्व अर्थहीन शब्द है, क्योंकि इसी में इनको विकसित और कुशल बनाया जाता है।"

निष्कर्ष

हमने शिक्षा के वैयक्तिक उद्देश्य के पक्ष और विपक्ष में जो तर्क दिए हैं, उनके आधार पर हम कह सकते हैं कि वैयक्तिकता का विकास—एक उत्तम उद्देश्य है। पर हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि समाज की उपेक्षा करके वैयक्तिकता का विकास नही किया जा सकता है।

जहाँ तक वैयक्तिक उद्देश्य के आत्माभिव्यक्ति (Self-Expression) रूप का प्रश्न है, उसे किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है। हाँ, उसके आत्मानुभूति (Self-Realization) के रूप को स्वीकार किया जा सकता है, क्योंकि इसका सम्बन्ध वैयक्तिक और सामाजिक—दोनों प्रकार के विकास से है। इस प्रकार, वैयक्तिक उद्देश्य अपने पूर्ण रूप में मान्य नही है।

शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य
Social Aim of Education

1. सामाजिक उद्देश्य का अर्थ : Meaning of Social Aim—शिक्षा के सामाजिक उद्देश्यों को 'शिक्षा का सामाजिक और नागरिकता का उद्देश्य' (Social & Citizenship Aim of Education) कहा जाता है। इस उद्देश्य के अनुसार—समाज या राज्य का स्थान व्यक्ति से बहुत ऊँचा है। समाज के हित में ही व्यक्ति का हित है। समाज से अलग उसका कोई अस्तित्व नहीं है। समाज में रहकर ही वह अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है, अपना विकास कर सकता है और उन्नति के पथ पर आगे बढ़ सकता है।

जो बात व्यक्ति के बारे में सत्य है, वही समाज के बारे में भी सत्य है। समाज का निर्माण व्यक्ति करते हैं। अतः व्यक्तियों के अभाव में समाज अर्थहीन है। समाज अपनी एकता और उन्नति के लिए व्यक्तियों पर ही निर्भर है। उनके सहयोग के बिना उसकी प्रगति असम्भव है।

इस प्रकार, व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध अटूट है। पर शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य के अनुसार इस सम्बन्ध में समाज का स्थान व्यक्ति के स्थान से ऊँचा है। व्यक्ति को अपने हित का ध्यान न रखकर समाज के हित का ध्यान रखना चाहिए। उसे आवश्यकता पड़ने पर समाज के लिए हर प्रकार का बलिदान देने के लिए तैयार रहना चाहिए।

अमरीका के प्रोफेसर बैगले और डाक्टर ड्यूवी ने इस उद्देश्य की व्याख्या दूसरे ढंग से की है। उनका कथन है कि शिक्षा मे सामाजिक उद्देश्य का अर्थ है—सामाजिक कुशलता की प्राप्ति। अतः शिक्षा का उद्देश्य—प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक रूप से कुशल बनाना है। ऐसा व्यक्ति अपनी जीविका की समस्या को हल कर

सकने के कारण समाज पर भार नहीं रहता है। साथ ही अच्छा नागरिक होने के कारण वह अपने देश और ससार की समस्याओं को समझता है। इसके अतिरिक्त, वह इस प्रकार प्रशिक्षित होता है कि वह अन्य नागरिकों और राज्य की इच्छाओं तथा आवश्यकताओं को सम्मान देता है।

2. सामाजिक उद्देश्य के रूप : Forms of Social Aim—शिक्षा में सामाजिक उद्देश्य के तीन रूप मिलते हैं :—(i) सामान्य रूप, (ii) उग्र रूप, और (iii) उदार रूप।

(i) सामाजिक उद्देश्य का सामान्य रूप : Simple Form of Social Aim-सामान्य रूप मे शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य की सर्वमान्य और साधारण व्याख्या की जाती है। इस रूप में समर्थकों का विश्वास है कि इसके द्वारा सामाजिकता और सहयोग उत्पन्न होते है, जो जीवन की सुख-सुविधाओं को भोगने के लिए बहुत आवश्यक है। वे यह नहीं मानते हैं कि व्यक्ति समाज से दूर किसी निर्जन स्थान मे रहकर अपने जीवन का निर्वाह और विकास कर सकता है। रिमाण्ट ने ठीक ही लिखा है :— "समाज-विहीन व्यक्ति कोरी कल्पना है।"

जब तक मानव सामाजिक प्राणी है और समाज मे सामाजिक सम्बन्धों के द्वारा जीवित रहता और विकसित होता है, तब तक उसे अपनी वैयक्तिकता का कुछ सीमा तक सामाजिक या सार्वजनिक आवश्यकताओ के अधीन रखना पड़ेगा। इसके अलावा वह समाज की आवश्यकताओं के अनुसार अपने में परिवर्तन करेगा। फलस्वरूप, चेतन और अचेतन रूप में उसकी वैयक्तिकता का दमन होता रहेगा। यह शिक्षा में सामाजिक उद्देश्य का साधारण रूप है।

(ii) सामजिक उद्देश्य का उग्र रूप : Extreme Form of Social Aim–उग्र रूप में शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य की संकीर्ण और *असाधारण व्याख्या की जाती* है। इसके समर्थको का कथन है कि राज्य व्यक्ति और उसकी आकाक्षाओं से बहुत श्रेष्ठ है। अतः *राज्य को व्यक्ति से सम्बन्धित सब बातो पर अधिकार होना चाहिए*। शिक्षा भी इन्ही बातो में से एक है। यह निश्चय करना केवल राज्य का ही कार्य होना चाहिए कि व्यक्ति के लिए शिक्षा के विषय और विधियाँ क्या हो। ऐसा करते समय *व्यक्ति के हित का ध्यान न रखकर केवल राज्य की आवश्यकताओं का ध्यान* रखा जाना चाहिए।

हमे इस विचारधारा का व्यावहारिक रूप प्राचीन स्पार्टा और आधुनिक नाजी जर्मन मे मिलता है। दोनों मे सम्पूर्ण शिक्षा आज्ञापालन पर आधारित थी। दोनों में ही व्यक्ति और उसके विकास के प्रति कोई ध्यान नही दिया जाता था। प्राचीन स्पार्टा मे राज्य अपनी सुरक्षा और शक्ति को बनाये रखने के लिए अपने सभी नागरिकों को सैनिक प्रशिक्षण देता था। इतना ही नहीं, *निर्बल बालकों को मार डाला* जाता था और उन्हे वीर बनाने के लिए होमर (Homer) की कविताएँ सुनाई जाती थी। वहाँ के प्रथम *विधान-निर्माता* लाइकरगस (Lycurgus) की नागरिको को यह

शिक्षा थी कि उनके लिए इससे बुरी बात कोई नहीं है कि वे अपने लिए जीवित रहें। उनमें अपने देश के लिए सब कुछ करने की इच्छा के अलावा और कोई इच्छा नहीं होनी चाहिए।

इसी प्रकार, हिटलर के समय में नाजी जर्मनी में लोगों को यह शिक्षा दी जाती थी कि राज्य ही सर्वोच्च सत्ता है और उसको बनाये रखने के लिए जीवन का बलिदान करने में भी संकोच नहीं करना चाहिए।

(iii) सामाजिक उद्देश्य का उदार रूप : Liberal Form of Social Aim— उदार रूप में शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य इङ्गलैण्ड और अमरीका जैसे प्रजातन्त्रीय देशों में दिखाई देता है। वहाँ 'शिक्षा, समाज-सेवा के लिए' (Education for Social Service), और 'शिक्षा, नागरिकता के लिए' (Education for Citizenship) मानी जाती है।

यह शिक्षा सामाजिक हित का विचार करती है और इस बात पर बल देती है कि स्कूलों में विभिन्न विषयों और सामाजिक कार्यों के द्वारा छात्रों को नागरिकता की शिक्षा दी जाय। लिस्टर स्मिथ (Lister Smith) का कथन है :—"स्कूल को व्यापक कार्य करने चाहिए। उसे निश्चित रूप से सामाजिक दायित्व और समाज के प्रति भक्ति का निर्माण और विकास का कार्य करना चाहिए।"

3. सामाजिक उद्देश्य के पक्ष में तर्क : Arguments for Social Aim—

(1) मनुष्य का जन्म, विकास और पोषण समाज में होता है। अतः उसे समाज के लिए बलिदान करने में संकोच नहीं करना चाहिए।

(2) मनुष्य के जीवन के लिए समाज अनिवार्य है। समाज ही उसकी सब आवश्यकताओं को पूरा करता है। समाज से अलग उनका जीवन असम्भव है। अतः उसे समाज के लिए सब कुछ न्यौछावर करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

(3) समाज सभ्यता और संस्कृति को जन्म देता है और पोषण करता है। अतः मनुष्य को समाज के हितों की रक्षा करने के लिए हर तरह से तैयार रहना चाहिए।

(4) मनुष्य वंशानुक्रम से केवल पाशविक प्रवृत्तियों को प्राप्त करता है। सामाजिक पर्यावरण ही उसे मानव बनाता है। इसलिए, शिक्षा में सामाजिक हित पर बल दिया जाना आवश्यक है।

(5) सामाजिक शान्ति और संगठन के लिए बालकों में नागरिकता के गुणों का विकास किया जाना आवश्यक है। ऐसा किये जाने पर ही वे निःस्वार्थ रूप से समाज का कल्याण कर सकते हैं।

(6) समाज में रहकर मनुष्य दूसरे व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है। वह उनसे विचारों और भावनाओं का आदान-प्रदान करता है। फलस्वरूप, उसकी विभिन्न शक्तियों का विकास होता है। इसलिए, समाज की रक्षा करना—मनुष्य का परम कर्त्तव्य है।

(7) समाज ही मनुष्य को उसके एकाकी जीवन को सामूहिक जीवन में बदलने का अवसर देता है। सामूहिक जीवन ही उसे नई खोजों और नये आविष्कारों का अवसर देता है, जिनके फलस्वरूप उसका जीवन अधिक उत्तम बनता है। अतः उसे समाज के कल्याण की भावना से सराबोर होना चाहिए।

(8) जिन देशों में समाजवादी विचारधारा का प्रचलन है, वे अन्य देशों की अपेक्षा सुखी और समृद्धशाली हैं।

(9) रॉस के अनुसार :—"सामाजिक पर्यावरण से अलग वैयक्तिकता का कोई मूल्य नहीं है और व्यक्तित्व अर्थहीन शब्द है।"

(10) बाल्डविन के अनुसार :—"व्यक्तित्व को सामाजिक शब्दों के अतिरिक्त और किसी प्रकार व्यक्त नहीं किया जा सकता है।" अतः सामाजिक शिक्षा पर बल दिया जाना आवश्यक है।

"Personality cannot be expressed in any but social terms."

—J. M. Baldwin.

4. सामाजिक उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Social Aim—सामान्य और उदार रूप में शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य महत्त्वपूर्ण और लाभप्रद—दोनों है। पर उग्र रूप में इसमें निम्नलिखित दोष मिलते हैं :—

(1) अमनोवैज्ञानिक आधार : Unpsychological Basis—शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य का आधार अमनोवैज्ञानिक है। कारण यह है कि इस उद्देश्य में बालकों की व्यक्तिगत रुचियों, प्रवृत्तियों और योग्यताओं के लिए कोई स्थान नहीं है। यह उद्देश्य सब बालकों को एक ही साँचे में ढालना चाहता है। इसका परिणाम यह होता है कि उनका स्वाभाविक विकास रुक जाता है और वे जीवन में किसी प्रकार की प्रगति नहीं कर पाते हैं।

(2) मनुष्य साध्य को प्राप्त करने का साधन : *Man only a Means to an End*—शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य के अनुसार—मनुष्य केवल साधन मात्र है, जिसका प्रयोग करके समाज के साध्य को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है; उदाहरणार्थ नाज़ी जर्मनी का साध्य था—राज्य को सर्वशक्तिमान बनाना। इस साध्य को प्राप्त करने के लिए द्वितीय महायुद्ध में 18 वर्ष तक के नवयुवकों का भी रणदेवी को बलिदान दे दिया गया। इस विचार या विश्वास की जितनी ही बुराई की जाय, कम है।

(3) कला व साहित्य के विकास में बाधा : Hindrance to the Development of Art & Literature—कला और साहित्य का विकास तभी सम्भव है, जब व्यक्ति को हर प्रकार की स्वतन्त्रता प्राप्त हो। ऐसी परिस्थिति में ही वह विभिन्न कलाओं और साहित्य की उन्नति की बात सोच सकता है और इस दिशा में कुछ कर सकता है। शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का कोई

स्थान नही है। अतः किसी भी कला या साहित्य के विकास की बात सोचना ही मूर्खता है।

(4) शिक्षा के साधनों का अनुचित प्रयोग : Wrong Use of the Agencies of Education—जिस देश में राज्य या समाज के हित को सर्वोच्च स्थान दिया जाता है, वहाँ शिक्षा के साधनों का अनुचित प्रयोग किया जाता है; उदाहरणार्थ—साम्यवादी देशों में श्रम को विशेष महत्त्व दिया जाता है। इसीलिए शिक्षा के विभिन्न साधनों का प्रयोग बालकों को यह बताने के लिए किया जाता है कि वे अपने को समाज का श्रमिक समझें। इन साधनो का प्रयोग यह बताने के लिए भी किया जाता है कि स्वतन्त्रता का अर्थ है—नियमों और आदर्शों का पालन करने की स्वतन्त्रता, न कि उनकी आलोचना करने की स्वतन्त्रता। शिक्षा के साधनों के ये प्रयोग उचित नहीं हैं।

(5) ऐतिहासिक दुष्परिणाम : Historical Evils—सामाजिक उद्देश्य के कितने ही ऐतिहासिक दुष्परिणामों की चर्चा की जा सकती है। इतिहास हमें बताता है कि राज्य के कितने ही कर्णधारों ने अपने देशों को धूल में मिला दिया। आधुनिक युग में हिटलर और मुसोलिनी ऐसे ही कर्णधार थे। इनके कारण संसार में युद्ध की लपटें दहक उठी, जिनके कारण जन और सम्पत्ति की विशाल हानि हुई और उनके देश चौपट हो गये।

(6) समाज, मनुष्य से श्रेष्ठ नहीं : Society not above Man—सामाजिक उद्देश्य के अनुसार, समाज को मनुष्य से श्रेष्ठ समझा जाता है, पर यह धारणा गलत है। समाज का निर्माण मनुष्यों ने अपने हित के लिए किया था, न कि अपना बलिदान करके समाज के कल्याण के लिए। समाज का अस्तित्व व्यक्तियों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए और उनको सब प्रकार की सुख-सुविधायें देने के लिए है, जिससे कि वे इस संसार में आनन्द का जीवन व्यतीत कर सकें।

समाज या राज्य की श्रेष्ठता का सिद्धान्त शक्ति-लोलुप मनुष्यों के द्वारा प्रतिपादित किया गया है, जो इस बहाने से लोगों के जीवन से खेल करना चाहते हैं। हिटलर ऐसा ही मनुष्य था। सत्य यह है कि व्यक्ति का स्थान समाज से ऊपर है। अतः शिक्षा का उद्देश्य—व्यक्ति का विकास करना होना चाहिए, न कि समाज का। व्यक्ति का विकास होने से समाज का विकास स्वयं ही हो जायेगा।

(7) व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का दमन : Suppression of Individual Freedom—शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का कोई स्थान नहीं है। इसके विपरीत, इस स्वतन्त्रता का दमन करने के लिए हर प्रकार के उचित और अनुचित साधनों का प्रयोग किया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि मनुष्य एक ऐसी मशीन बन जाता है, जो अपने देश के शासकों के इशारे पर सब कुछ करने के लिए तैयार रहता है। दूसरे शब्दों में, वह हर प्रकार का कार्य—चाहे वह अच्छा

हो या बुरा, करने के लिए बाध्य होता है । इन कार्यों के लिए न तो उसको उत्तरदायी ठहराया जा सकता है और न इनसे उसकी प्रगति ही हो सकती है ।

(8) एकांगी शिक्षा : One-Sided Education—सामाजिक उद्देश्य जिस शिक्षा का समर्थन करता है, वह एकांगी है । इस शिक्षा में नागरिकता और समाज-सेवा की शिक्षा के लिए कोई स्थान नहीं है । यह उनको केवल आज्ञाकारी व्यक्तियों के रूप में राजनीतिक क्षेत्र के लिए तैयार करती है । अतः उनका अन्य क्षेत्रों से बहुत कम सम्बन्ध रह जाता है । परिणाम यह होता है कि उनका मानसिक, सौन्दर्यात्मक, चारित्रिक और आध्यात्मिक विकास नहीं हो पाता है । इस विकास से विहीन व्यक्तित्व का कोई मूल्य नहीं है । इस प्रकार, शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य में एकांगीपन का दोष पाया जाता है ।

(9) संकुचित राष्ट्रीयता का विकास : Development of Narrow Nationalism—सामाजिक उद्देश्य पर आधारित शिक्षा संकुचित राष्ट्रीयता का विकास करती है; उदाहरणार्थ—नाजी जर्मनी की शिक्षा का मूल मन्त्र था कि जर्मन प्रजाति संसार की सब प्रजातियों से श्रेष्ठ है, अतः उसे दूसरों पर शासन करने का अधिकार है । इस शिक्षा का प्रभाव जर्मनी के व्यक्तियों पर यह पड़ा कि वे अपने को सर्वश्रेष्ठ समझने लगे और दूसरे देशों के लोगों को तुच्छ समझकर उनसे घृणा करने लगे । द्वितीय विश्व-युद्ध के प्रारम्भ होने का एक कारण यह भी था । पर इस कारण से संसार को कितनी क्षति हुई, यह किसी भी शिक्षित व्यक्ति से छिपी नहीं है ।

(10) व्यावसायिकों का निर्माण : Production of Vocationists—शिक्षा का सामाजिक उद्देश्य सामाजिक हितों का ध्यान रखकर व्यक्तियों को विभिन्न व्यवसायों की शिक्षा देना है । इससे समाज की आवश्यकताएँ तो पूरी हो जाती हैं, पर मनुष्य के व्यक्तित्व का धार्मिक, आध्यात्मिक, कलात्मक और सौन्दर्यात्मक विकास नहीं हो पाता है । हार्न का यह कथन ठीक ही है :—**"ऐसी शिक्षा अन्त में कुशल व्यावसायिक का निर्माण करती है । यह शिक्षा धार्मिक और आध्यात्मिक अनुभव को कोई महत्त्व नहीं देती है ।"**

"Such an education will produce cultivated vocationist *in* the end, it underestimates the importance of religious and spiritual experience."—**H. H. Horne.**

निष्कर्ष

शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य के बारे में हमने ऊपर जो कुछ लिखा है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि इस उद्देश्य को उग्र रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है । इसमें इतने अधिक दोष हैं कि उनके आधार पर शिक्षा की व्यवस्था करना—मनुष्य के व्यक्तित्व का दमन और उसकी आत्मा का हनन करना है । व्यक्ति का जीवन केवल समाज, देश या राष्ट्र के लिए ही नहीं है, वरन् अपने लिए भी है । समाज को

सर्वोत्तम सत्ता मानकर व्यक्ति को उसके जन्म से ही ऐसी बेड़ियाँ पहना दी जाती हैं, जो केवल उसकी मृत्यु के बाद उतरती है। हां, हम सामाजिक शिक्षा के उदार रूप का समर्थन करते है, जिस पर आज के प्रगतिशील प्रजातान्त्रिक देशों में बल दिया जा रहा है।

वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्यों में समन्वय
Synthesis between Individual & Social Aims

1. वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों में समन्वय की आवश्यकता : Need of Synthesis between Individual & Social Aims—शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों के बारे में समय-समय पर विवाद हुआ है। इसका प्रमुख कारण वह विचारधारा है, जिसके अनुसार व्यक्ति और समाज को एक-दूसरे का विरोधी माना गया है। कुछ शिक्षा-शास्त्री वैयक्तिक उद्देश्य का समर्थन करते हुए कहते है कि—शिक्षा के द्वारा व्यक्ति का विकास किया जाना चाहिए। इनके विपरीत, वे विचारक हैं, जो शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य पर बल देते हैं और कहते हैं कि व्यक्ति को समाज के हित के लिए अपना बलिदान करने के लिए तैयार रहना चाहिए। वास्तव में दोनों ने व्यक्ति और समाज को आवश्यकता से अधिक महत्त्व दिया है। इसी कारण व्यक्ति और समाज—दोनो को समय-समय पर बहुत हानि उठानी पड़ी है।

इस हानि को रोकने का उपाय केवल यही है कि वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों में समन्वय किया जाय। वास्तव में, इसकी आवश्यकता भी है; क्योंकि समन्वय करने से ही व्यक्ति और समाज—दोनों का हित होगा। अगर हम ठण्डे दिमाग से सोचें, तो शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों में समन्वय की कोई आवश्यकता ही नहीं है। इन दोनों में, या यों कहिए कि व्यक्ति और समाज में इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि एक को दूसरे से अलग करना असम्भव है। सच तो यह है कि दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं।

2. वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्य : एक-दूसरे के पूरक : Individual & Social Aims : Complementary to Each Other—शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्य एक-दूसरे के पूरक हैं। पर क्यों ? क्योंकि व्यक्ति और समाज—दोनों अपनी प्रगति के लिए एक-दूसरे का सहारा चाहते हैं। न हम समाज-विहीन व्यक्ति की कल्पना कर सकते है, और न व्यक्ति-विहीन समाज की। एक के अभाव में दूसरे का जीवन असम्भव है। व्यक्ति के लिए समाज का महत्त्व बताते हुए रॉस ने लिखा है :—**"वैयक्तिकता का विकास केवल सामाजिक वातावरण में होता है, जहाँ सामान्य रुचियों और सामान्य क्रियाओं से उसका पोषण हो सकता है।"**

"Individuality develops only in social atmosphere where it can feed on common interests and common activities."—Ross.

रॉस के इस कथन मे स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य की वैयक्तिकता और व्यक्तित्व का विकास केवल समाज में ही हो सकता है, उससे अलग रहकर नहीं। जिस प्रकार व्यक्ति के लिए समाज आवश्यक है, उसी प्रकार समाज के लिए व्यक्ति आवश्यक है। व्यक्ति और समाज की सत्ता अलग नहीं है। व्यक्ति से समाज का निर्माण होता है, और समाज व्यक्ति का निर्माण करता है। ये दोनो मिलकर एक बनते है। हमें समाज का जो कुछ ज्ञान है, वह व्यक्तियों के रूप में है। व्यक्तियों के अतिरिक्त, समाज की सत्ता कहाँ हो सकती है ?

परन्तु इसका यह अर्थ भी नही है कि समाज की सत्ता कुछ नही है। व्यक्ति जो कुछ है, समाज के कारण ही है, अपनी सामाजिक विरासत के कारण ही है। यदि सामाजिक विरासत और सामाजिक परम्परा न हों, तो व्यक्ति जगली ही रहेगा। भारतीय अपनी परम्परा के कारण भारतीय है और फ्रांसीसी अपनी परम्परा के कारण फ्रांसीसी है। व्यक्ति और समाज का समन्वय ही वास्तविक सत्य है। दोनों एक-दूसरे के पूरक है। अतः शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्य भी एक-दूसरे के पूरक है।

जैसा कि हम ऊपर लिख चुके है, कुछ लोगों का कहना है कि व्यक्ति और समाज का पारस्परिक विरोध है। टामस हाब्स (Thomes Hobbes) का कथन था कि समाज सदैव व्यक्ति की स्वतन्त्रता को नियंत्रित करने का प्रयास करता है। यही कारण है कि आजकल विधान परिषदों में व्यक्ति की स्वतन्त्रता को रखने के लिए आवाज़ उठाई जाती है। इसके विरुद्ध, जो लोग समाज को महत्त्व देते हैं, उनका कहना है कि व्यक्ति को किसी प्रकार का अधिकार नहीं है।

वास्तव में ये दोनो तर्क एकागी है। इन दोनों का आधार—व्यक्ति और समाज की स्वतन्त्र सत्ता स्वीकार करने का विचार है। बीज और भूमि तो अलग-अलग है, पर व्यक्ति और समाज अलग नही हैं। व्यक्तियों के मिलने से समाज का *निर्माण होता है और सामाजिक परम्परा व्यक्ति का निर्माण करती है।* दोनों का विरोध नही, अपितु समन्वय है। दोनो एक-दूसरे को पूर्ण करने वाली धारणायें है।

इसी प्रकार, शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों में विरोध नही, वरन् समन्वय है। दोनों एक-दूसरे के पूरक है। इसकी पुष्टि करते हुए मेकाइवर ने लिखा है :—**"समाजीकरण और वैयक्तिकरण—एक ही प्रक्रिया के दो पहलू हैं।"**

"Socialization and individualization are two sides of a single process."—**R. M. MacIver.**

3. वैयक्तिक व सामाजिक उद्देश्यों के समन्वय के अनुसार शिक्षा का रूप : Nature of Education according to Synthesis between Individual & Social Aims—हम ऊपर यह स्पष्ट कर चुके हैं शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक

उद्देश्यों में विरोध नहीं, वरन् समन्वय है। अब प्रश्न यह उठता है कि इस समन्वय के अनुसार शिक्षा का रूप कैसा होना चाहिए ? शिक्षा के इस रूप को निश्चित करने के लिए हमें बीच का रास्ता अपनाना चाहिए। हमें ऐसी शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए, जिसमें न तो समाज व्यक्ति को अपना दास बना सके और न व्यक्ति इतना स्वतन्त्र हो जाय कि वह सामाजिक नियमों को ठुकरा कर अपनी मनमानी कर सके।

इस शिक्षा-व्यवस्था में व्यक्ति और समाज की स्वतन्त्रता ऐसी सीमाओं मे रहनी चाहिए, जिससे दोनों का विकास और कल्याण हो सके। शिक्षा का उद्देश्य, जैसा कि रेमान्ट (Raymont) ने लिखा है, दोहरा होना चाहिए :—"व्यक्ति की पूर्णता और समाज का कल्याण।" हुमायूँ कबीर का कथन है :—"यदि व्यक्ति को समाज का रचनात्मक सदस्य बनना है, तो उसे केवल अपना ही विकास नहीं करना चाहिए, वरन् समाज के विकास में भी योग देना चाहिए।"

"If one is to be a creative member of the society, one must *not only sustain one's own growth, but contribute to the growth of* society."—**Humayun Kabir.**

इसी प्रकार रस्क का कथन है :—"आत्म-विकास केवल समाज-सेवा द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है और वास्तविक महत्व का सामाजिक आदर्श केवल उन स्वतन्त्र व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है, जिन्होंने महत्त्वपूर्ण वैयक्तिकता का विकास किया है।"

उपसंहार

हमने ऊपर की पंक्तियों में शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों की चर्चा की है। इससे स्पष्ट हो गया है कि हम इनमे से किसी के भी उग्र रूप को स्वीकार नही कर सकते है। हमे दोनों उद्देश्यों के उदार रूप को अपनाना पड़ेगा, तभी दोनों में समन्वय हो सकेगा और शिक्षा की ऐसी योजना बनाई जा सकेगी, जो मानव और समाज—दोनो के लिए कल्याणकारी सिद्ध हो।

इस योजना में बालकों को अपने व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण विकास करने का अवसर दिया जाय। साथ ही उन्हे भावी नागरिकों के रूप में इस प्रकार प्रशिक्षित *किया जाय कि वे अपने समाज, देश और राष्ट्र का उत्थान कर सकें।* अन्त में, हम रॉस के शब्दो में केवल यही कह सकते हैं :—"वास्तव में, जीवन और शिक्षा के उद्देश्यों के रूप में आत्म-विश्वास और समाज-सेवा में कोई विरोध नहीं है, क्योंकि दोनों एक ही हैं।"

"Indeed there is no conflict between self-realization and social service as aims of life and education, for they are one."

—**Ross.**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Differentiate between the Individual and Social Aims of Education. What are their respective values and limitations ?

शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों के अन्तर को स्पष्ट कीजिए। इनके गुण एवं सीमाएँ क्या हैं ?

2. Is it possible to strike a balance between the Individual and Social Aims of Education ? If so, how ?

क्या शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों में समन्वय स्थापित करना सम्भव है ? यदि हाँ, तो कैसे ?

✓3. "Individual and Social Aims are complementary to each other." Elucidate.

"वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्य एक-दूसरे के पूरक हैं।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।

4. Discuss the need of synthesis between the Individual and Social Aims of Education.

शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों के बीच समन्वय की आवश्यकता को स्पष्ट कीजिए।

✓ 5. "Indeed there is no conflict between the Individual and Social Aims of Education." Comment.

"वस्तुतः शिक्षा के वैयक्तिक और सामाजिक उद्देश्यों के बीच कोई विरोध नहीं है।" व्याख्या कीजिए।

6. "Individuality develops only in social atmosphere where it can feed on common interests and common activities." Do you agree with this statement ? Advance reasons in support of your answer.

"वैयक्तिकता का विकास केवल सामाजिक वातावरण में होता है, जहाँ सामान्य रुचियों और सामान्य क्रियाओं से उसका पोषण हो सकता है।" क्या आप इस कथन से सहमत हैं ? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दीजिए।

5

शिक्षा के सामान्य व महत्त्वपूर्ण उद्देश्य

GENERAL & IMPORTANT AIMS OF EDUCATION

"ऐसा समझा जाता है कि शिक्षा को सन्तुलित मानव का विकास करना चाहिए और युवकों को समाज के लिए लाभप्रद कार्यों को करने तथा सामूहिक जीवन में भाग लेने के लिए तैयार करना चाहिए। पर जब समाज प्रतिदिन बदल रहा हो, तब यह जानना कठिन है कि युवकों को किस प्रकार तैयार किया जाय, और शिक्षा के क्या उद्देश्य हों।"

"Education is supposed to develop an integrated human being and to prepare young people to perform useful functions for society and to take part in collective life. But when the society is changing from day to day; it is difficult to know how to prepare and what to aim at."—**Jawaharlal Nehru.**

विषय-प्रवेश : शिक्षा के उद्देश्यों की आवश्यकता

हर समझदार मनुष्य अपने कार्यों को एक निश्चित योजना के अनुसार करता है। उनको करने से पहले वह उनके उद्देश्यों पर भली प्रकार विचार कर लेता है, वह उन्हें निश्चित भी कर लेता है। ऐसा न करना 'अँधेरे में छलांग मारने के समान' है। कारण यह है कि उसके कार्यों का परिणाम अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी।

यही बात शिक्षा के बारे में भी कही जा सकती है। यदि शिक्षा के उद्देश्य अच्छे और निश्चित है, और यदि शिक्षक उनको जानता है, तो वह अपने छात्रों को उनकी प्राप्ति में सहायता देकर उनके जीवन को सफल बना सकता है। यदि ऐसा नहीं है, तो वह उनको किसी भी दिशा में ले जा सकता है। इससे उनका और उनके समाज—दोनों का भयंकर अहित हो सकता है।

अतः यह अति आवश्यक है कि बालकों को किसी भी प्रकार की शिक्षा देने से पहले उसके उद्देश्यों को निश्चित कर दिया जाय। बी० डी० भाटिया ने लिखा है :—"उद्देश्यों के ज्ञान के अभाव में शिक्षक उस नाविक के समान है, जो अपने लक्ष्य या मंजिल को नहीं जानता है और बालक उस पतवार-विहीन नौका के समान है—जो लहरों के थपेड़े खाकर किसी किनारे पर जा लगेगी।"

"Without the knowledge of aims, the educator is like a sailor who does not know his goal or his destination, and the child is like a ruderless vessel which will be drifted along somewhere ashore."—**B. D. Bhatia.**

शिक्षा के सामान्य उद्देश्य
General Aims of Education

जब हम विभिन्न समाजों के शिक्षा के उद्देश्यों पर दृष्टि डालते हैं, तब हमको उनमें बहुत-कुछ विभिन्नता मिलती है। उनमें एकरूपता का अभाव है। ऐसा होते हुए भी शिक्षा के कुछ ऐसे सामान्य उद्देश्य है, जिनको सामान्य रूप से सभी देश और समाज स्वीकार करते हैं, भले ही उनके सामाजिक और राजनीतिक आधार विभिन्न हों। शिक्षा के ये सामान्य उद्देश्य निम्नलिखित है :—

1. ज्ञान का उद्देश्य : Knowledge Aim
2. शारीरिक विकास का उद्देश्य : Physical Development Aim
3. चरित्र-विकास का उद्देश्य : Character Development Aim
4. सांस्कृतिक विकास का उद्देश्य : Cultural Development Aim
5. आध्यात्मिक विकास का उद्देश्य : Spiritual Development Aim

1. ज्ञान का उद्देश्य
Knowledge Aim

(1) उद्देश्य का अर्थ : Meaning of the Aim – कुछ विद्वानों के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य—ज्ञान का अर्जन करना है। इनका कहना है—'विद्या के लिए विद्या' (Knowledge for the sake of knowledge)। इन विद्वानों मे सुकरात, प्लेटो, अरस्तू, दान्ते, कॉमेनियस, बेकन आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

कॉमेनियस का कथन है :—शिक्षक का कर्त्तव्य है कि वह बालकों को विभिन्न विषयों का अधिक-से-अधिक ज्ञान दे, तभी शिक्षक अपने कर्त्तव्य का पूरी तरह से पालन करता है। कॉमेनियस ने तो यहाँ तक कहा है कि वह शिक्षा व्यर्थ है, जिसके द्वारा बालक ज्ञान का सचय नहीं करता है।

प्राचीन भारत मे ज्ञान के सचय पर इतना बल दिया जाता था कि गुरु लोग शिष्यों को हजारो श्लोक रटा देते थे। आज भी प्राचीन ढंग की पाठशालाओं और

किताबों मे रट कर ज्ञान की प्राप्ति पर बल दिया जाता है। यह वास्तव में ज्ञान के अर्जन का संकुचित अर्थ है। वह ज्ञान बिल्कुल व्यर्थ है, जिसका वास्तविक जीवन में उपयोग न किया जा सके।

(2) उद्देश्य के पक्ष में तर्क : Arguments for the Aim—

1. ज्ञान—मनुष्य की प्रगति का आधार है।
2. ज्ञान के अभाव में मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास नही होता है।
3. ज्ञान—मनुष्य को अपने विचारों और भावनाओं को अनुशासन में रखने और संगठित करने में सहायता देता है।
4. ज्ञान—मनुष्य को अपने व्यवसाय में सफलता देता है और उसे संस्कृति तथा सभ्यता की उन्नति करने में सहायता देता है।
5. ज्ञान—मनुष्य को साधन सम्पन्न बनाता है, उसकी शक्ति और आनन्द के द्वार खोलता है तथा उसे अपने भौतिक और सामाजिक वातावरण से अनुकूलन करने के लिए तैयार करता है।
6. जी० डब्ल्यू० करटिस (G. W. Curtis) के अनुसार :—"ज्ञान ही राज्य का दृढ़ आधार है।"
7. सुकरात (Socrates) के अनुसार :—"जिस व्यक्ति को सच्चा ज्ञान है, वह सद्गुणी के सिवा और कुछ नहीं हो सकता है।"
8. हुमायूँ कबीर के अनुसार :—"शिक्षा का उद्देश्य भौतिक संसार और समाज के विचारों तथा आदर्शों का ज्ञान प्राप्त करना है। इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करना—निजी उन्नति और समाज-सेवा के लिए आवश्यक है।"

   "The aim of education is to secure knowledge of the physical world as well as of the ideas and ideals of society. Possession of such knowledge is a condition of both personal development and service to society"

   —*Humayun Kabir.*

(3) उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aim—

1. केवल ज्ञान प्राप्त करना ही मनुष्य के जीवन का ध्येय नहीं है।
2. ज्ञान मनुष्य के मस्तिष्क का विकास अवश्य करता है, पर उसके व्यक्तित्व के अन्य पहलुओं की उपेक्षा करता है।
3. ज्ञान की प्राप्ति पर बल देने से छात्रों में रटने और निश्चेष्ट अभ्यास (Passive Drill-work) आदि की बुराइयाँ आ जाती हैं।
4. यह उद्देश्य विषय-वस्तु के अध्ययन पर बल देता है, न कि बालक के अध्ययन पर।

5. ज्ञान को साधन तो माना जा सकता है, पर साध्य नही। इसको चरित्र या नागरिकता के उद्देश्य को प्राप्त करते का साधन स्वीकार किया जा सकता है, पर इसको मानव-जीवन का साध्य मान लेना किसी भी तरह कल्याणकारी नही है।
6. एडम्स (Adams) के अनुसार :—"**ज्ञान पर बल देने से विद्यालय, ज्ञान की दुकान और शिक्षक, सूचना-विक्रेता बन जाते हैं।**"
7. ली (Lee) के अनुसार :—"**ज्ञान समझदारी के बिना मूर्खता है, व्यवस्था के बिना व्यर्थ है, दया के बिना दीवानापन है, धर्म के बिना मृत्यु है।**"
8. फ़रार के अनुसार :—"**ज्ञान समझदारी के साथ विवेक है; व्यवस्था के साथ शक्ति है; दया के साथ भलाई है; धर्म के साथ गुण, जीवन और शान्ति है।**"

   "With common sense, knowledge is wisdom; with method, it is power; with charity, it is beneficence; with religion, it is virtue and life and peace."—**Farrar.**

(4) **निष्कर्ष**—हमने ज्ञान के उद्देश्य के गुणों और दोषों पर ऊपर की पंक्तियो में प्रकाश डाला है। इसके आधार पर हम कह सकते है कि ज्ञान की प्राप्ति साध्य नही हो सकती है, वरन् 'साध्य को प्राप्त करने का साधन' हो सकती है। ज्ञान की प्राप्ति मानव-सुख और सामाजिक कल्याण के लिए की जा सकती है, न कि आदर्शवादी बनने के लिए। हमें बालकों को ऐसा ज्ञान देना चाहिए जो उनके लिए लाभप्रद सिद्ध हो, न कि ऐसा जो उन्हें आदर्शवादी बनाये। रूसो ने उचित ही लिखा है :— "**सब प्रकार के ज्ञान में से कुछ झूठा है, कुछ व्यर्थ है और कुछ अभिमान उत्पन्न करता है। इनमें से केवल वही थोड़ा-सा ज्ञान बुद्धिमान मनुष्य के अध्ययन के योग्य है, जो हमारे कल्याण के लिए उपयोगी है।**"

"Of all kinds of knowledge, some are false, some useless, some serve only to foster pride. Only the few that conduce to our well-being are worthy of the study of a wise man."—**Rousseau.**

2. शारीरिक विकास का उद्देश्य
Physical Development Aim

(1) **उद्देश्य का अर्थ : Meaning of the Aim**—सामान्य रूप से प्रायः सभी देशों और कालों में 'शारीरिक विकास' को शिक्षा का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य माना गया है। इस उद्देश्य के समर्थकों का कहना है कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे बालक का शरीर स्वस्थ, सुन्दर और बलवान् बने। शिक्षा का इतिहास हमें बताता है, कि प्राचीन काल में कुछ देशो मे शारीरिक विकास पर बहुत बल दिया जाता था। यूनान के स्पार्टा राज्य में शरीर का विकास, शिक्षा का मुख्य उद्देश्य था। इसीलिए, वहाँ के वीर पुरुषों की कहानियाँ आज भी अति चाव से पढी जाती हैं।

ास को मुख्य स्थान दिया
का कहना था कि बालकों के
। उनकी शारीरिक शक्तियों
) के अनुसार :—"शारी-
है।"
जीवन नहीं है। यह केवल
।"
y a state of langour

he Aim—
लवान बनाते है।
जो उसे अपने जीवन की
है।
रीर में स्वस्थ मस्तिष्क

—"स्वास्थ्य को बनाये
योंकि स्वास्थ्य ही सब

ा ध्यान रखिए। उसकी
है, क्योंकि ऐसा करके
।"
no right to neglect
elf and to others."

(3) उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aim—

1. जीवन का उद्देश्य—केवल बल, शक्ति और पौरुष प्राप्त करना ही नही है।
2. बालक की सभी शक्तियों का विकास किया जाना चाहिए, न कि सिर्फ शरीर की शक्ति का।
3. शारीरिक विकास को शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य नहीं बनाया जा सकता है, क्योंकि इससे शिक्षा एकागी हो जायगी।
4. शारीरिक शक्ति पर आवश्यकता से अधिक बल देने से पाशविक प्रवृत्तियों का विकास होता है, जो मानवीय गुणों का अन्त कर देती है।

5. प्लेटो के अनुसार :—"स्वास्थ्य, सौन्दर्य, शक्ति, धन और वे सभी चीजें जो अच्छी कही जाती हैं, दुष्ट और अन्यायी व्यक्तियों पर समान रूप से बुरा प्रभाव डालती हैं।"

"Health, beauty, vigour, riches, and all other things called good, operate equally as evils to the vicious and unjust."—**Plato.**

(4) निष्कर्ष—शारीरिक विकास के लिए, शिक्षा का उद्देश्य बहुत अच्छा है। पर केवल शारीरिक विकास को ही शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य नहीं बनाया जा सकता है। ऐसा करने से "शक्ति—अधिकार है" की पुरानी कहावत चरितार्थ हो जायगी। समाज और देश पर शक्तिशाली शक्तियों का अधिकार हो जायगा। वे निर्बल व्यक्तियों का जीवन हराम कर देंगे, उनका शोषण करेंगे और उनको सभी प्रकार की यातनायें देंगे। परिणामतः मानव-समाज—जिसने वर्षों के परिश्रम के बाद बर्बरता से निकल कर सभ्यता में प्रवेश किया है, फिर अपनी पुरानी स्थिति में पहुँच जायगा।

आज के सभ्य संसार का आदर्श है—"जीवित रहो और जीवित रहने दो।" जीवित रहने और रहने देने के लिए—केवल मनुष्य के शरीर को विकसित करना ही काफी नहीं है। उसके मस्तिष्क को, और इससे भी अधिक उसके चरित्र को विकसित करना आवश्यक है। सत्य यह है कि शिक्षा के द्वारा शरीर और मस्तिष्क का सन्तुलित विकास किया जाना चाहिए। डियो लेविस ने ठीक ही लिखा है :—"निर्दोष शरीर में निर्दोष मस्तिष्क का निर्माण, सबसे बड़ी सांसारिक समस्या और मानव-जाति की सबसे बड़ी आशा है।"

"The building of a perfect body crowned by a perfect brain, is at once the greatest earthly problem and grandest hope of the race."—**Dio Lewis.**

3. चरित्र-विकास का उद्देश्य
Character Development Aim

(1) **उद्देश्य का अर्थ : Meaning of the Aim**—कुछ शिक्षा-शास्त्रियों का मत है कि शिक्षा का उद्देश्य—चरित्र का विकास और निर्माण करना होना चाहिए। उनके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य—ज्ञान का अर्जन करना और शरीर की शक्ति बढ़ाना नहीं है, वरन् उत्तम चरित्र का निर्माण करना है। उनके विचार से मनुष्यों के सभी कष्टों और कठिनाइयों का कारण—चरित्रहीनता है। इस बात पर बल देते हुए डा० राधाकृष्णन् ने कहा है :—"भारत सहित सारे संसार के कष्टों का कारण यह है कि शिक्षा का सम्बन्ध नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति से न रहकर, केवल मस्तिष्क के विकास में रह गया है।"

कुछ शिक्षाविदों के अनुसार, चरित्र का अर्थ है—आन्तरिक दृढ़ता और व्यक्तित्व की एकता। चरित्रवान् मनुष्य अपने आदर्शों और सिद्धान्तों के अनुसार

कार्य करता है। वह बाहरी दबाव के कारण उन्हें नहीं करता है। पर उसके आदर्श और सिद्धान्त—नैतिक हो सकते है और अनैतिक भी।

अतः केवल चरित्र ही काफी नहीं है। चरित्र को नैतिक होना चाहिए। हैंडरसन ने नैतिक चरित्र के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है :—"इसका अर्थ यह है कि मनुष्यों को उन सिद्धान्तों के अनुसार काम करना सीखना चाहिए, जिनसे उनमें सर्वोत्तम व्यक्तित्व का विकास हो।"

"Character must be moral. By this is meant that men must learn to act upon those principle which will promote development of the finest personalities."—**Henderson.**

इस प्रकार चरित्र-विकास के उद्देश्य का अर्थ है—न केवल उत्तम चरित्र का का वरन् उत्तम नैतिकता का भी विकास करना।

(2) उद्देश्य के पक्ष में तर्क : Arguments for the Aim—

1. चरित्रवान् मनुष्य वही कार्य करता है, जो उसके और समाज के लिए हितकर होता है।
2. चरित्रवान् मनुष्य का आचरण अच्छा होता है, और आचरण ही मनुष्य और पशु में अन्तर बताता है।
3. सुदृढ चरित्र—दृढ़ इच्छा-शक्ति का आधार है, और इच्छा-शक्ति मनुष्य को बड़ी से बड़ी बाधाओं पर विजय प्राप्त करने में सहायता देती है।
4. हरबार्ट (Herbart) ने चरित्र-निर्माण और नैतिकता के लिए शिक्षा पर बहुत अधिक बल दिया है और लिखा है :—"नैतिकता को मानव जाति और फलतः शिक्षा का सामान्य रूप से सबसे श्रेष्ठ उद्देश्य माना गया है।"
5. भारतीय आदर्शवादियों ने शिक्षा के चरित्र-निर्माण के उद्देश्य पर बहुत बल दिया है। एक बार गांधीजी से पूछा गया कि—"जब भारत स्वतन्त्र हो जायगा, तब आपका शिक्षा का क्या उद्देश्य होगा ?"—उनका उत्तर था—"चरित्र-निर्माण।"
6. स्पेंसर के अनुसार :—"मनुष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता और सबसे बड़ा रक्षक—चरित्र है, शिक्षा नहीं।"

   "Not education but character is man's greatest need and man's safeguard."—**Spencer.**

(3) उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aim—

1. चरित्र-निर्माण के उद्देश्यो पर अनावश्यक बल देने से अन्य उद्देश्य अपना महत्त्व खो देते हैं।
2. बालक के चारित्रिक और नैतिक विकास के साथ-साथ, उसका शारीरिक और मानसिक विकास भी आवश्यक है।

3. चरित्र-निर्माण पर आवश्यकता से अधिक बल देने से बालक की मूल-प्रवृत्तियों का दमन होता है, जिससे उसमें विभिन्न प्रकार के मानसिक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।
4. चरित्र-विकास का उद्देश्य—एकपक्षीय है। यदि एक छात्र के नैतिक आचरण को ही एकमात्र महत्त्व दिया जाय, तो उसके अन्य गुणों की ओर ध्यान नहीं दिया जा सकता है।
5. यह निश्चित रूप से नहीं बताया जा सकता है कि चरित्र क्या है। शुद्ध या अशुद्ध, उचित या अनुचित, अच्छे या बुरे—इत्यादि के बारे में नीति-शास्त्र के दृष्टिकोण में अनेक विवादास्पद कठिनाइयाँ हैं।
6. प्रयोजनवादियों ने नैतिकता के लिए शिक्षा के उद्देश्य पर अनेक आपत्तियाँ की है। उनका कहना है कि नैतिकता—निश्चित, पूर्ण या पूर्व-निर्धारित नहीं हो सकती है। नैतिक विचार समय और सामाजिक मूल्यों के अनुसार बदलते रहते हैं। आज के महत्त्वपूर्ण नैतिक विचार 100 वर्ष के बाद महत्त्वहीन हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में नैतिक विचारों की व्याख्या करना सम्भव नहीं है।

(4) निष्कर्ष—हमने शिक्षा के चरित्र-विकास के उद्देश्य के बारे में ऊपर जो कुछ लिखा है, उसके आधार पर हम कह सकते है कि केवल चरित्र-निर्माण और नैतिक विकास ही शिक्षा का उद्देश्य नही हो सकता है। केवल नैतिक गुण ही मनुष्य और समाज के लिए आवश्यक नही है, वरन् बुद्धि, स्वास्थ्य, शक्ति आदि भी आवश्यक है। मनुष्य को केवल बुद्धिमान ही नही होना चाहिए, बल्कि उसको अपनी बुद्धि का प्रयोग अपने स्वयं के स्वार्थों की अपेक्षा समाज के हित के लिए करना चाहिए। अत: चरित्र-निर्माण शिक्षा का केवल एक आदर्श हो सकता है, उसका परम उद्देश्य नही।

4. सांस्कृतिक विकास का उद्देश्य
Cultural Development Aim

(1) संस्कृति का अर्थ : **Meaning of Culture**—शिक्षा के सांस्कृतिक उद्देश्य की बहुत से व्यक्तियों द्वारा प्रशंसा की गई है। पर इस उद्देश्य का अध्ययन करने से पहले यह जान लेना आवश्यक है कि संस्कृति का अर्थ क्या है ? ई० बी० टायलर (E. B. Tylor) ने लिखा है :—"संस्कृति वह जटिल समग्रता है, जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, प्रथा तथा अन्य योग्यताएँ और आदतें सम्मिलित होती हैं, जिनको मनुष्य समाज के सदस्य के रूप में प्राप्त करता है।"

इस परिभाषा से स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृति का अर्थ बहुत व्यापक है। इसका सम्बन्ध मानव-जीवन के दोनों पक्षो—भौतिक और आध्यात्मिक से है। इसका तात्पर्य उस सम्पूर्ण सामाजिक विरासत से है, जो एक पीढ़ी—दूसरी पीढी को हस्तान्तरित करती है।

(2) सांस्कृतिक उद्देश्य का अर्थ : Meaning of Cultural Aim—शिक्षा के सांस्कृतिक उद्देश्य का अर्थ है—संस्कृति का प्रसार। दूसरे शब्दों में, शिक्षा का उद्देश्य है—मनुष्य को सुसंस्कृत और परिष्कृत बनाना। शिक्षा का सांस्कृतिक उद्देश्य—व्यक्ति को सभ्य और शिष्ट बनाना है। वह उच्च विचारों, कला की वस्तुओं और विशाल मानवीय रुचियों को समझने लगता है। वह साधारण व्यक्ति न रहकर एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हो जाता है।

यदि शिक्षा ऐसे लोगों का निर्माण करने में सफल होती है, तो वह अपने कार्य को प्रशंसनीय ढंग से करती है। शिक्षा के इस कार्य पर बल देते हुए ओटावे ने लिखा है :—"शिक्षा का एक कार्य—समाज के सांस्कृतिक मूल्यों और व्यवहार के प्रतिमानों को अपने तरुण और शक्तिशाली सदस्यों को प्रदान करना है।"

"One of the tasks of education is to hand on cutural values and behaviour patterns of society to its young and potential members."– Ottaway.

(3) उद्देश्य के पक्ष में तर्क : Arguments for the Aim—

1. सुसंस्कृत मनुष्य अपनी व्यक्तिगत रुचियों को उच्च आदर्शों के प्रति बलिदान करता है।
2. मनुष्य में जन्म के समय पाशविक प्रवृत्तियाँ होती है। संस्कृति ही उसे पशु में मानव बनाती है।
3. ज्ञान, मानवता की वास्तविक सेवा उस समय करता है, जब वह हर प्रकार की संस्कृति को स्वीकृति देता है।
4. ज्ञान केवल मस्तिष्क को शिक्षित करता है, हृदय को नही। संस्कृति मस्तिष्क और हृदय—दोनो को शिक्षित करती है।
5. सस्कृति में वे सब अनुभव सम्मिलित है, जो मानव ने आदिकाल से लेकर आज तक प्राप्त किये हैं। इनकी सुरक्षा और इनका उपयोग करना शिक्षा का कर्त्तव्य है।
6. प्रकृति में जो कुछ अच्छा है, उसे संस्कृति में अपना लिया जाता है। अत. प्रत्येक व्यक्ति के लिए संस्कृति का ज्ञान आवश्यक है।
7. जिस प्रकार सस्कृति के दो स्वरूप है, उसी प्रकार इस उद्देश्य के भी दो स्वरूप है—'भौतिक' और 'अभौतिक'। भौतिक रूप में, यह व्यक्ति की रुचियों को उत्तम बनाती है, उसे अपने अवकाश का सदुपयोग करने मे सहायता देती है, उसमें कला, संगीत और चित्रकारी के लिए प्रेम उत्पन्न करती है तथा उसे समाज में सम्मान देती है। आध्यात्मिक रूप में, यह व्यक्ति का आन्तरिक विकास करती है।
8. महात्मा गांधी ने इस उद्देश्य को बहुत महत्त्व दिया है और कहा है : — *'संस्कृति ही मानव-जीवन की आधार-शिला और मुख्य वस्तु है। यह*

आपके आचरण और व्यक्तिगत व्यवहार की छोटी-से-छोटी बातों में व्यक्ति होनी चाहिए।"

"*Culture is the foundation, the primary thing. It should* show itself in the smallest detail of your conduct and personal behaviour."—**Mahatma Gandhi.**

(4) **उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aim—**

1. संकीर्ण विचारो वाले मनुष्य के हाथ में संस्कृति शिक्षा का बहुत ही ख़तरनाक उद्देश्य बन जाता है।
2. आज संस्कृति इतनी जटिल हो गई है कि मनुष्य सन्देहो, संकटों और चिन्ताओं का शिकार बन गया है।
3. संस्कृति को आवश्यकता से अधिक महत्त्व देने वाले लोग सही या गलत का निर्णय उन व्यक्तियों के आधार पर करते है, जो पूर्वकाल में थे।
4. संस्कृति में विश्वास करने वाले मनुष्य वर्तमान की ओर ध्यान न देकर अतीत की ओर देते है। इसका परिणाम यह होता है कि समाज की प्रगति रुक जाती है।
5. केवल सांस्कृतिक शिक्षा प्राप्त करके बालक अपनी जीविका के प्रश्न को हल नही कर सकता है। साथ ही वह जीवन के संघर्षों से लोहा भी नहीं ले सकता है।
6. इतिहास हमें बताता है कि सस्कृति ने अनेक बुराइयों को जन्म दिया है। एक संस्कृति के लोगो ने दूसरी संस्कृति के लोगो को तुच्छ समझा है और उन पर मनमाने अत्याचार किये है।
7. भारत में संस्कृति के कुछ विशेष प्रतिमान है; जैसे—बाल-विवाह, बहु-विवाह, जाति-व्यवस्था। ये समाज के लिए इतने हानिकारक हैं कि इनको सास्कृतिक शिक्षा मे स्थान नही दिया जा सकता है।
8. सांस्कृतिक शिक्षा अमनोवैज्ञानिक है, क्योंकि यह बालक की रुचियो, भावनाओं और प्रवृत्तियों का दमन करके उसे केवल सास्कृतिक प्रतिमानो के अनुसार कार्य करने के लिए बाध्य करती है। नन ने उचित ही लिखा है :—"**राष्ट्रीय परम्पराओं और संस्थाओं का स्थायीपन व्यक्ति के जीवन को महत्त्वहीन बना देता है।**"

"National traditions and institutions have a permanence which makes the individual life a trivial thing."

—Nunn

(5) निष्कर्ष – उपर्युक्त तर्कों के आधार पर हम केवल सस्कृति को शिक्षा का उद्देश्य नही मान सकते है। सबसे अच्छी बात यह हो सकती है कि शिक्षा—संस्कृति

ौर ज्ञान—दोनों के लिए हो। इस सम्बन्ध में ह्वाइटहैड ने ठीक ही लिखा है :—
ाक्षा को ऐसे मनुष्यों का निर्माण करना चाहिए, जिनमें संस्कृति और विशेष
ान—दोनों हों। उनका विशेष ज्ञान, बालकों को शिक्षा प्रारम्भ करने का आधार
गा, और संस्कृति उन्हें दर्शन के समान गम्भीर तथा कला के समान उच्च
नायेगी।"

"Education must produce men who possess both culture and xpert knowledge. Their expert knowledge will give the children the ;round to start from, and culture will lead them as deep as philo- ophy and as high as art."—Whitehead.

5. आध्यात्मिक विकास का उद्देश्य
Spiritual Development Aim

(1) उद्देश्य का अर्थ : Meaning of the Aim—आदर्शवादी विचारकों के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य—बालक का आध्यात्मिक विकास करना होना चाहिए, जिससे कि वह संसार के माया-मोह में न फँसकर असीम आनन्द को प्राप्त करने का प्रयत्न करे। इस उद्देश्य पर हमारे देश के सर्वमहान् दार्शनिक डाक्टर राधाकृष्णन् ने अपने विचारों को इन शब्दों में व्यक्त किया है :—"शिक्षा का उद्देश्य—न तो राष्ट्रीय कुशलता है और न अन्तर्राष्ट्रीय एकता वरन् व्यक्ति को यह अनुभव कराना है कि उसमें बुद्धि से भी अधिक महत्त्वपूर्ण कोई चीज है जिसे यदि आप चाहें, तो आत्मा कह सकते हैं।"

"The aim of education is neither national efficiency nor world solidarity, but making the individual feel that he has within himself something deeper than intellect, call it spirit if you like."

—Dr. S. Radhakrishnan.

(2) उद्देश्य के पक्ष में तर्क : Arguments for the Aim—

1. जीवन का वास्तविक उद्देश्य—भौतिक उन्नति नहीं, वरन् आध्यात्मिक उन्नति करना है, जिससे व्यक्ति आवागमन के बन्धन से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त करे।
2. भौतिक प्रगति—द्वेष, ईर्ष्या, संघर्ष और प्रतिस्पर्द्धा को जन्म देती है, जिनके फलस्वरूप शत्रुता और वैमनस्य का विष फैल जाता है। आधुनिक संसार में रूस और अमेरिका के कटु सम्बन्ध इसी प्रगति के परिणाम हैं।
3. शिक्षा पूर्ण तभी हो सकती है, जब मानसिक प्रशिक्षण के साथ आत्मा की भी उन्नति की जाय। डा० राधाकृष्णन् का मत है :—"यदि शिक्षा, हृदय और आत्मा की अवहेलना करती है, तो उसको पूर्ण नहीं माना जा सकता है।"

4. भौतिक प्रगति हमारी इच्छाओं को बलवान् बनाती है। इच्छायें बलवान् होकर हमारे दु:ख का कारण बनती हैं। महात्मा बुद्ध का कथन है :— **"सभी दु:खों का कारण—इच्छा है। इच्छा को दूर कर दो, तो तुम्हारा दुःख दूर हो जायगा।"**
5. हमने ज्ञान के क्षेत्र में आश्चर्यजनक उन्नति की है। फिर भी हम दु:खी और भयभीत हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि हमने आध्यात्मिक विकास की ओर तनिक भी ध्यान न ही दिया है। डा० राधाकृष्णन् का कथन है :—**"यद्यपि हमने अति विशाल ज्ञान का संचय किया है, फिर भी हम संकटपूर्ण स्थिति में हैं, क्योंकि हम इस सृष्टि से उच्चतर नियमों के प्रति उदासीन हैं।"**

   "In spite of the great knowledge we have accumulated, we are still in a perilous state, because we are indifferent to the higher laws of this Universe."

(3) **उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aim—**

1. अध्यात्मवाद से योग, तप, मनन आदि का घनिष्ठ सम्बन्ध है। ये बातें बालकों द्वारा की जानी सम्भव नहीं है।
2. अध्यात्मवाद, इच्छाओ के दमन पर बल देता है। बालकों की इच्छाओं का दमन करना मनोविज्ञान के दृष्टिकोण से अनुचित है, क्योंकि ऐसा करने से बालको का विकास रुक जाता है।
3. आध्यात्मिक शिक्षा इतनी कठिन है कि छोटी आयु के बालको को न तो इसमें रुचि ही आ सकती है, और न वे इसे समझ ही सकते है।
4. आध्यात्मिक विकास की शिक्षा कुछ सीमाओ में ही दी जा सकती है। इस पर अत्यधिक बल देने से बालकों में संसार और जीवन के प्रति घृणा उत्पन्न हो सकती है।
5. आध्यात्मिक शिक्षा की बातो को अल्प-ज्ञान वाले बालक केवल रट सकते है। वे वास्तविक जीवन में उन बातो का व्यावहारिक प्रयोग नहीं कर सकते है। अत: उनके लिए ऐसी शिक्षा व्यर्थ सिद्ध होगी। स्वामी विवेकानन्द का कथन है :—**"महान् सिद्धान्तों को केवल सुनने से काम नहीं चलेगा। आपको उन्हें व्यावहारिक क्षेत्र में लागू करना पड़ेगा. उनका निरन्तर अभ्यास करना पड़ेगा।"**

   "It will not do merely to listen to great principles. You must apply them in the practical field, turn them into constant practice."—**Swami Vivekananda.**

(4) **निष्कर्ष**—मनुष्य की आध्यात्मिक प्रगति आवश्यक है। पर इस प्रगति को शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य नही बनाया जा सकता है। छोटी आयु के बालको के

लिए तो इतना ही काफी है कि उन्हें अच्छे कार्यों, अच्छी आदतों और अच्छे व्यवहार की शिक्षा दी जाय। दूसरे शब्दों में, उन्हें मन, वचन और कर्म में सत्य का अनुसरण करने की शिक्षा दी जाय, क्योंकि सत्य, शक्ति देता है, सत्य ही पवित्रता है और सत्य में ही सब ज्ञान निहित है। आध्यात्मिक शिक्षा का उद्देश्य इससे अधिक नहीं होना चाहिए और न इसकी बालकों को आवश्यकता ही है। इस सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द का कथन है :—"किसी बात को कहना और उसे न करना हमारी आदत हो गई है। इसका कारण क्या है ? शारीरिक दुर्बलता। अतः हमारे युवकों को सबसे पहले शक्तिशाली बनना चाहिए। धर्म का स्थान इसके बाद आयेगा।"

"Speaking and not doing has become a habit with us. What is the cause ? Physical weakness. First of all our young men must be strong. Religion will come afterwards." —Vivekananda.

शिक्षा के महत्त्वपूर्ण उद्देश्य
Important Aims of Education

'शिक्षा' समाज की उन्नति के लिए बहुत आवश्यक है। जो लोग शिक्षा का प्रबन्ध करते हैं, उनके हाथों में भावी पुरुषों और स्त्रियों का निर्माण करने की शक्ति होती है। पर वे ऐसा करने में तभी सफल हो सकते हैं, जब उन्हे शिक्षा के उद्देश्यों का स्पष्ट ज्ञान हो। उद्देश्यों की स्पष्ट जानकारी के अभाव मे शिक्षक अपनी विषय-वस्तु और शिक्षण-विधियों का ठीक प्रकार से प्रयोग नही कर सकता है।

उद्देश्यों की जानकारी के अभाव में शिक्षा एक बन्द गली के समान हो जाती है। यही कारण है कि सभी युगों और सभी देशों में शिक्षा-शास्त्रियों, दार्शनिको, राजनीतिज्ञों, समाज-सुधारकों और कानून-निर्माताओं ने इस समस्या पर गम्भीरता-पूर्वक विचार किया है। वे शिक्षा के उद्देश्यों को निश्चित करने के लिए सदैव प्रयत्न करते रहे हैं। ये उद्देश्य विभिन्न देशों के विभिन्न विचारको द्वारा विभिन्न कालों मे विभिन्न रूप से प्रतिपादित किये गए हैं।

यहाँ हमारा प्रयोजन केवल उन्ही उद्देश्यो पर विचार करना है, जिनको सभी ने महत्त्वपूर्ण माना है, भले ही उनको सब देशों में शिक्षा के उद्देश्यों के रूप में स्थान न मिल पाया हो। ये उद्देश्य निम्नलिखित हैं :—

1. जीविका-उपार्जन का उद्देश्य : Vocational Aim
2. समविकास का उद्देश्य : Harmonius Development Aim
3. पूर्ण जीवन का उद्देश्य : Complete Living Aim
4. नागरिकता का उद्देश्य : Citizenship Aim
5. अवकाश-उपयोग का उद्देश्य : Leisure Utilization Aim
6. अनुकूलन का उद्देश्य : Adjustment Aim

1. जीविका-उपार्जन का उद्देश्य
Vocational Aim

(1) उद्देश्य का अर्थ : **Meaning of the Aim**—मनुष्य की तीन मूल आवश्यकताएँ है—भोजन, वस्तु और मकान। यदि शिक्षा इनको देने में असफल है, तो उसका उद्देश्य पूर्ण नहीं होता है। आधुनिक युग में औद्योगीकरण ने शिक्षा के व्यावसायिक उद्देश्य को सबमें अधिक श्रेष्ठ माना है। यही उद्देश्य व्यक्ति की जीविका की समस्या को हल करता है। अतः यह जीविका का उद्देश्य है और साथ ही उपयोगिता का भी उद्देश्य है। (It is a bread and butter as well as a utilitarian aim.)

आज के भौतिकवादी युग में मनुष्य की आर्थिक आवश्यकताओं का सबसे पहले पूर्ण होना आवश्यक है। अतः शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक को किसी व्यवसाय के लिए तैयार करना है। डा० जाकिर हुसेन ने इस उद्देश्य पर बल देते हुए लिखा है:—

"राज्य का पहला कार्य यह होना चाहिए कि वह नागरिक को किसी लाभप्रद कार्य के लिए, समाज में किसी निश्चित कार्य के लिए शिक्षित करना अपना उद्देश्य बनाये।"

"The first thing that the state will aim at will be to educate the citizen for some useful work, for a definite function in society."
—**Dr. Zakir Husain** : *The Patel Memorial Lectures*, p. 72.

(2) उद्देश्य के पक्ष में तर्क : **Arguments for the Aim**—

1. यह उद्देश्य, व्यक्ति को किसी उपयोगी व्यवसाय के लिए तैयार करके उसे निराश और लक्ष्यहीन होने से बचाता है।
2. जिस देश में विभिन्न व्यवसायों में कुशल व्यक्ति होते है, वह देश शीघ्र ही सम्पन्न और समृद्धशाली बन जाता है।
3. आज के युग में आर्थिक उन्नति को विशेष महत्त्व दिया जाता है। इस उन्नति का आधार—व्यावसायिक कुशलता है।
4. व्यावसायिक शिक्षा छात्रों की मूल-प्रवृत्तियों का प्रयोग करके, उनकी रुचियों को आकर्षित करके और उनकी योग्यता को विकसित करके उन्हें सामाजिक कुशलता के लिए तैयार करती है।
5. ड्यूवी (Dewey) के अनुसार :—**"यदि एक व्यक्ति अपनी जीविका प्राप्त करने में असमर्थ है, तो इस बात की आशंका है कि वह स्वयं चरित्र भ्रष्ट हो जाय और दूसरों को हानि पहुँचाये।"**
6. महात्मा गांधी के अनुसार :—**"सच्ची शिक्षा को बच्चों की बेरोजगारी से एक प्रकार की सुरक्षा देनी चाहिए।"**
   "True education ought to be for children a kind of insurance against unemployment."—**Mahatma Gandhi.**

(3) उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aim—

1. सभी दर्शनों में खाना, पीना और मौज उड़ाना जीवन का उद्देश्य नहीं माना गया है।
2. यदि मनुष्य धन-उपार्जन को अपना एकमात्र उद्देश्य बना लेता है, तो वह धन कमाने के लिए उचित-अनुचित का विचार छोड़ देता है।
3. व्यावसायिक शिक्षा, व्यक्ति को प्राकृतिक वातावरण से दूर करके कृत्रिम वातावरण में रहने के लिए बाध्य करती है, जिससे उसका जीवन नीरस हो जाता है।
4. यह उद्देश्य संकीर्ण और अपूर्ण है, क्योंकि यह मनुष्यों की शारीरिक आवश्यकताओं की तो पूर्ति करता है, पर उनकी मानसिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं की अवहेलना करता है।
5. *बी० डी० भाटिया (B. D. Bhatia) के अनुसार :—"कोरा व्याव-*
सायिक प्रशिक्षण, जीवन के प्रति व्यक्ति के दृष्टिकोण को आवश्यक रूप से संकुचित बना देता है।"
6. प्लेटो के अनुसार :—**"वह शिक्षा अनुदार है, जिसका उद्देश्य बुद्धि और न्याय की ओर ध्यान न देकर केवल धन या शारीरिक बल की प्राप्ति है।"**

   "That education is illiberal which aims at acquisition of wealth or bodily strength apart from intelligence and justice."—**Plato.**

(4) निष्कर्ष—जीविका-उपार्जन के उद्देश्य के पक्ष और विपक्ष में हमने जो तर्क दिये हैं, वे हमें इस निष्कर्ष पर ले जाते है कि शिक्षा के व्यावसायिक उद्देश्य का दृष्टिकोण व्यापक नहीं है। यह व्यक्ति को भौतिक सम्पन्नता तो देता है, पर उसे जीवन के उच्च आदर्शों को प्राप्त करने और पूर्ण जीवन के लिए तैयार नहीं करता है। यदि शिक्षा जीवन के लिए है, तो व्यक्ति को किसी व्यवसाय के लिए तैयार करना, शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य नही हो सकता है। हम स्पेंस रिपोर्ट के शब्दों में केवल यह कह सकते हैं :—**"जीविका-उपार्जन की तैयारी, हमारी शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण अंग है।"**

"Preparation for vocation is an important part of our education."—**Spens Report.**

2. समविकास का उद्देश्य
Harmonious Development Aim

(1) उद्देश्य का अर्थ : **Meaning of the Aim**—इस उद्देश्य का अर्थ है—मनुष्य की शारीरिक, मानसिक, नैतिक, भावात्मक और कलात्मक शक्तियों का सम-

विकास। इस उद्देश्य का आधार मनोवैज्ञानिक है। इसके समर्थकों में पेस्टालॉजी और रूसो के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उनका कहना है कि मनुष्य कुछ मूल-प्रवृत्तियो को लेकर जन्म लेता है। इन मूलप्रवृत्तियों का समविकास किया जाना चाहिए, क्योंकि तभी मनुष्य का व्यक्तित्व अपने संतुलित रूप में प्रकट हो सकता है। यदि इन प्रवृत्तियों या जन्मजात शक्तियों के समविकास पर ध्यान नही दिया जाता है, तो कुछ प्रवृत्तियों का विकास दूसरों की अपेक्षा अधिक हो जाता है। परिणामस्वरूप, व्यक्तित्व का सन्तुलन गड़बड़ हो जाता है। ऐसा होने से मनुष्य का व्यक्तित्व प्रभावशाली नही बन पाता है।

अतः शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए—इन शक्तियों का समविकास करना। दूसरे शब्दों में, मनुष्य की शारीरिक शक्ति या मानसिक शक्ति या सौन्दर्यानुभूति की ही शक्ति का विकास नहीं किया जाना चाहिए, वरन् उसकी सभी जन्मजात शक्तियों का समान रूप से विकास किया जाना चाहिए। शिक्षा के इस उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए **पेस्टालॉजी** ने लिखा है :—**"शिक्षा, मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का स्वाभाविक, सामंजस्यपूर्ण और प्रगतिशील विकास है।"**

"Education is the natural, harmonious and progressive development of man's innate powers."—**Pestalozzi.**

(2) उद्देश्य के पक्ष में तर्क : **Arguments for the Aim—**

1. समविकास का उद्देश्य मनोवैज्ञानिक और हर दृष्टि से पूर्ण एवं व्यापक है।
2. समविकास होने के कारण स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है।
3. इस उद्देश्य पर आधारित पाठ्यक्रम व्यापक होता है, जिससे बालकों को सभी प्रकार का ज्ञान प्राप्त होता है।
4. बालक की सब शक्तियो का समान विकास होने के कारण उसमें विभिन्न परिस्थितियों से सामंजस्य करने की क्षमता आ जाती है।
5. यह उद्देश्य बालक की सभी शक्तियों के समान विकास के पक्ष में है। फलतः बालक के व्यक्तित्व का संतुलन बिगड़ नही पाता है।
6. पेन्टर (Painter) के अनुसार :—**"शिक्षा का उद्देश्य—पूर्ण मानव विकास है।"**
7. **'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' (Secondary Education Commission)** के अनुसार :—**"वह शिक्षा—शिक्षा कहलाने के योग्य नहीं है, जो मनुष्य में अपने साथी मनुष्यों के साथ सुन्दरता, सामंजस्य और कुशलता से रहने के आवश्यक गुणों का विकास नहीं करती है।"**
8. महात्मा गांधी के अनुसार :—"शरीर, मस्तिष्क और आत्मा का

उचित और सामंजस्यपूर्ण मिश्रण पूर्ण मनुष्य के निर्माण के लिए आवश्यक है और शिक्षा की सच्ची व्यवस्था का आधार है।"

"A proper and harmonious combination of all the three—body, mind and spirit—is required for making the whole man and constitutes the true economics of education."—Mahatma Gandhi.

(3) उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aims—

1. समविकास का उद्देश्य व्यावहारिक नहीं है, क्योंकि यह बात सम्भव है कि सभी व्यक्ति स्वस्थ, ज्ञानपूर्ण और नैतिक हों।
2. 'समविकास' शब्द का कोई निश्चित अर्थ नहीं है। इसका अर्थ—समस्त शक्तियों का समान और अधिकतम विकास—दोनों हो सकता है।
3. आधुनिक संसार में विशेषीकरण को महत्त्व दिया जा रहा है। ऐसी स्थिति में समविकास के आदर्श को अपनाना उचित नहीं जान पड़ता है।
4. समविकास के लिए पाठ्यक्रम के विषयों का चुनाव एक जटिल समस्या उपस्थित करता है। बालकों को ऐसे कौन-से विषय पढ़ाये जायँ, जिनसे उनका समविकास हो।
5. समविकास को आँकने के लिए किसी प्रकार का मापदण्ड निश्चित नहीं किया जा सकता है। अतः यह जानना कठिन है कि किस बालक का समविकास हो रहा है।
6. सभी व्यक्तियों की सभी शक्तियों का न तो समान विकास सम्भव है, और न अधिकतम विकास, क्योंकि व्यक्ति अपनी अभिरुचियों और क्षमताओं में एक-दूसरे से भिन्न होते हैं।
7. यदि किसी प्रकार समविकास सम्भव भी हो जाय, तो इससे व्यक्तिगत विभिन्नताएँ दूर हो जायेंगी। ऐसा होना प्रकृति के नियम के विरुद्ध है, क्योंकि प्रकृति ने सब व्यक्तियों को किसी-न-किसी रूप में एक-दूसरे से भिन्न बनाया है।
8. रेमॉन्ट के अनुसार :—"इस योजना की कमज़ोरी यह है कि यह वैयक्तिकता की अवहेलना करती है और सर्वोच्च प्रकार के विकास का विरोध करती है"

   "The weakness of the system is that it ignores individuality and is prejudicial to the best kind of development."—Raymont.

(4) निष्कर्ष—समविकास का उद्देश्य बाहरी रूप से तो बहुत अच्छा जान पड़ता है, पर वास्तव में ऐसा है नहीं। इससे शिक्षा के किसी निश्चित लक्ष्य का ज्ञान

नहीं होता है। सब व्यक्तियों की सब शक्तियों का संतुलित विकास कोरी कल्पना है आदिकाल से आज तक कभी भी सब व्यक्ति एक-से नही हुए हैं। अपनी मूल-प्रवृत्ति के कारण उनमें जन्म से ही कोई-न-कोई अन्तर होता है। उनमें यह अन्तर हो स्वाभाविक है, प्राकृतिक है।

विभिन्न व्यक्तियों की जन्मजात शक्तियों को किसी प्रकार भी समान न बनाया जा सकता है। एक व्यक्ति का पूर्ण या अधिकतम विकास एक ही दिशा किया जा सकता है, सब दिशाओ में नही। आज तक संसार में जितने भी महा व्यक्ति हुए है, उनके उदाहरण हमारे सामने है। न तो कोई महान् वैज्ञानिक महा कलाकार बन सका है और न कोई महान् योद्धा—महान् शिल्पकार। अतः ह कह सकते है कि शिक्षा का यह उद्देश्य अप्राकृतिक, अव्यावहारिक और अमनो वैज्ञानिक है।

3. पूर्ण जीवन का उद्देश्य
Complete Living Aim

(1) उद्देश्य का अर्थ : Meaning of the Aim—पूर्ण जीवन के उद्देश्य क अर्थ यह है कि शिक्षा के द्वारा जीवन के सभी अंगों का विकास किया जाना चाहिए जिससे व्यक्ति का जीवन पूर्णता की ओर बढ़े। दूसरे शब्दो में, हम कह सकते है वि व्यक्ति का विकास एक क्षेत्र में न हो, वरन उसका सर्वाङ्गीण विकास हो। इस प्रका का विकास उसे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र और परिस्थिति के लिए तैयार कर देता है उसे इस बात का पूर्ण ज्ञान हो जाता है कि उसे अपने लिए, अपने साथी-मानवों वे लिए, अपने समाज तथा देश के लिए क्या कार्य करने हैं। इस प्रकार, उसकी शिक्षा उसे जीवन के सभी कार्यों को सुचारु रूप से करने के लिए तैयार कर देती है।

इस उद्देश्य का प्रतिपादक हरबर्ट स्पेन्सर है। उसका कहना है :—"हमें केवल भौतिक अर्थ में नहीं, वरन् विस्तृत रूप में जीवन व्यतीत करना है। सामान्य समस्या है—सब परिस्थितियों और सब क्रियाओं में आचरण पर उचित नियन्त्रण"'

अत: शिक्षा का उद्देश्य बताते हुए स्पेन्सर ने लिखा है :—"शिक्षा को हमें पूर्ण जीवन के नियमों और ढंगों से परिचित कराना चाहिए। शिक्षा का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य—हमें जीवन के लिए इस प्रकार तैयार करना है कि हम उचित प्रकार का व्यवहार कर सकें और शरीर, मस्तिष्क अथवा आत्मा का सदुपयोग कर सकें।"

"Education must make us familiar with the laws and ways of *complete living. Its most important* task is to prepare us for life in such a way that we may able to order the right ruling of conduct, to treat the body, the mind, and the soul properly."

—Spencer.

स्पेन्सर ने इस बात पर बल दिया है कि हमें शिक्षा के द्वारा जीवन का

आनन्द लेना; अच्छे नागरिक बनना, अवकाश का सदुपयोग करना, अपने कार्यों की देखभाल करना, अपने परिवार का पालन करना और विभिन्न आवश्यकताओं के अनुसार जीवन के उन कार्यों का ज्ञान दिया जाना चाहिए, जो आत्म-सुरक्षा और उचित सामाजिक, नैतिक तथा राजनैतिक सम्बन्धों के लिए आवश्यक है।

(2) **पूर्ण जीवन के लिए क्रियाएँ व पाठ्य-विषय : Activities & Subjects of Study for Complete Living**—स्पेन्सर ने जीवन की सब क्रियाओं को पाँच भागों में बाँटा है और उनसे सम्बन्धित पाठ्य-विषय बताये हैं। हम इन्हें आगे की पंक्तियों में स्पष्ट कर रहे हैं :—

क्रियाएँ (Activities)	पाठ्य-विषय (Subjects of Study)
1. आत्म-रक्षा की क्रिया	भाषा, गणित, भूगोल
2. जीवन को परोक्ष रूप में सुरक्षित रखने की क्रिया	शरीर-विज्ञान और पदार्थ-विज्ञान
3. संतान-रक्षा सम्बन्धी क्रिया	गृह-विज्ञान और बाल-मनोविज्ञान
4. समाज-रक्षा सम्बन्धी क्रिया	इतिहास, अर्थशास्त्र और समाज-शास्त्र
5. अवकाश-सम्बन्धी क्रिया	कला, संगीत और साहित्य

(3) **उद्देश्य के पक्ष में तर्क : Arguments for the Aim**—

1. पूर्ण जीवन के विकास में मनुष्य के व्यक्तित्व के सभी पहलुओं का विकास आ जाता है।
2. यह उद्देश्य दूसरे उद्देश्यों के समान एकागी और संकुचित न होकर सर्वाङ्गीण और व्यापक है।
3. इस उद्देश्य में सामाजिकता, सहकारिता, उपयोगिता आदि पर आवश्यकतानुसार बल दिया जाता है, जो समाज की प्रगति के आधार है।
4. शेरवुड एंडरसन (Sherwood Anderson) के अनुसार :—**"व्यक्ति को जीवन की विभिन्न समस्याओं के लिए तैयार करना—शिक्षा का पूर्ण उद्देश्य है या होना चाहिए।"**
5. मनुष्य को जीवन में अनेक और विभिन्न प्रकार के कार्य करने पड़ते हैं। पूर्ण जीवन का उद्देश्य—उसे इन कार्यों के लिए तैयार करना है। स्पेन्सर (Spencer) ने ठीक ही लिखा है :—**"जिस प्रकार एक घोड़ा अपनी आदतों, माँग, शक्ति और गति के अनुसार कभी गाड़ी खींचने के लिए और कभी दौड़ में दौड़ने के लिए प्रयोग किया जाता है, उसी**

प्रकार मानव-शक्तियों को राज्य (समाज) के लिए पूर्ण रूप से उपयोगी बनाया जाना चाहिए।"

6. इस उद्देश्य में जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने पर बल दिया गया है। इस सम्बन्ध में ग्रेव्ज ने लिखा है :—"**हरबर्ट स्पेंसर विज्ञानों और जीवन की एक नई योजना की सिफ़ारिश करता है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति सम्बन्धित मूल्यों के अनुसार सब प्रकार के लाभों का आनन्द लेगा।**"

   "Herbert Spencer recommends the science and a new scheme of life where every one shall enjoy all advantages in order of the relative values."—**Graves.**

(4) उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aim—

1. यह निश्चय करना बहुत कठिन है कि जीवन की पूर्णता क्या है ? विभिन्न व्यक्तियों द्वारा 'जीवन की पूर्णता' का विभिन्न अर्थ लगाया जाता है।
2. यह उद्देश्य पूर्णतः लौकिक है, क्योंकि स्पेंन्सर ने इसमें धर्म, नैतिकता और आध्यात्मिकता को कोई स्थान नहीं दिया है।
3. यदि बालक का नैतिक और आध्यात्मिक विकास नहीं होगा, तो वह स्वार्थी बन जायगा और उसे दूसरों के सुख-दुःख की लेशमात्र भी चिन्ता न होगी।
4. **स्पेंसर** ने अपनी शिक्षा-योजना में कला, संगीत और साहित्य को अवकाश सम्बन्धी क्रियाओ के अन्तर्गत रखा है। इस प्रकार, उसने इन विषयों को गौण स्थान दिया है, जो शिक्षा के आदर्श के प्रतिकूल है।
5. **स्पेंसर** ने बालकों की रुचियों और प्रवृत्तियों की ओर ध्यान न देकर सब के लिए एक ही पाठ्यक्रम निश्चित किया है।
6. **स्पेंसर** ने पाठ्य-विषयों का जो क्रम दिया है—वह अमनोवैज्ञानिक है, क्योंकि बालकों से यह आशा करना व्यर्थ है कि वे प्रारम्भ में ही शरीर-विज्ञान और पदार्थ-विज्ञान—ऐसे कठिन विषयों को समझ लेंगे।
7. भौतिकवादियों का मत है कि **स्पेंसर** ने अपनी शिक्षा-योजना में भौतिक तत्त्वों के अलावा दूसरे तत्त्वों को स्थान देकर वैज्ञानिक प्रवृत्ति के प्रतिकूल कार्य किया है।
8. **स्पेंसर** ने अपना ध्यान केवल वर्तमान पर रखा है और भविष्य की चिन्ता नहीं की है। मानव-जीवन का उद्देश्य—इस संसार में आनन्द करना नहीं है, वरन् दूसरे संसार के लिए तैयारी भी करना है। टाइक ने ठीक ही लिखा है :—"**जीवन का मूल्य इस संसार की आशाओं और आनन्दों से नहीं, वरन् उस तैयारी से आँकिये, जो यह दूसरे संसार के लिए करता है।**"

"Measure not life by the hopes and enjoyments of this world, but the preparation it makes for another."—Tieck.

(5) निष्कर्ष—स्पेंसर द्वारा प्रतिपादित पूर्ण जीवन के उद्देश्य की कड़ी आलोचना की गई है। शिक्षा-शास्त्रियों ने इसे संकीर्ण और सीमित बताया है। इसका मुख्य कारण यह है कि इसमें नैतिकता और आध्यात्मिकता को स्थान नहीं दिया गया है। यह हमने माना कि ये दोनों चीजें व्यक्ति की प्रगति और उसे पशु के स्तर से उठाकर मनुष्य के स्तर पर लाने के लिए आवश्यक हैं, पर हमे यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि इन दोनों का आधार भौतिक प्रगति है। यदि आधार ही नहीं है, तो फिर नैतिकता और आध्यात्मकता के भवन के निर्माण की बात सोचना ही गलत है।

ध्यान देने की एक बात यह है कि स्पेंसर ने अपनी शिक्षा-योजना में इस बात का कहीं विरोध नहीं किया है कि बालक के चारित्रिक या आध्यात्मिक पहलुओं का विकास न किया जाय। इस बात से सभी सहमत हैं कि इन दोनों पहलुओं का विकास आवश्यक है। जब ऐसा है तो इनको स्पेंसर की शिक्षा-योजना में स्थान देकर उसको व्यापक क्योंकि नहीं बना दिया जाता है? ऐसा होने पर उसके द्वारा प्रतिपादित शिक्षा का उद्देश्य सर्वश्रेष्ठ हो जायगा। पर यदि ऐसा नहीं किया गया, तो पूर्ण जीवन के उद्देश्य में एकांगीपन का दोष बना रहेगा।

4. नागरिकता का उद्देश्य
Citizenship Aim

(1) उद्देश्य का अर्थ : Meaning of the Aim—नागरिक के रूप में प्रत्येक व्यक्ति के कुछ अधिकार और कुछ कर्त्तव्य होते हैं। उसमे कुछ विशेष गुणों के होने की आशा की जाती है। यह भी आशा की जाती है कि उसे राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली बातों का ज्ञान हो। उसे अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों से परिचित कराना, उसमें विशेष गुणों का विकास करना और उसे राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली बातों की जानकारी कराना—नागरिकता की शिक्षा के अन्तर्गत आते हैं। आज के जनतन्त्रीय देशों में नागरिक का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। अतः उसे नागरिकता का प्रशिक्षण दिया जाना अति आवश्यक है। कुछ विद्वानों का तो यह मत है कि लोकतन्त्रीय देशों में नागरिकता का प्रशिक्षण देना—शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए।

एच० एच० हॉर्न ने नागरिकता के अर्थ और उसकी शिक्षा के महत्त्व को बताते हुए लिखा है :—**"नागरिकता, राज्य में मनुष्य का स्थान है। क्योंकि राज्य—समाज की स्थायी संस्था है, और क्योंकि मनुष्य को अपने साथियों के साथ सदैव सामंजस्यपूर्ण सम्बन्धों के साथ रहना चाहिए, इसलिए नागरिकता को शिक्षा को आदर्श के क्षेत्र से बाहर नहीं निकाला जा सकता है।"**

"Citizenship is man's place in the State. As the State is one of the permanent institution of society and as man must ever live in organized relations with his fellows, citizenship cannot be omitted from the constituency of the educational ideal."—H. H. Horne.

(2) उद्देश्य के पक्ष में तर्क : Arguments for the Aim—

1. सरकार के सब भेदों में 'लोकतन्त्र' सबसे कठिन है। यह विशेष रूप से जीवन का एक ढंग है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को इस ढंग से परिचित कराया जाना आवश्यक है।
2. लोकतन्त्र में जीवन के कुछ प्रमुख मूल्यों और गुणों को अपनाया जाता है। नागरिक शिक्षा द्वारा ही व्यक्ति में इन मूल्यों और गुणों का विकास किया जा सकता है।
3. नागरिक को शासन करना और आज्ञा मानना—दोनों आने चाहिए। इन दोनों बातों के लिए सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रियाओं का ज्ञान आवश्यक है। उसे यह ज्ञान नागरिक प्रशिक्षण द्वारा ही दिया जा सकता है।
4. लोकतन्त्र के नागरिक में एक विशेष प्रकार के चरित्र का विकास होना चाहिए। यह विकास केवल नागरिकता की शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है।
5. नागरिकता की शिक्षा के द्वारा व्यक्तियों में सामान्य राष्ट्रीय प्रकृति या स्वभाव का विकास किया जा सकता है। इस पर प्रकाश डालते हुए डा० जाकिर हुसेन ने लिखा है :—**"प्रजातन्त्र की सफलता व्यक्तिगत पहलक़दमी पर, न कि ऊपर से दिये जाने वाले निर्देश पर आधारित है। राज्य का एक सबसे कठिन कार्य—प्रत्येक नागरिक में सामान्य राष्ट्रीय स्वभाव का विकास करना है।"**

   "A democracy has to rely on individual initiative and not on direction from above. One of its most difficult tasks is that of educating every citizen to the sense of a common national ethos."—**Zakir Husain.**

(3) उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aim—नागरिकता की शिक्षा के विपक्ष में केवल एक तर्क दिया जाता है। कुछ लोगों का कहना है कि इस शिक्षा पर अत्यधिक बल देने से संकुचित राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न होती है, जिससे देश को बहुत बड़े संकट का सामना करना पड सकता है। अपने कथन की पुष्टि में ये योग नाज़ी जर्मनी का उदाहरण देते है।

हिटलर के समय में वहाँ नागरिकता की शिक्षा पर आवश्यकता से अधिक बल दिया गया था। वहाँ के लोगों में यह भावना भर दी गई थी कि जर्मनी के निवासियों

से श्रेष्ठ और किसी देश के व्यक्ति नहीं है। इसका परिणाम यह हुआ कि जर्मनी के लोग अपने को सर्वोत्तम और सर्वशक्तिमान् मानने लगे। इस भावना ने द्वितीय विश्वयुद्ध को जन्म दिया, जिसने संसार के अनेक देशों में जन और सम्पत्ति की अकथनीय हानि की।

(4) निष्कर्ष—नागरिकता की शिक्षा के बारे में ऊपर बहुत काफ़ी लिखा जा चुका है। प्रजातन्त्रीय देशों में इसके महत्त्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। प्रजातन्त्र की असफलता उसके नागरिकों पर ही निर्भर है। यदि उसके निवासी अच्छे नागरिक हैं, तो वे उसके आदर्शों की प्राप्ति में सहायता दे सकते हैं; फलस्वरूप, प्रजातन्त्र अपने लक्ष्य की ओर बढ़ सकता है।

अतः यह आवश्यक है कि लोकतन्त्रीय देशों में नागरिकता का प्रशिक्षण देना, शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। अपनी पुष्टि में हम प्लेटो के इन शब्दों को उद्धृत कर सकते है :—**"केवल नागरिकता की शिक्षा ही वह शिक्षा है, जो अपना नाम चरितार्थ करती है।"**

"Education fot citizenship is the only education which deserves the name."—**Plato.**

5. अवकाश-उपयोग का उद्देश्य
Leisure Utilization Aim

(i) उद्देश्य का अर्थ : Meaning of the Aim—अवकाश के अर्थ की विस्तृत व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। केवल इतना कह देना काफ़ी है कि व्यक्ति को अपने जीवन-सम्बन्धी कार्यों को करने के बाद जो फ़ुरसत का समय मिलता है, वही अवकाश है। आधुनिक युग में व्यक्ति का जीवन अधिक व्यस्त हो गया है, पर उसे अवकाश भी अधिक मिल गया है।

इसका कारण यह है कि विज्ञान ने मानव-जीवन में अति महान् परिवर्तन कर दिये है। इसने हमको ऐसी मशीनें दी हैं, जिनके प्रयोग से हम कम-से-कम समय में अधिक-से-अधिक कार्य कर सकते है। इस प्रकार, ये हमें पर्याप्त अवकाश देती हैं। अवकाश से होने वाले लाभ को बताते हुए एडिथ ह्वार्टन ने लिखा है :—**"अवकाश सदैव सम्पत्ति को सौन्दर्य में परिवर्तित करने में लगा रहता है। यह सौन्दर्य श्रेष्ठ स्थापत्य कला, श्रेष्ठ चित्रकला और श्रेष्ठ साहित्य द्वारा व्यक्त होता है।"**

"Leisure is incessantly engaged in transmuting wealth into beauty by secreting the surplus energy which flowers in great architecture, great painting, and great literature."—**Edith Wharton.**

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि मानव-जीवन मे अवकाश न केवल आवश्यक वरन् लाभदायक भी है। अतः शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए—व्यक्तियों को अवकाश का सदुपयोग करना सिखाना।

(2) उद्देश्य के पक्ष में तर्क : Arguments for the Aim—

1. अवकाश के लिए शिक्षा बालकों के अदृश्य गुणों को व्यक्त करती है।
2. यह शिक्षा उनको रचनात्मक कार्यों का प्रशिक्षण देती है, जिससे उनकी और समाज की प्रगति होती है।
3. यह शिक्षा उनके जीवन को अधिक पूर्ण, उनकी रुचियो को अधिक श्रेष्ठ और उनके मस्तिष्क को अधिक सक्रिय बनाती है।
4. अवकाश के सदुपयोग के लिए बालकों को संगीत, चित्रकला, नृत्य आदि की शिक्षा देनी चाहिए। इनमें प्रायः सभी बालकों की रुचि होती है।
5. यह शिक्षा उनको अपने खाली समय का उचित प्रकार से प्रयोग करना बताती है। अतः वे व्यर्थ की बातें नही सोचते है। इस कहावत मे सचमुच बहुत सत्य है—"खाली मस्तिष्क शैतान का घर होता है।" ("An idle mind is a devil's workshop.")

(3) उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aim—

1. आज के भौतिक संसार मे लोग इतने व्यस्त है कि वे अवकाश के बारे में सोच ही नहीं पाते है।
2. यह सम्भव है कि अवकाश के लिए शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी बालक उसका सदुपयोग न करें।
3. उनके परिवार और समाज का वातावरण ऐसा हो सकता है कि वे अपने अवकाश का सदुपयोग न कर पाएँ।
4. इस उद्देश्य को मान लेने से उन व्यक्तियों को अवकाश की शिक्षा की कोई आवश्यकता नही है, जो सदैव कार्य मे जुटे रहते हैं।
5. शिक्षा का उद्देश्य—मनुष्य को जीवन के सभी कार्यों के लिए तैयार करना है, न केवल अवकाश का सदुपयोग करने के लिए।

(4) निष्कर्ष—हमने अवकाश के पक्ष और विपक्ष में जो तर्क दिये है, उनसे स्पष्ट हो जाता है कि अवकाश के सदुपयोग के लिए सब व्यक्तियों को शिक्षा नही दी जा सकती है। यह शिक्षा केवल उन्हीं व्यक्तियों को दी जा सकती है जो धनी हैं और जिन्हें काम से अवकाश है। शेष सभी व्यक्ति सुबह से शाम तक कार्य में लगे रहते हैं। उन्हें अवकाश ही नही मिलता है कि वे उसके उचित उपयोग की बातें सोचें।

अवकाश तो पुराने समय की बात थी, जब मानव की आवश्यकतायें कम थी और जब उसे जीवन से कम संघर्ष करना पड़ता था। आज के विश्व में तो किसी भी क्षेत्र में सांस लेने के लिए समय नही प्राप्त होता है। अतः अवकाश और अवकाश की बातें करना केवल सुनहले स्वप्न देखना है। तो फिर अवकाश के लिए शिक्षा की आवश्यकता ही क्या है ? हाँ, यदि पहले व्यक्ति को अवकाश दे दिया जाय, तो उसे अवकाश के सदुपयोग की शिक्षा भी दी जा सकती है।

6. अनुकूलन का उद्देश्य
Adjustment Aim

(1) उद्देश्य का अर्थ : Meaning of the Aim—कुछ विद्वानों का कहना है कि शिक्षा का उद्देश्य—व्यक्ति को उसकी परिस्थितियों या वातावरण से अनुकूलन करना सिखाना है। इन विद्वानों में प्राणिशास्त्रियों का स्थान प्रमुख है। प्राणिशास्त्र के विद्वानों का कथन है कि प्रत्येक प्राणी को अपनी परिस्थितियों या पर्यावरण से निरन्तर संघर्ष करना पड़ता है और जो प्राणी इस संघर्ष में सफल होते हैं, वे ही जीवित बचते हैं।

अतः शिक्षा का उद्देश्य यह होना चाहिए कि वह बालक को इस प्रकार प्रशिक्षित करे, जिससे उसे अपने वातावरण से अनुकूलन करने में कोई कठिनाई न हो। वह वातावरण—प्राकृतिक और सामाजिक—दोनों हो सकता है।

(2) उद्देश्य के पक्ष में तर्क : Arguments for the Aim—

1. प्राकृतिक वातावरण से अनुकूलन करना—प्राकृतिक नियम है। अतः बालकों को इससे परिचित कराया जाना आवश्यक है।
2. संसार के सभी देशों के व्यक्तियों को—चाहे वे कितने ही प्रगतिशील क्यों न हों, प्राकृतिक वातावरण से अनुकूलन करना आवश्यक है। ऐसा न करने से उनकी शक्ति और कार्य-क्षमता में कमी आ जाती है।
3. बालक को जिस सामाजिक वातावरण में रहना है, उसे उसके अनुकूल बनाया जाना आवश्यक है। तभी वह उस समाज का अच्छा सदस्य बन सकता है।
4. सामाजिक वातावरण से अनुकूलन करके ही जीवन में प्रगति और सफलता प्राप्त हो सकती है।
5. सामाजिक वातावरण, शिक्षक है। इस शिक्षक से बालक शिक्षा तभी प्राप्त कर सकता है, जब वह अपने को इसके अनुकूल बना ले।

(3) उद्देश्य के विपक्ष में तर्क : Arguments against the Aim—

1. शिक्षा के इस उद्देश्य के अनुसार—मनुष्य और पशु में कोई अन्तर नहीं रह जाता है। पशुओं के लिए तो जीवित रहने के लिए प्राकृतिक वातावरण से अनुकूलन आवश्यक है, पर बुद्धि-सम्पन्न मनुष्य के लिए ऐसा करना आवश्यक नहीं है।
2. मनुष्य अपने ज्ञान और विवेक की शक्ति के कारण वातावरण का दास न होकर, उसका स्वामी है।
3. मनुष्य के जीवन का उद्देश्य—केवल यही नहीं है कि वह अपने को परिस्थितियों के अनुकूल बनाये।
4. यह उद्देश्य इतना सीमित और संकुचित है कि कोई भी मनुष्य

इसे अपने जीवन का लक्ष्य बनाकर सफलता प्राप्त नहीं कर सकता है।

5. "प्रकृति का नियम केवल योग्यतम को बनाये रखना ही नहीं है, वरन् अयोग्यों को भी शक्तिशाली बनाना है।"

(4) निष्कर्ष—हमने जो कुछ ऊपर लिखा है, उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि *वातावरण से अनुकूलन करना—शिक्षा का सर्वमान्य उद्देश्य नहीं हो सकता है।* मनुष्य निरा पशु नहीं है। उसे ईश्वर ने सोचने-समझने की शक्ति दी है, बुद्धि को प्रयोग करने की क्षमता दी है। उसे ईश्वर से इच्छा-शक्ति और आध्यात्मिक शक्ति के वरदान मिले हैं। फिर वह वातावरण से अनुकूलन करके अपने को पशु के स्तर पर क्यों पहुँचाये ? वह वातावरण का दास न बनकर, उसका स्वामी क्यो न बने ?

अतः शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए—बालक को वातावरण पर अधिकार प्राप्त करने, और उसे अपनी आवश्यकताओं के अनुसार बदलने की क्षमता प्रदान करना। ड्यूवी के इस कथन में पूर्ण सत्य है :—**"वातावरण से पूर्ण अनुकूलन करने का अर्थ है—मृत्यु। आवश्यकता इस बात की है कि वातावरण पर नियन्त्रण रखा जाय।"**

"Complete adaptation to environment means death. The essential point is to control the environment."—**John Dewey.**

सब उद्देश्यों का एक उद्देश्य में समन्वय
Synthesis of Aims into an Inclusive Aim

कुछ शिक्षा-शास्त्री इस बात पर बल देते हैं कि—शिक्षा का एक सर्वव्यापक उद्देश्य (All Comprehensive Aim) होना चाहिए, जिसके अन्दर शिक्षा के सभी उद्देश्य आ जायें। इस दृष्टिकोण से **'पूर्ण जीवन के उद्देश्य'** का अति दृढ़तापूर्वक समर्थन किया गया है।

पूर्ण जीवन का उद्देश्य : Complete Living Aim—इस उद्देश्य के प्रतिपादक **स्पेंसर** का कहना है :—**"शिक्षा को हमें पूर्ण जीवन के नियमों और ढंगों से परिचित कराना चाहिए। शिक्षा का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य—हमें जीवन के लिए इस प्रकार तैयार करना है कि हम उचित प्रकार का व्यवहार कर सकें और शरीर, मस्तिष्क तथा आत्मा का सदुपयोग कर सकें।"**

इस प्रकार, शिक्षा के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए **स्पेंसर** ने लिखा है :—**"शिक्षा को हमें बताना चाहिए कि हम अपने शरीर, मस्तिष्क और आत्मा के साथ कैसा व्यवहार करें; अपने कार्यों का प्रबन्ध किस प्रकार करें, अपने परिवार का किस प्रकार पालन-पोषण करें,** *नागरिक के रूप में किस प्रकार व्यवहार करें,* **और प्रकृति द्वारा दिये जाने वाले सुख के साधनों का किस प्रकार उपयोग करें, अपने और दूसरों के अधिकतम लाभ के लिए सब शक्तियों का प्रयोग किस प्रकार करें।"**

"Education must tell us in what way to treat the body, the mind, the soul; in what way to manage our affairs; in what way to bring up our family; in what way to behave as a citizen; in what way to utilize those sources of happiness which nature supplies; how to use all faculties to the greatest advantage to ourselves and others."—Herbert Spencer.

इस प्रकार, स्पेंसर के मतानुसार शिक्षा का कोई एक उद्देश्य नहीं हो सकता है। शिक्षा के सब उद्देश्यों का, एक उद्देश्य में समावेश हो जाना चाहिए। यह एक उद्देश्य है—"पूर्ण जीवन या जीवन को पूर्ण बनाने का उद्देश्य" (Aim of Complete Living or Making Life Complete)।

आधुनिक युग में जीवन की जटिलता को देखते हुए यह आवश्यक है कि शिक्षा का केवल एक उद्देश्य हो। कारण यह है कि हम ज्ञान, आत्म-विकास, व्यावसायिक या सामाजिक प्रशिक्षण में से किसी को भी एक-दूसरे की सहायता के बिना प्राप्त नहीं कर सकते हैं। वास्तव में, शिक्षा इनमें से किसी की भी अवहेलना नहीं कर सकती है। उसे समय और स्थान की आवश्यकता के अनुसार इनमें सन्तुलन करना पड़ेगा।

आज के युग में हमारी प्रमुख आवश्यकता है—एक साथ मिलकर रहने की इच्छा और उसका ज्ञान, जिससे हम विश्व-समाज में समझदारी से रह सकें, और समाज के हित के लिए व्यक्तियों और राष्ट्रों के गुणों का उपयोग कर सकें। इसका अर्थ निश्चित रूप से यह है कि हमें मानव-सम्बन्धों में निश्चित रूप से प्रशिक्षण दिया जाय। परन्तु यह एक मामूली बात है। मुख्य आवश्यकता—मानसिक प्रगति की नहीं, वरन् विचार परिवर्तन की है, जिससे कि हम जान सकें कि समस्त ज्ञान और योग्यताएँ ईश्वर द्वारा दी गई धरोहर हैं, जिनका प्रयोग हम दूसरों की सेवा करने के लिए और इस प्रकार मानव-जाति के हितों में वृद्धि करने के लिए उदारतापूर्वक करें। इसीलिए, 'पूर्ण जीवन के उद्देश्य' पर बल देते हुए पॉल हेनस ने लिखा है :—

"शिक्षा का उद्देश्य—पूर्ण जीवन के लिए तैयार करना है। पूर्ण जीवन व्यतीत करने का अर्थ है—यथासम्भव उपयोगी और सुखी होना। उपयोगिता का अर्थ है—सेवा; अर्थात् कोई भी कार्य जो मानव-जाति के भौतिक या आध्यात्मिक हितों की वृद्धि करता है।"

"The aim of education is to prepare for complete living. To live completely means to be as useful as possible and to be happy. By usefulness is meant service, *i. e.* any activity which promotes the material or spiritual interests of mankind."

—Paul H. Hanus.

6

आधुनिक लोकतन्त्रीय भारत में शिक्षा के उद्देश्य
AIMS OF EDUCATION IN MODERN DEMOCRATIC INDIA

"खासतौर से हमारे देश की विशेष परिस्थिति में सब के लिए ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है, जो उनको राष्ट्रीयता की भावना से भर दे और उन्हें अपना उचित स्थान ग्रहण करने के योग्य बनाये।"

"Specially in the particular situation of our country the need of educating all to a sense of nationhood and enabling them to fill a place worthily in it is absolutely essential."

—Dr. Zakir Husain.

विषय-प्रवेश

ब्रिटिश शासन-काल में शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्ति अवश्य हुई, पर उस शिक्षा के उद्देश्य राष्ट्रीय संस्कृति पर आधारित नहीं थे। साथ ही उन उद्देश्यों का निर्माण करते समय अंग्रेजों ने भारत की आर्थिक और सामाजिक स्थिति की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। इसलिए, जब भारत ने अपने को 'गणराज्य' में परिवर्तित किया और अपना ध्येय 'समाजवादी ढंग के समाज' की स्थापना बताया, तब शिक्षा के 'लक्ष्य' और 'प्रयोजन' पर विचार-विमर्श होना आवश्यक हो गया।

इस सम्बन्ध में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए हुमायूँ कबीर ने कहा है :—"प्रजातन्त्र—सामाजिक संयोग और सामाजिक प्रगति के लिए पाशविक शक्ति को अनुनय में बदलने का प्रयास करता है। शक्ति के बजाय विवेक को समाज का पथ-प्रदर्शन करने वाला सिद्धान्त बनाने का अर्थ यह है कि शिक्षा—व्यक्तियों को समाज के रचनात्मक सदस्यों के रूप में तैयार करे।"

"Democracy seeks to replace brute force by persuasion as the means of both social cohesion and social advance. The subs

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss briefly the general aims of education. Which of them do you consider important and why ?

शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों का संक्षेप में विवेचन कीजिए। आप उनमें से किन उद्देश्यों को महत्त्वपूर्ण समझते है और क्यों ?

2. "Education should be for culture as well as knowledge." Comment and elucidate.

"शिक्षा संस्कृति और ज्ञान—दोनों के लिए हो।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।

3. Can spiritual development be the aim of education ? If so, why ? Give reasons in support of your answer.

क्या आध्यात्मिक विकास—शिक्षा का उद्देश्य हो सकता है ? यदि हां, तो क्यों ? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दीजिए।

4. Can complete living be the aim of education ? If so, why ? Give reasons in support your answer.

क्या पूर्ण जीवन—शिक्षा का उद्देश्य हो सकता है ? यदि हां, तो क्यों ? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करिये।

5. On what grounds can education for citizenship be defended ?

नागरिकता की शिक्षा को किन आधारों पर न्यायोचित ठहराया जा सकता है ?

6. "Education for leisure will be futile as people have no leisure." Do you vote for or against the statement ? Support your answer with reasons.

"अवकाश के लिए शिक्षा व्यर्थ है, क्योंकि लोगों को अवकाश प्राप्त नहीं है।" आप इस कथन के पक्ष में है या विपक्ष में ? अपने उत्तर की पुष्टि तर्क द्वारा करिये।

8. Should all the aims of education synthesize into one aim ? If so, what should thot aim be and why ?

क्या शिक्षा के सभी उद्देश्यों का एक उद्देश्य में संश्लेषण किया जाना चाहिए ? यदि हां, तो वह उद्देश्य क्या हो और क्यों ?

9. What are the various recognised aims of education ? Which of them do you consider the most important and why ?

शिक्षा के विभिन्न मान्य उद्देश्य क्या है ? उनमें से आप किनको सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण समझते है और क्यों।

6

आधुनिक लोकतन्त्रीय भारत में शिक्षा के उद्देश्य
AIMS OF EDUCATION IN MODERN DEMOCRATIC INDIA

"खासतौर से हमारे देश की विशेष परिस्थिति में सब के लिए ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है, जो उनको राष्ट्रीयता की भावना से भर दे और उन्हें अपना उचित स्थान ग्रहण करने के योग्य बनाये।"

"Specially in the particular situation of our country the need of educating all to a sense of nationhood and enabling them to fill a place worthily in it is absolutely essential."

—Dr. Zakir Husain.

विषय-प्रवेश

ब्रिटिश शासन-काल में शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्ति अवश्य हुई, पर उस शिक्षा के उद्देश्य राष्ट्रीय संस्कृति पर आधारित नहीं थे। साथ ही उन उद्देश्यों का निर्माण करते समय अंग्रेजों ने भारत की आर्थिक और सामाजिक स्थिति की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। इसलिए, जब भारत ने अपने को 'गणराज्य' में परिवर्तित किया और अपना ध्येय 'समाजवादी ढंग के समाज' की स्थापना बताया, तब शिक्षा के 'लक्ष्य' और 'प्रयोजन' पर विचार-विमर्श होना आवश्यक हो गया।

इस सम्बन्ध में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए हुमायूँ कबीर ने कहा है :—"प्रजातन्त्र—सामाजिक संयोग और सामाजिक प्रगति के लिए पाशविक शक्ति को अनुनय में बदलने का प्रयास करता है। शक्ति के बजाय विवेक को समाज का पथ-प्रदर्शन करने वाला सिद्धान्त बनाने का अर्थ यह है कि शिक्षा—व्यक्तियों को समाज के रचनात्मक सदस्यों के रूप में तैयार करे।"

"Democracy seeks to replace brute force by persuasion as the means of both social cohesion and social advance. The subs

titution of reason for authority as the *guiding principle of society* implies that education must prepare individuals to be creative members of the community."—**Humayun Kabir.**

भारत की शैक्षिक आवश्यकताएँ
Educational Needs of India

इस बात को ध्यान में रखते हुए कि भारत एक ऐसा गणराज्य है, जो समाजवादी समाज की स्थापना की ओर धीरे-धीरे बढ़ रहा है, देश की शैक्षिक आवश्यकताओं को निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है :—

(1) शिक्षा द्वारा नागरिकों में ऐसी आदतों, अभिरुचियों और चारित्रिक गुणों का विकास किया जाय जिससे वे अपने उत्तरदायित्वों को भली प्रकार निभा सकें और उन प्रवृत्तियों को रोक सकें—जो राष्ट्रीयता और धर्म-निरपेक्षता के लिए बाधक हैं।

(2) भारत साधन-सम्पन्न है, पर इस समय वह अति निर्धन है। उसकी अधिकांश जनसंख्या दरिद्रता की स्थिति में है। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा द्वारा लोगों की उत्पादन-शक्ति का विकास किया जाए, राष्ट्रीय सम्पत्ति में वृद्धि की जाए और इस प्रकार लोगों के रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाया जाए।

(3) भारत में शैक्षिक सुविधाओं का अत्यधिक अभाव है। लोग जीविका-उपार्जन की समस्या में इतनी बुरी तरह उलझे हुए हैं कि उनके पास सांस्कृतिक कार्यों की ओर ध्यान देने के लिए समय नहीं है। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा-पद्धति में इस प्रकार सुधार किया जाय कि वे सांस्कृतिक पुनरुत्थान में योग दे सकें।

शिक्षा-आयोगों के अनुसार जनतंत्रीय भारत में शिक्षा के उद्देश्य
Aims of Education of Democratic India According to Commissions

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद भारत में कई शिक्षा-आयोगों की नियुक्ति हुई। इन्होंने जनतन्त्रीय भारत के लिए शिक्षा के कुछ उद्देश्य बताये हैं। हम उन पर नीचे प्रकाश डाल रहे हैं :—

1. "विश्वविद्यालय शिक्षा-आयोग' के अनुसार :—"स्वयं प्रजातन्त्र का जीवन सामान्य, व्यावसायिक और जीविकोपार्जन सम्बन्धी शिक्षा के सर्वोच्च स्तर पर निर्भर है। अतः हमारे समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विश्वविद्यालयों का कार्य होना चाहिए—विवेक का विस्तार, नये ज्ञान के लिए अधिक इच्छा, जीवन के अर्थ को जानने के लिए अधिक प्रयास और व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था।"

2 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' के अनुसार :—"शिक्षा-व्यवस्था को आदतों, दृष्टिकोणों और चरित्र के गुणों के विकास में योग देना पड़ेगा; जिससे कि नागरिक

जनतन्त्रीय नागरिकता के दायित्वों का योग्यता से निर्वाह कर सकें और उन ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों का विरोध कर सकें, जो व्यापक और राष्ट्रीय धर्म निरपेक्ष दृष्टिकोण के विकास में बाधक हैं।"

3. 'शिक्षा-आयोग' के अनुसार :—"प्रजातन्त्र में व्यक्ति स्वयं साध्य है और इसलिए शिक्षा का प्रमुख कार्य—उसको अपनी शक्तियों के पूर्ण विकास के लिए अधिक से अधिक अवसर प्रदान करना है।"

आधुनिक लोकतन्त्रीय भारत के शैक्षिक उद्देश्य
Educational Aims of Modern Democratic India

आधुनिक लोकतन्त्रीय भारत की आकांक्षाओं, आवश्यकताओं और मान्यताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा के उद्देश्यों को मोटे तौर पर अधोलिखित दो समूहों में बाँटा जा सकता है :—

(क) व्यक्ति-सम्बन्धी उद्देश्य (Aims Relating to Individual)

(ख) समाज-सम्बन्धी उद्देश्य (Aims Relating to Society)

(क) व्यक्ति-सम्बन्धी उद्देश्य
Educational Aims Relating to the Individual

वर्तमान जनतन्त्रीय भारत में व्यक्ति से सम्बन्ध रखने वाले शिक्षा के उद्देश्य निम्नलिखित हो सकते हैं :—

1. शारीरिक विकास : **Physical Development**—लोकतन्त्रीय भारत में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—छात्रों में स्वास्थ्य को अच्छा बनाना है, क्योंकि स्वस्थ शरीर ही स्वस्थ मस्तिष्क का सूचक है। इसके अतिरिक्त, स्वस्थ व्यक्ति अपने जीवन का आनन्द ले सकता है, अपने व्यवसाय में सफल हो सकता है, दूसरों की सेवा कर सकता है और देश की रक्षा कर सकता है। अतः शिक्षा का उद्देश्य—बालकों के शरीर का विकास करना होना चाहिए।

इस उद्देश्य पर 'विश्वविद्यालय शिक्षा-आयोग' और 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' दोनों ने बल दिया है। देश के लिए व्यक्तियों का शारीरिक स्वास्थ्य कितना आवश्यक है, इस पर प्रकाश डालते हुए जवाहरलाल नेहरू ने लिखा है :—"मेरा विचार है कि जब तक हमारा शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा नहीं होगा, तब तक हम वास्तव में अधिक मानसिक प्रगति नहीं कर सकेंगे।"

"I do not think we can really make much intellectual progress unless we have a good physical background "—**Jawaharlal Nehru.**

2. मानसिक विकास : **Mental Development**—शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—मस्तिष्क का विकास करना माना जाता है। भारतीय शिक्षा में इस उद्देश्य को प्रमुख स्थान दिया जाता है। इसका विशेष कारण यह है कि शताब्दियों की

दासता ने हमारे मस्तिष्क को संकुचित कर दिया है। परिणामतः हम में स्वतन्त्र विचार, तर्क और निर्णय शक्तियाँ नहीं रह गई हैं।

इन शक्तियों के अभाव में न तो हम अपना हित कर सकते हैं और न दूसरों का, देश की बात तो दूर रही। प्रजातन्त्र के सच्चे नागरिकों के रूप में हम में इन शक्तियों का होना आवश्यक है। अतः यह जरूरी है कि शिक्षा हमारे मस्तिष्क को विकसित करके, हमें इन शक्तियों को प्राप्त करने की क्षमता दे। 'विश्वविद्यालय शिक्षा-आयोग' ने **बौद्धिक विकास को शिक्षा का उद्देश्य बताया है।**

3. चारित्रिक विकास : Character Developmeut—यह कहना अनुचित नहीं होगा कि भारतीय चरित्र का स्तर काफ़ी नीचा है। इसका परिणाम यह है कि हम अपने कर्त्तव्यों और दायित्वों को निभाने में सफल नहीं होते हैं। युद्ध के समय देश के विरुद्ध शत्रु को सहायता देना, उच्च राजनीतिक शक्ति प्राप्त करके अपना और दूसरों का आर्थिक लाभ करना, छोटे-छोटे कामों को करने के लिए रिश्वत लेना—ये और ऐसी ही अनेक अन्य बातें हैं जो आये दिन सुनाई पड़ती हैं और प्रायः सभी को मालूम है। ऐसी बातों से मनुष्य को वास्तविक सुख और सन्तोष नहीं मिलता है। इससे भी बड़ा अहित यह है कि इन बातों से देश का उत्थान सम्भव नहीं है।

अतः शिक्षा का उद्देश्य—अच्छे चरित्र का निर्माण करना होना चाहिए। भारत-सरकार इस ओर पूर्णतः उदासीन है। यद्यपि 'विश्वविद्यालय शिक्षा-आयोग', 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' और 'शिक्षा-आयोग'—तीनों ने चरित्र-निर्माण पर बल दिया है, पर अभी तक इस दिशा में कोई महत्त्वपूर्ण कदम नहीं उठाया गया है। अतः यह आवश्यक है कि भारतीय शिक्षा—बालकों के चारित्रिक विकास के उद्देश्य को सर्वप्रथम स्थान दे। डाक्टर जाकिर हुसेन ने ठीक ही लिखा है :—**"हमारे शिक्षा-कार्य का पुनर्संगठन और व्यक्तियों का नैतिक पुनरुत्थान एक-दूसरे से अविच्छिन्न रूप से गुँथे हुए हैं।"**

"The reconstruction of our educational work and the mora regeneration of people are inextricably interlinked."

—**Dr. Zakir Husain** : *The Patel Memorial Lectures*, p. 98.

4. आध्यात्मिक विकास : Spiritual Development—पाश्चात्य सभ्यता की चमक-दमक की चकाचौंध में हम अपने पुराने आदर्शों को भूल चुके हैं। 'धन' हमारा ईश्वर और 'सांसारिक बल की प्राप्ति' हमारे जीवन का लक्ष्य हो गया है। लौकिकता के नशे में चूर—हम यह भूल चुके है कि इससे भी श्रेष्ठ कोई चीज है।

हम आध्यात्मिक विकास की बात को भूल चुके हैं। हम भूल चुके हैं कि हमारे अन्दर आत्मा की दैवी शक्ति है, जो हमें पूर्ण और वास्तविक शक्ति दे सकती है। शिक्षा का उद्देश्य है—हमें इसका ज्ञान प्राप्त करने, इसको विकसित करने, और इसका प्रयोग करने की क्षमता देना। इस बात पर बल देते हुए श्री अरविन्द (Shri

Aurobindo) ने लिखा है :—"शिक्षा का उद्देश्य—विकसित होने वाली आत्मा को सर्वोत्तम प्रकार से विकास करने में सहायता देना और श्रेष्ठ कार्य के लिए पूर्ण बनाना होना चाहिए।"

5. सांस्कृतिक विकास : Cultural Development—हमारी अपनी परम्पराएँ और आदर्श हैं, जिनके आधार पर निर्मित हमारा समाज सैकड़ों-हजारों थपेड़े खाकर भी अभी तक पूर्ववत् बना हुआ है। दूसरे शब्दों में, हमारी अपनी संस्कृति है, जिसने हमको अतीत में संसार का पथ-प्रदर्शक बनाया था। पर आज पाश्चात्य संस्कृति ने हमारे ऊपर ऐसा मुलम्मा चढा दिया है कि हम अपनी संस्कृति को तुच्छ समझने लगे हैं, उससे घृणा करने लगे है। यह हमारे पतन का एक कारण है।

यदि हम एक बार फिर ऊँचा उठना चाहते है और विश्व के राष्ट्रों में सम्मानित स्थान प्राप्त करना चाहते है, तो हमें अपनी संस्कृति के आदर्शों को फिर अपनाना पड़ेगा। हमें इस योग्य बनाना—शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। ओटावे (Ottaway) का कथन है :—"शिक्षा का एक कार्य—समाज के सांस्कृतिक मूल्यों और व्यवहार के प्रतिमानों को अपने तरुण और कार्यशील सदस्यों को प्रदान करना है।"

6. व्यक्तित्व का विकास : Development of Personality—लोकतन्त्रीय शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य—मनुष्य के व्यक्तित्व का चतुर्मुखी विकास करना है। इसके लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा उसकी मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, भावात्मक और व्यावहारिक आवश्यकताओं पर ध्यान दे और उनको पूर्ण करे। शिक्षा को उसकी रचनात्मक शक्तियों का विकास करना चाहिए, जिससे कि वह सांस्कृतिक विरासत के महत्त्व को समझ सके और अच्छी रुचियों का निर्माण कर सके।

इन रुचियों का वह अपने अवकाश में सदुपयोग कर सकता है, और इस प्रकार अपनी सांस्कृतिक विरासत में वृद्धि कर सकता है। प्राचीन काल में हमारी शिक्षा ने छात्रों की भावनाओं, सामाजिक आवेगों, रचनात्मक शक्तियों और कलात्मक रुचियो की ओर ध्यान न देकर—उनके व्यक्तित्व के अनेक क्षेत्रों को अछूता छोड़ दिया। अतः पाठ्यक्रम का संगठन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि उसमे कला, हस्त-कौशल, संगीत, नृत्य और प्रिय रुचियो (Hobbies) को सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त हो।

7. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास : Development of Scientific Attitude—प्रत्येक प्रगतिशील देश के लिए वैज्ञानिकों और प्राविधिक मनुष्यों की आवश्यकता होती है। इस आवश्यकता की पूर्ति करना, शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। जब तक भारतीय शिक्षा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास को अपना उद्देश्य नहीं बनायेगी, तब तक व्यक्ति और देश की प्रगति होना सम्भव नहीं है।

कारण यह है कि तर्क पर आधारित विज्ञान की शिक्षा ही भारतवासियों को अंधविश्वासों, पुराने विचारों और आधारहीन मान्यताओं से मुक्ति दे सकती है, उनकी

कूप मंडूकता और अवैज्ञानिक दृष्टिकोणों का अन्त कर सकती है। 'वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास या विज्ञान की शिक्षा और क्या कर सकती है?' इस पर प्रकाश डालते हुए स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है :—"हमारे लिए पश्चिमी विज्ञान का अध्ययन आवश्यक है। हमें तकनीकी शिक्षा की आवश्यकता है, जिससे हमारे देश के उद्योगों का विकास होगा।"

"What we need is to study Western science; we need technical education that will develop our industries."—**Vivekananda.**

8. **अवकाश का उचित प्रयोग : *Proper Use of Leisure*—**अवकाश का दुरुपयोग जितना भारतवासी करते हैं, उतना सम्भवत: किसी देश के व्यक्ति नहीं करते। यही बात छात्रों के बारे में भी कही जा सकती है। वे अवकाश को इधर-उधर घूमने, गप्प मारने, ताश खेलने, सिनेमा देखने, और ऐसे ही अन्य कार्यों में नष्ट करते हैं। वे यह सोचने का कष्ट नहीं करते हैं कि गया हुआ समय फिर वापस नहीं आता है। अतः शिक्षा को अपना यह उद्देश्य बनाना चाहिए कि वह बालकों को अवकाश के उचित उपयोग का प्रशिक्षण दे। ऐसा करके ही शिक्षा उनको लाभान्वित कर सकेगी।

9. **व्यावसायिक कुशलता की उन्नति : Improvement of Vocational Efficiency**—शिक्षा को छात्रों की व्यावसायिक कुशलता की उन्नति पर ध्यान देना चाहिए। इसमें दो बातें आती हैं :—(1) छात्रों को इस बात का ज्ञान कराया जाना चाहिए कि उनकी और राष्ट्र की उन्नति केवल कार्य द्वारा ही हो सकती है; (2) शिक्षा समाप्त करने के बाद जब वे किसी व्यवसाय को चुनें, तब वे उसे कुशलता से पूर्ण करें। इस प्रकार का दृष्टिकोण विकसित करना ही शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।

इसके साथ-साथ सब प्रकार के छात्रों में व्यावसायिक कुशलता की उन्नति करना भी शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। इसके फलस्वरूप, हमें अपनी औद्योगिक प्रगति की योजनाओं के लिए प्रशिक्षित व्यक्ति मिल सकेंगे। अतीत में हमारी शिक्षा सैद्धान्तिक थी। परिणामतः शिक्षित व्यक्ति देश के साधनों का विकास करके राष्ट्रीय सम्पत्ति में वृद्धि न कर सके। यह उद्देश्य अब बदल दिया जाना चाहिए और उत्पादन के कार्यों पर अधिक बल दिया जाना चाहिए।

10. **जीवन-यापन की कला में दीक्षा : Initiation into the Art of Living**—शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य—छात्रों को समाज में जीवन-यापन की कला में दीक्षित करना है। यह बात स्पष्ट है कि व्यक्ति न तो अकेला रह सकता है और न अकेला रहकर अपना विकास ही कर सकता है। अपने उत्तम विकास और समाज के हित के लिए यह आवश्यक है कि वह दूसरों के साथ रहने और सहयोग के महत्त्व को समझे।

यदि शिक्षा यह प्रशिक्षण नहीं देती है, तो वह 'शिक्षा' कहलाने की अधिकारिणी नहीं है। इस सम्बन्ध में डा० राधाकृष्णन् ने लिखा है :—"हमें युवकों को यथासम्भव सर्वोत्तम प्रकार के सर्वकार्य-कुशल, व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन के लिए प्रशिक्षित करना चाहिए। उन्हें शिष्टाचार और सम्मान के अलिखित नियमों को अपनी इच्छा से मानना सीखना चाहिए।"

"We must train the young to the best possible all round living, individual and social. They must learn to observe spontaneously the unwritten laws of decency and honour."

—Dr. S. Radhakrishnan : *Occasional Speeches & Writings.*

(ख) समाज-सम्बन्धी शैक्षिक उद्देश्य
Educational Aims Relating to the Society

इस समय भारत का आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक वातावरण अनाचार, अविश्वास, असहिष्णुता, भ्रष्टाचार और अनेक अन्य कुप्रवृत्तियों का शिकार है। इतना सब कुछ होते हुए भी हमारा देश समाजवादी समाज की स्थापना करने का निर्णय कर चुका है। यह स्वप्न तभी साकार हो सकता है, जब शिक्षा के द्वारा समाज के रूप में आमूलचूल परिवर्तन कर दिया जाय। इसके लिए शिक्षा को कुछ विशिष्ट उद्देश्य निश्चित करने पड़ेंगे। ये उद्देश्य निम्नलिखित हो सकते हैं :—

1. समाजवादी समाज की स्थापना : Establishment of Socialistic Society—भारत ने घोषित किया है कि उसका अन्तिम लक्ष्य—देश में समाजवादी समाज की स्थापना करना है। ऐसे समाज की विशेषताएँ हैं—असमानता की भावना का अभाव; स्वस्थ और सुखी जीवन व्यतीत करने के समान अवसर; शारीरिक और आर्थिक सुरक्षा आदि। इसका अर्थ है—हमारे समाज का एक नई दिशा में रूप-परिवर्तन। यह परिवर्तन शिक्षा द्वारा ही किया जाता है।

अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा, व्यक्तियों में समाजवाद की भावना को विकसित करके उसे स्थायी रूप प्रदान करे। इस उद्देश्य को पूर्ण करके ही शिक्षा आधुनिक समाज को समाजवादी समाज की ओर ले जा सकती है। इस सम्बन्ध में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने लिखा है :—"मैं समाजवादी राज्य में विश्वास करता हूँ, और मैं चाहता हूँ कि शिक्षा का इस उद्देश्य की ओर विकास किया जाय।"

"I believe in socialistic state and I would wish education to shape itself towards this goal."—Jawaharlal Nehru.

2. सामाजिक बुराइयों का अन्त : Abolition of Social Evils—आज का भारतीय समाज बहुरंगी सामाजिक बुराइयों का घर बना हुआ है। इनमें से प्रमुख हैं—जाति-प्रथा, पर्दा-प्रथा, छुआछूत, बाल-विवाह, विधवा-पुनर्विवाह निषेध।

इन बुराइयों का अन्त किए बिना यह आशा करना व्यर्थ है कि समाज किसी प्रकार की प्रगति कर सकता है।

अतः शिक्षा का उद्देश्य इन सामाजिक कुप्रथाओं का अन्त करना होना चाहिए। इस बात पर बल देते हुए जवाहरलाल नेहरू ने लिखा है :—**"मैं चाहता हूँ कि धर्म या जाति, भाषा या प्रान्त के नाम में जो संकीर्ण संघर्ष आजकल चल रहे हैं, समाप्त हो जायें और वर्गविहीन तथा जातिविहीन समाज का निर्माण हो, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को अपने गुण और योग्यता के अनुसार उन्नति करने का पूरा अवसर मिले।"**

3. सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का समावेश : Inculcation of the Spirit of Social Responsibility—हर व्यक्ति की अनेक आवश्यकताएँ होती हैं, जिनको वह स्वय पूरा नही कर पाता है। उनकी पूर्ति के लिए उसे समाज के दूसरे व्यक्तियों पर निर्भर होना पड़ता है। दूसरे शब्दो में, हम कह सकते हैं कि व्यक्ति के शरीर, मस्तिष्क और आत्मा से सम्बन्ध रखने वाली आवश्यकताओं की पूर्ति समाज के अन्य सदस्यों के द्वारा की जाती है।

अत: यह आवश्यक है कि व्यक्ति सब के साथ मिलकर समाज के जीवन को नैतिक और भौतिक दृष्टिकोण से अधिक अच्छा बनाने का उत्तरदायित्व ले। यह तभी सम्भव हो सकता है, जब व्यक्ति में इस प्रकार की भावना का समावेश करना, शिक्षा अपना उद्देश्य बनावे। इस भावना का समावेश स्कूलों को सामुदायिक जीवन की इकाइयाँ बनाकर किया जा सकता है। डा० जाकिर हुसेन का कथन है :—**"सामुदायिक उत्तरदायित्व की शिक्षा देने के लिए स्वयं शिक्षा-संस्थाओं को सामुदायिक जीवन की इकाइयों के रूप में संगठित किया जाना चाहिए।"**

"In order to educate for social responsibility, the institutions should themselves be organised as units of community living."—**Dr. Zakir Husain.**

4. नि:स्वार्थ कार्य को भावना का समावेश : Inculcation of the Spirit of Selfless Work—आज के भौतिकवादी युग में स्वार्थ की भावना बहुत प्रबल हो गई है। हमारे मिलने-जुलने में, हमारे हर कार्य में, हमारी हर बात में कोई-न-कोई स्वार्थ अवश्य होता है। हम स्वार्थ की तराजू मे अपने को और दूसरों को तोलते हैं। यदि किसी व्यक्ति से हमारे स्वार्थ की सिद्धि होती है, तो हम उसे अपना सब कुछ बना लेते हैं, उसके लिए सब कुछ कर सकते है। पर जब उससे हमारा स्वार्थ पूर्ण हो जाता है और भविष्य मे हमें उससे कोई आशा नही रहती है, तो हम उसे पहिचानना भी बन्द कर देते हैं।

इसी स्वार्थ के वशीभूत होकर कितने ही भारतीयों ने चीन और पाकिस्तान से युद्ध के समय अपने देश का ध्यान न रखकर उनकी गुप्त रूप से सहायता की। ऐसे भारतीय देश के लिए कलंक हैं, अभिशाप है। सारांश में, (छोटी और बड़ी—सभी

बातों में हम पहले अपने स्वार्थ की ओर देखते है। हमारी यह मनोवृत्ति हमारे समाज, देश और राष्ट्र के लिए घातक विष है। इस मनोवृत्ति को बदलना, शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। इस समय देश को स्वार्थी और धन-लोलुप व्यक्तियों की नहीं, वरन् निःस्वार्थ भाव से कार्य करने वालों की आवश्यकता है। डा० राधाकृष्णन् ने ठीक ही लिखा है :—"भारतमाता आपसे आशा करती है कि आपका जीवन शुद्ध, श्रेष्ठ और निःस्वार्थ कार्य के लिए अर्पित हो।"

5. जन-शिक्षा की व्यवस्था : **Provision for Education of the Masses**— 'शिक्षा' जनतन्त्र का आधार है। शिक्षित व्यक्ति ही अपने कर्त्तव्यों और अधिकारों को समझ सकता है, उचित प्रकार के प्रतिनिधियों को चुनकर व्यवस्थापिकाओं में भेज सकता है, समाज की समस्याओं का समाधान कर सकता है और देश की प्रगति में योग दे सकता है। आज भारत को स्वतन्त्र हुए 27 वर्ष हो चुके है, पर जनता को शिक्षित करने की व्यवस्था नही की जा सकी है। इसका सबूत जैसा कि हमें हाल की जन-गणना की रिपोर्ट से मालूम होता है, यह है कि आज भी हमारे देश में 70·55 प्रतिशत व्यक्ति निरक्षर है।

क्या जिस देश में व्यक्ति इतनी विशाल संख्या में बेपढ़े-लिखे हैं, उसका भविष्य उज्ज्वल है? क्या उसमें जनतन्त्र सफलतापूर्वक कार्य कर सकता है? क्या उसमें समाजवादी समाज की स्थापना हो सकती है? हमें इन प्रश्नों का उत्तर केवल 'न' में मिलता है। अतः शिक्षा का परम उद्देश्य यह है कि घर-घर और जन-जन में ज्ञान का प्रकाश फैलाये। स्वामी विवेकानन्द ने ठीक ही लिखा है :—"मेरे विचार से जनता की अवहेलना महान् राष्ट्रीय पाप है। कोई भी राजनीति उस समय तक सफल नहीं होगी, जब तक कि भारत की जनता एक बार फिर अच्छी प्रकार से शिक्षित न हो जायगी।"

6. नेतृत्व के गुणों का विकास : **Development of the Qualities of Leadership**—लोकतन्त्र का अर्थ है—"सब से बुद्धिमान निर्वाचित नागरिकों के नेतृत्व में सबकी प्रगति।" अत. शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य—व्यक्तियों में नेतृत्व के गुणों का विकास करना है। क्योंकि आज के युवक भावी जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में नेतृत्व करेंगे, इसलिए शिक्षा का विशेष उद्देश्य उनको सामाजिक, राजनीतिक, औद्योगिक या सांस्कृतिक क्षेत्रों मे नेतृत्व के लिए प्रशिक्षित करना होना चाहिए। "माध्यमिक शिक्षा-आयोग" ने लिखा है :—"जनतन्त्रीय भारत में शिक्षा का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य—व्यक्तियों में नेतृत्व के गुणों का विकास करना है।"

"An important aim of education in democratic India is to develop the qualities of leadership in the individuals."

—*Secondary Education Commission.*

7. लोकतन्त्रीय नागरिकता का विकास : **Development of the Democratic Citizenship**—लोकतन्त्र में नागरिकता बहुत कठिन दायित्व है। अतः प्रत्येक व्यक्ति

को उसके लिए प्रशिक्षित किया जाना आवश्यक है। नागरिकता में बहुत-से मानसिक, सामाजिक और नैतिक गुणों की आवश्यकता होती है। ये गुण अपने आप विकसित नहीं होते हैं। इनका विकास तभी होता है, जब व्यक्ति सब प्रकार के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रश्नों का स्वतन्त्रतापूर्वक निर्णय करे, और अपने कार्य की विधि को निश्चित करे। इन बातों के लिए शिक्षा द्वारा प्रशिक्षण दिया जाना आवश्यक है।

इस सम्बन्ध में सबसे पहली आवश्यकता यह है कि नागरिक में स्पष्ट विचार करने की शक्ति हो। इसका अर्थ यह है कि उसमें मानसिक शुद्धता हो, जिससे वह सत्य और असत्य में अन्तर कर सके, धर्मान्धता और पक्षपातपूर्ण बातों को अस्वीकार कर सके, अपने निष्कर्षों को ठोस प्रमाणों पर आधारित करने के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रयोग कर सके, एवं प्राचीन और निरर्थक रीति-रिवाजों, परम्पराओं और विश्वासों को त्याग कर उदार मस्तिष्क से लाभप्रद विचारों को ग्रहण कर सके। नागरिक में इस प्रकार के मानसिक गुणों का विकास करना—शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है।

विचार की स्पष्टता से भाषण और लेखन की स्पष्टता का घनिष्ठ सम्बन्ध है। लोकतन्त्र की सफलता के लिए ये तीनों बातें ही आवश्यक है। कारण यह है कि स्वतन्त्र वाद-विवाद और शान्तिपूर्ण विचार-विनिमय—प्रजातन्त्र के आधार हैं। अतः दूसरो को प्रभावित करने और स्वस्थ जनमत का निर्माण करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रजातन्त्र का नागरिक, भाषण और लेखन—दोनों में अपने विचारों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करे।

8. भावात्मक एकता की प्राप्ति : Realization of Emotional Integration—जनतन्त्रीय शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य—भावात्मक एकता की प्राप्ति है। **"भावात्मक एकता का अर्थ है—राष्ट्र के विभिन्न भागों के व्यक्तियों को भावात्मक रूप से एक रखना।"**

"Emotional integration means bringing together the bits and parts of the nation into a whole emotionally."

'भावात्मक एकता' उन सब मूल्यों की भावात्मक चेतना है, जिन्हे हम राष्ट्र के रूप में सामान्य मानते है। यह उन मूल्यों के प्रति भावनाओं का विकास है। यह उस परिवर्तन की ओर संकेत करती है, जो व्यक्तियो के रूप में हम अपने अन्दर होने का अनुभव करते हैं।

अपने पूर्ण रूप में भावात्मक एकता समान रूप से सोचने, समझने और कार्य करने, समान जीवन के ढंग को स्वीकार करने, विभिन्न उद्दीपकों के प्रति समान रुचि या अरुचि से प्रतिक्रिया करने, विभिन्न धर्मो में समान आधार खोजने, सामान्य सार्वजनिक परम्पराओं को अपनाने और एकता के चिह्न के रूप में समान भाषा को स्वीकार करने की प्रशिक्षित आदत है।

आज के भारत में आन्तरिक संघर्ष को समाप्त करने के लिए भावात्मक एकता की अत्यधिक आवश्यकता है। इस दिशा में शिक्षा अति महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती है। शिक्षा के द्वारा ही समाज भावी पीढ़ियों को उन कुशलताओं, अभिरुचियों और दृष्टिकोणों को हस्तान्तरित करता है जिससे समाज की रक्षा होती है। ड्यूवी का कथन है :—"जो कार्य शरीर के लिए भोजन और प्रजनन करते हैं, वह कार्य सामाजिक जीवन के लिए शिक्षा करती है।"

"What nutrition and reproduction are to physiological life, education is to social life."— **John Dewey.**

'समाज' शिक्षा और शिक्षालयों की व्यवस्था करता है। इनके द्वारा वह अपने सदस्यों में उन कुशलताओं, विश्वासों, अभिरुचियों आदि का प्रसार करता है, जो उनके जीवन की रक्षा के लिए आवश्यक हैं। इस प्रकार, शिक्षा—समाज की सुरक्षा के लिए अनिवार्य है। भारतीय समाज के अपने रीति-रिवाज और परम्परायें हैं। इन्हीं ने उसकी संस्कृति का निर्माण किया है और उसे अब तक बनाये रखा है। इनके लिए शिक्षा द्वारा ही आदर की भावना उत्पन्न की जा सकती है, जिसके फलस्वरूप भावात्मक एकता का कार्य बड़ी सरलता से पूर्ण किया जा सकता है।

अतः शिक्षा के सभी स्तरों पर भारतीय समाज की परम्पराओं और संस्कृति का ज्ञान दिया जाना चाहिए। सभी हमारे छात्रों में समान रूप से विचार करने की आदत का निर्माण होगा और वे शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकेंगे।

9. अन्तर-सांस्कृतिक भावना का विकास : Development of Inter-Cultural Understanding—भारत में अति प्राचीन काल से विभिन्न सांस्कृतिक धारायें बहती रही हैं। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति विश्व के अन्य देशों की संस्कृतियों के समान नहीं है। ऐसी परिस्थिति में भारत के विभिन्न भागों और विश्व की संस्कृतियों को समझना और उनका आदर करना सरल कार्य नहीं है। अतः यह आवश्यक है कि हमारी लोकतन्त्रीय शिक्षा इस ओर विशेष ध्यान दे। इसके लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं :

1. उच्च शिक्षा की संस्थायें ऐसे पाठ्यक्रम बनायें, जिनके द्वारा मनुष्यों और स्त्रियों को इस देश के विभिन्न भागों और विश्व की विभिन्न संस्कृतियों की शिक्षा दी जाय।
2. भारतीय और विश्व-इतिहास का विशेष रूप से अध्ययन किया जाय।
3. भारतीय विश्वविद्यालयों द्वारा सांस्कृतिक गोष्ठियों का आयोजन किया जाय।
4. विभिन्न भारतीय राज्यों और देशों के विश्वविद्यालयों के शिक्षकों में परस्पर ज्ञान का आदान-प्रदान किया जाय।
5. सामाजिक विज्ञानों में 'भ्रमणकारी अध्यापक-संस्था' (Institution of Roving Professorship) की स्थापना की जाय।

6. इसके प्राध्यापक भारतीय राज्यों और *अन्य देशों के विश्वविद्यालयों में* समय-समय पर जाकर अपने भाषणों द्वारा वहाँ के व्यक्तियो को भारतीय संस्कृति का ज्ञान दें।
7. सांस्कृतिक मण्डलो, *गायकों, नृत्यकारों, कलाकारों और लेखकों का* आदान-प्रदान किया जाय।

10. अन्तर्राष्ट्रीय ज्ञान की वृद्धि : Promotion of International Understanding—जवाहरलाल नेहरू का कथन है :—"प्राचीन संसार बदल गया है और प्राचीन बाधाएँ समाप्त होती जा रही हैं; जीवन अधिक अन्तर्राष्ट्रीय होता जा रहा है। हमें आने वाली अन्तर्राष्ट्रीयता में अपना पार्ट अदा करना है। इस कार्य के लिए संसार से सम्पर्क आवश्यक है।"

जिस सम्पर्क की ओर नेहरू ने संकेत किया है—वह आवश्यक ही नही, वरन् अनिवार्य है। हमें प्रगतिशील देशों की सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक और व्यापारिक पद्धतियों का अध्ययन इसलिए करना है कि हम उनमें से लाभप्रद को अपना सकें। हमें समान कार्यों के लिए ज्ञान, मित्रता और सहयोग की खोज करनी है। हम आधुनिक ससार में, जिसे विज्ञान ने एक इकाई बना दिया है, इन बातों से दूर नहीं रह सकते है।

आज का संसार विश्वबन्धुत्व की ओर बढ़ रहा है। अतः संसार से पृथक् रहकर हम समय के साथ अपने कदम नही मिला सकते है। हमें दूसरे देशों से सम्बन्ध स्थापित करना पड़ेगा। हमें उनकी संस्थाओं और पद्धतियों को समझना पड़ेगा, उन्हे अपनी संस्थाओं और पद्धतियों के बारे में बताना पड़ेगा। इसके लिए हमें शिक्षा का सहारा लेना होगा। दूसरे शब्दों में, *शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य—अन्तर्राष्ट्रीय* ज्ञान की वृद्धि करना है।

उपसंहार

अन्त में, हम हुमायूँ कबीर के शब्दों में कह सकते है :—"*भारत में शिक्षा* **के द्वारा लोकतन्त्रीय चेतना, वैज्ञानिक खोज और दार्शनिक सहिष्णुता का निर्माण किया जाना चाहिए। केवल तभी हम उन परम्पराओं के उचित उत्तराधिकारी होंगे,** *जिनका निर्माण इस देश में अतीत में हुआ है। केवल तभी, हम उस आधुनिक विरा-* **सत में अपना भाग पाने के अधिकारी होंगे, जो विश्व के समस्त राष्ट्रों की विरासतो को एक करने का प्रयत्न करती है।"**

"Education in India must create the spirit of democracy, scientific enquiry and philosophic toleration Thus, alone can we be the rightful inheritors of *the glorious traditions* which have been left in this country in the past. Thus, alone can we claim to take our share in the modern heritage which seeks to combine the contributions of peoples throughout the world."—**Humayun Kabir.**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What, in your opinion, should be the educational aims of democratic India ?

आपके मतानुसार लोकतन्त्रीय भारत में शिक्षा के क्या उद्देश्य होने चाहिए ?

2. Taking into consideration the present social conditions in India, what aims of education will you formulate for the country ?

भारत की वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर, आप शिक्षा के किन उद्देश्यों का निर्माण करेंगे ?

3. State critically the aims of education in modern India.

आधुनिक भारत में शिक्षा के उद्देश्यों की विवेचनात्मक व्याख्या कीजिए।

4. Why is education for citizenship necessary in democracy ? What qualities should this education develop in a citizen, and why ?

लोकतन्त्र में नागरिकता की शिक्षा क्यों आवश्यक है ? इस शिक्षा को नागरिक में किन गुणों का, और क्यों विकास करना चाहिए ?

5. What are the aims of education in a democracy ? Is the present-day education system in the country fulfilling those aims ?

प्रजातन्त्र में शिक्षा के क्या उद्देश्य होते हैं ? क्या भारत की वर्तमान शिक्षा-प्रणाली उन उद्देश्यों की पूर्ति कर रही है ?

खण्ड दो

शिक्षा के साधन
AGENCIES OF EDUCATION

"हमें अपने परिवारों या घरों तथा विद्यालयों को बच्चों के हित को ध्यान में रखकर संगठित करना चाहिए। विशेषतः हमें इस तथ्य पर ध्यान देना चाहिए कि अभिभावकों और शिक्षकों का आपसी तनाव बालक के विकास के लिए हानिप्रद होता है। अतः हम इनके सामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य करने पर ही इच्छित परिणामों की प्राप्ति कर सकते हैं।"

—George Tomilson.

- शिक्षा के साधन
  Agencies of Education
- विद्यालय : सक्रिय व औपचारिक साधन
  School : Active & Formal Agency
- घर या परिवार : सक्रिय व अनौपचारिक साधन
  Home or Family : Active & Informal Agency
- चर्च या धर्म : सक्रिय व अनौपचारिक साधन
  Church or Religion : Active & Informal Agency
- समुदाय : सक्रिय व अनौपचारिक साधन
  Community : Active & Informal Agency
- राज्य : सक्रिय व अनौपचारिक साधन
  State : Active & Informal Agency

7

शिक्षा के साधन
AGENCIES OF EDUCATION

"व्यापक अर्थ में सम्पूर्ण वातावरण व्यक्ति की शिक्षा का साधन है। पर इस वातावरण में कुछ तत्त्व अधिक महत्त्वपूर्ण हैं; जैसे—घर, विद्यालय, चर्च, प्रेस, व्यवसाय, सार्वजनिक जीवन, मनोरंजन और प्रिय कार्य।"

"The whole of the environment is the instrument of man's education in the widest sense. But in that environment certain factors are more particularly concerned; the home, the school, the church, the press, the vocation, public life, amusement and hobbies."
—Sir Godfrey Thomson.

शिक्षा के साधनों का अर्थ
Meaning of Agencies of Education

'साधन' अंग्रेजी शब्द 'Agency' का हिन्दी रूपान्तर है। 'Agency' का अर्थ है—'Agent' का कार्य। 'Agent' से हमारा अभिप्राय उस व्यक्ति या वस्तु से होता है, जो कोई कार्य करता है या प्रभाव डालता है। अतः शिक्षा के साधन—वे तत्त्व, कारण, स्थान या संस्थायें हैं, जो बालक पर शैक्षिक प्रभाव डालते हैं।

शिक्षा के साधनों के अर्थ को स्पष्ट करते हुए, बी० डी० भाटिया ने लिखा है:—"समाज ने शिक्षा के कार्यों को करने के लिए अनेक विशिष्ट संस्थाओं का विकास किया है। इन्हीं संस्थाओं को शिक्षा के साधन कहा जाता है।"

"Society has developed a number of specialized institutions to carry out the functions of education. These institutions are known as the 'agencies of education'."—**B. D. Bhatia.**

शिक्षा के साधनों का वर्गीकरण
Classification of the Agencies of Education

शिक्षा के सब साधनों को साधारणतः निम्नलिखित दो भागों में बाँटा जाता है :—

1. औपचारिक और अनौपचारिक (Formal & Informal)
2. सक्रिय और निष्क्रिय (Active & Passive)

ड्यूवी ने शिक्षा के औपचारिक और अनौपचारिक साधनों को "शिक्षा की साभिप्राय और आकस्मिक विधियाँ" (Intentional & Incidental Modes of Education) बताया है।

हैण्डरसन ने इन दोनों साधनों के अन्तर को इस प्रकार स्पष्ट किया है :— "जब बालक व्यक्तियों के कार्यों को देखता है, उनका अनुकरण करता है और उनमें भाग लेता है तब वह अनौपचारिक रूप से शिक्षित होता है। जब उसको सचेत करके और जान-बूझकर पढ़ाया जाता है, तब वह औपचारिक रूप से शिक्षा प्राप्त करता है।"

"As the child watches, imitates, participates, in the activities of living, he is being informally educated. When he is being consciously and intentionally taught, that is formal education."

—**Henderson.**

1. औपचारिक साधन : Formal Agencies

(1) अर्थ : **Meaning**—शिक्षा के औपचारिक साधन एक निश्चित योजना के अनुसार होते हैं। इनका प्रयोग बालक के आचरण को रूपान्तरित करने के लिए किया जाता है। इनके निश्चित नियम होते है और इनकी देखभाल प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा की जाती है। इनके अन्तर्गत स्कूल, पुस्तकालय, अजायबघर, चित्र-भवन, पुस्तकें आदि आती है।

(2) गुण : **Merits**—"औपचारिक शिक्षा के लाभों पर प्रकाश डालते हुए ड्यूवी (Dewey) ने लिखा है :—"औपचारिक शिक्षा के बिना जटिल समाज के साधनों और उपलब्धियों को हस्तान्तरित करना सम्भव नहीं है। यह एक ऐसे अनुभव को प्राप्ति का द्वार खोलता है, जिसको बालक दूसरों के साथ रहकर अनौपचारिक शिक्षा के द्वारा प्राप्त नहीं कर सकते हैं।"

7

शिक्षा के साधन

AGENCIES OF EDUCATION

"व्यापक अर्थ में सम्पूर्ण वातावरण व्यक्ति की शिक्षा का साधन है। पर इस वातावरण में कुछ तत्त्व अधिक महत्त्वपूर्ण हैं; जैसे—घर, विद्यालय, चर्च, प्रेस, व्यवसाय, सार्वजनिक जीवन, मनोरंजन और प्रिय कार्य।"

"The whole of the environment is the instrument of man's education in the widest sense. But in that environment certain factors are more particularly concerned; the home, the school, the church, the press, the vocation, public life, amusement and hobbies."

—**Sir Godfrey Thomson.**

शिक्षा के साधनों का अर्थ

Meaning of Agencies of Education

'साधन' अंग्रेजी शब्द 'Agency' का हिन्दी रूपान्तर है। 'Agency' का अर्थ है—'Agent' का कार्य। 'Agent' से हमारा अभिप्राय उस व्यक्ति या वस्तु से होता है, जो कोई कार्य करता है या प्रभाव डालता है। अतः शिक्षा के साधन—वे तत्त्व, कारण, स्थान या संस्थायें हैं, जो बालक पर शैक्षिक प्रभाव डालते हैं।

शिक्षा के साधनों के अर्थ को स्पष्ट करते हुए, बी० डी० भाटिया ने लिखा है :—"समाज ने शिक्षा के कार्यों को करने के लिए अनेक विशिष्ट संस्थाओं का विकास किया है। इन्हीं संस्थाओं को शिक्षा के साधन कहा जाता है।"

"Society has developed a number of specialized institutions to carry out the functions of education. These institutions are known as the 'agencies of education."—B. D. Bhatia.

शिक्षा के साधनों का वर्गीकरण
Classification of the Agencies of Education

शिक्षा के सब साधनों को साधारणतः निम्नलिखित दो भागों में बाँटा जाता है :—

1. औपचारिक और अनौपचारिक (Formal & Informal)
2. सक्रिय और निष्क्रिय (Active & Passive)

ड्यूवी ने शिक्षा के औपचारिक और अनौपचारिक साधनों को "शिक्षा की साभिप्राय और आकस्मिक विधियाँ" (Intentional & Incidental Modes of Education) बताया है।

हैण्डरसन ने इन दोनों साधनों के अन्तर को इस प्रकार स्पष्ट किया है :— "जब बालक व्यक्तियों के कार्यों को देखता है, उनका अनुकरण करता है और उनमें भाग लेता है तब वह अनौपचारिक रूप से शिक्षित होता है। जब उसको सचेत करके और जान-बूझकर पढ़ाया जाता है, तब वह अनौपचारिक रूप से शिक्षा प्राप्त करता है।"

"As the child watches, imitates, participates, in the activities of living, he is being informally educated. When he is being consciously and intentionally taught, that is formal education."

—Henderson.

1. औपचारिक साधन : Formal Agencies

(1) अर्थ : Meaning—शिक्षा के औपचारिक साधन एक निश्चित योजना के अनुसार होते हैं। इनका प्रयोग बालक के आचरण को रूपान्तरित करने के लिए किया जाता है। इनके निश्चित नियम होते हैं और इनकी देखभाल प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा की जाती है। इनके अन्तर्गत स्कूल, पुस्तकालय, अजायबघर, चित्र-भवन, पुस्तकें आदि आती हैं।

(2) गुण : Merits—औपचारिक शिक्षा के लाभों पर प्रकाश डालते हुए ड्यूवी (Dewey) ने लिखा है :—"औपचारिक शिक्षा के बिना जटिल समाज के साधनों और उपलब्धियों को हस्तान्तरित करना सम्भव नहीं है। यह एक ऐसे अनुभव की प्राप्ति का द्वार खोलता है, जिसको बालक दूसरों के साथ रहकर अनौपचारिक शिक्षा के द्वारा प्राप्त नहीं कर सकते हैं।"

(3) दोष : Demerits—गुणों के साथ-साथ, औपचारिक शिक्षा के दोष भी हैं। इनकी ओर संकेत करते हुए, ड्यूवी (*Dewey*) ने लिखा है :—"औपचारिक शिक्षा बड़ी सरलता से तुच्छ, निर्जीव, अस्पष्ट और किताबी बन जाती है। कम विकसित समाजों में जो संचित ज्ञान होता है, उसे कार्य में बदला जा सकता है। पर उन्नत संस्कृति में जो बातें सीखी जाती हैं, वे प्रतीकों के रूप में होती हैं और उनको कार्यों में परिणत नहीं किया जा सकता है। इस बात का सदैव डर रहता है कि औपचारिक शिक्षा जीवन के अनुभव से कोई सम्बन्ध न रखकर, केवल विद्यालयों की विषय-सामग्री न बन जाय।"

2. अनौपचारिक साधन : Informal Agencies

(1) अर्थ : Meaning—शिक्षा के अनौपचारिक साधनों का विकास स्वाभाविक रूप से होता है। इसकी न तो कोई निश्चित योजना होती है, और न कोई निश्चित नियम ही होते है। ये बालक के आचरण का रूपान्तर करते हैं, पर रूपान्तर की प्रक्रिया अज्ञात, अप्रत्यक्ष और अनौपचारिक होती है। इसके अन्तर्गत परिवार, धर्म, समाज, राज्य, रेडियो, समाचार-पत्र, खेल के मैदान, दल, गुट, युवक-समूह आदि आते हैं।

(2) गुण : Merits—ड्यूवी (Dewey) ने शिक्षा के अनौपचारिक साधनों को औपचारिक साधनों की अपेक्षा अधिक महत्त्व दिया है और लिखा है :—"बालक दूसरों के साथ रहकर अनौपचारिक ढंग से शिक्षा प्राप्त करता है, और साथ रहने की प्रक्रिया ही शिक्षा देने का कार्य करती है। यह प्रक्रिया अनुभव को विस्तृत करती है और कल्पना को प्रेरणा देती है। यह कथन और विचार में शुद्धता और सजीवता लाती है।"

अनौपचारिक साधनों का प्रभाव बहुत गहरा और व्यापक होता है। ये चरित्र और मस्तिष्क के प्रत्येक पहलू को प्रभावित करते हैं। ये अनजाने ही आदतों, व्यवहारों, रुचियों और दृष्टिकोणों का निर्माण करते हैं। ये बाहरी दबाव का प्रयोग करके बालक की स्वतन्त्रता पर अंकुश नहीं लगाते हैं। इस प्रकार, अनौपचारिक शिक्षा बहुत लाभप्रद कार्य करती है।

(3) दोष : Demerits—शिक्षा के अनौपचारिक साधन दोषरहित नहीं हैं। बालक को केवल अनौपचारिक साधनों का प्रयोग करके ही शिक्षित नहीं किया जा सकता है। इसका मुख्य कारण यह है कि अनौपचारिक शिक्षा की कोई निश्चित योजना नहीं होती है। इसलिए, कभी-कभी इसका परिणाम—अस्त-व्यस्तता और समय तथा प्रयास का अपव्यय होता है। इसके अतिरिक्त अनौपचारिक साधनों द्वारा प्राप्त ज्ञान उच्च कोटि का बड़ी कठिनता से हो पाता है। कभी-कभी ये साधन छात्रों में ऐसे गुण विकसित करते हैं, जो उनके व्यक्तित्व, समाज और देश के लिए हितकर सिद्ध नहीं होते हैं।

शिक्षा के औपचारिक व अनौपचारिक साधनों में अन्तर

Difference between Formal and Informal Agencies of Education

इन साधनों के अन्तर को निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है—

औपचारिक साधन	अनौपचारिक साधन
1. औपचारिक साधनों को बालक के आचरण को परिवर्तित करने के लिए जान-बूझकर व्यवस्थित किया जाता है। इस कारण ये व्यवस्थित साधन हैं।	1. अनौपचारिक साधनों द्वारा बालक के आचरण को अप्रत्यक्ष एवं आकस्मिक ढंग से परिवर्तित किया जाता है। इस कारण ये अव्यवस्थित साधन हैं।
2. इन साधनों को निश्चित ढाँचे के अनुसार पहले से ही निर्धारित किया जाता है। अतः ये बालक के आचरण को सचेत होकर परिवर्तित एवं नियन्त्रित करते हैं।	2. ये साधन पूर्व निर्धारित नहीं होते हैं। अतः ये बालक के आचरण के परिवर्तन एवं नियन्त्रण के सम्बन्ध में सचेत होकर कार्य नहीं करते हैं।
3. ये साधन पूर्व नियोजित होते हैं और इनके अपने नियम एवं निर्धारित कार्यक्रम होते हैं।	3 इन साधनों का कोई निर्धारित कार्यक्रम नहीं होता और न ही इनके अपने नियम ही होते हैं, जिनके अनुसार वे बालक के आचरण को रूपान्तरित करने के लिए बाध्य होंगे।
4. वे साधन प्रत्यक्ष रूप से बालक के आचरण को रूपान्तरित करने के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष साधन भी कहलाते हैं।	4. ये साधन अप्रत्यक्ष रूप से बालक के आचरण को रूपान्तरित करते हैं। अतः ये अप्रत्यक्ष साधन कहलाते हैं।
5. ये साधन बालक की स्वतन्त्रता को नियन्त्रित करने के लिए दण्ड-विधान तथा शक्ति का प्रयोग करते हैं। अतः ये कृत्रिम एवं अस्वाभाविक साधन हैं।	5. ये साधन बालक की स्वतन्त्रता को नियन्त्रित नहीं करते हैं। अतः ये स्वाभाविक एवं रोचक साधन हैं।

औपचारिक व अनौपचारिक साधनों में संतुलन
Balance between Formal & Informal Agencies

विभिन्न समाजों के द्वारा औपचारिक और अनौपचारिक—दोनों प्रकार की शिक्षा का प्रयोग अतीत के मूल्यों को बनाये रखने और उन्नति के पथ पर अग्रसर होने के लिए किया जाता है। जैसे-जैसे समाज जटिल होता जाता है, औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता बढ़ती जाती है। जैसे-जैसे औपचारिक शिक्षा का विस्तार होता है, वैसे-वैसे प्रत्यक्ष सम्पर्क और विद्यालय से प्राप्त अनुभवों में अवांछनीय अन्तर होने का भय बढ़ता जाता है। यह भय इतना अधिक कभी नहीं था, जितना कि आज के ससार में है, क्योंकि पिछली कुछ शताब्दियों में ज्ञान और प्राविधिक कुशलता में अति तीव्र वृद्धि हुई है।

अतः आज शिक्षा के समक्ष सबसे बड़ी समस्या यह है कि—"औपचारिक और अनौपचारिक साधनों में किस प्रकार सतुलन रखे ?' यह तभी सम्भव है, जब दोनों साधनों पर बराबर बल दिया जाय और एक की उपेक्षा करके दूसरे को आवश्यकता से अधिक महत्त्व न दिया जाय।

सक्रिय व निष्क्रिय साधन : Active & Passive Agencies

1. सक्रिय साधन : Active Agencies—सक्रिय साधन सामाजिक प्रक्रिया पर नियन्त्रण रखने और उसको एक निश्चित शिक्षा देने का प्रयत्न करते है। इनमे शिक्षा देने वाले और शिक्षा प्राप्त करने वाले मे प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया होती है। दोनों एक-दूसरे पर क्रिया और प्रतिक्रिया करते है और इस प्रकार दोनो के आचरण मे रूपान्तर होता है।

सक्रिय साधनों के उदाहरण हैं—परिवार, समाज, राज्य, चर्च (धर्म), स्कूल, क्लब तथा समाज-कल्याण केन्द्र आदि।

2. निष्क्रिय साधन : Passive Agencies—निष्क्रिय साधन वे है, जिनका प्रभाव एक-तरफा होता है। इनकी प्रक्रिया एक ओर से होती है, क्योंकि ये एक ही को प्रभावित करते है। इस प्रक्रिया में एक पक्ष सक्रिय होता है, और दूसरा निष्क्रिय। ये साधन इस अर्थ में निष्क्रिय हैं, क्योंकि ये दूसरों को तो प्रभावित करते हैं, पर स्वयं दूसरों से प्रभावित नहीं होते हैं। परन्तु वास्तव में, इन पर भी जनमत, सार्वजनिक रुचि और सरकारी नियन्त्रण का प्रभाव पड़ता है।

निष्क्रिय साधनों के उदाहरण है—समाचार-पत्र, सिनेमा, टेलीविज़न, रेडियो, प्रेस आदि।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What is meant by formal and informal agencies of education ? Show why it has become more important in recent times to establish co-ordination between them ?

शिक्षा के औपचारिक और अनौपचारिक साधनों का क्या अर्थ है ? बताइये कि आज के युग में इनमें सामंजस्य स्थापित करना अधिक महत्त्वपूर्ण क्यों हो गया है ?

2. Distinguish between active and passive agencies of education by giving examples.

उदाहरण देकर सक्रिय और निष्क्रिय साधनों में अन्तर बताइये ।

3. Distinguish between formal and informal agencies of education. Describe the part played by any two informal educational agencies.

शिक्षा के औपचारिक और अनौपचारिक साधनों के अन्तर को स्पष्ट कीजिए । किन्हीं दो अनौपचारिक शिक्षा-साधनों के कार्य का विवरण दीजिए ।

4. What are the formal and informal agencies of education ? Which of these two do you consider more important ? Explain with reasons.

शिक्षा के औपचारिक और अनौपचारिक अभिकरण क्या हैं ? इनमें से आप किन दो को अधिक महत्त्वपूर्ण समझते हैं ? सकारण समझाइए ।

8

विद्यालय : सक्रिय व औपचारिक साधन
SCHOOL : ACTIVE & FORMAL AGENCY

"विद्यालय मुख्यतया एक सामाजिक संस्था है।"
"The school is primarily a social institution."—Dewey.

विद्यालय का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of School

(1) विद्यालय का अर्थ : Meaning of Schools—'स्कूल' शब्द की उत्पत्ति 'Schola' नामक यूनानी शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है—"अवकाश"(Leisure)। यह बात कुछ विचित्र-सी जान पड़ती है। इसका स्पष्टीकरण करते हुए, ए० एफ० लीच ने लिखा है —"वाद-विवाद या वार्त्ता के स्थान, जहां एथेन्स के युवक अपने अवकाश के समय को खेल-कूद, व्यवसाय और युद्ध के प्रशिक्षण में बिताते थे, धीरे-धीरे दर्शन और उच्च कलाओं के स्कूलों में बदल गये। एकेडेमी[1] के सुन्दर उद्यानों में व्यतीत किये जाने वाले अवकाश के माध्यम से विद्यालयों का विकास हुआ।"

"The discussion forums or talking shops where the youth of Athens spent their leisure time in sports and exercise, in training for war, gradually crystallized into schools of philosophy and the higher arts. In the leisure spent in the trim gardens of the Academy, schools developed."—A. F. Leach.

(2) विद्यालय की परिभाषा : Definition of School—हम विद्यालय के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषायें आगे दे रहे है :—

---

1. "Plato lectured in a place near Athens called the Academy. It was called after Accadamus, who once owned it."

(1) जॉन ड्यूवी :—"विद्यालय एक ऐसा विशिष्ट वातावरण है, जहाँ जीवन के कुछ गुणों और कुछ विशेष प्रकार की क्रियाओं तथा व्यवसायों की शिक्षा इस उद्देश्य से दी जाती है कि बालक का विकास वांछित दिशा में हो।"

"School is a special environment, where a certain quality of life and certain types of activities and occupations are provided with the object of securing the child's development along desirable lines."—John Dewey

(2) टी० पी० नन :— 'विद्यालय को मुख्य रूप से इस प्रकार का स्थान नहीं समझा जाना चाहिए, जहाँ किसी निश्चित ज्ञान को सीखा जाता है, वरन् ऐसा स्थान जहाँ बालकों को क्रियाओं के उन निश्चित रूपों में प्रशिक्षित किया जाता है, जो इस विशाल संसार में सबसे महान् और सबसे अधिक महत्त्व वाली हैं।"

"The school must be thought of primarily not as a place of learning where certain knowledge is learnt, but as a place where the young are disciplined in certain forms of activities, namely those that are of the greatest and most permanent significance in the wider world."—T. P. Nunn.

(3) रॉस—"विद्यालय वे संस्थाएँ हैं, जिनको सभ्य मनुष्य के द्वारा इस उद्देश्य से स्थापित किया जाता है कि समाज में सुव्यवस्थित और योग्य सदस्यता के लिए बालकों की तैयारी में सहायता मिले।"

"Schools are institutions devised by civilized man for the purpose of aiding in the preparation of the young for well adjusted and efficient membership of society."—Ross.

समाज में विद्यालय का स्थान—उसका महत्त्व व आवश्यकता
Place of School in Society—Its Importance & Necessity

प्रस्तावना—समाज में विद्यालय के स्थान, महत्त्व और आवश्यकताओं पर, प्रकाश डालते हुए एस० बालकृष्ण जोशी ने लिखा है :—"किसी भी राष्ट्र की प्रगति का निर्माण विधान-सभाओं, न्यायालयों और फैक्ट्रियों से नहीं, वरन् विद्यालयों में होता है।"

"The progress of a nation is decided not in legislatures, not in courts, not in factories, but in schools."—S. Balkrishna Joshi.

विद्यालय को यह महत्त्वपूर्ण स्थान कुछ कारणों से दिया जाता है। हम उनका उल्लेख नीचे कर रहे हैं :—

(1) जीवन की जटिलता : Complexity of Life—आज का जीवन प्राचीन काल के जीवन के समान सरल और सुखमय नहीं है। उस समय मनुष्य के पास

आध्यात्मिक शक्ति को दृढ़ बनाना, उसकी ऐतिहासिक निरन्तरता को बनाये रखना, उसकी भूतकाल को सफलताओं को सुरक्षित रखना और उसके भविष्य की गारन्टी करना।"

"A nation's schools are an organ of its life, whose special function is consolidate its spiritual strength, to maintain its historic continuity, to secure its past achievements, to guarantee its future."—T. P. Nunn.

विद्यालय की आधुनिक धारणा
Modern Conception of School

परम्परागत विद्यालय जो आज भी प्रचलित है, केवल औपचारिक शिक्षा के स्थान है। इनका मुख्य ध्येय—निश्चित मात्रा मे ज्ञान प्रदान करना है। इनकी दिनचर्या बड़ी कठोर है। इनकी पाठ्यक्रम क्रियाओ का न तो विषय-वस्तु से कोई सम्बन्ध होता है, और न शिक्षण-विधियों में।

पेस्टालॉजी ने इन विद्यालयों की बहुत ही निन्दा की है। उसका कहना है, कि ये विद्यालय अमनोवैज्ञानिक हैं, जो बालक को उसके प्राकृतिक जीवन से दूर कर देते हैं, उसकी स्वतन्त्रता को निरंकुशता से रोक देते हैं, और उसे अनाकर्षक बातों को याद करने के लिए भेड़ो के समान हाँकते है और घण्टो, दिनो, सप्ताहों, महीनों और वर्षों तक दर्दनाक जजीरों मे बाँध देते हैं। इस निन्दा के फलस्वरूप, नवीन शैक्षिक विचारों ने नवीन शैक्षिक प्रयोगो को प्रोत्साहन दिया और विद्यालय की धारणा मे परिवर्तन की प्रक्रिया आरम्भ हो गई।

इस धारणा का आधुनिक समय में जो रूप है, उसे बालकृष्ण जोशी (S. Balkrishna Joshi) के अग्रांकित शब्दो द्वारा दर्शाया जा सकता है :—"विद्यालय ईंट और गारे की बनी हुई इमारत नहीं हैं, जिसमे विभिन्न प्रकार के छात्र और शिक्षक होते हैं। विद्यालय—बाजार नहीं है, जहाँ विभिन्न योग्यताओं वाले अनिच्छुक व्यक्तियों को प्रदान किया जाता है। विद्यालय रेल का प्लेटफार्म नहीं है, जहाँ विभिन्न उद्देश्यों से विभिन्न व्यक्तियो की भीड़ जमा होती है। विद्यालय कठोर सुधारगृह नहीं है, जहाँ किशोर अपराधियों पर कड़ी निगरानी रखी जाती है। विद्यालय आध्यात्मिक संगठन है, जिसका अपना स्वयं का विशिष्ट व्यक्तित्व है। विद्यालय गतिशील सामुदायिक केन्द्र है, जो चारो ओर जीवन और शक्ति का संचार करता है। विद्यालय एक आश्चर्यजनक भवन है, जिसका आधार सद्भावना है—जनता की सद्भावना, माता-पिता की सद्भावना, छात्रो की सद्भावना। सारांश में, एक सुसंचालित विद्यालय—एक सुखी परिवार, एक पवित्र मन्दिर, एक सामाजिक केन्द्र; लघु रूप में एक राज्य और मनमोहक वृन्दावन है, जिसमें इन सब बातों का सुन्दर मिश्रण होता है।"

(6) बहुमुखी सांस्कृतिक चेतना का विकास : Development of Cultural Pluralism—विद्यालय में विभिन्न परिवारों, समुदायों और संस्कृतियों से छात्र आते हैं। परस्पर सम्पर्क के कारण उनमें एक-दूसरे के सांस्कृतिक गुण आ जाते हैं। अत: विद्यालयों को छात्रों में बहुमुखी संस्कृति का विकास करने का महत्त्वपूर्ण साधन समझा जाता है।

(7) आदर्शों व विचारधाराओं का प्रसार : Propagation of Ideals & Ideologies—राज्य के आदर्शों और विचारधाराओं को फैलाने के लिए विद्यालय को अति महत्त्वपूर्ण साधन माना गया है। इसलिए, सभी प्रकार के राज्यों—लोकतन्त्रीय, फासिस्टवादी, साम्यवादी आदि में विद्यालय का स्थान गौरवपूर्ण है।

(8) समाज की निरन्तरता व विकास : Perpetuation & Development of Society—'विद्यालय' एक प्रमुख सामाजिक संस्था है। शिक्षा की प्रक्रिया सामाजिक होने के कारण विद्यालय सामुदायिक जीवन का वह स्वरूप है, जिसमें समाज की निरन्तरता और विकास के लिए सभी प्रभावपूर्ण साधन केन्द्रित होते हैं। विद्यालय के इसी महत्त्व के कारण टी० पी० नन (T. P. Nunn) ने लिखा है :—**"विद्यालय को समस्त संसार का नहीं, वरन् समस्त मानव-जाति का आदर्श लघु रूप होना चाहिए।"**

(9) विद्यालय : घर से शिक्षा का उत्तम स्थान : School a Better Place of Education than Home—'विद्यालय' घर की अपेक्षा शिक्षा का उत्तम स्थान है। कारण यह है कि विद्यालय में विभिन्न, आदतों, रुचियों और दृष्टिकोणों के बालक आते हैं। फलत: परस्पर सम्पर्क के कारण बालक उन बातों को सीखते है, जिन्हे वे घर की चहारदीवारी के अन्दर नही सीख सकते है। यदि बालकों को संसार के ढगों से परिचित कराना है, यदि उनको सामाजिक शिष्टाचार और सहानुभूति सिखानी है, यदि उनको निष्पक्षता और सहयोग के महत्त्व को बताना है, तो उनको घर से बाहर विद्यालय में भेजना अनिवार्य है।

(10) शिक्षित नागरिकों का निर्माण : Creation of Educated Citizens—*विद्यालय ही एकमात्र वह साधन है, जिसके द्वारा शिक्षित नागरिकों का निर्माण किया जा सकता है।* यदि एक देश के समस्त बालकों को एक निश्चित आयु तक नि.शुल्क और अनिवार्य शिक्षा दी जाती है, तो वे स्थायी रूप से साक्षर हो जाते हैं। साक्षर होने के साथ-साथ उनमें धैर्य, सहयोग, उत्तरदायित्व आदि गुणों का विकास होता है। इस प्रकार, बड़े होकर बालक राज्य के उपयोगी नागरिक सिद्ध होते हैं।

उपसंहार—उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर विद्यालय के स्थान, महत्त्व और आवश्यकता को सरलतापूर्वक समझा जा सकता है। वास्तव में, व्यक्ति और समाज—दोनों की प्रगति के लिए विद्यालय अति आवश्यक है। इसलिए, किसी भी सामाजिक ढांचे में इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती है। टी० पी० नन ने सत्य ही लिखा है —**"एक राष्ट्र के विद्यालय उसके जीवन के वे अंग है, जिनका विशेष कार्य है—उसकी**

आध्यात्मिक शक्ति को दृढ़ बनाना, उसकी ऐतिहासिक निरन्तरता को बनाये रखना, उसकी भूतकाल की सफलताओं को सुरक्षित रखना और उसके भविष्य की गारन्टी करना।"

"A nation's schools are an organ of its life, whose special function is consolidate its spiritual strength, to maintain its historic continuity, to secure its past achievements, to guarantee its *future*."—*T. P Nunn.*

विद्यालय की आधुनिक धारणा
Modern Conception of School

परम्परागत विद्यालय जो आज भी प्रचलित हैं, केवल औपचारिक शिक्षा के स्थान है। *इनका मुख्य ध्येय—निश्चित मात्रा में ज्ञान प्रदान करना है।* इनकी दिनचर्या बड़ी कठोर है। इनकी पाठ्यक्रम क्रियाओं का न तो विषय-वस्तु से कोई सम्बन्ध होता है, और न शिक्षण-विधियों से।

पेस्टालॉज़ी ने इन विद्यालयों की बहुत ही निन्दा की है। उसका कहना है, कि ये विद्यालय अमनोवैज्ञानिक है, जो बालक को उसके प्राकृतिक जीवन से दूर कर देते है, उसकी स्वतन्त्रता को निरंकुशता से रोक देते हैं, और उसे अनाकर्षक बातों को याद करने के लिए भेड़ों के समान हाँकते है और घण्टो, दिनों, सप्ताहों, महीनों और वर्षों तक दर्दनाक जंजीरों में बाँध देते हैं। इस निन्दा के फलस्वरूप, नवीन शैक्षिक विचारों ने नवीन शैक्षिक प्रयोगों को प्रोत्साहन दिया और विद्यालय की धारणा में परिवर्तन की प्रक्रिया आरम्भ हो गई।

इस धारणा का आधुनिक समय में जो रूप है, उसे बालकृष्ण जोशी (S. Balkrishna Joshi) के अग्रांकित शब्दों द्वारा दर्शाया जा सकता है—"विद्यालय ईंट और गारे की बनी हुई इमारत नहीं है, जिसमें विभिन्न प्रकार के छात्र और शिक्षक होते हैं। विद्यालय—बाजार नहीं है, जहाँ विभिन्न योग्यताओं वाले अनिच्छुक व्यक्तियों को प्रदान किया जाता है। विद्यालय रेल का प्लेटफार्म नहीं है, जहाँ विभिन्न उद्देश्यों से विभिन्न व्यक्तियों की भीड़ जमा होती है। विद्यालय कठोर सुधारगृह नहीं है, जहाँ किशोर अपराधियों पर कड़ी निगरानी रखी जाती है। विद्यालय आध्यात्मिक संगठन है, जिसका अपना स्वयं का विशिष्ट व्यक्तित्व है। विद्यालय गतिशील सामुदायिक केन्द्र है, जो चारों ओर जीवन और शक्ति का संचार करता है। विद्यालय एक आश्चर्यजनक भवन है, जिसका आधार सद्भावना है—जनता की सद्भावना, माता-पिता की सद्भावना, छात्रों की सद्भावना। सारांश में, एक सुसंचालित विद्यालय—एक सुखी परिवार, एक पवित्र मन्दिर, एक सामाजिक केन्द्र; लघु रूप में एक राज्य और मनमोहक वृन्दावन है, जिसमें इन सब बातों का सुन्दर मिश्रण होता है।"

नवीन विद्यालयों की प्रमुख विशेषताएँ
Distinctive Features of New Schools

यहाँ हम नये ढङ्ग के विद्यालयों की प्रमुख विशेषताओं पर विचार करेंगे और यह देखेंगे कि विद्यालय की नवीन धारणा प्राचीन धारणा से किस प्रकार भिन्न है :—

(1) बालक के प्रति दृष्टिकोण : Attitude towards the Child—**के० जी० सैयदैन** के अनुसार :—नवीन विद्यालय बालक के प्रति अपने दृष्टिकोण में परम्परागत विद्यालय से भिन्न है। नवीन विद्यालय बालक की स्वतन्त्रता को बहुत महत्त्व देता है। यह इस मनोवैज्ञानिक तथ्य में विश्वास करता है कि बालक का विकास तभी होगा, जब उसकी जन्मजात शक्तियों और योग्यताओं को वातावरण में पूर्ण स्वतन्त्रता मिले।

अतः यह बालक को समृद्ध, सक्रिय और उल्लासमय वातावरण देने का प्रयास करता है। इस वातावरण में उसे खेल, सामाजिक सहयोग, हस्त-कौशल, रचनात्मक कार्य और अपनी इच्छा के अनुसार चुनी हुई पुस्तकों और विषयों के अध्ययन के अवसर मिलते हैं। बालक को ऐसे ही वातावरण में रखकर उसे वयस्क के कार्यों और कर्त्तव्यों के लिए तैयार किया जा सकता है। **सैयदैन** (K. G. Saiyidain) ने लिखा है :—"**आधुनिक प्रगतिशील विद्यालय सूचना का स्थान, अनुभव को देने का प्रयत्न करता है और अपनी पाठ्य-वस्तु के लिए अनुभव के महत्त्वपूर्ण और स्थायी तत्त्वों को चुनता है, और इस प्रकार विद्यालय-जीवन को सक्रिय और अर्थपूर्ण बनाता है।**"

(2) विश्व के प्रति दृष्टिकोण : Attitude towards the World—नवीन विद्यालय का दैनिक जीवन और समस्यापूर्ण संसार के प्रति विभिन्न दृष्टिकोण है। **सैयदैन** ने इस अन्तर का बहुत ही स्पष्ट चित्र इस प्रकार खींचा है :—परम्परागत विद्यालय अत्यधिक शैक्षणिक और जीवन से पृथक् (Academic & Monastic) है। इसका दैनिक जीवन के थपेड़ों, संघर्षों, कार्यों और चिन्ताओं से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह अपने शिक्षण का कार्य अपने चारों ओर के सामाजिक और आर्थिक जीवन से अलग रहकर करता है।

इसके विपरीत नवीन विद्यालय अपनी पाठ्य-वस्तु, शिक्षण-विधियों और कार्यों को सामाजिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर नियोजित करता है। विद्यालय की छोटी दुनियाँ और बाहर की बड़ी दुनियाँ में चेतन और सतत् सम्बन्ध होता है। बालक समाज-सेवा, नागरिक कार्यों, स्वास्थ्य-सम्बन्धी आन्दोलनों आदि सामाजिक कार्यों में भाग लेकर वास्तविक जीवन के सम्पर्क में आता है।

(3) विद्यालय : विशिष्ट वातावरण के रूप में : School as a Special Environment—**ड्यूवी** विद्यालय को विशिष्ट वातावरण मानता है, जहाँ बालकों के वाञ्छनीय विकास के लिए एक विशेष प्रकार के जीवन और कार्यों की *व्यवस्था की* जाती है। उसके अनुसार इस वातावरण की अग्रलिखित **तीन प्रमुख विशेषताएँ** हैं :—

1. यह वातावरण सरलीकृत (Simplified) होता है। इसके लिए जटिल आधुनिक जीवन से वे बातें चुनी जाती हैं, जिनका स्थायी महत्त्व होता है, और जो इतनी सरल तथा रोचक होती हैं कि बालक उनके प्रति प्रतिक्रिया कर सकते हैं।
2. यह वातावरण शुद्ध (Purified) होता है। इसके लिए वाह्य सामाजिक जीवन में केवल वे ही बातें ली जाती हैं, जो शुद्ध और निर्दोष होती हैं। जो भी दूषित या अनुचित बातें होती हैं, उनको छोड़ दिया जाता है। इस पवित्र वातावरण में रहकर बालक उत्तम भावी समाज के निर्माण में अपना योग देता है।
3. यह वातावरण सन्तुलित (Balanced) होता है। दूसरे शब्दों में, यह सामाजिक वातावरण के विभिन्न तत्त्वों में सन्तुलन स्थापित करता है। फलस्वरूप, बालक अपने समूह की सामाजिक सकीर्णताओं से बाहर निकल कर विस्तृत वातावरण में रहता है।

(4) विद्यालय : सक्रिय वातावरण के रूप में . School as an Active Environment—पुराने ढंग के विद्यालय का केवल एक सकीर्ण और निश्चित उद्देश्य है। वह यह है कि छात्रों को परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए किस प्रकार तैयार किया जाय। इस उद्देश्य की प्राप्ति में सहायता देने वाली बातों को प्रोत्साहित और सहायता न देने वाली बातों की उपेक्षा की जाती है। यही कारण है कि विद्यालय के कार्यक्रम में सामाजिक जीवन और सामाजिक कार्यों को कोई स्थान नहीं दिया जाता है।

इसके विपरीत, नवीन विद्यालय इस जीवन और इन कार्यों को प्रचुर मात्रा में स्थान देता है। यह निष्प्राण ज्ञान का नहीं, वरन् स्फूर्तिमय जीवन का केन्द्र होता है। यह अपने चारों ओर के जीवन और वास्तविकताओं से प्रत्यक्ष और घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है। इस प्रकार के विद्यालय के समर्थन में टी० पी० नन (T. P. Nunn) ने लिखा है .—"**विद्यालय को मुख्य रूप से ज्ञान-प्राप्ति का स्थान नहीं, वरन् ऐसा स्थान समझा जाना चाहिए, जहाँ बालकों को कुछ प्रकार के कार्यों में प्रशिक्षित किया जाता है।**"

(5) विद्यालय रचनात्मक वातावरण के रूप में : School as a Creative Environment—परम्परागत विद्यालय पुस्तकीय और औपचारिक है। इसलिए इसमे बालकों की रुचियों, शारीरिक क्रियाओं, रचनात्मक और सामाजिक भावनाओं का दमन किया जाता है। आधुनिक विद्यालय इस बात के विरुद्ध है। अत: इसमें लाभप्रद और रचनात्मक कार्यों की अधिक-से-अधिक सुविधा प्रदान की जाती है।

पश्चिमी देशों के विद्यालयों ने इस दिशा में बहुत प्रगति की है। उनमें यथासम्भव सभी उपयुक्त क्रियाओं को स्थान दिया जाता है। भारतीय शिक्षाविद् भी इस बात में विश्वास करने लगे हैं कि विद्यालय—रचनात्मक वातावरण है। फलत: देश में

बहुउद्देशीय विद्यालयों की स्थापना की जा रही है और पाठ्य-सहगामी क्रियाओं पर बल दिया जा रहा है।

(6) **विद्यालय : सामुदायिक जीवन के केन्द्र के रूप में : School as a Centre of Community Life**—शिक्षा आवश्यक रूप से सामाजिक कार्य है। समाज इस कार्य को विद्यालय को सौंपता है, और उस पर बालकों को इस प्रकार शिक्षित करने का दायित्व रखता है, जिससे कि वे अपने समूह के जीवन में कुशलता-पूर्वक भाग ले सकें। दूसरे शब्दों मे, हम कह सकते हैं कि बालकों के प्रशिक्षण के लिए विद्यालय को सामुदायिक जीवन का केन्द्र होना चाहिए। इस बात को स्वीकार करते हुए **'माध्यमिक शिक्षा-आयोग''** (Secondary Education Commission) ने लिखा है :—**"विद्यालय बड़े समुदाय में एक छोटा समुदाय है।"** (School isa small community within a large community.")

अतः विद्यालय को समाज के सभी कार्यों को प्रतिबिम्बित करना चाहिए और बालकों को समाज की आवश्यकताओं, मांगों और आदर्शों के अनुसार प्रशिक्षित करना चाहिए। इसकी पुष्टि में सैयदेन (K. G. Saiyidain) ने लिखा है :—**"चूंकि समाज की ये मांगें सदैव बदलती रहती हैं बढ़ती रहती हैं और उनमें सुधार होते रहते हैं, इसलिए यह आवश्यक है कि विद्यालय का बाहर के जीवन के साथ सजीव सम्बन्ध रहे।"**

(7) **विद्यालय : एक सजीव साधन : School a Living Agency**—अमरीकी शिक्षा-शास्त्री एमरसन (Emerson) ने विद्यालय को एक सजीव साधन बताया है। इससे इसका अभिप्राय यह है कि स्कूल में जीवन का जीवन से सम्बन्ध होता है, ज्ञानपूर्ण शिक्षक का ज्ञानहीन छात्र से सम्पर्क होता है, और शिक्षक चेतनशील होता है—जो छात्र को अपनी योग्यता के अनुसार ज्ञान प्राप्त करने में सहायता देता है।

विद्यालय के कार्य
Functions of the School

विद्यालय के कार्यों की विभिन्न प्रकार से व्याख्या की गई है। इन विभिन्नताओं के कारण—विभिन्न राष्ट्रों और विभिन्न युगों के विद्यालयों [illegible] विशेषताएँ हैं। इन सब विभिन्न कार्यों को मोटे तौर पर अग्रलिखित दो [illegible] जा सकता है :—(1) औपचारिक, (2) अनौपचारिक।

1. विद्यालय के औपचारिक *कार्य : Formal Functions*

1. चरित्र-निर्माण और आ[illegible] न्नता [illegible]
2. अतीत की सांस्कृतिक [illegible] त
   मूल्यवान् बनाकर आ[illegible]

3. छात्रों में सोचने और निर्णय करने की शक्तियों का विकास करना, जिससे कि वे अपनी स्वतन्त्र विचार-शक्ति का सोचने, समझने और कार्य करने के लिए प्रयोग कर सकें।

4. छात्रों में कार्य को प्रारम्भ करने और नेतृत्व के गुणों का विकास करना, जिससे कि वे प्रजातन्त्र के अच्छे नागरिकों के रूप में अपने कर्त्तव्यों को कुशलतापूर्वक कर सकें।

5. छात्रों को ऐसा प्रशिक्षण देना जिससे कि वे समाज और अन्य व्यक्तियों पर भार बने बिना सम्मानपूर्ण ढंग से अपनी जीविका की समस्या को हल कर सकें।

6. छात्रों को ऐसा लाभप्रद ज्ञान देना—जो स्वयं साध्य नहीं है, वरन् साध्य को प्राप्त करने का साधन है। ज्ञान का साध्य—गतिशील और सन्तुलित मस्तिष्क का विकास करना है। ऐसे मस्तिष्क वाला व्यक्ति विभिन्न परिस्थितियों में सूझ-बूझ वाला और साहसी होता है। साथ ही, वह अज्ञात भविष्य के मूल्यों (Values) का निर्माण कर सकता है।

2. विद्यालय के अनौपचारिक कार्य : Informal Functions of School

1. समाज-सेवा, सामाजिक उत्सवों आदि का आयोजन करके छात्रों को सामाजिक प्रशिक्षण देना।

2. सक्रिय वातावरण का निर्माण करके छात्रों की रुचिकर और रचनात्मक क्रियाओं को प्रोत्साहित करना।

3. खेल-कूद, स्काउटिंग, सैनिक-शिक्षा, स्वास्थ्य-कार्य आदि की व्यवस्था करके छात्रों को शारीरिक प्रशिक्षण देना।

4. वाद-विवाद प्रतियोगिताओं, चित्रकलाओं, प्रदर्शनियों, संगीत-सम्मेलनों और नाटकों का प्रबन्ध करके बालक और बालिकाओं को भावात्मक प्रशिक्षण देना।

3. टॉमसन के अनुसार विद्यालय के कार्य : Functions of School According to Thomson

1. मानसिक प्रशिक्षण : Intellectual Training—मानसिक प्रशिक्षण का अर्थ है—पुस्तकीय ज्ञान और तर्क-शक्ति का विकास। विद्यालय का यह कार्य संकुचित तो है, पर साथ ही आवश्यक भी है।

2. चारित्रिक प्रशिक्षण : Character Training—चारित्रिक प्रशिक्षण विद्यालय का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है। प्राचीन समय के सरल समाज में समाज द्वारा

चारित्रिक प्रशिक्षण दिया जाना सम्भव था। पर आज के जटिल समाज में यह सम्भव नहीं है। अतः यह कार्य प्रशिक्षण से किया जाना चाहिए।

3. सामुदायिक जीवन का प्रशिक्षण : Training in Community Life—विद्यालय को सामुदायिक जीवन का प्रशिक्षण देना चाहिए। अत. विद्यालय ऐसा स्थान होना चाहिए, जहाँ छात्र स्वाभाविक सामुदायिक जीवन व्यतीत कर सकें।

4. राष्ट्रीय गर्व व देश-प्रेम का प्रशिक्षण : Training in National Pride & Patriotism—राष्ट्रीय गर्व और देश-प्रेम की ऐसी श्रेष्ठ भावनाएँ है कि इनके बिना छात्र उच्च आदर्शों को प्राप्त नहीं कर सकते हैं। अतः विद्यालयो को इन भावनाओं को विकसित करना चाहिए। पर ये भावनाएं केवल शुद्ध रूप में ही विकसित की जानी चाहिए, अन्यथा ये अन्य राष्ट्रों के लिए अहितकर सिद्ध हो सकती है।

5. स्वास्थ्य व स्वच्छता का प्रशिक्षण : Training in Health & Sanitation——हमारी सभ्यता ने पहले की अपेक्षा लोगों को अधिक सख्या मे नगरों मे बसा दिया है। वहाँ वे अस्वस्थ और अस्वच्छ परिस्थितियों मे रहते है। अतः यह आवश्यक है कि विद्यालय छात्रो को स्वास्थ्य और स्वच्छता का प्रशिक्षण दें।

4. ब्रूबेकर के अनुसार विद्यालय के कार्य : Functions of School According to Brubacher

1. संरक्षण कार्य : Conservative Function—हमारी सामाजिक सस्कृति बहुत मुसीबतों और बलिदानो के द्वारा प्राप्त की गई है। यदि भावी पीढ़ी को न बता सकने के कारण इसका कोई भी अश नष्ट हो गया तो यह बहुत दु.ख की बात होगी। अत. विद्यालय को इसकी शिक्षा देकर इसे सुरक्षित रखना चाहिए। सास्कृतिक आदर्श विद्यालय द्वारा ही सुरक्षित रखे जाते हैं। इसलिए भी, विद्यालय सास्कृतिक सरक्षण के कार्य की उपेक्षा नही कर सकता है।

2. प्रगतिशील कार्य : Progressive Function—प्रगतिवादियो का मत है कि यह सोचना कि विद्यालय, सस्कृति को नष्ट होने से बचा सकता है, उतना ही मूर्खतापूर्ण है, जितना कि यह सोचना कि औषधि, मनुष्य को मरने से बचा सकती है। अतः उनका कथन है कि विद्यालय सस्कृति को सुरक्षित रखने की अपेक्षा समाज की प्रगति की ओर ले जाने का कार्य करे। विद्यालय नये विचारो और कार्यक्रमो को अपना कर समाज के ढाँचे और आदर्शों मे समय के अनुसार परिवर्तित कर सकता है।

3. निष्पक्ष कार्य : Neutral Function—कुछ व्यक्तियों का मत है कि विद्यालय को निष्पक्ष कार्य करने चाहिए। उसे सास्कृतिक सुरक्षा, नवीन विचारो, राजनीति आदि से कोई प्रयोजन नही रखना चाहिए। उसका स्थान सासारिक मामलो से ऊपर है। उसका प्रमुख कार्य—अनन्त मूल्यो और सत्यो की शिक्षा देना है। अतः उसे किसी मामले के पक्ष या विपक्ष में शिक्षा नही देनी चाहिए।

विद्यालय में प्रधानाध्यापक म्युनिसिपेलिटी को भेजें। इससे पास के स्थानों की समस्याएँ भी हल होंगी और छात्रों को वास्तविक जीवन का ज्ञान भी होगा।

(vi) **समाज सेवा-संघों का निर्माण : Formation of Social Service Leagues**—रेमंट ने विद्यालयों में समाज-सेवा-संघो के निर्माण पर बहुत बल दिया है। ये संघ बाढ़ आने पर, छूत की बीमारियाँ फैलने तथा उत्सवों और जलूसों में आस-पास के लोगों की सहायता करें। संघ के इन कार्यों को स्काउटिंग के कार्यों से सम्बन्धित करके जनता का बहुत हित किया जा सकता है।

3. राज्य का संरक्षण : State Patronage

नेपोलियन (Napoleon) ने एक बार कहा था :—"जन-शिक्षा सरकार का प्रथम कार्य होना चाहिए।" ("Public instruction should be the first object of Government.")

18वीं शताब्दी में कही गई यह बात आज भी सत्य है। इसलिए, सभी उन्नतशील देशों में जन-शिक्षा का भार सरकार पर है। पर भारत में स्थिति हास्य-पूर्ण है। सरकार अपने विद्यालयों पर तो आँख बन्द करके धन व्यय करती है और प्रबन्ध-समितियों द्वारा स्थापित विद्यालयों के साथ सौतेली माँ का-सा व्यवहार करती है। जब तक सरकार देश के सभी विद्यालयों का भार अपने ऊपर नहीं लेगी, तब तक वह अपनी योजनाओं पर अरबों-खरबों रुपया व्यय करके भी देश की उन्नति नहीं कर सकेगी। अतः यह आवश्यक है कि सरकार निम्नलिखित उपायों को काम में लाये।

(i) **अच्छे विद्यालयों की स्थापना : Establishment of Good Schools**—अच्छे विद्यालय वे है, जो सरकार द्वारा निश्चित किये गये शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने में अधिक-से-अधिक योग देते है। यह बड़े दुःख की बात है कि हमारी सरकार ने अभी तक इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया है।

(ii) **योग्य शिक्षकों की नियुक्ति : Appointment of Qualified Teachers**—शिक्षण-कार्य के लिए उतने ही योग्य व्यक्तियों की आवश्यकता है, जितने कि किसी सरकारी कार्य, उद्योग या व्यवसाय के लिए। विद्यालयों को इस प्रकार के व्यक्ति तभी मिल सकते हैं, जब उनको उतना ही वेतन और वैसी ही सुविधायें मिलें, जैसी कि उनको और कहीं कार्य करने पर मिल सकती है। पर इस कार्य की निकट भविष्य में होने की कोई आशा नहीं दिखायी देती है।

(iii) **उदार आर्थिक सहायता : Liberal Financial Aid**—सरकार को विद्यालयों को उदार आर्थिक सहायता देनी चाहिए। परन्तु सरकार ऐसा न कर सकने के लिए यह तर्क देती है कि उसके पास धन नहीं है। यह केवल शिक्षा की उन्नति न करने का बहाना है। सरकार व्यर्थ की योजनाओं पर करोड़ों रुपये फूँकने के लिए कर्ज ले सकती है, पर शिक्षा के लिए एक पाई भी नहीं।

(iv) विद्यालयों का नियन्त्रण व निरीक्षण : **Control & Supervision of Schools**—सरकार को स्कूल इन्सपेक्टरों की संख्या बढ़ाकर विद्यालयों पर अपना नियन्त्रण कड़ा करना चाहिए। इन्सपेक्टरों को यह आज्ञा दी जाय कि वे समय-समय पर विद्यालयों का निरीक्षण करें और उनकी समस्याओं को सुलझाएं।

(v) ट्रेनिंग कॉलेजों का पुनर्गठन : **Re-organization of Training Colleges**—आज देश के अधिकांश ट्रेनिंग कॉलेज अंग्रेजों के समय की लकीर को पीट रहे हैं। इनमें से कितने ही छात्रों को डिग्री दिलाने की दुकानें बन गये हैं। इनकी ओर ध्यान देने का सरकार को स्वतन्त्रता के इस लम्बे समय में अभी अवकाश ही नहीं मिला है। यह अति आवश्यक है कि भारत की वर्तमान आवश्यकताओं और शिक्षा की आधुनिक प्रवृत्तियों एवं सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर सरकार इसका पुनर्गठन करे।

सामान्य भारतीय विद्यालय
The Ordinary Indian School

विद्यालय के बारे में ऊपर काफ़ी कहा जा चुका है। फिर भी, अपने देश के सामान्य विद्यालयों का सही चित्र प्रस्तुत करना अनुपयुक्त न होगा। सैयदैन (Saiyidain) का कथन है कि—अपने सर्वोत्तम रूप में ये विद्यालय ऐसे स्थान हैं, जहाँ पढ़ना-लिखना, सीखना आदि में; या इतिहास, भूगोल और विज्ञान आदि में औपचारिक शिक्षा दी जाती है। अपने निम्नतम रूप में ये ऐसे स्थान हैं, जहाँ बच्चों के उल्लास और कार्य के प्रति प्रेम का गला घोटा जाता है।

एच० जी० वेल्स ने लिखा है :—"यदि आप इस बात का अनुभव करना चाहते हैं कि पीढ़ियों के बाद पीढ़ियाँ किस प्रकार पहाड़ी नदियों के वेग से विनाश की ओर बढ़ रही हैं, तो आप किसी ग़ैर-सरकारी स्कूल को ध्यान से देखिए।"

"If you want to feel generations rushing to waste like *rapids*, you should put your heart and mind into a private school."

—**H. G. Wells.**

यद्यपि वेल्स का यह कथन इङ्गलैण्ड के आज के विद्यालयों पर लागू नहीं होता है, पर हमारे देश के प्रायः सभी सरकारी और ग़ैर-सरकारी विद्यालयों के बारे में शत-प्रतिशत सत्य है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What do you understand by 'School' ? *Discuss its need* and object.

'विद्यालय' से आप क्या समझते हैं ? इसकी आवश्यकता और ध्येय पर प्रकाश डालिये।"

2. Point out briefly the place of school in society.

समाज में स्कूल के स्थान का संक्षेप में वर्णन कीजिये।

3. "The school is a half-way house between the entirely domestic life of early childhood and the larger life that awaits the youth when he quits his parental-roof." Elucidate.

"विद्यालय बाह्य जीवन के बीच अर्द्ध-पारिवारिक कड़ी है, जो बालक की उस समय प्रतीक्षा करता है, जब वह अपने माता-पिता की छत्रछाया को छोड़ता है।" स्पष्ट कीजिये।

4. What function, in your opinions, should be assigned to the school, and why ?

आपके मतानुसार विद्यालय को कौन-से कार्य सौंपे जाने चाहिए, और क्यों ?

5. Describe the main functions of various types of schools.

विभिन्न प्रकार के विद्यालयों के प्रमुख कार्यों का वर्णन कीजिये।

6. What measures can be adopted to make the school an effective agency of education ? Which of them, in your opinion, has the greatest significance, and why ?

विद्यालय को शिक्षा का प्रभावपूर्ण साधन बनाने के लिए किन उपायों को अपनाया जा सकता है ? आपके विचारानुसार इनमें से किसका अधिक महत्त्व है, और क्यों ?

7. Show, specifically how a school can be made a community centre ?

विद्यालय को समुदाय का केन्द्र किस प्रकार बनाया जा सकता है ? स्पष्ट कीजिए।

9

घर या परिवार : सक्रिय व अनौपचारिक साधन
HOME OR FAMILY : ACTIVE & INFORMAL AGENCY

"परिवार सब से पुराना और मौलिक मानव-समूह है। पारिवारिक ढाँचे का विशिष्ट स्वरूप एक समाज से दूसरे समाज में भिन्न हो सकता है और होता है, पर सब जगह परिवार के मुख्य कार्य हैं—बच्चे का पालन करना और उसे समाज की संस्कृति से परिचित कराना—सारांश में, उसका समाजीकरण करना।"

"The family is the oldest human group and the basic one. While the particular form of family structure may and does vary from society to society, the central foci of family activities every where are child-bearing, and the initial induction of the child into the culture of a given society—in short, socialization."

—Young & Mack.

परिवार का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Family

(1) परिवार का अर्थ : Meaning of Family—'घर' या 'परिवार' समाज की एक इकाई है ... आधारभूत सामाजिक समूह है। इसमें साधारणत. पति-प ... । कभी-कभी पति या पत्नी के माता-पिता भी उनके सा ... भी परिवार का सदस्य माना जाता था ... शब्द से मानी जाती है जिसका ... सरल रूप है।
इसका

(2) परिवार की परिभाषा : Definition of Family—हम परिवार के अर्थ को सुस्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषायें नीचे दे रहे है :—

1. क्लेयर :—"परिवार से हम सम्बन्धों की वह व्यवस्था समझते है, जो माता-पिता और उनकी संतानों के बीच में पाई जाती है।"

"By Family we mean a system of relationship existing between parents and children."—Clare.

2. मैकाइवर व पेज :—"परिवार उस समूह का नाम है, जिसमें स्त्री-पुरुष का यौन-सम्बन्ध पर्याप्त निश्चित हो, और इनका साथ इतनी देर तक रहे, जिससे संतान उत्पन्न हो जाय और उसका पालन-पोषण भी किया जाय।"

"The family is a group defined by a sex-relationship sufficiently precise and enduring to provide for the procreation and upbringing of family."—MacIver & Page.

अतीत व वर्तमान में परिवार के कार्य
Functions of the Family in the Past & Present

परिवार के कार्य पिछले समय से अब तक बदलते चले आए है। ऑगबर्न और निमकॉफ (Ogburn & Nimkoff) के अनुसार : अतीत में परिवार के सात कार्य थे; यथा—(1) प्रेम-सम्बन्धी, (2) आर्थिक, (3) शैक्षिक, (4) रक्षा-सम्बन्धी, (5) मनोरंजन-सम्बन्धी, (6) परिवार की स्थिति (Status), और (7) धर्म की स्थिति।

वर्तमान समय में औद्योगीकरण, नगरीकरण, आवागमन की सुविधाओं और विज्ञान की उन्नति के कारण इनमे से कुछ कार्य या तो समाप्त हो गए है या इनमें परिवर्तन हो गया है। प्राचीन काल में शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण देना—परिवार का मुख्य कार्य था, पर आज के सभी उन्नतशील देशों मे यह कार्य समाज या राज्य द्वारा किया जाता है। नर्सरी और किंडरगार्टेन स्कूलों ने कुछ सीमा तक छोटे बच्चों के पालन-पोषण और शिक्षा का कार्य अपने ऊपर ले लिया है। इसी प्रकार, सिनेमा, सरकस, रेडियो और क्लब ने मनोरंजन का कार्य ले लिया है। लोगो के भौतिक दृष्टिकोण के कारण परिवार धार्मिक कार्य के प्रति उदासीन होता जा रहा है।

उपर्युक्त विवेचन से हमें इस परिणाम पर नही पहुँच जाना चाहिए कि आधुनिक परिवार पर बच्चों के पालन-पोषण और शिक्षा का उत्तरदायित्व नहीं है। सत्य यह है कि बाल-मनोविज्ञान ने बच्चो के प्रति माता-पिता का ध्यान अधिक आकर्षित किया है। माता-पिता के लिए परिवार की शैक्षिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं को समझाना और अपने बच्चों के लिए उनकी सामग्री जुटाना आवश्यक हो गया है।

बालक के जीवन में परिवार का महत्त्व
Importance of Family in Child's Life

आज परम्परागत परिवार का स्थान आधुनिक परिवार ने ले लिया है। इसका संगठन बदल गया है और इसके कुछ मौलिक कार्य दूसरी संस्थाओं द्वारा किए जाने लगे हैं। फिर भी, यह एक आधारभूत सामाजिक संस्था है, और इसके कुछ विशेष कार्य और विशेष महत्त्व है। अभी तक छोटे बच्चों का पालन-पोषण केवल यही करता है। सामाजिक संस्था के रूप में यह अब भी बच्चों को प्रारम्भिक शिक्षा देता है। परिवार का वातावरण उनके व्यवहार को सुधारने के लिए उत्तरदायी है।

रेमॉण्ट (Raymont) ने ठीक ही लिखा है :—"दो बच्चे भले ही एक ही विद्यालय में पढ़ते हों, एक ही समान शिक्षकों से प्रभावित होते हों, एक-सा ही अध्ययन करते हों, फिर भी वे अपने सामान्य ज्ञान, रुचियों, भाषण, व्यवहार और नैतिकता में अपने घरों के कारण, जहाँ से वे आते हैं, पूर्णतया भिन्न हो सकते हैं।"

इस प्रकार, परिवार—बालक पर अपना स्थायी प्रभाव अंकित कर देता है। वह वैसा ही बनता है, जैसा उसका घर उसको बनाता है। घर के प्रभाव के कारण ही गांधीजी ने प्रेम और सत्य के सिद्धान्तों को अपनाया। शिवाजी ने अपनी माता से रामायण और महाभारत की शिक्षा प्राप्त करके ही मराठा राज्य की नींव डाली। इस बात की पुष्टि करने के लिए कि घर में ही अच्छे और बुरे गुणों की शिक्षा मिलती है, बहुत-से उदाहरण दिए जा सकते है। एच० सी० एण्डरसन (H. C. Anderson) का कथन है :—"हमारे अपराधियों में से 80 प्रतिशत असहानुभूतिपूर्ण घरों से आते हैं।"

यहाँ यह कहना असगत न होगा कि घर के वातावरण का प्रभाव व्यक्ति के विकास के सभी स्तरों पर पड़ता है। इसीलिए, लॉरी ने लिखा है :—"शैक्षिक इतिहास के सभी स्तरों पर परिवार, बालक की शिक्षा का प्रमुख साधन है।"

"At all stages of educational history, the family is the chief agency in the education of the young."—Laurie.

घर के कार्य व महत्त्व पर विभिन्न विचार
Different Views on the Functions & Importance of Home

शिक्षा के अनौपचारिक साधन के रूप में घर के कार्यों और महत्त्व पर समय-समय पर विभिन्न विचार व्यक्त किये गए है। यहाँ हम उनमें से कुछ का वर्णन कर रहे हैं; यथा :—

1. प्राचीन भारतीय विचार : **Ancient Indian View**—प्रागैतिहासिक काल से ईसा की 10वीं शती पूर्व तक भारत में बालकों को कई वर्ष तक व्यवस्थित रूप से शिक्षा देने के लिए विद्यालय नहीं थे। उस समय तक यह कार्य केवल परिवार

के द्वारा ही किया जाता था। परिवार का नेता अपने पुत्रों को वेदों, साहित्य, धर्म, कृषि, वाणिज्य, व्यवसाय आदि की शिक्षा देता था।

2. **प्राचीन यूनानी विचार : Ancient Greek View**—प्राचीन काल में यूनानियों ने बालक के प्रशिक्षण में परिवार को बहुत कम महत्त्व दिया। इसका कारण—उनके द्वारा समाज में स्त्री को निम्न स्थान दिया जाना था।

3. **रूसो का विचार : Rousseau's View**—रूसो प्रकृतिवादी दार्शनिक था। अतः उसे यह विश्वास नहीं था कि आधुनिक सभ्यता में परिवार बच्चों को शिक्षा देने का कार्य कर सकता है। उसने स्वयं पिता के रूप में इमाइल (*Emile*) को समाज से दूर प्रकृति की गोद में शिक्षा दी।

4. **पेस्टालॉजी का विचार : Pestalozzi's View**—पेस्टालॉजी बालक के प्रशिक्षण के लिए घर को अनिवार्य मानता था। उसने माता को सब शिक्षा का वास्तविक स्रोत बताया। उसका कहना था :—**"घर, शिक्षा का सर्वोत्तम स्थान और बालक का प्रथम विद्यालय है।"**

"Home is the best place for education and the first school of the child."—**Pestalozzi.**

5. **फ्रॉबेल का विचार : Froebel's View**—फ्रॉबेल, पेस्टालॉजी से सहमत था। उसका विचार था :—**"मातायें आदर्श अध्यापिकाएँ हैं, और घर द्वारा दी जाने वाली अनौपचारिक शिक्षा सबसे अधिक प्रभावशाली और स्वाभाविक है।"**

"Mothers are the ideal teachers, and the *informal* education given by home is *most effective* and natural "—**Froebel.**

6. **मॉन्टेसरी का विचार : Montessori's View** - मॉन्टेसरी ने छोटे बच्चों की शिक्षा के लिए घर के वातावरण और परिस्थिति को अति आवश्यक तत्त्व माना। इसीलिए, उसने अपने विद्यालय को "बचपन का घर" (House of Childhood) के नाम से पुकारा। इसमें ये दोनों तत्त्व अति महत्त्वपूर्ण कार्य करते थे।

7 **रेमॉन्ट का विचार : Raymont's View**—रेमॉन्ट ने सामान्य परिस्थितियों में घर को अति महत्त्वपूर्ण स्थान बताते हुए लिखा है :—**"घर ही वह स्थान है, जहाँ वे महान् गुण उत्पन्न होते हैं, जिनकी सामान्य विशेषता 'सहानुभूति' है। घर में ही घनिष्ठ प्रेम की भावनाओं का विकास होता है। यहीं बालक उदारता और अनुदारता, नि.स्वार्थ और स्वार्थ, न्याय और अन्याय, सत्य और असत्य, परिश्रम और आलस्य में अन्तर सीखता है। यहीं उसमें इनमें से कुछ की आदत सबसे पहले पड़ती है।"**

8. **हैण्डरसन का विचार : *Henderson's View*—हैण्डरसन का विचार है :** - "बालक की शिक्षा उसके घर में प्रारम्भ होती है। जब वह अन्य व्यक्तियों के

कार्यों को देखता है, उनका अनुकरण करता है, और उनमें भाग लेता है, तब वह अनौपचारिक रूप से शिक्षित किया जाता है।"

"A child's education begins in his home. As he watches, imitates, participates in the activities of living, he is being informally educated."—**Henderson.**

घर या परिवार के शैक्षिक प्रभाव या शैक्षणिक कार्य
Educative Influence or Educational Functions of Home or Family

बालक के जीवन में परिवार के कार्य के बारे में काफी लिखा जा चुका है। उस पर घर का जो प्रभाव पड़ता है- वह लाभप्रद भी हो सकता है और हानिप्रद भी। हम यहाँ इन बातों का विस्तृत अध्ययन करेंगे; यथा :—

1. सीखने का प्रथम स्थान : Primary Place of Learning—घर या परिवार प्रथम स्थान है, जहाँ बालक बहुत-सी बातें सीखता है। रेमॉण्ट (Raymont) के शब्दों में :—**"सामान्य रूप से घर ही वह स्थान है, जहाँ बालक अपनी माँ से चलना, बोलना, मैं और तुम में अन्तर करना, और अपने चारो ओर की वस्तुओं के सरलतम गुणों को सीखता है।"**

2. नैतिक व सामाजिक प्रशिक्षण : Moral & Social Training—परिवार नैतिक और सामाजिक प्रशिक्षण का सबसे मुख्य स्थान है। पहले बच्चा, भाषा सीखता है। फिर वह भाषा के माध्यम से नैतिक और सामाजिक नियमों को सीखता है। वह परिवार के ढगो, व्यवहारो और परम्पराओं को अपनाता है। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है, वैसे-वैसे वह अधिक उत्तम, नैतिक और सामाजिक प्रशिक्षण प्राप्त करता है।

3. दूसरों से अनुकूलन : Adjustment with Others—बालक घर में ही दूसरो से अनुकूलन करने का पहला पाठ सीखता है। वह परिवार के विभिन्न सदस्यों को एक-दूसरे से मेल रखते हुए देखता है। इसका बालक पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है और वह भी वैसा ही करने का प्रयत्न करता है।

4. सामाजिक व्यवहार का आधार : Basis of Social Behaviour—बालक परिवार के सामाजिक जीवन में जो अनुभव प्राप्त करता है, वही भविष्य मे उसके सामाजिक व्यवहार का आधार होता है। बचपन ही वह संघर्ष या सहयोग, भक्ति या भक्तिहीनता के प्रति कुछ प्रवृत्तियो को अपनाता है। जब वह समाज में अपना स्थान प्राप्त करता है, तब वह उन्हे अपने कार्यों द्वारा व्यक्त करता है।

5. मूल्यो व आदर्शों का विकास : Culitivation of Values & Ideals—(घर का प्रभाव बालक मे कुछ मूल्यो और आदर्शों का विकास करता है।) वह अपने पिता से न्याय, माता से प्रेम और भाई-बहिनो से भ्रातृत्व-भावना सीखता है। घर में ही बालक —सहायता, सहानुभूति, क्षमा, सच्चाई, परिश्रम और उदारता के आदर्शों

को देखता है। वह इन मूल्यों और आदर्शों में से कुछ को अपने भावी जीवन में अपनाता है।

6. आदतों का निर्माण : Formation of Habits—*बालक में अच्छी या* बुरी आदतें घर में ही पड़ती हैं। वह अपने परिवार के सदस्यों की कुछ आदतों को देखता है और अनजाने ही उनको ग्रहण कर लेता है। बुरी आदतें छूत के रोगों के समान होती हैं। अतः यह आवश्यक है कि माता-पिता अच्छी आदतों के उदाहरण ही अपने बच्चों के सामने रखें।

7. पसन्दों व रुचियों का विकास : Development of Tastes & Interests—*परिवार में ही बालक की पसन्दों और रुचियों का विकास होता है।* यदि वह अपने घर में सदैव सुन्दर और आकर्षक वस्तुएँ देखता है, तो उसे निश्चित रूप से ऐसी वस्तुओं में रुचि होगी। वह उन वस्तुओं को पसन्द या नापसन्द करने लगता है, जिन्हें परिवार में पसन्द या नापसन्द किया जाता है।

8. मानसिक व भावात्मक प्रवृत्ति का निर्माण : Formation of Mental & Emotional Disposition—घर का वातावरण बालक में मानसिक और भावात्मक प्रवृत्ति का निर्माण करता है; उदाहरणार्थ—जिस बालक का पालन-पोषण संगीतकारों के परिवार में होता है, उसमें संगीत के प्रति मानसिक और भावात्मक प्रवृत्ति का पाया जाना आवश्यक है।

9. वैयक्तिकता का विकास : Development of Individuality—बालक की वैयक्तिकता का विकास घर में होता है। उसके प्रति उसकी माँ का दृष्टिकोण पूर्ण रूप से वैयक्तिक होता है। वह चाहती है कि उसका पुत्र सब बातों में अन्य व्यक्तियों से श्रेष्ठ हो। वह और परिवार के अन्य सदस्य उसकी वैयक्तिकता का विश्लेषण करते हैं और उसे विकसित करने के लिए सभी प्रकार के अवसर देते हैं।

10. प्रेम की शिक्षा : Education in Love—माँ केवल बालक से प्रेम ही नहीं करती है, बल्कि उसे प्रेम की शिक्षा भी देती है। माँ के अलावा परिवार के दूसरे सदस्य भी बालक को प्रेम की शिक्षा देते हैं। परिणामतः बालक—परिवार, समाज, देश और विश्व से प्रेम करने लगता है। राम और शर्मा (Ram & Sharma) का कथन है :—"माता-पिता द्वारा बच्चे को दिया जाने वाला आराम, निःस्वार्थ प्रेम का सर्वोत्तम जीवित उदाहरण प्रस्तुत करता है।

11. निःस्वार्थता की शिक्षा : Education in Selflessness—व्यक्ति सामाजिक प्राणी है। इसीलिए, उसे निःस्वार्थता की शिक्षा मिलना बहुत आवश्यक है। बालक अपने माता-पिता की निःस्वार्थता को प्रति क्षण देखता है। वे हर मुसीबत उठाकर बच्चे को अधिक से अधिक आराम देने का प्रयत्न करते हैं। परिणाम यह होता है कि बालक भी उनके समान निःस्वार्थ बनने का प्रयास करता है। बोगार्डस (E. S. Bogardus) ने लिखा है :—"परिवार का आधार—आत्म-बलिदान का

सिद्धान्त है। आत्म-बलिदान के ही कारण इसकी महान् शक्ति है, और इसीलिए यह बालकों के सामाजिक प्रशिक्षण का केन्द्र है।"

12. सहयोग की शिक्षा : Education in Co-operation—जब बालक बड़ा होकर समझदार बनता है, तब वह अपने परिवार के सदस्यों को एक-दूसरे को सहयोग देते हुए देखता है। माँ घर का काम-काज करती है, पिता धन कमा कर लाता है, बड़े भाई-बहिन किसी-न-किसी काम में माता-पिता का हाथ बँटाते है। बालक इन सबसे सहयोग की शिक्षा ग्रहण करता है। बोसांके ने ठीक ही लिखा है :—"**परिवार ही वह स्थान है, जहाँ प्रत्येक नई पीढ़ी नागरिकता का यह नया पाठ सीखती है कि कोई भी मनुष्य बिना सहयोग के जीवित नहीं रह सकता है।**"

"Family is a place through which each new generation learns a new lesson of citizenship that no man can exist without co-operation."—**Bosanquet.**

13. परोपकार की शिक्षा : Education in Philanthropy—हर बड़े परिवार में कोई-न-कोई व्यक्ति ऐसा अवश्य होता है जो रोगी या वृद्ध होने के कारण दूसरों पर निर्भर रहता है। उसकी देखरेख घर के दूसरे लोग करते है। बालक परोपकार के इन कार्यों को देखता है। फलत. उसमें परोपकार की भावना जाग्रत होती है। इस सम्बन्ध में शॉ (Alfred J. Shaw) ने लिखा है :—"**परोपकार की भावना का विकास सबसे पहले परिवार में होता है—जहाँ बालक परिवार के रोगी, वृद्ध और छोटे सदस्यों की सहायता और सेवा को न केवल देखते हैं, वरन् उन्हे अक्सर ऐसा करना भी पड़ता है।**"

14. सहिष्णुता की शिक्षा : Education in Tolerance—हर परिवार में हर तरह के व्यक्ति होते है। किसी को बहुत जल्दी क्रोध आ जाता है। कोई भावुक होता है, और कोई उग्र स्वभाव का। इन सब के कारण परिवार का वातावरण दूषित हो सकता है और सभी सदस्य दु.खी हो सकते हैं। परिवार मे कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं, जो शान्त स्वभाव के होते है। इनमें सहन-शक्ति या सहिष्णुता भी होती है। इनके प्रयास के फलस्वरूप परिवार मे शान्ति बनी रहती है। समझदार बालक सहिष्णुता के इस पाठ को सीखता है।

15. आज्ञा-पालन व अनुशासन की शिक्षा : Education in Obedience & Discipilne—हर परिवार पर किसी-न-किसी व्यक्ति का पूर्ण अधिकार होता है, चाहे वह पिता हो या माता या कोई अन्य सदस्य। उसकी आज्ञा परिवार के प्रत्येक सदस्य को माननी पड़ती है। अतः बालक भी आज्ञा-पालन और अनुशासन के गुणों को ग्रहण करता है। कॉम्टे का कथन है :—"**आज्ञा-पालन और शासन—दोनों रूपों में पारिवारिक जीवन—सामाजिक जीवन का सदैव शाश्वत विद्यालय रहेगा।**"

"Family-life will ever remain the eternal school of social life as regards both obedience and government."—**Auguste Comte.**

16. कर्त्तव्य-पालन की शिक्षा : Education for Performance of Duty—परिवार में सभी बड़े सदस्य अपने कर्त्तव्यों का पालन करते है । माँ गृहस्थी का काम करना और अपने बच्चों को सुखी रखना—अपना कर्त्तव्य समझती है । पिता हर प्रकार उनकी उचित आवश्यकताओं को पूर्ण करना—अपना परम कर्त्तव्य समझता है । बड़े भाई-बहिन अपने से छोटों के प्रति अपने कुछ कर्त्तव्य समझते है और उनको करते हैं । बालक परिवार के सब सदस्यों में कर्त्तव्य-पालन की भावना को देखता और सीखता है ।

17. व्यावहारिक शिक्षा : Practical Education—बालक को परिवार में विभिन्न प्रकार की व्यावहारिक शिक्षा मिलती है; जैसे—उसे बाहर से आने वाले व्यक्तियों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए ? अतिथियों का सत्कार किस प्रकार करना चाहिए ? किस प्रकार उठना, बैठना और खड़े होना चाहिए ?—आदि । इस प्रकार की व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त करके बालक वास्तविक मनुष्य मे बदल जाता है ।

घर को शिक्षा का प्रभावशाली साधन बनाने के उपाय
Measures to Make the Home an Effective Agency of Education

घर को—विशेषतः भारतीय घर को—शिक्षा का प्रभावशाली साधन बनाने के लिए अग्रलिखित उपायों को अपनाया जा सकता है :—

(1) पैतृक प्रभाव : Hereditary Influences—बालक अपने माता-पिता से कुछ क्षमतायें और योग्यतायें प्राप्त करता है । अधिकांश भारतीय माता-पिता निरक्षर होने के कारण शिक्षित माता-पिता की क्षमताओं और योग्यताओं का दावा नही कर सकते है। अतः घर को शिक्षा का प्रभावशाली साधन बनाने के लिए यह आवश्यक है कि भारतीय परिवारों से निरक्षरता को दूर किया जाय । माता-पिता को एक निश्चित स्तर तक शिक्षा दी जाय । साथ ही उन्हें पारिवारिक सदस्यता मे प्रशिक्षण दिया जाय ।

थॉमस व लैंग (Thomas & Lang) के अनुसार, इस प्रशिक्षण का आधार निम्नलिखित बातें होनी चाहिए :—

1. पैतृकता के नियम (Laws of Heredity)
2. संतति-निग्रह के साधन (Means of Birth-Control)
3. पैतृक दोषों को रोकने की विधियाँ (Methods of Checking the Hereditary Defects)
4. प्रेम और प्रजनन का महत्त्व (Significance of Love & Eugenics)
5. बालक के विकास, स्वास्थ्य, रुचियों, धारणाओं आदि की शिक्षा

(Education for Child's Development, Health, Interests, Attitudes, etc.)

6. घरेलू मामलो की देखभाल (Management of Domestic Affairs)
7. पारिवारिक झगड़ों के कारण (Causes of Family Disruptions)
8. सहयोगी लोकतन्त्रीय आदर्श (Co-operative Democratic Ideal)

(2) भौतिक वातावरण सम्बन्धी प्रभाव : Physical Environmental nfluences—सामान्य भारतीय घर के भौतिक वातावरण-सम्बन्धी प्रभाव को स्वस्थ ाही कहा जा सकता है। एक साधारण मनुष्य के घर की स्थिति, उसका पड़ोस, उसके कमरे, उसका फर्नीचर आदि बहुत ही बुरा दृश्य प्रस्तुत करते हैं। वे बालक के वास्थ्य और विकास के लिए तनिक भी उपयुक्त नहीं है।

अतः भारतीय घरो के भौतिक वातावरण में परिवर्तन करना अति आवश्यक । जब वातावरण से अवाछनीय बातो को निकाल दिया जायगा, तभी बालको को पने नैतिक और मानसिक विकास के लिए उचित वातावरण मिलेगा।

(3) मानसिक वातावरण-सम्बन्धी प्रभाव : Intellectual Environmental nfluences—यह कहना अनुचित न होगा कि भारत में ऐसे घर बहुत ही कम है, हाँ बालकों को अपनी बुद्धि के विकास के लिए उपयुक्त मानसिक वातावरण मिलता । इसके दो प्रमुख कारण है : (i) अभिभावको की निरक्षरता, और (ii) निर्धनता। तः वे अपने बच्चों के लिए उपयुक्त पुस्तकों, सचित्र और साप्ताहिक पत्रिकाओं, माचार पत्रों आदि की बात सोचते ही नही है।

इस स्थिति में सरकार का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह स्थान-स्थान पर स्तकालय और वाचनालय खोले। ये पुस्तकालय और वाचनालय प्रत्येक घर में स्तकों और पत्रिकाओं को क्रम से भेजने का प्रबन्ध करे। ऐसा किए बिना बालक पने घरो मे उपयुक्त मानसिक वातावरण के प्रभावों से वंचित रहेंगे।

(4) सामाजिक वातावरण-सम्बन्धी प्रभाव : Social Environmental nfluences—आमतौर पर भारत मे ग्रामीण और शहरी—दोनों ही क्षेत्रो में सामाजिक वातावरण-सम्बन्धी प्रभाव बहुत ही अस्वस्थ है। क्रो व क्रो (Crow & Crow) अनुसार :—"ग्रामीण क्षेत्रों में बालक मानवीय-सम्बन्धों की प्रारम्भिक शिक्षा के ाए पूर्ण रूप से अपने परिवार पर निर्भर रहता है। फलस्वरूप, शहरी बालक की पेक्षा उस पर घर की परिस्थितियों और पारिवारिक दृष्टिकोणों का प्रभाव अधिक क्तिशाली होता है। आमतौर पर, शहरी बालक को अपने पड़ोस के बच्चों के कार्यों , भाग लेने और अपने समुदाय में वयस्कों के सामाजिक सम्बन्धों का अनुभव प्राप्त रने के कुछ अवसर मिलते हैं।"

ग्रामीण और शहरी—दोनों क्षेत्रों के बालको को एक निश्चित हानि का मना करना पड़ता है। ग्रामीण बालक पुराने ढंग का व्यवहार करने लगता है और

शहरी बालक पर उसके साथियों का बुरा प्रभाव पड़ता है। इन दोनों को दूर करने के लिए ऐसे वातावरण का निर्माण आवश्यक है, जो स्वस्थ हो और जिस पर पड़ोस का अच्छा प्रभाव हो तभी बालकों को सामाजिक वातावरण से अधिक से अधिक लाभ हो सकता है।

(5) **सौन्दर्यात्मक वातावरण-सम्बन्धी प्रभाव : Aesthetic Environmental Influences**—रूप का सौन्दर्य मस्तिष्क को प्रभावित करता है। अतः बालक के मस्तिष्क पर उचित प्रकार का प्रभाव डालने के लिए उसके घर में सुन्दर वस्तुओं से युक्त वातावरण होना चाहिए। प्लेटो का कथन है :—"यदि आप चाहते हैं कि बालक सुन्दर वस्तुओं की प्रशंसा और निर्माण करे, तो उसके चारों ओर सुन्दर वस्तुएँ प्रस्तुत कीजिये।"

"If you want the child to appreciate and create beautiful things, surround him with beautiful things."—**Plato.**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What measures, in your opinion, should be adopted to make the home an effective agency of education.

आपके मतानुसार परिवार को शिक्षा का प्रभावशाली साधन बनाने के लिए किन उपायों को प्रयोग में लाना चाहिए ?

2. Write a note on the educative influence of the home.

परिवार के शैक्षिक प्रभाव पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

3. Make a brief mention of the attitudes and behaviour patterns that are developed in the home and that effect society as a whole.

उन दृष्टिकोणों एवं व्यवहारों को बताइए, जिनका परिवार में विकास होता है और जो समाज को समग्र रूप में प्रभावित करते हैं।

4. Show specifically how a child may be affected by an emotionally disturbed parent.

बालक संवेगात्मक रूप से अव्यवस्थित अभिभावक द्वारा किस प्रकार प्रभावित हो सकता है ? स्पष्ट कीजिए।

5. "Neither the home nor the school can be successful without the co-operation of the other." Comment.

"एक-दूसरे के सहयोग के अभाव में न तो विद्यालय और न घर सफल हो सकता है।" विवेचना कीजिए।

10

चर्च या धर्म : सक्रिय व अनौपचारिक साधन

CHURCH OR RELIGION : ACTIVE & INFORMAL AGENCY

"धर्म और शिक्षा स्वाभाविक मित्र हैं। दोनों का सम्बन्ध प्राकृतिक और भौतिक जगत् के विरुद्ध आध्यात्मिकता से है। दोनों मनुष्य को उसके वातावरण के सम्पर्क से नहीं, वरन् दासता से मुक्ति दिलाने का प्रयत्न करते हैं।"

"Religion and education are natural allies. Both have to do with *spiritual* as over against the *physical* and *material*. Both seek to emancipate men, not from contact with his environment, but from slaving to it."—E. D. Burton.

धर्म का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Religion

(1) धर्म का अर्थ : Meaning of Religion—'Religion' शब्द की उत्पत्ति लेटिन के दो शब्दों से हुई है—'re' और 'legere'। इनका अर्थ है—'to bind back' अर्थात् 'सम्बन्ध स्थापित करना'। इस प्रकार, धर्म वह चीज है जो सम्बन्ध स्थापित करता है। पर प्रश्न उठता है कि यह सम्बन्ध किस-किस के बीच स्थापित होता है? इसको स्पष्ट करते हुए गिस्बर्ट (Gisbert) ने लिखा है :—"धर्म दोहरा सम्बन्ध स्थापित करता है : पहला—मनुष्य और ईश्वर के बीच; दूसरा—ईश्वर की सन्तान होने के कारण मनुष्य और मनुष्य के बीच।"

मनुष्य और मनुष्य में सम्बन्ध तभी स्थापित हो सकता है, जब हम अपनी पूरी शक्ति से दूसरों की भलाई करें। यह तभी सम्भव है, जब हम नम्र, पवित्र, दयालु और निष्पक्ष हों। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं—धर्म का सार—

नम्रता, पवित्रता, दया और निष्पक्षता है। (*The essence of religion lies in humility, piousness, mercy, and justice.*)

(2) धर्म के दो पक्ष : **Two Aspects of Religion**—धर्म के दो पक्ष हैं—'आन्तरिक' और 'वाह्य'। आन्तरिक पक्ष में ईश्वर से सम्बन्धित मनुष्य के विचार, विश्वास और भावनायें आती हैं। वाह्य पक्ष में प्रार्थनायें और धार्मिक रीति-रिवाज आते हैं, जिनके द्वारा धार्मिक भावना को व्यक्त किया जाता है। इस पक्ष से सम्बन्धित संस्था को चर्च के नाम से पुकारा जाता है।

(3) धर्म की परिभाषा . **Definition of Religion**—हम 'धर्म' के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए नीचे कुछ परिभाषायें दे रहे हैं :—

1. गिल्बर्ट :—"धर्म, ईश्वर या देवताओं के प्रति, जिनके ऊपर मनुष्य अपने को निर्भर अनुभव करता है, गतिशील विश्वास और आत्म-समर्पण है।"

"Religion is that dynamic belief in and submission to God or to gods on whom man feels dependent."—***Gisbert.***

2. डॉसन :—"जब कभी और जहाँ कहीं मनुष्य ऐसी वाह्य शक्तियों पर निर्भरता का अनुभव करता है, जो रहस्यपूर्ण और मनुष्य की शक्तियों से कहीं अधिक उच्चतम मानी जाती हैं, वहीं धर्म होता है।"

"Whenever and wherever man has a sense of dependence on external powers which are conceived as mysterious and higher than man's own, there is religion."—**Dawson.**

जीवन व समाज में धर्म का कार्य
Role of Religion in Life & Society

1933 में महात्मा गांधी ने मानव-जीवन में धर्म को एक महान् शक्ति बताया और कहा :—"धर्म वह शक्ति है, जो व्यक्ति को बड़े से बड़े संकट में ईमानदार बनाये रहती है। यह इस संसार में और दूसरे में भी व्यक्ति की आशा का अन्तिम सहारा है।"

"Religion is a force that keeps one true in the face of the greatest adversity. It is the sheet-anchor of one's hope in this world and even after."—**Mahatma Gandhi.**

यह बात निर्विवाद है कि धर्म, मस्तिष्क को शान्ति देता है, मनुष्य के हृदय में आशा का संचार करता है और उसे हर मुसीबत का सामना करने के लिए बल देता है। इस सम्बन्ध में जुंग (Jung) के अनुभव का उल्लेख करना असंगत न होगा। उसने वायना (Vienna) में 30 वर्ष तक मानसिक चिकित्सक के रूप में काम किया। इस अवधि में 35 से अधिक आयु के जो भी व्यक्ति उसके पास आये, उनके मानसिक रोग का कारण—उनके जीवन में धर्म का अभाव था, और उनका रोग तभी अच्छा हुआ, जब यह अभाव पूरा हुआ।

इसके अतिरिक्त, धर्म मानव-जीवन एवं समाज में और भी कार्य करता है। यह व्यक्ति के पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक जीवन को एक निश्चित दिशा देता है। मानव-जाति के सम्पूर्ण इतिहास पर धर्म की छाप लगी हुई है। इसकी पुष्टि करते हुए गिल्बर्ट ने लिखा है :—**"अमरीकी और फ्रांसीसी क्रान्तियों पर धर्म की छाप थी और 9 जनवरी, 1905 तक रूसी क्रान्ति पर भी प्रबल धार्मिक प्रभाव था। आधुनिक समय में महात्मा गांधी और आचार्य विनोबा भावे के नेतृत्व में होने वाले महान् सामाजिक और आर्थिक आन्दोलनों का आधार धर्म है।"**

सक्षेप में, हम कह सकते है कि धर्म एक सर्वव्यापक शक्ति है, जो व्यक्ति और समाज को अनेक प्रकार से प्रभावित करती है। हुमायूँ कबीर ने सत्य ही कहा है :—**"धर्म अनेक संघर्षों का अन्त करता है। यह उन शक्तियों का संचार है, जो कठिनाइयों और पराजयों को स्वीकार नहीं करती है।"**

"Religion resolves many of the conflicts. It releases energies that recognise neither difficulties, nor defeats."—**Humayun Kabir.**

शिक्षा में धर्म का स्थान
Place of Religion in Education

ह्वाइटहैड (Whitehead) ने धर्म को "शिक्षा का सार" माना है। धर्म के अभाव मे शिक्षा व्यक्ति को कठोर और स्वार्थी बना देती है। यदि सामाजिक प्रगति की योजना मे धर्म को स्थान नही दिया जाता है, तो उस शक्ति की अवहेलना की जाती है, जो सामाजिक सगठन को दृढ़ बनाती है।

वास्तविकता यह है कि 'धर्म' और 'शिक्षा' को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। कारण यह है कि शिक्षा और धर्म के लक्ष्य प्रायः एक ही है। सच्ची शिक्षा का आधार 'धर्म' है और शिक्षा को धर्म से अलग करके उसके क्षेत्र, उद्देश्य और लक्ष्य को संकुचित बना दिया जाता है। सच्ची शिक्षा—सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास करती है। धार्मिक आदर्श का भी सम्पूर्ण व्यक्तित्व से सम्बन्ध है। इस दृष्टिकोण से भी शिक्षा का आधार 'धर्म' होना चाहिए।

जार्ज डब्ल्यू० फ़िस्के ने लिखा है :—**"शिक्षा की अगणित परिभाषाओं में से कोई भी ऐसी नहीं है, जो धर्म की शिक्षा की सम्भावना और आवश्यकता को सीखने की महान् प्रक्रिया का अंग मानने का सुझाव न देती हो। भौतिकवादी दृष्टिकोण के सिवा, सभी दृष्टिकोणों से शिक्षा में धार्मिक पहलू और धार्मिक विषय-वस्तु दिखाई देती है। अतः शिक्षा को पूर्ण होने के लिए धार्मिक होना चाहिए।"** यदि हम ऐसा नहो करते है, तो हम शिक्षा को अधूरा छोड़ देते है।

"Among the innumerable definition of education, there is none which does not suggest the possibility and need of *teaching*

religion as a part of the great learning process. From any viewpoint except that of the materialist, education is seen to have a religious phase and content. That is, education must be religious to be complete."—George W. Fiske.

धर्म-निरपेक्ष राज्य में धार्मिक शिक्षा का स्थान

Place of Religious Education in a Secular State

भारत ऐसे धर्म-निरपेक्ष राज्य मे धार्मिक शिक्षा के बारे में दो प्रश्न उठते हैं—क्या हमारे विद्यालयों में धार्मिक-शिक्षा दी जानी चाहिए ? यदि हां, तो उसका रूप क्या होना चाहिए ? इन दोनों प्रश्नों पर मुदालियर और राधाकृष्णन् आयोगों ने अपने विचार व्यक्त किये है । हम इन्हे यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं :—

1. मुदालियर आयोग के विचार : Views of Mudaliar Commission—भारत धर्म-प्रधान देश है । अतः लोगों के द्वारा धार्मिक शिक्षा पर बल दिया जाना स्वाभाविक है । पर ऐसे लोग भी है, जो इसका विरोध दो कारणों से करते है :—(1) हमारे देश में विभिन्न प्रकार के धर्म माने जाते है; (2) संविधान द्वारा भारत को धर्म-निरपेक्ष राज्य घोषित कर दिया गया है । अतः विद्यालयो में किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा नही दी जानी चाहिए ।

'आयोग' उक्त विचार से सहमत न होकर कहता है :—"क्योंकि भारत धर्म-निरपेक्ष राज्य है, इसलिए इसका अर्थ यह नहीं है कि राज्य में धर्म का कोई स्थान नहीं है । इसका अर्थ केवल यह है कि राज्य को किसी धर्म-विशेष को समर्थन, सहायता या स्वीकृति नहीं देनी चाहिए । यह बात लोगो के ऊपर छोड़ दी जानी चाहिए कि वे अपनी इच्छा, परम्परा, संस्कृति और पैतृक प्रभाव के अनुसार किसी भी धर्म को मानें ।"

इस प्रकार, धर्म पर अपने विचार व्यक्त करने के बाद 'आयोग' धार्मिक शिक्षा के बारे में इस निष्कर्ष पर पहुंचता है :—"संविधान के अनुसार विद्यालयों में धार्मिक शिक्षा नहीं दी जा सकती है । वे केवल ऐच्छिक आधार पर और विद्यालय की पढ़ाई के घण्टों के अलावा धार्मिक शिक्षा दे सकते हैं । ऐसी शिक्षा विशेष धर्म के बच्चों को हो, और अभिभावकों तथा विद्यालय-प्रबन्धकों की इच्छा से दी जानी चाहिए ।"

2. राधाकृष्णन् आयोग के विचार : Views of Radhakrishnan Commission—'आयोग' ने लिखा है कि हिन्दू और मुस्लिम-काल में धर्म का शिक्षण—शिक्षा का आवश्यक अंग था । इसको छात्रों के निजी और सामाजिक जीवन के विकास के लिए आवश्यक समझा जाता था । अंग्रेजों ने 'धार्मिक तटस्थता' की नीति को अपनाया । अतः उन्होने शिक्षा-पद्धति मे धार्मिक शिक्षा को कोई स्थान नही दिया । पर आज के भौतिकवादी युग में व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास के लिए धार्मिक शिक्षा को आवश्यक माना जाता है । यद्यपि भारत, धर्म-निरपेक्ष राज्य है, पर यह धर्म की उपेक्षा नही करता है । संविधान की 19वीं धारा सब लोगों को अपने धर्म को

स्वतन्त्रतापूर्वक मानने का अधिकार देती है। इन विचारों को व्यक्त करने के बाद, "आयोग" ने धार्मिक शिक्षा के बारे में अधोलिखित सुझाव दिये :—

1. सब शिक्षा-संस्थाओं को अपना काम कुछ मिनट के मौन ध्यान के बाद प्रारम्भ करना चाहिए।
2. बी० ए० के पहले वर्ष में बुद्ध, कन्फ्यूसियस, जोरस्टर, सुकरात, ईसा, शंकराचार्य, रामानुज, माधवाचार्य, मुहम्मद, कबीर नानक, गांधी आदि महान् धार्मिक नेताओं की जीवनियाँ पढ़ाई जानी चाहिए।
3. दूसरे वर्ष में संसार की धार्मिक पुस्तकों से कुछ मानवतावादी चरित्रों के आदर्श कार्यों का अध्ययन किया जाना चाहिए।
4. तीसरे वर्ष में धर्म के दर्शन की मुख्य समस्याओं का *अध्ययन किया* जाना चाहिए।

धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता व महत्त्व
Need & Importance of Religious Education

मनुष्य और समाज के जीवन में धार्मिक शिक्षा का स्थान सदैव महत्त्वपूर्ण रहा है। पर इस शिक्षा का आधार संकीर्ण धर्म न होकर, व्यापक धर्म होना चाहिए। कारण यह है कि संकीर्ण धर्म मानव में भेद उत्पन्न करता है और *समाज में नाना* प्रकार के संघर्षों को जन्म देता है। इसी विचार से **महात्मा गांधी** ने वर्धा-शिक्षा-योजना में धर्म को कोई स्थान नहीं दिया; और कहा :—**"हमने वर्धा-शिक्षा-योजना में धर्मों की शिक्षा को इसलिए स्थान नहीं दिया है, क्योंकि हमें विश्वास है कि आज-कल जिस प्रकार धर्मों की शिक्षा दी जाती है और उसका अनुसरण किया जाता है, उससे एकता के बजाय संघर्ष उत्पन्न होता है।"**

अतः धार्मिक शिक्षा, संकीर्ण धर्म पर आधारित न होकर, व्यापक धर्म पर आधारित होनी चाहिए। व्यापक धर्म पर आधारित शिक्षा की क्या *आवश्यकता है* और क्या महत्त्व है ?—इस पर हम नीचे की पंक्तियों में प्रकाश डाल रहे हैं :—

1. आज के भौतिक युग में मनुष्य सांसारिक सुख तो प्राप्त कर लेता है, पर उसे वास्तविक सुख और शान्ति नहीं मिलती है, वह इसको केवल धार्मिक शिक्षा के ही द्वारा प्राप्त कर सकता है।
2. मनुष्य धर्म का आदर करता है और धार्मिक सिद्धान्तों *का पालन* करता है। अतः धार्मिक शिक्षा के द्वारा विभिन्न प्रकार की *सामाजिक* बुराइयों को दूर किया जा सकता है।
3. भारत सदैव से धर्म-प्रधान देश रहा है। अतः भारतीय जीवन से धर्म को निकाल देना सर्वथा अनुचित है।
4. धार्मिक शिक्षा—व्यक्ति में सत्य, सदाचार, ईमानदारी आदि के उत्तम गुणों का विकास करती है।

5. धार्मिक शिक्षा—बालकों की मूल-प्रवृत्तियों का शोधन कर सकती है। उन्हें अच्छे सामाजिक प्राणी बनाने के लिए यह बहुत आवश्यक है।
6. धार्मिक शिक्षा "वसुधैव कुटुम्बकम्" का पाठ पढ़ाती है। अतः यदि सब देशों में व्यापक धार्मिक शिक्षा अनिवार्य कर दी जाय, तो सम्भवतः संसार में स्थायी शान्ति स्थापित हो जाय।
7. धार्मिक शिक्षा—मन की स्थिरता, इच्छा-शक्ति और एकाग्रता को विकसित करने में योग देती है।
8. धार्मिक शिक्षा—हमको सामाजिक और नैतिक मूल्यों का ज्ञान प्राप्त करने में सहायता देती है।
9. धार्मिक शिक्षा के द्वारा उचित आचरण के आदर्शों का विकास होता है।
10. धार्मिक शिक्षा—सुदृढ़ और सबल व्यक्तित्व की आधारशिला है।
11. धार्मिक शिक्षा के द्वारा सामाजिक नियंत्रण और सामाजिक एकता की उन्नति होती है।
12. धार्मिक शिक्षा संस्कृति का महत्त्वपूर्ण अग होने के कारण, संस्कृति की सुरक्षा और उन्नति में योग देती है।

उपर्युक्त के आधार पर हम कह सकते है कि मानव और समाज के जीवन में धर्म का स्थान अति महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि हम धन और भौतिकवाद में विश्वास करने लगे है, फिर भी हम धर्म और धार्मिक शिक्षा के बिना जीवन व्यतीत नही कर सकते है। अतः हमारे बालकों को धार्मिक शिक्षा दी जानी चाहिए, चाहे उसका रूप और ढंग कुछ भी हो।

रेमॉण्ट ने उचित ही लिखा है :—"हम अपने आधुनिक दृष्टिकोण से चर्च को केवल व्यक्ति के सामाजिक वातावरण का अंग समझते हैं, पर शिक्षक द्वारा उसकी किसी प्रकार भी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। विभिन्न चर्चों के बारे में हमारा विचार चाहे कुछ भी हो, पर हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि वे राष्ट्र के शिक्षक हैं।"

"From our present point of view we see church simply as one part of individual's social environment, by no means to be ignored by the educator. Whatever view we may hold about the authority of the various churches, we are bound to recognize them as educators of the nation."—**Raymont.**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. "Religion is the sheet-anchor of one's hope in this world and even after." Elucidate and discuss the role of religion in life and society.

"धर्म इस संसार मे तथा दूसरे में भी, व्यक्ति की आशा का अन्तिम सहारा है।" स्पष्ट कीजिए तथा समाज और जीवन में धर्म के कार्य की विवेचना कीजिए।

2. What, in your opinion, should be the place of religion in education ?

आपके मतानुसार शिक्षा में धर्म का क्या स्थान होना चाहिए ?

3. "In theory, religion and education may be separated from each other, but in reality such a thought is impossible." Do you agree with this statement ? If so, why ?

"सिद्धान्ततः धर्म तथा शिक्षा को एक-दूसरे से अलग किया जा सकता है, परन्तु व्यावहारिक रूप में ऐसा विचार असम्भव है।" क्या आप इस कथन से सहमत है ? यदि हाँ, तो क्यों ?

4. What place should be assigned to religious education in a secular state ?

धर्म-निरपेक्ष राज्य मे धार्मिक शिक्षा का क्या स्थान होना चाहिए ?

5. Express your views about the need and importance of religious education.

धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता एवं उसके महत्त्व पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

6. "Absence of moral and religious education is the main cause of the present day student unrest." How far do you agree with the above view ? What should be the limit and nature of moral and religious education in educational institution ?

"वर्तमान विद्यार्थी अशान्ति का प्रमुख कारण शिक्षा-संस्थाओं में नैतिक और धार्मिक शिक्षा का अभाव है।" आप इस उक्ति से कहाँ तक सहमत है ? शिक्षा-संस्थाओं मे नैतिक तथा धार्मिक शिक्षा की क्या सीमा तथा स्वरूप होना चाहिए ?

11

समुदाय : सक्रिय व अनौपचारिक साधन
COMMUNITY : ACTIVE & INFORMAL AGENCY

"कोई समुदाय व्यर्थ में किसी बात की आशा नहीं कर सकता है। यदि वह चाहता है कि उसके तरुण व्यक्ति अपने समुदाय की भली-भाँति सेवा करें, तो उसे उन सब शैक्षिक साधनों को जुटाना चाहिए, जिनकी तरुण व्यक्तियों को व्यक्तिगत और सामूहिक रूप में आवश्यकता है।"

"A community cannot expect something for nothing. If it wishes its young people to serve their community well, it must provide whatever educational advantages are needed by the young people."—Crow & Crow.

समुदाय का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Community

(1) समुदाय का अर्थ : Meaning of Community—'समुदाय' का अंग्रेजी रूपान्तर 'Community' दो शब्दों से मिलकर बना है—'Com' और 'Munis'। 'Com' का अर्थ है—'Together' अर्थात् 'एक साथ', और 'Munis' का अर्थ है—'To serve' अर्थात् 'सेवा करना'। इस प्रकार 'Community' शब्द का अर्थ है—'To serve together' अर्थात् 'एक साथ सेवा करना।' दूसरे शब्दों में, हम कह सकते है कि 'समुदाय' व्यक्तियों का एक ऐसा समूह है, जो मिलकर एक साथ रहते हैं और एक-दूसरे की सेवा-सहायता करते हुए अपने अधिकारों का उपभोग करते है।

समुदाय, मनुष्यों का 'स्थायी और स्थानीय' समूह है, जिसके अनेक प्रकार के और समान हित होते है। जहाँ कहीं भी व्यक्तियों का एक समूह सामान्य जीवन मे भाग लेता है, वहीं हम उसे 'समुदाय' कहते है। जहाँ कहीं भी व्यक्ति निवास करते

है, वहीं वे कुछ सामान्य विशेषताओं को विकसित करते है। उनके ढङ्ग, व्यवहार, परम्पराएँ, बोलने की विधि इत्यादि एक से हो जाते हैं। ये सभी बातें सामान्य जीवन की प्रभावपूर्ण प्रतीक है। वास्तव में, 'समुदाय' अति विस्तृत और व्यापक शब्द है और इसमें विभिन्न प्रकार के सामाजिक समूहों का समावेश हो जाता है; उदाहरणार्थ—परिवार, धार्मिक संघ, जाति, उपजाति, पड़ोस, नगर एवं राष्ट्र—समुदाय के विभिन्न रूप हैं।

सभ्यता की प्रगति और इसके फलस्वरूप संसार के लोगो की एक-दूसरे पर अधिक निर्भरता हो जाने के कारण समुदाय की धारणा विस्तृत हो गई है। धीरे-धीरे अतीत के छोटे और आत्म-निर्भर ग्रामीण समुदाय का स्थान विश्व-समुदाय लेता जा रहा है। इस बड़े समुदाय के लोग समान आदर्शों, रुचियों और आवागमन तथा सन्देश के तेज साधनों के कारण अधिक ही अधिक पास आते जा रहे हैं।

हम अब भी अपने नगर या क़स्बे को अपना स्थानीय समुदाय कहते है। पर हमारे सम्बन्ध अपने देश और विदेश के लोगों से भी होते है। फलस्वरूप, हम राज्य समुदाय, राष्ट्रीय समुदाय, और अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के भी सदस्य होते हैं। इस प्रकार, समुदाय में एक वर्गमील से कम का क्षेत्र भी हो सकता है या इसका घेरा विश्व भी हो सकता है। यह क्षेत्र या घेरा इस बात पर निर्भर करता है कि इसके सदस्यो में आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक समानतायें हो।

(2) समुदाय की परिभाषा : Definition of Community—हम समुदाय के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषायें नीचे दे रहे हैं :—

1. गिंसबर्ग :—"समुदाय सामान्य जीवन व्यतीत करने वाले सामाजिक प्राणियों का एक समूह समझा जाता है, जिसमें सब प्रकार के असीमित, विभिन्न और जटिल सम्बन्ध होते हैं जो उस सामान्य जीवन के फलस्वरूप होते हैं, या जो उसका निर्माण करते हैं।"

"By community is to be understood a group of social beings living a common life including all the infinite variety and complexity of relations which result from common life or constitute it."

—*Ginsberg.*

2. मेकाइवर :—"जब कभी एक छोटे या बड़े समूह के सदस्य इस प्रकार रहते हैं कि वे इस अथवा उस विशिष्ट उद्देश्य में भाग नहीं लेते है, वरन् जीवन की समस्त भौतिक दशाओं में भाग लेते हैं, तब हम ऐसे समूह को समुदाय कहते है।"

"Whenever the members of any group, small or large live together in such a way that they share, not this or that particular

interest, but the basic conditions of a common life, we call the group a community."—*MacIver.*

बालक की शिक्षा में समुदाय का महत्त्व
Importance of Community in Child's Education

विद्यालय या परिवार के समान समुदाय भी व्यक्ति के व्यवहार में इस प्रकार रूपान्तर करता है, जिससे वह उस समूह के कार्यों में सक्रिय भाग ले सके, जिसका कि वह सदस्य है। हम प्रायः यह सुनते हैं कि बालक वैसा ही बनता है, जैसा कि समुदाय के बड़े लोग उसको बनाते हैं। *सत्य यह है कि समुदाय—बालक के व्यक्तित्व* के विकास पर बहुत प्रभाव डालता है। वास्तव में, समुदाय बालक की शिक्षा को प्रारम्भ से ही प्रभावित करता है।

बालक का विकास न केवल घर के संकुचित वातावरण में, वरन् समुदाय के विस्तृत वातावरण में भी होता है। समुदाय अप्रत्यक्ष किन्तु प्रभावपूर्ण ढंग से बालक की आदतों, विचारों और स्वभाव को मोड़ता है। उसकी संस्कृति, रहन-सहन, बोल-चाल आदि अनेक बातों पर उसके समुदाय की छाप होती है। समुदाय का वातावरण बालक की अनुकरण करने की जन्मजात प्रवृत्ति पर विशेष प्रभाव डालता है। वह उन व्यक्तियों के ढंगों का अनुकरण करता है, जिनको वह देखता है; उदाहरणार्थ—यदि वह संगीतज्ञों के साथ रहता है, तो वह उनकी संगीत-कुशलता से प्रभावित होता है और उसमें संगीत के लिए रुचि उत्पन्न होती है।

बच्चे अपने समुदाय के ढंगों को अपनाते हैं। इसीलिए, उनकी बोलचाल, दृष्टिकोण और व्यवहार में अन्तर होता है। अतः यह कहना अनुचित न होगा कि परिवार और विद्यालय के समान समुदाय भी शिक्षा का महत्त्वपूर्ण साधन है। विलियम ईगर का कथन है :—*"क्योंकि मनुष्य स्वभाव से सामाजिक प्राणी है,* इसलिए उसने वर्षों के अनुभव से सीख लिया है कि व्यक्तित्व और सामूहिक क्रियाओं का विकास समुदाय द्वारा ही सर्वोत्तम रूप में किया जा सकता है।"

"*Since man by nature is a social being, he has learnt through the years that the personality as well as group activities can be best developed through community.*"—*William A. Yeager.*

बालक पर समुदाय के शैक्षिक प्रभाव
Educative Influences of Community on Child

1. सामाजिक प्रभाव : Social Influence—बालक पर समुदाय का सीधा सामाजिक प्रभाव पड़ता है। समुदाय ही उसकी सभ्यता और सामाजिक प्रगति का मुख्य आधार है। बालक अनौपचारिक रूप से यह देखता है कि सभी व्यक्ति अपने समुदाय की उन्नति के लिए कार्य करते हैं; और यदि उनमें से कुछ ऐसा नहीं करते

है, तो समुदाय की प्रगति रुक जाती है। समुदाय में समय-समय पर मेले, उत्सव, सामाजिक सम्मेलन, धार्मिक कार्य आदि होते हैं। बालक इनमें भाग लेकर सामाजिक जीवन और सामाजिक सेवा का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करता है।

समुदाय में रहकर ही बालक, अधिकार और स्वतन्त्रता का वास्तविक अर्थ समझता है। वह जान जाता है कि अधिकारों के साथ कर्त्तव्य और स्वतन्त्रता के साथ अनुशासन आवश्यक है। संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि समुदाय, व्यक्ति में नागरिक गुणों का विकास करता है और उनमें सेवा, त्याग और सहयोग की भावनायें उत्पन्न करता है।

2. राजनीतिक प्रभाव : Political Influence—समुदाय का राजनीतिक प्रभाव बालक के राजनीतिक विचारों को निश्चित रूप देता है; उदाहरणार्थ—अमरीका के निवासी लोकतन्त्रीय विचारों और आदर्शों का समर्थन करते हैं, और रूस के लोग साम्यवादी विचारों और सिद्धान्तों को पसन्द करते हैं। दोनों देशों के निवासी एक-दूसरे के विचारों के घोर विरोधी हैं।

एक-दूसरे प्रकार के राजनीतिक प्रभाव के बारे में क्रो व क्रो (Crow & Crow) ने लिखा है—**"समुदाय की राजनीतिक विचारधारा उस सीमा तक प्रतिबिम्बित होती है, जहाँ तक उसके सब सदस्यों को शैक्षिक अवसर प्रदान किये जाते हैं और उसके राजनीतिक नेता उसके नागरिकों को शैक्षिक प्रगति के लिए उत्तरदायित्व ग्रहण करते हैं।"**

3. आर्थिक प्रभाव : Economic Influence—समुदाय का आर्थिक प्रभाव उद्योगों और व्यवसायों में दिखाई देता है। बालक अपने समुदाय के व्यक्तियों को विभिन्न व्यवसायों में लगा हुआ देखता है। फलतः उनमें से किसी में उसकी रुचि उत्पन्न होती है और वह उसे सीखने के लिए उत्सुक हो जाता है। कभी-कभी वह अपने माता-पिता या सम्बन्धियों को उनके व्यवसाय में सहायता देता है।

आज भी ग्रामीण समुदाय में यह बात देखी जाती है। वहाँ बालक कृषि, बढ़ईगीरी या समुदाय के लिए और कोई हितकर कार्य करता है। यदि वह कोई ऐसा व्यवसाय करता है, जो समुदाय नहीं चाहता है, तो उसे समुदाय से निकाल दिया जाता है। वह उसका सदस्य फिर तभी हो पाता है, जब वह उस व्यवसाय को छोड़ देता है और समुदाय द्वारा दिये गये दण्ड को स्वीकार करता है। आज भी भारतीय समाज में यह बात पाई जाती है। इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि समुदाय बालक को व्यवसाय चुनने में प्रभावित करता है।

4. सांस्कृतिक प्रभाव : Cultural Influence—प्रत्येक समुदाय की अपनी संस्कृति होती है। वह अपने सदस्यों पर उसकी छाप लगाने और उनको उससे पूर्ण रूप से परिचित कराने का प्रयास करता है। बालक अपने से बड़े लोगों को अपनी संस्कृति का सम्मान और संरक्षण करते हुए देखता है। अतः वह स्वयं भी वैसा ही

करने लगता है। हम व्यक्तियों की भाषा पर समुदाय के प्रभाव को अच्छी तरह जानते है। बालक समुदाय में अनजाने ही बोलचाल, भाषा और शब्दावली का ज्ञान प्राप्त करता है। यही कारण है कि एक समुदाय के लोग दूसरे समुदाय के व्यक्तियो से बोलचाल, भाषा और उच्चारण में भिन्न होते है। आप इस अन्तर को ग्रामीण और शहरी समुदायों के बच्चों में सरलतापूर्वक देख सकते है।

जब बालक समुदाय के सामाजिक, सांस्कृतिक या धार्मिक उत्सवो को देखता है, तब वह उनका अनुसरण करने का प्रयत्न करता है। फलतः उसमें अपने समुदाय की संस्कृति और धर्म के लिए एक विशेष प्रकार की भावना का विकास होता है। अतः जब बालक पहली बार विद्यालय मे आता है, तब उसमें भाषा, धर्म और नैतिकता की कुछ विशेषतायें उसकी सस्कृति को बताती है।

5. साम्प्रदायिक प्रभाव : Communal Influence—समुदाय के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सास्कृतिक प्रभाव का शैक्षिक महत्त्व तो है ही, पर समुदाय का शैक्षिक प्रभाव भी कम महत्त्व नहीं रखता है। यह प्रभाव समुदाय के विद्यालयो द्वारा डाला जाता है। बहुत-से समुदाय अपनी शिक्षा-सस्थायें स्थापित करते है। इन सस्थाओं के अपने स्वय के लक्ष्य और उद्देश्य होते है। वे इनके अनुसार बालको को अपने समुदायों की सेवा और कल्याण के लिए प्रशिक्षित करते है।

पर साम्प्रदायिक स्कूल (Communal Schools) बड़ा घातक प्रभाव डालते है। वे बालकों मे संकुचित दृष्टिकोण और संकीर्ण साम्प्रदायिक भावना उत्पन्न करते है। इस प्रकार, वे विभिन्न समुदायों मे एक-दूसरे के लिए घृणा का बीज बोते है। अतः साम्प्रदायिक स्कूल देश के लिए अभिशाप है।

इस प्रकार, हम देखते है कि बालक के व्यक्तित्व पर समुदाय का शैक्षिक प्रभाव बहुत ही शक्तिशाली होता है। जब यह प्रभाव ठीक प्रकार का होगा, तभी बच्चो के दृष्टिकोण ठीक होंगे, अन्यथा नही।

शिक्षा में समुदाय का दायित्व
Responsibility of Community in Education

शिक्षा में समुदाय का क्या दायित्व है? इसके बारे में क्रो व क्रो (Crow & Crow) ने लिखा है :—**"समुदाय बिना कुछ किए किसी बात की आशा नहीं कर सकता है। यदि समुदाय चाहता है कि उसके नवयुवक उसकी अच्छी प्रकार सेवा करें तो उसे उन सब शैक्षिक लाभों को जुटाना चाहिए, जिनकी नवयुवकों को आवश्यकता है।"**

भारतीय समुदाय ने शिक्षा के प्रति अपना उत्तरदायित्व स्वीकार कर लिया है, फिर भी अभी इस दिशा में बहुत-कुछ किया जाना शेष है। इसके लिए अग्र-लिखित उपाय अपनाये जा सकते है :—

शिक्षा पर भारतीय समुदाय का प्रभाव
Influence of Indian Community on Education

शिक्षा पर भारतीय समुदाय का प्रभाव अप्रत्यक्ष है। हम शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर इस प्रभाव का वर्णन कर रहे है; यथा :—

(1) शिक्षा की सार्वभौमिक माँग : Universal Demand for Education—हुमायूँ कबीर के अनुसार :—भारत में शिक्षा की सार्वभौमिक माँग की गई है। कुछ देशों ने विद्यालयों में बालक की उपस्थिति अनिवार्य मानी है। भारत में ऐसी आवश्यकता का अनुभव नही किया गया है। यहाँ इस बात पर बल दिया गया है कि जो भी बच्चे पढ़ना चाहते हों, उनके लिए काफ़ी स्कूल हों।

(2) प्रारम्भिक व पूर्व-प्रारम्भिक शिक्षा का विकास : Development of Primary & Pre-Primary Education—प्रारम्भिक और पूर्व-प्रारम्भिक शिक्षा के विकास में समुदाय का बहुत हाथ रहा है। यद्यपि प्रारम्भिक शिक्षा का दायित्व सरकार पर है, फिर भी इसके विकास में ग़ैर-सरकारी संस्थाओं ने बहुत काम किया है। सरकार इस काम का पूरा भार धीरे-धीरे अपने ऊपर लेती जा रही है। पर पूर्व-प्रारम्भिक शिक्षा का भार और विकास अभी तक ग़ैर-सरकारी हाथों में ही है।

(3) माध्यमिक शिक्षा का विकास : Development of Secondary Education—माध्यमिक शिक्षा के विकास में समुदाय का प्रभाव बहुत महत्त्वपूर्ण रहा है। यह कहना उचित ही होगा कि देश में जितने भी मिडिल और सेकण्डरी स्कूल कार्य कर रहे हैं, उनमें से अधिकांश की स्थापना और सचालन का श्रेय समुदाय को है। इस प्रकार, माध्यमिक शिक्षा के विकास में समुदाय का प्रभाव शक्तिशाली रहा है।

(4) उच्च शिक्षा का विकास : Development of Higher Education—उच्च शिक्षा के विकास में भारतीय समुदाय ने बहुत कम योग दिया है। इसके दो कारण हैं :—(1) अंग्रेज़ों के समय मे विश्वविद्यालयों की स्थापना सरकार द्वारा की जाती थी; (2) उच्च शिक्षा, विशेष स्थानों और समुदायों की आवश्यकताओं को पूर्ण नही करती थी। अत. इसकी ओर जनता का ध्यान न जाना स्वाभाविक ही था।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Give a critical estimate of the educative influence of community.

समुदाय के शैक्षिक प्रभाव का मूल्यांकन कीजिए।

(1) शिक्षा पर नियन्त्रण : **Control on Education**—भारतीय नेता इस बात से सहमत हैं कि भारतीय विद्यालय अपने उद्देश्यों और विधियों मे लोकतन्त्रीय आदर्शों को अपनाएँ। अतः यह आवश्यक है कि समुदाय से आर्थिक सहायता प्राप्त करने वाले विद्यालय इन्हीं आदर्शों के आधार पर शिक्षा का कार्य करें। यह तभी हो सकता है, जब समुदाय के नेता विद्यालय के आधारभूत पाठ्यक्रमों और साधारण संगठन की रूपरेखा निश्चित करें।

(2) विद्यालयों पर नियन्त्रण : **Control on Schools**—समुदाय के जीवन और प्रगति पर शिक्षकों और विद्यालय-प्रबन्धकों का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। अतः समुदाय विद्यालय को अच्छी तरह चलाने के लिए ऐसे व्यक्तियो को नियुक्त करे, जो समुदाय के हित को ध्यान में रखकर विद्यालय का संचालन करने में कुशल हों। हावर्थ का कथन है :—"**विद्यालय, समाज के चरित्र का सुधार करने का साधन है। यह सुधार सामाजिक उन्नति की दिशा में है या नहीं, यह विद्यालय के संचालकों के विचारों और आदर्शों पर निर्भर रहता है।**"

"The school is an instrument for modifying the character of society. Whether this modification is in the direction of social improvement depends upon the ideas and ideals of those who handle the instrument."—**Howerth.**

(3) नागरिकों व विद्यालय-नेताओं में सहयोग : **Co-operation between Citizens and School Leaders**—समुदाय द्वारा विद्यालयों को आर्थिक सहायता देना और उन पर नियन्त्रण रखना ही काफी नहीं है। इसके साथ-साथ नागरिकों और विद्यालय-नेताओं में सहयोग होना भी आवश्यक है। क्रो व क्रो (Crow & Crow) का कथन है :—"**समुदाय के सब नागरिकों को बुद्धिमानी के साथ विद्यालय-नेताओं को—जिनको उन्होंने विशेष शैक्षिक उत्तरदायित्व दिए हैं, सहयोग देना चाहिए।**"

(4) शिक्षा के अनौपचारिक साधनों की व्यवस्था : **Provision of Informal Agencies of Education**—बालक की शिक्षा जितनी विद्यालय के अन्दर होती है, उतनी ही उसके बाहर होती है। अतः यह आवश्यक है कि समुदाय बालकों के लिए शिक्षा के अनौपचारिक साधनों की व्यवस्था करे। इस दृष्टिकोण से अजायबघरों, चित्र-शालाओं, पुस्तकालयों और संगीत तथा अभिनय-केन्द्रों की स्थापना की जानी चाहिए। इनके अतिरिक्त, समुदाय के द्वारा स्वास्थ्य-केन्द्रों और संगठनों तथा विभागों द्वारा शैक्षिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए। साथ ही, बालकों को विभिन्न प्रकार की पुस्तकों, पत्रिकाओं और समाचार-पत्रों को पढ़ने के अवसर दिये जाने चाहिए।

शिक्षा पर भारतीय समुदाय का प्रभाव
Influence of Indian Community on Education

शिक्षा पर भारतीय समुदाय का प्रभाव अप्रत्यक्ष है। हम शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर इस प्रभाव का वर्णन कर रहे है; यथा :—

(1) **शिक्षा की सार्वभौमिक माँग : Universal Demand for Education**—हुमायूँ कबीर के अनुसार :—भारत में शिक्षा की सार्वभौमिक माँग की गई है। कुछ देशों ने विद्यालयों में बालक की उपस्थिति अनिवार्य मानी है। भारत में ऐसी आवश्यकता का अनुभव नहीं किया गया है। यहाँ इस बात पर बल दिया गया है कि जो भी बच्चे पढ़ना चाहते हों, उनके लिए काफी स्कूल हों।

(2) **प्रारम्भिक व पूर्व-प्रारम्भिक शिक्षा का विकास : Development of Primary & Pre-Primary Education**—प्रारम्भिक और पूर्व-प्रारम्भिक शिक्षा के विकास में समुदाय का बहुत हाथ रहा है। यद्यपि प्रारम्भिक शिक्षा का दायित्व सरकार पर है, फिर भी इसके विकास में गैर-सरकारी सस्थाओं ने बहुत काम किया है। सरकार इस काम का पूरा भार धीरे-धीरे अपने ऊपर लेती जा रही है। पर पूर्व-प्रारम्भिक शिक्षा का भार और विकास अभी तक गैर-सरकारी हाथो में ही है।

(3) **माध्यमिक शिक्षा का विकास : Development of Secondary Education**—माध्यमिक शिक्षा के विकास में समुदाय का प्रभाव बहुत महत्त्वपूर्ण रहा है। यह कहना उचित ही होगा कि देश में जितने भी मिडिल और सेकण्डरी स्कूल कार्य कर रहे हैं, उनमें से अधिकाश की स्थापना और संचालन का श्रेय समुदाय को है। इस प्रकार, माध्यमिक शिक्षा के विकास में समुदाय का प्रभाव शक्तिशाली रहा है।

(4) **उच्च शिक्षा का विकास : Development of Higher Education**—उच्च शिक्षा के विकास मे भारतीय समुदाय ने बहुत कम योग दिया है। इसके दो कारण हैं :—(1) अग्रेजों के समय में विश्वविद्यालयों की स्थापना सरकार द्वारा की जाती थी; (2) उच्च शिक्षा, विशेष स्थानो और समुदायो की आवश्यकताओ को पूर्ण नही करती थी। अत. इसकी ओर जनता का ध्यान न जाना स्वाभाविक ही था।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Give a critical estimate of the educative influence of community.

समुदाय के शैक्षिक प्रभाव का मूल्याकन कीजिए।

2. Discuss the role and responsibility of community in education.

शिक्षा में समुदाय के दायित्व एवं कार्य की विवेचना कीजिए।

3. Give a critical estimate of the influence of Indian community on education.

शिक्षा पर भारतीय समाज के प्रभाव का आलोचनात्मक विवेचन कीजिए।

4. Evaluate the informal educational agencies of your community.

अपने समुदाय के शिक्षा के अनौपचारिक साधनों का मूल्यांकन कीजिए।

12

राज्य : सक्रिय व अनौपचारिक साधन
STATE : ACTIVE & INFORMAL AGENCY

"राज्य के संविधान का प्रभाव और शान्ति तथा युद्ध के समय अन्य राज्यों के साथ उसके सम्बन्धों का प्रभाव, शिक्षा के अन्य तीन साधनों—मानव-संस्थाओं, समाज और सभ्यता—की अपेक्षा व्यक्ति को शिक्षित करने में कहीं अधिक प्रभावशाली माना जाता है।"

"The influence of the constitution of the state, and of its transactions with other states in peace and war if known to be more powerful in educating the individual than any of the three phases of education—human institutions, society and civilization."

—William T. Harris.

राज्य का शिक्षा से सम्बन्ध
Relation of State to Education

राज्य का शिक्षा से सम्बन्ध होना चाहिए या नही ? यदि होना चाहिए, तो किस प्रकार का ? ये दोनों प्रश्न विवादपूर्ण है; उदाहरणार्थ—लोकतन्त्रो ने जन-शिक्षा का उत्साह से सरक्षण किया है, पर लोकतन्त्रीय सिद्धान्त में ऐसी कोई बात नही है, जो उसे जन-शिक्षा के लिए विद्यालय स्थापित करने के लिए बाध्य करे। इतिहास हमे बताता है कि अनेक लोकतन्त्रो ने शिक्षा की उपेक्षा की और कुलीनतत्रों तथा धनिक-तंत्रों ने ऐसा नही किया, जब कि वे ऐसा कर सकते थे। इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि राज्य और शिक्षा के सम्बन्ध की समस्या जटिल है।

इस समस्या का हल ढूँढने के लिए हमें विभिन्न विचारधाराओ का सहारा लेना पड़ेगा। ये विचारधारायें—व्यक्तिवाद, समूहवाद, सर्वाधिकारवाद, बहुलवाद

और कल्याणकारी राज्य है। व्यक्तिवादी निश्चित सीमा तक शिक्षा पर राज्य का नियन्त्रण चाहते हैं। पर उन्होंने यह नही बताया है कि यह सीमा क्या है। समूहवादी शिक्षा पर राज्य का सबसे ऊँचा अधिकार मानते है। सर्वाधिकारवादी शिक्षा पर राज्य का पूरा नियन्त्रण चाहते हैं, और ग़ैर-सरकारी स्कूलों का विरोध करते हैं। बहुलवादी कहते है कि जिस प्रकार राज्य, विद्यालयों की स्थापना करते हैं, उसी प्रकार देश के अन्य संगठन भी कर सकते है।

ऊपर व्यक्त किए गये सभी विचार उग्र सिद्धान्तों का समर्थन करते है और उसमें बहुत-सी कमियाँ भी है। इनमें से किसी को भी पूर्ण रूप से स्वीकार नही किया जा सकता है। इसलिए इनमें समन्वय करना पड़ेगा। इस सम्बन्ध मे रेमॉन्ट ने लिखा है :—"हम अनुभव करते हैं कि शिक्षा अधलिखित तीनों या तीनों में से एक साधन के द्वारा सचालित की जा सकती है : (1) ऐच्छिक प्रयास द्वारा लाभ के लिए; (2) ऐच्छिक प्रयास द्वारा परोपकार या धार्मिक भावना से; (3) राज्य के द्वारा।"

"We observe that education may be conducted by all or any of three means first, by voluntary effort with a view to profit; secondly, by voluntary effort arising from philanthropic or religions motives; thirdly, by the agency of the state."—**Raymont.**

शिक्षा पर राजकीय नियन्त्रण
State Control of Education

शिक्षा पर राजकीय नियन्त्रण के बारे में दो मुख्य प्रश्न है :—(1) शिक्षा पर राज्य का नियन्त्रण वाछनीय है या नही ? (2) यदि नियन्त्रण वाछनीय है, तो इसका रूप क्या होना चाहिए ?

इन प्रश्नों पर विचारको और राजनीतिज्ञों ने तीन मत व्यक्त किये हैं :—
(1) जन-शिक्षा पर केवल राज्य का नियन्त्रण होना चाहिए। (2) किसी प्रकार की भी शिक्षा पर राज्य का नियन्त्रण बुराई है। (3) शिक्षा—आवश्यक राजकीय कार्य है। हम इन तीनो मतो पर विचार करेंगे; यथा :—

1. **जन-शिक्षा पर राजकीय नियन्त्रण वाछनीय : State Control of Popular Education Desirable—वुडरो विल्सन** (Woodrow Wilson) के अनुसार : – जन-शिक्षा पर राज्य का नियन्त्रण होना चाहिए। उसने इसके दो कारण बताये है : (1) जन-शिक्षा उस राजनीतिक और सामाजिक स्वतन्त्रता के लिए आवश्यक है, जो व्यक्ति के स्वतन्त्र विकास के लिए अनिवार्य है; (2) सरकार से कम शक्तिशाली कोई भी साधन जन-शिक्षा की व्यवस्था नही कर सकता है। जन-शिक्षा उस वैयक्तिक विकास के लिए आवश्यक है, जिसे लोकतन्त्र ने एक उचित उद्देश्य के रूप मे स्वीकार किया है। लोकतन्त्रीय सरकार, सार्वजनिक कार्यों पर निर्भर रहती

है। इसलिए, यदि यह सार्वजनिक शिक्षा की व्यवस्था नहीं करेगी तो अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकेगी। अतः यह आवश्यक है कि सरकार लोगों को ज्ञान और सद्गुणों में प्रशिक्षित करे।

2. शिक्षा पर राजकीय नियन्त्रण : एक बुराई : State Control of Education : An Evil—जे० एस० मिल (J. S. Mill) ने शिक्षा पर राजकीय नियन्त्रण को बुराइ बताया है। वह इस सिद्धान्त की निन्दा करता है कि लोगों की शिक्षा का सम्पूर्ण या अधिकांश भार राज्य पर हो। सामान्य राजकीय शिक्षा सब लोगों को बिल्कुल एक-दूसरे के समान बनाती है। ऐसा करना—सरकार को प्रसन्न करना है—चाहे यह सरकार राजा की, कुलीनों की या जनता की हो। राज्य द्वारा दी गई शिक्षा लोगों के मस्तिष्क पर अनियन्त्रित शासन स्थापित करती है। इस प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था केवल नमूने के लिए की जानी चाहिए, जो शिक्षा के अन्य संगठनों के लिए प्रेरणा और उदाहरण का काम करे।

3. शिक्षा : आवश्यक राजकीय कार्य : Education : A Necessary State Service—एलवुड पी० कब्बरले (Ellwood P. Cubberley) के विचारानुसार :—शिक्षा आवश्यक राजकीय कार्य है। उसका कथन है कि बच्चो को राज्य और राष्ट्र के योग्य नागरिकों के रूप में प्रशिक्षित किया जाना आवश्यक है। औद्योगिक क्रान्ति ने राजनीतिक और मामाजिक परिवर्तनो को जन्य दिया, जिन्होने शिक्षा को राज्य और राष्ट्र के हित का विषय बना दिया। ये परिवर्तन इतने महत्त्वपूर्ण थे कि राज्य को शिक्षा पर नियन्त्रण रखने के लिए बाध्य होना पड़ा।

समय की गति के साथ सार्वजनिक शिक्षा का क्षेत्र विस्तृत हो गया है, और शिक्षा के व्यय में वृद्धि हो गई है। भविष्य में इस क्षेत्र और व्यय के अधिक होने की ही आशा है। इस समय अनिवार्य शिक्षा, शिक्षकों और विद्यालय-भवनों की माँग को पूरा किया जा रहा है, पर उसको संतोषजनक नही कहा जा सकता है। इस माँग को पूरा करने और शिक्षा की वर्तमान दशा को सुधारने के लिए अत्यधिक धन की आवश्यकता है। इतना धन राज्य सभी प्राप्त कर सकता है, जब वह प्रत्येक व्यक्ति से शिक्षा के लिए धन ले। केवल राज्य ही इस कार्य को कर सकता है, दूसरी कोई सस्था नही। अतः शिक्षा स्वतः ही राजकीय कार्य हो जाता है।

निष्कर्ष—शिक्षा पर राज्य के नियन्त्रण के बारे में जो भी विचार हो, पर यह बात माननी पड़ेगी कि नियन्त्रण कुछ सीमा तक आवश्यक है। यही कारण है कि सभी देशों मे शिक्षा पर राज्य का नियन्त्रण किसी-न-किसी रूप में दिखायी देता है। यदि यह आवश्यक नही है, तो कम-से-कम वाञ्छनीय अवश्य है, क्योंकि जिन कार्यों को राज्य कर सकता है, उनको शिक्षा के अन्य साधन नहीं कर सकते है।

राज्य के शैक्षिक कार्य; राज्य : शैक्षिक साधन के रूप में
Educational Functions of State; State as an Agency of Education

1. विद्यालयों की व्यवस्था : Provision of Schools—राज्य को विभिन्न

स्थानों की आवश्यकताओं के अनुसार सभी प्रकार के विद्यालयों—प्राथमिक, टेकनिकल आदि की व्यवस्था करनी चाहिए। ये विद्यालय ऐसे सामंजस्य में कार्य करें कि प्रयास का अपव्यय न हो।

2. निश्चित स्तर तक शिक्षा को अनिवार्य बनाना : Making Education Compulsory upto a Certain Stage—राज्य को एक निश्चित स्तर तक शिक्षा को अनिवार्य बनाना चाहिए और अभिभावकों को अपने बच्चों को स्कूल भेजने के लिए बाध्य करना चाहिए। तभी वे निश्चित स्तर तक शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे।

3. शिक्षा के व्यय को पूरा करने के उपाय ढूँढ़ना : Determining How to Meet the Cost of Education—यह निश्चय करना कि बच्चों की शिक्षा के व्यय को पूरा करने के लिए कौन-से उपाय हो सकते है, राज्य का कार्य है। इस बारे में अनेक विचार व्यक्त किए गए है। कुछ लोगों का कहना है कि शिक्षा के व्यय का अधिकाश भाग अभिभावकों से लिया जाय। ऐसा न करने से उनके लिए शिक्षा का कोई महत्त्व नहीं रह जाता है; उदाहरणार्थ—निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा पर राज्य को अति विशाल धनराशि व्यय करनी पडती है। फिर भी ऐसे अनेक अभिभावक है, जिनके लिए इस शिक्षा का कोई मूल्य नहीं है। इतने पर भी अधिकाश सभ्य देशो ने निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा का सब भार अपने ऊपर लिया है।

4. विद्यालय-पद्धति पर सामान्य नियन्त्रण व उसका निर्देशन : General Control & Direction of the School System—राज्य को विद्यालय-पद्धति पर सामान्य नियन्त्रण रखना चाहिए और उसका निर्देशन भी करना चाहिए। राज्य को पाठ्यक्रम के विषय—शिक्षकों और समुदाय की सलाह से चुनने चाहिए। जहाँ तक शिक्षण-विधियों की बात है, उनमें शिक्षक को पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। राज्य को तो सिर्फ यह करना चाहिए कि वह सर्वोत्तम विधियो पर सूचनायें प्राप्त करे और उनको विद्यालयों को भेज दे।

5. योग्य शिक्षकों की व्यवस्था : Provision for Efficient Teachers—विद्यालयों के लिए योग्य शिक्षको की व्यवस्था करना—राज्य का सबसे आवश्यक कार्य है। शिक्षा की सब सुविधायें होते हुए भी यदि शिक्षक अयोग्य है, तो सब कुछ व्यर्थ हो जायगा। विद्यालय बनाना, उनको छात्रो से भरना, उनके निरीक्षण का उत्तम प्रबन्ध करना—ये सभी बाते अच्छी है। पर हमको यह नहीं भूलना चाहिए कि इन सब मे शिक्षक ही प्राण फूँकता है। अत. ज्ञान, कुशलता और सहानुभूति से पूर्ण शिक्षको को चुनना—राज्य का सबसे प्रमुख कार्य है।

6. बालकों की शिक्षा के लिए अभिभावकों को प्रेरणा : Encouragement to Guardians for Children's Education—भारत ऐसे देश मे जहाँ अधिकाश अभिभावक अशिक्षित है, यह आवश्यक है कि सरकार उनको अपने बालकों की शिक्षा के लिए प्रेरणा दे। इसका कारण यह है कि अशिक्षित अभिभावक शिक्षा के मूल्य और महत्त्व को नही समझते है। उनका विचार होता है कि शिक्षा मे समय और धन—

दोनों का अपव्यय होता है। इसलिए वे यह अधिक अच्छा समझते हैं कि बालक स्कूल जाने के बजाय या तो कोई काम करें या उनके कार्य में सहयोग दें। इससे उनकी आर्थिक समस्या का भी थोड़ा-बहुत समाधान हो जाता है। अभिभावकों के इस दृष्टिकोण को बदला जाना आवश्यक है। यह तभी सम्भव है, जब सरकार किसी प्रकार के प्रचार द्वारा उनको यह प्रेरणा दे कि वे अपने बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए विद्यालयों को भेजें।

7. शिक्षा-संस्थाओं में सैनिक शिक्षा की व्यवस्था : **Provision for Military Education in Educational Institutions**—आज के संघर्षपूर्ण युग में राष्ट्र के जीवन के लिए यह आवश्यक है कि उसके सभी नागरिकों को थोड़ी-बहुत सैनिक शिक्षा अवश्य प्राप्त हो। ऐसी शिक्षा प्राप्त नवयुवक संकट के समय अपने देश की रक्षा का काम कर सकेंगे; उदाहरण के लिए—भारत को ही ले लीजिए। उसके दो पड़ोसी राज्य—चीन और पाकिस्तान—उस पर बहुत समय से आँख लगाये हुए हैं और आक्रमण भी कर चुके है। ऐसे आक्रमणों का मुँह-तोड़ जवाब तभी दिया जा सकता है, जब देश का हर बालक सैनिक शिक्षा द्वारा इतना तैयार कर दिया जाय कि वह अपने गाँव, अपने नगर और इस प्रकार अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता को अक्षुण्य बनाये रख सके। आज सभी पाश्चात्य देशों की शिक्षा-संस्थाओं में सैनिक शिक्षा की व्यवस्था है।

8. शैक्षिक अनुसन्धान को प्रोत्साहन : **Encouragement to Educational Research**—वर्तमान युग मे शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण बिल्कुल बदल गया है। पुराने विचार समाप्त होते जा रहे है, पुरानी धारणाओं का महत्त्व कम होता जा रहा है। उदाहरणार्थ—संयुक्त राज्य अमरीका ने इतने शैक्षणिक अनुसन्धान किए हैं कि उसके फलस्वरूप उस देश में शिक्षा की काया ही पलट गई है। ऐसा किया जाना आवश्यक है, क्योंकि पुराने आदर्श, पुरानी मान्यताएँ; पुरानी आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक कल्पनाएँ अतीत के गर्त में समाती जा रही हैं। आज की नई व्यवस्था में शिक्षा के नये आदर्श और नये उद्देश्य होने आवश्यक है। अतः राज्य का यह कर्त्तव्य है कि वह अपनी आवश्यकता को पूर्ण करने हेतु इन आदर्शों और उद्देश्यों का निर्माण करे। ऐसा तभी हो सकता है, जब वह शैक्षणिक अनुसन्धान को प्रोत्साहन दे।

9. परिवार व विद्यालय को निकट सम्पर्क में लाना : **Bringing the Home & the School in Close Contact**—बालक की शिक्षा में विद्यालय का स्थान महत्त्वपूर्ण माना गया है। पर इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान घर या परिवार का है। बालक कैसे परिवार से आया है, उसके परिवार के सदस्यों का दृष्टिकोण क्या है, उनकी संस्कृति, रहन-सहन, आचार-विचार कैसे है—शिक्षक के लिए इन सब बातों का ज्ञान होना आवश्यक है। बालक के पारिवारिक इतिहास और पृष्ठभूमि को जानकर ही शिक्षक उसकी रुचियों और आवश्यकताओं को समझ सकेगा, और

तभी वह उसे उचित प्रकार की शिक्षा दे सकेगा। ऐसा न होने से वह अपनी कक्षा के सब छात्रों को एक ही डण्डे से हांकता रहेगा, जिसका परिणाम अच्छा निकलना असम्भव है।

अतः यह आवश्यक है कि राज्य द्वारा किसी ऐसी संस्था का निर्माण किया जाय, जो शिक्षकों और अभिभावकों को एक-दूसरे के निकट सम्पर्क में लाये। इस सम्पर्क द्वारा ही शिक्षकों को अपने छात्रों का पूर्ण ज्ञान हो सकता है, और इस ज्ञान पर उनकी शिक्षा को आधारित करके शिक्षक अपने दायित्व को बहुत अच्छी तरह से निभा सकते हैं।

10. नागरिकता का प्रशिक्षण : Training in Citizenship—अच्छे नागरिक राज्य के दृढ़ स्तम्भ हैं। ऐसे नागरिकों का निर्माण नागरिकता के प्रशिक्षण द्वारा ही सम्भव है। इस प्रशिक्षण के निम्नलिखित चार पहलू हैं :—

(i) आर्थिक प्रशिक्षण : Conomic Training—कोई भी राज्य नागरिकों को आर्थिक प्रशिक्षण दिए बिना उन्नति करने की आशा नहीं कर सकता है। अतः यह आवश्यक है कि राज्य—विज्ञान, कृषि, उद्योग आदि के लिए प्रशिक्षण की सुविधायें दे। राज्य में सब प्रकार की शिक्षा-संस्थायें होनी चाहिए, जिनमें देश के युवक प्रशिक्षण प्राप्त कर सकें।

(ii) सांस्कृतिक प्रशिक्षण : Cultural Training—सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखने के लिए सांस्कृतिक प्रशिक्षण दिया जाना आवश्यक है। अतः राज्य को अजायबघरों, चित्र-शालाओं, सांस्कृतिक सोसायटियों, क्लबों, मनोरंजन हॉलों आदि की स्थापना करनी चाहिए। इनके साथ ही, राज्य को सांस्कृतिक मण्डलों, सांस्कृतिक भ्रमणों, सामुदायिक केन्द्रों आदि को उदार आर्थिक सहायता देनी चाहिए।

(iii) सामाजिक प्रशिक्षण : Social Training—राष्ट्र की प्रगति न केवल उसके विचारों से, वरन् उसके सामाजिक स्तरों से भी जानी जाती है। लोकतन्त्रीय देश को समाज और उसके सदस्यों के उत्तम विकास के लिए न्यूनतम सामाजिक स्तर निश्चित करने चाहिए। यह उद्देश्य तभी प्राप्त हो सकता है, जब शारीरिक, मानसिक और आर्थिक स्तरों के लिए एक निश्चित मापदण्ड बना लिया जाय और उनमें प्रशिक्षण दिया जाय। इसके साथ ही बालकों को सामाजिक सम्पर्क के अवसर दिये जायें, जिससे उनमें समाज-सेवा की भावना का विकास हो।

(iv) राजनीतिक प्रशिक्षण : Political Training—प्रत्येक राष्ट्र किसी-न-किसी राजनीतिक विचारधारा में विश्वास करता है। इस विचारधारा को बालकों के मस्तिष्क में बैठाने के लिए उनको राजनीतिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। यह प्रशिक्षण इसलिए भी आवश्यक है, जिससे कि वे देश के राजनीतिक मामलों में बुद्धिमानी और सक्रियता से भाग ले सकें। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए राज्य को फिल्म-शो, रेडियो-प्रसारण (Radio-broadcasts) और राजनीतिक प्रदर्शनों का आयोजन करना चाहिए।

राज्य के शिक्षा-सम्बन्धी उपर्युक्त कार्य अति महत्त्वपूर्ण हैं। इन कार्यों को योग्यता और उदारता से किये बिना कोई भी राज्य उन्नति नहीं कर सकता है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss briefly the relation of State to education.

राज्य का शिक्षा से क्या सम्बन्ध है ? स्पष्ट कीजिए।

2. *What reasons can you offer to support the saying that* "State control of education is an evil ?"

"शिक्षा पर राज्य का नियन्त्रण—एक बुराई है।" इस कथन के पक्ष में आप किन तर्कों को प्रस्तुत कर सकते हैं ?

3. "Education is a necessary State service." Comment and elucidate.

"शिक्षा—आवश्यक राजकीय कार्य है।" इस कथन की विवेचना कीजिए।

4. Write a short essay on the functions of the State as an agency of education.

शिक्षा के साधन के रूप में राज्य के कार्यों पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिये।

5. What should be the relationship between the State and Education in a democracy ?

राज्य तथा शिक्षा का लोकतन्त्र में क्या सम्बन्ध होना चाहिए ?

खण्ड तीन

शिक्षा की समस्याएँ

PROBLEMS OF EDUCATION

"विश्व को साझेदारी माना जाता है। इसको मैत्रीपूर्ण ब्रह्माण्ड के रूप में देखा जाता है। हम घृणा करने के बजाय प्रेम करने के लिए पैदा हुए हैं। हम एक-दूसरे को समाप्त करने के बजाय एक-दूसरे की सहायता करने के लिए उत्पन्न हुए हैं। परन्तु, प्रचार तथा कट्टरवादिता के फलस्वरूप हम स्वयं को दूसरों से सर्वोच्च मानने लगे हैं। साथ ही, हम उनको अपने बराबर का नहीं मानते हैं। मानव में यह भावना प्राकृतिक आवेगों के कारण उत्पन्न नहीं होती है, वरन् स्वभाव से मानव एक-दूसरे से प्रेम करता है। धर्मान्धता के कारण हमने मानव को उसकी सहृदयता, सहानुभूति तथा भ्रातृत्व की स्वाभाविक भावनाओं से दूर कर दिया है। हमारा इस विश्व में यह उद्देश्य होना चाहिए कि हमें किसी तथ्य को अतिरंजित रूप में तथा उसको गलत ढंग से प्रस्तुत नहीं करना चाहिए वरन् हमें सत्य की आवाज को सुनना तथा आत्मा की पुकार का पालन करना चाहिए।"—Dr. Radhakrishnan.

- राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा
  Education for National Integration.
- अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए शिक्षा
  Education for International Understanding.
- अन्तर-सांस्कृतिक भावना के लिए शिक्षा
  Education for Intercultural Understanding.
- भावात्मक एकता के लिए शिक्षा
  Education for Emotional Integration.
- नागरिकता के लिए शिक्षा
  Education for Citizenship.
- लोकतन्त्र व शिक्षा
  Democracy & Education.
- स्वतन्त्रता व अनुशासन
  Freedom & Discipline.
- धार्मिक व नैतिक शिक्षा
  Religious & Moral Education.

13

राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा
EDUCATION FOR NATIONAL INTEGRATION

"भारतीय राष्ट्र का आधार—'अहिंसा' है। हमारी राष्ट्रीय एकता का लक्ष्य, अहिंसात्मक दृष्टिकोण के द्वारा केवल प्रेम, सहानुभूति और भ्रातृ-भाव के लगातार प्रयोग से ही प्राप्त किया जा सकता है।"

"Indian nationhood has non-violence as its anchor. The goal of our national integration can be arrived at only through a sustained application of love, sympathy and feellow-feling on a plane of non-violent outlook."—**Jawaharlal Nehru**

विषय-प्रवेश

आज का युग, राष्ट्रीयता का युग है। सभी देश अपने निवासियों में राष्ट्रीयता की भावना का विकास करने में जुटे हुए हैं। सही या गलत, उनका विचार यह है कि इस भावना को विकसित करके ही वे या तो अपनी स्वतन्त्रता को प्राप्त कर सकते हैं या उसको बनाये रख सकते हैं। इसीलिए, आज संसार के सभी देशों में राष्ट्रीयता या राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा पर विशेष बल दिया जा रहा है।

राष्ट्रीयता का अर्थ
Meaning of Nationalism

विभिन्न विद्वानों द्वारा 'राष्ट्रीयता' की व्याख्या विभिन्न प्रकार से की गई है। कुछ इसको मन की स्थिति और आत्मा की सम्पत्ति मानते हैं। दूसरे इसको भावना की पद्धति और विचार तथा जीवन मानते हैं। इसकी सबसे उत्तम व्याख्या ब्रूबेकर के द्वारा की गई है, जिसने लिखा है :—"राष्ट्रीयता साधारण रूप से देश-प्रेम की

अपेक्षा देश-भक्ति के अधिक व्यापक क्षेत्र को ओर संकेत करती है। राष्ट्रीयता में स्थान के सम्बन्ध के अलावा प्रजाति, भाषा, इतिहास, संस्कृति और परम्पराओं के भी सम्बन्ध में आ जाते हैं।"

"Nationalism ordinarily indicates a wider scope of loyalty than patriotism. In addition to ties of place, Nationalism is evidenced by such other ties as race, language, history, culture and tradition."—**J. S. Brubacher** : *A History of the Problems of Education*, p. 62.

उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर हम राष्ट्रीयता के अर्थ को स्पष्ट कर सकते है। राष्ट्रीयता की भावना में देश-प्रेम और देश-भक्ति के तत्त्व निहित होते है, जो एक देश के निवासियों की एकता के सूत्र मे बाँधने का प्रयास करते हैं। इन तत्त्वो के अतिरिक्त प्रजाति, भाषा, इतिहास, संस्कृति और परम्पराओं का भी यही ध्येय होता है। ये सब तत्त्व मिलकर राष्ट्रीयता की भावना का निर्माण करते है। इस भावना से भर जाने पर व्यक्ति अपने हित का ध्यान न रखकर, अपने समाज और देश के हित का ही ध्यान रखता है।

राष्ट्रीयता व शिक्षा
Nationalism & Education

किसी देश की प्रगति और उत्थान के लिए वहाँ के निवासियों में राष्ट्रीयता की भावना होना बहुत आवश्यक है। यह भावना उन देशो के लिए विशेष रूप से आवश्यक है, जो पिछड़े हुए है या दास है—या जिनमें अनेक धर्म, भाषायें और जातियाँ है। ऐसे देशों को एकता के सूत्र में बाँधने के लिए राष्ट्रीय भावना बहुत आवश्यक है। इस भावना को विकसित करने में शिक्षा महत्त्वपूर्ण योग दे सकती है। बच्चों में प्रारम्भ से ही राष्ट्रीय चेतना की उत्पत्ति के लिए प्रयत्न किया जा सकता है। बच्चों में इस चेतना का विकास करने के लिए परिवार, स्कूल और समाज का स्थान महत्त्वपूर्ण है। इन सब में स्कूल का स्थान अधिक ऊँचा है।

शिक्षा—एक ऐसा साधन है, जिसके द्वारा समाज या देश में राष्ट्रीय चेतना का विकास करके उसको बदला जा सकता है। प्राचीन समय में स्पार्टा की शिक्षा इसका प्रमुख उदाहरण है। आधुनिक गुण में नाज़ी, जर्मनी और फ़ासिस्ट इटली में शिक्षा के माध्यम से वहाँ के युवकों को राष्ट्रीयता की भावना से सराबोर कर दिया गया था। आज भी रूस में बालकों को प्रारम्भिक कक्षाओं से लेकर अन्तिम कक्षाओं तक, इस प्रकार की शिक्षा दी जाती है कि उनमें पूर्ण रूप से साम्यवादी भावना का समावेश हो जाता है।

कहने का अभिप्राय यह है कि तानाशाही, साम्यवादी, समाजवादी और प्रजातन्त्रीय व्यवस्था को दृढ़ बनाये रखने के लिए वहाँ के निवासियों में राष्ट्रीयता

की भावना उत्पन्न करना अति आवश्यक है। इस दिशा में शिक्षा का कार्य अति महत्त्वपूर्ण है।

राष्ट्रीयता की शिक्षा की आलोचना
Criticism of Education for Nationalism

राष्ट्रीयता के लिए दी जाने वाली शिक्षा के गुण भी है और अवगुण भी। हम इन पर नीचे प्रकाश डाल रहे है :—

(अ) गुण : **Merits**—1. राष्ट्रीयता की शिक्षा—राष्ट्र के निवासियों में उन्नति करने की भावना को जाग्रत करती है।

2. राष्ट्रीयता की शिक्षा—राष्ट्र के निवासियों को वाह्य बन्धन से मुक्त होने और रहने की प्रेरणा देती है।

3. राष्ट्रीयता की शिक्षा—देश-भक्ति से ओत-प्रोत साहित्य का सृजन करती और राष्ट्रीय संस्कृति के विकास में योग देती है।

4. राष्ट्रीयता की शिक्षा—विभिन्न धर्मों, जातियों और भाषाओं के लोगों में पारस्परिक सहिष्णुता की भावना को जन्म देती है।

5. राष्ट्रीयता की शिक्षा—बालकों में देश-प्रेम की भावना उत्पन्न करती हैं। देश-प्रेम के कारण व्यक्ति अपने हित का ध्यान न रखकर, राष्ट्र के हित की ओर ध्यान देता है। इतना ही नहीं, वह राष्ट्र के लिए हर प्रकार का बलिदान करने के लिए तैयार रहता है।

(ब) दोष : **Demerits**—1. संकुचित राष्ट्रीयता की भावना—अन्तर्राष्ट्रीय विचारधारा के प्रतिकूल है और मानव-हित के लिए घातक है।

2. सकुचित राष्ट्रीयता की भावना—विभिन्न देशों मे पारस्परिक सम्बन्धों को अच्छा नही बनने देती है। इसके फलस्वरूप, विश्व की शान्ति सदैव खतरे में रहती है।

3. जो राष्ट्र संकुचित राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित होकर उन्नति करना चाहता है, वह अन्य राष्ट्रों के हितों की चिन्ता नहीं करता है। चीन और पाकिस्तान—इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

4. जो देश राष्ट्रीयता की विचारधारा में विश्वास रखता है, वह अपने राजनीतिक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए उसका अनुचित प्रयोग कर सकता है। आजकल के साम्यवादी देशों में यही किया जा रहा है।

5. अपने देश के प्रति प्रेम की भावना—दूसरे देशो के प्रति घृणा उत्पन्न करती है। अतः संकुचित राष्ट्रीयता की भावना—युद्ध का कारण बनती है। द्वितीय विश्व-युद्ध का एक कारण यह भी था। जर्मनी के लोग राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित होकर अन्य देशो के निवासियो को अपने से तुच्छ समझने लगे थे।

निष्कर्ष—राष्ट्रीयता के गुण-दोष के विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि शुद्ध राष्ट्रीयता की भावना बहुत अच्छी चीज है, पर जब इसका रूप संकुचित हो जाता है, तब इससे हानि के अलावा लाभ की आशा करना व्यर्थ है। संकुचित राष्ट्रीयता अन्य राष्ट्रों और मानव-हितों की अवहेलना करती है। इस प्रकार की भावना संसार को सुख और शान्ति की साँस नहीं लेने देती।

अतः यह आवश्यक है कि सभी राष्ट्रों द्वारा शुद्ध राष्ट्रीयता की भावना को अपनाया जाय, उसके संकुचित रूप को नहीं। जवाहरलाल नेहरू ने ठीक ही लिखा है :—**"राष्ट्रीयता एक ऐसा विचित्र तत्त्व है जो एक देश के इतिहास में जहाँ जीवन, विकास, शक्ति और एकता का संचार करता है, वहाँ संकुचित भी बनाता है; क्योंकि इसके कारण एक व्यक्ति अपने देश के बारे में संसार के अन्य देशों से पृथक् रूप में सोचता है।"**

भारतीय एकता का आधार
Basis of Indian Unity

भारतवर्ष विभिन्नताओं का देश है। इसमें अनेक जातियाँ, उपजातियाँ, धर्म, भाषाएँ आदि पाई जाती है। पर कुछ विद्वानों का विचार है कि इन सब विभिन्नताओं के होते हुए भी भारत में आधारभूत एकता है। इन विद्वानों में **हरबर्ट रिज़ले** (Herbert Risley) का नाम उल्लेखनीय है। उनका मत है कि भारत में भौगोलिक, सामाजिक, भाषा, परम्परा और धर्म-सम्बन्धी विभिन्नताओं के होते हुए भी जीवन की एकता है।

यह एकता—भारतीय चरित्र और सामान्य व्यक्तित्व की है। इसका आधार—सांस्कृतिक एकता है। इसको विभिन्न तत्त्वों में विघटित नहीं किया जा सकता है। इस एकता से प्रभावित होकर सुप्रसिद्ध इतिहासकार स्मिथ ने लिखा है :—**"भारत में निस्सन्देह रूप में गहरे अधोभाग पर आश्रित आधारभूत एकता है।"**

"India beyond all doubt, possesses a deep underlying fundamental unity."—**Vincent Smith** : *The Oxford History of India*, p. 7.

भारत में राष्ट्रीय एकता की समस्या
Problem of National Integration in India

यदि विभिन्नताओं के बावजूद भी हमारे देश में सांस्कृतिक एकता है, तो फिर राष्ट्रीय एकता की चर्चा चारों ओर क्यों सुनाई दे रही है ? हमारे राष्ट्र के कर्णधार इस समस्या का समाधान खोजने में क्यों उलझे हुए हैं ? इसका उत्तर केवल यह है कि जिस एकता की ओर हमने संकेत किया है, उसका अब लोप हो चुका है। कारण यह है कि आज की भारतीय संस्कृति का रूप—प्राचीन रूप से बिल्कुल भिन्न हो गया है। प्राचीन समय में हमारी संस्कृति में अन्य संस्कृतियों को अपने में मिला लेने का विलक्षण गुण था। पर आज हम अपने देश के विभिन्न भूभागों के निवासियों के रीति-रिवाजों को भी मिलाने में असमर्थ हैं। हममें पृथकता की प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हो गई हैं।

स्वतन्त्रता-संग्राम की अवधि में हमने अपनी पृथक्ता की प्रवृत्तियों को दफन करके, अपने देश को राष्ट्रीय एकता का ज्वलन्त उदाहरण बनाया। किन्तु, स्वतन्त्रता-प्राप्ति के समय से इन प्रवृत्तियों ने धीरे-धीरे बाहर निकल कर, हमारी राष्ट्रीय एकता में विकार उत्पन्न कर दिया है और उसे प्रतिदिन क्षीण बनाती चली जा रही है। डा० सम्पूर्णानन्द ने ठीक ही लिखा है :—"स्वतन्त्रता के बाद के वर्षों में भारत ने अनेक क्षेत्रों में प्रगति की है। किन्तु, इन वर्षों में राष्ट्रीय जीवन में पृथक्ता की प्रवृत्तियों में उत्तरोत्तर वृद्धि भी अवलोकित हुई है।"

"The years following Independence have marked India's progress in many fields, but they have also witnessed the gradual increase of separatist tendencies in national life."—**Dr. Sampurnanand's Letter, Dated 21st July, 1961** *Emotional Integration Committee Report*, **p. 179.**

पृथक्ता की इन प्रवृत्तियो ने भारत में राष्ट्रीय एकता के विकास को अवरुद्ध करने वाली एक जटिल समस्या का रूप धारण कर लिया है।

राष्ट्रीय एकता का अर्थ
Meaning of National Integration

राष्ट्रीय एकता का सामान्य अर्थ है—देश या राष्ट्र के विभिन्न धर्मों, भाषाओं, जातियों आदि के निवासियों में देश के हित के लिए देश-प्रेम एवं देश-भक्ति की भावनाओं की एकता।

भारत में राष्ट्रीय एकता के उदात्त स्वरूप का प्रकटीकरण उस समय हुआ, जब देश के सब निवासियों ने संकीर्ण स्वार्थों, आर्थिक विषमताओं, सामाजिक असमानताओं आदि के कारण उत्पन्न होने वाली पृथक्ता को विस्मृत करके, अपने विदेशी शासकों के शोषण से परित्राण-प्राप्ति के लिए राष्ट्रीय आन्दोलन आरम्भ करने का सत्य संकल्प किया और अपने रक्त एवं जीवन की आहुति देकर इस संकल्प की ज्योति को प्रज्वलित रखा। किन्तु, जैसा कि डा० श्रीमाली ने लिखा है[1] :—"स्वतन्त्रता-प्राप्ति के उपरान्त, पृथक्ता की भावना फिर उत्पन्न हो गई।"

राष्ट्रीय एकता के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम दो परिभाषाएँ दे रहे है; यथा :—

1. "राष्ट्रीय एकता सम्मेलन" :—"राष्ट्रीय एकता एक मनोवैज्ञानिक एव शैक्षिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा लोगो के दिलों में एकता, संगठन एवं सन्निकटता की

---

1. Dr. K. L. Shrimali's Address at the Inaugural Meeting of the Emotional Integration Committee, Dated 10th July, 1961.

भावना, सामान्य नागरिकता की भावना और राष्ट्र के प्रति भक्ति की भावना का विकास किया जाता है।"

"National integration is a psychological and educational process involving the development of a feeling of unity, solidarity, and cohesion in the hearts of people, a sense of common citizenship, and a feeling of loyalty to the nation."—*National Integration Conference Report*, 1961.

2. डा० बेदी :—"राष्ट्रीय एकता का अर्थ है—देश के विभिन्न राज्यों के व्यक्तियों की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं भाषा-विषयक विभिन्नताओं को वांछनीय सीमा के अन्तर्गत रखना और उनमें भारत की एकता का समावेश करना।"

"National integration means bringing about economic, social, cultural, and linguistic differences among the people of various States in the country within tolerable range and imparting to the people a feeling of the oneness of India."—**Dr. J. S. Bedi :** *Current Problems of Indian Education*, p. 217.

राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता
Need of National Integration

डा० राधाकृष्णन् का कथन है :—"राष्ट्रीय एकता एक ऐसी समस्या है, जिससे सभ्य राष्ट्र के रूप में हमारे अस्तित्व का घनिष्ठ सम्बन्ध है।"

"National integration is a problem with which our survival as a cizilved nation is bound up."—**Dr. Radhakrishnan :** *Occasional Speeches & Writings*, p. 234.

शैक्षिक एवं राजनैतिक तत्त्वों के साकार प्रतीक, डा० राधाकृष्णन् ने अपने इस कथन के द्वारा हमारे मानस-पटल पर मोटे और गहरे अक्षरों में यह अंकित करने की चेष्टा की है कि यदि हममें राष्ट्र के रूप में जीवित रहने की तनिक भी अभिलाषा है, तो हमें राष्ट्रीय एकता को अनिवार्य आवश्यकता स्वीकार करना पड़ेगा। पर क्यों? इसका उत्तर, भारतीय इतिहासकारों में अग्रगण्य माने जाने वाले, डा० क्रानूनगो के अग्रांकित शब्दों में सुनिए[1] :—"भारत की जनसंख्या में असाधारण विविधता है, उसके विभिन्न भागों को एक-दूसरे से पृथक् करने वाली दूरियाँ बहुत लम्बी हैं, उसके निवासियों के दैनिक जीवन एवं व्यवसायों को प्रभावित करने वाली जलवायु एवं भौतिक दशाओं में अत्यधिक विभिन्नता है, और सर्वोपरि वह अति तीव्र गति से होने

---

1. **Dr. Nityanand Kanungo,** Vide *University Grants Commission Seminar Report*, **1961, p. 39.**

वाले आर्थिक, सामाजिक, प्राविधिक एवं राजनीतिक परिवर्तनों के युग में से गुजर रहा है। ऐसे संक्रमण-काल मे भारतीयों को अत्यधिक सतर्कता से कार्य करना चाहिए। वे ऐसा तभी कर सकते हैं, जब वे अपने आन्तरिक भेदभावों को निश्चित सीमाओं के अन्तर्गत रखें, आवश्यकता पड़ने पर शान्तिपूर्ण विधि से उनकी दाहक्रिया करें, और साथ ही सामान्य राष्ट्रीयता की भावना का विकास करें एवं अपने देश के उत्थान के लिए कंधे-से-कंधा मिला कर कार्य करें।" इस प्रकार, राष्ट्रीय एकता के प्रति भारतीयों का ध्यान आकर्षित करते हुए, डा० क़ानूनगो ने अन्त में लिखा है :—"राष्ट्रीय एकता की हर देश को हर समय आवश्यकता है। किन्तु, भारत के लिए इसकी कहीं अधिक आवश्यकता है।"

"National Unity is essential for any country and at any time. It is doubly so for India."—**Dr. Kanungo**, Vide *University Grants Commission Seminar Report*, 1961, p. 39.

राष्ट्रीयता एकता को देश की प्रगति का मूलमन्त्र मानने वाले, भारतीय स्वतन्त्रता के सजग प्रहरी, जवाहरलाल नेहरू ने स्वाधीनता के युग मे पदार्पण करने वाले अपने देशवासियों के हितार्थ यह सन्देश प्रसारित किया था[1] :—"हमें अपने देश की नवजात स्वतन्त्रता को सबल बनाना और उसको सुरक्षित रखना, अपना सर्वप्रथम कर्तव्य समझना चाहिए। यदि हम अपने समूह, अपने राज्य, अपनी भाषा, या अपनी जाति के समान किसी अन्य बात को महत्त्व देंगे और अपने देश को भूल जायेंगे, तो हमारा विनाश अवश्यम्भावी है। इन सब बातों का हमारे जीवन में उचित स्थान होना चाहिए, पर यदि हम इनको अपने देश से अधिक महत्त्व देंगे, तो राष्ट्र के रूप में हमारा अन्त आवश्यक है।" जवाहरलाल नेहरू ने अपने सदेश में ज़ोरदार शब्दों में आगे कहा :—"अब निश्चित रूप से वह समय आ गया है, जब प्रत्येक भारतीय को अपने अन्तर में देखना चाहिए और अपने-आप से यह पूछना चाहिए कि वह राष्ट्र के साथ है, या किसी विशिष्ट समूह के। यह हमारे समय की चुनौती है, जिसका प्रत्येक नर, नारी और बच्चे को सामना करना है।"

"The time has surely come when every Indian must look within and ask for himself whether he is with the nation, or with a particular group. This is the challenge of our times that every man, woman, and child must face."—**Jawaharlal Nehru** : *Nehru's Speeches*, Vol, III, pp. 38-39.

दुःख का विषय है कि भारतीयों ने राजनीति में निपुण नेहरू के परामर्श का तिरस्कार करके, समय की चुनौती को स्वीकार नही किया। गत वर्षों में भारतीयो ने देश-हित की ओर से मुँह मोड़कर, अपने संकीर्ण हितों एवं स्वार्थों के प्रति निष्ठावान्

---

1. **Jawaharlal Nehru** : *Nehru's Speeches*, Vol. III, p. 38.

होने के अनेक प्रमाण दिए है। भूमि और जल जसी छोटी-छोटी बातों पर राज्यों के पारस्परिक कलह, अपने राज्यों के लिए पूर्ण स्वाधीनता की माँग, अपनी भाषाओं के लिए विशेष सम्मान और ऐसी ही कितनी अन्य अनेक बातें उनकी संकीर्णता की प्रमाण है और इस बात की भी प्रमाण है कि राष्ट्रीय एकता के मार्ग पर विघटन-कारी प्रवृत्तियाँ अपना अभियान आरम्भ कर चुकी है।

यह सत्य है कि भारतवासियो ने विगत वर्षों में बाह्य संकटों के अवसर पर राष्ट्रीय एकता का परिचय दिया है। किन्तु, इस एकता की जातीयता, क्षेत्रीयता, साम्प्रदायिकता आदि आन्तरिक संकटों का सामना करने के लिए भी आवश्यकता है। हम बाह्य एवं आन्तरिक सकटो का सफलतापूर्वक सामना तभी कर सकते हैं, जब हम राष्ट्रीय एकता की मजबूत जंजीरो में जकड़े हुए हों। अतः यह आवश्यक है कि राष्ट्रीय एकता की जो प्रक्रिया—स्वतन्त्रता-संघर्ष के साथ आरम्भ हुई थी, उसकी गति को अवरुद्ध करने के बजाय तीव्र बनाया जाय। तभी हम शहीदों के खून के बदले मे मिलने वाली अपनी स्वतन्त्रता को सुरक्षित रख सकते है। अपने देशवासियों को यही परामर्श देते हुए, डा० श्रीमाली ने कहा है :—"**यदि हम मुश्किल से मिलने वाली अपनी आजादी की सुरक्षा एवं समृद्धि चाहते हैं, तो हमें राष्ट्रीय एकता की प्रक्रिया को जारी रखना और शक्तिशाली बनाना पड़ेगा।**"

"The process of national integration must continue and be strengthened, if we are to preserve and enrich our hard-won freedom."—**K. L. Shrimali's** Address at the Inaugural Meeting of the Emotional Integration Committee, Dated 10th July, 1961.

राष्ट्रीय एकता में बाधाएँ
Obstacles to National Integration

भारत की राष्ट्रीय एकता के विकास में निम्नांकित बातें बाधाएँ उपस्थित कर रही है :—

1. जातिवाद : Casteism—'जातिवाद' राष्ट्रीय एकता के विकास मे बहुत बड़ी बाधा है। इस पर प्रकाश डालते हुए जी० एस० घुरे (G. S. Ghurye) ने लिखा है :—"**यह जाति प्रेम की भावना ही है, जो अन्य जातियों में कटुता उत्पन्न करती है और राष्ट्रीय चेतना के विकास के लिए अनुपयुक्त वातावरण तैयार करती है।**"

यह सत्य है कि जातिवाद और राष्ट्रीय एकता एक-दूसरे के बिल्कुल विपरीत है। राष्ट्रीय एकता का विकास उसी समय हो सकता है, जब राष्ट्र के समस्त निवासी अपने को एक-दूसरे के समान समझे और उनमें ऊँच-नीच की भावना न हो। जाति-वाद मनुष्यों को ऐसा करने से रोकता है। जब व्यक्तियों मे स्वय ऊँच-नीच की भावना है, तब उनमें समानता की भावना किस प्रकार आ सकती है?

प्रत्येक जाति के सदस्यों में अपनी ही जाति का हित सर्वोपरि होता है। इस हित के लिए वे राष्ट्र के हित का बलिदान कर सकते है। ऐसी दशा मे व्यक्तियों मे राष्ट्र-हित और राष्ट्र-प्रेम की बात की कल्पना करना मूर्खता है। जातिवाद ने व्यक्तियों में स्वार्थ और पृथकता की भावना इतनी कूट-कूटकर भर दी है कि वे अपने संकुचित दृष्टिकोण का परित्याग करके राष्ट्र-हित के व्यापक दृष्टिकोण को नही अपना सकते हैं।

2. साम्प्रदायिकता : Communalism—राष्ट्रीय एकता के विकास में दूसरी बाधा 'साम्प्रदायिकता' है। भारत मे दो मुख्य सम्प्रदाय है—हिन्दू और मुस्लिम। इनमे से हिन्दू अनेक सम्प्रदायों में बँटे हुए है। सभी सम्प्रदाय अपने को दूसरो से श्रेष्ठ मानते हैं और उनको घृणा की दृष्टि से देखते है। फलस्वरूप, सभी सम्प्रदायों में एक-दूसरे के प्रति द्वेष और कटुता पाई जाती है। इसके कारण देश की एकता को महान् क्षति पहुंच रही है।

इससे भी अधिक क्षति हिन्दुओं और मुसलमानो के पारस्परिक वैमनस्य के कारण हो रही है। डा० आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव का कथन है :—**"आज एकता की मुख्य समस्या मुस्लिमों और ग़ैर-मुस्लिमों के बीच उपयुक्त सम्बन्धों की स्थापना की है।"**

"Today the main problem of unity is the adjustment of proper relationship between the Muslims and Non-Muslims."

—Ashirvadi Lal Srivastava.

3. प्रान्तीयता : Provincialism—देश की एकता मे 'प्रान्तीयता' एक बहुत बड़ी बाधा है। यह सत्य है कि व्यक्ति को अपने जन्म-स्थान से प्रेम होता है। पर इस प्रेम का रूप इतना प्रबल नही होना चाहिए कि वह अपने स्थान या प्रान्त को सबसे श्रेष्ठ मानने लगे और अन्य प्रान्तों को घृणा की दृष्टि देखने लगे।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद **'राज्य पुनर्गठन आयोग'** ने जनता की सुख, समृद्धि और प्रगति को ध्यान में रखकर देश को 14 राज्यो में विभाजित किया। पर आज इस राज्यों ने प्रान्तीयता का विकराल रूप धारण कर लिया है। प्रत्येक राज्य के व्यक्ति केन्द्रीय सरकार पर अपना अधिकार चाहते है, जिससे कि देश का शासन और उसकी नीति का निर्माण उन्ही की इच्छा के अनुसार हो।

यद्यपि 'आयोग' ने प्रमुखतः भाषा के आधार पर राज्यो का पुनर्गठन किया था, फिर भी अभी तक इस आधार पर नये राज्यो के निर्माण की माँग का अन्त नही हुआ है। फलस्वरूप, राज्यों के पारस्परिक वैमनस्य मे वृद्धि हो रही है, जिससे देश की एकता पर कुठाराघात हो रहा है।

4. राजनीतिक दलदल : Political Morass—लोकतन्त्र की सफलता के लिए राजनीतिक दलों का होना आवश्यक है; क्योंकि इनके द्वारा ही जनता में राजनैतिक चेतना और जनमत का निर्माण किया जाता है। इन दलों का सगठन मुख्यतः

राजनीतिक विचारधाराओं के आधार पर किया जाता है। हमारे देश में न तो इनका संगठन ही इस प्रकार किया जाता है, और न ये अपने दायित्वों को ही पूर्ण करते हैं। यहाँ के कुछ दलों का संगठन जाति, धर्म, सम्प्रदाय और क्षेत्र के आधारों पर किया जाता है और इन्ही का सहारा लेकर वोट माँगी जाती है।

फलतः भारत की राजनीतिक पार्टियाँ—राजनीतिक दल न रहकर, राजनीतिक दलदल बन गई है, क्योंकि इन्होने जनता को क्षेत्रीयता, जातीयता या साम्प्रदायिकता के दलदल में फँसा दिया है; उदाहरणार्थ—द्रविद मुन्दम कागज्रम (D. M. K.) दल का यह नारा है कि "दक्षिण क्षेत्र के निवासियों को उत्तरवासियों के आधिपत्य से मुक्ति दिलाई जाय।" अकाली दल की पंजाबी सूबे की माँग ने भारत की एकता पर प्रहार किया है। इस प्रकार, ये दल राष्ट्रीय एकता का भीपण कुठाराघात कर रहे है।

5. भाषा-सम्बन्धी विरोध : Linguistic Antagonism—स्वतन्त्रता-प्राप्ति के समय से ही भाषाओ के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन पर जोर दिया जा रहा है। भाषा के नाम पर कितनी ही ऐसी घृणित घटनाएँ हुई है, जिनके कारण हमारा मस्तिष्क लज्जा से झुक जाता है। इस सन्दर्भ में आसाम, पंजाब, आन्ध्र और मद्रास में होने वाली घटनाओं का उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है।

ये घटनाएँ स्पष्ट रूप से देश-प्रेम और राष्ट्रीय एकता को निर्वल बनाती हैं। हम यह भूल जाते है कि आज के संघर्षपूर्ण युग में हम आगे तभी बढ़ सकते है, जब हमारी एक भाषा हो, क्योंकि इसी के माध्यम से देश के सब व्यक्ति अपने विचारों का आदान-प्रदान करके एक-दूसरे के निकट आ सकते है। अतः यदि हम राष्ट्र के रूप में एक होना चाहते है, तो हमे भाषा-सम्बन्धी विरोध का अन्त करके सम्पूर्ण देश के लिए एक भाषा निश्चित करनी पड़ेगी।

बाधाओं को दूर करने के उपाय
Measures to Remove the Obstacles

राष्ट्रीय एकता के मार्ग से बाधाओं को दूर करने के लिए हमारी सरकार और कांग्रेस—दोनों ही प्रयत्नशील हैं। उनके प्रयास के फलस्वरूप ही 'भावात्मक एकता समिति' (Emotional Integration Committee) की स्थापना हुई और कांग्रेस के भावनगर अधिवेशन में 'राष्ट्रीय एकता-सम्मेलन' (National Integration Conference) बुलाया गया। हम यहाँ उपर्युक्त समिति और सम्मेलन के सुझावों का विशेष रूप से अध्ययन करेंगे; यथा :—

(अ) भावात्मक एकता समिति के सुझाव : Suggestions of Emotional Integration Committee—इस समिति के अध्यक्ष, डा० सम्पूर्णानन्द के विचारानुसार, राष्ट्रीय एकता को उत्पन्न करने में 'शिक्षा' अति महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती है। अतः उन्होंने अधोलिखित सुझाव दिये हैं :—

1. शिक्षा द्वारा बालकों में उचित अभिरुचियों, दृष्टिकोणों और संवेगों का विकास किया जाय, ताकि वे अपनी सांस्कृतिक विरासत की विशेषताओं और परम्पराओं को समझ सकें।
2. उपर्युक्त लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम मे इतिहास को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाय, क्योंकि राष्ट्रीय एकता के पाठ को सिखाने के लिए इतिहास का शिक्षण अनिवार्य है।
3. इतिहास-शिक्षण के लिए योग्य अध्यापकों की आवश्यकता है। अतः इस आवश्यकता को पूरा किया जाय।
4. यह आवश्यक है कि मध्यकाल का इतिहास पढ़ाते समय शिक्षक के द्वारा उन समान सांस्कृतिक तत्त्वों पर बल दिया जाय, जिन्होंने हिन्दू और मुस्लिम संस्कृतियों के मिलाने मे सहायता दी और जिसके कारण स्थापत्य, चित्रकला, साहित्य आदि के क्षेत्रों में एकता आई।
5. राष्ट्रीय एकता के स्वप्न को साकार करने के लिए ऊपर लिखे अनुसार शीघ्रातिशीघ्र शिक्षा की व्यवस्था की जाय।

(ब) 'राष्ट्रीय एकता सम्मेलन' के सुझाव : **Suggestions of National Integration Conference**—'राष्ट्रीय एकता सम्मेलन' ने राष्ट्रीय एकता को प्राप्त करने के लिए कुछ सुझाव दिये हैं। हम इन पर अलग-अलग प्रकाश डाल रहे हैं; यथा :—

(i) राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा के उद्देश्य : **Aims of Education for National Integration**—'राष्ट्रीय एकता सम्मेलन' ने शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य बताये है :—

1. सभी छात्रो को देश के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान कराया जाय।
2. छात्रो को स्वतन्त्रता-प्राप्ति से सम्बन्धित बातों से विशेष रूप से परिचित कराया जाय।
3. राष्ट्रीय एकता के विकास के लिए सभी जातियों, सम्प्रदायों और राज्यों में अधिक मेल उत्पन्न करने वाली पढ़ाई-लिखाई को प्रोत्साहित किया जाय।

(ii) राष्ट्रीय एकता के लिए शैक्षिक कार्यक्रमों का सुझाव : **Suggestions for Educational Programmes for National Integration**—'सम्मेलन' ने उपरिलिखित शिक्षा के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर राष्ट्रीय एकता के विकास के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये है :—

1. स्कूलों और कॉलिजों मे पढ़ाई जाने वाली पाठ्य-पुस्तकों की जाँच की जाय।

2. ऐसी पाठ्य-पुस्तकें पढ़ाई जायँ, जिनसे राष्ट्रीय एकता के विकास में सहायता मिले ।
3. सभी जातियों और धर्मों के व्यक्तियों द्वारा लोकप्रिय मेलों और त्यौहारो में भाग लिया जाय ।
4. साम्प्रदायिक खतरो के बारे में लोगो को शिक्षा देने के लिए जन-सम्पर्क आन्दोलन आरम्भ किया जाय ।
5. साम्प्रदायिक एकता से मम्बन्धित अध्ययन-गोष्ठियों और नाटकों का आयोजन किया जाय ।
6. राष्ट्रीय एकता की भावना को प्रबल बनाने के लिए फिल्मों, समाचार पत्रों और रेडियो का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाय ।
7. विभक्त और विघटित करने वाली प्रवृत्तियों का विरोध करने के लिए संक्षिप्त और विशिष्ट फिल्म तैयार की जाएँ ।
8. सरकारी नौकरियाँ—धार्मिक, प्रान्तीय और साम्प्रदायिक आधारो पर न दी जायँ ।
9. महत्त्वपूर्ण सरकारी पदों पर नियुक्तियों के समय अखिल भारतीय दृष्टिकोण को विशेष रूप से ध्यान में रखा जाय ।

राष्ट्रीय एकता के लिए शैक्षिक कार्यक्रम
Educational Programme for National Integration

हम ऊपर बता चुके है कि राष्ट्रीय एकता स्थापित करने में शिक्षा महत्त्वपूर्ण योग दे सकती है । 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' के अनुसार यह तभी सम्भव हो सकता है, जब शिक्षा का मुख्य ध्येय—देश-प्रेम उत्पन्न करना हो । 'आयोग' ने देश-प्रेम के सम्बन्ध मे निम्नलिखित चार बातें बताई है :—

1. राष्ट्रीय हित के लिए व्यक्तिगत हित का त्याग ।
2. देश की निर्बलताओं को स्वीकार करने की तत्परता ।
3. व्यक्ति की योग्यता के अनुसार देश की सर्वोत्तम सेवा ।
4. देश की सामाजिक और सास्कृतिक उपलब्धियों का उचित मूल्याकन ।

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर शिक्षा का कार्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए; क्योकि तभी शिक्षा राष्ट्रीय एकता के कार्य में सहयोग दे सकेगी । शिक्षा का यह कार्यक्रम विभिन्न स्तरों पर किस प्रकार का होना चाहिए, इस पर हम नीचे प्रकाश डाल रहे हैं :—

(1) प्राथमिक स्तर : Primary Stage—इस स्तर पर शिक्षा का कार्य निम्नलिखित होना चाहिए :—

1. पाठ्यक्रम में लोकगीतों और कहानियों को स्थान दिया जाय ।
2. कहानियाँ भारत के विभिन्न क्षेत्रों से चुनी जायँ ।

3. बालकों को विभिन्न क्षेत्रों के महान् व्यक्तियो के जीवन से परिचित कराया जाय।
4. बालकों को सामाजिक जीवन की दशाओं का सरलतम ज्ञान दिया जाय।
5. बालकों को प्रत्येक क्षेत्र के मानव-भूगोल की जानकारी कराई जाय।
6. बालकों को राष्ट्रीय गीत, राष्ट्रीय झण्डे और अन्य राष्ट्रीय चिह्नों का पूर्ण ज्ञान कराया जाय।
7. बालकों द्वारा राष्ट्रीय त्यौहार मनाये जायें, और उनसे इन त्यौहारों से सम्बन्धित नियमों का पालन कराया जाय।

(2) माध्यमिक स्तर : Secondary Stage—इस स्तर पर राष्ट्रीय गीत, ोय झण्डे और राष्ट्रीय पर्व के महत्त्व को बताने के साथ-साथ, शिक्षा में अधो-ुत बातों को स्थान दिया जाना चाहिए :—

1. बालकों को भारत का सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास पढ़ाया जाय।
2. बालकों को विभिन्न क्षेत्रो की संस्कृतियों और सामाजिक दशाओं से परिचित कराया जाय।
3. बालकों को भारत के वैज्ञानिक और आर्थिक विकास के विषय में जानकारी कराई जाय।
4. शिक्षा की ऐसी विधि अपनायी जाय, जिससे बालकों में राष्ट्रीय चेतना का विकास हो।

(3) विश्वविद्यालय-स्तर : University Stage—इस स्तर पर छात्रों का ़सिक दृष्टिकोण विस्तृत हो जाता है। अतः उनके लिए निम्नलिखित शैक्षिक ़क्रम अपनाया जाना चाहिए :—

1. समय-समय पर विचार-गोष्ठियों और अध्ययन-गोष्ठियों की व्यवस्था की जाय।
2. इन गोष्ठियों में भाग लेने के लिए अन्य क्षेत्रो के विश्वविद्यालयों के छात्रों को आमंत्रित किया जाय।
3. देश के विभिन्न भागों में 'युवक-उत्सवों' (Youth-Festivals) का आयोजन किया जाय। इनमें देश के सभी विश्वविद्यालयों से चुने हुए छात्रों को भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।
4. छात्रो को विभिन्न क्षेत्रों की भाषाओं, साहित्यों, संस्कृतियो आदि का तुलनात्मक अध्ययन कराया जाय।

उपसंहार—आज हम सभी भारत की स्थिति से परिचित हैं। चीन और पाकि-ान हम पर आक्रमण कर चुके हैं और आक्रमण फिर हो सकता है। इस बाह्य

संकट की तुलना में अन्दर का संकट कुछ कम नही है। देश के अन्दर ऐसी शक्तियाँ और प्रवृत्तियाँ काम कर रही है, जो उसकी एकता को नष्ट करने पर तुली हुई है।

ऐसी स्थिति में देश की रक्षा करने का उपाय केवल यही है कि शिक्षा को माध्यम बनाकर भारत के जन-जन में राष्ट्रीयता की भावना भर दी जाय। जो बालक, युवक और युवतियाँ शिक्षा-संस्थाओं में हैं, वहाँ इन संस्थाओ के द्वारा उनमें राष्ट्रीयता की भावना का समावेश किया जाय।

जो वहाँ नही हैं और जीवन के विभिन्न क्षेत्रो में कार्य कर रहे है, उनके लिए प्रचार के ऐसे साधन अपनाये जायें, जिनसे वे राष्ट्रीयता की भावना से सराबोर हो जायें। ऐसा किया जाना अति आवश्यक है। यह देश की माँग है, समय की माँग है। इस माँग को पूर्ण करना—भारतीय होने के नाते हम सब का कर्त्तव्य है।

जवाहरलाल नेहरू का कथन है :—"हमें स्थानीय, संकीर्ण, प्रान्तीय, साम्प्रदायिक और जातीय विचारों का नहीं होना चाहिए, क्योंकि हमको एक महान् कार्य करना है। हम जो भारतीय गणतन्त्र के नागरिक हैं, उन्हें भारतीय जनता में एकता स्थापित करनी है। हमें इस महान् देश को महान् राष्ट्र बनाना है, शब्द के साधारण अर्थ में महान् नहीं, वरन् विचार में महान्, कार्य में महान्, संस्कृति में महान् और मानव-जाति की शान्ति से सेवा करने में महान्।"

UNIVERSITY QUESTIONS

1. How far do you accept education for national integration as aim of education ? What steps would you take to promote the spirit of nationalism in boys and girls ?

आप राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा को—शिक्षा के एक उद्देश्य के रूप में किस सीमा तक स्वीकार करते है ? आप लड़कों तथा लड़कियों में राष्ट्रीयता की भावना को विकसित करने के लिए किन उपायों को काम में लायेंगे ?

2. Should education for nationalism be imparted to the youth of our country ? Support your answer with reasons and concrete examples.

क्या हमारे देश के नवयुवकों को राष्ट्रीयता की शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए ? अपने उत्तर की पुष्टि में तर्क तथा वास्तविक उदाहरण दीजिये।

3. Discuss briefly the developments which have demonstrated the sign of our national disintegration. Can they be checked by the right type of education ? If so, how ?

उन तत्त्वों की विवेचना कीजिए जिन्होंने हमारी राष्ट्रीय एकता को विघटित करने में सहायता दी है। क्या इनको उचित प्रकार की शिक्षा द्वारा रोका जा सकता है ? यदि हाँ, तो कैसे ?

4. Throw light on the problem of national integration. Can it be solved by reorganising education ? What lines will you suggest for it ?

राष्ट्रीय एकता की समस्या पर प्रकाश डालिए। क्या शिक्षा का पुनर्संगठन करके इसका समाधान किया जा सकता है ? आप इसके लिए क्या रूपरेखा प्रस्तुत कर सकते हैं ?

5. What are the obstacles to national integration ? How far can education help in removing them ?

राष्ट्रीय एकता में कौन-सी बाधाएँ हैं ? शिक्षा इनको दूर करने में किस प्रकार सहायक हो सकती है ?

6. Discuss in some detail the educational programme for national integration.

राष्ट्रीय एकता की शिक्षा के कार्यक्रम की विस्तारपूर्वक विवेचना कीजिए।

7. Discuss the meaning and need of national integration with special reference to India. What can be the role of education in bringing about national integration in our country ?

भारत के विशिष्ट संदर्भ में राष्ट्रीय एकता के अर्थ एवं आवश्यकता का विवेचन कीजिए। हमारे देश में राष्ट्रीय एकता की स्थापना में शिक्षा का क्या कार्य हो सकता है ?

14

अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए शिक्षा
EDUCATION FOR INTERNATIONAL UNDERSTANDING

"दो विश्व-युद्धों ने यह सिद्ध कर दिया है कि क्षुद्र राष्ट्रीयता के संकीर्ण बन्धनों को तोड़ डालना चाहिए और मानव-सम्बन्धों का विकास करने के लिए मानव-जाति के संघ का निर्माण किया जाना चाहिए।"

"The two Global Wars have established the fact that the narrow bonds of sordid nationalism must be smashed through and a Federation of Mankind should be brought into being for fostering human relations."—**Romain Rolland.**

विषय-प्रवेश

राष्ट्रीयता की भावना जब तक उदार, विस्तृत और विशाल रहती है, तभी तक सुन्दर और ग्राह्य बनती है। जहाँ वह संकीर्ण हुई नहीं कि घातक और हेय बन जाती है। अन्धी और संकीर्ण राष्ट्रीयता युद्धों की जननी होती है, अशान्ति को आश्रय देती है, मानव मात्र में भेद डालती है, और उन्हें एक-दूसरे से भिन्न कर देती है।

आज विश्व के राष्ट्र इसी अन्धी राष्ट्रीयता से आच्छादित है, जो मानवता का गला घोंट रही है। आज एक राष्ट्र अपनी सुख-समृद्धि—दूसरे राष्ट्र की बलि देकर प्राप्त करना चाहता है। आज मानव अपने राष्ट्र के लिए दूसरे राष्ट्र की हत्या की इच्छा करता है। विश्व में पिछले दो महायुद्ध एवं तीसरे का सम्भावित संकट—इसी का परिणाम है। राष्ट्रीयता के इस ओछे तथा घृणित स्वरूप को त्याग कर और अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास करके ही मानव का कल्याण हो सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीयता का अर्थ
Meaning of Internationalism

जब व्यक्ति अपने राष्ट्र तक सीमित न रहकर समस्त विश्व को अपना निवास-स्थल समझने लगता है, उससे ममता करने लगता है, उसे मानवता की श्रेष्ठतम वृत्तियों का क्रीड़ा-स्थल बनाने के प्रयास में जुट जाता है, तब उसकी भावनायें राष्ट्रीयता की परिधि में न रहकर अन्तर्राष्ट्रीयता की गोद में विचरण करने लगती हैं; वह विराट, विशाल और व्यापक बन जाता है।

अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना—विश्व-मैत्री और विश्व-बन्धुत्व की महान् भावनाओं पर आधारित है। मानव-मात्र का कल्याण हो, प्राणिमात्र पर समान दृष्टि रहे, विश्व-भर में राष्ट्रों की पारस्परिक मित्रता हो—उनमें भाई-चारे का नाता हो, समस्त वसुधा ही कुटुम्ब के समान प्रतीत हो, अन्तर्राष्ट्रीयता इन्हीं श्रेष्ठ विचारों पर निर्भर करती है। "वसुधैव कुटुम्बकम्", "आत्मवत् सर्वभूतेषु" एवं महात्मा गाधी द्वारा दिये गये अहिंसा और विश्व-मैत्री के अमर सन्देश—इसी अन्तर्राष्ट्रीयता का पाठ पढ़ाते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीयता के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम दो परिभाषायें नीचे दे रहे हैं; यथा :—

1. गोल्डस्मिथ :—"अन्तर्राष्ट्रीयता एक भावना है, जो व्यक्ति को यह बताती है कि वह अपने राज्य का ही सदस्य नहीं है, वरन् विश्व का नागरिक भी है।"

"Internationalism is a feeling that the individual is not only a member of his state, but a citizen of the world."—**Goldsmith.**

2. डाक्टर वाल्टर एच० सी० लेव्ज—"अन्तर्राष्ट्रीय भावना इस ओर ध्यान दिए बिना कि व्यक्ति किस राष्ट्रीयता या संस्कृति के है, एक-दूसरे के प्रति सब जगह उनके व्यवहार का आलोचनात्मक और निष्पक्ष रूप से निरीक्षण करने और आंकने की योग्यता है।"

"International understanding is the ability to observe critically and objectively and appraise the conduct of men everywhere to each other irrespective of the nationality or culture to which they belong."—**Dr. Walter H. C. Laves.**

अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए प्रयास
Efforts for International Understanding

इतिहास हमें बताता है कि अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए बहुत समय से प्रयास किया जा रहा है। आज से 600 वर्ष पूर्व पियरे ड्यूबिअस (Pierre Dubios) ने अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय विद्यालयों के विचार को प्रतिपादित किया था। उसके बाद कॉमेनियस (Comenius)

ने विश्व-शान्ति और सामजस्य के लिए 'पैनसोफ़िक कॉलेजों' (Pansophic Colleges) की स्थापना का सुझाव दिया। इसी उद्देश्य को अपने दृष्टिकोण में रखकर अमेरिका के राष्ट्रपति टेफ्ट (President Taft) ने 1912 में हेग (Hague) में एक सम्मेलन किया, पर उसे सफलता नहीं मिली।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद श्रीमती एण्ड्रूज (Mrs. Andrews) ने 'अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा-विभाग' (International Department of Education) को 'राष्ट्र-संघ' (League of Nations) में मिलाने का असफल प्रयत्न किया। सन् 1926 में 'बौद्धिक सहयोग-आयोग' (Commission of Intellectual Co-operation) की स्थापना की गई; पर धन, शान्ति और सहयोग न मिलने के कारण इसको सफलता नहीं प्राप्त हुई।

इसके बाद, अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए कोई महत्त्वपूर्ण प्रयास नहीं किया गया। इसका कारण यह था कि हिटलर के जर्मनी में 'नाज़ीवाद' और मुसोलिनी के इटली में 'फासीवाद' के सिद्धान्तों के प्रचार के कारण, जिनका प्रमुख आधार 'उग्र-राष्ट्रवाद' (Chauvenism) था, यूरोप के सभी निवासियों के हृदय में हलचल हो गई थी। इस उग्र-राष्ट्रवाद के प्रचार का परिणाम हुआ—द्वितीय विश्व-युद्ध।

इस युद्ध ने सभी देशों के व्यक्तियों को इतना आतंकित कर दिया कि वे गम्भीरतापूर्वक इस बात पर विचार करने लगे कि भविष्य में युद्ध न हो। इस विचार को साकार रूप देने के लिए एक नये अन्तर्राष्ट्रीय संगठन की स्थापना की गई, जिसे 'संयुक्त राष्ट्र-संघ' (United Nations Organisation) के नाम से पुकारा गया।

इस 'संघ' का प्रमुख ध्येय है—विश्व में शान्ति बनाये रखना। इसके लिए अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना को विकसित करना आवश्यक समझा गया। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए "संयुक्त राष्ट्र-संघ के अधिकार-पत्र' में कहा गया है :—"अन्तर्राष्ट्रीय स्थिरता का विकास करने के लिए संयुक्त राष्ट्र-संघ अन्तर्राष्ट्रीय, सांस्कृतिक और शैक्षिक सहयोग को विकसित करेगा।"

"In order to promote international stability the United Nations shall promote international, cultural and educational co-operation."—**United Nations Charter.**

'राष्ट्र-संघ' के अधीन अनेक परिषद, कमीशन व एजेन्सियाँ है। इनमें 'यूनेस्को' या 'संयुक्त राष्ट्र—शिक्षा, विज्ञान व सांस्कृतिक परिषद्' (UNESCO or United Nations Educational Scientific & Cultural Organization) प्रमुख है।

यूनेस्को व अन्तर्राष्ट्रीय भावना
UNESCO & International Understanding

"यूनेस्को" का आधारभूत सिद्धान्त है :—"क्योंकि युद्ध, मनुष्यों के मस्तिष्क में

आरम्भ होते हैं, इसलिए शान्ति की सुरक्षा के साधनों का निर्माण मनुष्यों के मस्तिष्क में ही किया जाना चाहिए।"

"Since wars begin in the minds of men, it is in the minds of men that defences of peace must be created." —*UNESCO*.

'यूनेस्को' का कहना है कि शिक्षा, विज्ञान और संस्कृति के क्षेत्रों में विविध राज्यों में सहयोग स्थापित करने व उनकी आपस की विभिन्नताओं तथा विरोध के कारणों को मिटाने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि विश्व-संस्कृति का विकास किया जाय। राष्ट्रों के भेद का मुख्य आधार—संस्कृति की विभिन्नता ही है। यदि विविध राज्यों के विचारक, साहित्यिक, कवि और शिक्षा-शास्त्री समय-समय पर आपस में मिलते रहें, अपनी समस्याओं को परस्पर विचार द्वारा सुलझाते रहें, तो एक-दूसरे के दृष्टिकोण को समझने, एक-दूसरे की संस्कृति की अच्छी बातों को ग्रहण करने और एक-दूसरे के समीप आने का अपूर्व अवसर मिलता है।

'यूनेस्को' का कथन है कि युद्धों का आरम्भ मन से ही होता है। विविध लोगों के मनों में दूसरे लोगों के प्रति जब विद्वेष की भावना भर दी जाती है, तभी वे युद्ध के लिए तत्पर होते है। अतः युद्ध के खिलाफ प्रयत्नों का प्रारम्भ मनुष्यों की मानसिक भावनाओं को बदल कर ही करना चाहिए। इस परिषद् का यही उद्देश्य है। इसके लिए इसकी ओर से विविध देशों मे राष्ट्रीय कमीशनो का निर्माण किया गया है। ये कमीशन अपने-अपने देश में शिक्षा के विस्तार और विभिन्न संस्कृतियो के समन्वय का प्रयास करते हैं :

अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास के सिद्धान्त
Principles for the Development of International Understanding

1947 मे 'यूनेस्को' द्वारा 'अन्तर्राष्ट्रीयता के लिए शिक्षा' (Education for Internationalism) नामक एक पेमफ्लेट प्रकाशित किया गया। इसमे माध्यमिक विद्यालयों में सामाजिक विज्ञान को शिक्षा का माध्यम बनाने पर बल दिया गया। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित 10 सिद्धान्त प्रतिपादित किए गए :

1. आधुनिक संसार की किसी भी समस्या के किसी भी अंग में रुचि लेने के लिए छात्रों को प्रोत्साहित किया जाय।
2. सामाजिक विज्ञान के शिक्षण में विश्व के सब मुख्य अंगो के अध्ययन पर *ध्यान दिया जाय।*
3. सामाजिक विज्ञान के शिक्षण में बालकों में आलोचनात्मक तर्क-शक्ति का विकास किया जाय।
4. सामाजिक विज्ञान के शिक्षण में उचित और जरूरी बातों को प्रस्तुत किया जाय। इसके अलावा, आवश्यक मनोवृत्तियों और कौशलों के विकास पर ध्यान दिया जाय।

5. सामाजिक विज्ञान के शिक्षण के समय विभिन्न मानव-समुदायों के पारस्परिक सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्धों पर बल दिया जाय।
6. सामाजिक विज्ञान के शिक्षण के समय प्रजाति, धर्म और संस्कृति के कारण आर्थिक और शैक्षणिक स्तर पर जो भेदभाव माना जाता है, उसे दूर करने का प्रयत्न किया जाय।
7. आवश्यक मानव-सम्बन्धों का विकास करने के लिए सामाजिक विज्ञान के अध्ययन में मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के बारे में अध्ययन किया जाय।
8. सामाजिक विज्ञान के अध्ययन में नागरिकता की शिक्षा देने के लिए कक्षा, स्कूल और समाज की प्रयोगशाला के रूप में प्रयोग करने का प्रयत्न किया जाय।
9. सामाजिक विज्ञान के अध्ययन में सामाजिक घटनाओं, तनावों और सहकारिता से सम्बन्ध रखने वाली समस्याओं पर अवश्य विचार किया जाय।
10. विश्व के भूगोल के अध्ययन पर बल दिया जाय और राष्ट्र की प्राकृतिक सम्पत्ति की ओर केवल संकेत किया जाय। इसके अतिरिक्त, छात्रों का ध्यान संसार की वर्तमान खाद्य-समस्या की ओर आकर्षित किया जाय।

अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए शिक्षा की आवश्यकता
Need of Education for International Understanding

आज का युग—अन्तर्राष्ट्रीयता का युग है। आज विश्व-बन्धुत्व और विश्व-मैत्री की भावना जितनी आवश्यक है, कदाचित् उतनी पहले कभी नहीं थी। कारण यह है कि पहले का जीवन इतना जटिल नहीं था, जितना आज है; पहले मनुष्य इतना स्वार्थी नहीं था, जितना आज है; पहले राष्ट्र इतने अन्धे नहीं थे, जितने आज हैं; पहले राष्ट्र की परिधि में घिरकर मानव जी सकता था, अपने हृदय को व्यापक और विशाल बना सकता था। आज वैज्ञानिक अनुसन्धानों और वायुयान, जलयान, रेडियो, बेतार-के-तार आदि के आविष्कारों के कारण सभ्यता का रूप बदल गया है, युग की परिस्थितियाँ बदल गई हैं।

अतः आज का मानव अपने राष्ट्र के सीमित दायरे में सुख, संतोष और शान्ति से जीवन व्यतीत करना असम्भव पाता है। आज किसी राष्ट्र में घटने वाली घटना, विश्व-भर को प्रभावित कर देती है। विश्व के किसी कोने में होने वाला युद्ध, दूर-दूर तक के देशों में संकट उत्पन्न कर देता है। इसका एक उदाहरण के० जी० सैयदैन (K. G. Saiyidain) ने इस प्रकार दिया है :—"युद्ध यूरोप में, आरम्भ होता है ... बंगाल में तीन लाख व्यक्ति अकाल से मर जाते हैं, लाखों बे-घरबार हो जाते

हैं, अपने साधारण कार्यों से पृथक् हो जाते हैं, और उन सब सुखों से वंचित हो जाते हैं, जो जीवन को सुखी, रोचक और आकर्षक बनाते हैं।"

संवर्धन ने जो कुछ लिखा है, वह इस बात को सिद्ध करता है कि आज का युग अन्तर्राष्ट्रीयता का युग है। प्राचीन युग में राष्ट्रीयता की भावना हमारे लिए अनिवार्य थी और अन्तर्राष्ट्रीयता हमारे जीवन का लक्ष्य हुआ करती थी। पर आज अन्तर्राष्ट्रीयता हमारे जीवन का लक्ष्य मात्र न रहकर सबसे पहली अनिवार्यता बन गई है। इस अनिवार्यता को समझने-समझाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीयता की शिक्षा का प्रदान किया जाना आवश्यक है। यह शिक्षा ही विश्व के संघर्षों, जीवन की जटिलताओं और स्वार्थों के बवंडर से हमारी रक्षा कर सकती है।

अन्तर्राष्ट्रीय भावना का एकमात्र साधन, 'शिक्षा'
Education—the Only Means of International Understanding

यों तो अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए रेडियो, समाचार-पत्र, भाषण, सिनेमा आदि अनेक साधनों को महत्त्वपूर्ण बताया जाता है, पर इनमें 'शिक्षा' को सबसे श्रेष्ठ स्थान दिया जाता है। इस विषय में दार्शनिक, वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञ, शिक्षा-शास्त्री—सभी एकमत हैं। इसका एकमात्र कारण यह है कि जिन संस्थाओं में शिक्षा प्रदान की जाती है, वे सर्वोत्तम सांस्कृतिक तत्त्वों का प्रतिनिधित्व करती हैं और निष्पक्षता तथा सत्य के क्षेत्रों में समाज के साधारण स्तर से बहुत ऊँची होती है।

उपर्युक्त कथन की पुष्टि करते हुए 'यूनेस्को' द्वारा प्रकाशित 'टुवर्ड्स वर्ल्ड अण्डरस्टेण्डिंग' ("Towards World Understanding") में लिखा गया है :—"शिक्षालय आस-पास की संस्कृति में निहित सर्वोत्तम तत्त्वों को व्यक्त कर सकते हैं, और साधारणतः करते भी हैं। वे सत्य, ईमानदारी और निष्पक्षता में समाज के सामान्य स्तर से ऊँचे होने चाहिए और साधारणतः होते भी हैं। वे लोगों के मानदण्डों और मूल्यों को काफ़ी ऊँचा उठाने का प्रयास करते हैं।"

अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए शिक्षा के उद्देश्य
Aims of Education for International Understanding

अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास करने के लिए शिक्षा के उद्देश्यों को दो समूहों में बाँटा जा सकता है : (1) सामान्य उद्देश्य, और (2) 'यूनेस्को' द्वारा प्रतिपादित उद्देश्य।

1. सामान्य उद्देश्य : General Aims—(1) छात्रों को विश्व-नागरिकता के लिए तैयार किया जाय।

(2) उनको अन्धी और संकीर्ण राष्ट्रीयता का खण्डन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।

(3) उनको विश्व-समाज के निर्माण में सहायक मूल्यों और उद्देश्यों में आ[illegible] रखने की शिक्षा दी जाय।

(4) उनको सांस्कृतिक विभिन्नताओं में मानव-हित के लिए कल्याणकारी समान तत्वों को खोजने का प्रशिक्षण दिया जाय।

(5) उनको विश्व की समस्याओं से परिचित कराया जाय और उनका समाधान करने के लिए लोकतन्त्रीय ढंगों को बताया जाय।

(6) मानव-संस्कृति और विश्व-नागरिकता के विकास के लिए उनको सभी राष्ट्रों की उपलब्धियों का मूल्यांकन और आदर करना सिखाया जाय।

(7) उनको उन सभी आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक तत्वों की, जिनके कारण सभी राष्ट्र एक-दूसरे पर आश्रित हैं, पूर्ण जानकारी कराई जाय।

(8) उनमें स्वतन्त्र विचार, निर्णय, भाषण और लेखन की योग्यता का विकास किया जाय।

2. 'यूनेस्को' द्वारा प्रतिपादित उद्देश्य : Aims Formulated by UNESCO—'यूनेस्को' के भूतपूर्व डिप्टी डायरेक्टर जनरल, डा० वाल्टर एच० सी० लेव्ज (*Walter H. C. Laves*) द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए शिक्षा के निम्नांकित उद्देश्य प्रतिपादित किये गये :—

(1) बालकों और बालिकाओं को समाज के निर्माण में सक्रिय भाग लेने के लिए तैयार किया जाय।

(2) उनको विश्व में एक साथ रहने के लिए आवश्यक बातों का ज्ञान कराया जाय।

(3) उनको अपने स्वयं के सांस्कृतिक और राष्ट्रीय पक्षपातों को महत्व न देने की शिक्षा दी जाय।

(4) उनको विश्व के समस्त व्यक्तियों के रहन-सहन के ढंगों, मूल्यों और आकांक्षाओं से परिचित कराया जाय।

(5) उनको सब स्थानों के व्यक्तियों का एक-दूसरे के प्रति व्यवहार का आलोचनात्मक निरीक्षण करने का प्रशिक्षण दिया जाय।

(6) उनमें समस्त राष्ट्रीयताओं, संस्कृतियों और प्रजातियों के व्यक्तियों को समान समझने की भावना उत्पन्न की जाय।

अन्तर्राष्ट्रीयता व शैक्षिक कार्यक्रम
Internationalism & Educational Programme

उपरिलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रचलित शैक्षिक कार्यक्रम में परिवर्तन करना आवश्यक हो जाता है। इस सम्बन्ध में अधोलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं :—

1. विद्यालय के वातावरण में परिवर्तन : Change in School Environment—आजकल हमारे विद्यालयों का वातावरण अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए

उपयुक्त नहीं है। जाति, धर्म, सम्प्रदाय आदि पर आधारित विद्यालय इस भावना के विकास में निश्चित रूप से वाधक हैं।

अतः यह आवश्यक है कि इन विद्यालयों का कलेवर पूर्णतः वदल दिया जाय और इनमें इस प्रकार के वातावरण का निर्माण किया जाय, जो बालकों में अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना का विकास करने में सहायता दे।

2. शिक्षण-विधि में परिवर्तन : Change in Method of Teaching—अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास करने के लिए शिक्षण-विधि में परिवर्तन किया जाना आवश्यक है; उदाहरणार्थ—विज्ञान के शिक्षण में उसके सामाजिक पक्ष पर वल दिया जाय। इसका अर्थ यह है कि—बालकों को यह बताया जाय कि वैज्ञानिक आविष्कारों के द्वारा मानव-जीवन को किस प्रकार सुखी और सम्पन्न बनाया जा सकता है।

इसी प्रकार, अन्य विषयों के शिक्षण में भी उनके सामाजिक और अन्तरराष्ट्रीय पक्षों पर वल दिया जाय। *सभी विषयों का अध्ययन अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से किया जाय।*

3. पाठ्यक्रम में परिवर्तन : Change in Curriculum—(1) "अन्तरराष्ट्रीय भावना" नामक विषय को अनिवार्य बनाया जाय।

(2) विश्व के प्रमुख धर्मों और उनके आदर्शों को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाय।

(3) विश्व-इतिहास, विश्व-साहित्य, विश्व-कला और विश्व-संस्कृतियों से सम्बन्धित पाठ्य-वस्तु को रखा जाय।

(4) विभिन्न देशों में रहने वाले व्यक्तियों के रहन-सहन, समानताओं और असमानताओं को इनसे सम्बन्धित विषयों में महत्त्व दिया जाय।

4. अन्य सुझाव : Other Suggestions—(1) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर खेल-कूद की प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाय।

(2) रेडियो, समाचार-पत्र, सिनेमा, भाषण आदि अविधिक (Informal) साधनों का प्रयोग किया जाय।

(3) छात्रों को अन्य देशों के छात्रों को 'पत्र-मित्र' (Pen-friends) बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।

(4) एक देश के छात्रों और शिक्षकों के द्वारा दूसरे देशों में जाकर अध्ययन और अध्यापक का कार्य किया जाय।

(5) छात्रों को संयुक्त राष्ट्र-संघ के अन्तर्गत कार्य करने वाले 'यूनेस्को', 'अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय', 'विश्व-स्वास्थ्य-संगठन' आदि में रुचि कराई जाय, क्योंकि ये संस्थाएँ विश्व के दुःखी और पिछड़े हुए व्यक्तियों के लिए सराहनीय कार्य कर रही हैं।

उपसंहार

आधुनिक युग में अन्तर्राष्ट्रीयता का महत्त्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। यातायात के नये और तेज़ साधनों और बेतार-के-तार ने संसार को बहुत छोटा बना दिया है। सभी देश एक-दूसरे के इतने निकट आ गये हैं कि एक देश में होने वाली महत्त्वपूर्ण या भीषण घटना संसार के अन्य देशों को प्रभावित करती है। विश्व के किसी कोने में होने वाले युद्ध या संसार के किसी देश का आर्थिक संकट अन्य देशों को *अछूता नहीं छोड़ता* है। ऐसी *स्थिति में मिल-जुलकर* रहने से, एक-दूसरे को सहायता और सहयोग देने से ही सब देशों का अस्तित्व बना रह सकता है। वह समय बीत चुका है—जब एक देश अच्छी प्राकृतिक सीमाओं से घिरे होने के कारण अपने को सुरक्षित समझता था और अन्य देशों से अलग रह सकता था। आज हिमालय ऐसे ऊँचे पहाड़ और प्रशान्त महासागर ऐसे विशाल समुद्र को बड़ी सरलता से पार किया जा सकता है।

ऐसी परिस्थिति में मानव-जाति की रक्षा और कल्याण तभी हो सकता है, जब अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास किया जाय। इसके लिए शिक्षा से अधिक अच्छा माध्यम और कोई नहीं हो सकता है। यदि संसार के देशों ने शिक्षा को माध्यम बनाकर अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास नहीं किया और संकुचित राष्ट्रीयता का प्रचार करते रहे, तो भविष्य में होने वाला कोई भी युद्ध मानव-जाति को इस पृथ्वी से खतम कर सकता है। जवाहरलाल नेहरू ने ठीक ही लिखा है :—**"पृथकता का अर्थ है—पिछड़े रहना और पतन। संसार बदल गया है और पुरानी रुकावटें समाप्त होती जा रही है। जीवन अधिक ही अधिक अन्तर्राष्ट्रीय होता जा रहा है। हमें इस भावी अन्तर्राष्ट्रीयता में अपना पार्ट अदा करना है।"**

Isolation means backwardness and decay. The world has changed and old barriers are breaking down, life becomes more international. We have to play our part in this coming internationalism."—**Jawaharlal Nehru** : *Discovery of India*, p. 580.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What do you understand by internationalism ? Discuss the need and importance of education for international understanding.

आप अन्तर्राष्ट्रीयता से क्या समझते है ? अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए शिक्षा की आवश्यकता तथा महत्त्व की विवेचना कीजिए।

2. Why is education regarded as the only means of international understanding ?

शिक्षा को ही अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए एकमात्र साधन क्यों माना जाता है ?

3. What, in your opinion, should be the aim of education for international understanding ?

आपके मतानुसार अन्तर्राष्ट्रीय भावना के लिए शिक्षा का क्या उद्देश्य होना चाहिए ?

4. How should the educational programme be organized to develop an international outlook in students ?

छात्रों में अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण विकसित करने के लिए शिक्षा के कार्यक्रम को किस प्रकार संगठित किया जाना चाहिए ?

5. How far do you accept education for international understanding as an aim of education ? What steps would you take to promote the spirit of internationalism in children ?

आप अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास को शिक्षा के उद्देश्य के रूप मे किस सीमा तक स्वीकार करते है ? बालकों में अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना को विकसित करने के लिए आप किन साधनों को प्रयोग में लायेंगे ?

6. How far is education for nationalism and for internationalism mutually exclusive and complementary ? Is it possible to give both national and international training to the youth of a country without apparent contradiction ? Support your view with arguments.

राष्ट्रीयता तथा अन्तर्राष्ट्रीयता के लिए शिक्षा किस सीमा तक एक-दूसरे से पृथक् एवं पूरक है ? क्या किसी देश के नवयुवकों को एक साथ राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय प्रशिक्षण प्रदान करना सम्भव है ? अपने उत्तर की पुष्टि तर्क देकर कीजिए।

7. What is international understanding ? Discuss the factors that should be emphasized in developing it in children.

अन्तर्राष्ट्रीय भावना क्या है ? बालकों में इसके विकास के लिए हमें जिन बातों पर बल देना चाहिए, उनकी विवेचना कीजिए।

8. What is international understanding ? Is there any clash between nationalism and internationalism ? How will you foster the attitude of internationalism in children ?

अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध क्या है ? क्या राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता में विरोध है ? बच्चों में अन्तर्राष्ट्रीयता की अभिवृत्ति का विकास आप कैसे करेंगे ?

15

अन्तर-सांस्कृतिक भावना के लिए शिक्षा
EDUCATION FOR INTER-CULTURAL UNDERSTANDING

"किसी राष्ट्र की श्रेष्ठता का अनुमान उसकी भौतिक शक्ति और सम्पत्ति से नहीं, वरन् उसके निवासियों के अन्तर-सांस्कृतिक सम्बन्धों से लगायी जानी चाहिए।"

"The greatness of a nation is to be measured not by its material power and wealth, but by the intercultural relationships of its people."—**Dr. S. Radhakrishnan :** *Occasional Speeches & Writings*, Vol. III, p. 75.

विषय-प्रवेश

भारतीय संस्कृति सहस्राब्दियों प्राचीन है। प्राचीन काल में वह सदैव प्रगति की ओर उन्मुख रही। उसने इस विशाल देश की नाना प्रकार की जातियों, विभिन्न मतावलम्बियों और भिन्न-भिन्न भाषा-भाषियों को ऐसी एकता प्रदान की, जो अन्यत्र अप्राप्त थी। उसने अनेक संस्कृतियों को प्रभावित किया और सुदूर देशों से अन्तर-सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित किये। कम्बोडिया के मन्दिर, जावा के प्रस्तर-चित्र, विभिन्न देशों में प्राप्त बुद्ध और गणेश की मूर्तियाँ आदि; इन्हीं अन्तर-सांस्कृतिक सम्बन्धों की घोषणा करती थी।

इस प्रकार, छठी शताब्दी ईसा तक लगभग सम्पूर्ण एशिया में सांस्कृतिक ज्ञान की ज्योति जगाकर और विश्व का नेतृत्व करने के बाद हम प्रगाढ़ मोह-निद्रा में पड़ गये। तेरह शताब्दियों के सुदीर्घ विश्राम के बाद हम आज फिर जागे हैं, पर आज हमारे सामने चित्र ही दूसरा है। देश में जातीयता, प्रान्तीयता, साम्प्रदायिकता एवं पारस्परिक वैमनस्य का ताण्डव नृत्य हो रहा है, और संसार—विश्व-युद्ध के

घनान्धकार से आवृत्त अपने सर्वनाश की आशंका से भयभीत है। ऐसी स्थिति में भारत और विश्व का कल्याण—सरकारी परिषदें और समितियाँ एवं संयुक्त राष्ट्र-संघ नहीं, वरन् शिक्षा के द्वारा अन्तर-सांस्कृतिक भावना का पूर्ण विकास और जन-जन के हृदय में उसका स्थायी निवास ही कर सकता है।

अन्तर-सांस्कृतिक भावना का अर्थ
Meaning of Inter-cultural Understanding

अन्तर-सांस्कृतिक भावना का अर्थ है—अपने और अन्य देशों की विभिन्न संस्कृतियों के प्रति सम्मान की भावना।

डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार :—"मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएँ ही संस्कृति है।" इन साधनाओं के अन्तर्गत वे सब संस्कार आ जाते है, जिनसे मनुष्य अपने सामूहिक या सामाजिक आदर्शों का निर्माण करता है; यथा—व्यवहार, आचरण, मूल्य, मान्यतायें, परम्परायें आदि। जब व्यक्ति में अन्तर-सांस्कृतिक चेतना का विकास हो जाता है, तब वह इनको समझने का प्रयास करता है, इनका आदर करता है और इनके प्रति सद्भावना रखता है। इस भावना से निर्देशित होकर वह सांस्कृतिक विभिन्नता, धार्मिक असहिष्णुता, पारस्परिक कटुता और मानसिक संकीर्णता का परित्याग करके राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है।

अन्तर-सांस्कृतिक भावना के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम दो परिभाषायें दे रहे हैं; यथा :—

1. 'जनरल ऐजूकेशन बोर्ड' की रिपोर्ट :—"अन्तर-सांस्कृतिक भावना के द्वारा पूर्वद्वेषों का विनाश और विभिन्न संस्कृतियों के प्रति ज्ञान और प्रशंसा के दृष्टिकोणों का निर्माण होता है।"

"Prejudices are dispelled and attitudes of understanding and appreciation of various cultures are built up through intercultural understanding."—*Report of the Committee for Evaluation to the General Education Board*, p. 7.

2. क्लॉसमियर :—"अन्तर-सांस्कृतिक भावना का अभिप्राय है—किसी समुदाय, राज्य या राष्ट्र के व्यक्तियों और समूहों की समानता का ज्ञान, उनमें पाई जाने वाली विभिन्नताओं की खोज और उन पर विचार-विमर्श, एवं समूहों की समस्याओं का समाधान करने के लिए जनतन्त्रीय आदर्शों का प्रयोग।"

"Intercultural understanding implies how individuals and groups within a community, state, or nation are alike discovering and discussing differences which exist, and applying the democratic ideals to solving problems which groups meet."—**Herbert J. Klausmeier :** *Principles & Practices of Secondary School Teaching*, pp. 124-125.

अन्तर-सांस्कृतिक शिक्षा का अर्थ
Meaning of Intercultural Education

लगभग सभी देशों में, पर विशेष रूप से भारत में, विभिन्न संस्कृतियों के व्यक्ति निवास करते है। अन्तर-सास्कृतिक शिक्षा इन सस्कृतियों की समान और असमान बातों को समझने मे सहायता देती है। क्लॉसमियर ने लिखा है :—"अन्तर-सांस्कृतिक शिक्षा, छात्रों को उन व्यक्तियों की विभिन्नताओं और समानताओं को समझने मे सहायता देती है, जो हमारे समाज और विश्व का निर्माण करते हैं।"

"Intercultural education is concerned with helping students to understand the differences and likenesses of individuals who comprise our society and the world."—Herbert J. Klausmeier : *op. cit.*, p. 124.

अन्तर-सांस्कृतिक शिक्षा (भावना) की आवश्यकता
Need for Intercultural Education (Understanding)

मेयर (Mayer) का कथन है :—"अन्तर-सांस्कृतिक शिक्षा इस दुःखद तथ्य को स्वीकार करती है कि विशाल समूहों को अब भी समुदाय के जीवन मे पूर्ण रूप से भाग लेने से वचित रखा जाता है।"

मेयर द्वारा उल्लिखित विशाल समूह है—लगभग सब देशो मे विद्यमान अल्पसंख्यक वर्ग, जैसे—भारत में शूद्र, आयरलैंड में प्रोटेस्टेण्ट, जर्मनी मे यहूदी, अफीका मे प्रवासी नागरिक और सयुक्त राज्य अमरीका मे नीग्रो। यद्यपि इन वर्गों के व्यक्ति आज्ञाकारी और कर्त्तव्य-परायण नागरिक है, यद्यपि इनकी आकाक्षाये और आवश्यकताएँ बहुसख्यक वर्गों के समान हैं, फिर भी इन पर नाना प्रकार के अत्याचार किये जाते है, इन पर अनेक सामाजिक और राजनीतिक प्रतिबन्ध लगाये जाते है और इनको समुदाय के जीवन में पूर्ण रूप से भाग लेने की अनुमति नही दी जाती है। इसका कारण यह है कि इन वर्गों की सस्कृतियों को हेय और इनके सदस्यो को हीन समझा जाता है। इनके प्रति यह दृष्टिकोण देश की एकता और प्रगति मे अवरोध उत्पन्न करता है।

इस अवरोध को दूर करने के लिए विभिन्न सस्कृतियो के कारण उत्पन्न होने वाले तनावों और मतभेदों का अन्त करना, अल्पसख्यको को सभी प्रकार के सामाजिक और राजनीतिक अधिकार और सुविधाये प्रदान करना एव इनके प्रति सब प्रकार के पूर्वद्वेषों और दुराग्रहो को समाप्त करना आवश्यक है। इसी आवश्यकता का अनुभव करके अन्तर-सास्कृतिक शिक्षा का आयोजन किया जा रहा है। किलपेट्रिक व टिल का कथन है :—"अन्तर-सांस्कृतिक शिक्षा—वास्तविक और सम्भव अन्तर-सांस्कृतिक तनावो एवं अल्पसख्यक वर्गों के प्रति सब दुराग्रहों, पूर्वद्वेषो और भेदभावों की बुराइयों का अन्त करने का प्रयास करती है।"

"Intercultural education seeks to bear on actual and possible intercultural tensions and on the evils of all bias, prejudice and discrimination against minority groups."—W. H. Kilpatrick & W. Van Til : *Intercultural Attitudes in the Making*, p. 4.

अन्तर-सांस्कृतिक भावना व शैक्षिक कार्यक्रम
Intercultural Understanding & Educational Programme

अन्तर-सांस्कृतिक भावना का विकास और विस्तार करने के लिए विद्यालयों के शैक्षिक कार्यक्रम में रूपान्तर करना अनिवार्य है। इस सम्बन्ध में कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव निम्नलिखित हैं :—

(1) विद्यालय के वातावरण में परिवर्तन : Change in School Environment—यह तथ्य सर्वविदित है कि हमारे किसी भी विद्यालय का वातावरण अन्तर-सांस्कृतिक भावना का निर्माण करने में असमर्थ है। जो विद्यालय विभिन्न धर्मों, जातियों और सम्प्रदायों द्वारा संचालित किये जा रहे हैं, उनमें उन्हीं के सांस्कृतिक विचारों और प्रतिमानों का गुणगान किया जाता है।

अतः उन विद्यालयों से यह आशा करना व्यर्थ है कि वे अन्तर-सांस्कृतिक भावना के विकास में किसी प्रकार का योग दे सकते हैं। इन परिस्थितियों में यह नितान्त आवश्यक है कि सरकारी और गैर-सरकारी—सभी प्रकार के विद्यालयों में इस प्रकार के वातावरण का निर्माण किया जाय, जो छात्रों में अन्तर-सांस्कृतिक भावना और समन्वयकारी दृष्टिकोण उत्पन्न करने में सहायता दे।

(2) शिक्षण-विधियों में परिवर्तन : Change in Methods of Teaching - हम अपने विद्यालयों में विदेशियों द्वारा प्रतिपादित शिक्षण-विधियों का प्रयोग करने में गर्व का अनुभव करते हैं। हमने इस बात पर आज तक रंचमात्र भी विचार नहीं किया है कि इनका हमारे देश की संस्कृतियों से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है।

यदि हम वास्तव में अपने छात्रों में अन्तर-सांस्कृतिक भावना का उदय करना चाहते हैं, तो हमें इन शिक्षण-विधियों में तत्काल ही परिवर्तन करना होगा। हमें विभिन्न विषयों का शिक्षण करते समय उनके सामाजिक, राष्ट्रीय और सांस्कृतिक पहलुओं पर बल देना होगा। तभी हम अपने देश के भावी नागरिकों में अन्तर-सांस्कृतिक भावना का समावेश करने की आशा कर सकते हैं।

(3) पाठ्यक्रम में परिवर्तन : Change in Curriculum—यदि हम ज्ञान का अर्जन करने वाले बालकों और बालिकाओं में अन्तर-सांस्कृतिक भावना का विकसित रूप देखना चाहते हैं, तो हमें प्रचलित पाठ्यक्रम में अग्रलिखित परिवर्तन करने चाहिए :—

1. भारत और विश्व की विभिन्न संस्कृतियों को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाय।
2. देश और विदेश की प्रमुख भाषाओं को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया

जाय, ताकि छात्र उनसे परिचित होकर दूसरी सस्कृतियों के विचारो को समझ सकें और उनके आदान-प्रदान में योग दे सके।

3. क्लॉसमियर (Klausmeier) के अनुसार :—"**विद्यालय-शिक्षा के सम्पूर्ण वर्षो में उपयुक्त अवसरों पर समुदाय, राज्य, राष्ट्र और विश्व के निवासियों के सांस्कृतिक प्रतिमानों के विशेष अध्ययन पर विशेष ध्यान दिया जाय।**"

(4) **अन्य सुझाव : Other Suggestions**—1. उच्चतर माध्यमिक और उच्च शिक्षा की संस्थाओं में सास्कृतिक गोष्ठियों का आयोजन किया जाय।

2. सभी स्तरों की शिक्षा-संस्थाओं मे संस्कृति-सम्बन्धी व्याख्यान-मालायें प्रारम्भ की जायें।
3. उक्त शिक्षा-सस्थाओ में समय-समय पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों और उत्सवों की व्यवस्था की जाय।
4. छात्रो को देश और विदेश की संस्कृतियो से परिचित कराने के लिए रेडियो, सिनेमा और टेलीविजन का प्रयोग किया जाय।
5. एक राज्य के छात्रों और शिक्षकों को दूसरे राज्यों में जाकर पढ़ने और पढाने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।
6. शिक्षा के सब स्तरो पर प्रमुख संस्कृतियों में से एक या अधिक को पाठ्यक्रम का अभिन्न अग बनाया जाय।
7. प्रमुख सस्कृतियों को शिक्षक-प्रशिक्षण-संस्थाओं के पाठ्यक्रमो में सम्मिलित किया जाय।
8. सस्कृति-सम्बन्धी उच्च अध्ययन करने के लिए छात्रों को पर्याप्त आर्थिक सहायता दी जाय।

अन्तर-सांस्कृतिक भावना के विकास के उपाय
Measures to Develop Intercultural Understanding

1. सास्कृतिक फिल्मो, चित्रों आदि का निर्माण।
2. सास्कृतिक पुस्तकालयो और वाचनालयो की स्थापना।
3. सास्कृतिक व्याख्यान देने के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण का प्रबन्ध।
4. रेडियो द्वारा विभिन्न संस्कृतियो पर नाटक, वार्तालाप आदि का प्रसार।
5. विभिन्न सस्कृतियो का विभिन्न भाषाओं की पुस्तको में संक्षिप्त विवरण।
6. देश के विभिन्न भागो मे नियमित रूप से सास्कृतिक कार्यक्रमों की व्यवस्था।
7. विभिन्न राज्यों मे सास्कृतिक विनिमय और कला की कृतियों के आदान-प्रदान करने का समुचित प्रबन्ध।

8. विभिन्न राज्यों के योग्य छात्रों और संस्कृति-विशेषज्ञों को सांस्कृतिक भ्रमण करने के लिए राज्य द्वारा उदार आर्थिक सहायता।
9. जनता को विभिन्न संस्कृतियों की विशेषताओं से परिचित कराने के लिए समाचार-पत्रों और मासिक पत्रिकाओं का प्रकाशन।
10. सांस्कृतिक तनावों, संघर्षों और कटुताओं के कारण एवं उनको दूर करने के उपायों को खोजने के लिए राज्य-सरकारों द्वारा 'सांस्कृतिक सर्वेक्षण संस्थाओं' की स्थापना।

उपसंहार

यद्यपि सब देशों में शिक्षा का रूप राष्ट्रीय है, पर इस बात का अनुभव किया जाने लगा है कि विश्व में चिर-शान्ति स्थापित रखने के लिए अन्तर्राष्ट्रीयता की शिक्षा की आवश्यकता है। इस शिक्षा के भवन का निर्माण अन्तर-सांस्कृतिक भावना के आधार पर ही किया जा सकता है। यही कारण है कि सभी देशों में अन्तर-सांस्कृतिक शिक्षा का प्रसार अति तीव्र गति से हो रहा है। मेयर ने लिखा है :— **"सामान्य बातों से आरम्भ होकर अन्तर-सांस्कृतिक शिक्षा ने पर्याप्त शक्तिशाली आन्दोलन का रूप धारण कर लिया है, जिसका सम्बन्ध न केवल शिक्षा-संस्थाओं से, वरन् अनेक अन्य प्रकार की संस्थाओं से भी है।"**

"From simple beginnings, inter-cultural education has grown into a stalwart movement involving not only schools but many non-school agencies as well."—**Adolph F. Meyer** : *Development of Education in the Twentieth Century*, p. 455.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Why is the need for developing intercultural understanding through education the greatest today ? How can this be done ?

शिक्षा के द्वारा अन्तर-सांस्कृतिक भावना के विकास की आधुनिक समय में सबसे अधिक आवश्यकता क्यों है ? यह किस प्रकार किया जा सकता है ?

2. Write a note on :—"Education for developing intercultural understanding."

"अन्तर-सांस्कृतिक भावना के विकास के लिए शिक्षा"—पर एक टिप्पणी लिखिए।

3. How can education help in the development of Intercultural Understanding ?

शिक्षा 'अन्तर-सांस्कृतिक भावना' के विकास में किस प्रकार सहायक हो सकती है ?

16

भावात्मक एकता के लिए शिक्षा
EDUCATION FOR EMOTIONAL INTEGRATION

"यदि हम इस तथ्य को स्वीकार कर ले कि भारत विविधतापूर्ण देश है और रहेगा, तो जनता की राष्ट्रीय और भावात्मक एकता की एक मुख्य बाधा दूर हो जायगी।"

"If we accept the fact that India is and will remain diverse, one of the main obstacles to the national and emotional integration of the people will be removed."—**Humayun Kabir :** *Indian Philosophy of Education*, p. 64.

विषय-प्रवेश

भारतीय जनता मे विचार, कर्म और दृष्टिकोण की सदैव काफ़ी विविधता रही है, पर यह विविधता भारतीय माने जाने वाले सामाजिक ढाँचे के भीतर ही थी। जब मेगस्थनीज़ और फ़ाहियान भारत आये, तब उन्होंने यहाँ की अनेक जातियों और सम्प्रदायों को विभिन्न प्रकार की जीवन-पद्धतियों का अनुकरण करते हुए पाया, पर फिर भी उन्होंने उन सब को भारतीय जनता ही माना।

बाद में बाबर ने भी इस भारतीय चरित्र को स्वीकार किया और संसार के अन्य स्थानों की जीवन-पद्धतियों से उसका अन्तर बताने के लिए उसे 'हिन्दुस्तानी जीवन-पद्धति' की संज्ञा दी। इस प्रकार, जैसा कि हुमायूँ कबीर ने लिखा है :—
"भारत में भावात्मक राष्ट्रीय एकता कुछ-न-कुछ मात्रा में सदैव रही है।"

"Some degree of emotional national integration has always been in evidence in India."—**Humayun Kabir :** *op cit.*, p. 61.

भावात्मक एकता का अर्थ
Meaning of Emotional Integration

भावात्मक एकता का अर्थ है—देश या राष्ट्र के सब निवासियों में विचारों और भावनाओं की एकता ।

स्वतन्त्र भारत में इसका सर्वोत्तम रूप चीन और पाकिस्तान के आक्रमणों के समय देखने को मिला । उस समय सम्पूर्ण भारत में एक कोने से दूसरे कोने तक एकता, त्याग और उत्साह की लहर दौड़ गई । भारत के समस्त निवासी अपने जातिगत, धर्मगत और भाषागत स्वार्थों को दफना कर विदेशी आक्रमणकारियों से लोहा लेने के लिए एक होकर खड़े हो गए । परन्तु आक्रमणों की सम्भावना समाप्त होते ही यह विलक्षण भावात्मक एकता अतीत की गोद में समा गई और क्षुद्र स्वार्थ, विघटनकारी तत्त्व एवं संकीर्ण मनोवृत्तियाँ उभर कर फिर ऊपर आ गई ।

भावात्मक एकता के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम दो परिभाषायें दे रहे है; यथा :—

1. जवाहरलाल नेहरू —"भावात्मक एकता से मेरा अभिप्राय है—हमारे विचारों और भावनाओं की एकता एवं पृथकता की भावनाओं का दमन ।"

"By emotional integration, I mean the integration of our minds and hearts, the suppression of feelings of separatism."

—Jawaharlal Nehru : *Nehru's Speeches*, Vol. III, p. 36.

2. के० जी० सैयदैन :—"भावात्मक एकता का अर्थ—विभिन्नताओं को समाप्त करना नहीं है । इसका अर्थ है राष्ट्रीय एकता और मौलिक निष्ठाओं की अधिक विस्तृत व्यवस्था के अन्तर्गत व्यक्तियों को विभिन्न होने और अपनी विभिन्नताओं को मतर्कता और निर्भयता से व्यक्त करने का अधिकार ।"

"Emotional integration does not mean a levelling down of differences. It means that the people have the right to differ and express their differences reasonably and fearlessly within the larger framework of national unity and basic loyalties."—K. G. Saiyidain : *Education, Culture & Social Order*, p. 76.

भावात्मक एकता की आवश्यकता
Need for Emotional Integration

गन्नार मिरडल ने लिखा है :—"भारत में हाल के वर्षों में भावात्मक एकता की आवश्यकता पर अति उत्साह से अधिक ही अधिक विचार-विमर्श हुआ है ।"

"In India in recent years there has been lively and increasing discussion on the need for emotional integration."—Gunnar Myrdal : *Asian Drama*, Vol I, p. 257.

मिरडल के अनुसार :—भावात्मक एकता की आवश्यकता का अनुभव 1961 के मध्य में किया गया। कारण यह था कि उस वर्ष के प्रारम्भ में और उससे पूर्व भाषा, धर्म और छात्र-अनुशासनहीनता के कारण देश के अनेक भागों में भयकर उपद्रव हुए। इस प्रकार के भावी उपद्रवों की आशंका को समाप्त करने के लिए सरकार ने गवर्नरों और मन्त्रियों के सम्मेलन आयोजित करके उनके सुझाव माँगे; एक नियम बनाकर धर्म, जाति, भाषा, और समुदाय के नाम पर निर्वाचन के समय प्रचार करना दडनीय अपराध घोषित किया; और 1963 में भारतीय संविधान में संशोधन करके गवर्नरों को विघटनकारी तत्त्वों को दमन करने का पूर्ण अधिकार दे दिया, पर इन उपायों ने आशाजनक परिणामों का आश्वासन नहीं दिया।

सरकार को अपने प्रयासों में सफलता क्यों नहीं मिली ? इसका मुख्य कारण यह था और अब भी है कि देश में ऐसे अनेक विघटनकारी तत्त्व है, जिनका लक्ष्य देश को विखडित करना है। इन तत्त्वों पर प्रकाश डालते हुए के० जी० सैयदैन ने लिखा है :—**"वास्तविक या ला खड़े किये हुए संकट या उत्तेजना के फलस्वरूप धर्म, जाति, वर्ग, समुदाय, भाषा—ये सभी विघटनकारी रूप ग्रहण करते है। राजनीतिक या आर्थिक लाभ के लिए निहित स्वार्थ वाले लोग इन सबका उपयोग करते रहते हैं। हम प्रादेशिक हितों को राष्ट्रीय हितों से अधिक महत्त्व देते हैं, समुदाय के हितों की अपेक्षा जातीय या वर्गीय हितों का समाधान करते हैं और सामाजिक हितों से कहीं बढ़कर व्यक्तिगत हितों को स्थान देते है।"—भारतीय शैक्षणिक विचारधारा, पृ० 42।**

इन विघटनकारी तत्त्वों को समूल नष्ट करने का एकमात्र उपाय है—भारतवासियों में भावात्मक चेतना का विकास। यही चेतना उनमें ऐसे विचारों और भावनाओं का विकास करेगी, जिससे उनकी अभिवृत्तियों एवं दृष्टिकोणों में परिवर्तन होगा; और उनमें समान रूप से सोचने, समझने एवं कार्य करने की आदत का निर्माण होगा। फलस्वरूप, देश—एकता के सूत्र में आबद्ध होगा, राष्ट्र सुदृढ होगा और भारत आर्थिक प्रगति के पथ पर चिर-प्रतीक्षित अभियान आरम्भ करेगा। यही कारण है कि आज भारत का प्रत्येक निवासी भावात्मक एकता की आवश्यकता का अनुभव कर रहा है और उसकी माँग कर रहा है। के० जी० सैयदैन ने ठीक ही लिखा है :—**"भावात्मक एकता हर आदमी की ज़बान पर है और प्रायः प्रत्येक व्यक्ति इस बात से सहमत जान पड़ता है कि इसकी आवश्यकता है, ताकि हम साम्प्रदायिकता, जातीयता, प्रान्तीयता और भाषा-सम्बन्धी उन्माद से मुक्त होकर विशाल राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास कर सकें।"**

"Emotional integration has been on every one's lips, and almost everyone seems agreed that there is need for bringing it about, that we should eschew communalism, casteism, provincialism

and linguistic fanaticism, and develop a broad national outlook"
—*K. G. Saiyidain : op. cit., p. 70.*

भावात्मक एकता में बाधायें
Obstacles to Emotional Integration

(1) विभिन्न समूहों का अस्तित्व : **Existence of Different Groups**—भारत में नाना प्रकार के धार्मिक, सामाजिक और साम्प्रदायिक समूहों का बाहुल्य है। सैकड़ों-सहस्रों वर्षों से अपने अस्तित्व को बनाये रखने वाले इन समूहों की समाप्ति की कल्पना करना बड़ी नासमझी की बात है। इन समूहों ने सामूहिक निष्ठा की माँग करके भारत की राष्ट्रीय और भावात्मक एकता को चुनौती दी है और देते रहेंगे।

ऐसी स्थिति में भारत के खण्डित होने की आशंका सदैव बनी रहेगी। हुमायूँ कबीर का कथन है :—"**विभिन्न समूहों के अस्तित्व के कारण प्रारम्भ में भावात्मक स्तर पर और बाद में संस्थात्मक स्तर पर छोटे-छोटे टुकड़ों में खण्डित होने का खतरा हमेशा बना रहता है।**"

(2) मुसलमानों में पृथकता की भावना : ***Sense of Alienation among Muslims***—भारत में हिन्दुओं के बाद सबसे बड़ी जाति मुसलमानों की है, जिनकी *संख्या इस समय 6 करोड़ से अधिक है। उन्हें स्वतन्त्र भारत में निवास करते हुए काफी* लम्बा समय गुज़र चुका है। वे भली-भाँति जानते है कि भारत धर्मनिरपेक्ष राज्य है और उन पर किसी प्रकार का धार्मिक प्रतिबन्ध नहीं है। फिर भी उनमें पृथकता की भावना अति उग्र रूप में मिलती है।

यह भावना भारत की भावात्मक एकता के लिए अत्यधिक घातक सिद्ध हो रही है। गन्नार मिरडल का यह कथन अक्षरशः सत्य है :—"**मुसलमान अभी तक शेष राष्ट्र के साथ भावात्मक एकता स्थापित नहीं कर पाये हैं।**"

(3) आर्थिक व सामाजिक विषमतायें : **Economic & Social Cleavages**—भारतीय समाज के दो गम्भीर दोष है—व्यक्तियों के आर्थिक और सामाजिक स्तरों में आकाश-पाताल का अन्तर। भारत में एक ओर है—*मानव-गुणों को निर्ममता-*पूर्वक कुचलने वाली कमरतोड़ गरीबी, और दूसरी ओर है—स्वाभाविक प्रतिभाओं एवं क्षमताओं को कुंठित करने वाली दौलत की दुनियाँ, इसमें एक ओर है—अनेक सामाजिक अधिकारों से वंचित खून-पसीना बहाकर कमाई करने वाला वर्ग और दूसरी ओर है—सभी सामाजिक अधिकारों का चैन से उपभोग करने वाला मुनाफा-खोर-वर्ग।

हमारे समाज की इन आर्थिक और सामाजिक विषमताओं ने पग-पग पर बाधा की इतनी ऊँची और मजबूत दीवारें खड़ी कर दी है कि भावात्मक एकता का स्वप्न सदैव सुनहरा स्वप्न ही रहेगा। गन्नार मिरडल का यह सारगर्भित वाक्य पढ़िये :—"भावात्मक एकता के मार्ग में मुख्य बाधा है—भारत के *निवासियों के*

बीच विशाल सामाजिक और आर्थिक विषमताएँ एवं उनसे सम्बद्ध कल्याण और अवसर की असमानताएँ ।"

"The main obstacle is the wide social and economic cleavages among its people and the accompanying inequalities of welfare and opportunity."—**Gunnar Myrdal** : *op. cit.*, p. 258.

भावात्मक एकता व शैक्षिक कार्यक्रम
Emotional Integration & Educational Programme

भारत में भावात्मक एकता स्थापित करने में शिक्षा अद्वितीय योग दे सकती है। इस सम्बन्ध में 1961 मे डा० सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता में नियुक्त की जाने वाली 'भावात्मक एकता समिति' के ये शब्द उल्लेखनीय है :—**"शिक्षा भावात्मक एकता को सुदृढ़ बनाने में महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती है। शिक्षा का उद्देश्य—न केवल ज्ञान देना होना चाहिए, वरन् इसे छात्र के व्यक्तित्व के सब पक्षों का विकास करना चाहिए। इसे दृष्टिकोण को विस्तृत करना चाहिए और एकता, राष्ट्रीयता, बलिदान तथा सहिष्णुता की भावना का विकास करना चाहिए, जिससे कि संकुचित सामुदायिक हितो का देश के विस्तृत हितों में समावेश हो जाय।"**

अपने कथन को ध्यान मे रखते हुए **'समिति'** ने भावात्मक एकता के विकास के लिए शैक्षिक कार्यक्रम की जिस रूपरेखा की ओर सकेत किया है, वह दृष्टव्य है :—

1. धर्म-निरपेक्ष राज्य की आवश्यकताओं को ध्यान मे रखकर स्कूलों और कॉलिजो के पाठ्यक्रमो का नव-निर्माण किया जाय।
2. पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को पाठ्यक्रमो में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाय।
3. शिक्षा के सब स्तरो पर सामाजिक अध्ययन पर बल दिया जाय।
4. अहिन्दी क्षेत्रो में हिन्दी के अध्ययन को लोकप्रिय बनाने के लिए हिन्दी की पुस्तको को रोमन लिपि में प्रकाशित किया जाय।
5. प्रत्येक स्कूल के छात्रों के लिए समवस्त्र (Uniform) निश्चित किया जाय।
6. विद्यालयों के छात्रो को राष्ट्रीय गीत गाने की शिक्षा दी जाय।
7. देश के सब विद्यार्थियों को राष्ट्रीय झण्डे का सम्मान करना सिखाया जाय।
8. प्रत्येक स्कूल मे 26 जनवरी, 15 अगस्त और 2 अक्टूबर को 'राष्ट्रीय दिवस' के रूप मे पूरी तैयारी करके मनाया जाय।
9. विद्यालयों मे समय-समय पर 'देश की एकता' पर भाषण दिये जायँ।
10. अपने देशवासियो के लिए अपनी सेवाओ को अर्पित करने के लिए छात्रों द्वारा वर्ष मे दो बार प्रतिज्ञा की जाय।

11. प्रत्येक स्कूल द्वारा वर्ष मे चार बार खुले मैदान मे नाटकों का अभिनय किया जाय।
12. एक राज्य के छात्रो द्वारा दूसरे राज्यों में भ्रमण किया जाय।
13. युवक कार्यक्रमों में सामंजस्य स्थापित करने के लिए 'अखिल-भारतीय युवक-समिति' (All India Youth Council) की स्थापना की जाय।
14. विश्वविद्यालयो द्वारा शिक्षकों का आदान-प्रदान किया जाय।
15. प्राथमिक, मिडिल और माध्यमिक स्कूलो के अध्यापको के लिए समस्त देश मे एक ही न्यूनतम वेतन निश्चित किया जाय।

भावात्मक एकता के विकास के उपाय
Measures to Develop Emotional Integration

के० जी० सैयदैन ने अपनी पुस्तक "Education, Culture & Social Order" में भावात्मक एकता को विकसित करने के लिए अनेक उत्तम सुझावो की चर्चा की है। हम उनमें से प्रमुख पर नीचे की पंक्तियों में प्रकाश डाल रहे है :—

1. असहिष्णुता के विरुद्ध जनता और सरकार द्वारा सगठित रूप से कार्य किया जाय।
2. न्यायोचित आर्थिक-सामाजिक व्यवस्था का निर्माण किया जाय।
3. सब वर्गों, धर्मों और जातियों के व्यक्तियों को समान राजनैतिक अधिकार दिये जायँ।
4. व्यक्तियो को निष्पक्ष, स्थिर मन और स्व-आलोचना करने का प्रशिक्षण दिया जाय।
5. हिन्दुओं, मुसलमानो और अन्य समुदायों को एक-दूसरे की सस्कृति का अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।
6. विभिन्न समुदायों मे सहयोग, सहानुभूति और सद्‌भावना के गुणों का विकास करने के लिए सम्मिलित कार्यक्रमों का आयोजन किया जाय।
7. उदारता, उचित व्यवहार और विशाल हृदयता का परिचय देकर बहुसख्यक समुदाय द्वारा अल्पसंख्यको का विश्वास प्राप्त किया जाय।
8. सेवा और बलिदान करके अल्पसख्यको द्वारा देश के जीवन मे सम्मानित स्थान प्राप्त किया जाय।
9. देश के किसी भी वर्ग को किसी प्रकार की विशेष सुविधा या विशेष अधिकार न दिया जाय।
10. रेडियो, फ़िल्मों आदि का प्रयोग करके बालको और वयस्कों के विचारों और व्यवहारों को स्वस्थ दिशाओं में मोड़ा जाय।

11. निर्वाचनों, नियुक्तियों और अनुग्रहों के वितरण के समय अतर्कसगत आवेगों और पूर्वाग्रहों का दमन किया जाय।
—"भारतीय शैक्षणिक विचारधारा।"
12. विभिन्न जातीय, आर्थिक और सांस्कृतिक वर्गों के दृष्टिकोण को परिवर्तित करके उनमें सामंजस्य स्थापित किया जाय। —उक्त।
13. उक्त वर्गों में सहनशीलता का उदार भाव और सामान्य राष्ट्रीय उद्देश्य की सिद्धि की भावना जाग्रत की जाय। —उक्त।
14. अच्छी और विस्तृत शिक्षा-प्रणाली द्वारा लोगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास सक्रियतापूर्वक किया जाय। —उक्त।
15. व्यक्तियो की असंतुलित अवस्था को सतुलित करने के लिए मनुष्य को पीस डालने वाली गरीबी का उन्मूलन किया जाय। —उक्त।
16. मानव-जीवन की प्रेरणा देने वाले विभिन्न साधनों का प्रयोग किया जाय; जैसे—धर्म, साहित्य, विज्ञान, दर्शन, सामाजिक विज्ञान आदि। "We must utilize the various sources in human life—religion, literature, science, philosophy, social sciences, etc."—**K. G. Saiyidain** : *op. cit.*, p. 77.

उपसंहार

भारत की आर्थिक प्रगति, सामाजिक सुदृढ़ता और राष्ट्रीय एकीकरण के लिए भावात्मक एकता की स्थापना—एक अनिवार्य शर्त है, और इस दिशा में प्रयास भी प्रारम्भ हो गये है। पर इस सम्बन्ध में एक मननीय प्रश्न यह है—**क्या भारत में भावात्मक एकता स्थापित हो सकती है ?**

हमारे पास तो इस प्रश्न का उत्तर केवल 'नही' में है। कारण यह है कि हमारे देश की लगभग 70% से अधिक जनता आज भी अज्ञान के सकुचित गर्त मे पड़ी हुई है, पुराने विश्वासो को पकडे बैठी हुई है, भूत की दुहाई देती है और नवीनता की तुलना में प्राचीनता को अधिक महत्त्व देती हे। अतः हमे यह कहने में तनिक भी लज्जा और संकोच का अनुभव नही होता है कि हमने समग्र रूप मे नवीनता को सिर उठाने से रोक रखा है, सड़ी-गली परम्पराओं को गले से लगा रखा है, और धार्मिक विधानों के प्रत्येक अक्षर को मान्यता प्रदान कर रखी है। इतना ही नही, पर जैसा कि के० जी० सैयदैन ने लिखा है :—**"हम में सभी ऐसी बौद्धिक प्रवृत्तियाँ और विचारधारायें विद्यमान हैं, जो भविष्य को भी पीछे ढकेलने पर तुली हुई हैं।**

यही कारण है कि हमारे मस्तिष्क में उस भावी भारत के चित्र की धुंधली रेखायें भी मिट गई हैं जिसको राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने "India of My Dreams" में इन शब्दों में अंकित किया था :—**"ऐसा भारत, जिसमें सब जन-समुदाय पूर्ण सौहार्द्रपूर्वक रह सकेंगे। ऐसा भारत, जिसमें कोई जाति या सम्प्रदाय**

दूसरों से श्रेष्ठ नहीं माना जायगा और न जिसमें धनी और अधिकार-सम्पन्न लोगों का ही बोलबाला होगा।" यही कारण है कि हम उनके प्रेम और अहिंसा के संदेश को बकवास समझकर एक-दूसरे की हत्या और रक्तपात करने में गर्व का अनुभव करते हैं।

यह जानकर भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम के वीर सेनानी सीमान्त गांधी की नस-नस में वेदना की तड़पन होने लगी और 'गांधी शताब्दी' के अवसर पर 2 अक्टूबर, 1969 को पालम हवाई अड्डे पर उतरने के समय उनके मुख से निकलने वाले पहले शब्द ये थे :—"भारतीय जनता महात्मा गांधी और सब के प्रति प्रेम और स्नेह की उनकी शिक्षा को भूल गई है।"

"The Indian people have forgotten Mahatma Gandhi and his teachings of love and affection for all."—**Khan Abdul Ghaffar Khan**: *The Hindustan Times*, October 2, 1969.

क्या इस शिक्षा को भूलने के बाद भी हम भारत में भावात्मक एकता की बात कर और सोच सकते हैं? इस प्रश्न का उत्तर आप अपने हृदय को गहराई तक टटोल कर स्वयं दे सकते हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss critically the possibility of emotional integration in Indin.

   भारत में भावात्मक एकता की सम्भावना का विवेचनात्मक वर्णन कीजिए।

2. How can education help in Emotional Integration ?

   शिक्षा भावात्मक एकता के विकास में किस प्रकार सहायक हो सकती है?

3. How can education contribute towards the achievement of emotional integration in India ?

   भारत में भावात्मक एकता की प्राप्ति में शिक्षा किस प्रकार योग दे सकती है?

17

नागरिकता के लिए शिक्षा
EDUCATION FOR CITIZENSHIP

"विद्यालय वर्तमान परिस्थितियों तथा हमारे आधुनिक समाज में व्याप्त अन्याय, अशिष्टता एवं भ्रष्टाचार की अवहेलना नहीं कर सकते हैं। इनको छात्रों को प्रभावशाली ढंग से प्रशिक्षित करना चाहिए जिससे भावी नागरिक, सुशासन में सामान्य रुचि तथा सक्रिय भाग ले सकें और अपने सामाजिक सम्बन्धों में उच्च एवं निश्शंक नैतिकता का उपयोग कर सकें।"

"The schools cannot ignore present conditions, with the injustices vulgarities and corruption manifest in our modern society. They must train pupils effectively, so that the citizens of future will take a common interest and an active part in good government as well as exercise a high and fearless morality in their social relationships"—**Bining & Bining.**

विषय-प्रवेश

आज हम जिस विश्व में निवास कर रहे है, वह अशान्त, संघर्षपूर्ण एवं द्वेषपूर्ण है। यह विश्व ऐसी गम्भीर समस्याओं से त्रस्त है जो जन-जीवन को दुखी बनाये हुए है। इन समस्याओं में प्रमुख है—साम्प्रदायिक एवं सामूहिक दुर्भावनाएँ, शोषण, अन्तर्राष्ट्रीय तनाव, मनुष्यों में नैतिक गुणों का अभाव, अणु-शक्ति के दुरुपयोग का भय, लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों एवं व्यवहारों का खुलेआम अतिक्रमण आदि। ये समस्याएँ इस बात का संकेत देती है कि जिन लोगों ने इस विश्व को अशान्त एवं द्वेषपूर्ण बनाया है और बना रहे है, उन लोगों की शिक्षा में किसी 'तथ्य' का अभाव है। यह तथ्य उत्तम नागरिक के 'गुणों' के अतिरिक्त कुछ नही है। अतः उत्तम नागरिकता के

अभाव मे यह विश्व कलह, द्वेष, अव्यवस्था, संघर्ष आदि से ग्रस्त है। जब तक विश्व के नागरिक अपने दायित्वों का समुचित रूप से निर्वाह नही करेंगे तब तक विश्व शान्ति एवं मानवहित के मार्ग पर अग्रसर नही हो सकेगा।

भारत में नागरिकता की शिक्षा की आवश्यकता
Need of Education for Citizenship in India

समय ने करवट बदली। पूरब में नया सूर्य उदय हुआ। जन-मन मे जागरण हुआ और सदियो की गुलामी के बाद देश को स्वतन्त्रता मिली। 15 अगस्त पुण्य राष्ट्र-पर्व बन गया, साथ ही नयी-नयी समस्याओं और उत्तरदायित्वों को साथ लाया। उस दिन अपने सोचा—मानो हम युगो की प्रगाढ़ निद्रा से जागकर अब कर्त्तव्य-रत होने जा रहे हैं। हमने इस ओर पहला कदम यह उठाया—देश को धर्म-निरपेक्ष लोकतन्त्रात्मक गणराज्य घोषित किया। साथ ही लोकतन्त्र को जीवन के एक ढग के रूप मे अपनाया। इस दृष्टिकोण से हमे अधिकार मिले, सभी नागरिक अधिकार—मूलाधिकार, राजनीतिक, सामाजिक एव धार्मिक अधिकार। इस प्रकार हमने नागरिकता को वैदिक रूप से प्राप्त किया। हमने स्वतन्त्रता, समानता तथा भाई-चारे का पाठ पढ़ा। किन्तु इन अधिकारो के साथ हमें नागरिक के महान् कर्त्तव्यो का भी निर्वाह करना है, उन गम्भीर दायित्वो का भी सफलतापूर्वक निर्वाह करना है जो हमारी स्वाधीनता ने हमे दिये। अतः हमें अपने देशवासियों को सुयोग्य नागरिक बनाने की आवश्यकता का अनुभव हुआ। इस कार्य को विद्यालयों को सौपा गया। इस दृष्टिकोण से शिक्षा के पुनर्निर्माण की आवश्यकता का अनुभव किया गया। देश के कर्णधारों ने शिक्षा के पुनर्निर्माण के लिए विभिन्न आयोगों की नियुक्ति की। माध्यमिक शिक्षा-आयोग ने इस सम्बन्ध में लिखा है : – 'भारत ने अभी हाल में राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त की है और उसने पर्याप्त विचार-विमर्श के पश्चात् स्वयं को धर्म-निरपेक्ष लोकतन्त्रात्मक गणराज्य घोषित किया है। इसलिए, शिक्षा द्वारा नागरिकों में ऐसी आदतों, अभिरुचियों और चारित्रिक गुणों का विकास किया जाय जिससे कि वे लोकतन्त्रीय नागरिकता के दायित्वों का भली प्रकार से निर्वाह कर सकें और उन विघटनकारी प्रवृत्तियों को रोक सकें जो व्यापक, राष्ट्रीय एवं धर्मापेक्षी दृष्टिकोण के विकास में बाधक है।"

सदियो की गुलामी के फलस्वरूप हममे अनेक बुराइयां; जैसे—संकीर्णता, साम्प्रदायिकता, जातीयता, गरीबी, अनैतिकता आदि का विकास हो गया था। इसके अतिरिक्त भारत सदैव से मानवीय दर्शन मे आस्था रखता चला आया था। उसने विश्व को शान्ति का सन्देश दिया। उसने विश्व के समक्ष प्रेम, सत्य, अहिंसा तथा बन्धुत्व का दर्शन रखा। चाहे विश्व उसके दर्शन को स्वीकार करे या न करे, परन्तु वह अपनी इस गौरवमयी परम्परा को नही छोड़ना चाहता है। अतः वह अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में अपना योगदान प्रदान करना चाहता है। इस सम्बन्ध मे

शिक्षा-आयोग (Education Commission) ने लिखा है :—"भारत की एक निराली ही स्थिति है क्योंकि उसमें अनासक्ति, अपरिग्रह, सहिष्णुता, सहज-शान्तिप्रियता, और सभी जीवों के प्रति आदर की महान् परम्पराएँ रही हैं। अनेक बार ये बहुमूल्य बातें भुला दी गईं तथा हम निराशावाद, अनिष्ट कथन, वैमनस्य तथा हानिकर आलोचना की मनोवृत्ति में फँस गए। अतः इस समय आवश्यकता इस बात की है कि शान्ति और स्वतन्त्रता, सत्य और करुणा के महान् आदर्शों के लिए जीवित रहने के रूप में हमारा नया अभिमान और गहरी आस्था अभिव्यक्त हो।"

उक्त दृष्टिकोणों से भी सुयोग्य एव उदार दृष्टिकोण वाले नागरिकों की आवश्यकता का अनुभव किया गया। ऐसे नागरिकों के निर्माण का दायित्व शिक्षा पर डाला गया। अतः नागरिकता के लिए शिक्षा की बलशाली माँग की गई।

नागरिकता का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Citizenship

(अ) नागरिकता का अर्थ : **Meaning of Citizenship**—सामान्यतः नागरिकता का अर्थ व्यक्ति की उस कानूनी स्थिति से लगाया जाता है जो उसे किसी देश में प्राप्त होती है। प्रत्येक राष्ट्र की कुछ परम्पराएँ और कानून होते हैं जो नागरिकों को विशेष अधिकार प्रदान करते हैं और उनसे कुछ कर्त्तव्यों के निर्वाह की माँग करते हैं। अतः अधिकार और कर्त्तव्य मिलकर नागरिकता का निर्माण करते हैं।

(ब) नागरिकता की परिभाषा : **Definition of Citizenship**—हम नागरिकता के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ नीचे दे रहे हैं :—

1. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका :—"नागरिकता व्यक्ति और राज्य के बीच वह सम्बन्ध है जो राज्य के उस क़ानून द्वारा प्रस्तावित शर्तों से विकसित होता है और जो नागरिकता से सम्बन्धित प्रमुख अधिकारों एवं कर्त्तव्यों को जन्म देता है।"

"Citizenship is a relationship between an individual and a state originating under terms prescribed by the law of that state and giving rise to certain duties and rights which such law attaches to "citizenship."—**Encyclopaedia Britannica, Vol. V, p. 806.**

2. लास्की :—"व्यक्ति के निर्देशित निर्णय का प्रयोग सार्वजनिक हित के लिए किया जाना ही नागरिकता है।"

"Citizenship is the contribution of one's instructed judgement to public good."—**H. J. Laski.**

3. अमेरिकन विद्यालय प्रबन्धकों का समुदाय :—"नागरिकता वह वस्तु नहीं है जिसको किसी इकाई या विषय के रूप में पढ़ाया जा सकता है वरन् यह तो जीवन-यापन का एक ढंग है। हमारे समक्ष वास्तविक प्रश्न यह नहीं है कि एक उत्तम

अभाव में यह विश्व कलह, द्वेष, अव्यवस्था, संघर्ष आदि से ग्रस्त है। जब तक विश्व के नागरिक अपने दायित्वों का समुचित रूप से निर्वाह नहीं करेंगे तब तक विश्व शान्ति एवं मानवहित के मार्ग पर अग्रसर नहीं हो सकेगा।

भारत में नागरिकता की शिक्षा की आवश्यकता
Need of Education for Citizenship in India

समय ने करवट बदली। पूरब में नया सूर्य उदय हुआ। जन-मन में जागरण हुआ और सदियों की गुलामी के बाद देश को स्वतन्त्रता मिली। 15 अगस्त पुण्य राष्ट्र-पर्व बन गया, साथ ही नयी-नयी समस्याओं और उत्तरदायित्वों को साथ लाया। उस दिन हमने सोचा—मानो हम युगों की प्रगाढ़ निद्रा में जागकर अब कर्त्तव्य-रत होने जा रहे हैं। हमने इस ओर पहला कदम यह उठाया—देश को धर्म-निरपेक्ष लोकतन्त्रात्मक गणराज्य घोषित किया। साथ ही लोकतन्त्र को जीवन के एक ढंग के रूप में अपनाया। इस दृष्टिकोण से हमें अधिकार मिले, सभी नागरिक अधिकार—मूलाधिकार, राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक अधिकार। इस प्रकार हमने नागरिकता को वैदिक रूप से प्राप्त किया। हमने स्वतन्त्रता, समानता तथा भाई-चारे का पाठ पढ़ा। किन्तु इन अधिकारों के साथ हमें नागरिक के महान् कर्त्तव्यों का भी निर्वाह करना है, उन गम्भीर दायित्वों का भी सफलतापूर्वक निर्वाह करना है जो *हमारी स्वाधीनता ने हमें दिये। अतः हमें अपने देशवासियों को सुयोग्य नागरिक बनाने* की आवश्यकता का अनुभव हुआ। इस कार्य को विद्यालयों को सौंपा गया। इस दृष्टिकोण से शिक्षा के पुनर्निर्माण की आवश्यकता का अनुभव किया गया। देश के कर्णधारों ने शिक्षा के पुनर्निर्माण के लिए विभिन्न आयोगों की नियुक्ति की। माध्यमिक शिक्षा-आयोग ने इस सम्बन्ध में लिखा है —"भारत ने अभी हाल में राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त की है और उसने पर्याप्त विचार-विमर्श के पश्चात् स्वयं को धर्म-निरपेक्ष लोकतन्त्रात्मक गणराज्य घोषित किया है। इसलिए, शिक्षा द्वारा नागरिकों में ऐसी आदतों, अभिरुचियों और चारित्रिक गुणों का विकास किया जाय जिससे कि वे लोकतन्त्रीय नागरिकता के दायित्वों का भली प्रकार से निर्वाह कर सकें और उन विघटनकारी प्रवृत्तियों को रोक सकें जो व्यापक, राष्ट्रीय एवं धर्मनिरपेक्षी दृष्टिकोण के विकास में बाधक है।"

सदियों की गुलामी के फलस्वरूप हम में अनेक बुराइयाँ; जैसे—संकीर्णता, साम्प्रदायिकता, जातीयता, गरीबी, अनैतिकता आदि का विकास हो गया था। इसके अतिरिक्त भारत सर्वैव से मानवीय दर्शन में आस्था रखता चला आया था। उसने विश्व को शान्ति का सन्देश दिया। उसने विश्व के समक्ष प्रेम, सत्य, अहिंसा तथा बन्धुत्व का दर्शन रखा। चाहे विश्व उसके दर्शन को स्वीकार करे या न करे, परन्तु वह अपनी इस गौरवमयी परम्परा को नहीं छोड़ना चाहता है। अतः वह अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में अपना योगदान प्रदान करना चाहता है। इस सम्बन्ध में

14

शिक्षा-आयोग (Education Commission) ने लिखा है :—"भारत की एक निराली ही स्थिति है क्योंकि उसमें अनासक्ति, अपरिग्रह, सहिष्णुता, सहज-शान्तिप्रियता, और सभी जीवों के प्रति आदर की महान् परम्पराएँ रही हैं। अनेक बार ये बहुमूल्य बातें भुला दी गईं तथा हम निराशावाद, अनिष्ट कथन, वैमनस्य तथा हानिकर आलोचना की मनोवृत्ति में फँस गए। अतः इस समय आवश्यकता इस बात की है कि शान्ति और स्वतन्त्रता, सत्य और करुणा के महान् आदर्शों के लिए जीवित रहने के रूप में हमारा नया अभिमान और गहरी आस्था अभिव्यक्त हो।"

उक्त दृष्टिकोणों से भी सुयोग्य एवं उदार दृष्टिकोण वाले नागरिकों की आवश्यकता का अनुभव किया गया। ऐसे नागरिकों के निर्माण का दायित्व शिक्षा पर डाला गया। अतः नागरिकता के लिए शिक्षा की बलशाली माँग की गई।

नागरिकता का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Citizenship

(अ) नागरिकता का अर्थ : Meaning of Citizenship—सामान्यतः नागरिकता का अर्थ व्यक्ति की उस क़ानूनी स्थिति से लगाया जाता है जो उसे किसी देश में प्राप्त होती है। प्रत्येक राष्ट्र की कुछ परम्पराएँ और क़ानून होते हैं जो नागरिकों को विशेष अधिकार प्रदान करते हैं और उनसे कुछ कर्त्तव्यों के निर्वाह की माँग करते हैं। अतः अधिकार और कर्त्तव्य मिलकर नागरिकता का निर्माण करते हैं।

(ब) नागरिकता की परिभाषा : Definition of Citizenship—हम नागरिकता के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ नीचे दे रहे हैं :—

1. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका :—"नागरिकता व्यक्ति और राज्य के बीच वह सम्बन्ध है जो राज्य के उस क़ानून द्वारा प्रस्तावित शर्तों से विकसित होता है और जो नागरिकता से सम्बन्धित प्रमुख अधिकारों एवं कर्त्तव्यों को जन्म देता है।"

"Citizenship is a relationship between an individual and a state originating under terms prescribed by the law of that state and giving rise to certain duties and rights which such law attaches to "citizenship."—Encyclopaedia Britannica, Vol. V, p. 806.

2. लास्की :—"व्यक्ति के निर्देशित निर्णय का प्रयोग सार्वजनिक हित के लिए किया जाना ही नागरिकता है।"

"Citizenship is the contribution of one's instructed judgement to public good."—H. J. Laski.

3. अमेरिकन विद्यालय प्रबन्धकों का समुदाय :—"नागरिकता वह वस्तु नहीं है जिसको किसी इकाई या विषय के रूप में पढ़ाया जा सकता है वरन् यह तो जीवन-यापन का एक ढंग है। हमारे समक्ष वास्तविक प्रश्न यह नहीं है कि एक उत्तम नागरिक क्या जाने वरन् यह है कि उत्तम नागरिक क्या करता है और उसे ऐसा करने के लिए क्या जानना चाहिए ?"

"Citizenship is a way of living, not something that can be taught only as a unit or subject. The real question is not merely '*What does a good citizen know*' *but* '*What does a good citizen do*', and '*What must he know to do it*' ?—American Association of School Administrators.

उत्तम नागरिक कौन है ?
Who is a Good Citizen ?

नागरिकता का अर्थ देखने के पश्चात् स्वत यह प्रश्न उठता है कि उत्तम नागरिक कौन है ? एक उत्तम नागरिक का विचार यूनानियों की निम्नलिखित नागरिक-शपथ से स्पष्ट हो सकता है —

"हम अपनी बेईमानी या कायरता के किसी कार्य से अपने इस नगर को कलंकित नहीं करेंगे और न अपने दुःखी साथियों को अकेला छोड़कर जायेंगे । हम नगर के पवित्र आदर्शों एवं वस्तुओं की रक्षा के लिए अकेले अथवा बहुत-से मिलकर लड़ेंगे; हम नगर के कानूनों का पालन करेंगे और अपनी क्षमता के अनुसार उन लोगों में भी कानूनों के लिए श्रद्धा एवं आदर उत्पन्न करने का प्रयास करेंगे, जो उनका उल्लंघन करते हैं; हम जनता की नागरिक भावना को उत्तेजित करने के लिए अथक परिश्रम करेंगे । इस प्रकार, इन समस्त ढंगों से हम इस नगर की भावी सन्तति को उस रूप से कम अच्छे रूप में प्रदान नहीं करेंगे वरन् उससे उत्तम, व्यापक एवं अधिक मुन्दर रूप से सक्रमित करेंगे जिस रूप में पूर्व पीढ़ी से प्राप्त हुआ था ।"

वस्तुत. उपर्युक्त शपथ प्रत्येक देश के नागरिक के लिए एक उत्तम आदर्श प्रदान करती है । प्रत्येक नागरिक को इस आदर्श के अनुसार अपने नागरिक जीवन को व्यतीत करना चाहिए । परन्तु आधुनिक युग में नागरिकता की धारणा एव उसका क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया है । अब उत्तम नागरिकता की धारणा को नागरिक एव वैयक्तिक सद्गुणों का मिश्रण माना जाता है । इनके अनुसार, वैयक्तिकता के विकास तथा सामाजिक दायित्वो को एक-दूसरे का विरोधी नही माना जाता वरन् पूरक माना जाता है । आज इसका क्षेत्र किसी विशेष स्थान, देश या राष्ट्र तक सीमित नही है वरन् इसका क्षेत्र सम्पूर्ण मानव-जाति या विश्व तक फैला हुआ है । इस धारणा के अनुसार एक उत्तम एव कुशल नागरिक मे निम्नलिखित सद्गुणो का होना आवश्यक है :—

(अ) अमेरिकन विद्यालय प्रबन्धकों के समुदाय के अनुसार—

1. नागरिक कुशलता : Civic Competence
2. शैक्षिक ग्रहणशीलता : Educational Flexibility
3. सामाजिक सूझबूझ : Social Understanding
4. व्यावसायिक कुशलता . Occupational Efficiency
5. धार्मिक चेतना : Religious Consciousness
6. पारिवारिक भक्ति : Home Loyalty

(ब) सामाजिक अध्ययन के राष्ट्रीय परिषद् के अध्ययन के आधार पर—
1. उत्तम नागरिक सभी के लिए अवसर की समानता में निष्ठा रखता है।
2. मानवीय अधिकारों को मान्यता एवं आदर प्रदान करता है। साथ ही वह उनकी सुरक्षा के लिए कार्य करता है।
3. कानून का पालन करता है।
4. करों को तत्परता के साथ अदा करता है।
5. लोकतन्त्रीय आदर्शों में आस्था रखता है तथा उनके अनुसार आचरण करता है।

(स) डी० ई० स्टेनले (D. E. Stanley), मेलर (Meler) तथा वेस्टन (Weston) के अध्ययन के आधार पर—
1. उत्तम नागरिक, लोकतन्त्र के आदर्शों के प्रति निष्ठा रखता है।
2. लोकतान्त्रिक समाज के अनुकूल मानवीय सम्बन्धों को व्यावहारिक रूप प्रदान करता है।
3. लोकतन्त्रीय जीवन-यापन की प्रक्रिया को सुगम बनाने के लिए आवश्यक ज्ञान, कुशलता तथा योग्यताओं को ग्रहण करके उन्हें व्यवहार में लाता है।
4. समय की सामाजिक समस्याओं को जानने तथा उनके समाधान में सहयोग देता है।
5. मानव की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति के महत्व से अवगत रहता है।

(द) माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार—
1. उत्तम नागरिक समझदारी एवं बौद्धिक सत्यनिष्ठा (Understanding and Intellectual Integrity) रखता है।
2. वैज्ञानिक दृष्टिकोण (Scientific Outlook)
3. अनुशासन (Discipline)
4. सहयोग (Co-operation)
5. सामाजिक संवेदना (Social Sensitiveness)
6. सहिष्णुता (Tolerance)
7. सत्य देश-प्रेम (True Patriotism)
8. उदार मस्तिष्क (Open Mind)
9 नैतिक चरित्र (Moral Character)

नागरिकता के लिए शिक्षा की आवश्यकता
Need of Education for Citizenship

आज का युग—लोकतन्त्र का युग है। लोकतन्त्र की सुरक्षा एवं सफलता के लिए शिक्षित नागरिकों की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में बर्क ने लिखा है :—"लोक-

तन्त्रीय देश की सुरक्षा के लिए एक विशाल स्थायी सेना की अपेक्षा शिक्षित नागरिकों का होना आवश्यक है।"

"An educated citizenry are a greater defence in a democratic country than a vast standing army."—Burke.

आधुनिक युग में लोकतन्त्र तथा स्वतन्त्रता की सुरक्षा के लिए नागरिकता की शिक्षा का होना परमावश्यक है। अतः विद्यालयों को सामाजिक तथा नागरिक शिक्षा के दायित्व को ग्रहण करना चाहिए। इस सम्बन्ध में बाइनिंग व बाइनिंग (Bining & Bining) ने लिखा है :—"विद्यालय वर्तमान परिस्थितियों तथा हमारे आधुनिक समाज में फैले हुए अन्याय, अश्लीलता एवं भ्रष्टाचार की अवहेलना नहीं कर सकते हैं। उनको छात्रों को प्रभावशाली ढङ्ग से प्रशिक्षित करना चाहिए जिससे भावी नागरिक सुशासन में सक्रिय भाग तथा रुचि ले सकें और साथ ही वे अपने सामाजिक सम्बन्धों में उच्च तथा निश्शंक नैतिकता का उपयोग कर सकें।"

नागरिकता की शिक्षा के अङ्ग
Aspects of Citizenship Education

नागरिकता की शिक्षा के अङ्गों का विवेचन नीचे दिया जा रहा है :—

1. आर्थिक प्रशिक्षण : Economic Training—आर्थिक दृष्टिकोण से एक उत्तम नागरिक वह है जो कुशलतापूर्वक उत्पादन करे, बुद्धिमता से उत्पादित वस्तुओं का उपयोग करे और दूसरे नागरिकों की आर्थिक क्रियाओं की सुरक्षा के लिए कार्य करे। ऐसे नागरिक स्वतः ही उत्पन्न नहीं हो जायेंगे वरन् उनके निर्माण के लिए विशेष प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता है। उनके आर्थिक प्रशिक्षण में अधोलिखित बातों को स्थान दिया जाय :—

(अ) व्यावसायिक प्रशिक्षण (व्यवसाय से सम्बन्धित शिक्षा प्रदान की जाय)।

(ब) अपने व्यवसाय या कार्य से स्वयं को, परिवार तथा समाज को निश्चित रूप से योगदान देने की तत्परता।

(स) अपनी आय के उचित उपयोग के लिए, आर्थिक नियोजन की योग्यता का विकास।

(द) समय पर ऋणों, करों आदि को अदा करने की भावना।

(य) दूसरे लोगों के कार्य करने के अधिकार का सम्मान।

2. सामाजिक प्रशिक्षण : Social Training—सामाजिक दृष्टिकोण से उत्तम नागरिक वह है, जो सामाजिक समूहों में भाग लेने तथा कार्य करने की क्षमता रखता है। साथ ही मौलिक सामाजिक संस्थाओं के संरक्षण एवं विकास में सहयोग देता है। इस प्रकार के नागरिकों के निर्माण के लिए बालकों को सामाजिक प्रशिक्षण प्रदान करना आवश्यक है। इस प्रकार के प्रशिक्षण से उनमें सामाजिक गुणों—सहयोग, सहिष्णुता, सामाजिक सक्रियता, समाज-सेवा की भावना, सहानुभूति आदि का विकास किया जाय। इनके विकास के लिए केवल विद्यालय को ही उत्तरदायी न बनाया

जाय वरन् शिक्षा के अन्य अनौपचारिक साधनों पर भी दायित्व डाला जाय । विद्यालय तो अपने शैक्षिक कार्यक्रम के माध्यम से उनमें इन गुणों के विकास के लिए कार्य करेगा । साथ ही परिवार, जहाँ नागरिकता का जन्म होता है, समुदाय, जो उसका विकास करता है, चर्च, जो उसकी नीव को दृढ़ बनाता है, सामाजिक समूह, प्रेस एव रेडियो जो उसका विस्तार करते हैं, आदि साधनों को सामाजिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए प्रेरित किया जाय । इस सम्बन्ध मे बाइनिंग व बाइनिंग (Bining & Bining) ने लिखा है :—"**परिवार, चर्च, सामाजिक समूह तथा विभिन्न सामाजिक एवं देशभक्ति पूर्ण संगठन सामाजिक जीवन के विचारों एवं कार्यों को नवीन रूप प्रदान करने वाले सजीव साधन हैं ।**"

3. राजनैतिक प्रशिक्षण : Political Training—लोकतन्त्रीय समाज की सरकार का निर्माण नागरिको की राजनैतिक क्रियाओं से होता है । केवल लोकतन्त्र मे ही नागरिक जीवन तथा राजनीति का महत्त्वपूर्ण स्थान है । सरकार को अपने नागरिको की सेवा करने के योग्य बनाने का कार्य सभी लोगों का है । ऐसा तभी किया जा सकता है, जब उसके सभी नागरिक राजनैतिक रूप से जागरूक हो । उनको जागरूक बनाने के लिए उन्हें राजनैतिक प्रशिक्षण प्रदान करना आवश्यक है । इस प्रकार के प्रशिक्षण मे निम्नलिखित बातो पर बल दिया जाना चाहिए—

(i) छात्रों को राजनैतिक जीवन मे सक्रिय भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाय । इसके लिए उनके समक्ष समय की प्रशासकीय समस्याओं को प्रस्तुत किया जाय ।

(ii) छात्रों को समाचार-पत्र पढने, रेडियो तथा टेलीविजन पर प्रसारित सूचनाओं को सुनने के लिए प्रोत्साहित किया जाय ।

(iii) छात्रों को तत्कालीन समस्याओ को प्रस्तुत करके उनके *विषय मे निर्णय* लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाय ।

(iv) छात्रो को स्थानीय स्तर की राजनीति मे सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाय ।

(v) छात्रों को वोट देने के महत्त्व से परिचित किया जाय ।

4. सांस्कृतिक प्रशिक्षण : Cultural Training—सास्कृतिक रूप से उत्तम नागरिक वह है जो दूसरो के प्रति तथा उनकी आवश्यकताओ, इच्छाओ तथा अधिकारो के प्रति सहानुभूति एव उदार दृष्टिकोण रखता है । साथ ही वह विभिन्नताओं और दूसरो के विश्वासो को आदर की दृष्टि से देखता है । संक्षेप में उत्तम नागरिक सभी प्रजातियो, धर्मों, राष्ट्रीयताओं और सस्कृतियो के लोगो को आदर प्रदान करने के लिए तत्पर रहता है । इस प्रकार के नागरिको के लिए बालकों को सास्कृतिक प्रशिक्षण प्रदान करना आवश्यक है । सास्कृतिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए विद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रम के अतिरिक्त राज्य और समाज को अजायबघरो, चित्रशालाओं, सास्कृतिक क्लबों आदि की स्थापना करनी चाहिए । इसके साथ ही समुदाय के

साधनों का उपयोग किया जाय जिससे वे अपनी सामुदायिक संस्कृति के विषय में व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर सकें। इस प्रशिक्षण से बालकों को संवेगात्मक रूप से सन्तुलित बनाने में भी सहायता मिलेगी।

नागरिकता व शैक्षिक कार्यक्रम
Citizenship & Educational Programme

नागरिकता का विकास और विस्तार करने के लिए विद्यालयों के शैक्षिक कार्यक्रम में रूपान्तर करना अनिवार्य है। इस सम्बन्ध में कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव अग्रलिखित हैं :—

1. उपयुक्त विद्यालय-वातावरण : Suitable School Environment—उत्तम नागरिकता के विकास के लिए विद्यालय के वातावरण को उपयुक्त बनाना परमावश्यक है। यदि विद्यालय में अच्छे परिवारों से बालक आते हैं तो विद्यालय के वातावरण को ऐसा बनाया जाय जिसमें वह अभिभावकों के प्रयासों को और अधिक दृढ़ एवं समृद्ध बना सके। अतः यह बालकों में प्रभावशाली ढंग से नागरिक एवं वैयक्तिक सद्‌गुणों का विकास कर सके। यदि बालक उपेक्षित परिवार से आये हैं तो विद्यालय के वातावरण द्वारा उनकी कमियों की पूर्ति एवं उनके उचित नागरिक आचरण के विकास के लिए सुअवसर प्रदान किये जायें।

2. सम्पूर्ण शिक्षक-वर्ग को उत्तरदायी बनाना : Making the Entire Staff Responsible—नागरिकता के विकास के लिए केवल सामाजिक अध्ययन और नागरिक शास्त्र के शिक्षक ही उत्तरदायी नहीं हैं। परन्तु इसके विकास के लिए सभी विषयों के शिक्षकों पर दायित्व डाला जाय। इस सम्बन्ध में क्विलेन (I. J. Quillen) ने लिखा है :—"उत्तम नागरिकता का विकास सभी शिक्षकों तथा सम्पूर्ण विद्यालय का दायित्व है। प्रत्येक शिक्षक छात्रों के समूह के अनुभवों को निर्देशित करता है। अतः प्रत्येक शिक्षक उत्तम आचरण, आत्मानुशासन, आत्म-निर्भरता तथा आत्म-निर्देशन के विकास से सम्बन्धित है।"

3. पाठ्यक्रम : Curriculum—नागरिकता के विकास के लिए पाठ्यक्रम में निम्नलिखित विषयों एवं बातों का समावेश किया जाना चाहिए :—

(अ) सामाजिक अध्ययन : Social Studies—नागरिकता के विकास में सामाजिक अध्ययन की विषय-वस्तु का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके द्वारा आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक विश्व को समझने के लिए पर्याप्त मात्रा में अनुभव प्रदान किये जाते हैं। साथ ही यह छात्रों को मानवीय सम्बन्धों को समझने तथा उत्तम नागरिकता के लिए व्यावहारिक अनुभव प्रदान करता है।

(ब) नागरिकशास्त्र : Civics—नागरिकशास्त्र का अध्ययन विवेकी (Intelligent) या बुद्धिमत्तापूर्ण नागरिकता के लिए छात्रों में सूझबूझ विकसित करता है। इसके शिक्षण से छात्रों में स्पष्ट चिन्तन, वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा स्वतन्त्र निर्णय करने

के कौशलों (Skills) का विकास किया जा सकता है । ये कौशल उत्तम नागरिकता के आधार है ।

(स) अन्य तथ्य : Other Facts—अन्य विषयों की पाठ्य-सामग्री भी बालकों मे उत्तम नागरिकता के विकास के लिए उपयोगी है । अत. सभी विषयों के शिक्षण मे उनकी सामग्री के सामाजिक मूल्यों पर बल दिया जाय । इस सम्बन्ध मे क्विलेन (Quillen) ने लिखा है :—"साहित्य, कला, संगीत, विज्ञान तथा अन्य बहुत-से क्षेत्रों की पाठ्य-वस्तु समझदारी, आदर्शों तथा कौशलों के विकास में योग दे सकती है, जो उत्तम नागरिकता के मूलाधार हैं ।"

(द) समस्यात्मक पाठ्य-विषय : Problem Course—समस्यात्मक पाठ्य-विषय छात्रों को समाज की प्रमुख समस्याओं के अध्ययन के लिए अवसर प्रदान करता है । ये समस्याएँ स्वय छात्र से, स्थानीय, राज्यीय तथा राष्ट्रीय सरकारों से सम्बन्धित होनी चाहिए । उदाहरणार्थ—हम अपने ग्राम के उत्तम नागरिक किस प्रकार बन सकते है ? हम अपने राष्ट्र के योग्य नागरिक किस प्रकार बन सकते हैं ? जनमत सरकार को किस प्रकार प्रभावित करता है ? क्या नागरिक अपनी सरकार के कार्यों मे रुचि नही लेते हैं ? हम अपने नागरिकों को किस प्रकार अधिक शिक्षा प्रदान कर सकते हैं ? आदि ।

4. अन्य सुझाव : Other Suggestions—(1) रेडियो, समाचार-पत्र, सिनेमा, भाषण आदि अनौपचारिक साधनों का प्रयोग किया जाय ।

(2) विद्यालय तथा छात्रावास में संसृष्ट जीवन (Corporate Life) की व्यवस्था की जाय ।

(3) छात्र-सघ का निर्माण किया जाय और उसे अनुशासन, खेल-कूदों का सगठन, विद्यालय सम्पत्ति की सुरक्षा, विद्यालय-कैन्टीन एवं भण्डार का सचालन, सास्कृतिक कार्यक्रमो का सगठन एवं संचालन तथा विद्यालय हैण्डबुक के निर्माण से सम्बन्धित अधिकार एवं दायित्व प्रदान किये जायें ।

(4) विभिन्न विषयों से सम्बन्धित समुदायों का सगठन किया जाय ।

(5) नागरिकता के कार्यान्वियन से सम्बन्धित सामुदायिक सर्वेक्षण कराये जायँ जिससे छात्र प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त कर सके ।

(6) वाद-विवाद प्रतियोगिताएँ, सगीत एव नाटक सम्बन्धी विभिन्न क्रियाओं को संगठित किया जाय ।

(7) स्थानीय स्वशासन की सस्थाओं—नगरपालिका, ग्राम-पचायत, अन्तरिम जिला-परिषद—की कार्यवाही का निरीक्षण कराया जाय ।

(8) समाज-सेवा कार्यों मे सक्रिय भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाय ।

(9) विद्यालय की सफाई तथा कक्षा-कक्षों की सजावट का दायित्व छात्रों पर डाला जाय ।

(10) राष्ट्रीय पर्वो एव दिवसों को नियमानुसार मनाया जाय ।

उपसंहार

भारत की आर्थिक प्रगति, सामाजिक सुदृढ़ता तथा राष्ट्रीय एकीकरण के लिए उत्तम नागरिकों का होना परमावश्यक है। साथ ही, आधुनिक युग में इस बात का भी अनुभव किया जाने लगा है कि विश्व में चिर-शान्ति स्थापित रखने के लिए भी उत्तम नागरिकों का होना अनिवार्य है। अत: उत्तम नागरिकों के निर्माण के लिए नागरिकता की शिक्षा की व्यवस्था करना प्रत्येक राज्य का परम कर्तव्य है। इसके अतिरिक्त, स्वयं राज्य का भविष्य उसके नागरिकों पर निर्भर है। यदि राज्य अपनी प्रगति एवं विकास चाहता है, तो उसे अपने प्रत्येक नागरिक को उसके कर्तव्यों उत्तरदायित्वों तथा अधिकारों से अवगत करना होगा। अत: नागरिकता की शिक्षा की सुन्दरतम् व्यवस्था करना—प्रत्येक राज्य का कर्तव्य है। राज्य के लिए इस शिक्षा की एक अन्य उपयोगिता बताते हुए, प्लेटो ने लिखा है.—*"राज्य को स्थायी स्थिरता का एकमात्र वास्तविक उपाय—नागरिकता की शिक्षा है। विधान द्वारा नागरिकों को समाज की व्यवस्था के अनुकूल बनाने की आशा सदैव निरर्थक रहेगी।"*

"Education for citizenship is the only true way to the permanent stability of the state. The hope of moulding the citizens to the community by legislation must always be futile."—*Plato,* Quoted by Nettleship : *Lectures on the Republic of Plato,* p. 76.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What do you understand by education for citizenship ? Discuss its need and utility in India.

नागरिकता की शिक्षा से आप क्या समझते हैं ? भारत में इसकी आवश्यकता और उपयोगिता का विवेचन कीजिये।

2. Explain the meaning of education for citizenship, and describe its chief features.

नागरिकता की शिक्षा का अर्थ स्पष्ट कीजिए और इसकी प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

3. Give an outline of a programme of education for citizenship. What aspects of this education will you include in this programme to make it effective ?

नागरिकता की शिक्षा के कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए। आप इस कार्यक्रम को प्रभावशाली बनाने के लिए इस शिक्षा के कौन-से अंगों को कार्यक्रम में सम्मिलित करेंगे ?

18

लोकतन्त्र व शिक्षा

DEMOCRACY & EDUCATION

"लोकतन्त्र में शिक्षा का उचित आदर्श रचनात्मक आदर्श है। यह नये प्रकार के ऐसे मनुष्यों का निर्माण करने का प्रयास करता है, जो गणतन्त्र और मानव-जाति के लिए अधिक ही अधिक उपयोगी सिद्ध हों।"

"The right ideal of education in a democracy is the creative ideal. It seeks to create new kinds of men, who shall be of ever increasing worth to the republic and to mankind."

—Hanry Van Dyke.

विषय-प्रवेश

आधुनिक युग—प्रजातन्त्र का युग है। प्रजातन्त्र को सब शासनों में उच्चतम स्थान दिया गया है। प्राचीन यूनानी भी सब शासनों में इसे श्रेष्ठ मानते थे। शासन के रूप में प्रजातन्त्र का भविष्य बहुत उज्जवल है। ऐसी सम्भावना है और आशा भी की जाती है कि धीरे-धीरे प्रजातन्त्र संसार के कोने-कोने में फैल जायगा। शासन के रूप में प्रजातन्त्र में जनता ही शासक होती है।

'प्रजातन्त्र' एक प्रकार का सामाजिक सगठन भी है। यदि राज्य में प्रजातान्त्रिक सामाजिक संगठन नहीं है, तो हम उसको वास्तविक रूप में प्रजातन्त्र का नाम नहीं दे सकते हैं। समाज की रचना लोकतान्त्रिक आधार पर तभी हो सकती है, जब उसमें समानता और बन्धुत्व की भावनाओं का समावेश हो। मुस्लिम समाज प्रजातान्त्रिक है, क्योंकि उसमें ऊँच-नीच का भेदभाव नहीं है और सब के साथ समानता का व्यवहार होता है। हिन्दुओं में प्रजातन्त्र की भावना नहीं है, क्योंकि हिन्दू समाज में

जातियों के बन्धन बहुत कठोर हैं और जातियाँ अपने को समान न समझ कर, ऊँचा और नीचा समझती हैं।

शासन का भेद और सामाजिक सगठन होने के साथ-साथ, प्रजातन्त्र, मस्तिष्क की एक प्रवृत्ति भी है। इसमें एक नैतिक आदर्श होता है। इसके अनुसार मनुष्य का अस्तित्व स्वयं के लिए है, न कि दूसरों को सुख और आनन्द पहुँचाने के लिए। उदाहरणार्थ—इङ्गलैण्ड का निर्धन मनुष्य भी अपने जीवन को धनी से धनी मनुष्य के समान व्यतीत कर सकता है। इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य के रूप में निर्धन व्यक्ति का वही मूल्य है, जो धनी व्यक्ति का है। मनुष्य के रूप में निर्धन, धनी से निम्न नहीं है। इसलिए, दोनों के द्वारा समानता का प्रयोग किया जाना आवश्यक है। मस्तिष्क की प्रवृत्ति के रूप में प्रजातन्त्र साधारण मनुष्य में अपना विश्वास व्यक्त करता है। इसका आशय है कि सब मनुष्यों में गुणों का समावेश है और वे उनसे रहित नहीं हैं।

लोकतन्त्र का अर्थ
Meaning of Democracy

लोकतन्त्र की विभिन्न रूपों में व्याख्या की गई है। मुख्यत इसको सरकार के भेद तथा जीवन-यापन की प्रणाली के रूप में लिया जाता है। आगे हम लोकतन्त्र के प्रमुख रूपों में उसके अर्थ की व्याख्या प्रस्तुत कर रहे हैं —

(अ) सरकार के भेद के रूप में : As a Form of Government

1. राजनैतिक दृष्टि से लोकतन्त्र के अर्थ को स्पष्ट करते हुए डायसी ने लिखा है :—"लोकतन्त्र, सरकार का वह रूप है, जिसमें प्रशासकीय वर्ग सम्पूर्ण राष्ट्र का बहुत बड़ा भाग होता है।

"Democracy is a form of government in which governing body is comparatively a large fraction of the entire nation."

—Dicey.

2. अब्राहम लिंकन के शब्दों में :—"प्रजातन्त्र वह सरकार है जो जनता की, जनता द्वारा तथा जनता के लिए है।"

"Democracy is the government of the people, by the people and for the people."—Abraham Lincoln.

3. लोकतन्त्र को इस प्रकार भी परिभाषित किया जा सकता है :—"लोकतन्त्र की स्थापना उस समय होती है जब उसके सब वयस्क पुरुष एवं स्त्री राज्य के कार्यों में भाग लेते हैं, उसके समस्त प्रश्नों पर विचार करते हैं और वोट देकर उनका निर्णय करते हैं। इस प्रकार वे अब्राहम लिंकन के आदर्श—जनता की, जनता के द्वारा तथा जनता के लिए सरकार, को प्राप्त करते है।"

"Democracy is established when all its adult men and women

participate in the affairs of the state, determine and decide all questions and projects by their votes and thus realize Abraham Lincoln's ideal of 'government of the people, by the people, for the people'.''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि लोकतन्त्र का आधार—जनता की सामान्य इच्छा है, न कि बल। इसीलिए इसको व्यक्ति के गुणों के विकास के लिए सर्वोत्तम सरकार माना गया है।

(ब) सामाजिक संगठन के रूप में : As a Social Organization

सामाजिक दृष्टिकोण से लोकतन्त्र का अर्थ—उस व्यवस्था से है जिसमें धर्म, जाति, लिंग-भेद आदि पर ध्यान दिये बिना प्रत्येक व्यक्ति को समाज में अपनी उन्नति करने के लिए समान अवसर प्रदान किए जाएँ। इस प्रकार की व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता एवं क्षमता के अनुसार स्वयं तथा समाज—दोनों का विकास एवं उन्नति करने का अधिकारी होता है।

1. डा० विश्वनाथ प्रसाद वर्मा ने लिखा है :—"लोकतन्त्र, सामूहिक रूप से राजनैतिक तथा सामाजिक प्रगति की एक प्रक्रिया है।"

"Democracy is a process of collective political and social advancement."—**Dr. Vishwanath Prasad Verma.**

2. भाटिया के शब्दों में :—**"सामाजिक लोकतन्त्र—वर्ग, जन्म या सम्पत्ति पर आधारित समस्त भेदों का अभाव है।"**

"Social democracy connotes absence of all distinctions based on class, birth or possession of wealth."—**B. D. Bhatia.**

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि लोकतन्त्र सामाजिक क्षेत्र में उस व्यवस्था की ओर संकेत है, जिसमें बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के लिए समान अवसर प्राप्त हों।

3 जीवन-यापन की प्रणाली के रूप में : As a Way of Life

वस्तुतः लोकतन्त्र जीवन-यापन की एक प्रणाली है, जिसमें समाज के प्रत्येक सदस्य को अपनी समस्त शक्तियों को विकसित करने के लिए स्वतन्त्रता तथा जीवन-यापन करने के हेतु समान अवसर प्राप्त होते है। इस दृष्टिकोण को प्रतिपादित करते हुए **बॉयड बोड** ने लिखा है :—**"लोकतन्त्र जीवन-यापन का एक ढंग है और जीवन-यापन के ढंग का अर्थ है—जीवन के प्रत्येक प्रमुख क्षेत्र को प्रभावित करना।"**

"Democracy is a way of life, and way of life means a determining influence in every major area of life."—**Boyd Bode.**

लोकतन्त्र के विभिन्न अर्थों को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा के

अभाव में इस सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्था की सफलता असम्भव है।

लोकतन्त्र के लिए शिक्षा की आवश्यकता
Need of Education for Democracy

लोकतन्त्र की सफलता के लिए सबसे आवश्यक बातें शिक्षा और उच्च कोटि की राजनैतिक चेतना है। यदि लोगों को राज्य के कार्यों मे रुचि नही है, और यदि वे समाज की समस्याओं को नहीं समझते है, तो लोकतन्त्र केवल नाम के लिए होता है। लोकतन्त्र मे जितने भी दोष बताये जाते है, उन सबका प्रमुख कारण—शिक्षा का अभाव है। शिक्षा ही लोकतन्त्र के नागरिको को जागरूक बनाती है और राज्य के कार्यों मे उनकी रुचि उत्पन्न करती है। अत. लोकतन्त्र मे शिक्षा की आवश्यकता के लिए जितना ही कहा जाय, थोड़ा है।

लोकतन्त्र का आदर्श है कि व्यक्ति और समाज—एक-दूसरे की सहायता से पूर्णता को प्राप्त हों। लोकतन्त्र न तो समाज द्वारा व्यक्ति के शोषण; और न व्यक्ति द्वारा समाज के हितों की अवहेलना की आज्ञा देता है। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते है कि लोकतन्त्र का कार्य समाज को इस प्रकार सगठित करना है जिससे व्यक्ति अपने साथियों और समाज के लिए हितप्रद कार्यों के द्वारा अपने व्यक्तित्व का विकास कर सके। अत लोकतन्त्र मे शिक्षा की उपेक्षा नहीं की जा सकती है, क्योंकि शिक्षा ही व्यक्ति मे—ज्ञान, रुचियों, आदर्शों और शक्तियों का विकास करती है। इनके विकास से ही व्यक्ति लोकतन्त्र मे अपना स्थान प्राप्त करता है और उस स्थान का प्रयोग अपने को और अपने समाज को उच्च आदर्शों की ओर ले जाने के लिए करता है। लोकतन्त्र के लिए शिक्षा की आवश्यकता बताते हुए जे० डब्ल्यू० एच० हैदरिंगटन (J. W. H. Hetherington) ने लिखा है .—**"लोकतन्त्रीय सरकार की मांग—शिक्षित जनता है।"**

ड्यूवी ने लोकतन्त्र के लिए शिक्षा की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है :—**"लोकतन्त्र में इस प्रकार की शिक्षा होनी चाहिए, जिससे व्यक्तियों को सामाजिक सम्बन्ध और नियन्त्रण में व्यक्तिगत रुचि उत्पन्न हो; और उनमें ऐसी मानसिक आदतों का निर्माण हो, जिनसे अव्यवस्था उत्पन्न हुए बिना सामाजिक परिवर्तन का होना सम्भव हो।"**

"A democracy must have a type of education which gives individuals a personal interest in social relationship and control, and habits of mind which secure social changes without introducing disorder."—**John Dewey.**

लोकतन्त्रीय शिक्षा के उद्देश्य
Aims of Democratic Education

ड्यूवी ने लिखा है :—"लोकतन्त्र केवल सरकार का रूप न होकर, उससे भी कुछ अधिक है। यह मुख्यतः सहयोगी जीवन और सम्मिलित रूप से किए गए अनुभव की विधि है।"

"A democracy is more than a form of government; it is primarily a mode of associated living, of conjoint communicated experience."—**John Dewey.**

ड्यूवी ने जिस विधि के बारे में लिखा है, उसके अनुसार लोगों को तैयार करना शिक्षा का कार्य है। अतः यह प्रश्न उठता है कि—'लोकतन्त्र में लोगों को किस प्रकार की शिक्षा दी जाय ?' इसका उत्तर यह है कि यदि इस शिक्षा में हमारे प्रयास सफल है, तो बालक योग्य नागरिक बनेगा। वह अपने कार्यों को इस प्रकार करेगा, जिससे उसका और दूसरों का हित होगा। वह ऐसे कार्यों को करने पर बल देगा, जिनसे विश्व-कल्याण को योग मिलेगा। उसमें 'सह-जीवन और सह-अस्तित्व' (Co-operative Life & Co-existence) की भावना का विकास होगा। इस प्रकार के व्यक्ति का निर्माण करने के लिए लोकतन्त्रीय शिक्षा के कुछ उद्देश्य होने आवश्यक है। ये उद्देश्य दो प्रकार के है :—

(क) सामान्य उद्देश्य (General Aims)

(ख) अनिवार्य उद्देश्य (Fundamental Aims)

(क) लोकतन्त्रीय शिक्षा के सामान्य उद्देश्य
General Aims of Democratic Education

लोकतन्त्रीय शिक्षा के सामान्य उद्देश्य निम्नलिखित है :—

1. प्रेम और सहयोग के आधार पर परिवार और समाज की उपयुक्त सदस्यता का विकास।
2. व्यावसायिक कुशलता (Professional Efficiency) और व्यावसायिक नैतिकता (Professional Ethics) का विकास।
3. अवकाश (Leisure) प्राप्त करने की क्षमता, और उसे मनोरंजन तथा आत्म-उन्नति के लिए लाभप्रद ढंग से प्रयोग करने का प्रशिक्षण।
4. शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की उन्नति।
5. मस्तिष्क और बुद्धि का प्रशिक्षण।
6. चरित्र और अनुशासन का विकास।
7. विभिन्न क्षेत्रों में नेतृत्व का प्रशिक्षण।

(ख) लोकतन्त्रीय शिक्षा के अनिवार्य उद्देश्य
Fundamental Aims of Democratic Education

लोकतन्त्रीय शिक्षा के अनिवार्य उद्देश्य निम्नलिखित होने चाहिए :—

1. समविकसित व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों का विकास : Development of Individuals with Harmonious Personality—आज का संसार संघर्षों और कटुताओं से भरा हुआ है। ये दोनों—लोकतन्त्र और मानव के लिए संकट का कारण बन गए हैं। अतः शिक्षा को सामंजस्यपूर्ण व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों का विकास करना चाहिए। हुमायूँ कबीर (Humayun Kabir) के अनुसार :—"**शिक्षा को मानव-प्रकृति के सब पहलुओं के लिए सामग्री जुटानी चाहिए और मानव-शास्त्र, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी को समान महत्त्व देना चाहिए, जिससे कि यह मनुष्य को सब कार्यों को निष्पक्षता, कुशलता और उदारता से करने के योग्य बना सके।**"

2. व्यक्ति की आर्थिक सम्पन्नता : Economic Well-Being of the Individual—लोकतन्त्र की सफलता, व्यक्तियों की आर्थिक सम्पन्नता पर निर्भर है। कारण यह है कि आर्थिक सम्पन्नता न होने पर वे अपने कर्तव्य से विमुख हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, वे धन-सम्पन्न व्यक्तियों के इशारे पर अपने वोट किसी को भी दे सकते हैं। अत: लोकतन्त्र में शिक्षा का यह उद्देश्य होना चाहिए कि वह लोगों को किसी व्यवसाय के लिए तैयार करके उनको धन-सम्पन्न बनाए।

3. व्यक्ति की रुचियों का विकास : Development of Individual's Interests—लोकतन्त्र में शिक्षा को व्यक्ति की रुचियों के विकास के लिए कार्य करना चाहिए। हरबार्ट (Herbart) ने बहुमुखी रुचियों के विकास पर बल दिया है। बालक में जितनी ही अधिक उपयुक्त और श्रेष्ठ रुचियाँ होंगी, उसे उतने ही अधिक अवसर शिक्षा-काल में और उसके बाद—सुखी, कुशल और सन्तुलित जीवन व्यतीत करने के लिए मिलेंगे।

4. अच्छी आदतों का निर्माण : Formation of Good Habits—लोकतन्त्रीय समाज के नागरिक में अच्छी आदतों का निर्माण किया जाना आवश्यक है, क्योंकि आदतें ही गरीबी या अमीरी, परिश्रम या आलस्य, अच्छे या बुरे कार्यों की नींव डालती हैं। अतः बालकों को आरम्भ से अच्छी आदतें सिखायी जानी चाहिए, जिससे कि उनका और उनके समाज का भावी जीवन सुखी हो सके।

5. सामाजिक दृष्टिकोण का विकास : Development of Social Outlook—लोकतन्त्र में शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है—व्यक्ति में सामाजिक दृष्टिकोण का विकास करना। इस उद्देश्य में सामाजिक समझदारी, सामाजिक रुचियाँ सामाजिक प्राणी बनने की भावना, सहयोग और सामाजिक तथा आर्थिक प्रश्नों का

निर्णय करने की योग्यता आती है। इस प्रकार इस उद्देश्य में सामाजिक भावना और सामाजिक क्षमता की भावना सम्मिलित है।

6. **कुशलता की प्राप्ति : Achievement of Efficiency**—प्रजातन्त्र के लिए शिक्षा देने के समय कुशलता की प्राप्ति को ध्येय बनाया जाना चाहिए। कुशलता के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इलियट (Eliot) ने लिखा है :—**"कुशलता से मेरा अभिप्राय है—स्वस्थ और सक्रिय जीवन में कार्य तथा सेवा की सार्थक शक्ति। इस शक्ति से प्रशिक्षण और विकास के लिए हर एक व्यक्ति को शिक्षा दी जानी चाहिए।"**

7. **नागरिकता का प्रशिक्षण : Training for Citizenship**—लोकतन्त्र में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—लोगो को नागरिकता का प्रशिक्षण देना है। इस प्रशिक्षण का आदर्श हमको अग्रलिखित शपथ में मिलता है, जो प्राचीन यूनान में व्यक्तियों को नागरिकता प्राप्त करते समय लेनी पड़ती थी—**"हम अपने इस नगर को बेईमानी या कायरता के किसी कार्य से या अपने दुखी साथियों को अकेला छोड़कर कलंकित नहीं करेंगे। हम नागरिकता के आदर्शों और सामाजिक वस्तुओं के लिए अकेले और मिलकर युद्ध करेंगे। हम नगर के कानूनों का पालन करेंगे। हम जनता में नागरिकता की भावना को प्रबल बनाने के लिए सदैव प्रयत्न करेंगे। हम इस नगर को अधिक बड़ा, अधिक अच्छा और अधिक सुन्दर बनाकर भावी पीढ़ी को सौंपेंगे।"**

8. **उच्च लक्ष्यों के लिए व्यक्ति व समाज का निर्माण : Shaping the Individual & Society towards Nobler Ends**—लोकतन्त्र में शिक्षा के इस उद्देश्य के महत्त्व को अमरीकी शिक्षा 35वें बुलेटिन में इस प्रकार व्यक्त किया गया है :—**"लोकतन्त्र में शिक्षा को प्रत्येक व्यक्ति में ज्ञान, रुचियों, आदर्शों, आदतों, और शक्तियों का विकास करना चाहिए, जिससे वह अपना उचित स्थान प्राप्त करे और उस स्थान का प्रयोग स्वयं और समाज—दोनों को उच्च लक्ष्यों की ओर ले जाने के लिए करे।"**

"Education in a democracy should develop in each individual the knowledge, interests, ideals, habits and powers whereby he will find his place and use that place to shape both himself and society towards nobler ends."—**American Education Bulletin.**

लोकतन्त्र व पाठ्यक्रम
Democracy & Curriculum

पाठ्यक्रम में उन विषयों एवं क्रियाओं को स्थान दिया जाय जो लोकतन्त्रीय आदर्शों एवं मूल्यों को प्राप्त करने में सहायता दें। लोकतान्त्रिक शिक्षा के पाठ्यक्रम को निर्धारित करते समय हमें अग्रलिखित सिद्धान्तों पर ध्यान देना आवश्यक है :—

नागरिक क्या जाने वरन् यह है कि उत्तम नागरिक क्या करता है और उसे ऐसा करने के लिए क्या जानना चाहिए।"

"Citizenship is a way of living, not something that can be taught only as a unit or subject. The real question is not merely '*What does a good citizen know*' but '*What does a good citizen do*', and '*What must he know to do it*' ?—American Asscoiation of School Administrators.

उत्तम नागरिक कौन है ?
Who is a Good Citizen

नागरिकता का अर्थ देखने के पश्चात् स्वतः यह प्रश्न उठता है कि उत्तम नागरिक कौन है ? एक उत्तम नागरिक का विचार यूनानियों की निम्नलिखित नागरिक शपथ से स्पष्ट हो सकता है :—

'हम अपनी बेईमानी या कायरता के किसी कार्य से अपने इस नगर को कलंकित नहीं करेंगे और न अपने दुःखी साथियों को अकेला छोड़कर जायेंगे। हम नगर के पवित्र आदर्शों एवं वस्तुओं की रक्षा के लिए अकेले अथवा बहुत-से मिलकर लड़ेंगे; हम नगर के क़ानूनों का पालन करेंगे और अपनी क्षमता के अनुसार उन लोगों में भी क़ानूनों के लिए श्रद्धा एवं आदर उत्पन्न करने का प्रयास करेंगे, जो उनका उल्लंघन करते हैं; हम जनता की नागरिक भावना को उत्तेजित करने के लिए अथक परिश्रम करेंगे। इस प्रकार, इन समस्त ढंगों से हम इस नगर को भावी सन्तति को उस रूप से कम अच्छे रूप में प्रदान नहीं करेंगे वरन् उससे उत्तम, व्यापक एवं अधिक सुन्दर रूप में संक्रमित करेंगे जिस रूप में पूर्व पीढ़ी से प्राप्त हुआ था।"

वस्तुतः उपर्युक्त शपथ प्रत्येक देश के नागरिक के लिए एक उत्तम आदर्श प्रदान करती है। प्रत्येक नागरिक को इस आदर्श के अनुसार अपने नागरिक जीवन को व्यतीत करना चाहिए। परन्तु आधुनिक युग में नागरिकता की धारणा एवं उसका क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया है। अब उत्तम नागरिकता की धारणा को नागरिक एवं वैयक्तिक सद्गुणों का मिश्रण माना जाता है। इसके अनुसार, वैयक्तिकता के विकास तथा सामाजिक दायित्वों को एक-दूसरे का विरोधी नहीं माना जाता वरन् पूरक माना जाता है। आज इसका क्षेत्र किसी विशेष स्थान, देश या राष्ट्र तक सीमित नहीं है वरन् इसका क्षेत्र सम्पूर्ण मानव-जाति या विश्व तक फैला हुआ है। इस धारणा के अनुसार एक उत्तम एवं कुशल नागरिक में निम्नलिखित सद्गुणों का होना आवश्यक है :—

(अ) अमेरिकन विद्यालय प्रबन्धकों के समुदाय के अनुसार—

1. नागरिक कुशलता : Civic Competence
2. शैक्षिक ग्रहणशीलता : Educational Flexibility

3. सामाजिक सूझबूझ : Social Understanding
4. व्यावसायिक कुशलता : Occupational Efficiency
5. धार्मिक चेतना : Religious Consciousness.
6. पारिवारिक भक्ति : Home Loyalty

(ब) सामाजिक अध्ययन के राष्ट्रीय परिषद् के अध्ययन के आधार पर—

1. उत्तम नागरिक सभी के लिए अवसर की समानता में निष्ठा रखता है।
2. मानवीय अधिकारों को मान्यता एवं आदर प्रदान करता है। साथ ही वह उनकी सुरक्षा के लिए कार्य करता है।
3. कानून का पालन करता है।
4. करों को तत्परता के साथ अदा करता है।
5. लोकतन्त्रीय आदर्शों मे आस्था रखता है तथा उनके अनुसार आचरण करता है।

(स) डी० ई० स्टेनले (D. E. Stanley), मेलर (Meler) तथा वेस्टन (Weston) के अध्ययन के आधार पर—

1. उत्तम नागरिक, लोकतन्त्र के आदर्शों के प्रति निष्ठा रखता है।
2. लोकतान्त्रिक समाज के अनुकूल मानवीय सम्बन्धो को व्यावहारिक रूप प्रदान करता है।
3. लोकतन्त्रीय जीवन-यापन की प्रक्रिया को सुगम बनाने के लिए आवश्यक ज्ञान, कुशलता तथा योग्यताओ को ग्रहण करके उन्हे व्यवहार मे लाता है।
4. समय की सामाजिक समस्याओं को जानने तथा उनके समाधान में सहयोग देता है।
5. मानव की मौलिक आवश्यकताओ की पूर्ति के महत्त्व से अवगत रहता है।

(द) माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार—

1. उत्तम नागरिक समझदारी एव बौद्धिक सत्यनिष्ठा (Understanding and Intellectual Integrity) रखता है।
2. वैज्ञानिक दृष्टिकोण (Scientific Outlook)
3. अनुशासन (Discipline)
4. सहयोग (Co-operation)
5. सामाजिक सवेदना (Social Sensitiveness)
6. सहिष्णुता (Tolerance)
7. सत्य देश-प्रेम (True Patriotism)

8. उदार मस्तिष्क (Open Mind)
9. नैतिक चरित्र (Moral Character)

नागरिकता के लिए शिक्षा की आवश्यकता
Need of Education for Citizenship

आज का युग—लोकतन्त्र का युग है। लोकतन्त्र की सुरक्षा एवं सफलता के लिए शिक्षित नागरिकों की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में बर्क ने लिखा है :—"लोकतन्त्रीय देश की सुरक्षा के लिए एक विशाल स्थायी सेना की अपेक्षा शिक्षित नागरिकों का होना आवश्यक है।"

"An educated citizenry are a greater defence in a democratic country than a vast standing army."—Burke.

आधुनिक युग में लोकतन्त्र तथा स्वतन्त्रता की सुरक्षा के लिए नागरिकता की शिक्षा का होना परमावश्यक है। अतः विद्यालयों को सामाजिक तथा नागरिक शिक्षा के दायित्व को ग्रहण करना चाहिए। इस सम्बन्ध में बाइनिंग व बाइनिंग (Bining & Bining) ने लिखा है :—"विद्यालय वर्तमान परिस्थितियों तथा हमारे आधुनिक समाज में फैले हुए अन्याय, अश्लीलता एवं भ्रष्टाचार की अवहेलना नहीं कर सकते हैं। उनको छात्रों को प्रभावशाली ढंग से प्रशिक्षित करना चाहिए जिससे भावी नागरिक सुशासन में सक्रिय भाग तथा रुचि ले सकें और साथ ही वे अपने सामाजिक सम्बन्धों में उच्च तथा निश्शंक नैतिकता का उपयोग कर सकें।"

नागरिकता की शिक्षा के अंग
Aspects of Citizenship Education

नागरिकता की शिक्षा के अंगों का विवेचन नीचे दिया जा रहा है :—

1. आर्थिक प्रशिक्षण : Economic Training—आर्थिक दृष्टिकोण से एक उत्तम नागरिक वह है जो कुशलतापूर्वक उत्पादन करे, बुद्धिमत्ता से उत्पादित वस्तुओं का उपभोग करे और दूसरे नागरिकों की आर्थिक क्रियाओं की सुरक्षा के लिए कार्य करे। ऐसे नागरिक स्वतः ही उत्पन्न नहीं हो जायेंगे वरन् उनके निर्माण के लिए विशेष प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता है। उनके आर्थिक प्रशिक्षण में अधोलिखित बातों को स्थान दिया जाय :—

(अ) व्यावसायिक प्रशिक्षण (व्यवसाय से सम्बन्धित शिक्षा प्रदान की जाय)।
(ब) अपने व्यवसाय या कार्य से स्वयं को, परिवार तथा समाज को निश्चित रूप से योगदान देने की तत्परता।
(स) अपनी आय के उचित उपयोग के लिए आर्थिक नियोजन की योग्यता का विकास।
(द) समय पर ऋणों, करों आदि को अदा करने की भावना।
(य) दूसरे लोगों के कार्य करने के अधिकार का सम्मान।

2. सामाजिक प्रशिक्षण : Social Training—सामाजिक दृष्टिकोण से उत्तम नागरिक वह है, जो सामाजिक समूहों में भाग लेने तथा कार्य करने की क्षमता रखता है। साथ ही मौलिक सामाजिक संस्थाओं के सरक्षण एवं विकास में सहयोग देता है। इस प्रकार के नागरिकों के निर्माण के लिए बालकों को सामाजिक प्रशिक्षण प्रदान करना आवश्यक है। इस प्रकार के प्रशिक्षण से उनमें सामाजिक गुणों—सहयोग, सहिष्णुता, सामाजिक सक्रियता, समाज-सेवा की भावना, सहानुभूति आदि का विकास किया जाय। इनके विकास के लिए केवल विद्यालय को ही उत्तरदायी न बनाया जाय वरन् शिक्षा के अन्य अनौपचारिक साधनों पर भी दायित्व डाला जाय। विद्यालय तो अपने शैक्षिक कार्यक्रम के माध्यम से उनमें इन गुणो के विकास के लिए कार्य करेगा। साथ ही परिवार, जहाँ नागरिकता का जन्म होता है, समुदाय, जो उसका विकास करता है, चर्च, जो उसकी नींव को दृढ़ बनाता है, सामाजिक समूह, प्रेस एवं रेडियो जो उसका विस्तार करते है, आदि साधनों को सामाजिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए प्रेरित किया जाय। इस सम्बन्ध मे बाइनिंग व बाइनिंग ने लिखा है :—

"परिवार, चर्च, सामाजिक समूह तथा विभिन्न सामाजिक एवं देशभक्ति पूर्ण संगठन सामाजिक जीवन के विचारों एवं कार्यों को नवीन रूप प्रदान करने वाले सजीव साधन हैं।"

"The family, the church, the social group and the various, social and patriotic organizations are vital instruments in shaping the ideas and actions of social living."—**Bining & Bining.**

3. राजनैतिक प्रशिक्षण : Political Training—लोकतन्त्रीय समाज की सरकार का निर्माण नागरिकों की राजनैतिक क्रियाओं से होता है। केवल लोकतन्त्र में ही नागरिक जीवन तथा राजनीति का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सरकार को अपने नागरिकों की सेवा करने के योग्य बनाने का कार्य सभी लोगो का है। ऐसा तभी किया जा सकता है, जब उसके सभी नागरिक राजनैतिक रूप से जागरूक हों। उनको जागरूक बनाने के लिए उन्हें राजनैतिक प्रशिक्षण प्रदान करना आवश्यक है। इस प्रकार के प्रशिक्षण में निम्नलिखित बातों पर बल दिया जाना चाहिए—

(i) छात्रों को राजनैतिक जीवन में सक्रिय भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाय। इसके लिए उनके समक्ष समय की प्रशासकीय समस्याओं को प्रस्तुत किया जाय।

(ii) छात्रों को समाचार-पत्र पढ़ने, रेडियो तथा टेलीविजन पर प्रसारित सूचनाओं को सुनने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।

(iii) छात्रों को तत्कालीन समस्याओं को प्रस्तुत करके उनके विषय में निर्णय लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।

(iv) छात्रों को स्थानीय स्तर की राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाय।

(v) छात्रों को वोट देने के महत्व से परिचित किया जाय।

4. सांस्कृतिक प्रशिक्षण : Cultural Training—सास्कृतिक रूप से उत्तम नागरिक वह है जो दूसरो के प्रति तथा उनकी आवश्यकताओ, इच्छाओं तथा अधिकारों के प्रति सहानुभूति एवं उदार दृष्टिकोण रखता है। साथ ही वह विभिन्नताओं और दूसरो के विश्वासों को आदर की दृष्टि से देखता है। सक्षेप में उत्तम नागरिक सभी प्रजातियों, धर्मों, राष्ट्रीयताओं और संस्कृतियों के लोगों को आदर प्रदान करने के लिए तत्पर रहता है। इस प्रकार के नागरिकों के लिए बालकों को सांस्कृतिक प्रशिक्षण प्रदान करना आवश्यक है। सास्कृतिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए विद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रम के अतिरिक्त राज्य और समाज को अजायबघरों, चित्रशालाओं, सांस्कृतिक क्लबों आदि की स्थापना करनी चाहिए। इसके साथ ही समुदाय के साधनो का उपयोग किया जाय जिससे वे अपनी सामुदायिक संस्कृति के विषय में व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर सकें। इस प्रशिक्षण से बालकों को सवेगात्मक रूप से सन्तुलित बनाने में भी सहायता मिलेगी।

नागरिकता व शैक्षिक कार्यक्रम
Citizenship & Educational Programme

नागरिकता का विकास और विस्तार करने के लिए विद्यालयो के शैक्षिक कार्यक्रम में रूपान्तर करना अनिवार्य है। इस सम्बन्ध में कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव अग्रलिखित है :—

1. उपयुक्त विद्यालय-वातावरण : Suitable School Environment—उत्तम नागरिकता के विकास के लिए विद्यालय के वातावरण को उपयुक्त बनाना परमावश्यक है। यदि विद्यालय मे अच्छे परिवारों से बालक आते है तो विद्यालय के वातावरण को ऐसा बनाया जाय जिससे वह अभिभावकों के प्रयासों को और अधिक दृढ एवं समृद्ध बना सके। अतः यह बालको मे प्रभावशाली ढंग से नागरिक एवं वैयक्तिक सद्‌गुणों का विकास कर सके। यदि बालक उपेक्षित परिवार से आये है तो विद्यालय के वातावरण द्वारा उनकी कमियो की पूर्ति एवं उनके उचित नागरिक आचरण के विकास के लिए सुअवसर प्रदान किये जायँ।

2. सम्पूर्ण शिक्षक-वर्ग को उत्तरदायी बनाना : Making the Entire Staff Responsible—नागरिकता के विकास के लिए केवल सामाजिक अध्ययन और नागरिक शास्त्र के शिक्षक ही उत्तरदायी नही हैं। परन्तु इसके विकास के लिए सभी विषयों के शिक्षकों पर दायित्व डाला जाय। इस सम्बन्ध मे विवलेन ने लिखा है :—"उत्तम नागरिकता का विकास सभी शिक्षकों तथा सम्पूर्ण विद्यालय का दायित्व है। प्रत्येक शिक्षक छात्रों के समूह के अनुभवों को निर्देशित करता है। अतः प्रत्येक शिक्षक उत्तम आचरण, आत्मानुशासन, आत्म-निर्भरता तथा आत्म-निर्देशन के विकास से सम्बन्धित है।"

"Developing good citizenship is the responsibility of all teachers and of the school as a whole. Every classroom teacher directs the experience of a group of pupils; hence, every teacher is concerned with good conduct, with the development of self-discipline, self-dependence, and self-direction."—**I. J. Quillen.**

3. **पाठ्यक्रम : Curriculum**—नागरिकता के विकास के लिए पाठ्यक्रम में निम्नलिखित विषयों एवं बातों का समावेश किया जाना चाहिए :—

(अ) **सामाजिक अध्ययन : Social Studies**—नागरिकता के विकास में सामाजिक अध्ययन की विषय-वस्तु का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके द्वारा आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक विश्व को समझने के लिए पर्याप्त मात्रा में अनुभव प्रदान किये जाते है। साथ ही यह छात्रों को मानवीय सम्बन्धों को समझने तथा उत्तम नागरिकता के लिए व्यावहारिक अनुभव प्रदान करता है।

(ब) **नागरिकशास्त्र : Civics**—नागरिकशास्त्र का अध्ययन विवेकी (Intelligent) या बुद्धिमत्तापूर्ण नागरिकता के लिए छात्रों मे सूझबूझ विकसित करता है। इसके शिक्षण से छात्रों में स्पष्ट चिन्तन, वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा स्वतन्त्र निर्णय करने के कौशलो (Skills) का विकास किया जा सकता है। ये कौशल उत्तम नागरिकता के आधार हैं।

(स) **अन्य तथ्य : Other Facts**—अन्य विषयों की पाठ्य-सामग्री भी बालकों मे उत्तम नागरिकता के विकास के लिए उपयोगी है। अतः सभी विषयों के शिक्षण में उनकी सामग्री के सामाजिक मूल्यों पर बल दिया जाय। इस सम्बन्ध में क्विलेन ने लिखा है :—**"साहित्य, कला, संगीत, विज्ञान तथा अन्य बहुत-से क्षेत्रों की पाठ्य-वस्तु समझदारी, आदर्शों तथा कौशलों के विकास में योग दे सकती है, जो उत्तम नागरिकता के मूलाधार हैं।"**

"Content of literature, art, music, science and many other areas can contribute to the understanding, ideals, and skills which are basic to good citizenship."—**I. J. Quillen.**

(द) **समस्यात्मक पाठ्य-विषय : Problem Course**—समस्यात्मक पाठ्य-विषय छात्रों को समाज की प्रमुख समस्याओं के अध्ययन के लिए अवसर प्रदान करता है। ये समस्याएँ स्वय छात्र से, स्थानीय, राज्यीय तथा राष्ट्रीय सरकारों से सम्बन्धित होनी चाहिए। उदाहरणार्थ—हम अपने ग्राम के उत्तम नागरिक किस प्रकार बन सकते है ? हम अपने राष्ट्र के योग्य नागरिक किस प्रकार बन सकते हैं ? जनमत सरकार को किस प्रकार प्रभावित करता है ? क्या नागरिक अपनी सरकार के कार्यों मे रुचि नही लेते है ? हम अपने नागरिकों को किस प्रकार अधिक शिक्षा प्रदान कर सकते है ? आदि।

4. अन्य सुझाव : Other Suggestions—(1) रेडियो, समाचार-पत्र सिनेमा, भाषण आदि अनौपचारिक साधनों का प्रयोग किया जाय।

(2) विद्यालय तथा छात्रावास में संसृष्ट जीवन (Corporate Life) की व्यवस्था की जाय।

(3) छात्र-संघ का निर्माण किया जाय और उसे अनुशासन, खेल-कूदों का संगठन, विद्यालय सम्पत्ति की सुरक्षा, विद्यालय कैन्टीन एवं भण्डार का संचालन सांस्कृतिक कार्यक्रमों का संगठन एवं संचालन तथा विद्यालय हैण्डबुक के निर्माण से सम्बन्धित अधिकार एवं दायित्व प्रदान किये जायँ।

(4) विभिन्न विषयों से सम्बन्धित समुदायों का संगठन किया जाय।

(5) नागरिकता के कार्यान्वियन से सम्बन्धित सामुदायिक सर्वेक्षण कराये जायँ जिससे छात्र प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त कर सकें।

(6) वाद-विवाद प्रतियोगिताएँ, संगीत एवं नाटक सम्बन्धी विभिन्न क्रियाओं को संगठित किया जाय।

(7) स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं—नगरपालिका, ग्राम-पंचायत, अन्तरिम जिला-परिषद्—की कार्यवाही का निरीक्षण कराया जाय।

(8) समाज-सेवा कार्यों में सक्रिय भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाय।

(9) विद्यालय की सफाई तथा कक्षा-कक्षों की सजावट का दायित्व छात्रों पर डाला जाय।

(10) राष्ट्रीय पर्वों एवं दिवसों को नियमानुसार मनाया जाय।

उपसंहार

भारत की आर्थिक प्रगति, सामाजिक सुदृढ़ता तथा राष्ट्रीय एकीकरण के लिए उत्तम नागरिकों का होना परमावश्यक है। साथ ही, आधुनिक युग में इस बात का भी अनुभव किया जाने लगा है कि विश्व में चिर-शान्ति स्थापित रखने के लिए भी उत्तम नागरिकों का होना अनिवार्य है। अतः उत्तम नागरिकों के निर्माण के लिए नागरिकता की शिक्षा की व्यवस्था करना प्रत्येक राज्य का परम कर्त्तव्य है। इसके अतिरिक्त, स्वयं राज्य का भविष्य उसके नागरिकों पर निर्भर है। यदि राज्य अपनी प्रगति एवं विकास चाहता है, तो उसे अपने प्रत्येक नागरिक को उसके कर्त्तव्यों उत्तर-दायित्वों तथा अधिकारों से अवगत कराना होगा। अतः नागरिकता की शिक्षा की सुन्दरतम् व्यवस्था करना—प्रत्येक राज्य का कर्त्तव्य है। राज्य के लिए इस शिक्षा की एक अन्य उपयोगिता बताते हुए, प्लेटो ने लिखा है :—**"राज्य की स्थायी स्थिरता का एकमात्र वास्तविक उपाय—नागरिकता की शिक्षा है। विधान द्वारा नागरिकों को समाज की व्यवस्था के अनुकूल बनाने की आशा सदैव निरर्थक रहेगी।"**

"Education for citizenship is the only true way to the permanent stability of the state. The hope of moulding the citizens to

the community by legislation must always be futile."—Plato. Quoted by Nettleship : *Lectures on the Republic of Plato*, p. 76.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What do you understand by education for citizenship ? Discuss its need and utility in India.

नागरिकता की शिक्षा से आप क्या समझते है ? भारत में इसकी आवश्यकता और उपयोगिता का विवेचन कीजिये ।

2. Explain the meaning of education for citizenship, and describe its chief features.

नागरिकता की शिक्षा का अर्थ स्पष्ट कीजिए और इसकी प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए ।

3. Give an outline of a programme of education for citizenship. What aspects of this education will you include in this programme to make it effective ?

नागरिकता की शिक्षा के कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए । आप इस कार्यक्रम को प्रभावशाली बनाने के लिए इस शिक्षा के कौन-से अंगो को कार्यक्रम में सम्मिलित करेंगे ?

18

लोकतन्त्र व शिक्षा
DEMOCRACY & EDUCATION

"लोकतन्त्र में शिक्षा का उचित आदर्श रचनात्मक आदर्श है। यह नये प्रकार के ऐसे मनुष्यों का निर्माण करने का प्रयास करता है, जो गणतन्त्र और मानव-जाति के लिए अधिक ही अधिक उपयोगी सिद्ध हों।"

"The right ideal of education in a democracy is the creative ideal. It seeks to create new kinds of men, who shall be of ever increasing worth to the republic and to mankind."

—Hanry Van Dyke.

विषय-प्रवेश

आधुनिक युग—प्रजातन्त्र का युग है। प्रजातन्त्र को सब शासनों मे उच्चतम स्थान दिया गया है। प्राचीन यूनानी भी सब शासनो से इसे श्रेष्ठ मानते थे। शासन के रूप में प्रजातन्त्र का भविष्य बहुत उज्जवल है। ऐसी सम्भावना है और आशा भी की जाती है कि धीरे-धीरे प्रजातन्त्र संसार के कोने-कोने में फैल जायगा। शासन के रूप में प्रजातन्त्र में जनता ही शासक होती है।

'प्रजातन्त्र' एक प्रकार का सामाजिक संगठन भी है। यदि राज्य में प्रजातान्त्रिक सामाजिक सगठन नही है, तो हम उसको वास्तविक रूप में प्रजातन्त्र का नाम नही दे सकते हैं। समाज की रचना लोकतान्त्रिक आधार पर तभी हो सकती है, जब उसमें समानता और बन्धुत्व की भावनाओं का समावेश हो। मुस्लिम समाज प्रजातान्त्रिक है, क्योंकि उसमें ऊँच-नीच का भेदभाव नही है और सब के साथ समानता का व्यवहार होता है। हिन्दुओं में प्रजातन्त्र की भावना नही है, क्योंकि हिन्दू समाज में

जातियों के बन्धन बहुत कठोर है और जातियाँ अपने को समान न समझ कर, ऊँचा और नीचा समझती है।

शासन का भेद और सामाजिक संगठन होने के साथ-साथ, प्रजातन्त्र, मस्तिष्क की एक प्रवृत्ति भी है। इसमे एक नैतिक आदर्श होता है। इसके अनुसार मनुष्य का अस्तित्व स्वयं के लिए है, न कि दूसरो को सुख और आनन्द पहुँचाने के लिए। उदाहरणार्थ—इङ्गलैण्ड का निर्धन मनुष्य भी अपने जीवन को धनी से धनी मनुष्य के समान व्यतीत कर सकता है। इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य के रूप में निर्धन व्यक्ति का वही मूल्य है, जो धनी व्यक्ति का है। मनुष्य के रूप में निर्धन, धनी से निम्न नही है। इसलिए, दोनों के द्वारा समानता का प्रयोग किया जाना आवश्यक है। मस्तिष्क की प्रवृत्ति के रूप मे प्रजातन्त्र साधारण मनुष्य मे अपना विश्वास व्यक्त करता है। इसका आशय है कि सब मनुष्यों मे गुणों का समावेश है और वे उनसे रहित नही है।

लोकतन्त्र का अर्थ
Meaning of Democracy

लोकतन्त्र की विभिन्न रूपों में व्याख्या की गई है। मुख्यतः इसको सरकार के भेद तथा जीवन-यापन की प्रणाली के रूप में लिया जाता है। आगे हम लोकतन्त्र के प्रमुख रूपों में उसके अर्थ की व्याख्या प्रस्तुत कर रहे है :—

(अ) सरकार के भेद के रूप में : As a Form of Government

1. राजनैतिक दृष्टि से लोकतन्त्र के अर्थ को स्पष्ट करते हुए डायसी ने लिखा है :—**"लोकतन्त्र, सरकार का वह रूप है, जिसमे प्रशासकीय वर्ग सम्पूर्ण राष्ट्र का बहुत बड़ा भाग होता है।**

"Democracy is a form of government in which governing body is comparatively a large fraction of the entire nation."

—**Dicey.**

2. अब्राहम लिंकन के शब्दों में :—**"प्रजातन्त्र वह सरकार है जो जनता की, जनता द्वारा तथा जनता के लिए है।"**

"Democracy is the government of the people, by the people *and for the people.*"—**Abraham Lincoln.**

3. लोकतन्त्र को इस प्रकार भी परिभाषित किया जा सकता है :—**"लोकतन्त्र की स्थापना उस समय होती है जब उसके सब वयस्क पुरुष एवं स्त्री राज्य के कार्यों में भाग लेते है, उसके समस्त प्रश्नों पर विचार करते है और वोट देकर उनका निर्णय करते हैं। इस प्रकार वे अब्राहम लिंकन के आदर्श—जनता की जनता के द्वारा तथा जनता के लिए सरकार, को प्राप्त करते हैं।**

'Democracy is established when all its adult men *and women*

participate in the affairs of the state, determine and decide all questions and projects by their votes and thus realize Abraham Lincoln's ideal of 'government of the people, by the people, for the people'."

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि लोकतन्त्र का आधार—जनता की सामान्य इच्छा है, न कि बल। इसीलिए इसको व्यक्ति के गुणों के विकास के लिए सर्वोत्तम सरकार माना गया है।

(ब) सामाजिक संगठन के रूप में : As a Social Organization.

सामाजिक दृष्टिकोण से लोकतन्त्र का अर्थ—उस व्यवस्था से है जिसमें धर्म, जाति, लिंग-भेद आदि पर ध्यान दिये बिना प्रत्येक व्यक्ति को समाज में अपनी उन्नति करने के लिए समान अवसर प्रदान किए जाएँ। इस प्रकार की व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता एवं क्षमता के अनुसार स्वय तथा समाज—दोनों का विकास एवं उन्नति करने का अधिकारी होता है।

1. डा० विश्वनाथ प्रसाद वर्मा ने लिखा है :—**"लोकतन्त्र, सामूहिक रूप से राजनैतिक तथा सामाजिक प्रगति की एक प्रक्रिया है।"**

"Democracy is a process of collective political and social advancement."—**Dr. Vishwanath Prasad Verma.**

2. भाटिया के शब्दों में :—**"सामाजिक लोकतन्त्र—वर्ग, जन्म या सम्पत्ति पर आधारित समस्त भेदों का अभाव है।"**

"Social democracy connotes absence of all distinctions based on class, birth or possession of wealth."—**B. D. Bhatia.**

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि लोकतन्त्र सामाजिक क्षेत्र में उस व्यवस्था की ओर संकेत है, जिसमें बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक व्यक्ति को अपने विकास के लिए समान अवसर प्राप्त हों।

3. जीवन-यापन की प्रणाली के रूप में : As a Way of Life

वस्तुतः लोकतन्त्र जीवन-यापन की एक प्रणाली है, जिसमें समाज के प्रत्येक सदस्य को अपनी समस्त शक्तियों को विकसित करने के लिए स्वतन्त्रता तथा जीवन-यापन करने के हेतु समान अवसर प्राप्त होते हैं। इस दृष्टिकोण को प्रतिपादित करते हुए बॉयड बोड ने लिखा है :—**"लोकतन्त्र जीवन-यापन का एक ढंग है और जीवन-यापन के ढंग का अर्थ है—जीवन के प्रत्येक प्रमुख क्षेत्र को प्रभावित करना।"**

"Democracy is a way of life, and way of life means a determining influence in every major area of life."—**Byod Bode.**

लोकतन्त्र के विभिन्न अर्थों को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा के अभाव

में इस सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्था की सफलता असम्भव है।

लोकतन्त्र के लिए शिक्षा की आवश्यकता
Need of Education for Democracy

लोकतन्त्र की सफलता के लिए सबसे आवश्यक बातें शिक्षा और उच्च कोटि की राजनैतिक चेतना है। यदि लोगों को राज्य के कार्यों में रुचि नहीं है, और यदि वे समाज की समस्याओं को नहीं समझते हैं, तो लोकतन्त्र केवल नाम के लिए होता है। लोकतन्त्र में जितने भी दोष बताये जाते हैं, उन सबका प्रमुख कारण—शिक्षा का अभाव है। शिक्षा ही लोकतन्त्र के नागरिकों को जागरूक बनाती है और राज्य के कार्यों में उनकी रुचि उत्पन्न करती है। अतः लोकतन्त्र में शिक्षा की आवश्यकता के लिए जितना ही कहा जाय, थोड़ा है।

लोकतन्त्र का आदर्श है कि व्यक्ति और समाज—एक-दूसरे की सहायता से पूर्णता को प्राप्त हों। लोकतन्त्र न तो समाज द्वारा व्यक्ति के शोषण; और न व्यक्ति द्वारा समाज के हितों की अवहेलना की आज्ञा देता है। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते है कि लोकतन्त्र का कार्य समाज को इस प्रकार संगठित करना है जिससे व्यक्ति अपने साथियों और समाज के लिए हितप्रद कार्यों के द्वारा अपने व्यक्तित्व का विकास कर सके। अतः लोकतन्त्र मे शिक्षा की उपेक्षा नहीं की जा सकती है, क्योंकि शिक्षा ही व्यक्ति में—ज्ञान, रुचियों, आदर्शों और शक्तियों का विकास करती है। इनके विकास से ही व्यक्ति लोकतन्त्र में अपना स्थान प्राप्त करता है और उस स्थान का प्रयोग अपने को और अपने समाज को उच्च आदर्शों की ओर ले जाने के लिए करता है।

लोकतन्त्र के लिए शिक्षा की आवश्यकता बताते हुए जे० डब्ल्यू० एच० हैदरिंगटन ने लिखा है :—"लोकतन्त्रीय सरकार की माँग—शिक्षित जनता है।"

"Democratic government demands an educated people."

—**J. W. H. Hetherington.**

ड्यूवी ने लोकतन्त्र के लिए शिक्षा की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है :—"लोकतन्त्र में इस प्रकार की शिक्षा होनी चाहिए, जिससे व्यक्तियों को सामाजिक सम्बन्ध और नियन्त्रण में व्यक्तिगत रुचि उत्पन्न हो; और उनमें ऐसी मानसिक आदतों का निर्माण हो, जिनसे अव्यवस्था उत्पन्न हुए बिना सामाजिक परिवर्तन का होना सम्भव हो।"

"A democracy must have a type of education which gives individuals a personal interest in social relationship and control, and habits of mind which secure social changes without introducing disorder."—**John Dewey.**

लोकतन्त्रीय शिक्षा के उद्देश्य
Aims of Democratic Education

ड्यूवी ने लिखा है :—"लोकतन्त्र केवल सरकार का रूप न होकर, उससे भी कुछ अधिक है। यह मुख्यतः सहयोगी जीवन और सम्मिलित रूप से किये गये अनुभव की विधि है।"

"A democracy is more than a form of government; it is primarily a mode of associated *living*, of conjoint communicated experience."—**John Dewey.**

ड्यूवी ने जिस विधि के बारे में लिखा है, उसके अनुसार लोगों को तैयार करना शिक्षा का कार्य है। अतः यह प्रश्न उठता है कि—'लोकतन्त्र में लोगों को किस प्रकार की शिक्षा दी जाय ?' इसका उत्तर यह है कि यदि इस शिक्षा में हमारे प्रयास सफल हैं, तो बालक योग्य नागरिक बनेगा। वह अपने कार्यों को इस प्रकार करेगा, जिससे उसका और दूसरों का हित होगा। वह ऐसे कार्यों को करने पर बल देगा, जिनसे विश्व-कल्याण को योग मिलेगा। उसमें 'सह-जीवन और सह-अस्तित्व' Co-operative Life & Co-existence) की भावना का विकास होगा। इस प्रकार के व्यक्ति का निर्माण करने के लिए लोकतन्त्रीय शिक्षा के कुछ उद्देश्य होने आवश्यक है। ये उद्देश्य दो प्रकार के है :—

(क) सामान्य उद्देश्य (General Aims)

(ख) अनिवार्य उद्देश्य (Fundamental Aims)

(क) लोकतन्त्रीय शिक्षा के सामान्य उद्देश्य
General Aims of Democratic Education

लोकतन्त्रीय शिक्षा के सामान्य उद्देश्य निम्नलिखित है :—

1. प्रेम और सहयोग के आधार पर परिवार और समाज की उपयुक्त सदस्यता का विकास।
2. व्यावसायिक कुशलता (Professional Efficiency) और व्यावसायिक नैतिकता (Professional Ethics) का विकास।
3. अवकाश (Leisure) प्राप्त करने की क्षमता, और उसे मनोरंजन तथा आत्म-उन्नति के लिए लाभप्रद ढंग से प्रयोग करने का प्रशिक्षण।
4. शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की उन्नति।
5. मस्तिष्क और बुद्धि का प्रशिक्षण।
6. चरित्र और अनुशासन का विकास।
7. विभिन्न क्षेत्रों में नेतृत्व का प्रशिक्षण।

(ख) लोकतन्त्रीय शिक्षा के अनिवार्य उद्देश्य
Fundamental Aims of Democratic Education

लोकतन्त्रीय शिक्षा के अनिवार्य उद्देश्य निम्नलिखित होने चाहिए :—

1. समविकसित व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों का विकास : Development of Individuals with Harmonious Personality—आज का संसार संघर्षों और कटुताओं से भरा हुआ है। ये दोनों—लोकतन्त्र और मानव के लिए संकट का कारण बन गए हैं। अतः शिक्षा को सामजस्यपूर्ण व्यक्तित्व वाले व्यक्तियो का विकास करना चाहिए। हुमायूँ कबीर के अनुसार :—**"शिक्षा को मानव-प्रकृति के सब पहलुओं के लिए सामग्री जुटानी चाहिए और मानव-शास्त्र, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी को समान महत्त्व देना चाहिए, जिससे कि वह मनुष्य को सब कार्यों को निष्पक्षता, कुशलता और उदारता से करने के योग्य बना सके।"**

"Education should cater to all aspects of man's nature and give eqaal importance to the humanities, the sciences, and technology, so that it can fit a man to perform justly, skilfully, and magnanimously all the offices."— **Humayun Kabir.**

2. व्यक्ति की आर्थिक सम्पन्नता : Economic Well-Being of the Individual—लोकतन्त्र की सफलता, व्यक्तियो की आर्थिक सम्पन्नता पर निर्भर है। कारण यह है कि आर्थिक सम्पन्नता न होने पर वे अपने कार्य मे विमुख हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, वे धन-सम्पन्न व्यक्तियो के इशारे पर अपने वोट किसी को भी दे सकते है। अतः लोकतन्त्र मे शिक्षा का यह उद्देश्य होना चाहिए कि वह लोगों को किसी व्यवसाय के लिए तैयार करके उनको धन-सम्पन्न बनाए।

2. व्यक्ति की रुचियों का विकास : Development of Individual's Interests—लोकतन्त्र में शिक्षा को व्यक्ति की रुचियो के विकास के लिए कार्य करना चाहिए। हरबार्ट (Herbart) ने बहुमुखी रुचियों के विकास पर बल दिया है। बालक में जितनी ही अधिक उपयुक्त और श्रेष्ठ रुचियाँ होंगी, उसे उतने ही अधिक अवसर शिक्षा-काल में और उसके बाद—सुखी, कुशल और सन्तुलित जीवन व्यतीत करने के लिए मिलेगे।

4. अच्छी आदतों का निर्माण : Formation of Good Habits—लोकतन्त्रीय समाज के नागरिक में अच्छी आदतो का निर्माण किया जाना आवश्यक है, क्योंकि आदतें ही गरीबी या अमीरी, परिश्रम या आलस्य, अच्छे या बुरे कार्यों की नीव डालती है। अतः बालकों को आरम्भ मे अच्छी आदतें सिखायी जानी चाहिए, जिससे कि उनका और उनके समाज का भावी जीवन सुखी हो सके।

5. सामाजिक दृष्टिकोण का विकास : Development of Social Outlook—लोकतन्त्र में शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है—व्यक्ति मे सामाजिक

दृष्टिकोण का विकास करना। इस उद्देश्य मे सामाजिक समझदारी, सामाजिक रुचियाँ सामाजिक प्राणी बनने की भावना, सहयोग और सामाजिक तथा आर्थिक प्रश्नों का निर्णय करने की योग्यता आती है। इस प्रकार इस उद्देश्य में सामाजिक भावना और सामाजिक क्षमता की भावना सम्मिलित है।

6. **कुशलता की प्राप्ति : Achievement of Efficiency**—प्रजातन्त्र के लिए शिक्षा देने के समय कुशलता की प्राप्ति को ध्येय बनाया जाना चाहिए। कुशलता के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इलियट (Eliot) ने लिखा है :—"कुशलता से मेरा अभिप्राय है—स्वस्थ और सक्रिय जीवन में कार्य तथा सेवा की सार्थक शक्ति। इस शक्ति से प्रशिक्षण और विकास के लिए हर एक व्यक्ति को शिक्षा दी जानी चाहिए।"

7. **नागरिकता का प्रशिक्षण : Training for Citizenship**—लोकतन्त्र में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—लोगों को नागरिकता का प्रशिक्षण देना है। इस प्रशिक्षण का आदर्श हमको अग्रलिखित शपथ में मिलता है, जो प्राचीन यूनान में व्यक्तियों को नागरिकता प्राप्त करते समय लेनी पड़ती थी—"हम अपने इस नगर को बेईमानी या कायरता के किसी कार्य से या अपने दुखी साथियों को अकेला छोड़कर कलंकित नहीं करेंगे। हम नागरिकता के आदर्शों और सामाजिक वस्तुओं के लिए अकेले और मिलकर युद्ध करेंगे। हम नगर के क़ानूनों का पालन करेंगे। हम जनता में नागरिकता की भावना को प्रबल बनाने के लिए सर्वव प्रयत्न करेंगे। हम इस नगर को अधिक बड़ा, अधिक अच्छा और अधिक सुन्दर बनाकर भावी पीढ़ी को सौंपेंगे।"

8. **उच्च लक्ष्यों के लिए व्यक्ति व समाज का निर्माण : Shaping the Individual & Society towards Nobler Ends**—लोकतन्त्र में शिक्षा के इस उद्देश्य के महत्त्व को अमरीकी शिक्षा के 35वें बुलेटिन मे इस प्रकार व्यक्त किया गया है :—"लोकतन्त्र में शिक्षा को प्रत्येक व्यक्ति में ज्ञान, रुचियों, आदर्शों, आदतों और शक्तियों का विकास करना चाहिए, जिससे वह अपना उचित स्थान प्राप्त करे और उस स्थान का प्रयोग स्वयं और समाज—दोनों को उच्च लक्ष्यों की ओर ले जाने के लिए करे।"

"Education in a democracy should develop in each individual the knowledge, interests, ideals, habits and powers whereby he will find his place and use that place to shape both himself and society towards nobler ends."—**American Education Bulletin.**

लोकतन्त्र व पाठ्यक्रम
Democracy & Curriculum

पाठ्यक्रम में उन विषयों एवं क्रियाओं को स्थान दिया जाय जो लोकतन्त्रीय

आदर्शों एवं मूल्यों को प्राप्त करने में सहायता दें। लोकतांत्रिक शिक्षा के पाठ्यक्रम को निर्धारित करते समय हमें अधोलिखित सिद्धान्तों पर ध्यान देना आवश्यक है :—

(अ) लचीलेपन का सिद्धान्त।

(ब) सामाजिक आवश्यकताओं एवं आदर्शों की पूर्ति का सिद्धान्त।

(स) व्यक्ति की अभिरुचियों, योग्यताओं, क्षमताओं तथा आवश्यकताओं की सन्तुष्टि का सिद्धान्त।

(द) व्यावहारिकता का सिद्धान्त।

उपर्युक्त सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर लोकतन्त्रीय शिक्षा के पाठ्यक्रम में उन विषयों एवं क्रियाओं को स्थान दिया जाय, जिससे व्यक्ति अपने वैयक्तिक भेदों के अनुसार विषयों एवं क्रियाओं का चयन कर सके तथा वह अपना सर्वोत्तम विकास कर सके।

लोकतन्त्र व शिक्षण-विधि
Democracy & Method of Teaching

लोकतन्त्र की भावना का विकास शिक्षण-विधियों पर ही आधारित है। अतः लोकतान्त्रिक उद्देश्यों की प्राप्ति तथा जनतन्त्रीय भावना के विकास के हेतु क्रियाशील विधियों को अपनाना बहुत लाभप्रद है। इसमें परम्परागत, स्थिर एवं रूढ़िवादी पद्धति का प्रयोग अनुपयुक्त है। क्योंकि लोकतन्त्र मानव व्यक्तित्व को अनन्त मूल्य का स्वीकार करता है तथा इस बात मे आस्था रखता है कि मनुष्य स्वयं अपने कार्य-भार को स्वयं सम्हाल सकता है। अतः मनुष्य के इस गुण का उपयोग सक्रिय विधियों द्वारा किया जा सकता है; अर्थात् वह विभिन्न क्रियाओं मे सक्रिय भाग लेकर विभिन्न विषयों का ज्ञान तथा विभिन्न कुशलताओं, आदतों एवं दृष्टिकोणों का विकास कर सकता है। अतः लोकतन्त्रीय शिक्षा में क्रियात्मक विधियों—वाद-विवाद विधि, समाजीकृत अभिव्यक्ति (Socialized Recitation), समस्या विधि, अभिनयात्मक विधि, योजना-विधि, कार्य-निर्धारण पद्धति आदि का प्रयोग किया जाय।

लोकतन्त्र व विद्यालय
Democracy & School

आधुनिक समाज विभिन्न समाजों का एक समाज तथा विभिन्न समुदायों का एक समुदाय है। औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप उत्पादकों, श्रमिकों तथा उपभोक्ताओं के बहुत-से समुदाय निर्मित हो गए हैं। अब समाज मे विभिन्न समुदायों का एक जाल-सा बिछा हुआ है; उदाहरणार्थ—परिवार, चर्च, स्कूल, यूनीवर्सिटी, ट्रेड-यूनियन आदि। ये समस्त समुदाय, मनुष्य के व्यक्तित्व को सामाजिक एकता एवं संगठन तथा प्रबन्ध करने की योग्यता प्रदान करते हैं। अतः यह विश्वास किया जाता है कि यदि लोकतन्त्र को जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सफल बनाना है तो विभिन्न

समुदायों के प्रशासकीय, सामाजिक आदि मामलों में लोकतन्त्रीय भावना तथा व्यवहार को प्रयोग में लाया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, कह सकते हैं कि इन समुदायों के संगठन एवं प्रशासन में लोकतन्त्रीय आदर्शों को क्रियान्वित किया जाय।

विद्यालय समाज द्वारा स्थापित किए जाते हैं। यदि हमारा समाज लोकतन्त्रीय सिद्धान्तों पर आधारित है, तो उसकी सफलता के हेतु हमें अपने विद्यालयों का संगठन एवं प्रशासन लोकतन्त्रीय सिद्धान्तों के अनुसार करना पड़ेगा। यदि हम ऐसा नहीं करेंगे तो समाज में लोकतन्त्रीय आदर्शों, मूल्यों एवं सिद्धान्तों को प्रसारित नहीं किया जा सकेगा। अतः लोकतंत्र में विद्यालयों में पूर्ण रूप से लोकतन्त्रीय वातावरण निर्मित किया जाना चाहिए। इस वातावरण में प्रेम, सहयोग, सहानुभूति, परोपकार आदि गुणों के ऊपर बल दिया जाय। इसके अतिरिक्त प्रशासक, शिक्षकों, छात्रों, सरकारी अफसरों आदि में पारस्परिक मैत्री होनी चाहिए। शिक्षकों को पाठ्य-क्रम के निर्धारण, पुस्तकों के चयन आदि में स्वतन्त्रता प्राप्त हो। विद्यालय-संगठन में छात्रों की सम्मति पर ध्यान दिया जाय। सरकारी अफ़सरों का व्यवहार मित्र, पथ-प्रदर्शक एवं एक दार्शनिक जैसा होना चाहिए। इस प्रकार, विद्यालय के अंग-अंग में लोकतन्त्रीय भावना का समावेश होना चाहिए, अर्थात् उस वातावरण में भ्रातृत्व, स्वतन्त्रता तथा समानता का महत्त्वपूर्ण स्थान होना चाहिए।

लोकतन्त्र व अनुशासन
Democracy & Discipline

लोकतन्त्र में स्वानुशासन (Self-Discipline) पर अत्यधिक बल दिया जाता है। इसमें दमनात्मक अनुशासन के लिए कोई स्थान नहीं है। स्वानुशासन के लिए स्वतन्त्रता का होना आवश्यक है। परन्तु स्वतन्त्रता का अर्थ 'स्वच्छन्दता' नहीं है। बालक विद्यालय की क्रियाओं द्वारा अपने आवेगों, प्रवृत्तियों आदि पर नियन्त्रण करना सीख जाता है। विद्यालय की क्रियाओं द्वारा बालकों में अपने कर्त्तव्यों को समझने एवं उनका निर्वाह करने तथा अपने अधिकारों का उपभोग और दूसरे अधिकारों का सम्मान करने की भावना आ जाती है। अतः छात्रों को विद्यालय रूपी लोकतन्त्रीय वातावरण द्वारा अनुशासित किया जाता है।

लोकतन्त्र व शिक्षक
Democracy & Teacher

लोकतन्त्रीय समाज के विद्यालयों में शिक्षक का स्थान एक मित्र, पथ-प्रदर्शक, समाज-सुधारक तथा नेता के रूप में होता है, जिससे वह अपने छात्रों तथा समाज का समुचित रूप से पथ-प्रदर्शन कर सके। शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह समाज में उचित परिवर्तन लाकर उसे प्रगति की ओर अग्रसर करे। इसके लिए उसमें तीन मुख्य गुणों की अपेक्षा की जाती है। पहला, वह एक योग्य नागरिक हो तथा लोक-

तन्त्रीय आदर्शों, मूल्यों एवं सिद्धान्तों में पूर्ण निष्ठा रखता हो। दूसरा, उसमें अपने छात्रों को समझने तथा उनको पथ-प्रदर्शित करने की क्षमता हो, जिससे वह उनको एक योग्य नागरिक बनाने में सफल हो सके। तीसरा, वह लोकतन्त्रीय आदर्शों के अनुसार प्रशिक्षित किया गया हो। अन्त में, कह सकते है कि वह ऐसे उच्च चरित्र का व्यक्ति होना चाहिए, जिससे वह समाज तथा छात्रों का सम्मान प्राप्त कर सके और अपने उदाहरण एवं सिद्धान्तों द्वारा उनका नेतृत्व करने में सफल हो सके।

उपसंहार

हमने ऊपर की पंक्तियों में लोकतन्त्र में शिक्षा की आवश्यकता, उसके 'सामान्य' तथा 'अनिवार्य' उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधियाँ, विद्यालय का स्वरूप, अनुशासन तथा शिक्षक के स्थान का विवेचन किया है। इन विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत जिन सिद्धान्तों का विवेचन किया गया है, उनको अपनाये बिना लोकतन्त्र की शिक्षा निरर्थक रहती है। कारण यह है कि इनकी सहायता से ऐसे नागरिकों का निर्माण हो सकता है, जो लोकतन्त्र को सफल बना सकते हैं। किलपैट्रिक (Kilpatrick) ने लोकतन्त्रीय भावना को सफल बनाने के लिए अग्रलिखित सिद्धान्तों पर बल दिया है :—

(अ) व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (Principle of Individual Freedom)

(ब) समानता का सिद्धान्त (Principle of Equality)

(स) अधिकारों व कर्त्तव्यों के सह-सम्बन्ध का सिद्धान्त (Prniciple of Correlation of Rights & Duties)

(द) समान हित के लिए सहयोगी प्रयास का सिद्धान्त (Principle of Co-operative Effort for the Common Good)

(य) बौद्धिक स्वतन्त्रता में विश्वास का सिद्धान्त (Principle of Faith in Rational Freedom)

(र) विचार-विमर्श या वाद-विवाद की स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (*Principle* of Freedom of Discussion)

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What should be the aims of education in a democratic society ? *Discuss any one of them in detail.*

लोकतन्त्रीय समाज में शिक्षा के क्या उद्देश्य होने चाहिए ? उनमें से किसी एक की सविस्तार विवेचना कीजिए।

2. How can our education help us in making India a really

democratic country ? What concrete steps should a school take to achieve it ?

शिक्षा द्वारा हम अपने देश को वास्तविक रूप में लोकतन्त्रीय किस प्रकार बना सकते है ? विद्यालय में इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए क्या ठोस कदम उठाने चाहिए ?

3. What do you understand by the democratic conception of education ? Discuss briefly the views about curriculum, methods and discipline of the democratic education.

शिक्षा की लोकतन्त्रीय धारणा से आप क्या समझते है ? लोकतन्त्रीय शिक्षा के पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधियो तथा अनुशासन की सक्षेप में विवेचना कीजिए ।

4. Write short notes on the 'Need of Education for Democracy'.

'लोकतन्त्र के लिए शिक्षा की आवश्यकता' पर सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ।

19

स्वतन्त्रता व अनुशासन
FREEDOM & DISCIPLINE

"अनुशासन बाह्य आरोपणों से आरम्भ होता है और आन्तरिक ऐच्छिक आत्म-नियंत्रण से समाप्त होता है।"

"Discipline begins by being externally imposed and ends by being internalized as voluntary self-control."—W Kenneth Richmond : *Readings in Education*, p. 119.

विषय-प्रवेश

अनुशासन प्रत्येक देश और प्रत्येक समाज के जीवन के लिए सबसे अमूल्य निधि है। जिस प्रकार देश और समाज के जीवन मे अनुशासन का मूल्य बहुत अधिक है, उसी प्रकार अनुशासन—व्यक्ति के जीवन के लिए भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। समाज के लिए बालक, विद्यालय मे तैयार किए जाते है। इसलिए, विद्यालय में भी अनुशासन का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। विद्यालय में बालक को शिक्षा दी जाती है, उसके जीवन को सुदृढ़ और सुन्दर बनाया जाता है। अतः उससे यह आशा की जाती है कि वह विद्यालय के नियमों का पालन करे और विद्यालय में उचित व्यवहार को अपनाए। उसके ऐसा न करने से विद्यालय का वह उद्देश्य निष्फल हो जाता है, जिसकी प्राप्ति के लिए समाज द्वारा विद्यालय की स्थापना की गई है। यहीं पर अनुशासन की आवश्यकता अनुभव की जाती है और विद्यालय में उसका महत्त्वपूर्ण स्थान माना जाता है।

विद्यालय मे जितना महत्त्वपूर्ण स्थान, अनुशासन का है, उतना ही स्वतन्त्रता का भी है, बालक को विचार, अध्ययन, निरीक्षण आदि की स्वतन्त्रता होनी चाहिए, ताकि उसका बौद्धिक विकास हो। उसे खेल-कूद और अन्य शारीरिक क्रियाओं की

स्वतन्त्रता होनी चाहिए, ताकि शिक्षक उनका अवलोकन करके, बालक के स्वभाव, आदतों, चारित्रिक विशेषताओं आदि से परिचित होकर उसको निर्देशन दे सके। स्वतन्त्रता के अभाव में जो क्षति होती है, उस पर प्रकाश डालते हुए, ब्राउडी ने लिखा है :—**"स्वतन्त्रता के अभाव में व्यक्ति की निर्माण करने की शक्ति और सम्भव कार्यों में साझेदारी सीमित हो जाती है। प्रत्येक व्यक्ति सम्भव कार्य का शक्तिशाली निर्माता है। उसकी शक्ति को सीमित करना, सम्भव कार्य को और स्वयं व्यक्ति को सीमित करना है।"**

"Without freedom there is a limitation of creating and sharing possibilities. Every person is a potential manufacturer of possibility; to restrict him is to limit possibility; it is to shrink human being."—**Harry S. Broudy** : *Building A Philosophy of Education*, p. 57.

अनुशासन का अर्थ
Meaning of Discipline

'Discipline" शब्द की उत्पत्ति 'Disciple' शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है—'छात्र', 'शिष्य', का 'शिक्षक का अनुगामी।' इस शब्द का प्रयोग साधारणतः दो अर्थों में किया जाता है—सकुचित एव व्यापक। 'अनुशासन' 'का सीमित अर्थ है—दण्ड एवं दमन के द्वारा बालक की इच्छा को शिक्षक की इच्छा के अनुकूल बनाना। आधुनिक समय में 'अनुशासन' का यह अर्थ एकदम त्याज्य ठहराया गया है और इसके व्यापक अर्थ को मान्यता प्रदान की गई है। इसके व्यापक अर्थ के अन्तर्गत बाह्य व्यवहार, आत्म-नियत्रण, उत्तरदायित्व की भावना, दूसरों के अधिकारो एव भावनाओं के प्रति सम्मान—सभी कुछ आ जाते है। हम 'अनुशासन' के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए दो परिभाषाएँ दे रहे हैं; यथा :—

1. टी० पी० नन :—**"अनुशासन का अर्थ है—अपनी भावनाओं और शक्तियों को नियन्त्रण के अधीन करना, जो अव्यवस्था को व्यवस्था प्रदान करता है।"**

"Discipline consists in the submission of one's impulses and *powers to regulation which imposes form upon chaos."*—**T. P. Nunn.**

2. "बोर्ड आफ़ ऐजूकेशन" :—**"अनुशासन वह साधन है, जिसके द्वारा बच्चों को व्यवस्था, उत्तम आचरण और उनमें निहित सर्वोत्तम गुणों की आदत को प्राप्त करने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है।"**

"Discipline is the means whereby children are trained in orderliness, good conduct, and the habit of getting the best out of themselves."—**Board of Education.**

स्वतन्त्रता व अनुशासन का सम्बन्ध
Relation between Freedom & Discipline

आधुनिक विचारधारा के अनुसार 'स्वतन्त्रता' और 'अनुशासन' का घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध उतना ही घनिष्ठ है, जितना कि 'आत्मा' और 'शरीर' का। जिस प्रकार आत्मा के बिना शरीर का, और शरीर के बिना आत्मा का अस्तित्व नही है, उसी प्रकार स्वतन्त्रता और अनुशासन का अस्तित्व एक-दूसरे के सहयोग पर निर्भर है। ऊपर से थोपा गया अनुशासन—सच्चा अनुशासन नहो है। सच्चा अनुशासन तो वही है, जो स्वतन्त्रता पर आधारित हो। स्वतन्त्रता से ग्रहण किया जाने वाला अनुशासन ही स्थायी होता है। मनुष्य जिस कार्य को अपने आप स्वीकार करता है, उसे वह अधिक प्रसन्नता से करता है।

आधुनिक शिक्षा-शास्त्री इस बात को स्वीकार करते है। इसलिए, वे दमनशीलता और दमन-प्रवृत्ति के घोर विरोधी है। उनका कहना है कि स्वतन्त्रता और अनुशासन एक-दूसरे के विरोधी नही हे। ये एक-दूसरे के पूरक है। ये दोनो साथ चलते है। स्वतन्त्रता और अनुशासन के अटूट सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए ह्वाइटहेड (Whitehead) ने लिखा है :—*"आदर्श सुनियोजित शिक्षा का उद्देश्य यह होना* **चाहिए कि अनुशासन स्वेच्छापूर्वक और स्वतन्त्र रूप से हो, और स्वतन्त्रता, अनुशासन रखने में अधिक सहायक हो। दोनों सिद्धान्त—स्वतन्त्रता और अनुशासन, एक-दूसरे के विरोधी नहीं है, वरन् इन दोनों का बालक के जीवन में ऐसा अनुकूलन होना चाहिए कि ये बालक के व्यक्तित्व के विकास मे इधर-उधर होने वाली स्वाभाविक प्रवृत्तियों के अनुसार हो।"**

अनुशासन के दार्शनिक सिद्धान्त
Philosophical Theories of Discipline

ऐडम्स (Adams) ने अपनी पुस्तक "Modern Development in Educational Practice" में दर्शन के विभिन्न सिद्धान्तो पर आधारित अधोलिखित तीन प्रकार के अनुशासन का उल्लेख किया है—

1. दमनात्मक अनुशासन : Repressionistic *Discipline*
2. प्रभावात्मक अनुशासन : Impressionistic Discipline
3. मुक्त्यात्मक अनुशासन : Emancipationistic Discipline

1. दमनात्मक अनुशासन : Repressionistic Discipline

(अ) दमनात्मक अनुशासन का अर्थ : **Meaning of Repressionistic Discipline**—शिक्षा-जगत् मे दमनात्मक अनुशासन की विचारधारा बहुत *पुरानी है।* इस विचारधारा पर स्वेच्छाचारी राजनैतिक विचारधारा की पूर्ण छाप है। जिस प्रकार प्राचीन काल में स्वेच्छाचारी शासक अपनी आज्ञाओ के पालन के लिए शक्ति का प्रयोग करते थे, उसी प्रकार शिक्षक अपने आदेशो के पालन के लिए दण्ड का

प्रयोग करता था। अध्यापक डण्डे के जोर से कक्षा में अनुशासन रखते थे। 18वीं शताब्दी में यूरोप के स्कूलों में यह विचार बहुत प्रबल था—"डण्डे को छुटकारा देते ही बालक बिगड़ जाता है।" ("Spare the rod and spoil the child.")

इस प्रकार, विद्यालय का वातावरण शक्ति और क्रूरता से पूर्ण था। अध्यापकों का विश्वास था कि बालक में अनेक बुराइयाँ होती हैं, और इन बुराइयों को केवल डण्डे से ही दूर किया जा सकता है। अतः विद्यालयों में शिक्षक, छात्रों को कठोर से कठोर शारीरिक दण्ड देते थे। वे विद्यार्थियों को भय दिखाकर या मार-पीटकर उनसे विभिन्न विषयों का अध्ययन कराते थे। बालकों को किसी प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं थी। वे बोल भी नहीं सकते थे। उनका कर्त्तव्य—केवल शिक्षक की आज्ञा का पालन करना था, चाहे वह अच्छी हो या बुरी।

(ब) दमनात्मक अनुशासन की आलोचना **Criticism of Repressionistic Discipline**—दमनात्मक अनुशासन के सिद्धान्त में तनिक भी सार नहीं है। यह सिद्धान्त बालक की मनोवृत्तियों, इच्छाओं और रुचियों का दमन करता है और शिक्षक को अनुचित बल-प्रयोग की स्वतन्त्रता देता है। अधिनायकतन्त्र (Dictatorship) में दमनात्मक अनुशासन का भले ही समर्थन किया जाय, पर प्रजातन्त्र में जहाँ सबके अधिकार समान हैं और जहाँ सबको स्वतन्त्रता प्राप्त है, इस प्रकार के अनुशासन का कोई स्थान नहीं है। शिक्षक और शिष्य का सम्बन्ध प्रेम और सहानुभूति पर आधारित होना चाहिए, न कि पाशविक शक्ति पर। इसी शक्ति का प्रयोग इङ्गलैंड के प्रसिद्ध विद्यालय 'विंचेस्टर स्कूल' (Winchester School) में किया जाता था। उस देश के प्रसिद्ध उपन्यासकार एन्थनी ट्रालोप, जिसने वहाँ शिक्षा पाई थी, लिखा है—"विद्यालय-अनुशासन को बनाये रखने के लिये मुझे यह बात अनुचित जान पड़ती है कि स्कूल में शारीरिक दंड छात्र के दैनिक जीवन का स्थायी अंग हो।"

"That thrashings should have been possible at a school as a continual part of one's daily life, seems to me to argue a very ill condition of school discipline."—**Anthony Trollope.**

2. प्रभावात्मक अनुशासन : Impressionistic Discipline

(अ) प्रभावात्मक अनुशासन का अर्थ : **Meaning of Impressionistic Discipline**—प्रभावात्मक अनुशासन पर आदर्शवादियों (Idealists) द्वारा विशेष रूप से बल दिया जाता है। उनका कहना है कि शिक्षक को अपने व्यक्तित्व के प्रभाव से बालकों में अनुशासन रखना चाहिए, न कि शारीरिक दण्ड से। शिक्षक अपनी योग्यता, चरित्र, आचरण, विचार और आदर्श के द्वारा उत्तम वातावरण का निर्माण करें। इस वातावरण में रहकर बालक स्वयं ही शिक्षक का अनुकरण करने लगेंगे।

परिणामस्वरूप वे अपने चरित्र को अध्यापक के चरित्र के समान आदर्श बनाने का प्रयास करेंगे। छात्र, शिक्षक के आदर्श चरित्र के सामने अपने-आप झुक

जायेंगे और अपने को अनुशासित बनायेंगे। इस प्रकार शिक्षक के व्यक्तित्व से प्रभावित होने के कारण बालकों मे अनुशासन की कोई समस्या उपस्थित नही होगी। यदि कभी हो भी जाय, तो शिक्षक प्रेम और सहानुभूति के माध्यम से बालक मे सुधार का प्रयास करे।

इस प्रकार के शिक्षकों में इङ्गलैण्ड के 'उपिंघम स्कूल' (Uppingham School) के हैडमास्टर **ऐडवर्ड थ्रिग** (Edward Thring) और 'रगबी स्कूल' (Rugby School) के हैडमास्टर **टॉमस ऐरनाल्ड** (Thomas Arnold) के नाम अब भी गर्व से लिये जाते है।

(ब) प्रभावात्मक अनुशासन की आलोचना : Criticism of Impressionistic Discipline—प्रभावात्मक अनुशासन को दमनात्मक अनुशासन से अच्छा अवश्य माना जा सकता है, पर ऐसी बात नही है कि यह बिल्कुल ही दोष रहित हो। हमने जिन दोषों का वर्णन ऊपर किया है, उनसे स्पष्ट हो जाता है कि प्रभावात्मक अनुशासन के सिद्धान्त को पूर्ण रूप से स्वीकार नही किया जा सकता है। इस अनुशासन का मुख्य आधार, आदर्श शिक्षक है, और शिक्षक का आदर्श होना असम्भव है, क्योंकि इस संसार में ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है, जिसे आदर्श और दोष-मुक्त मान लिया जाय।

ऐसी स्थिति मे प्रभावात्मक अनुशासन के सिद्धान्त को स्वीकार करने में बहुत आपत्ति है। जब आदर्श शिक्षक ही नही है, तब प्रभावात्मक अनुशासन की बात करना बुद्धिमानी नही जान पड़ती है।

3. मुक्त्यात्मक अनुशासन : Emancipationistic *Discipline*

(अ) मुक्त्यात्मक अनुशासन का अर्थ : Meaning of Emancipationistic Discipline—इस सिद्धान्त के प्रतिपादक आधुनिक मनोवैज्ञानिक है। वे दमनात्मक और प्रभावात्मक अनुशासन को स्वीकार नहीं करते हैं। उनका कहना है कि दमनात्मक अनुशासन बालक के स्वाभाविक विकास को रोक देता है और उसमें मानसिक ग्रन्थियाँ उत्पन्न कर देता है। उनके अनुसार, प्रभावात्मक अनुशासन बालको की विभिन्नताओं पर ध्यान न देकर, उन पर शिक्षक के व्यक्तित्व को थोपने का प्रयास करता है।

उनका कहना है कि बालकों को अपने विकास के लिए पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। तभी वे अपनी जन्मजात प्रवृत्तियों, रुचियों और भवनाओं के अनुसार कार्य कर सकेंगे, और अपने व्यक्तित्व का उचित रूप के निर्माण कर सकेंगे। मुक्त्यात्मक सिद्धान्त के समर्थको मे रूसो और स्पेंसर के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

(ब) मुक्त्यात्मक अनुशासन की आलोचना : Criticisism of Emancipationistic Disciplnie—इस सिद्धान्त में बालको की स्वतन्त्रता पर विशेष बल दिया गया है। यह सत्य है—कि बालको को स्वतन्त्रता अवश्य देनी चाहिए, पर यह

स्वतन्त्रता निश्चित सीमाओं के अन्दर होनी चाहिए। स्वतन्त्रता उनके व्यक्तित्व के विकास के लिये आवश्यक है, पर यदि स्वतन्त्रता निर्देशित नहीं है, तो यह विकास ग़लत दिशा में हो सकता है।

बालकों को स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए या नहीं, या कितनी मिलनी चाहिये ? यह प्रश्न अति विवादपूर्ण है। इस सम्बन्ध में अपने स्वयं के अनुभव के आधार पर मिसेज रेवर्ट (Mrs. Gwen Raverat) ने लिखा है :—"जैसे-जैसे हम किशोरावस्था की ओर बढ़े वैसे-वैसे हमारे ऊपर लगाये गये बंधन अधिक हो अधिक कष्टकारी होते गये, क्योंकि उन्होंने हमको स्वाभाविक रूप से उसी प्रकार बढ़ने से रोक दिया, जिस प्रकार चीनी लड़की के पैरों को बाँधकर बढ़ने से रोक दिया जाता है। मेरा स्वयं का सिद्धान्त यह है कि बच्चों के वार्तों या नैतिकता को मुक्त छोड़ देना चाहिये, बजाय इसके कि इनके बारे में अधिक सावधानी रखी जाय। पर यह ऐसी बात है, जिसके बारे में कभी भी ठीक विचार व्यक्त करना असम्भव है।"

अनुशासन के विभिन्न सिद्धान्तों का समन्वय
Synthesis of the Various Theories of Discipline

अनुशासन के तीन सिद्धान्त हैं—दमनात्मक, प्रभावात्मक और मुक्त्यात्मक। प्राचीन और मध्यकाल में शिक्षा-जगत् में केवल 'दमनात्मक सिद्धान्त' का बोलबाला था। आज के युग में इसकी ओर बहुत कम ध्यान दिया जा रहा है। फिर भी संसार के सभी देशों के विद्यालयों में दमनात्मक अनुशासन थोड़ी-बहुत मात्रा में अवश्य पाया जाता है। यह कहा जा सकता है कि किसी भी देश के किसी भी विद्यालय में अनुशासन के किसी एक सिद्धान्त का पूर्ण रूप से अनुकरण नहीं किया जाता है। जो अनुशासन दिखाई देता है, वह दमनात्मक, प्रभावात्मक और मुक्त्यात्मक सिद्धान्तों का समन्वित रूप है।

कहने का अभिप्राय यह है कि शिक्षक समय-समय पर आवश्यकता के अनुसार तीनों सिद्धान्तों का अनुसरण करता है। कभी वह शारीरिक दण्ड का भय दिखाकर छात्रों का दमन करता है। आवश्यकता पड़ने पर वह मार-पीट का सहारा लेता है। इसके साथ ही वह उत्तम विचारों और आदर्शों से छात्रों को प्रभावित करने का भी प्रयास करता है। इसके अतिरिक्त, वह मनोवैज्ञानिक विचारधारा को स्वीकार करके छात्रों को थोड़ी-बहुत स्वतन्त्रता देता है।

यदि हम तनिक गम्भीरतापूर्वक विचार करें, तो हमें इस निष्कर्ष पर पहुँचने में कठिनाई नहीं होगी कि दमनात्मक सिद्धान्त की अपेक्षा, दूसरे दोनों सिद्धान्त कहीं अच्छे हैं। इसका कारण यह है कि दमनात्मक अनुशासन बालक के स्वाभाविक विकास को रोक देता है और उसमें भावात्मक जटिलताएँ उत्पन्न कर देता है। इसका परिणाम यह होता है कि बालक अनुशासन में रहने की अपेक्षा, विद्रोही बन जाता है।

इसी प्रकार, मुक्त्यात्मक सिद्धान्त का भी पूर्ण रूप से अनुसरण नही किया जा सकता है, क्योंकि इससे बालक को इतनी स्वतन्त्रता मिल जाती है कि वह उसके लिए लाभदायक सिद्ध नही होती है। बालक की आयु थोड़ी होती है। उसका मानसिक और सामाजिक विकास उस आयु तक नहीं हो पाता है। ऐसी दशा में वह स्वतन्त्रता का अनुचित उपयोग कर सकता है। अतः यह आवश्यक है कि बालक को पूरी स्वतन्त्रता न दी जाकर, नियन्त्रित स्वतन्त्रता दी जाय।

अधिकाश शिक्षाविद् दमनात्मक और मुक्त्यात्मक अनुशासान के बजाय प्रभावात्मक अनुशासन को अधिक अच्छा मानते है। उनका कहना है कि छात्र अपने शिक्षक के विचारों और आदर्शो का अनुकरण करके विनम्र और चरित्रवान् बन जाता है। जब बालक पर अध्यापक के उत्तम चरित्र का प्रभाव पड़ता है, तब उसमें अनुशासन की भावना अपने-आप उत्पन्न हो जाती है। पर इस सिद्धान्त को भी पूर्ण रूप में स्वीकार नही किया जा सकता है। कारण यह है कि शिक्षक के व्यक्तित्व से बिल्कुल अलग प्रत्येक छात्र का अपना व्यक्तित्व होता है। अतः शिक्षक का अनुकरण करने से उनके व्यक्तित्व के विकास में बाधा पड़ती है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि स्कूलों में दमनात्मक अनुशासन का कोई स्थान नहीं होना चाहिए। उनमें प्रभावात्मक और मुक्त्यात्मक सिद्धान्तों के समन्वित रूप का अनुसरण किया जाना चाहिए। केवल यही रूप विद्यालयों में अनुशासन स्थापित करने और उसको बनाए रखने मे लाभप्रद सिद्ध हो सकता है।

अनुशासन के स्वरूप
Forms of Discipline

शिक्षा-शास्त्रियों द्वारा अनुशासन के निम्नलिखित चार स्वरूप या प्रकार बताए जाते है :—

1. प्राकृतिक अनुशासन : Natural Discipline
2. आधिकारिक अनुशासन : Authoritative Discipline
3. सामाजिक अनुशासन : Social Discipline
4. वैयक्तिक अनुशासन : Personal Discipline

1. प्राकृतिक अनुशासन : Natural Discipline

(अ) प्राकृतिक अनुशासन का अर्थ : Meaning of Natural Discipline—प्राकृतिक अनुशासन के समर्थक रूसो (Rousseau) और स्पेन्सर (Spencer) थे। उनका कहना था कि बालक को प्रकृति के ऊपर छोड़ देना चाहिए। बालक को इस बात का अवसर दिया जाना चाहिए कि वह स्वयं कार्य करे। ऐसी दशा में वह अपने स्वयं के अनुभव से ज्ञान प्राप्त करेगा और फलस्वरूप उसमें स्वाभाविक अनुशासन (Natural Discipline) का विकास होगा।

यदि वह प्रकृति के नियमों के अनुसार कार्य करेगा, तो उसे सफलता मिलेगी; और विपरीत कार्य करने पर उसे सफलता नहीं मिलेगी। साथ ही प्रकृति उसे अपने नियमों के विरुद्ध कार्य करने के लिए दण्ड देगी; उदाहरणार्थ—यदि बालक आग को छुएगा, तो उसका हाथ जल जायगा। यदि वह जाड़े में पानी से भीगेगा, तो उसे बुखार आ जायगा।

(ब) प्राकृतिक अनुशासन की आलोचना : **Criticism of Natural Discipline**—प्राकृतिक अनुशासन को पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं किया जा सकता है। बालक को पूर्ण स्वतन्त्रता देना, किसी भी प्रकार उचित नहीं जान पड़ता। उसकी स्वतन्त्रता निश्चित सीमा के अन्दर होनी चाहिए। साथ ही उसे यह बताने वाला होना चाहिए कि कौन-सा प्रकृति विरुद्ध कार्य करने से उसे कितनी हानि हो सकती है। ऐसा न करने से महान् अनर्थ हो सकता है।

नदी या तालाब के तट पर खड़ा हुआ बालक दूसरे व्यक्तियों को उसमें तैरने के लिए कूदता देखकर उनका अनुकरण कर सकता है। इसका परिणाम बालक के लिए भयंकर हो सकता है। वह अपनी जान खो सकता है। अतः उसे हर कार्य का परिणाम अपने अनुभव द्वारा सीखने की स्वतन्त्रता नहीं दी जानी चाहिए। प्राकृतिक अनुशासन को केवल उसी दशा में स्वीकार किया जा सकता है, जब बालक की स्वतन्त्रता को सीमित और उसके कार्यों को थोड़ा-बहुत निर्देशित किया जाय।

2. आधिकारिक अनुशासन : Authoritative Discipline

(अ) आधिकारिक अनुशासन का अर्थ : **Meanning of Authoritative Discipline**—आधिकारिक अनुशासन में बालक अपने से बड़ों के अधिकार में रहता है। उसे अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करने की स्वतन्त्रता न होकर, बड़ों के आदेशों के अनुसार कार्य करना पड़ता है। घर में वह अपने माता-पिता, बड़े भाई-बहिनों आदि की आज्ञाओं को मानकर काम करता है। उसे घर के नियमों का पालन करना पड़ता है। इसी प्रकार, जब वह स्कूल जाता है, तब वहाँ के नियमों का पालन करता है और शिक्षक की आज्ञा को मानकर काम करता है। इस प्रकार, अपने से बड़ों और शिक्षक के अधिकार, बालक में आधिकारिक अनुशासन की स्थापना करते हैं।

(ब) आधिकारिक अनुशासन की आलोचना : **Criticism of Authoritative Discipline**—आधिकारिक अनुशासन में गुण की अपेक्षा दोष अधिक है। यह ठीक है कि आधिकारिक अनुशासन बालक में घर और स्कूल के नियमों के पालन की आदत डालकर उसे समाज और देश के नियमों के पालन के लिए तैयार करता है। पर कभी-कभी माता-पिता और शिक्षक की कठोरता के कारण आधिकारिक अनुशासन इतना प्रबल हो जाता है कि बालक को तनिक भी स्वतन्त्रता नहीं मिलती है। साथ ही, वह अधिकार के बोझ से पूर्णतः दब जाता है। इन दोनों बातों का परिणाम यह

होता है कि उसका स्वाभाविक विकास रुक जाता है। इसके अतिरिक्त, उनमें हीनता की ग्रन्थि भी उत्पन्न हो जाती है। इन बातों को देखते हुए आधिकारिक अनुशासन का समर्थन नहीं किया जा सकता है।

3. सामाजिक अनुशासन : Social Discipline

(अ) सामाजिक अनुशासन का अर्थ : Meaning of Social Discipline–बालक जैसे-जैसे बड़ा होता है, वैसे-वैसे उसमें सामाजिक अनुशासन का विकास होता जाता है। बालक विभिन्न सामाजिक कार्यों को दण्ड या अधिकार के भय से नहीं करता है। वह उनको प्रशंसा या निन्दा के कारण भी नहीं करता है। जिन कार्यों को करने से उसे सामाजिक प्रशंसा मिलती है, उनको वह करता है। पर जिन कार्यों के फलस्वरूप उसे निन्दा का भय रहता है, उनको नहीं करता है।

(ब) सामाजिक अनुशासन की आलोचना : Criticism of Social Discipline—बालक के जीवन में सामाजिक अनुशासन का बहुत अधिक महत्त्व है। सामाजिक अनुशासन उसे सफल सामाजिक प्राणी बनने में सहायता देता है। यही कारण है कि आधुनिक विचारधारा के अनुसार स्कूल को समाज का लघु रूप या समाज का प्रतिबिम्ब माना जाता है। इस बात पर बल दिया जाता है कि बालकों को विद्यालय में विभिन्न सामाजिक कार्यों को करने का पूरा अवसर दिया जाय। इन कार्यों को करके ही उनमे सामाजिक अनुशासन का सचार हो सकता है और वे सफल सामाजिक प्राणी बन सकते हैं।

4. वैयक्तिक अनुशासन : Personal Discipline

(अ) वैयक्तिक अनुशासन का अर्थ : Meaning of Personal Discipline—वैयक्तिक अनुशासन को 'आत्म-अनुशासन' (Self-Discipline) या 'आत्म-नियन्त्रण' (Self-Control) कहा जा सकता है। यह अनुशासन उस समय प्रारम्भ होता है, जब व्यक्ति पूर्ण रूप से परिपक्व हो जाता है। इस अवस्था में पहुँचने पर ही व्यक्ति का पूर्ण मानसिक विकास होता है, और वह अच्छे और बुरे में अन्तर समझने लगता है। उसमें 'आत्म-अनुशासन' का इतना विकास हो जाता है कि वह अपने कार्यों पर पूरी तरह से नियन्त्रण रख सकता है। वह बुरे कार्यों को इसलिए नहीं करता है, क्योंकि वह समाज से डरता है, वरन् इसलिए कि वह दूसरों की दृष्टि मे निम्न नहीं समझा जाना चाहता है। उसमें अच्छा व्यक्ति बनने की इच्छा होती है। इस इच्छा को पूरा करने मे आत्म-नियन्त्रण उसे सहयोग देता है।

(ब) वैयक्तिक अनुशासन की आलोचना : Criticism of Personal Discipline—मनुष्य के जीवन में वैयक्तिक अनुशासन का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस अनुशासन का विकास करके ही वह जीवन में सफलता प्राप्त कर सकता है और समाज मे ऊँचा उठ सकता है। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षक—बालकों में वैयक्तिक अनुशासन की भावना को विकसित करे। ऐसा करके वह उनके भावी जीवन का वास्तविक निर्माण कर सकता है।

अनुशासनहीनता के कारण
Causes of Indiscipline

अनुशासनहीनता, कक्षा में और कक्षा के बाहर—दोनों जगहों में पाई जाती है। अतः इनके कारणों पर अलग-अलग विचार करना ही उचित होगा; यथा :—

(अ) कक्षा में अनुशासनहीनता के कारण : **Causes of Indiscipline in the Class Room**—(1) कक्षा में बालकों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं पर ध्यान नहीं दिया जाता है। फलतः उनका ध्यान पढ़ने में नहीं लगता है, और वे कोई-न-कोई शरारत करने लगते हैं।

(2) कुछ बालकों में अपने परिवार या मित्रों के कारण बुरी आदतें पड़ जाती हैं। ये आदतें कक्षा में अनुशासनहीनता का कारण बनती है।

(3) कुछ अध्यापकों की वेश-भूषा या पढ़ाने का ढंग विचित्र होता है। इसलिए छात्रों का ध्यान या तो उनकी वेश-भूषा की ओर रहता है, या उनके पढ़ाने की विधि से उन्हें पाठ में नीरसता मिलती है।

(4) कुछ शिक्षक दमन सिद्धान्त का अनुसरण करके कक्षा में अनुशासन बनाये रखने का प्रयास करते है। यह प्रयास कृत्रिम होने के कारण बहुत समय तक सफल नहीं होता है।

(5) जब कक्षा में आवश्यकता से अधिक छात्र हो जाते हैं, तब शिक्षक के लिए उन सब पर दृष्टि रखना असम्भव हो जाता है। इससे बालकों को शरारत करने का अवसर मिलता है।

(6) कभी-कभी कक्षा की दशायें ठीक नहीं होती है। उनमें प्रकाश का अभाव होता है या गर्मी मे पंखा नहीं होता है या फरनीचर कम होता है या छत पर टीन होने के कारण पानी बरसते समय तेज आवाज़ होती है। ये सभी बातें कक्षा में अनुशासनहीनता को जन्म देती हैं।

(7) यदि विद्यालय की स्थिति अच्छी नहीं है, तो कक्षा में अनुशासनहीनता का होना स्वाभाविक है; उदाहरणार्थ—यदि विद्यालय नगर के मध्य में किसी सड़क या गली के पास है, तो उस पर आने-जाने वाले व्यक्ति, जुलूस, लाउडस्पीकर आदि बच्चों का ध्यान आकर्षित करते हैं और उन्हे कोई-न-कोई शरारत सूझने लगती है।

(ब) कक्षा के बाहर अनुशासनहीनता के कारण : **Causes of Indiscipline outside the Class Room**—(1) घर में माता-पिता, सम्बन्धी आदि बालकों की अनुशासनहीनता के कारण है। कुछ घरो मे बालक उनसे बहुत-सी बातें सुनते हैं; जैसे—चोरबाजारी, धोखेबाजी, पड़ोसी के प्रति बुरा व्यवहार, स्वार्थ, धन-लोलुपता आदि। सुनते-सुनते बालक स्वयं इनका अनुकरण करने लगते है। कुछ घरो मे वे अपने पिता, भाई आदि को सिगरेट पीते हुए देखते हैं, जिससे उनमें भी यह आदत पड़ जाती है।

(2) देश के राजनीतिक दल छात्रों को अनुशासनहीन बनाने मे योग देते है। महात्मा गांधी ने स्वतन्त्रता-संग्राम के समय छात्रों से विदेशियो के विरुद्ध काम लिया। तब से लेकर आज तक यह परम्परा चली आ रही है, पर अब इसका रूप बदल गया है। अब विभिन्न राजनीतिक दल एक-दूसरे के विरुद्ध कार्य करने में छात्रों से सहायता लेते है।

(3) आज का शिक्षक, भारत के पुराने आदर्श से बहुत नीचे गिर गया है। साधारणतः उसका न तो चरित्र ही अच्छा होता है, और न उसे अपने विषय का पूर्ण ज्ञान ही होता है। ये दोनो बातें छात्रो की अनुशासनहीनता मे योग देती है।

(4) आज के अध्यापक की आर्थिक स्थिति बहुत खराब है। इसलिए आज के युग में, जिसमें धन ही सब कुछ है, उसका कोई सामाजिक महत्त्व नही रह गया है। समाज उसे गिरी दृष्टि से देखता है। यह बात छात्रों के बारे मे भी कही जा सकती है। अतः उनसे वह आशा करना व्यर्थ है कि वे अध्यापक के अनुशासन में रहें।

(5) कॉलिजों और विश्वविद्यालयो में अनुशासनहीनता के कारण—उपकुल-पति, प्रिंसिपल, प्रॉक्टर आदि है। वे छात्रों द्वारा की जाने वाली हड़तालो, मारपीटो और परीक्षा-भवन में नकल के बारे में जानते है। फिर भी वे छात्रो को क्षमा करते है। परिणाम यह होता है कि छात्रों मे अधिक ख़राब काम करने का साहस पैदा होता है। वे अनुशासन के सब बन्धनों को तोड़कर उनको करते है, क्योंकि वे जानते हैं कि उनको कोई दण्ड नही मिलेगा।

(6) हमारी दोषपूर्ण शिक्षा-पद्धति—छात्रो की अनुशासनहीनता का एक मुख्य कारण है। बालकों को जिन विषयों की शिक्षा दी जाती है, वे न तो उपयोगी है और न समयानुसार।

(7) वर्तमान परीक्षा-प्रणाली अनुशासनहीनता मे योग देती है। बहुत-से छात्र नकल करके परीक्षा मे पास हो जाते है। उसके बाद ले अपने काले कारनामों को दूसरों को बड़े गर्व से सुनाते हैं। इसका अन्य छात्रो पर बुरा प्रभाव पड़ता है, क्योकि वे भी अगली परीक्षा मे नकल करने की विभिन्न विधियो का प्रयोग करते है।

(8) नैतिक शिक्षा का अभाव, अनुशासनहीनता का कारण है। इस शिक्षा के अभाव मे बालक अच्छी और बुरी बातों के अन्तर को नही जान पाते है। परिणाम यह होता है कि यदि बुरी आदत से भी उनकी भलाई होती है, तो वे उसको अच्छी समझते है।

(9) आज के विद्यालय—शिक्षा की दुकाने हैं, जहाँ ज्ञान पैसे से प्राप्त किया जा सकता है। शिक्षा और ज्ञान के प्रति यह अनुचित दृष्टिकोण अनुशासनहीनता के लिए उत्तरदायी है।

(10) अनुशासनहीनता के अन्य कारण है—सैनिक शिक्षा, शारीरिक शिक्षा

तथा श्रम के महत्त्व की शिक्षा का अभाव, अनुचित विद्यालय-भवन; अध्यापकों की कमी, और दूषित सामाजिक वातावरण।

विद्यालयों में अनुशासन रखने के लिए सुझाव
Suggestions for Maintaining Discipline in Schools

रेन का कहना है :—"जिस प्रकार सेना, नौ सेना या राज्य के अस्तित्व के लिए अनुशासन पहली आवश्यकता और पहली शर्त है, उसी प्रकार स्कूल के लिए भी है।"

"As in the Army, the Navy, or the State, so in the School the pre-requisite, the very condition of existence is discipline."

—Wren.

जब विद्यालयों के लिए अनुशासन इतना महत्त्वपूर्ण है, तब उनमे अनुशासन को बनाये रखने की भी महान् आवश्यकता है। ऐसा करने के लिए डब्ल्यू० पी० शोरिंग (W P Shoring) ने तीन प्रकार के अनुशासनों का प्रयोग बताया है—(1) सृजनात्मक, (2) प्रतिबन्धात्मक, और (3) उपचारात्मक। हम इन पर प्रकाश डाल रहे है :—

(1) **सृजनात्मक अनुशासन : Constructive Discipline**—सृजनात्मक अनुशासन का अर्थ यह है कि बालकों से ऐसी बातें कही जायें और ऐसे काम करवाये जायें, जिनसे उनमें अपने आप अनुशासन की भावना का सृजन या उदय हो। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित बातो पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए :—

1 बालकों को निषेधात्मक निर्देश (Contra-Suggestion) नहीं देने चाहिए। उनसे यह नहीं कहना चाहिए—"शोर मत करो", "झुक कर मत बैठो", बल्कि कहना चाहिए—"चुप रहो", "सीधे बैठो"।
2. बालको में सामाजिक अनुशासन का विकास किया जाना चाहिए, जिससे कि वे अपने अधिकारों के साथ-साथ, अपने कर्तव्यों को भी समझ सकें।
3. विद्यालय मे जो भी कार्यक्रम आयोजित किये जायें। उनमे छात्रों का अधिक से अधिक सहयोग होना चाहिए।
4. शिक्षक को बालक और उसके व्यक्तित्व का आदर करना चाहिए।
5. बालकों की रुचियों, इच्छाओं और आवश्यकताओं की ओर पूरा-पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए, और उन्हें पूर्ण करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।
6. विद्यालय की परम्पराएँ और आदर्श, सृजनात्मक अनुशासन के अनुरूप होने चाहिए।
7. बालकों को अधिक-से-अधिक पाठ्य-सहगामी क्रियाओं में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

8. शिक्षक का व्यक्तित्व प्रभावशाली होना चाहिए जिससे कि वह छात्रों को प्रभावित कर सके ।
9. बालकों को समय के उचित उपयोग की शिक्षा दी जानी चाहिए ।
10. बालकों को सृजनात्मक खेलों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए ।

(2) प्रतिबन्धात्मक अनुशासन : Preventive Discipline—प्रतिबन्धात्मक अनुशासन का अर्थ है कि बालकों पर ऐसे प्रतिबन्ध या अंकुश लगाये जायें, जिससे कि उनमें अनुशासनहीनता उत्पन्न न होने पाये । इस सम्बन्ध में निम्नांकित कार्य किये जाने चाहिए :

1. शिक्षक को अपनी कक्षा के प्रत्येक बालक का नाम याद होना चाहिए ।
2. पढ़ाते समय शिक्षक को इधर-उधर या नीचे की ओर न देखकर, सीधे छात्रों की ओर देखना चाहिए ।
3. बालकों को बैठने के लिए काफी और उचित प्रकार का स्थान होना चाहिए ।
4. जो बालक पढ़ने या सुनने में ध्यान न दे रहे हों, उन्हें चेतावनी दे देनी चाहिए ।
5. पढ़ाते समय शिक्षक को रोचक विधि का प्रयोग करना चाहिए ।
6. शिक्षक को बालकों में यह भावना उत्पन्न कर देनी चाहिए कि उसको उनसे पूर्ण सहानुभूति है ।
7. यदि कोई बालक अध्यापन के कार्य में बाधा डाले तो शिक्षक को उसे प्रेम और शान्ति से समझा देना चाहिए ।
8. पढ़ाते समय शिक्षक को कक्षा में इधर-उधर नहीं घूमना चाहिए ।
9. यदि शिक्षक को अनुशासहीनता प्रारम्भ होने का तनिक भी संदेह हो, तो उसे उसको वहीं रोक देना चाहिए ।
10. शिक्षक को न तो बालक को आवश्यकता से अधिक डाँटना चाहिए, और न उसकी कड़ी आलोचना करनी चाहिए ।
11. सत्र के आरम्भ में शिक्षक को दृढ़ता और अनुशासन पर विशेष बल देना चाहिए, जिससे कि नये छात्र उसकी प्रकृति से परिचित हो जायें ।
12. विद्यालय का वातावरण स्वच्छ, सुन्दर और आकर्षक होना चाहिए ।

(3) उपचारात्मक अनुशासन : Remedial Discipline—उपचारात्मक अनुशासन का अर्थ है—अनुशासनहीन बालक का उपचार करना या उसको सुधारना । इसके लिए पहले अनुशासनहीनता के कारणों को जानना चाहिए । उसके बाद उन कारणों को दूर करना चाहिए । इन दोनों बातों को 'निदान' और 'उपचार' (Diagnosis & Treatment) कहा जाता है । बालकों में सुधार करने के लिए *निम्नलिखित* बातों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए :—

1. जब तक अपराधी बालक का उपचार न हो जाय, तब तक उसे दूसरे बालकों से अलग रखना चाहिए।
2. कुछ भी करने से पहले बालक को अपने अपराध के बारे में सभी बातों को बताने का अवसर दिया जाना चाहिए।
3. अपराधी बालक से उसके अपराध के बारे में साफ-साफ बातें की जानी चाहिए।
4. बालक को उसके अपराध के लिए जो भी दण्ड दिया जाय, वह पूरी तरह से सोच-समझ कर दिया जाय।
5. बालक से यह कभी नहीं कहा जाना चाहिए कि वह अपने अपराध के लिए क्षमा माँग ले।
6. दण्ड दिए जाने के बाद बालक से उसके अपराध के बारे में कोई बात नही की जानी चाहिए।
7. बालक के अपराध और दण्ड का वर्णन सब छात्रों के सामने नहीं किया जाना चाहिए।
8. यदि अनुशासन भंग करने वाले छात्र का पता न लग पाए, तो कक्षा के सब छात्रों से अनुरोध किया जाना चाहिए कि वे फिर वैसा कार्य न करें।
9. यदि कक्षा के कुछ ही छात्र शैतान हों, तो केवल उन्हीं को दण्ड दिया जाना चाहिए, न कि उनके कारण पूरी कक्षा को।
10. बालक में सुधार करने के लिए उसके माता-पिता या सरक्षक से सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिए।
11. अपराधी बालक को डराना और धमकाना नही चाहिए।
12. दण्ड देते समय बालक का अपमान या उपहास नही करना चाहिए।
13. बालकों द्वारा कभी-कभी किए जाने वाले छोटे उच्छृङ्खल कार्यों को अनुशासनहीनता नहीं समझा जाना चाहिए।
14. बालकों को जो दण्ड दिया जाय, वह उनके अपराध के स्वरूप के अनुसार होना चाहिए।
15. यदि शिक्षक स्वय किसी बालक की अनुशासनहीनता का उपचार न कर सकें तो उसे अपने से अधिक अनुभवी शिक्षकों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए।
16. बालक का सुधार करने के लिए जिस उपचार को अपनाया जाय, वह उसकी समझ मे पूरी तरह से आ जाना चाहिए।
17. बालक को उसके अपराध का तब तक दण्ड नही दिया जाना चाहिए, जब तक शिक्षक को उसके बारे मे पूरा विश्वास न हो जाय।

18. शिक्षक को यह जानने का प्रयास करना चाहिए कि बालक ने अपराध क्यों किया है।
19. यदि अनुशासन भग करने वाले छात्र कोई अच्छा कार्य करते है, तो अध्यापक को उनकी प्रशसा करनी चाहिए।
20. बालक को दण्ड देने के बाद हर प्रकार की सावधानी रखी जानी चाहिए, जिससे कि वह कोई अनुचित कार्य न कर बैठे।

उपसंहार

'स्वतन्त्रता' और 'अनुशासन' का एक-दूसरे से अटूट सम्बन्ध है। छात्रों को निश्चय रूप से स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए, उनकी प्रवृत्तियों का दमन नही किया जाना चाहिए, उनको भय दिखाकर अधिकार में नही रखा जाना चाहिए। प्रजातन्त्र के नागरिकों के रूप में छात्रों को स्वतन्त्रता का उपभोग करने का पूर्ण अधिकार है। पर हर अधिकार के साथ कर्त्तव्य जुड़ा हुआ है। यदि स्वतन्त्रता छात्रों को 'जन्मसिद्ध अधिकार' मान लिया जाय तो उनका कुछ कर्त्तव्य भी है।

यह कर्त्तव्य है—अनुशासन में रहना, विद्यालय से नियमो का पालन करना, गुरुजनो के आदेशो को मानना। पर दुःख की बात है कि स्वतन्त्र भारत के छात्रों को अपने अधिकार का तो पाठ याद है, पर कर्त्तव्य का नही। यही कारण है कि देश मे उनकी अनुशासनहीनता दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही है, जिसने सभी समझदार लोगों के लिए एक विकट समस्या उपस्थित कर दी है।

छात्रों की अनुशासनहीनता के बारे मे 27 जून, 1965 के "Sunday Standard" में एक लम्बा सम्पादकीय लेख निकला था। इसके अनुसार, भारत मे 1964 मे शिक्षा-सस्थाओं में 261 हड़तालें हुई। इन हड़तालो के विभिन्न कारण थे; जैसे—शिक्षा की सुविधाओं का अभाव, अधिक फ़ीस, छात्र-यूनियन की माँगें। सम्पादक के अनुसार इन हड़तालों का प्रमुख कारण यह था कि हमारी शिक्षा-व्यवस्था का रूप ठीक नही है। इसके अतिरिक्त, छात्रो और शिक्षकों मे सम्पर्क नही है। शिक्षा समाप्त करने के बाद छात्र अपनी जीविका का उपार्जन करने में सफल नही होते है और राजनीति में लड़को को खीचकर लाया जाता है।

अनुशासनहीनता को दूर करने के लिए सम्पादक ने बताया :—**"सबसे अच्छा उपाय यह है कि बड़े लोग, छात्रों के सामने अच्छे उदाहरण प्रस्तुत करें और उनकी शक्ति को सार्वजनिक क्षेत्र की ओर मोड़ें, जहाँ वे राष्ट्र के हित के लिए निर्माणकारी कार्य करें और पूर्ण रूप से सुसज्जित संस्थाओं में शिक्षा ग्रहण करें। देश के नवयुवकों को ग़लत मार्ग पर नही जाने देना चाहिए और छात्रों में अनुशासन और सुरक्षा की भावना को उत्पन्न करने के लिए किसी भी व्यय को अधिक नहीं समझना चाहिए।"**

"The best remedy is, the elders should set *better examples*, and channelise their energy to constructive effort *in the field of*

public affairs to the advantage of the nation, and to academic pursuits in fully equipped institutions The youth must not be allowed to go astray and no cost should be considered too high to bring discipline and a sense of security among students."

—**Editorial** : *Sunday Standard*, 27 June, 1965.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss briefly the relationship between freedom and discipline.

स्वतन्त्रता तथा अनुशासन के सम्बन्ध को संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

2. Examine the various theories of discipline Which of them is most suited to our schools, and why ?

अनुशासन के विभिन्न सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए। हमारे विद्यालयों के लिए उनमे से सबसे अधिक उपयुक्त कौन-सा सिद्धान्त है, और क्यों ?

3. Throw light on the various forms of discipline. Which of them, in your opinion, are most necessary for Indian students, and why ?

अनुशासन के विभिन्न स्वरूपों पर प्रकाश डालिए। आपके मतानुसार भारतीय छात्रों के लिए इनमें से कौन-सा स्वरूप सबसे अधिक उपयुक्त है, और क्यों ?

4. Examine, with particular reference to Indian schools, the causes of indiscipline and suggest measures to overcome them.

भारतीय विद्यालयों के संदर्भ में अनुशासनहीनता के कारणों की विवेचना कीजिए तथा उनको दूर करने के लिए सुझाव दीजिए।

5. What is the role of freedom and discipline in the education of a child ? How does a progressive school incorporate both in its set-up ?

बालक की शिक्षा में स्वतन्त्रता तथा अनुशासन का क्या कार्य है ? प्रगतिशील विद्यालय अपने वातावरण मे इन दोनों को किस प्रकार स्थान प्रदान कर सकता है ?

6. *Give a short account of the modern views on* 'Freedom & Discipline' in education.

शिक्षा में 'स्वतन्त्रता तथा अनुशासन' पर आधुनिक विचारों को स्पष्ट कीजिए।

20

धार्मिक व नैतिक शिक्षा
RELIGIOUS & MORAL EDUCATION

"शिक्षा का एक महान् और स्थायी उद्देश्य—नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करना रहा है।"

"A great and continuing purpose of education has been the development of moral and spiritual values."—*Educational Policies Commission*, Washington, 1951, p. 3.

विषय-प्रवेश

सुल्तान मुहीउद्दीन का कथन है :—"इस देश के विद्यालयों में प्रत्यक्ष नैतिक और धार्मिक शिक्षा के पक्ष में लम्बी परम्परा रही है।"

"There has been a long tradition in this country in favour of direct moral and religious instruction in schools."—**M. Sultan Mohiyuddin** : *School Organization & Management*, p. 132.

प्राचीन भारत के 'आश्रमों', मुस्लिम-काल के 'मकतबों' और 'मदरसों' एवं हिन्दुओं की 'पाठशालाओं' में धार्मिक और नैतिक शिक्षा, पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग थी। अंग्रेजों ने भारतीय शिक्षा-नीति को धार्मिक और नैतिक शिक्षा से बिल्कुल पृथक् रखा। उन्होंने राज्य द्वारा सचालित विद्यालयों मे इस शिक्षा का पूर्ण निषेध करके धार्मिक तटस्थता की नीति का अनुसरण किया। स्वतन्त्र भारत ने भी उसी नीति को अपनाया। उसने अपने को धर्म-निरपेक्ष राज्य घोषित करके अपने "संविधान की 22वीं धारा" में यह लेखबद्ध कर दिया :—"पूर्णतया राज्य-कोष से चलाई जाने वाली किसी भी शिक्षा-संस्था में किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा प्रदान नहीं की जायगी।"

धार्मिक व नैतिक शिक्षा की मांग
Demand for Religious & Moral Education

भारतीय विद्यालयों में धार्मिक और नैतिक शिक्षा की लम्बी परम्परा होने के कारण यहाँ के निवासी, परतन्त्र और स्वतन्त्र भारत की धर्म-विहीन शिक्षा से रंच-मात्र भी सन्तुष्ट नहीं हुए। अतः उन्होंने अपने स्वयं के प्रयास से ऐसी अनेक शिक्षा-संस्थाएँ स्थापित कीं, जिनमें धार्मिक और नैतिक शिक्षा को उपयुक्त स्थान प्रदान किया गया। इतना ही नहीं, 'हन्टर कमीशन' (1882) से लेकर 'कोठारी कमीशन' (1964) तक नियुक्त किए जाने वाले सभी आयोगों और समितियों ने शिक्षा-संस्थाओं में धार्मिक और नैतिक शिक्षा प्रदान किए जाने का समर्थन किया; उदाहरणार्थ—'शिक्षा-आयोग' ने लिखा है :—"सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा के लिए सचेत और संगठित प्रयास किए जाने चाहिए।"

"Conscious and organized attempts should be made for imparting education in social, moral and spiritual values."

—*Education Commission Report*, p. 206.

भारतीय जनता के विचारानुसार, धार्मिक और नैतिक शिक्षा क्यों आवश्यक है? आयोगों और समितियों ने इस शिक्षा का समर्थन क्यों किया है? इनके कारणों पर प्रकाश डालने से पूर्व शिक्षा, धर्म और नैतिकता के पारस्परिक सम्बन्धों से परिचय प्राप्त कर लेना संगत जान पड़ता है।

शिक्षा, धर्म व नैतिकता में सम्बन्ध
Relation between Education, Religion & Morality

1. **शिक्षा व धर्म में सम्बन्ध : Relation between Education & Religion**—शिक्षा और धर्म में स्वाभाविक सम्बन्ध माना जाता है। दोनों के लक्ष्य बहुत कुछ समान हैं। दोनों का सम्बन्ध, व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास से है। दोनों—व्यक्ति को उसके वातावरण के सम्पर्क से ही नहीं, वरन् उसकी दासता से भी मुक्ति दिलाने का प्रयास करते हैं।

यह स्वीकार किया जाता है कि जिस शिक्षा-प्रणाली का उद्देश्य—व्यक्ति की नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति करना है और जो उसको सत्यम्, शिवम् एवं सुन्दरम् के अधिक-से-अधिक निकट ले जाने का प्रयास करती है, वह इस कार्य में धर्म की महत्त्वपूर्ण सहायता की अवहेलना नहीं कर सकती है। शिक्षा और धर्म के सम्बन्ध में *कुछ विद्वानों के विचार निम्नांकित है :—*

(1) **हीथकोट :—"सिद्धान्त में धर्म और शिक्षा को भले ही एक-दूसरे से अलग कर दिया जाय, पर वास्तव में ऐसा विचार असम्भव है। शिक्षा और धर्म का उद्देश्य और लक्ष्य वास्तव में एक ही है। सच्ची शिक्षा का आधार धर्म है और शिक्षा को धर्म से अलग करने का प्रयास—उसके क्षेत्र, उद्देश्य और लक्ष्य को सीमित करना है।"**

"In theory, religion and education may be separated from each other, but in reality such a thought is impossible. The aim and goal of education and religion are virtually the same The basis for true education is religion and an effort to make education independent of religion, narrows its scope, aim and goal."
—Charles W. Heathcote : *The Essentials of Religious Education*, p. 6.

(2) स्पेंस रिपोर्ट :—"यदि किसी बालक या बालिका को इस तथ्य का ज्ञान नहीं कराया गया है कि जीवन के बारे में एक धार्मिक दृष्टिकोण भी मौजूद है तो उसे ठीक तरह से शिक्षित नहीं कहा जा सकता है।"

"No boy or girl can be counted as properly educated unless he or she has been made aware of the fact of the existence of a religious interpretation of life."—*Spens Report*, p. 208.

2. धर्म व नैतिकता में सम्बन्ध : Relation between Religion & Morality—धर्म और नैतिकता को एक-दूसरे से पृथक् करना असम्भव है। धर्म का सार—नैतिकता है और नैतिकता का आधार धर्म है। नैतिक मूल्यों का विकास धार्मिक विश्वासों से होता है। व्यक्ति की नैतिक प्रगति, उसके धार्मिक दृष्टिकोण पर निर्भर रहती है। उसको अपने अच्छे कार्म और अच्छे वातावरण की प्रेरणा धर्म से ही प्राप्त होती है।

प्रत्येक समाज मे उचित और अनुचित या नैतिक और अनैतिक कार्यों का मानदण्ड—उस समाज का धर्म होता है। धर्म से नैतिकता को बल प्राप्त होता है, और सम्पूर्ण सभ्यता का आधार धर्म द्वारा नैतिकता को प्रदान की जाने वाली स्वीकृति है। धर्म और नैतिकता के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों के विचार निम्नांकित है :—

(1) रायबर्न :—"नैतिकता को धर्म से ही स्वीकृति प्राप्त होती है। नैतिक बल का स्रोत धर्म है। धर्म से सम्बन्धित किए बिना नैतिकता की शिक्षा देना असम्भव है। धर्म ही नैतिकता में प्राण फूंकता है।"

"Morality finds its sanction in religion. Moral power comes from religion. It is impossible to teach morality without relating it to religion It is religion that instils life into morality."—W. M. Ryburn : *The Organization of Schools*, p. 188.

(2) बारटोल :—"कुछ लोग नैतिकता को धर्म से अलग करना चाहते हैं, पर धर्म में आधार के बिना नैतिकता का अन्त हो जायगा।"

"Some would divorce morality from religion; but religion is the root without which morality would die."—C. A. Bartol : *The New Dictionary of Thoughts*, p. 405.

3. शिक्षा, धर्म व नैतिकता में सम्बन्ध : Relation between Education, Religion & Morality—उपर्युक्त विवेचन से शिक्षा धर्म और नैतिकता का सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है। शिक्षा को धर्म से अलग नहीं किया जा सकता है, क्योंकि जैसा कि ह्वाइटहेड (A. N. Whitehead) ने लिखा है :—**"शिक्षा का सार तत्त्व यह है कि वह धार्मिक होती है।"**

जिस प्रकार शिक्षा को धर्म से अलग नही किया जा सकता है, उसी प्रकार शिक्षा को नैतिकता से भी पृथक् करना असम्भव है। हरबार्ट (Herbart) का कथन है :—**"समग्र रूप में, नैतिक शिक्षा—शिक्षा से पृथक् नहीं है।"** ("Moral education is not separable from education as a whole.")

जहाँ तक धर्म और नैतिकता की बात है, इन दोनों का अस्तित्व एक-दूसरे पर निर्भर है। इसी बात को हम स्प्रिंग (G. Spring) के इन शब्दो मे कह सकते है :—**"धर्म के बिना नैतिकता का, और नैतिकता के बिना धर्म का अस्तित्व नहीं है।"** ("There is no religion without morality, and no morality without religion.")

इस प्रकार, हम कह सकते है कि शिक्षा, धर्म और नैतिकता एक-दूसरे मे इस प्रकार गुँथे हुए है कि उनका सम्बन्ध-विच्छेद करना असम्भव है। अत. शिक्षा—धार्मिक भी होनी चाहिए और नैतिक भी। पर क्यो ? इसी बात पर विचार करना अब हमारा प्रयोजन है।

धार्मिक व नैतिक शिक्षा की आवश्यकता
Need for Religious & Moral Education

1. सर्वाङ्गीण व्यक्तित्व का विकास : Development of All Round Personality—विद्यालय पर बालक के व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण विकास करने का उत्तरदायित्व है। वह अपने इस उत्तरदायित्व का निर्वाह तभी कर सकता है, जब वह उसे धार्मिक और नैतिक शिक्षा प्रदान करे।

अपने इस कथन की पुष्टि में हम रायबर्न (Ryburn) के इन शब्दो को उद्धृत कर सकते है :—**"यह आवश्यक है कि किसी भी विद्यालय में, जो अपने छात्रों के सर्वाङ्गीण व्यक्तित्व का विकास करने का प्रयास करता है, धर्म की शिक्षा दी जानी चाहिए।"**

2. चरित्र का निर्माण : Formation of Character—मनुष्य के भाग्य का निर्माण उसका चरित्र करता है। चरित्र ही उसके जीवन मे उत्थान और पतन; सफलता और विफलता का सूचक है। अतः यदि हम बालक को सफल व्यक्ति, उत्तम नागरिक और समाज का उपयोगी सदस्य बनाना चाहते है, तो उसके चरित्र का निर्माण किया जाना परम आवश्यक है। यह तभी सम्भव है, जब उसके लिए धार्मिक और नैतिक शिक्षा की व्यवस्था की जाय।

'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' (Secondary Education Commission) ने ठीक ही लिखा है :—"चरित्र के विकास में धार्मिक और नैतिक शिक्षा महत्त्वपूर्ण योग देती है।"

3. उचित मूल्यों का समावेश : Inculcation of Right Values—पाश्चात्य देशों के समाजों मे धार्मिक और नैतिक शिक्षा के अभाव के कारण अनेक गम्भीर दोष उत्पन्न हो गए है। अतः वहाँ के अनेक महान् विचारकों की यह धारणा बन गई है कि धार्मिक और नैतिक शिक्षा के द्वारा छात्रों मे उचित मूल्यो का समावेश किया जाना अनिवार्य है। क्योंकि भारतीय समाज में भी पाश्चात्य समाजों के कतिपय दोष दृष्टिगोचर होने लगे है, अतः उनका उन्मूलन करने के लिए पाश्चात्य विचारको की धारणा के अनुसार यहाँ भी कार्य किया जाना आवश्यक है।

उन्ही से पथ-प्रदर्शित होकर 'शिक्षा-आयोग' (Education Commission) ने लिखा है :—"हम जिस बात पर बल देना चाहते हैं, वह यह है कि शिक्षा के सब स्तरों पर छात्रो में उचित मूल्यों के समावेश के प्रति ध्यान दिया जाना आवश्यक है।"

4. अनन्त मूल्यों की प्राप्ति : Achievement of Absolute Values—सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम्—अनन्त मूल्य समझे जाते है। ये सबसे अधिक मूल्यवान् वस्तुएँ है, जो स्वतः अपना अस्तित्व रखती है और हमारे आदर एव निष्ठा की पात्र है। हम केवल धर्म और नैतिकता के माध्यम से ही इन मूल्यो को खोजकर और प्राप्त करके अपने जीवन को पूर्ण बना सकते है।

अतः शिक्षा में धर्म और नैतिकता को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाना अति आवश्यक है। इसका कारण बताते हुए, रॉस (Ross) ने लिखा है :—"शिक्षा को बालकों के क़दम ऐसे मार्ग पर चला देने चाहिए जो सच्चा, ईमानदार, न्याय्य, दोषहीन, सुन्दर और मंगलमय बातों की ओर ले जाता हो।"

5. अच्छे गुणों व आदतों का निर्माण : Development of Good Qualities & Habits—डाक्टर चेव (Ernest J. Chave) के अनुसार :—बालको को धार्मिक और नैतिक शिक्षा दी जानी इसलिए आवश्यक है, क्योंकि वह उनमे अनेक अच्छे गुणो और आदतो का निर्माण करती है; यथा—उत्तरदायित्व की भावना, सत्य की खोज, उत्तम आदर्शो की प्राप्ति, जीवन-दर्शन का निर्माण, आध्यात्मिक मूल्यों की अभिव्यक्ति इत्यादि।

6. पाठ्यक्रम के दोष का निवारण : Removal of the Defect of Curriculum—'शिक्षा-आयोग' (Education Commission) के शब्दो में :—"विद्यालय-पाठ्यक्रम का एक गम्भीर दोष है—सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा की व्यवस्था की अनुपस्थिति।"

विद्यालय-पाठ्यक्रम के इस दोष का निवारण करने का एकमात्र उपाय है—उसमें धार्मिक और नैतिक शिक्षा को उचित स्थान प्रदान करना। इसका कारण यह

है कि अधिकांश भारतीय अपने जीवन में धर्म से प्रेरणा और नैतिकता से आत्मिक बल प्राप्त करते है एवं धर्म और नैतिकता ही उनके चरित्र, आदर्शों और मूल्यों का निर्माण करते हैं।

7. संस्कृति का पोषण : Perpetuation of Culture—डा० राधाकृष्णन् के अनुसार, शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण कार्य—हमारी राष्ट्रीय संस्कृति का पोषण और आधुनिक आवश्यकताओं के अनुसार उसका पुनर्निर्माण करना है।

शिक्षा द्वारा यह कार्य क्यों और किस प्रकार सम्पन्न किया जा सकता है, इसके सम्बन्ध में जी० जेन्टाइल (G. Gentile) ने लिखा है :—"राष्ट्रीय संस्कृतियाँ, मानव-मस्तिष्क की उच्चतर आवश्यकताओं के प्रति इतनी सजग कभी नहीं थीं, जितनी कि अब हैं। ये आवश्यकताएँ केवल सौन्दर्यात्मक और अमूर्त्त बौद्धिक आवश्यकताएँ ही नहीं हैं, वरन् नैतिक और धार्मिक भी हैं। जिस विद्यालय में नैतिक और धार्मिक शिक्षा का समावेश नहीं है, वह विद्यालय निरर्थक है।"

8. सांस्कृतिक विरासत का अंग : Part of Cultural Heritage—धर्म और नैतिकता चिरकाल से भारतीयों की सांस्कृतिक विरासत के अङ्ग रहे है। अतः छात्रों को धार्मिक और नैतिक शिक्षा से वंचित रखना, उनके प्रति घोर अन्याय करना है।

सुल्तान मुहीउद्दीन (Sultan Mohiyuddin) ने लिखा है :—"धर्म—व्यक्ति की सांस्कृतिक विरासत का अङ्ग है। अतः धर्म को पाठ्य-विषय में स्थान न देना, छात्रों को अपने जन्म-सिद्ध अधिकार के एक भाग के लाभ से वंचित करना है।"

9. ऐतिहासिक तथ्य की अवहेलना : Disregard of Historical Fact—सुल्तान मुहीउद्दीन के अनुसार भारतीय—सन् 1905 से धार्मिक और नैतिक शिक्षा की माँग करते चले आ रहे हैं। उनकी माँग का आधार यह ऐतिहासिक तथ्य है कि धर्म और नैतिकता का उनके जीवन मे अति महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। उनकी माँग को पूरा न करना, इस ऐतिहासिक तथ्य की अवहेलना करना है।

'विश्वविद्यालय शिक्षा-आयोग' के प्रतिवेदन में अंकित ये शब्द अक्षरशः सत्य हैं :—"यदि हम अपनी शिक्षा-संस्थाओं में से आध्यात्मिक प्रशिक्षण को निकाल देंगे, तो हम अपने सम्पूर्ण ऐतिहासिक विकास के विरुद्ध कार्य करेंगे।"

10. सभ्यता की सुरक्षा : Preservation of Civilization—यदि हम अपनी सभ्यता को सुरक्षित और विकसित करना चाहते हैं, तो प्रत्येक शिक्षा-संस्था में धार्मिक और नैतिक शिक्षा का उपयुक्त आयोजन किया जाना आवश्यक है।

इस सम्बन्ध मे रॉस (Ross) के ये शब्द सारगर्भित है :—"आज अधिकाधिक विचारशील लोगों का विश्वास यह हो गया है कि यदि हम शिक्षा के द्वारा उच्च कोटि की सभ्यता का निर्माण करना और उसको बनाए रखना चाहते हैं, एवं कुछ समय के बाद होने वाले पशुता के प्रदर्शन से उसकी रक्षा करना चाहते हैं, तो शिक्षा को धर्म पर आधारित किया जाना आवश्यक है।"

धार्मिक व नैतिक शिक्षा की विषय-सामग्री
Content of Religious & Moral Education

भारत में अनेक धर्मों और सम्प्रदायों के व्यक्ति निवास करते है। सविधान की 19वीं धारा उनको अपने धर्मों का अनुसरण करने की पूर्ण स्वतन्त्रता देती है। 22वीं धारा के अनुसार राज्य-शिक्षा-संस्थाओं में धर्म की शिक्षा नही दी जा सकती है। फिर भारत धर्म-निरपेक्ष राज्य है। अतः विभिन्न धर्मों के बालको को धार्मिक शिक्षा किस प्रकार दी जाय ? इस समस्या का समाधान गांधी जी ने यह कहकर किया :—**"मेरे लिए नैतिकता, सदाचार और धर्म—पर्यायवाची शब्द हैं। नैतिकता के आधारभूत सिद्धान्त सब धर्मों से समान हैं। इनको बालकों को निश्चित रूप से पढ़ाया जाना चाहिए और इसको पर्याप्त धार्मिक शिक्षा समझा जाना चाहिए।"**

गांधीजी के उक्त शब्दों को ध्यान में रखकर भारत-सरकार द्वारा नियुक्त की जाने वाली 'समितियो' और 'आयोगो' ने धार्मिक और नैतिक शिक्षा की विषय-सामग्री के सम्बन्ध मे जो सुझाव दिए है, वे निम्नलिखित है :—

1. **'धार्मिक शिक्षा-समिति' के सुझाव**—जनवरी, 1944 मे 'केन्द्रीय शिक्षा-सलाहकार बोर्ड (Central Advisory Board of Education) ने लाहौर के बिशप बार्न्स (Right Rev. G. D. Barne) की अध्यक्षता में 'धार्मिक शिक्षा-समिति' (Religious Education Committee) की नियुक्ति की, और इससे शिक्षा-सस्थाओं में धार्मिक शिक्षा दिए जाने के सम्बन्ध में सुझाव माँगे। इस 'समिति' ने अपनी 1946 की रिपोर्ट में धार्मिक और नैतिक शिक्षा की विषय-सामग्री के सम्बन्ध मे निम्नांकित सुझाव दिए है :—

(क) *शिक्षा की प्रत्येक योजना मे जीवन के नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को स्थान दिया जाय।*

(ख) सब धर्मों के सामान्य नैतिक और आध्यात्मिक सिद्धान्तों को पाठ्यक्रम का अभिन्न अग बनाया जाय।

(ग) सब धर्मों की सम्मति से उनके सामान्य नैतिक और आध्यात्मिक सिद्धान्तो का शैक्षिक कार्यक्रम तैयार किया जाय।

2. **'विश्वविद्यालय-शिक्षा-आयोग' के सुझाव**—1948 में डा० राधाकृष्णन् की अध्यक्षता मे नियुक्त किए जाने वाले 'विश्वविद्यालय-शिक्षा-आयोग' ने धार्मिक और नैतिक शिक्षा की विषय-वस्तु के बारे में अधोलिखित सुझाव दिए हैं :—

(1) **विद्यालय-स्तर**—विद्यालय-स्तर, विशेष रूढ से माध्यमिक स्तर के लिए 'आयोग' के सुझाव अग्रलिखित है :—

(i) छात्रों को श्रेष्ठ नैतिक और धार्मिक सिद्धान्तों को व्यक्त करने वाली कहानियाँ पढ़ाई जायँ।

(ii) छात्रो को महान् व्यक्तियों की जीवनियां पढाई जायँ।

(iii) जीवनियों में महान् व्यक्तियों के उच्च विचारों और श्रेष्ठ भावनाओं का समावेश किया जाय।

(iv) कहानियाँ और जीवनियाँ—श्रद्धा, सुन्दरता और सज्जनता से लिखी जायँ।

(2) विश्वविद्यालय-स्तर—विश्वविद्यालय-स्तर के लिए 'आयोग' के सुझाव इस प्रकार हैं :—

(i) डिग्री कोर्स के प्रथम वर्ष मे बुद्ध, कन्फ्यूसियस, ज़ोरोस्टर, सुकरात, ईसा, शकर, रामानुज, माधव, मोहम्मद, कबीर, नानक, गाधी आदि महान् धार्मिक नेताओं की जीवनियाँ पढ़ाई जायँ।

(ii) द्वितीय वर्ष मे ससार के धार्मिक ग्रन्थों मे से सार्वभौमिक महत्त्व के चुने हुए भागो को पढ़ाया जाय।

(iii) तृतीय वर्ष में धर्म-दर्शन की मुख्य समस्याओ का अध्ययन किया जाय।

3. 'धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा-समिति' के सुझाव—भारत-सरकार ने अगस्त, 1959 में श्री श्रीप्रकाश की अध्यक्षता मे 'धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा-समिति' (Committee on Religious & Moral Instruction) की नियुक्ति की। इस 'समिति' ने जनवरी, 1960 में अपनी रिपोर्ट सरकार के समक्ष प्रस्तुत की, और उसमें धार्मिक एव नैतिक शिक्षा की विषय-सामग्री के सम्बन्ध में निम्नांकित विचार व्यक्त किये है :—

(1) शिक्षा के सब स्तर—प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय-स्तर तक के लिए 'समिति' के सुझाव इस प्रकार हैं :—

(i) छात्रों को सब धर्मों के आधारभूत विचारों की शिक्षा तुलनात्मक विधि से दी जाय।

(ii) छात्रों को महान् धार्मिक नेताओं की जीवनियों और शिक्षाओ के सार से अवगत कराया जाय।

(iii) जैसे-जैसे छात्रों का मानसिक विकास होता जाय, वैसे-वैसे उनको नैतिक, दार्शनिक और आध्यात्मवादी सिद्धान्तों से परिचित कराया जाय।

(iv) प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय-स्तर तक के लिए उपयुक्त धार्मिक और नैतिक पुस्तकें तैयार कराई जायँ।

(2) प्राथमिक स्तर—प्राथमिक स्तर के लिए 'समिति' के सुझाव इस प्रकार हैं :—

(i) छात्रों में सेवा की भावना का विकास किया जाय।

(ii) छात्रों को प्रति सप्ताह दो घण्टे (Periods) नैतिक शिक्षा प्रदान की जाय।

(iii) छात्रों को संतों और वर्ण-प्रवर्त्तकों के जीवन और उपदेशो से सम्बन्धित सरल और रोचक कहानियाँ पढ़ाई जायँ ।

(iv) छात्रों के समक्ष मुख्य धर्मों से सम्बन्धित कला और स्थापत्य-कला की वस्तुओं को श्रव्य-दृश्य सामग्री के रूप में प्रस्तुत किया जाय ।

(3) **माध्यमिक स्तर**—माध्यमिक स्तर के लिए 'समिति' के सुझाव अग्रलिखित है :—

(i) छात्रों को संसार के महान् धर्मों के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाय ।

(ii) छुट्टियों और विद्यालय की पढ़ाई के वाद अतिरिक्त पाठ्यक्रम क्रियाओ के रूप में समाज-सेवा दलों के द्वारा छात्रों में समाज-सेवा की भावना का विकास किया जाय ।

(4) **विश्वविद्यालय-स्तर**—विश्वविद्यालय-स्तर के लिए 'समिति' के सुझाव इस प्रकार है :—

(i) डिग्री कोर्स के सामान्य शिक्षा के पाठ्यक्रम में विभिन्न धर्मो के सामान्य अध्ययन को अनिवार्य अग बनाया जाय ।

(ii) डिग्री कोर्स के प्रथम और द्वितीय वर्षों में धर्म और पवित्र ग्रन्थो को पढ़ाया जाय ।

(iii) स्नातकोत्तर कोर्स में धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय ।

4. **शिक्षा-आयोग के सुझाव**—1964 मे प्रोफ़ेसर डी० एस० कोठारी की अध्यक्षता में नियुक्त किये जाने वाले 'शिक्षा-आयोग' ने धार्मिक और नैतिक शिक्षा की विषय-सामग्री के सम्बन्ध में अधोलिखित विचार व्यक्त किये है :—

(1) **विद्यालय-स्तर**—विद्यालय-स्तर के लिए 'आयोग' के सुझाव इस प्रकार है :—

(i) छात्रों को आधारभूत नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक मूल्यो की शिक्षा दी जाय; यथा—सत्यता, ईमानदारी, सामाजिक उत्तरदायित्व, पशुओं पर दया, वयोवृद्ध लोगों के प्रति सम्मान, दु:खी और दरिद्रों के प्रति सहानुभूति इत्यादि ।

(ii) उक्त मूल्यों को विद्यालय के कार्यक्रमों का अभिन्न अंग बनाया जाय ।

(iii) उक्त मूल्यों की शिक्षा देने के लिए समय-तालिका मे प्रति सप्ताह कुछ घण्टे निर्धारित किये जायँ ।

(iv) विद्यालयों के पाठ्यक्रमो में ससार के सब धर्मों को उचित स्थान दिया जाय ।

(v) सम्पूर्ण देश के लिए समान पाठ्यक्रम की समान पुस्तकों को राष्ट्रीय स्तर पर धर्म के विद्वानों द्वारा तैयार करवाया जाय ।

(vi) प्राथमिक स्तर पर भारत और संसार के महान् धर्मों से चुनी गई रोचक कहानियों द्वारा आधारभूत मूल्यो और जीवन की समस्याओं की शिक्षा दी जाय।

(vii) माध्यमिक स्तर पर उक्त मूल्यों और समस्याओ पर शिक्षक और छात्रों द्वारा विचार-विमर्श किया जाय।

(viii) माध्यमिक स्तर की उच्च कक्षाओ में महान् धार्मिक और आध्यात्मिक नेताओं की कहानियाँ पढ़ाई जायें।

(ix) माध्यमिक विद्यालयों में अन्तिम दो वर्षों में छात्रों द्वारा विश्व के महान धर्मों के प्रमुख सिद्धान्तों का अध्ययन किया जाय।

(2) विश्वविद्यालय-स्तर—विश्वविद्यालय-स्तर के लिए 'आयोग' के सुझाव इस प्रकार हैं :—

(i) छात्रो को व्यक्ति के सम्मान, समानता, सामाजिक न्याय, कल्याणकारी राज्य आदि की शिक्षा दी जाय।

(ii) छात्रों में नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक मूल्यो का विकास करने के लिए भारत में अन्य देशों की संस्कृतियों से सामग्री का सकलन किया जाय।

(iii) प्रथम डिग्री कोर्स के पाठ्यक्रम मे संसार के विभिन्न धर्मों के सामान्य अध्ययन को स्थान दिया जाय।

(iv) डिग्री कोर्स के प्रथम वर्ष में महान् धार्मिक नेताओ की जीवनियाँ पढ़ाई जायें।

(v) उक्त कोर्स के द्वितीय वर्ष में संसार के धार्मिक ग्रन्थो में से सार्वभौमिक महत्त्व के चुने हुए भागो को पढ़ाया जाय।

(vi) उक्त कोर्स के तृतीय वर्ष में धर्म-दर्शन की मुख्य समस्याओ का अध्ययन किया जाय।

(vii) विश्वविद्यालयों के तुलनात्मक धर्म-विभागों द्वारा उपयुक्त धार्मिक और नैतिक साहित्य तैयार किया जाय।

धार्मिक व नैतिक शिक्षा की विधियाँ
Methods of Religious & Moral Instruction

धार्मिक और नैतिक शिक्षा की विधियों के बारे में अपना मत व्यक्त करते हुए 'शिक्षा-आयोग' (Education Commission) ने लिखा है :—"हमारा विश्वास है कि यह शिक्षा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष—दोनों विधियों से दी जानी चाहिए। हम अप्रत्यक्ष प्रभाव के कार्य को अधिक महत्त्व देते हैं।" हम प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष विधियों पर अधोलिखित पंक्तियों में दृष्टिपात कर रहे है :—

(1) **प्रत्यक्ष विधियाँ : Direct Methods**—धार्मिक और नैतिक शिक्षा देने की प्रत्यक्ष विधियाँ अग्रलिखित हो सकती है :—

1. समय-तालिका में धार्मिक और नैतिक शिक्षा के लिए निर्धारित घण्टे।
—**Education Commission**
2. शिक्षक द्वारा छात्रों को धार्मिक और नैतिक कहानियों, घटनाओं पौराणिक कथाओं आदि का सुनाया जाना।—**Mohiyuddin.**
3. शिक्षक द्वारा छात्रों को धार्मिक, नैतिक और सामाजिक मूल्यों की शिक्षा।—**Education Commission.**
4. शिक्षक द्वारा छात्रों को महान् धार्मिक और सामाजिक नेताओं की जीवनियाँ और आत्म-कथायें सुनाया जाना।—**Mohiyuddin.**
5. छात्रों द्वारा नैतिक पुस्तकों, धार्मिक ग्रन्थों, धार्मिक समस्याओं और तुलनात्मक धर्म का अध्ययन।
—**University Education Commission.**
6. छात्रों और शिक्षक में धार्मिक और नैतिक विषयों पर विचार-विमर्श, और छात्रों द्वारा प्रश्न पूछा जाना।—**Mohiyuddin.**
7. किसी धार्मिक या नैतिक सिद्धान्त के विषय में छात्र के मस्तिष्क में सन्देह उत्पन्न होने पर शिक्षक द्वारा परामर्श और उसका निवारण किया जाना।—**Mohiyuddin.**
8. खेल, कार्य आदि के समय छात्रों के समक्ष उत्पन्न होने वाली नैतिक समस्याओं के सम्बन्ध में शिक्षक द्वारा उनका पथ-प्रदर्शन किया जाना।—**Mohiyuddin.**

(2) अप्रत्यक्ष विधियाँ : Indirect Methods—धार्मिक और नैतिक शिक्षा देने की अप्रत्यक्ष विधियाँ निम्नलिखित हो सकती है :—

1. मौन चिन्तन : Silent Meditation—राधाकृष्णन् आयोग का कथन है कि सब शिक्षा-संस्थाओं का कार्य कुछ मिनट के मौन चिन्तन के बाद आरम्भ होना चाहिए।

2. प्रातःकालीन सभा : Morning Assembly—अनेक शिक्षाविदों का विचार है कि विद्यालय का कार्य आरम्भ होने से पूर्व प्रातःकालीन सभा का आयोजन किया जाय। इस सभा में विद्यालय के सब छात्र सामूहिक रूप से उपासना करने के लिए एकत्र हों। उपासना के अनेक रूप हो सकते है; जैसे—मौन प्रार्थना, धार्मिक संगीत, किसी धार्मिक गीत का गायन या किसी श्रेष्ठ धार्मिक ग्रन्थ का पढ़कर सुनाया जाना।

प्रातःकालीन सभा की उपयोगिता बताते हुए हुमायूँ कबीर ने लिखा है :—
"दैनिक सभा—सम्मिलित उपासना या महान् ग्रन्थों के वाचन के द्वारा छात्रों को जीवन के कुछ उच्चतम मूल्यों के सम्पर्क में आने और मानवीय आदर्शों एवं महत्वाकांक्षाओं की मूलभूत एकता को समझने का अवसर देती है।"

3. धार्मिक समारोह : Religious Celebrations—सभी विद्यालयों में महान् धर्म-प्रवर्त्तकों के जन्मोत्सव और सभी धर्मों के धार्मिक उत्सव मनाये जायें। इन अवसरों पर विभिन्न धर्मों के सार्वभौमिक सिद्धान्तों पर व्याख्यान और उपदेश दिये जायें।

इन उत्सवों के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए सुल्तान मुहीउद्दीन ने लिखा है :—**"ये उत्सव धार्मिक भावना को प्रोत्साहित करने और जीवित रखने में एवं धार्मिक वातावरण का निर्माण करने में सहायता देते हैं।"**

4. विद्यालय का सामुदायिक जीवन : Corporate Life of School—विद्यालय के सामुदायिक जीवन को धार्मिक और विशेष रूप से नैतिक शिक्षा देने का महत्त्वपूर्ण साधन बनाया जा सकता है। शिक्षक और छात्र को, एवं एक छात्र और दूसरे छात्र को अपने पारस्परिक सम्बन्धों में, नैतिक नियमों का प्रयोग करने और सीखने का सुनहरा अवसर मिलता है।

खेल के मैदान में भी यह अवसर प्राप्त होता है। वास्तव मे, 'शिष्ट आचरण करना' (Playing the game)—एक अति श्रेष्ठ मानव-गुण है। छात्रों में इस गुण को विद्यालय ही उत्पन्न कर सकता है। रॉस के अनुसार :—**"ऐसा विद्यालय, पर्वत के शिखर पर मौजूद प्रकाश की तरह होगा, जिसे छिपाया नहीं जा सकता है।"**

5. सामूहिक कार्य : Group Work—'शिक्षा-आयोग' ने छात्रो में धार्मिक, नैतिक और सामाजिक मूल्यों का विकास करने के लिए विभिन्न प्रकार के सामूहिक कार्यों का सुझाव दिया है; जैसे—समाज-सेवा-कार्य-अनुभव (Work Experience) सामूहिक खेल-कूद, आदि। पाश्चात्य देशों में इस प्रकार के सामूहिक कार्य बहुत लाभप्रद सिद्ध हुए हैं। अमरीका का उदाहरण देते हुए, रोसेक ने लिखा है :—**"अध्ययनों से सिद्ध होता है कि समूह में ही हमारे धार्मिक मूल्यों, दृष्टिकोणों और आदतों का सर्वोत्तम प्रकार से विकास होता है।"**

"Studies show that it is in the group that our religious values, attitudes, and habits are most effectively developed."—**Joseph S. Roucek** : *Sociological Foundations of Education*, pp. 544-545.

रूस में, जहाँ चर्च या धर्म का उन्मूलन कर दिया गया है, सामूहिक कार्य का प्रयोग छात्रों को नैतिक शिक्षा देने के लिए किया जाता है। राजा रायसिंह के अनुसार :—**"आचरण के वांछनीय लक्षणों का विकास करने के लिए सामूहिक कार्य को सबसे अधिक महत्त्व दिया जाता है।"**

"For developing the desirable traits of conduct, work in a group is given central importance."—**Raja Roy Singh** : *Education in the Soviet Union*, p. 132.

6. विद्यालयों के बालकों के लिए नियम : Rules for School Children—राजा राय सिंह ने लिखा है कि रूस मे नैतिक शिक्षा का उद्देश्य है—बालकों में देश-

प्रेम, अनुशासन, संगठन और ईमानदारी की भावना एवं कार्य और सार्वजनिक सम्पत्ति के प्रति उचित दृष्टिकोण का विकास करना। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए "विद्यालयों के बालकों के लिए नियम" बनाये गये हैं। इन नियमों का पालन करने से बालकों में नैतिक और सामाजिक मूल्यो का पूर्ण विकास हो जाता है। साथ ही उनके कार्य और विचार, समाज की माँगों के अनुकूल बन जाते है। भारत में भी इस प्रकार के नियमों का निर्माण किया जाना आवश्यक है।

7. **सुझाव व प्रेरणा : Suggestion & Inspiration**—बालकों के मस्तिष्क में धार्मिक और नैतिक आदर्शों का समावेश बलपूर्वक या आदेश द्वारा नही किया जा सकता है। ऐसा करने के लिए शिक्षक को उन्हे सुझाव और प्रेरणा देनी चाहिए। सुझाव देने की सर्वोत्तम विधि बताते हुए **'विश्वविद्यालय-शिक्षा-आयोग'** ने लिखा है :—**"सुझाव की सर्वोत्तम विधि—व्यक्तिगत उदाहरण, दैनिक जीवन और कार्य के द्वारा है।"**

8. **विद्यालय का वातावरण : Atmosphere of School**—धार्मिक और नैतिक विकास के अभाव में बालक का बौद्धिक विकास अर्थहीन है। अतः बौद्धिक विकास के साथ-साथ, उसका धार्मिक और नैतिक विकास भी किया जाना आवश्यक है। उसका यह विकास पाठो द्वारा शिक्षा देकर नही किया जा सकता है। यह तभी सम्भव है जब विद्यालय का सम्पूर्ण वातावरण इस प्रकार का हो कि बालक को अपनी नैतिक उन्नति करने के लिए धार्मिक बल प्राप्त हो।

यह वातावरण किस प्रकार का होना चाहिए, इसके सम्बन्ध मे **'विश्वविद्यालय-शिक्षा-आयोग'** ने अपना मत इन शब्दों में अंकित किया है :—**"यदि हमारी शिक्षा-संस्थाएँ छात्रों को धार्मिक बल प्रदान करना चाहती हैं, तो उनमें सादगी और पवित्रता का वातावरण होना चाहिए, जो जीवन पर स्थायी प्रभाव डालता है।"**

उपसंहार

युगों के अन्त और परिवर्तन, साम्राज्यों के उत्थान और पतन, आततायियो के आगमन और प्रस्थान के बावजूद भी हमारे जीवन के धार्मिक और नैतिक प्रवाह में सहस्रों वर्ष बाद भी कोई विशेष शिथिलता नही आई है। भौतिकवाद की ओर तेजी से बढ़ते हुए भी हमारे अपने धार्मिक विचार, नैतिक आदर्श, आध्यात्मिक मूल्य और सामाजिक मान्यताएँ है। अतः हमारी शिक्षा इनकी ओर से अपना मुँह मोड़कर हमारा भला नही कर सकती है। भला यह तभी कर सकती है, जब यह धर्म और नैतिकता को अपना अभिन्न अग बनाये, विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में इनको गौरवपूर्ण पद प्रदान करे, सब विषयों के शिक्षण से इनका सह-सम्बन्ध स्थापित करे।

इतने पर भी शायद कुछ दुराग्रही और हठवादी—धर्म-निरपेक्षता की आड़ लेकर यह झूठा दावा करने की कोशिश करें कि नैतिक शिक्षा भले ही दी जाय, पर

धार्मिक शिक्षा देना—धर्म की स्वतन्त्रता प्रदान करने वाले भारत के भाल पर काला धब्बा लगाना है। इन व्यक्तियों के लिए हमारे पास महायोगी श्री अरविन्द का यह उत्तर है :—"चाहे धर्म की किसी रूप में स्पष्ट शिक्षा दी जाय या नहीं, पर ईश्वर के लिए, मानवता के लिए, देश के लिए, दूसरों के लिए और इन सबमें अपने जीवित रहने के लिए—धर्म के इस सार को प्रत्येक विद्यालय का आदर्श बनाया जाना आवश्यक है।"

"Whether distinct teaching in any form of religion is imparted or not, the essence of religion, to live for God, for humanity, for country, for others, and for oneself, in these must be made the ideal in every school."—Shri Aurobindo : *A True National Education*, p. 13.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Examine critically the need for and importance of religious and moral instruction in our schools.

हमारे विद्यालय में धार्मिक और नैतिक शिक्षा की आवश्यकता और महत्त्व की समीक्षा कीजिए।

2. What should be the form of religious and moral instruction, and how should it be imparted ?

धार्मिक और नैतिक शिक्षा का क्या रूप होना चाहिए, और यह किस प्रकार प्रदान की जानी चाहिए ?

खण्ड चार

शिक्षा के दार्शनिक आधार
PHILOSOPHICAL BASES OF EDUCATION

"शिक्षा वह प्रयोगशाला है, जिसमें दार्शनिक विचारों को परीक्षित एवं मूर्त्त रूप प्रदान किया जाता है।" —John Dewey.

- दर्शन व शिक्षा
  Philosophy & Education
- शिक्षा में आदर्शवाद
  Idealism in Education
- शिक्षा में प्रकृतिवाद
  Naturalism in Education
- शिक्षा में प्रयोगवाद या प्रयोजनवाद
  Pragmatism in Education
- शिक्षा में यथार्थवाद
  Realism in Education

21

दर्शन व शिक्षा
PHILOSOPHY & EDUCATION

"वास्तविक दर्शन वह है, जिसमें युवकों को जीवन के प्रति उचित दृष्टिकोण को अपनाने के लिए प्रेरित करने और सम्पूर्ण समाज में शिक्षा के उचित विचारों को ग्रहण करने की शक्ति होती है, चाहे उस दर्शन के उद्देश्य या विशेषताएँ कुछ भी क्यों न हों।"

"A true philosophy, whatever else its purpose or merits, must bear the tests, both of inspiring youth with right attitudes toward life, and of inculcating correct views of education throughout society."—George F. Partridge.

विषय-प्रवेश

जी० के० चेस्टर्टन (G. K. Chesterton) ने अपने एक निबन्ध में लिखा है, कि—"कुछ लोगों का विचार है कि मनुष्य के विषय में सबसे व्यावहारिक एवं प्रमुख वस्तु, ब्रह्माण्ड के विषय में उसका दृष्टिकोण है। मकान-मालकिन के लिए यह जानना बहुत महत्त्वपूर्ण है कि उसके बनने वाले किरायेदार की आय क्या है, परन्तु उसके लिए यह जानना कि उसका जीवन-दर्शन क्या है और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। सेनापति के लिए शत्रु से लड़ने के लिए उसकी सेना की संख्या को जानना तो महत्त्वपूर्ण है ही, परन्तु इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण शत्रु के दर्शन को जानना आवश्यक है।"

यदि पाठक यह स्वीकार करने के लिए तैयार है कि यह बात मकान को किराये पर उठाने तथा शत्रु से युद्ध करने के सांसारिक कार्यों के विषय में सच हो सकती है, तो उसे इस बात पर आश्चर्य नहीं करना चाहिए कि—"शिक्षा-सम्बन्धी

समस्त प्रश्न अन्ततः जीवन-दर्शन से सम्बन्धित प्रश्न हैं।" इस सम्बन्ध में रॉस ने लिखा है कि—"पाठक को यह नही सोचना चाहिए कि इस तरह की बात कहकर व्यावहारिक एवं तात्कालिक बात को अमूर्त्त (Abstract) तथा दूरकालिक बात में बदलने का प्रयास किया जा रहा है।" रॉस के अनुसार इस कथन का अर्थ यह है कि विद्यालय में अध्ययन करने वाले अन्यमनस्क स्वप्नदर्शी विद्यार्थी को विद्यालयों में पढ़ाने वाले अध्यापक को सन्मार्ग बताने के लिए बुलाया जा रहा है। यदि 'फिलॉसफी या दर्शन' और 'शिक्षा' शब्दों के अर्थ को देखा जाय तो यह निश्चय हो जायगा कि ये दोनों विचार (Notions) उसी तरह एक ही वस्तु के विभिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत करते है, जैसे—सिक्के के दो पहलू। नीचे इन दोनों का पृथक्-पृथक् अर्थ स्पष्ट किया जा रहा है :—

दर्शन का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Philosophy

(अ) दर्शन का अर्थ : **Meaning of Philosophy**—'Philosophy' शब्द की उत्पत्ति दो यूनानी शब्दों से हुई है—'Philos' जिसका अर्थ है 'Love' और 'Sophia' जिसका अर्थ है—'of Wisdom'। इस प्रकार, 'Philosophy' (दर्शन) का अर्थ है—'Love of wisdom' (ज्ञान से प्रेम)। इस सम्बन्ध में जॉन ड्यूवी ने लिखा है :—**"जब कभी दर्शन को गम्भीरता से समझा गया है, तब सदैव यह धारणा रही है कि इसका अर्थ विद्वत्ता या ज्ञान प्राप्त कर लेना है जो जीवन के मार्ग को प्रभावित करता है।"**

"Whenever philosophy has been taken seriously, it has *always* been assumed that it signified a wisdom that would influence the conduct of life."—**John Dewey.**

अतः हम कह सकते है कि दर्शन का सम्बन्ध ज्ञान से है, और दर्शन ज्ञान को व्यक्त करता है :—

(ब) दर्शन की परिभाषा : **Definition of Philosophy**—हम दर्शन के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ आगे दे रहे है :—

1. ब्राइटमैन :—**"दर्शनशास्त्र को एक ऐसे प्रयास के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसके द्वारा मानव—अनुभूतियों के सम्बन्ध में समग्र रूप में सत्यता से विचार किया जाता है अथवा जो सम्पूर्ण अनुभूतियों को बोधगम्य बनाता है।"**

"Philosophy may be defined as the attempt *to think truely* about human experience as a whole or to make our *whole experience* intelligible."—**Brightman.**

2. बरट्रेण्ड रसल :—**"अन्य विद्याओं के समान दर्शन का मुख्य उद्देश्य—ज्ञान की प्राप्ति है।"**

"Philosophy, like all other studies, aims primarily at knowledge."—Bertrand Russell.

3. आर० डब्ल्यू० सेलर्स :—"दर्शन एक व्यवस्थित विचार द्वारा विश्व और मनुष्य की प्रकृति के विषय में ज्ञान प्राप्त करने का निरन्तर प्रयत्न है।"

"Philosophy is a persistent attempt to gain insight into the nature of the world and of ourselves by means of systematic reflection."—R. W. Sellars.

उपर्युक्त व्याख्याओं के आधार पर हम दर्शन के अर्थ को स्पष्ट कर सकते है। दर्शन—प्रकृति, व्यक्तियों और वस्तुओं तथा उनके लक्ष्यों और उद्देश्यों के बारे में निरन्तर विचार करता है। यह ईश्वर, ब्रह्माण्ड और आत्म के रहस्यों और इनके पारस्परिक सम्बन्धों पर प्रकाश डालता है। जो व्यक्ति इनसे सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयत्न करता है, उसे हम दार्शनिक कहते हैं। रॉस ने लिखा है—"वे सब लोग जो सत्यता एवं साहस से उपर्युक्त प्रश्नों का कोई उत्तर देने का प्रयत्न करते हैं और जिन उत्तरों में कुछ सुसंगति (Consistency) तथा तर्कबद्धता होते हैं, वे दार्शनिक होते हैं—चाहे वे भौतिकवादी, धर्म-शास्त्री (Theologists) या अज्ञेयवादी (Agnostics) हों।"

हम सत्य के किस स्वरूप को स्वीकार करते है ? यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम किस प्रकार के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं धार्मिक वातावरण के अन्तर्गत रह रहे है। हम चाहते हैं कि अन्य व्यक्ति भी हमारे विचारों को स्वीकार करें। हम अपने विचारों को दूसरों से स्वीकार कराने के लिए उन पर विभिन्न रीतियों एवं साधनों से प्रभाव डालने का प्रयत्न करते है। यही शिक्षा की पृष्ठभूमि है।

दर्शन का विषय-क्षेत्र
Scope of Philosophy

'दर्शन' के अर्थ से अवगत हो जाने के उपरान्त, हमारे समक्ष एक स्वाभाविक प्रश्न यह उपस्थित होता है कि हम 'दर्शन' में किन बातों का अध्ययन करते है। भारतीय विचारधारा में दर्शन और जीवन में किसी प्रकार का अन्तर नहीं है। अतः सम्पूर्ण जीवन को दर्शन का क्षेत्र माना गया है। इसी प्रकार, प्राचीन यूनान में भी सम्पूर्ण जीवन को दर्शन के क्षेत्र के अन्तर्गत स्थान दिया गया था। किन्तु, पाश्चात्य दर्शन के प्रभाव के कारण इसका विषय-क्षेत्र निरन्तर विस्तृत होता चला जा रहा है। सामान्य रूप में, एक शास्त्र के रूप में दर्शन के अन्तर्गत निम्नलिखित विषयों का अध्ययन किया जाता है :—

1. **आत्मा-सम्बन्धी तत्त्व-ज्ञान : Metaphysics of Soul**—इसमें आत्मा से सम्बन्धित प्रश्नों पर विचार किया जाता है; यथा :—आत्मा क्या है ? जीव क्या है ? आत्मा का शरीर से क्या सम्बन्ध है ? इत्यादि।

2. **ईश्वर-सम्बन्धी तत्त्व-ज्ञान : Theology**—इसमें ईश्वर-विषयक प्रश्नों के

उत्तर खोजे जाते हैं; यथा :—ईश्वर का अस्तित्व है या नहीं ? यदि ईश्वर का अस्तित्व है, तो इस बात के क्या प्रमाण हैं ? ईश्वर का स्वरूप कैसा है ? इत्यादि।

3. सत्ता-शास्त्र : Ontology—इसमें अमूर्त सत्ता अथवा वस्तुओं के तत्त्व के स्वरूप का अध्ययन किया जाता है; यथा :—ब्रह्माण्ड के नश्वर तत्त्व क्या है ? ब्रह्माड के अक्षर तत्त्व कौन-कौन-से है ? इत्यादि।

4. सृष्टि-शास्त्र : Cosmology—इसमें सृष्टि की रचना एवं विकास से सम्बन्धित समस्याओं पर विचार किया जाता है; यथा :—क्या सृष्टि अथवा ब्रह्माण्ड की रचना भौतिक तत्त्वों से हुई है ? क्या ब्रह्मांड का निर्माण आध्यात्मिक तत्त्वों से हुआ है ? इत्यादि।

5. सृष्टि-उत्पत्ति का शास्त्र : Cosmogony—इसमें सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में विचार किया जाता है; यथा :—सृष्टि अथवा विश्व की उत्पत्ति किस प्रकार हुई है ? क्या इसकी रचना की गई है ? यदि हाँ, तो इसकी रचना किसने की है ? इत्यादि।

6. ज्ञान-शास्त्र : Epistemology—इसमें सत्य ज्ञान से सम्बन्धित समस्याओं का हल खोजा जाता है; यथा :—सत्य ज्ञान क्या है ? इस ज्ञान को प्राप्त करने के कौन-से साधन है ? क्या मानव-बुद्धि इस ज्ञान को प्राप्त कर सकती है ? इत्यादि।

7. नीति-शास्त्र : Ethics—इसमें व्यक्ति के शुद्ध एवं अशुद्ध आचरण से सम्बन्ध रखने वाली बातों का अध्ययन किया जाता है; यथा :—मनुष्य को क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए ? इत्यादि।

8. तर्क-शास्त्र : Logic—इसमे तार्किक चिन्तन के विषय में विचार किया जाता है; यथा :—तार्किक चिन्तन का स्वरूप क्या है ? तर्क की विधि क्या है ? इत्यादि।

9. सौंदर्य-शास्त्र : Aesthetics—इसमें सौन्दर्य-विषयक प्रश्नों के उत्तर खोजे जाते हैं; यथा :—सौन्दर्य क्या है ? सौन्दर्य का मापदण्ड क्या है ? इत्यादि।

दर्शन के अन्तर्गत अध्ययन किए जाने वाले उपरिउल्लिखित विषयों को कुछ दार्शनिकों ने निम्नांकित तीन विभागों में स्थान दिया है :—

दर्शन
↓

तत्त्व-ज्ञान (Metaphysics)	6. ज्ञान-शास्त्र (Epistemology)	मूल्य-मीमांसा (Axiology)
1. आत्मा-सम्बन्धी तत्त्व-ज्ञान		7. नीति-शास्त्र
2. ईश्वर-सम्बन्धी तत्त्व-ज्ञान		8. तर्क-शास्त्र
3. सत्ता-शास्त्र		9. सौंदर्य-शास्त्र
4. सृष्टि-शास्त्र		
5. सृष्टि-उत्पत्ति का शास्त्र		

शिक्षा का अर्थ
Meaning of Education

शिक्षा के अर्थ एवं उसकी परिभाषाओं का विस्तृत विवेचन प्रथम अध्याय में किया जा चुका है। परन्तु इस सम्बन्ध में यहाँ कुछ शब्द कहना अनुपयुक्त होगा। 'Education' शब्द का व्युत्पत्तिशास्त्र (Etymological) सम्बन्धी अर्थ 'बाहर ले चलने या निकालने' की कला से लगाया जाता है। रॉस ने लिखा है :—"यदि हम शिक्षा को दर्शन का क्रियात्मक पक्ष मानकर चलें, तो इस शब्द का वास्तविक या कल्पित व्युत्पत्ति की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छा और व्यापक अर्थ हमारे सामने आता है ? क्योंकि इस दृष्टिकोण से शिक्षा का अर्थ 'बाहर निकालने' मात्र तक ही सीमित नहीं रहता है।"

सर जॉन एडम्स (Sir John Adams) का मत है :—"शिक्षा, दर्शन का क्रियात्मक पहलू है। यह दार्शनिक विश्वास का सक्रिय पहलू तथा जीवन के आदर्शों को वास्तविक रूप देने का क्रियात्मक साधन है।" सामान्यतः शिक्षा वह प्रभाव है, जो किसी प्रबल विश्वास से युक्त व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति पर इस ध्येय से डाला जाता है कि वह दूसरा व्यक्ति भी उसी विश्वास को ग्रहण कर ले। एडम्स ने शिक्षा-विषयक अपने विश्लेषण मे अधोलिखित बातें रखी हैं :—

1. शिक्षा एक द्विमुखी प्रक्रिया है, जिसमें एक व्यक्तित्व दूसरे व्यक्तित्व के विकास में सुधार करने के लिए उस पर प्रभाव डालता है।
2. यह प्रक्रिया केवल चेतनशील (Conscious) ही नही, वरन् आयोजित (Deliberate) भी है। शिक्षक या गुरु के मन मे स्पष्ट रूप से यह आशय होता है कि वह शिष्य के विकास को सुधारे।
3. शिष्य के विकास को सुधारने के दो साधन हैं—(क) शिक्षक के व्यक्तित्व का शिष्य के व्यक्तित्व पर सीधा प्रभाव डालना, और (ख) ज्ञान के विभिन्न रूप का प्रयोग।

शिष्य के स्वभाव में सुधार किस दिशा में होना चाहिए ? सच्ची शिक्षा कौन सी है ? शिक्षक को किन मूल्यों (Values) की दिशा में प्रभाव डालना चाहिए ? आदि मूलभूत प्रश्नों का कोई सर्वमान्य उत्तर नहीं है, क्योंकि शिक्षा-सम्बन्धी प्रश्न जीवन के आदर्शों से जुड़े हुए हैं। जब तक ये आदर्श पृथक्-पृथक् है, तब तक शिक्षा के इन मूलभूत प्रश्नों का उत्तर भी पृथक्-पृथक् होगा। अतः हम कह सकते है कि शिक्षा, दर्शन पर आधारित है और दार्शनिक सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप प्रदान करती है। यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि जो व्यक्ति वस्तुतः दार्शनिक है, वह स्वभावतः शिक्षाशास्त्री भी बन जाता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि महान् दार्शनिक महान् शिक्षाशास्त्री भी हुए है।

शिक्षा-दर्शन का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Philosophy of Education

आज दर्शन का अर्थ अत्यन्त व्यापक है और इसका क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। इस कारण आज हमारे समक्ष आध्यात्मिक दर्शन (Metaphysics), नैतिक दर्शन (Moral Philosophy) आदि ही नहीं, वरन् सामाजिक दर्शन (Social Philosophy), आर्थिक दर्शन (Economic Philosophy), राजनीतिक दर्शन (Political Philosophy), शिक्षा-दर्शन (Educational Philosophy) आदि शब्द भी आते हैं। उपर्युक्त सभी विषयों में दर्शन का अभिप्राय—तत्सम्बन्धी अन्तिम ज्ञान से लगाया जाता है। अब प्रश्न यह है शिक्षा-दर्शन क्या है? शिक्षा-दर्शन के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए कनिंघम की परिभाषा निम्नलिखित है :—

1. कनिंघम :—"प्रथम, दर्शन 'सभी वस्तुओं का विज्ञान है; इस प्रकार शिक्षा-दर्शन शिक्षा की समस्याओं को अपने सभी मुख्य पक्षों में देखता है। "द्वितीय, दर्शन सभी वस्तुओं को 'अन्तिम तर्कों एवं कारणों के माध्यम से' जानने का विज्ञान है। इसलिए भी, शिक्षा-दर्शन—शिक्षा के क्षेत्र में गहनतर समस्याओं का समग्र रूप में अध्ययन करता है और शिक्षा-विज्ञान के लिए उन समस्याओं को अध्ययन के लिए छोड़ देता है, जो तात्कालिक है तथा जिनका वैज्ञानिक विधि से सरलतापूर्वक अध्ययन किया जा सकता है; उदाहरणार्थ—छात्र-योग्यता के मापन की समस्या।"

"First, philosophy is the science of '*all things*'; so *the philosophy* of education looks at the problem of education in all its main aspects. In the second place, philosophy is the science of all things 'through their ultimate reasons and cause.' So, too, the *philosophy* of education studies only the deeper problems in the field of education as a whole, leaving to the science of education *the study of* those problems which are immediate and can best be approached through the scientific method, e. g. the problem *of measurement of* student ability."—**Cunningham.**

अतः हम कह सकते है कि शिक्षा-दर्शन—दर्शन-शास्त्र की भाँति एक विषय है, जो शिक्षा की गहन समस्याओं पर तर्कपूर्ण ढंग से विचार करता है और शैक्षिक समस्याओं का दार्शनिक ढंग से हल निकालने का प्रयत्न करता है।

दार्शनिक दृष्टिकोण
Philosophical Outlook

यदि कोई व्यक्ति संकट एवं विपरीत परिस्थितियों में शान्त रहता है और परेशान नहीं होता है, तो साधारण बोलचाल में हम यह कहा करते है कि वह घटनाओं के प्रति दार्शनिक दृष्टिकोण रखता है। इसका अर्थ यह है कि उसका साधारण

दृष्टिकोण ऐसा है कि वह जीवन की कठिनाइयों से घबराता नहीं है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि जीवन के विषय में उसका अपना एक दार्शनिक दृष्टिकोण है, जो उसके लिए उपयोगी है। वह उसी के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करने का प्रयास करता है। ऐसा करने में वह कुछ विश्वासों, मूल्यों और आदर्शों को मानता है। जीवन या किसी वस्तु के प्रति उसका विश्वास या दृष्टिकोण ही उसका दार्शनिक दृष्टिकोण कहलाता है।

दार्शनिक दृष्टिकोण को गौतम बुद्ध के उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है :—"जब गौतम बुद्ध रथ पर चढ़कर नगर में घूमने के लिए गये, तो उन्होंने क्रमशः एक मृत व्यक्ति, एक रोगी, एक वृद्ध तथा एक सन्यासी को देखा। इससे उनका हृदय बेचैन हो उठा। उन्होंने अनुभव किया कि इस संसार में दु:ख ही दु:ख है। उनका जीवन के प्रति जो कुछ भी अब तक विश्वास था, वह डगमगा गया। वे विचलित हो गये। वे सोचने लगे कि इस दु:ख का क्या कारण है ? उन्होंने इस दु:ख के कारणों पर विचार किया और दु:ख की समाप्ति के लिए उपाय खोजे।" गौतम बुद्ध ने दु:ख के कारणों एवं समाधान के उपायों को खोजने के लिए जिस ढंग से कार्य किया, उस ढंग में उनका दार्शनिक दृष्टिकोण स्पष्टतः निहित है।

दार्शनिक दृष्टिकोण के लक्षण
Characteristics of Philosophical Outlook

विभिन्न दार्शनिकों के दार्शनिक दृष्टिकोणों के विवेचन से विद्वानों ने दार्शनिक दृष्टिकोण के अग्रलिखित लक्षण बताए हैं :—

1. विस्मय की भावना : Sense of Wonder—दार्शनिक वह व्यक्ति होता है, जो अपने चारों ओर की प्राकृतिक एवं सांसारिक व्यवस्था एवं घटनाओं को देखकर आश्चर्य प्रकट करता है। वह केवल आश्चर्य ही प्रकट करके नहीं रह जाता है वरन् उनके मूल कारणों की खोज में रत हो जाता है; उदाहरणार्थ—गौतम बुद्ध विभिन्न घटनाओं को देखकर बेचैन हो गये और दु:ख के मूल कारणों की खोज में लग गये।

2. सन्देह : Doubt—दार्शनिक प्रत्येक बात के मूल में ठोस प्रमाणों की खोज के लिए प्रत्येक बात को सन्देहात्मक दृष्टि से देखता है।

3. मीमांसा : Criticism—दार्शनिक किसी भी बात को ज्यों का त्यों नहीं स्वीकार करता है, वरन् उसकी मीमांसा करके ही उसको मान्यता प्रदान करता है।

4. चिन्तन : Reflection—मीमांसा के लिए चिन्तन की आवश्यकता होती है। अतः दार्शनिक दृष्टिकोण चिन्तनशील होता है।

5. तटस्थता : Detachment—दार्शनिक, अन्धविश्वासी नहीं होता है। वह तटस्थ भाव से किसी प्रश्न पर चिन्तन करता है। साथ ही, उसमें विचार-स्वातन्त्र्य होता है। वह जनमत आदि से अलग रहता है। वह स्वयं अपने मत का निर्धारण करता है।

दर्शन व शिक्षा में सम्बन्ध
Relation between Philosophy & Education

1. शैक्षिक सिद्धान्त : दार्शनिक विचारों के व्यावहारिक प्रयोग : Educational Doctrines : An Application of Philosophical Ideas—प्रत्येक जीवन-दर्शन एक निश्चित विश्वास पर आधारित होता है। यदि विश्वास—जीवन के लिए उपयोगी है, तो उसका शैक्षिक महत्त्व अवश्य होना चाहिए। अतः दर्शन को शिक्षा से अलग नहीं किया जा सकता है। वस्तुतः दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इतिहास इस बात की पुष्टि करता है। यदि हम विश्व के महान् दार्शनिक प्लेटो, लॉक, कॉण्ट, स्पेंसर—आदि पर दृष्टिपात करें, तो हमें मालूम हो जायेगा कि उनके शैक्षिक सिद्धान्त—उनके दार्शनिक विचारों के व्यावहारिक प्रयोग थे।

2. दर्शन द्वारा जीवन में शिक्षा के महत्त्व की खोज : Enquiry into the Significance of Education in Life by Philosophy—दर्शन में नए शैक्षिक तथ्य नहीं होते है। यह केवल उन तत्त्वों के महत्त्व की छानबीन करता है, जो पहले से मौजूद हैं। यह हमारे शैक्षिक अनुभवों को उसी रूप मे स्वीकार करता है, जिस रूप में वे होते है। यह जीवन में शिक्षा के महत्त्व की खोज करता है। जिस प्रकार कला, धर्म, राज्य आदि का दर्शन है, उसी प्रकार शिक्षा का भी दर्शन है। जिस प्रकार इनके तथ्य हैं, उसी प्रकार शिक्षा के भी तथ्य है। इन सभी तथ्यों का हमारे जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

एच० एच० हॉर्न के अनुसार :—"सभी तथ्य अन्त में एक-सा ही अर्थ रखते हैं, पर उनके अर्थों की समानता में अपना स्वयं का अनोखापन है। जिस प्रकार सड़कों पर लगे हुए संकेत-बोर्ड विभिन्न मार्गों से एक ही नगर को जाने का संकेत करते हैं, उसी प्रकार विभिन्न तथ्य एक ही अर्थ की ओर संकेत करते हैं। वस्तुतः जीवन की वास्तविकता ही दर्शन का ईश्वरीय नगर है, और संकेत-बोर्डों में 'शिक्षा' भी एक है।"

3. दर्शन व शिक्षा—एक सिक्के के दो पहलू : *Philosophy & Education*—Two Sides of a Coin—हॉर्न (Horne) ने लिखा है कि शिक्षा के सब तथ्यों को एक साथ रखने से दो बातों का ज्ञान होता है : (1) शिक्षा, विश्व-प्रक्रिया (World-process) है; (2) शिक्षा, सामयिक-प्रक्रिया (Temporal-process) है। ये ऐसी प्रक्रियाएँ इसलिए है, क्योंकि ये व्यक्ति को अपने जीवन-काल के विश्व और समय के अनुसार पूर्ण बनाने का प्रयास करती हैं। साथ ही, ये विश्व और समय के समस्त अनुभवों को व्यक्ति के विकास के लिए प्रयोग में लाती हैं। इन अनुभवों के निर्माण में दर्शन सहायता देता है। इसलिए, शिक्षा और दर्शन का सम्बन्ध बहुत घनिष्ठ है। इसकी पुष्टि में एडम्स ने लिखा है :—"शिक्षा, दर्शन का गतिशील पहलू है। यह दार्शनिक विश्वास का सक्रिय पक्ष, और जीवन के आदर्शों को प्राप्त करने का व्यावहारिक साधन है।"

"Education is the dynamic side of philosophy. It is the active aspect of philosophical belief, the practical means of realizing the ideals of life."—Sir John Adams.

प्रायः इसी विचार को रॉस ने इन शब्दों में व्यक्त किया है :—"दर्शन और शिक्षा—एक सिक्के के दो पहलुओं के समान हैं। एक में दूसरा निहित है। दर्शन—जीवन का विचारात्मक पक्ष है, और शिक्षा—क्रियात्मक पक्ष।"

4. दर्शन व शिक्षा की पारस्परिक निर्भरता : Mutual Dependence of Philosophy & Education—दर्शन और शिक्षा के घनिष्ठ सम्बन्ध के कारण इनमें पारस्परिक निर्भरता है। दर्शन शिक्षा को प्रभावित करता है और शिक्षा, दार्शनिक दृष्टिकोण पर नियंत्रण रखती है। यही कारण है कि विश्व के सभी महान् शिक्षा-शास्त्री—महान् दार्शनिक हुए हैं। दर्शन और शिक्षा की पारस्परिक निर्भरता को अनेक विद्वानों द्वारा स्वीकार किया गया है। इनमें से कुछ के विचार निम्नलिखित हैं :—

1. फ़िक्टे :—"दर्शन की सहायता के बिना शिक्षा का उद्देश्य कभी भी पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं हो सकता है।"

"The aim of education will never attain complete clearness on itself without philosophy."—Fichte.

2. जेन्टाइल :—"दर्शन की सहायता के बिना शिक्षा की प्रक्रिया सही मार्ग पर नहीं बढ़ सकती है।"

"The process of education cannot go along right line without the help of philosophy."—Gentile.

3. जी० ई० पार्ट्रिज :—"गम्भीर अर्थ में यह कहना बिल्कुल उचित है कि जिस प्रकार शिक्षा 'दर्शन' पर आधारित है, उसी प्रकार दर्शन 'शिक्षा' पर आधारित है।"

"In a very deep sense, it is quite as reasonable to say that philosophy is based upon education, as education is based upon philosophy."—G. E. Partridge.

आजकल दर्शन और शिक्षा में उतनी पारस्परिक निर्भरता नहीं रह गई है, जितनी कि पिछले समय थी। इसका मुख्य कारण यह है कि आधुनिक युग में विज्ञान और विज्ञान की विधियों ने शिक्षा को अत्यधिक प्रभावित किया है। फिर भी शिक्षा, दर्शन से अलग नहीं हो पाई है। अब भी शिक्षा की प्रत्येक समस्या का हल दर्शन में ढूँढा जाता है। रस्क का कथन है :—"शैक्षिक समस्या के प्रत्येक दृष्टिकोण से शिक्षा के दार्शनिक आधार की माँग उठती है। इसलिए, जीवन-दर्शन और शिक्षा-दर्शन से छुटकारा नहीं पाया जा सकता है। जो लोग दर्शन की उपेक्षा पर गर्व प्रकट करते हैं, उनका भी अपना एक दर्शन है जो एक बिल्कुल अपर्याप्त एवं अपूर्ण दर्शन होता है। प्रत्येक मनुष्य, जैसे कि शॉपेनहावर ने कहा है, जन्मजात दार्शनिक होता है।"

"From every angle of the educational problem comes the demand for philosophical basis of the subject. There is no escape from a philosophy of life and of education. Those who pride themselves on their neglect of philosophy have their own philosophy usually a quite inadequate. Every man, as Schopenhaur says, is a born mataphysician."—R. R. Rusk.

दर्शन की आवश्यकता
Need of Philosophy

रस्क (Rusk) के अनुसार, जीवन और शिक्षा—दोनों के लिए दर्शन परम आवश्यक है। आगे हम जीवन तथा शिक्षा—दोनों के लिए दर्शन की आवश्यकता का पृथक्-पृथक् विवेचन कर रहे हैं :—

जीवन के लिए दर्शन की आवश्यकता : Need of Philosophy for Life

सर्वप्रथम दर्शन की आवश्यकता जीवन के लिए होती है, क्योंकि दर्शन द्वारा जीवन को उपयोगी बनाया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह विद्वान् हो या मूढ़, सभी अपना एक जीवन-दर्शन रखते है और उसी जीवन-दर्शन के अनुसार अपने जीवन को व्यतीत करते है। हक्सले (Huxley) का कथन है :—"मनुष्य अपने जीवन-दर्शन तथा संसार के विषय में अपनी धारणा के अनुसार जीवन व्यतीत करता है। यह बात अधिक से अधिक विचारहीन लोगों के विषय में भी सच है। बिना आध्यात्मिक विचार के जीवन व्यतीत करना असम्भव है। हमें इस बात का चयन करने का अवसर नहीं दिया गया है कि आध्यात्मिक विचार को ग्रहण किया जाय या नहीं, वरन् अच्छे आध्यात्मिक विचार तथा बुरे आध्यात्मिक विचारों में से चयन करने का अवसर दिया जाता है तथा उस आध्यात्मिक विचार को ग्रहण करने के लिए कहा जाता है, जो निरीक्षित तथा निष्कर्षित वास्तविकता से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होता है।"

जीवन मे दर्शन की आवश्यकता एवं महत्व को स्पष्ट करते हुए रॉस (Ross) ने लिखा है—"यदि कोई मनुष्य विरोधी परिस्थितियों में शान्त रहता है और परेशान नहीं होता है तो साधारण बोलचाल मे हम कहा करते हैं कि—वह घटनाओं को दार्शनिक दृष्टिकोण से देखता है। इसका अर्थ यह है कि वह सामान्य जीवन को कठिनाइयों को ठीक पृष्ठभूमि में देखता है। अत. वह जीवन के विषय मे अपना एक ऐसा दर्शन रखता है जो उसके लिए कुछ उपयोगी है। यदि किसी मनुष्य का जीवन के विषय में कोई विश्वास है, और वह विश्वास केवल दिमागी विश्वास है, तो वह उस विश्वास का एक ज्वलन्त उदाहरण प्रस्तुत करता है। सच्चा जीवन-दर्शन अपने धारक के लिए उस सीमा तक महत्त्वपूर्ण होता है—जहाँ तक वह उसके अनुसार ही जीवन व्यतीत करने का प्रयास करता है।" इस प्रकार, व्यक्ति अपने विश्वास के अनुसार जीवन व्यतीत करने का प्रयास करता है। यदि वह महत्त्वपूर्ण बातों के

बारे में कोई प्रवल विश्वास रखता है, तो वह उसके अनुसार अपने जीवन को व्यतीत करके ही सन्तुष्ट नहीं हो जाता, वरन् वह दूसरों तक उस विश्वास को पहुँचाने का भी प्रयास करता है। अतः दर्शन विभिन्न गुणों की प्राप्ति एवं अवगुणों के त्याग, रहन-सहन के विशेष ढंग एवं विशेष कार्यों को करने में उपयोगी एवं आवश्यक होता है।

शिक्षा के लिए दर्शन की आवश्यकता : Need of Philosophy for Education

दर्शन--शिक्षा के लिए परमावश्यक है, क्योंकि जीवन के लिए शिक्षा की आवश्यकता है और जीवन के लिए दर्शन की आवश्यकता है। अतः शिक्षा के लिए दर्शन की आवश्यकता स्वाभाविक है। अतः 'दर्शन' शिक्षा का एक प्रमुख आधार है। दर्शन द्वारा शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि, विद्यालय-संगठन, अनुशासन आदि को एक निश्चित रूप प्रदान किया जाता है। अतः शिक्षा-योजना को सफल बनाने के लिए दर्शन परमावश्यक है।

शैक्षिक दृष्टिकोण से दर्शन का अध्ययन परमावश्यक है, क्योंकि इसके द्वारा शिक्षा का पथ-प्रदर्शन किया जाता है। बटलर का कथन है :—"दर्शन शिक्षा के प्रयोगों के लिए पथ-प्रदर्शक है, शिक्षा अनुसन्धान के क्षेत्र के रूप में दार्शनिक निर्णय के लिए निश्चित-सामग्री को आधार के रूप में प्रदान करती है।"

"Philosophy is a guide to educational practice, education as a field of investigation yields certain data as a basis for philosophical judgment."—**Butler.**

2 दर्शन व शिक्षा के उद्देश्य
Philosophy & Aim of Education

रस्क (Rusk) का मत है शिक्षा के उद्देश्यों का सम्बन्ध जीवन के साध्यों के साथ है। दर्शन इस बात का निर्णय करता है कि जीवन का क्या उद्देश्य होना चाहिए। जब जीवन के उद्देश्यों का निर्धारण दर्शन द्वारा किया जाता है तब शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण भी उसी के द्वारा किया जाना स्वाभाविक है, क्योंकि शिक्षा स्वयं जीवन है और जीवन शिक्षा है। टी० पी० नन ने लिखा है :—"शिक्षा की प्रत्येक योजना अन्ततोगत्वा व्यावहारिक दर्शन है और जीवन के प्रत्येक बिन्दु को आवश्यक रूप से स्पर्श करती है। अतः शिक्षा के कोई भी उद्देश्य, जो निश्चित रूप से पथ-प्रदर्शन करने के लिए पर्याप्त रूप से स्थूल हैं, जीवन के आदर्शों से सम्बन्ध रखते हैं और क्योंकि जीवन के आदर्श सर्वदा भिन्न हुआ करते हैं, इसलिए उनकी भिन्नता शैक्षिक सिद्धान्तों में अवश्य प्रतिबिम्बित होगी।"

"Every scheme of education being at bottom a practical philosophy, necessarily touches life at every point. Hence any

educational aims which are concrete enough to give definite guidanc are correlative to ideals of life and as ideals of life are eternally a variance, their conflict will be reflected in educational theories."

—T. P. Nunn

जैसा कि हम देख चुके है कि जीवन के प्रति दृष्टिकोण का नाम 'दर्शन' है। व्यक्ति इसी दृष्टिकोण के अनुसार अपना जीवन-यापन करता है। अतः जीवन और दर्शन में बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। जीवन के दृष्टिकोण के अनुसार ही शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण होता है। जीवन और शिक्षा से वैसा ही घनिष्ठ सम्बन्ध है जैसा कि दर्शन और जीवन में। अतः जिस प्रकार का हमारा जीवन का दृष्टिकोण होगा उसी प्रकार के शैक्षिक उद्देश्य हमारे द्वारा निर्धारित किये जायेंगे। यदि हमारा दृष्टिकोण केवल भौतिक विकास करना है और भौतिकवादी दृष्टिकोण रखते है, तो हम शिक्षा का उद्देश्य भौतिक सामग्री जुटाने की कला से अवगत कराना निर्धारित करेंगे। यदि हमारा दृष्टिकोण आध्यात्मिक विकास करना या मोक्ष की प्राप्ति करना है, तो हम शिक्षा का उद्देश्य 'आत्मानुभूति' निर्धारण करेंगे, ताकि हम परम सत्ता से एकाकार करने में समर्थ हो सकें। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिस समय लोगों का जीवन के प्रति जैसा दृष्टिकोण रहा, उसी के अनुसार उस काल में शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण किया गया।

उदाहरणार्थ—

1. **भारतवर्ष : India**—प्राचीन भारत में जीवन का चरम लक्ष्य—परम तत्त्व की प्राप्ति था। अतः उस समय शिक्षा का उद्देश्य—आध्यात्मिक उन्नयन निर्धारित किया गया। आज आधुनिक भारत में लोग लोकतान्त्रिक दर्शन (Democratic Philosophy) में आस्था रखते हैं। अतः आज शिक्षा का उद्देश्य—लोकतांत्रिक नागरिकता (Democractic Citizenship) का विकास निर्धारित किया गया है।

2. **स्पार्टा : Sparta**—स्पार्टा के निवासियों का मुख्य आदर्श यह था कि जीवन एक संघर्ष है। इस आदर्श के अनुसार, वहाँ की शिक्षा का उद्देश्य—देश की रक्षा के लिए वीर योद्धाओं का निर्माण करना निर्धारित किया गया था।

3. **एथेन्स : Athens**—एथेन्स के लोगों का लक्ष्य—जीवन को आनन्दपूर्वक व्यतीत करना था अतः वहाँ की शिक्षा का उद्देश्य—बालको को योग्य बनाना था ताकि वे शारीरिक, चारित्रिक एवं कलात्मक सौन्दर्य को प्राप्त करके जीवन को आनन्दपूर्वक व्यतीत कर सकें।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि शिक्षा के उद्देश्यों के निर्धारण में दर्शन का बहुत हाथ है। इस सम्बन्ध में ड्यूवी ने लिखा है :—**"दर्शन, शिक्षा के साध्यों को निर्धारित करने से सम्बन्धित है।"**

"Philosophy is concerned with determining the ends of education."—John Dewey.

3 दर्शन व पाठ्यक्रम
Philosophy & Curriculum

के उद्देश्यों के समान पाठ्यक्रम भी दर्शन पर आधारित है। बोड कथन है :—"पाठ्यक्रम को ठीक प्रकार से निश्चित करने के लिए दार्शवश्यकता है।" इस तथ्य को अधिक स्पष्ट करने के लिए 'Curriculum' देखना आवश्यक है। इस शब्द की उत्पत्ति, लैटिन भाषा के शब्द से हुई र्थ है—'दौड़ का मैदान'। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि यह वह मार्ग है व्यक्ति को अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए पार करना पड़ता है। अब कि 'लक्ष्य' का निर्धारण कौन करता है। इसका स्वाभाविक उत्तर यह का निर्धारण, दर्शन द्वारा किया जाता है। जैसा हमारा लक्ष्य होगा करने के लिए वैसा ही मार्ग निर्धारित किया जायेगा। इस प्रकार, दर्शन निर्धारण में एक महत्त्वपूर्ण आधार का कार्य करता है। ब्रिग्स ने लिखा हैं शिक्षा को ऐसे नेताओं की विशेष आवश्यकता है, जो एक सुनिश्चित एवं न रखते हों, जिससे वे दूसरों को विश्वास दिला सकें कि वे उसके लगातार एक उपयुक्त पाठ्यक्रम के निर्माण में पथ-प्रदर्शन कर सकते हैं।"

It is just here that education seriously needs leaders who ound comprehensive philosophy by which they can convince nd who can direct its consistent application to the formula-appropriate curricula."—B. H. Briggs.

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पाठ्यक्रम पर दर्शन बहुत प्रभाव डालता है। को कुछ उदाहरणों द्वारा और अधिक स्पष्ट किया जा रहा है :—

(i) आदर्शवाद—आदर्शवाद के अनुसार, शिक्षा का उद्देश्य जीवन के शाश्वत प्राप्ति है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम में मानवीय विचारों ों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाता है। इस प्रकार, आदर्शवादी विचारअनुसार पाठ्यक्रम विचार-केन्द्रित होता है।

(ii) प्रकृतिवाद—प्रकृतिवाद, बालक के स्वाभाविक विकास पर अधिक बल इसके अनुसार, शिक्षा का उद्देश्य बालक की वैयक्तिकता का विकास करना : इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम में बालक की तत्कालीन आवश्य-, रुचियों, क्षमताओं आदि को आधार बनाया जाता है। इस प्रकार, प्रकृतिवादी धारा बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम पर बल देती है।

(iii) प्रयोजनवाद—प्रयोजनवादी विचारधारा—उपयोगिता, व्यावहारिकता पर बल देती है। यह बालक को अपने मूल्यों का स्वयं निर्माणकर्ता मानती इस दृष्टिकोण से पाठ्यक्रम में बालक की वर्तमान एवं भावी आवश्यकताओं की के लिए, उपयोगी क्रियाओं को स्थान दिया जाता है। इस प्रकार, प्रयोजनवादी धारा—क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम पर बल देती है।

educational aims which are concrete enough to give definite guidance are correlative to ideals of life and as *ideals of life are eternally at* variance, their conflict will be reflected in educational theories."

—T. P. Nunn.

जैसा कि हम देख चुके है कि जीवन के प्रति दृष्टिकोण का नाम 'दर्शन' है। व्यक्ति इसी दृष्टिकोण के अनुसार अपना जीवन-यापन करता है। अतः जीवन और दर्शन में बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। जीवन के दृष्टिकोण के अनुसार ही शिक्षा के उद्देश्यो का निर्धारण होता है। जीवन और शिक्षा से वैसा ही घनिष्ठ सम्बन्ध है जैसा कि दर्शन और जीवन में। अतः जिस प्रकार का हमारा जीवन का दृष्टिकोण होगा उसी प्रकार के शैक्षिक उद्देश्य हमारे द्वारा निर्धारित किये जायेंगे। यदि हमारा दृष्टिकोण केवल भौतिक विकास करना है और भौतिकवादी दृष्टिकोण रखते हैं, तो हम शिक्षा का उद्देश्य भौतिक सामग्री जुटाने की कला से अवगत कराना निर्धारित करेंगे। यदि हमारा दृष्टिकोण आध्यात्मिक विकास करना या मोक्ष की प्राप्ति करना है, तो हम शिक्षा का उद्देश्य 'आत्मानुभूति' निर्धारण करेंगे, ताकि हम परम सत्ता से एकाकार करने में समर्थ हो सकें। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिस समय लोगों का जीवन के प्रति जैसा दृष्टिकोण रहा, उसी के अनुसार उस काल में शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण किया गया।

उदाहरणार्थ—

1. भारतवर्ष : India—प्राचीन भारत में जीवन का चरम लक्ष्य—परम तत्व की प्राप्ति था। अतः उस समय शिक्षा का उद्देश्य—आध्यात्मिक उन्नयन निर्धारित किया गया। आज आधुनिक भारत में लोग लोकतान्त्रिक दर्शन (Democratic Philosophy) में आस्था रखते है। अतः आज शिक्षा का उद्देश्य—लोकतांत्रिक नागरिकता (Democractic Citizenship) का विकास निर्धारित किया गया है।

2. स्पार्टा : Sparta—स्पार्टा के निवासियों का मुख्य आदर्श यह था कि जीवन एक संघर्ष है। इस आदर्श के अनुसार, वहाँ की शिक्षा का उद्देश्य—देश की रक्षा के लिए वीर योद्धाओं का निर्माण करना निर्धारित किया गया था।

3. एथेन्स : Athens—एथेन्स के लोगों का लक्ष्य—जीवन को आनन्दपूर्वक व्यतीत करना था अतः वहाँ की शिक्षा का उद्देश्य—बालकों को योग्य बनाना था ताकि वे शारीरिक, चारित्रिक एवं कलात्मक सौन्दर्य की प्राप्ति करके जीवन को आनन्दपूर्वक व्यतीत कर सकें।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि शिक्षा के उद्देश्यों के निर्धारण में दर्शन का बहुत हाथ है। इस सम्बन्ध में ड्यूवी ने लिखा है :—"दर्शन, शिक्षा के साध्यों को निर्धारित करने से सम्बन्धित है।"

"Philosophy is concerned with determining the ends of education."—John Dewey.

3 दर्शन व पाठ्यक्रम
Philosophy & Curriculum

शिक्षा के उद्देश्यों के समान पाठ्यक्रम भी दर्शन पर आधारित है। बोड (Bode) का कथन है :—"पाठ्यक्रम को ठीक प्रकार से निश्चित करने के लिए दार्शनिकों की आवश्यकता है।" इस तथ्य को अधिक स्पष्ट करने के लिए 'Curriculum' शब्द का अर्थ देखना आवश्यक है। इस शब्द की उत्पत्ति, लैटिन भाषा के शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है—'दौड़ का मैदान'। दूसरे शब्दों में कह सकते है कि यह वह मार्ग है जिसे किसी व्यक्ति को अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए पार करना पड़ता है। अब प्रश्न यह है कि 'लक्ष्य' का निर्धारण कौन करता है। इसका स्वाभाविक उत्तर यह है कि लक्ष्य का निर्धारण, दर्शन द्वारा किया जाता है। जैसा हमारा लक्ष्य होगा उसको प्राप्त करने के लिए वैसा ही मार्ग निर्धारित किया जायगा। इस प्रकार, दर्शन पाठ्यक्रम के निर्धरण में एक महत्त्वपूर्ण आधार का कार्य करता है। ब्रिग्स ने लिखा है :—**"यहाँ शिक्षा को ऐसे नेताओं की विशेष आवश्यकता है, जो एक सुनिश्चित एवं व्यापक दर्शन रखते हों, जिससे वे दूसरों को विश्वास दिला सकें कि वे उसके लगातार प्रयोग से एक उपयुक्त पाठ्यक्रम के निर्माण में पथ-प्रदशन कर सकते हैं।"**

"It is just here that education seriously needs leaders who hold a sound comprehensive philosophy by which they can convince others and who can direct its consistent application to the formulation of appropriate curricula."—**B. H. Briggs.**

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पाठ्यक्रम पर दर्शन बहुत प्रभाव डालता है। इस प्रभाव को कुछ उदाहरणों द्वारा और अधिक स्पष्ट किया जा रहा है :—

(i) आदर्शवाद—आदर्शवाद के अनुसार, शिक्षा का उद्देश्य जीवन के शाश्वत मूल्यों की प्राप्ति है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम में मानवीय विचारों एव मूल्यों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाता है। इस प्रकार, आदर्शवादी विचारधारा के अनुसार पाठ्यक्रम विचार-केन्द्रित होता है।

(ii) प्रकृतिवाद—प्रकृतिवाद, बालक के स्वाभाविक विकास पर अधिक बल देता है। इसके अनुसार, शिक्षा का उद्देश्य बालक की वैयक्तिकता का विकास करना है। अतः इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम मे बालक की तत्कालीन आवश्यकताओं, रुचियों, क्षमताओं आदि को आधार बनाया जाता है। इस प्रकार, प्रकृतिवादी विचारधारा बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम पर बल देती है।

(iii) प्रयोजनवाद—प्रयोजनवादी विचारधारा—उपयोगिता, व्यावहारिकता आदि पर बल देती है। यह बालक को अपने मूल्यों का स्वयं निर्माणकर्त्ता मानती है। इस दृष्टिकोण से पाठ्यक्रम में बालक की वर्तमान एवं भावी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, उपयोगी क्रियाओं को स्थान दिया जाता है। इस प्रकार, प्रयोजनवादी विचारधारा—क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम पर बल देती है।

(iv) यथार्थवाद—यह विचारधारा प्रत्यक्ष में विश्वास करती है। इसलिए, पाठ्यक्रम में सैद्धान्तिकता की अपेक्षा व्यावहारिकता को स्थान दिया जाता है। इसमें वाह्य जीवन की वास्तविक क्रियाओं को पाठ्यक्रम में महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाता है।

अन्त में, हम रस्क के शब्दों में कह सकते हैं :—"शिक्षा, दर्शन पर पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में जितनी निर्भर है उतनी अन्य किसी शैक्षिक प्रश्न के सम्बन्ध में नहीं है।"

"*Nowhere there is* dependence of education on philosophy more marked than in the question of curriculum."—Rusk.

4 दर्शन व शिक्षण-विधियाँ
Philosophy & Methods of Teaching

जैसा कि हम देख चुके हैं कि शैक्षिक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हम पाठ्यक्रम का निर्माण करते है। किन्तु, अब प्रश्न यह है कि पाठ्यक्रम को किस विधि से छात्र के मन का अंग बना दिया जाय, जिससे वह अपने उद्देश्य की प्राप्ति कर सके। वस्तुतः विधि का निर्माण करना वैज्ञानिक का काम है। परन्तु, उपर्युक्त विधि का निर्माण तब तक नही किया जा सकता जब तक उद्देश्य का ज्ञान न हो। दूसरे शब्दो में कह सकते है कि लक्ष्य के ज्ञान के अभाव में विधि का निर्माण करना सम्भव नही है। अतः हम कह सकते है कि शिक्षण-विधियाँ दर्शन से प्रभावित होती है। इस सम्बन्ध में रॉस का कथन है :—"शैक्षिक उद्देश्य और विधियाँ दार्शनिक सिद्धान्तों के स्वाभाविक परिणाम हैं।"

"The educational aims and methods are *corollaries of philosophical* doctrines."—Ross.

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि शिक्षण-विधियाँ, दर्शन से निकलती हैं। विभिन्न दार्शनिक विचारों के परिणामस्वरूप ही शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न शिक्षण-विधियाँ दिखाई देती है। उदाहरणार्थ—सुकरात ने अपने दार्शनिक विचारों के अनुसार प्रश्नोत्तर विधि को जन्म दिया। प्लेटो ने 'संवाद विधि' तथा अरस्तू ने 'आगमन एवं निगमन विधि' को खोज निकाला। बेकन ने अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करने के लिए 'प्रयोग एवं निरीक्षण' को सर्वोत्तम पद्धति माना। रूसो ने बालक को अत्यधिक स्वतन्त्रता प्रदान करने का समर्थन किया। इसीलिए, उसने 'स्वानुभव तथा स्वक्रिया' पर बल दिया। मॉन्टेसरी ने 'इन्द्रिय यथार्थवाद' के आधार पर 'इन्द्रिय प्रशिक्षण' (Sensory Training) को अपनी पद्धति का आधार बनाया। फ्रॉबेल ने अपने दर्शन के अनुसार, किण्डरगार्टेन पद्धति को जन्म दिया। इस प्रकार, भिन्न-भिन्न शिक्षाशास्त्रियों तथा दार्शनिकों ने भिन्न-भिन्न पद्धतियों को ग्रहण करने का परामर्श दिया। उन्होंने ऐसा क्यो किया ? इसका उत्तर हमें दर्शनशास्त्र से मिलता है।

5 दर्शन व अनुशासन
Philosophy & Discipline

रस्क का कथन है :—"विद्यालय-कार्य के अन्य किसी पक्ष की अपेक्षा अनुशासन किसी व्यक्ति या युग की दार्शनिक पूर्वधारणाओं को अधिक प्रत्यक्ष रूप से प्रतिविम्बित करता है।"

"Discipline reflects the philosophical prepossessions of an individual or an age more directly than any other aspect of school work."—**Rusk.**

अनुशासन की धारणा को विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं द्वारा प्रभावित किया जाता है; क्योंकि इसका सम्बन्ध समाज एवं व्यक्ति के दर्शन से होता है। दर्शन ही इसके विकास के लिए पृष्ठभूमि तैयार करता है। उदाहरणार्थ—अनुशासन की स्थापना के लिए प्रकृतिवादी—दण्ड-विधान में प्राकृतिक परिणामों (Natural Consequences) एवं स्वतन्त्रता को स्थान देते है। प्रयोजनवादी—अनुशासन की स्थापना के लिए आनन्द, रुचि तथा सामाजिक एवं सहयोगी क्रियाओं को स्थान देते है। आदर्शवादी मुख्यतः आत्म-नियन्त्रण एवं शिक्षक के प्रभाव द्वारा अनुशासन की स्थापना करने के समर्थक है। परन्तु, कुछ आदर्शवादी जो परमवाद (Absolutism) के पक्षपाती है, दमनात्मक अनुशासन का समर्थन करते है। अधिकांशतः आदर्शवादी—प्रभावात्मक अनुशासन की धारणा को मानते हैं। अतः दार्शनिक विचारधाराओं के परिणामस्वरूप अनुशासन के विभिन्न रूप—दमनात्मक अनुशासन, प्रभावात्मक अनुशासन, मुक्त्यात्मक अनुशासन, सामाजिक अनुशासन आदि पाये जाते हैं।

यदि हम अनुशासन के अन्तर्गत नैतिक व्यवहार को मानें, तो इस दृष्टिकोण से भी दर्शन का प्रभाव दिखाई पड़ता है। रस्क ने लिखा है :—"प्रकृतिवादी, दर्शन-शास्त्र में नैतिक मानदण्डों की प्रामाणिकता को अस्वीकार करके बालक की जन्मजात या मूलप्रवृत्यात्मक प्रवृत्तियों को मनमाने ढंग से प्रकट होने के लिए अवसर प्रदान करता है। प्रयोजनवादी ऐसे मानदण्डों को समान रूप से अस्वीकार करते हुए छात्रों के आचरण को सामाजिक स्वीकृति पर ही नियंत्रित करने में आस्था रखता है। दूसरी ओर, आदर्शवादी मानव-व्यवहार को नैतिक आदर्शों के अभाव में अपूर्ण मानता है और बालकों को नैतिक मानदण्डों को स्वीकार करने के लिए अग्रसर करता है तथा उन्हें धीरे-धीरे आचरण का अंग बनाने के लिए प्रशिक्षण प्रदान करना अपना कर्त्तव्य मानता है।"

"The naturalist in philosophy denying the validity of moral standards would allow innate or instinctive tendencies of the child to assert themselves; the pragmatist refusing equally to admit such standards relies for the control of the pupil's behaviour on social

approval; the idealist, on the other hand, finds his explanation of human behaviour, and regards it as duty to lead the child to recognise such moral standards and to train him to realize these gradually in his conduct."—Rusk.

6 दर्शन व पाठ्य-पुस्तकें
Philosophy & Text-books

पाठ्यक्रम की भाँति पाठ्य-पुस्तकों पर दर्शन का प्रभाव कम नही पड़ता है। पाठ्य-पुस्तकें जीवन की मान्यताओं, आदर्शों एवं शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सशक्त साधन है। पाठ्य-पुस्तकों के चयन एवं निर्माण मे दर्शन आधार का कार्य करता है। पाठ्य-पुस्तको के चुनाव के लिए जीवन की मान्यताओ, आदर्शों एवं सिद्धान्तों को ध्यान में रखा जाता है क्योंकि इनके द्वारा जीवन के मानदण्डों का स्थापन किया जाता है। वेस्ले का मत है :—"**पाठ्य-पुस्तक, मानदण्डों को प्रतिबिम्बित एवं स्थापित करती है। सम्भवतः यह अधिकतर इस बात का संकेत देती है कि शिक्षक को क्या जानना चाहिए और बालकों को क्या सीखना चाहिए। यह शिक्षण-विधियों को प्रभावित करती है तथा विद्वत्ता के बढ़ते हुए मानदण्डों को प्रकट करती है।**"

"The text-book reflects and establishes standards. It indicates, too frequently perhaps, what the teacher is required to know and what the pupils are supposed to learn, It markedly affects methods and reflects the rising standards of scholarship."—Wesley.

जिन पुस्तकों में जीवन के प्रचलित आदर्शों को प्रतिबिम्बित किया जाता है उन्हें उपयुक्त पाठ्य-पुस्तकों की श्रेणी में रखा जाता है। इस प्रकार, पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण एवं उनकी उपयुक्तता का आधार दर्शन होता है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि जिस प्रकार दर्शन पाठ्य-पुस्तको के निर्माण, चयन एवं उपयुक्तता आदि में आधार का कार्य करता है, उसी प्रकार पाठ्य-पुस्तकें भी दर्शन के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योग देती है। पाठ्य-पुस्तकें अध्ययन, अध्यापन, तर्क आदि के महत्त्वपूर्ण साधन हैं। इनके परिणामस्वरूप, नवीन विचारों को जन्म मिलता है। नवीन विचारों या सिद्धान्तों द्वारा नवीन दर्शन का जन्म होता है। इस प्रकार, पाठ्य-पुस्तकें नवीन दर्शन के निर्माण में आधार का कार्य करती हैं।

(7) दर्शन व शैक्षिक प्रशासन
Philosophy & Educational Administration

शैक्षिक प्रशासन में पहली समस्या तो यह आती है कि विद्यालय की स्थापना की जाय अथवा नहीं। इस प्रश्न का उत्तर समाजशास्त्र तथा दर्शन द्वारा दिया जाता है। समाजशास्त्र—समाज की आवश्यकताओं तथा माँगों का विश्लेषण करके उनकी पूर्ति के लिए विद्यालय की स्थापना के सम्बन्ध में निर्णय करता है। दर्शन—समाज

की मान्यताओं तथा आदर्शों का विश्लेषण करके विद्यालय की स्थापना के लिए उपयुक्त मार्गदर्शक सिद्धान्त निश्चित करता है।

विद्यालय का प्रशासन : Administration of the School—विद्यालय का प्रशासन किसके हाथ में हो ? शिक्षा पर राज्य का नियन्त्रण हो अथवा नहीं ? इन प्रश्नों का उत्तर दर्शन द्वारा दिया जाता है। यदि समाज, व्यक्तिवादी दर्शन में आस्था रखता है, तो वह शिक्षा को ऐच्छिक सगठनों के हाथों में रखेगा। यदि समाज, समाजवादी विचारधारा मे विश्वास रखता है, तो वह समाज या राज्य का शिक्षा पर पूर्ण नियन्त्रण चाहेगा।

विद्यालय के आन्तरिक प्रशासन के लिए आचार्य या प्रिंसिपल कैसा हो ? इसका निर्णय, दर्शन द्वारा ही किया जाता है। दर्शन उसके गुणो का निर्धारण करता है। विद्यालय की आन्तरिक व्यवस्था का निर्धारण समाज के दर्शन पर निर्भर है। यदि समाज लोकतान्त्रिक दर्शन में आस्था रखता है, तो विद्यालय की आन्तरिक व्यवस्था लोकतांत्रिक होगी और आचार्य का दृष्टिकोण भी लोकतान्त्रिक होगा। यदि समाज अधिनायकवादी दर्शन मे विश्वास रखता है, तो वहाँ अधिनायकवादी दृष्टिकोण के अनुसार कार्य होगा।

शिक्षक : Teacher—विद्यालय तथा शैक्षिक पद्धति के सुसंचालन के लिए शिक्षकों की आवश्यकता होती है। अतः शिक्षक कैसे होने चाहिए ? शिक्षक का दृष्टिकोण कैसा हो ? शिक्षकों की नियुक्ति के समय किन बातों पर ध्यान दिया जाय ? आदि प्रश्नों का उत्तर देने में दर्शन ही हमारी सहायता करता है। प्रत्येक दर्शन अपने दृष्टिकोण से शिक्षक के स्थान का निर्धारण करता है। उदाहरणार्थ—प्रकृतिवादी—प्रकृति को सर्वोत्तम शिक्षक मानता है और मानव रूपी शिक्षक का स्थान पर्दे के पीछे निर्धारित करता है। वह उससे केवल यही अपेक्षा करता है कि वह छात्रों की स्वतन्त्र क्रियाओं का मौन रह कर निरीक्षण करे। आदर्शवादी—शिक्षक को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करता है। वह उसको ब्रह्म की प्रतिमा मानता है। प्रयोजनवादी—शिक्षक को सामाजिक वातावरण में निर्माणकर्त्ता के रूप में देखता है। अतः शिक्षक की नियुक्ति एवं शिक्षा-पद्धति मे उसके स्थान का निर्धारण दर्शन द्वारा ही किया जाता है।

विद्यालय भवन : School Building—विद्यालय का वाह्य रूप कैसा हो ? भवन किस प्रकार का हो ? आदि प्रश्नों का उत्तर दर्शन द्वारा ही दिया जाता है। प्रकृतिवादी ईंट-गारे की इमारत में अधिक आस्था नही रखता है। प्रयोजनवादी तड़क-भड़क तथा भव्य भवनों का निर्माण करना चाहता है। आदर्शवादी—'सादा जीवन; उच्च विचार' के आदर्श के अनुसार अपने विद्यालय के वाह्य रूप को निर्धारित करता है। साथ ही, उसके आन्तरिक स्वरूप को सौन्दर्यपूर्ण एवं सांस्कृतिक दृष्टि से उच्च बनाना चाहता है। वह उसको एक सुन्दर बाग के रूप मे देखता है।

निरीक्षण : Supervision—शैक्षिक प्रशासन में निरीक्षण का भी महत्त्वपूर्ण

स्थान है। अतः निरीक्षण कैसा हो? निरीक्षण किन-किन बातों का किया जाय? आदि प्रश्नों का उत्तर दर्शन देता है। अतः हम कह सकते हैं कि शैक्षिक प्रशासन में भी दर्शन से हमें पर्याप्त मात्रा में सहायता प्राप्त होती है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन के आधार पह हम कह सकते हैं कि किसी भी दृष्टि से क्यों न देखा जाय, शिक्षा और दर्शन परस्पर सम्बन्धित हैं। यह सम्बन्ध प्राचीन काल से ही चला आ रहा है। अन्त में, हम हेण्डरसन के शब्दों में कह सकते है :—"दर्शन का एक महत्त्वपूर्ण कार्य, यूनानी दर्शन के समय से आज तक, सन्तोषप्रद जीवन के लक्ष्यों एवं सामग्री को निर्धारित करना रहा है।"

"One of the philosophy's most important task has been, from the days of Greek philosophy to this day, to formulate the objectives and content of a satisfying life."—Henderson.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. All educational questions are ultimatey the questions of philosophy." Discuss.

"शिक्षा-सम्बन्धी समस्त प्रश्न अन्ततः दर्शन से सम्बन्धित है।" विवेचना कीजिए।

2. Education is the dynamic side of philosophy." Examine thiis statement carefully and show clearly in what respects you regard education to be dependent upon philosophy.

शिक्षा, दर्शनशास्त्र का गतिशील पहलू है।" इस उक्ति की सतर्कतापूर्वक व्याख्या कीजिए और स्पष्टतः व्यक्त कीजिए कि किन पहलुओं में आप शिक्षा को दर्शनशास्त्र पर आधारित मानते है।

3. "From every angle of the educational problem comes the demand for a philosophical basis of the subject." Discuss this statement, showing the importance and need of philosophy of education.

"शैक्षिक समस्या के प्रत्येक दृष्टिकोण से विषय के दार्शनिक आधार की माँग है।" शिक्षा के दर्शन के महत्त्व तथा आवश्यकता को दिखाते हुए, इस कथन की पुष्टि कीजिए।

4. Discuss the need for a philosophical foundation of education.

शिक्षा के लिए दार्शनिक आधार की आवश्यकता की विवेचना कीजिए।

5. What is the relationship between philosophy and education ? How does one influence the other and bring about change in the one if the other is changed ?

शिक्षा तथा दर्शन में परस्पर क्या सम्बन्ध है ? एक का दूसरे पर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है ? यदि एक मे परिवर्तन होता है, तो दूसरे में भी कैसे परिवर्तन हो जाता है ?

6. "The aims of education are influenced by philosophy." Comment upon this statement.

"शिक्षा के उद्देश्यों पर दर्शन का प्रभाव पड़ता है।" इस कथन पर विचार प्रकट कीजिए।

22

शिक्षा में आदर्शवाद
IDEALISM IN EDUCATION

"आदर्शवादियों का विश्वास है कि संसार का एक निश्चित अर्थ, एक निश्चित अभिप्राय और शायद एक निश्चित लक्ष्य है, और सृष्टि के हृदय तथा मनुष्य की आत्मा में एक प्रकार का आन्तरिक सामंजस्य है। यह सामंजस्य ऐसा है कि मानव-बुद्धि प्रकृति के बाह्य को भेद कर कम-से-कम कुछ सीमा तक आन्तरिक शक्ति अथवा परम तत्त्व तक पहुँच सकती है।"

"Idealists believe that the world has a meaning, a purpose, perhaps a goal and that there is a kind of inner harmony between the heart of the Universe and the soul of man; such that human intelligence can pierce through the outer crust of nature and penetrate to its inner being, at least in some measure."

—George T. W. Patrick.

आदर्शवाद का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Idealism

(1) 'आदर्शवाद' शब्द की उत्पत्ति : Derivation of the Word, 'Idealism'—'Idealism' शब्द की उत्पत्ति प्लेटो (Plato) के इस आध्यात्मिक सिद्धान्त से हुई है :—"अन्तिम वास्तविकता, विचारों या विचारवाद में है" ("Ultimate reality consists of ideas, idea-ism")। 'Idea-ism' में 'l' (एल) अक्षर को केवल उच्चारण की आसानी के लिए जोड़ दिया गया है। इस प्रकार, ठीक शब्द तो 'Ideaism' है, पर आमतौर पर 'Idealism' शब्द का ही प्रयोग किया जाता है।

(2) आदर्शवाद का अर्थ : Meaning of Idealism—'आदर्शवाद' वह दर्शन है, जो मन की प्रकृति को वास्तविकता मानता है। आदर्शवादियों का विश्वास

है कि जो बात सत्य या वास्तविक है, वह अवश्य ही आध्यात्मिक या मानसिक है। उनका यह भी विश्वास है कि भौतिक संसार, 'मन' की अभिव्यक्ति का साकार रूप है। अतः आदर्शवादियों को 'मनवादी' (Mentalists) या 'अध्यात्मवादी' (Spiritualists) कहना अधिक ठीक होगा।

पेट्रिक (George T. W. Patrick) ने आदर्शवाद की तुलना भौतिकवाद (Materialism) से करके उसका अर्थ स्पष्ट किया है। वह कहता है कि जिस प्रकार भौतिकवाद—संसार का आधार 'पदार्थ' (Matter) में देखता है, उसी प्रकार आदर्शवाद संसार का आधार 'मन' (Mind) में देखता है। दूसरे शब्दों में, भौतिकवाद—'पदार्थ' को 'मन' से पहले की वस्तु मानता है, और आदर्शवाद—'मन' को 'पदार्थ' से पहले की।

(3) **'आदर्शवाद' की परिभाषा : Definition of Idealism**—हम आदर्शवाद के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषायें नीचे दे रहे हैं :—

1. हैण्डरसन :—"आदर्शवाद, मनुष्य के आध्यात्मिक पक्ष पर बल देता है। इसका कारण यह है कि आध्यात्मिक मूल्य, मनुष्य और जीवन में सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू हैं। आदर्शवादियों का विश्वास है कि मनुष्य अपने सीमित मन को असीमित मन से प्राप्त करता है। वे यह मानते हैं कि व्यक्ति और संसार—दोनों बुद्धि की अभिव्यक्तियाँ हैं। वे कहते हैं कि भौतिक संसार की व्याख्या मन से ही की जा सकती है।"

"Idealism emphasises the spiritual side of man because to the Idealist, spiritual values are the most important aspects of man and of life. A metaphysical idealist would believe that man's finite mind springs from the infinite mind, that both the individual and the world are expressions of intelligence, that the material world is to be explained by the mental."—**Stella V. Henderson.**

2. रोजन :—"आदर्शवादियों का विश्वास है कि ब्रह्माण्ड—की अपनी बुद्धि एवं इच्छा है और सब भौतिक वस्तुओं को उनके पीछे विद्यमान, मन द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।"

"The idealists believe that the universe has an intelligence and a will; that all material things are explainable in terms of a mind standing behind them."—**F. Bruce Rosen.**

3. हॉर्न :—"आदर्शवाद का सार यह है कि ब्रह्माण्ड बुद्धि एवं इच्छा की अभिव्यक्ति है, विश्व के स्थायी तत्त्व की प्रकृति—मानसिक है और भौतिकता की बुद्धि [illegible]

[illegible] that the universe is an expression of intelligence and will, that the enduring substance of the world

is of the nature of mind, that the material, is explained by the mental."—Herman H. Horne.

आदर्शवाद का दार्शनिक दृष्टिकोण
Philosophical Outlook of Idealism

तत्व-दर्शन में आदर्शवाद : **Idealism in Metaphysics**—आदर्शवादियों के विचार से ब्रह्माण्ड की प्रकृति—मानसिक या आत्मिक है। ब्रह्माण्ड के दो पक्ष है—ज्ञानेन्द्रिय पक्ष और वास्तविक जगत्। ज्ञानेन्द्रिय पक्ष—जीवन का वह पक्ष है, जिसकी ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा खोज और पुष्टि की जा सकती है। वास्तविक जगत्, ज्ञानेन्द्रियों की पहुँच से दूर है और उसमें केवल बुद्धि (Intellect) के माध्यम से पहुँचा जा सकता है। अध्यात्मवादियों (Spiritualists) का मत है कि वास्तविक जगत् में पहुँचने का एकमात्र माध्यम—आत्मा (Spirit) है। मनवाद (Mentalism) के अनुसार, वास्तविक जगत्—विचारों का जगत् है, पर अध्यात्मवाद के अनुसार, यह आत्मिक जगत् है।

ज्ञान-शास्त्र में आदर्शवाद : **Idealism in Epistemology**—आदर्शवादी, ज्ञान एवं सत्य की विवेचना विवेकपूर्ण विधि से करते है। वे ब्रह्माण्ड में उन सामान्य सिद्धान्तों की खोज करने का प्रयास करते हैं, जिनको सार्वभौमिक सत्य का रूप प्रदान किया जा सके। इस दृष्टिकोण से उनकी धारणा है कि सत्य का अस्तित्व है, किन्तु, उनका कहना है कि सत्य का अस्तित्व इसलिए नही है कि वह व्यक्ति या समाज द्वारा निर्मित किया गया है। इसके विपरीत, वह मनुष्य या उसके विषय में मनुष्य के ज्ञान से स्वतन्त्र है। सत्य को खोजा जा सकता है। जब उसकी खोज कर ली जायगी, तब वह निरपेक्ष सत्य होगा। आदर्शवादियो की मान्यता है कि ईश्वर या निरपेक्ष मन या आत्मा, सत्य है, मनुष्य तथा निरपेक्ष मन या आत्मा या परम सत्ता मे गुणात्मक दृष्टि से समानता होती है। इस परम सत्ता का ज्ञान ही सत्य ज्ञान है।

मूल्य-मीमांसा में आदर्शवाद : **Idealism in Axiology**—"शिव क्या है ?" (What is Good ?)—इसके विषय में आदर्शवादियों का कहना है कि सद् जीवन को ब्रह्माण्ड से सामंजस्य स्थापित करके ही व्यतीत किया जा सकता है। दूसरे शब्दो में, निरपेक्ष सत्ता का अनुकरण करके ही "शिव" या अच्छाई की प्राप्ति की जा सकती है। हम अच्छा कार्य केवल इसलिए करते हैं, क्योंकि वह अच्छा है। आदर्शवादियो का मत है कि जब मनुष्य का आचरण, सार्वभौमिक नैतिक नियम (Universal Moral Law) के अनुसार होता है, तभी हम उसको स्वीकार करते हैं। अतः आदर्शवादी नैतिकता—परम सत्ता पर आधारित है और मानव या समाज द्वारा निर्मित नही है।

"सुन्दर क्या है ?" (What is Beautiful ?)—आदर्शवादी इसका उत्तर भी निरपेक्ष सत्ता के दृष्टिकोण से देते हैं। उनका कहना है कि निरपेक्ष सत्ता, सुन्दर-

तम् है। इस जगत् में जो-कुछ भी सुन्दर है, वह केवल उसका अंशमात्र है, अर्थात् उसकी प्रतिछाया है। जब हम, कला के किसी कार्य की सौन्दर्यानुभूति करते है, तब हम ऐसा इसलिए करते हैं, क्योंकि वह निरपेक्ष सत्ता का सच्चा प्रतिनिधि है। साथ ही, वह हमें निरपेक्ष सत्ता के अधिक समीप पहुँचाने मे सहायता प्रदान करता है। यही कारण है कि आदर्शवादी—संगीत को सर्वोत्तम प्रकार की सौन्दर्यात्मक रचना मानते हैं। उनका आग्रह है कि संगीत इस भौतिक जगत् का प्रतिनिधित्व नहीं करता है, वरन् निरपेक्ष सत्ता के हृदय को प्रकट करता है।

आदर्शवाद के प्रमुख सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व
Main Principles or Essential Features of Idealism

थॉमस और लैंग (Thomas & Lang) ने आदर्शवाद के निम्नलिखित सिद्धान्त बताये हैं :—

1. सच्ची वास्तविकता—आध्यात्मिकता या विचार है।
2. केवल मानसिक जीवन ही जानने के योग्य है।
3. विचार और प्रयोजन ही सच्ची वास्तविकताएँ हैं।
4. जो कुछ मन संसार को देता है, केवल वही वास्तविकता है।
5. ज्ञान का सर्वोच्च रूप—अन्तर्दृष्टि है।
6. आत्म-निर्णय—सच्चे जीवन का सार है।
7. इन्द्रियों द्वारा सच्ची वास्तविकता को नहीं जाना जा सकता है।
8. प्रकृति की दिखाई देने वाली आत्म-निर्भरता भ्रमपूर्ण है।
9. अभौतिक मूल्य ही अन्तिम और अनन्त वास्तविकताएँ हैं।
10. बाह्य संसार हमारे मन और आत्मा द्वारा अंकित किया गया—केवल एक दृश्य है।
11. व्यक्तित्व—विचारों और प्रयोजनों का मिश्रण है तथा अन्तिम वास्तविकता है।
12. ईश्वर, जो सब दूसरे जीवों के बारे में बताता है, मन से सम्बन्ध रखता है।
13. आत्म अपने रूपान्तरो और दशाओ के सिवा न तो और कुछ जानता है और न जान सकता है।
14. भौतिक और प्राकृतिक संसार—जिसे विज्ञान जानता है, वास्तविकता की अपूर्ण अभिव्यक्ति है।
15. परम मन (Absolute Mind)—जिसका अंश हमारा मन है, में जो कुछ विद्यमान है, उसके सिवा और किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं है।
16. जीवन के वे पहलू, जिनका सबसे अधिक महत्त्व है—विचार, ज्ञान, कला, नैतिकता और धर्म हैं।

17. सत्य ज्ञान को प्राप्त करने का सच्चा साधन—हमारा विवेक या हमारी मानसिक या आध्यात्मिक दृष्टि है।

आदर्शवाद व शिक्षा के उद्देश्य
Idealism & Aims of Education

(1) व्यक्तित्व का उत्कर्ष या आत्मानुभूति : Exaltation of Personality or Self-Realization—रॉस और रस्क—दोनों का कथन है कि आदर्शवाद के अनुसार शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—व्यक्तित्व का उत्कर्ष या आत्मानुभूति है। रॉस ने लिखा है :—"आदर्शवाद से विशेष रूप से सम्बन्धित शिक्षा का उद्देश्य है—व्यक्तित्व का उत्कर्ष या आत्मानुभूति; अर्थात् 'आत्म' की सर्वोच्च शक्तियों या क्षमताओं को वास्तविक रूप देना।"

"The aim of education specially associated with Idealism is the exaltation of personality; or self-realization, the making actual or real the highest potentialities of the self."—Ross.

प्रायः इसी तरह का विचार रस्क ने इन शब्दों में व्यक्त किया है :—"शिक्षा का उद्देश्य—व्यक्तित्व को ऊँचा उठाना या गुण-सम्पन्न करना है। इस व्यक्तित्व का मुख्य लक्षण है—सार्वभौमिक मूल्यों से युक्त होना।"

"The aim of education is the enhancement of personality, the differentiation feature of which is the embodiment of universal values."—Rusk.

उपरिलिखित विद्वानों ने जो विचार व्यक्त किये है, उनके आधार पर हम कह सकते है कि आदर्शवाद के अनुसार, शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—व्यक्तित्व को ऊँचा उठाना या व्यक्ति के अन्दर सर्वोच्च शक्तियों को वास्तविक बनाना है।

आदर्शवाद—मानव-जीवन की श्रेष्ठता को सबसे अधिक महत्त्व देता है। यह इस बात को मानता है कि मानव-व्यक्तित्व, ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ रचना है। यही कारण है कि यह व्यक्तित्व के उत्कर्ष को शिक्षा का मुख्य उद्देश्य घोषित करता है। व्यक्तित्व के उत्कर्ष का अर्थ है—'स्व' की सर्वोच्च शक्तियों या क्षमताओं की प्राप्ति। आदर्शवाद के अनुसार मनुष्य में असीम शक्तियाँ होती है। अतः शिक्षा का उद्देश्य—उनका पूर्ण विकास करके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करना है।

प्लेटो के अनुसार, आत्मानुभूति द्वारा व्यक्ति को पूर्णता या आदर्श अवस्था में पहुँचाना—शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है। यह आदर्श अवस्था कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के हिस्से में ही नहीं आनी चाहिए, वरन् समाज के सब लोगों को इसका समान रूप से अधिकारी होना चाहिए। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि आदर्शवाद-जन-साधारण की शिक्षा का प्रबल समर्थन करता है।

(2) सांस्कृतिक विरासत की समृद्धि : Enrichment of Cultural Heri-

tage—आदर्शवाद के अनुसार, शिक्षा का दूसरा उद्देश्य—सांस्कृतिक विरासत की समृद्धि है। आदर्शवाद—मनुष्य की आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत पर बहुत बल देता है। मनुष्य ने इन्हें अपने रचनात्मक कार्यों द्वारा प्राप्त किया है। इसके बारे में रॉस (Ross) का कथन है :—"धर्म, नैतिकता, कला, साहित्य, गणित और विज्ञान विभिन्न युगों में किये जाने वाले मनुष्य के नैतिक, मानसिक और सौन्दर्यात्मक कार्यों के परिणाम हैं।"

मनुष्य की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विरासत की वृद्धि धीरे-धीरे हुई है। इसमें विभिन्न युगों के अनेक व्यक्तियों ने अपना योग दिया है। यह मानव-जाति की समान सम्पत्ति है। यह मानव-जाति की उन्नति और संगठन करती है। अतः शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए—मनुष्य को अपनी आध्यात्मिक शक्तियों द्वारा इसको समृद्ध बनाना। इस उद्देश्य के बारे में रस्क का कथन है :—"शिक्षा को मानव-जाति को इस योग्य बनाना चाहिए कि वह अपनी संस्कृति की सहायता से आध्यात्मिक जगत् में अधिक-से-अधिक पूर्णता से प्रवेश कर सके और आध्यात्मिक जगत् की सीमाओं का विस्तार भी कर सके।" (इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए आदर्शवाद सांस्कृतिक वातावरण पर बल देता है।)

"Education must enable mankind through its culture to enter more and more fully into the spiritual realm, and also to enlarge the boundaries of the spiritual realm."—**Rusk.**

(3) अमर आदर्शों व मूल्यों की प्राप्ति : Realization of Eternal Ideals & Values—आदर्शवाद के अनुसार, शिक्षा का तीसरा उद्देश्य—आध्यात्मिक जगत् के अमर आदर्शों और मूल्यों की प्राप्ति है। रस्क (Rusk) के विचार से ये आदर्श या मूल्य तीन है :—"(1) मानसिक, जो ज्ञात है; (2) भावात्मक, जिसका अनुभव किया जाता है; और (3) सांस्कृतिक, जिसका संकल्प किया जाता है।"

उपर्युक्त तीनों, मानसिक क्रियाएँ हैं। इन मानसिक क्रियाओं के लक्ष्यों को ध्यान में रखकर मस्तिष्क सत्य को जानता है और असत्य से दूर रहता है; सुन्दरता का अनुभव करता है और असुन्दरता से दूर रहता है; अच्छाई का संकल्प करता है और बुराई से दूर रहता है। इस प्रकार, 'सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम्'—मानव-जाति के आध्यात्मिक आदर्श हैं। शिक्षा का उद्देश्य—बालक को इन आदर्शों को प्राप्त करने के लिए योग्य बनाना है।

(4) मनुष्य की मूल प्रवृत्ति का आध्यात्मिक प्रकृति में परिवर्तन : Conversion of Man's Original Nature into Spiritnal Nature—आदर्शवाद के अनुसार, मनुष्य की दो प्रकृतियाँ है—'मूल' और 'आध्यात्मिक'। शिक्षा का कार्य है—मूल प्रकृति को आध्यात्मिक प्रकृति मे बदलना। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि—शिक्षा मनुष्य को पवित्र, पूर्ण और धार्मिक बनाये। शिक्षा को

मनुष्य को उस पूर्णता पर पहुँचा देना चाहिए, जो कभी कम नहीं होती है। सारांश में, इसे मनुष्य को सच्चे अर्थ में मनुष्य बनाना चाहिए।

(5) चेतना की पूर्ण दशा की प्राप्ति : Attainment of Perfect State of Rationality—एडम्स (Adams) की शिक्षा की व्याख्या और उद्देश्य आदर्शवाद पर आधारित है। वह विश्व को विचार की प्रक्रिया मानता है। विश्व व्यवस्थित है, अव्यवस्थित नही। इसकी सब बातों को समझा जा सकता है, और सभी बातें तर्कपूर्ण है। यह ऐसे नियमों से शासित होता है, जो बदलते नही है।

आदर्शवादी ऐसे नियमों की खोज करते है, जो नैतिक मूल्यों पर आधारित संसार को व्यवस्था देते हैं। *अतः शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—मनुष्य की इस प्रकार सहायता करना है कि वह विश्व और अपने व्यक्तित्व में चेतना की पूर्ण दशा को उस समय प्राप्त करे, जब उसका चरित्र आध्यात्मिक हो।*

(6) पवित्र जीवन को प्राप्ति : Realization of Holy Life—फ्रॉबेल का कथन है कि आदर्शवाद के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य—पवित्र जीवन की प्राप्ति है। फ्रॉबेल ने लिखा है :—**"शिक्षा का उद्देश्य—भक्तिपूर्ण, पवित्र तथा कलंक रहित; और इसलिए पवित्र जीवन की प्राप्ति है। शिक्षा को मनुष्य का पथ-प्रदर्शन इस प्रकार करना चाहिए कि उसे अपने आप का, प्रकृति का सामना करने का, और ईश्वर से एकता स्थापित करने का स्पष्ट ज्ञान हो जाय।"**

"The object of education is the realization of a faithful, pure, inviolable and hence holy life. Education should lead and guide man to clearness concerning himself, and in himself, to face with Nature and to unity with God."—**Froebel.**

निष्कर्ष—उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि आदर्शवादी शिक्षा के उद्देश्य—वैयक्तिक और सामाजिक—दोनो है। इस क्षेत्र मे आदर्शवाद की देन जितनी महत्वपूर्ण है, उतनी अन्य किसी दर्शन की नही है।

आदर्शवाद व पाठ्यक्रम
Idealism & Curriculum

आदर्शवादियों ने पाठ्यक्रम पर बहुत प्रभाव डाला है। पाठ्यक्रम के बारे में उनके विचार निम्नलिखित हैं :—

1. पाठ्यक्रम के आधार—जीवन के सर्वोच्च आदर्श होने चाहिए।
2. इसे सभ्यता का प्रतिबिम्ब होना चाहिए।
3. इसे मानव-जाति के अनुभवों को व्यक्त करना चाहिए।
4. इसे मानव-जाति के अनुभवों का प्रतीक होना चाहिए।
5. इसे मानव-जाति के अनुभवों को सगठित करना चाहिए।
6. मनुष्य के अनुभवो मे उसके भौतिक और सामाजिक वातावरणो के

अनुभव आते हैं। इसलिए, पाठ्यक्रम में विभिन्न विज्ञान और मानव-शास्त्रों को स्थान मिलना चाहिए।

पाठ्यक्रम के बारे में प्रसिद्ध आदर्शवादियों के विचार
Views of Eminent Idealists on Curriculum

पाठ्यक्रम के बारे में प्रसिद्ध आदर्शवादियों ने अपने विचार व्यक्त किए हैं। हम उनमें से कुछ का वर्णन यहाँ पर कर रहे हैं :—

1. प्लेटो के विचार : Plato's Views—प्लेटो आदर्शवादी था। उसने आदर्श विचारों को पाठ्यक्रम का आधार माना। उसके अनुसार, जीवन का सर्वोच्च विचार—सर्वोत्तम अच्छाई या ईश्वर को प्राप्त करना है। अतः उसने इस बात पर बल दिया कि पाठ्यक्रम में आध्यात्मिक मूल्यों को स्थान दिया जाना चाहिए। ये आध्यात्मिक मूल्य तीन हैं—'सत्यम्', 'शिवम्', 'सुन्दरम्'।

ये तीनों मूल्य तीन प्रकार की क्रियाओं को जन्म देते है—**मानसिक, नैतिक और सौन्दर्यात्मक**। इनमें से प्रत्येक क्रिया के आधार—कुछ निश्चित विषय है, जिनको पाठ्यक्रम मे स्थान मिलना चाहिए। इन क्रियाओं के अनुसार—पाठ्यक्रम का स्वरूप इस प्रकार होना चाहिए :—

मानव की क्रियाएँ व उनसे सम्बन्धित विषय

- मानसिक क्रियाएँ
  - भाषा, साहित्य, इतिहास, भूगोल व विज्ञान
- सौन्दर्यात्मक क्रियाएँ
  - कला व कविता
- नैतिक क्रियाएँ
  - धर्म, आचारशास्त्र व अध्यात्मवाद

2. नन के विचार : Nunn's Views—नन का शिक्षा का दृष्टिकोण व्यक्ति-वादी है, पर पाठ्यक्रम के बारे में उसका विचार आदर्शवादी है। उसका कथन है कि विद्यालय को ऐसा स्थान नही समझना चाहिए, जहाँ बालकों को एक निश्चित प्रकार की शिक्षा दी जाती है। इसके विपरीत, विद्यालय को ऐसा स्थान समझना चाहिए, जहाँ बच्चों को ऐसी क्रियाओं में प्रशिक्षित किया जाता है, जो संसार के लिए महत्त्वपूर्ण होती हैं। ये क्रियाएँ दो समूहों में बाँटी जा सकती है—(1) वे, जो व्यक्ति और समाज के जीवन को बनाये रहती हैं। (2) वे, जो सभ्यता के ढांचे का निर्माण करती हैं। इन क्रियाओं के अनुसार पाठ्यक्रम का स्वरूप इस प्रकार होना चाहिए :—

मानव की क्रियाएँ व उनसे सम्बन्धित विषय

- शारीरिक, सामाजिक, नैतिक व धार्मिक क्रियाएँ
  - शारीरिक व्यायाम, सामाजिक शिक्षा, नीति-शास्त्र व धर्म
- साहित्यिक, सौन्दर्यात्मक व सामान्य क्रियाएँ
  - साहित्य, कला, संगीत, दस्तकारी, विज्ञान, गणित, इतिहास व भूगोल

3. रॉस के विचार : Ross's Views—रॉस ने पाठ्यक्रम की आदर्शवादी धारणा की व्याख्या की है। उसने इस पाठ्यक्रम में दो प्रकार की क्रियाओं का उल्लेख किया है—(1) शारीरिक, और (2) आध्यात्मिक। इन क्रियाओं के अनुसार पाठ्यक्रम का स्वरूप इस प्रकार होना चाहिए :—

मानव की क्रियाएँ व उनसे सम्बन्धित विषय

- शारीरिक क्रियाएँ
  - स्वास्थ्य-विज्ञान, शारीरिक कुशलताएँ व व्यायाम
- आध्यात्मिक क्रियाएँ
  - मानसिक क्रियाएँ
    - साहित्य, भाषा, विज्ञान, गणित, इतिहास व भूगोल
  - सौन्दर्यात्मक क्रियाएँ
    - ललित कलाएँ
  - नैतिक व धार्मिक क्रियाएँ
    - धर्म व आचार-शास्त्र

4. हरबार्ट के विचार : Herbart's Views—हरबार्ट प्रसिद्ध आदर्शवादी था। उसने शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य—नैतिकता का विकास बताया है। अतः उसने पाठ्यक्रम में उन विषयों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है, जो नैतिकता के विकास में सहायता देते है। इस विचार से उसने साहित्य, इतिहास, कला, संगीत आदि को प्रमुख स्थान और भूगोल, विज्ञान, गणित आदि को गौण स्थान दिया है।

आदर्शवाद व शिक्षण-विधियाँ
Idealism & Methods of Teaching

बटलर का कथन है :—"आदर्शवादी अपने को किसी एक विधि का भक्त न मानकर, विधियों का निर्माण और निश्चय करने वाला मानते हैं।"

"Idealists consider themselves creators and determiners of methods, not devotees of some one method."—**Butler.**

आदर्शवादियों का विश्वास
तो हम बालकों की रुचि और प
सकते हैं। इसीलिए, विभिन्न आद[illegible]
अपनाया गया। वे किसी एक पद्धति के पूर्ण भक्त नही रहे; उदाहरणार्थ—सुकरात ने प्रश्न-विधि (Questioning Method), प्लेटो ने सम्वाद-विधि (Dialectic Method), अरस्तू ने आगमन और निगमन विधि (Deductive & Inductive Method), हीगल ने तर्क-विधि (Logical Method), और हरबार्ट ने निर्देश-विधि (Instruction Method) को अपनाया।

हरबार्ट ने 'निर्देश' का प्रयोग व्यापक अर्थ मे किया है। इसका अर्थ—व्यवस्था या दमन न होकर, शैक्षिक निर्देश और सहानुभूतिपूर्ण मार्ग-प्रदर्शन है। हरबार्ट का मत है :—**"निर्देश के बिना शिक्षा की मेरी कोई धारणा नहीं है और मैं उस निर्देश को स्वीकार नहीं करता हूँ, जो शिक्षित नहो करता है।"**

"I have no conception of education without *instruction* and do not acknowledge any *instruction which does not educate.*"

—**Herbart.**

उपर्युक्त के अलावा, कुछ आदर्शवादियों ने व्याख्यान (Lecture) और वाद-विवाद (Discussion) विधियों को अपनाया। फ्रॉबेल ने 'खेल द्वारा शिक्षा' (Play-way in Education) पर बल दिया। पेस्टालॉजी ने 'अभ्यास व आवृत्ति' (Practice and Repetition) को सबसे उत्तम विधियाँ माना।

सक्षेप में, हम कह सकते हैं—आदर्शवादी विधियों का सार है—**"क्रिया और नियमित तथा निर्देशित स्वतन्त्रता"** (Activity, and regulated and guided freedom)।

आदर्शवाद व शिक्षक
Idealism & Teacher

आदर्शवाद शिक्षक को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान देता है। उसके अनुसार, शिक्षक के कार्य को फ्रॉबेल के किण्डरगार्टन वाले इस रूपक से बहुत अच्छी तरह स्पष्ट किया जा सकता है :—विद्यालय बाग है, छात्र कोमल पौधे है, और शिक्षक कुशल माली हैं। माली की अनुपस्थिति में भी पौधा बढ़ेगा और अपने उचित रूप को प्राप्त करेगा। प्रत्येक पौधा अपने स्वय के नियमों के अनुसार विकसित होगा। *यह असम्भव है कि गोभी का पौधा बड़ा होकर गुलाब का पौधा बन जाय।* फिर भी माली के लिए कुछ कार्य है। वह अपनी कला में कुशल होता है। इसलिए, वह गोभी और गुलाब—दोनो को उनके सर्वोत्तम रूप में विकसित कर सकता है। इस प्रकार, उसकी उपस्थिति में उससे कही अच्छे परिणाम प्राप्त होते है, जितने कि उसकी अनुपस्थिति में होते है।

यही बात शिक्षक के बारे मे है। उसे अपनी कला का ज्ञान होता है। इसलिए, वह बालकों के उत्तम विकास में सहायता दे सकता है। रॉस ने आदर्शवादी विचारधारा में शिक्षक के स्थान को इन शब्दों में बताया है :—"**प्रकृतिवादी कँटीली झाड़ियों से सन्तुष्ट हो सकता है, पर आदर्शवादी सुन्दर गुलाबों को पसन्द करता है। इसलिए, शिक्षक अपने प्रयासों से छात्र को, जो अपनी प्रकृति के नियमों के अनुसार** *विकसित होता है, उस उच्चता पर पहुँचाने में* **सहायता देता है, जिस पर वह अपने आप नहीं पहुँच सकता है।**"

आदर्शवाद व बालक
Idealism & Child

प्रकृतिवादियों के समान आदर्शवादी, शिक्षा को बाल-केन्द्रित नहीं मानते है। *आदर्शवादी, शिक्षा में आदर्शों या विचारों को केन्द्रीय स्थान देते हैं।* उनके अनुसार, *शिक्षक का मुख्य कर्तव्य—बालक में* उच्च आदर्शों को प्राप्त करने के लिए सूक्ष्म-वृक्ष का विकास करता है। वे पाठ्यक्रम का निर्माण भी आदर्शों के आधार पर करते हैं। *बालक को इन आदर्शों* को प्राप्त करना है। इस प्रकार, आदर्शवादी शिक्षा-योजना में आदर्शों या विचारों को प्रमुख स्थान और बालक को गौण स्थान दिया जाता है।

आदर्शवाद व अनुशासन
Idealism & Discipline

थॉमस और लेंग के अनुसार :—"**प्रकृतिवादियों का नारा 'स्वतन्त्रता' है,** *जब कि आदर्शवादियों का नारा 'अनुशासन' है।*"

"Freedom is the cry of the Naturalists, while discipline is that of the Idealists."—**Thomas & Lang.**

आदर्शवादियों का विश्वास है कि बालक का पूर्ण विकास तभी हो सकता है, जब वह अनुशासन में रहे। अनुशासन में रहकर ही वह आत्मानुभूति (Self-Realization) या आध्यात्मिकता (Spiritual Attainment) को प्राप्त कर सकता है। पर आदर्शवादी कठोर अनुशासन के पक्ष में नहीं है। फ्रॉबेल का कथन है :—"**बालक की रुचि का ज्ञान प्राप्त करके तथा प्रेम और सहानुभूति व्यक्त करके उस पर नियन्त्रण रखा जाना चाहिए।**"

"*Control over the child is to be exercised through a knowledge of his interest and by expression of love and sympathy.*"

—**Froebel.**

इस प्रकार, हम देखते है कि आदर्शवादियों का अनुशासन का सिद्धान्त उनकी स्वतन्त्रता की धारणा पर आधारित है। उनका मुख्य ध्येय है—'**अधीनता से युक्त स्वतन्त्रता का अधिकार और अनुशासन से सामंजस्य**' (To harmonise freedom

with subjection to authority and discipline)। दूसरे शब्दों मे, हम कह सकते हैं कि आदर्शवादी उचित प्रकार से निर्देशित स्वतन्त्रता के वातावरण में कठोर अनुशासन का समर्थन करते है। एक ओर वे बालक की क्रियाओं पर सहानुभूतिपूर्ण नियन्त्रण चाहते है; दूसरी ओर वे बाह्य नियन्त्रण और शारीरिक दण्ड की अनुपस्थिति चाहते है।

साराश में, वे प्रभावात्मक अनुशासन के पक्ष में हैं। वे नियमित स्वतन्त्रता पर आधारित अनुशासन चाहते हैं। उनके अनुसार अनुशासन का अर्थ है—नम्रता, शिष्टता, अधीनता और आज्ञाकारिता के नैतिक मूल्यों का विकास करना।

आदर्शवाद का मूल्यांकन
Estimate of Idealism

(अ) गुण : **Merits** —(1) आदर्शवादी शिक्षा में बालक के व्यक्तित्व का आदर किया जाता है।

(2) आदर्शवादी शिक्षा, बालकों में 'सत्यम् शिवम् और सुन्दरम्' ऐसे श्रेष्ठ गुणों का विकास करती है। फलस्वरूप, (बालकों में उत्तम चरित्र का निर्माण होता है।)

(3) आदर्शवाद—शिक्षा की प्रक्रिया में शिक्षक को अति महत्त्वपूर्ण स्थान देता है। इससे बालक और समाज—दोनों का हित होता है।

(4) आदर्शवाद—आत्म-अनुशासन और आत्म-नियन्त्रण के सिद्धान्तों को प्रतिपादित करता है। इन सिद्धान्तों का शिक्षा मे अति महत्त्वपूर्ण स्थान है।

(5) आदर्शवाद—शिक्षा के उद्देश्यों को निर्धारित करने मे अद्वितीय स्थान रखता है। केवल आदर्शवाद ही शिक्षा के उद्देश्यो की विस्तृत व्याख्या करता है।

(ब) दोष : **Demerits**—(1) आदर्शवाद के उद्देश्य 'अमूर्त' है, और इनका सम्बन्ध भविष्य से है।

(2) शिक्षण-विधि के क्षेत्र में आदर्शवाद की कोई देन नहीं है।

(3) आदर्शवाद—(बालक को गौण स्थान) और शिक्षक तथा आदर्श को मुख्य स्थान देता है।

(4) आदर्शवाद—(पाठ्यक्रम में आध्यात्मिक विषयों को स्थान देता है,) जिनकी आज के औद्योगिक युग मे आवश्यकता नही जान पड़ती है।

(5) आदर्शवाद हमें जीवन के अन्तिम ध्येय की ओर ले जाता है, जिससे हमे इस समय कोई प्रयोजन नही है। हम तो इस समय यह चाहते हैं कि हमारी रोटी, कपड़ा और मकान की आवश्यकताएँ पूरी होनी चाहिए।

निष्कर्ष

आज के भौतिकवादी दृष्टिकोण से उपर्युक्त दोषों को ठीक माना जा सकता है। परन्तु, यदि हम गम्भीरतापूर्वक विचार करें, तो हमें ये दोष निर्मूल जान पड़ते हैं। सत्य यह है कि इस भौतिकवादी युग को अपने संघर्षों, कलहों और वैमनस्यों से आदर्शवाद का ही सहारा लेकर मुक्ति मिल सकती है। हम जानते हैं कि हमारे लिए रोटी, कपड़ा और मकान आवश्यक है, पर ये ही हमारे जीवन के लिए सब-कुछ नहीं है। आज पश्चिमी भौतिकवादी जगत् भी इस निष्कर्ष पर पहुँच गया है कि आदर्शवाद ही मानव को सुख और शान्ति दे सकता है।

रस्क ने आदर्शवाद की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। उसके विचार से केवल आदर्शवाद ही शिक्षा का सन्तोषजनक आधार है। उसका कथन है कि भौतिक संसार, जिसे विज्ञान जानता है, अपूर्ण वास्तविकता है। इसे आदर्शवाद का आध्यात्मिक संसार ही पूर्ण करता है। इसके अतिरिक्त, आदर्शवाद मनुष्य की प्रकृति की विशिष्टता पर बल देता है और मनुष्य को मानसिक, सांस्कृतिक, नैतिक और धार्मिक शक्तियों पर अधिकार देता है।

रस्क ने आगे लिखा है :—"ये शक्तियाँ और इनके परिणाम मनुष्य की विशेषताएँ हैं, और ये उसको दूसरे जीवधारियों से भिन्न बनाती हैं। ये शक्तियाँ जीव-विज्ञान और मनोविज्ञान ऐसे वास्तविक विज्ञानों की सीमा में नहीं आती हैं। ये शक्तियाँ ऐसी समस्याएँ प्रस्तुत करती है, जिनको केवल दर्शन ही हल कर सकता है, और केवल ये ही शिक्षा के सन्तोषजनक आधार, अर्थात् दार्शनिक आधार का निर्माण करती हैं।"

"These powers and their products are peculiar to man, and differentiate him from other animals; they lie beyond the range of the positive sciences—biological and even psychological; they raise problems which only philosophy can hope to solve, and make the only satisfactory basis of education a philosophical one."—Rusk.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. "Idealism shifts emphasis from the natural or scientific facts of life to the spiritual aspects of human experiences." Comment and elucidate.

"आदर्शवाद, जीवन के भौतिक या वैज्ञानिक तथ्यों की अपेक्षा मानव-अनुभव के आध्यात्मिक पक्षों पर बल देता है।" इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

2. "Idealism has made a greater contribution to the aims and objectives of education, than to its methods." *Do you agree*

with this statement ? If so, advance arguments in support of your answer.

"आदर्शवाद ने शिक्षण-विधियों की अपेक्षा शिक्षा के उद्देश्यों के सम्बन्ध में अधिक योग दिया है।" क्या आप इस कथन से सहमत हैं ? यदि हाँ, तो अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दीजिए।

3. Explain briefly the stand-points of Idealism in education with regard to aims, curriculum and discipline.

उद्देश्य, पाठ्यक्रम तथा अनुशासन के सम्बन्ध में आदर्शवाद के अभिमतों का स्पष्टीकरण कीजिए।

4. Explain the nature of the curriculum and the image of the teacher from the idealistic stand-point in education.

शिक्षा में आदर्शवाद के दृष्टिकोण से पाठ्यक्रम और शिक्षक के स्वरूप की व्याख्या कीजिए।

5. What do you understand by Idealism in Education ? What is its importance and contribution in creating and maintaining a good social order ?

शिक्षा में आदर्शवाद से आप क्या समझते हैं ? उत्तम समाज-व्यवस्था के निर्माण तथा संचालन में उसका क्या महत्त्व तथा योगदान है ?

23

शिक्षा में प्रकृतिवाद
NATURALISM IN EDUCATION

"प्रकृतिवाद—तत्त्वमीमांसा का वह रूप है, जो प्रकृति को पूर्ण वास्तविकता मानता है; अर्थात्—यह परा-प्राकृतिक या दूसरे जगत् को अपने क्षेत्र से बाहर रखता है।"

"Naturalism is the type of metaphysics which takes Nature as the whole of reality. That is, it excludes whatever is supernatural or other worldly."—W. E. Hocking.

प्रकृतिवाद का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Naturalism

(1) प्रकृतिवाद का अर्थ : Meaning of Naturalism—'प्रकृतिवाद'—तत्त्वमीमासा का वह रूप है, जो प्रकृति को पूर्ण वास्तविकता मानता है। यह अलौकिक और पारलौकिक को नहीं मानता है। जो बातें प्राकृतिक नियम से स्वतन्त्र जान पड़ती है, जैसे मानव-जीवन या कल्पना की उपज—वे भी वास्तव में प्रकृति की योजना में आती है। प्रत्येक वस्तु, प्रकृति से उत्पन्न होती है और उसी में विलीन हो जाती है।

निस्सन्देह, कुछ बात ऐसी है, जिनका हमें ज्ञान नहीं है। विज्ञान इन्हीं को जानने का प्रयत्न करता है। पर ये बातें स्वय प्रकृति ही है और कुछ नहीं, प्रकृति से परे या प्रकृति के बाद कुछ नहीं है। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि "प्रकृति का अर्थ क्या है?" इसका अर्थ है—स्थान और समय में होने वाली ऐसी बातें और घटनाएँ जो समान नियमो के अनुसार होती हैं।

(2) प्रकृतिवाद की परिभाषा : Definition of Naturalism—हम प्रकृतिवाद के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषायें नीचे दे रहे हैं :—

1. थॉमस और लेंग :—"प्रकृतिवाद, आदर्शवाद के विपरीत मन को पदार्थ के अधीन मानता है, और यह विश्वास करता है कि अन्तिम वास्तविकता—भौतिक है, आध्यात्मिक नहीं।"

"Naturalism, as opposed to Idealism, subordinates mind to matter, and *holds that ultimate reality is material, not spiritual.*"

—Thomas & Lang.

2. पेरी :—"प्रकृतिवाद, विज्ञान नहीं है, वरन् विज्ञान के बारे में दावा है। अधिक स्पष्ट रूप से यह इस बात का दावा है कि वैज्ञानिक ज्ञान अन्तिम है, जिसमे विज्ञान से बाहर या दार्शनिक ज्ञान का कोई स्थान नहीं है।"

"Naturalism is not science but an assertion about science. More specifically, *it is the assertion that scientific knowledge is* final, leaving no room for extra-scientific or philosophical knowledge"—R. B. Perry.

3. जेम्स वार्ड :—"प्रकृतिवाद वह सिद्धान्त है, जो प्रकृति को ईश्वर से पृथक् करता है, आत्मा को पदार्थ के अधीन करता है और अपरिवर्तनीय नियमों को सर्वोच्चता प्रदान करता है।"

"Naturalism is the doctrine which separates nature from God, subordinates spirit to matter, and sets up unchangeable laws as supreme."—James Ward.

प्रकृतिवाद का दार्शनिक दृष्टिकोण
Philosophical Outlook of Naturalism

तत्त्व-दर्शन में प्रकृतिवाद : Naturalism in Metaphysics—प्रकृतिवादी—परमाणु को सत्, अनश्वर एवं अविभाज्य मानते है। ये परमाणु आकार एवं मात्रा में भिन्न होते हैं। इन्ही के संयोग से ब्रह्माण्ड की रचना होती है। जो-कुछ हम देखते हैं, वह परमाणुओ के सयोग का फल है। प्रकृतिवादियों के अनुसार, मनुष्य—इन्द्रियों एवं विभिन्न शक्तियों का समन्वित रूप है। यह सब प्रकृति का खेल है। इसमें आत्मा नामक चेतन तत्त्व नही है। सम्पूर्ण सृष्टि मे नियम विद्यमान हैं। सब कार्य नियमानुसार होते है। इसलिए, मनुष्य भी नियमाधीन है और उसमें स्वतन्त्र इच्छा जैसी कोई शक्ति नही है। ये नियम, प्रकृति के स्वयं के नियम है। प्रकृति के नियम, शाश्वत एवं अपरिवर्तनशील है। इसमे प्रयोजन नाम की वस्तु के लिए कोई स्थान नहीं है। इसमें परिवर्तन किसी प्रयोजन से नही होते है, वरन् कार्य-कारण सम्बन्ध के आधार पर अपने-आप स्वयं हो जाते हैं।

ज्ञान-शास्त्र में प्रकृतिवाद : Naturalism in [illegible] —प्रत्यक्ष ज्ञान का समर्थन करते है। वे इन्द्रियों तथा अनुभव के माध्यम से ज्ञान की प्राप्ति पर बल देते है। वे इन्द्रियो द्वारा प्राप्त किए जाने वाले ज्ञान को सत्य मानते है। हरबर्ट स्पेन्सर इस ज्ञान को निम्न स्तर के ज्ञान से ऊँचा और तत्त्व-ज्ञान से निम्न मानता है। तत्त्व-ज्ञान पूर्णरूपेण सगठित ज्ञान होता है। इसको स्पेन्सर ने सर्वोत्तम प्रकार का ज्ञान बताया है। रूसो ने शिक्षा के सब स्तरों पर प्रत्यक्ष ज्ञान को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करने के लिए कहा है। प्रकृतिवादी—ज्ञान प्राप्त करने की विधि के सम्बन्ध में अनुभववाद की ओर झुकते हैं। वे सत्य को अनुभव में प्राप्त करने के समर्थक है।

प्रकृतिवाद के रूप
Forms of Naturalism

1. पदार्थवादी प्रकृतिवाद : Physical Naturalism—इस वाद का सम्बन्ध बाह्य प्रकृति (External Nature) से है। यह पदार्थ-जगत् (Physical World) के अनुसार मनुष्य को समझने का प्रयत्न करता है। इसने शिक्षा को कोई योगदान नही दिया है।

2. यन्त्रवादी प्रकृतिवाद : Mechanical Naturalism—यह वाद, मनुष्य को मनुष्य मानता है और उसके चेतन तत्त्व की उपेक्षा करता है। इस वाद ने 'व्यवहारवादी मनोविज्ञान' (Psychology of Behaviourism) को जन्म दिया है। उसने शिक्षा को काफी योगदान दिया है।

3. जीव-विज्ञानवादी प्रकृतिवाद : Biological Naturalism—यह वाद, पशु और मनुष्य के विकास की निरन्तरता में विश्वास करता है। इस वाद के दो महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त हैं :—(1) जीवन के लिए संघर्ष (Struggle for Existence), और (2) सबसे उपयुक्त का अस्तित्व (Survival of the Fittest)

पहले सिद्धान्त के अनुसार—प्राणी को जीवित रहने के लिए सघर्ष करना पड़ता है। दूसरे के अनुसार—वही प्राणी जीवित रहता हैं, जो उपयुक्त और शक्तिशाली होता है। इस वाद का शिक्षा के लिए सबसे अधिक योगदान है।

प्रकृतिवादियों के सम्प्रदाय
Schools of Naturalists

शैक्षिक दृष्टिकोण से प्रकृतिवादियों को अधोलिखित तीन सम्प्रदायों, श्रेणियों या समूहों में बाँटा जा सकता है :—

1. मूल-प्रवृत्यात्मकवादी व पदार्थवादी प्रकृतिवादी : Instinctivists & Physical Naturalists—इस सम्प्रदाय के प्रकृतिवादी बिना किसी नियन्त्रण के स्वतन्त्र विकास पर बल देते है। उनका कहना है कि बालक की मूल-प्रवृत्तियों को अपना मार्ग अपने-आप अपनाने के लिए छोड़ देना चाहिए। उसका विकास स्वाभाविक और अन्दर से, न कि बाहर से होना चाहिए। उसे प्रकृति के बीच में रहकर स्वयं

ही शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, क्योंकि प्राकृतिक वस्तुएँ और घटनाएँ उसको शिक्षित करने के लिए काफी है। प्रकृति उसके लिए खुली हुई पुस्तक के समान है और निश्चय रूप से सबसे अच्छी किताब है। साथ ही, यह सरल है और कहीं से भी पढ़ी जा सकती है।

इन प्रकृतिवादियों के अनुसार, प्रत्येक बालक में दो मूलभूत प्रेरणाएँ (Basic Urges) पाई जाती है :—(1) अभिव्यक्ति (Expression), और (2) क्रिया (Activity)। बालक के व्यक्तित्व के विकास के लिए इन दोनों प्रेरणाओं को पूरी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए।

2. डारविनवादी व जीव-विज्ञानवादी प्रकृतिवादी : Darwinians & Biological Naturalists—अंग्रेज़ी प्रकृतिवादी डारविन (Darwin) और फ्रांसीसी वैज्ञानिक लेमार्क (Lamarck) ने मानव-विकास की खोज का काम किया। उन्होंने बताया कि जीवन को बनाये रखने के लिए निरन्तर संघर्ष होता है। इस संघर्ष में शक्तिशाली जीवित रह जाते है और निर्बल नष्ट हो जाते हैं। उन्होंने कहा कि जीवन स्थायी नहीं है, वरन् सदैव परिवर्तन होने वाली घटना है। अतः मनुष्य के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने-आप को परिवर्तित होने वाले जीवन के अनुकूल बनाये। ऐसा न करने पर वह नष्ट हो जायगा। उसको अनुकूल बनाना शिक्षा का कार्य होना चाहिए।

अतः शिक्षा—व्यक्ति में परिवर्तन करने के लिए होनी चाहिए। यह तभी सम्भव है, जब शिक्षा का स्वरूप विकासवादी हो। शिक्षा का एक स्तर स्वाभाविक रूप से दूसरे स्तर तक पहुँचना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि शिक्षा का दूसरा स्तर पहले स्तर से स्वाभाविक रूप से विकसित होना चाहिए। बालक के लिए शिक्षा की योजना बनाते समय प्रत्येक स्तर पर उसके शारीरिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक विकास को ध्यान में रखना चाहिए।

3. प्रायोगिक प्रकृतिवादी : Experimental Naturalists—इन प्रकृतिवादियों का विश्वास है कि मानव-जाति की सब क्रियाओं और अनुभवों का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाना चाहिए। उसके बाद ही जीवन के सत्यों को निश्चित किया जाना चाहिए। इन प्रकृतिवादियों के अनुसार, शिक्षा का उद्देश्य है—"पूर्ण जीवन के लिए सम्पूर्ण मनुष्य की समस्त शिक्षा" ("Total education of the whole man for a complete life.")।

प्रकृतिवाद के मुख्य सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व

Main Principles of Essential Features of Naturalism

थॉमस और लैंग ने प्रकृतिवाद के निम्नलिखित सिद्धान्त बताये हैं :—

1. संसार एक बड़ी मशीन है।
2. केवल विज्ञान ही ज्ञान देता है।
3. कोई भी चीज पूर्ण रूप से अच्छी या बुरी नहीं है।

4. ज्ञान और सत्य का आधार—इन्द्रियों का अनुभव है।
5. समस्त ज्ञान का आधार—जन्मजात धारणाएँ या सिद्धान्त नहीं है।
6. प्रत्येक वस्तु प्रकृति से उत्पन्न होती है और उसी में विलीन हो जाती है।
7. वास्तविकता की व्याख्या केवल प्राकृतिक विज्ञानों द्वारा की जा सकती है।
8. अपरिवर्तनीय प्राकृतिक नियम सब घटनाओं को भली प्रकार स्पष्ट करते हैं।
9. विकास की प्रक्रिया में मस्तिष्क एक घटना है। यह उच्च कोटि के जीवों में अधिक विकसित नाड़ी-मंडल का समूह है।
10. मनुष्य के सांसारिक जीवन की भौतिक दशाएँ विज्ञान की खोजों और मशीनों के आविष्कारों द्वारा बदल दी गई है।
11. नैतिक मूलप्रवृत्ति, जन्मजात अन्तर्रात्मा, परलोक, वैयक्तिक अमरता, चमत्कार, ईश्वर-कृपा, प्रार्थना-शक्ति और इच्छा की स्वतन्त्रता, भ्रम है।

प्रकृतिवाद व शिक्षा
Naturalism & Education

शिक्षा में प्रकृतिवाद का आन्दोलन—बेकन (Bacon) और कॉमेनियस (Comenius) ने शुरू किया। इस आन्दोलन को रूसो ने चरम सीमा पर पहुँचाया। इसके फलस्वरूप, शिक्षा को अधोलिखित सामान्य सूत्र (General Maxims of Naturalism for Education) प्राप्त हुए। इन्हीं को कुछ **प्रकृतिवादी शिक्षा की विशेषताएँ** कहते हैं :—

1. *प्रकृतिवाद का अनुसरण (Follow Nature)*
2. बालक की केन्द्रीय स्थिति (Central Position of Child)
3. *बालक के लिए स्वतन्त्रता आवश्यक (Freedom Necessary for Child)*
4. *इन्द्रियाँ : ज्ञान के द्वार* (Senses the Gateways to Knowledge)
5. *पुस्तकीय शिक्षा : अनावश्यक* (No Bookish Education)

(1) **प्रकृति का अनुसरण : Follow Nature**—शिक्षा में *प्रकृतिवाद का सबसे महत्त्वपूर्ण सूत्र(कॉमेनियस ने प्रदान किया है, यह है :—"प्रकृति का अनुसरण करो।"* प्रकृतिवादियों का विश्वास है कि बालक का स्वाभाविक विकास केवल प्राकृतिक वातावरण में ही हो सकता है। उसका विकास विद्यालय के कृत्रिम वातावरण में होना सम्भव नहीं है।)

प्रकृतिवादी, शिक्षा के क्षेत्र में 'प्रकृति' शब्द का प्रयोग दो अर्थों में करते है :—(1) भौतिक प्रकृति; और (2) बालक की प्रकृति। 'बालक की प्रकृति' का अर्थ है—मूल-प्रवृत्तियाँ, आवेग, प्रवृत्तियाँ, और क्षमताएँ—जिनको बालक अपने जन्म के साथ लाता है। भौतिक प्रकृति—वाह्य प्रकृति है। बालक की प्रकृति—आन्तरिक प्रकृति है। वाह्य प्रकृति बालक को *सीखने के नियम देती है। इन नियमों को बालक*

की आन्तरिक प्रकृति के अनुसार प्रयोग में लाना चाहिए, क्योंकि तभी वह सरलता से सीख सकता है।

(2) बालक की केन्द्रीय स्थिति : Cental Position of Child—प्रकृतिवादियों का विश्वास है कि शिक्षा की प्रक्रिया में बालक का स्थान केन्द्रीय है। दूसरे शब्दों में, उनका विचार है कि बालक—शिक्षा के लिए नहीं, वरन् शिक्षा—बालक के लिए है। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षक पहले बालक की प्रकृति का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करे और फिर उसके स्वाभाविक, निरन्तर और क्रमिक विकास के लिए साधन जुटाए।

प्रकृतिवादी—बालक को बालक, न कि वयस्क मानकर शिक्षा देने का कार्य करते हैं। उनका कहना है कि प्रकृति उनको मनुष्य बनने से पहले बालक के रूप में चाहती है। अतः वे इस बात पर बल देते हैं कि बालक पर वयस्कों के विचार नहीं लादे जाने चाहिए। इसके विपरीत, उसे इस बात का अवसर दिया जाना चाहिए कि वह अपने अनुभवों और प्रयासों के आधार पर अपने विचारों का निर्माण करे। रॉस (Ross) का कथन है :—**"प्रकृतिवादी शिक्षा के चित्र में प्रमुख स्थान बालक का है—न कि शिक्षक, स्कूल, पुस्तक या अध्ययन की वस्तु का।"**

(3) बालक के लिए स्वतन्त्रता आवश्यक : Freedom Necessary for Child—प्रकृतिवादियों का कहना है कि बालक के लिए स्वतन्त्रता आवश्यक है। वे कॉमेनियस के इस कथन में विश्वास करते हैं :—**"प्रकृति ठीक समय पर कार्य करती है।"**

अतः उनका कहना है कि बालक को उसकी रुचियों के अनुसार विकसित होने दिया जाय, और उसके किसी कार्य में बाधा न डाली जाय। वे उन बातों की निन्दा करते है, जो बालक को उसकी इच्छा के अनुसार कार्य नहीं करने देती हैं। वे शारीरिक दण्ड और भय तथा चिन्ता उत्पन्न करने वाली बातों से घृणा करते हैं, क्योंकि ये सभी बातें बालक का स्वाभाविक विकास नहीं होने देती है। वे इस बात में विश्वास करते हैं :—**"बालक अच्छा प्राणी है, खराब नहीं। वह जन्म के समय अच्छा होता है, और यदि भय तथा घृणा की सब बातों को दूर कर दिया जाय, तो वह अच्छा ही रहता है।"**

इस प्रकार, प्रकृतिवादियों का विश्वास है कि बालक जन्म से अच्छा होता है और अच्छा ही रहता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि उसे अपने स्वाभाविक विकास के लिए स्वतन्त्रता अनिवार्य रूप से प्राप्त हो।

(4) इन्द्रियाँ : ज्ञान के द्वार : Senses the Gateways to Knowledge—रूसो का कथन है :—**"शिक्षा को इन्द्रियों का उचित प्रयोग करके ज्ञान का द्वार खोलना चाहिए।"**

"Education should prepare the way for reason by the proper exercise of senses."—Rousseau.

रूसो के अनुसार—5 वर्ष से 12 वर्ष की आयु तक बच्चे की इन्द्रियों को प्रयोग में लाना चाहिए। इसलिए, प्रकृतिवादी—इन्द्रियों के प्रशिक्षण को बहुत महत्त्व देते है। वे कहते है कि इन्द्रियाँ—ज्ञान के द्वार है। अतः ज्ञान को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए बच्चे की इन्द्रियों को प्रशिक्षण देना आवश्यक है।

(5) पुस्तकीय शिक्षा : अनावश्यक : No Bookish Education—प्रकृतिवादी पुस्तकीय शिक्षा को अनावश्यक मानते है। रूसो ने लड़कपन में, जो मानसिक शिक्षा का काल है, केवल *"Robinson Crusoe"* पढ़ाने की अनुमति दी है। उसका मत है कि इस काल की सब शिक्षा का आधार 'करके सीखना', 'निरीक्षण' और 'अनुभव' होना चाहिए। इस सम्बन्ध मे *एडम्स (Adams) ने लिखा है :*—**"शिक्षा में प्रकृतिवाद का सामान्य अर्थ—उन सब शिक्षा-पद्धतियों से है, जो विद्यालयों और पुस्तकों पर निर्भर न होकर, छात्र के वास्तविक जीवन के अध्ययन पर निर्भर रहती हैं।"**

प्रकृतिवाद व शिक्षा के उद्देश्य
Naturalism & Aims of Education

(1) पदार्थवादी प्रकृतिवादियों के विचार : Views of Physical Naturalists —*इन प्रकृतिवादियो का शिक्षा के लिए कोई योगदान नहीं है। अतः इनके शिक्षा के कोई उद्देश्य नही है।*

(2) यन्त्रवादी प्रकृतिवादियों के विचार : Views of Mechanical Naturalists—इन प्रकृतिवादियो के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य है :—**"सम्बद्ध सहज क्रियाओं को उत्पन्न करना, जो आधुनिक जीवन के लिए उपयुक्त क्रिया और विचार की आदतें हैं।"**

"Conditioned reflexes that are habits of action and thought appropriate to modern life."—**Mechanical Naturalists.**

इन प्रकृतिवादियों का कहना है कि शिक्षा का कार्य—व्यक्ति में ऐसे व्यवहार का विकास करना है, जिससे कि वह मशीनों के समान कुशलतापूर्वक कार्य कर सके।

(3) जीव-विज्ञानवादी प्रकृतिवादियों के विचार : Views of Biological Naturalists—इन प्रकृतिवादियो का कहना है कि शिक्षा का उद्देश्य—मनुष्य के वर्तमान और भावी सुख को सुरक्षित रखना है। इन प्रकृतिवादियो में तीन मुख्य है—(1) नव-डार्विनवादी, (2) नव-लैमार्कवादी, और (3) स्पेन्सर। इनके विचारों को हम आगे अलग से दे रहे हैं :—

(i) नवडार्विनवादियों के विचार : *Views of Neo-Darwinians*—नव-डार्विनवादी—शिक्षा के उद्देश्यो को इस विचार पर आधारित करते है—मनुष्य का विकास जीवन के निम्नतर स्तरों से हुआ है। उसका कहना है कि प्राणी को अपने जीवन को बनाये रखने के लिए वातावरण से निरन्तर संघर्ष करना पड़ता है। अस्तित्व के इस सघर्ष में शक्तिशाली या सबसे उपयुक्त तो जीवित रह जाते हैं, पर

निर्बल नष्ट हो जाते हैं। इसलिए, शिक्षा का उद्देश्य यह होना चाहिए कि वह व्यक्ति को जीवन के संघर्ष के लिए तैयार करे, और इस प्रकार उसके जीवन को सुरक्षित रखे।

(ii) नव-लैमार्कवादियों के विचार : Views of Neo-Lamarckians—नव-डार्विनवादियों के समान नव-लैमार्कवादी भी जीवन के निम्नतर स्तरों से मनुष्य के विकास में विश्वास करते हैं। पर वे इसकी व्याख्या दूसरे ढंग से करते हैं। नव-लैमार्कवादियों का कहना है :—**"प्राणी में अपने-आपको, अपनी आदतों को और अपने शारीरिक ढाँचे को अपनी परिस्थितियों के अनुकूल बनाने की शक्ति होती है।"**

"The power of the living creature to adapt itself, its habits and its bodily structure to the circumstances in which it finds itself."—**Neo-Lamarckians.**

इस प्रकार नव-लैमार्कवादियों के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य है—व्यक्ति को अपने वातावरण से अनुकूलन करने के योग्य बनाना।

(iii) स्पेन्सर के विचार : Views of Spencer—**हरबर्ट स्पेन्सर** का कथन है कि अपने-आप की सुरक्षा आवश्यक है और आत्म-सन्तोष—मानव-जीवन का सर्वश्रेष्ठ गुण है। आत्म-सन्तोष ही मनुष्य के वर्तमान और भावी सुख का आधार है। अतः शिक्षा का उद्देश्य—बालक की मूल-प्रवृत्तियों और स्वाभाविक आवेगों का विकास करना है। इसके अतिरिक्त, शिक्षा का उद्देश्य—बालक को आत्म-संरक्षण और आत्म-सन्तोष प्राप्त करने में भी सहायता देना है।

(4) बर्नार्ड शॉ के विचार : Views of Bernard Shaw—**बर्नार्ड शॉ**—नव-लैमार्कवादियों से भी एक कदम आगे है। उसके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य यह है—विकास की गति और प्रजातीय प्रगति को तेज करना।

(5) नन के विचार : Views of Nunn—**नन** आदर्शवादी है, पर उसने शिक्षा के उद्देश्यों पर जीव-विज्ञानवादी और प्रकृतिवादी दृष्टिकोणों से विचार किया है। उसके अनुसार, शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है—"व्यक्ति का स्वतन्त्र विकास"। उसका दृढ़ विश्वास है कि जिस शिक्षा का उद्देश्य—प्रकृति के अनुसार वैयक्तिकता का विकास करना है, केवल वही सच्ची शिक्षा है।

हमने शिक्षा के उद्देश्यों के बारे में विभिन्न प्रकृतिवादियों के विचारों की ऊपर की पंक्तियों में विवेचना की है। उनके आधार पर हम कह सकते हैं कि प्रकृतिवाद के अनुसार, शिक्षा के उद्देश्य निम्नलिखित हैं :—

1. उचित सहज सम्बद्ध क्रियाओं का निर्माण (Formation of Appropriate Conditioned Reflexes)
2. मूल-प्रवृत्तियों का शोधन, मार्गान्तीकरण और समन्वय (Sublimation, Redirection & Co-ordination of Instincts)

3. जीवन-संघर्ष के लिए तैयारी (Preparation for the Struggle for Existence)
4. वातावरण से अनुकूलन करने की क्षमता (*Capacity for Adaptation to Environment*)
5. आत्म-संरक्षण और आत्म-संतोष की प्राप्ति (Attainment of Self-Preservation & *Self-Satisfaction*)
6. विकास की गति की तीव्रता (Acceleration of the Pace of *Evolution*)
7. प्रजातीय प्रगति की प्राप्ति (Achievement of Racial Improvement)
8. वैयक्तिकता का स्वतन्त्र विकास (Autonomous Development of *Individuality*)

प्रकृतिवाद व पाठ्यक्रम
Naturalism & Curriculum

प्रकृतिवादी, बालक को पाठ्यक्रम का आधार मानते है। इसलिए, उनका कहना है कि पाठ्यक्रम का निर्माण बालक की रुचियो, योग्यताओं, और स्वाभाविक क्रियाओं के अनुसार होना चाहिए। वे कहते है कि पाठ्यक्रम ऐसा बनाया जाय कि *बालक के विकास की विभिन्न अवस्थाओं की आवश्यकताएँ पूरी हो सकें। ये आवश्यकताएँ* उसके वर्तमान और वास्तविक जीवन की है। प्रायः सभी प्रकृतिवादियों ने पाठ्यक्रम के बारे मे अपने विचार प्रकट किए है। हम उनमें से प्रमुख के विचारों का वर्णन कर रहे है; यथा :—

(1) कॉमेनियस के विचार : Views of Comenius—कॉमेनियस *यह नही चाहता है कि पाठ्य-विषयो में से कुछ विषय बालक को पढाने के लिए चुने जायें।* उसका कहना है कि सब छात्रो को सब विषय पढ़ाये जायें। रस्क के अनुसार :— **कॉमेनियस का उद्देश्य—सब मनुष्यों को सब विषय पढ़ाना था। वह सब विषयों में से कुछ को चुनना आवश्यक नहीं समझता था।"**

"Comenius's aim was to teach all things to all men, no selection being deemed necessary."—**Rusk.**

(2) स्पेंसर के विचार : Views of Spencer—स्पेंसर का कहना है कि *शिक्षा देने से पहले हमारा मुख्य कार्य यह है कि हम मानव-जीवन की प्रमुख क्रियाओं* का उनके महत्त्व के अनुसार वर्गीकरण करें। उसने इन क्रियाओ को पाँच भागो मे बाँटा है, और इन क्रियाओ के अनुसार शिक्षा के विषयों को बताया है। ये क्रियाएँ और इनसे सम्बन्धित विषय आगे दिये जा रहे है :—

1. वे क्रियाएँ—जो प्रत्यक्ष रूप मे आत्म-संरक्षण मे सहायता देती हैं। इनसे सम्बन्धित विषय है—शरीर-विज्ञान, स्वास्थ्य-विज्ञान आदि।

2. वे क्रियाएँ—जो अप्रत्यक्ष रूप मे आत्म-संरक्षण के लिए जीवन की आवश्यकताओं को पूर्ण करने मे सहायता देती है; जैसे—भोजन, वस्त्र, मकान। इन क्रियाओं से सम्बन्धित विषय है—भौतिक विज्ञान, गणित, भूगोल आदि।
2. वे क्रियाएँ—जो सन्तान के पालन-पोषण में सहायता देती हैं। इनसे सम्बन्धित विषय हैं—गृह-शास्त्र, शरीर-विज्ञान, बाल-मनोविज्ञान आदि।
4. वे क्रियाएँ—जो मनोरंजन और व्यक्ति की रुचियों तथा भावनाओं को सन्तुष्ट करने में सहायता देती है। इनसे सम्बन्धित विषय है—कला, भाषा, साहित्य आदि।
5. वे क्रियाएँ—जो सामाजिक और राजनैतिक सम्बन्धों की स्थापना; और व्यक्ति को योग्य नागरिक तथा पड़ोसी बनाने में सहायता देती हैं। इनसे सम्बन्धित विषय है—इतिहास, अर्थशास्त्र, समाज-शास्त्र, राजनीति-शास्त्र आदि।

रस्क (Rusk) ने स्पेंसर के पाठ्यक्रम सम्बन्धी विचारों का निचोड़ देते हुए लिखा है :—"**जिस प्रकार हरबार्ट के अनुयायियों ने इतिहास को केन्द्रीय विषय** ***बनाकर शिक्षा देने का प्रयास किया, उसी प्रकार स्पेंसर ने विज्ञान को केन्द्रीय विषय*** **बनाया। इसके लिए स्पेंसर का तर्क यह था कि विज्ञान-केन्द्रित पाठ्यक्रम उदार शिक्षा था।**"

(3) **हक्सले के विचार : Views of Huxley**—टी० एच० हक्सले, प्रकृतिवादी है, पर स्पेंसर और अन्य प्रकृतिवादियो के समान वह विज्ञान के अध्ययन पर बल नहीं देता है। विज्ञान के बजाय वह सांस्कृतिक पहलू को अधिक महत्त्व देता है।

उपर्युक्त प्रकृतिवादियों ने पाठ्यक्रम के बारे मे जो विचार व्यक्त किये है, उनके आधार पर हम कह सकते हैं कि प्रकृतिवाद के अनुसार, पाठ्यक्रम मे निम्नलिखित तत्त्व होने चाहिए :—

1. बालक को पाठ्यक्रम का आधार होना चाहिए।
2. सभी विषयों के लिए 'विज्ञान' को केन्द्रीय विषय बनाया जाना चाहिए।
3. *पाठ्यक्रम में 'जीवन-रक्षा' सम्बन्धी विषयो को प्रधानता दी जानी* चाहिए।
4. पाठ्यक्रम को बालक के विकास की विभिन्न आवश्यकताओ को पूरा करना चाहिए।
5. पाठ्यक्रम, बालक की रुचियों, योग्यताओ और स्वाभाविक क्रियाओ के अनुसार होना चाहिए।
6. पाठ्यक्रम के सब विषय सब बालकों को पढ़ाये जाने चाहिए। पढ़ाते समय विषयों मे से कुछ का चुनाव नहीं किया जाना चाहिए।
7. पाठ्यक्रम में अग्रलिखित विषयों को उनके सापेक्षिक महत्त्व के अनुसार

शरीर-विज्ञान, स्वास्थ्य-विज्ञान, भौतिक-
हास, गृह-शास्त्र, बाल-मनोविज्ञान, अर्थ-
ति-शास्त्र, कला, भाषा और साहित्य।

स्थान दिया जाना चाहिए— **शिक्षण-विधियाँ**
विज्ञान, गणित, भूगोल, इति **thods of Teaching**
शास्त्र, समाज-शास्त्र, राजनी द की देन बहुत महत्त्वपूर्ण है। यह प्राचीन

प्रकृतिवाद व द्ध क्रान्ति है। यह रटने और निष्क्रिय
Naturalism & Me र 'अनुभव द्वारा सीखने' का समर्थन करता

शिक्षण-विधियों के क्षेत्र में प्रकृतिव। पर प्रकृतिवाद की सब शिक्षण-विधियाँ
और परम्परागत शिक्षण-विधियों के वि **मौखिक पाठ मत पढ़ाओ। उसे केवल**
अभ्यास का विरोध तथा 'करके सीखने' औ **, आप कार्य द्वारा पढ़ायें और शब्दों का**
है। इसके बारे में रूसो की सलाह, जि **म्भव न हो।"**
आधारित है, यह थी :—"अपने छात्र व bal lessons; he should be taught
अनुभव से सीखने दो। जब भी सम्भव ing whenever you can; and only
सहारा केवल तभी लें, जब कार्य करना ह out of question."—**Rousseau.**

"*Give your scholar no ve* त्रों के ज्ञान का आधार—उनका स्वयं का
by experience alone. Teach by d उदाहरणार्थ—विज्ञान पुस्तकों से, चाक से
fall back on words when doing i करके नहीं पढ़ाया जाना चाहिए। इसके

प्रकृतिवादियों का कहना है कि ने स्वयं के कार्यों से या स्कूल के बाहर
'अनुभव' और 'निरीक्षण' होना चाहिए; र विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए।
बोर्ड पर चित्र बनाकर या शब्दों का प्रयो धि' को बहुत उत्तम समझते हैं। खेल ही
विपरीत, छात्रों को प्रयोगशाला में अ ता है। खेल ही उसे अनेक प्रकार से अपने
प्राकृतिक घटनाओं को प्रत्यक्ष रूप में देख

प्रकृतिवादी—शिक्षा की 'खेल-वि क शिक्षा-पद्धतियों को जन्म दिया है; जैसे—
बालक की गुप्त शक्तियों को प्रदर्शित कर d), डाल्टन पद्धति (Dalton Method),
को व्यक्त करने का अवसर देता है। thod), निरीक्षण पद्धति (*Observation*

प्रकृतिवादियों के सिद्धान्तों ने अ *ay Method*)।
ह्यूरिस्टिक पद्धति (Heuristic Meth ता है कि प्रकृतिवादियों ने हमें महत्त्वपूर्ण
मॉन्टेसरी पद्धति (Montessori M नियन्त्रित स्वतन्त्रता के वातावरण में बालक
Method), और खेल पद्धति (Play-W क कार्य और संगठित विकास का अवसर

इन पद्धतियों से स्पष्ट हो ज
शिक्षण-विधियाँ दी है। ये विधियाँ अ **ाद व शिक्षक**
को स्व-शिक्षा, आत्म-प्रदर्शन, रचनात **sm & Teacher**
देती हैं। शिक्षक' का स्थान गौण है। प्रकृतिवादियों का

प्रकृति वास्तविक शिक्षक है। वे बालक की शिक्षा में
Natural

'प्रकृतिवादी शिक्षा-योजना में '
कहना है कि प्रकृति ही बालक का

शिक्षक को किसी प्रकार का भी हस्तक्षेप करने की आज्ञा नहीं देते है । यदि वह ऐसा करता है और बालक पर अपना प्रभाव डालने का प्रयत्न करता है, तो वे उसकी निन्दा करते हैं । वे शिक्षक से केवल यह चाहते है कि—वह बालक के स्वाभाविक विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण करे ।

उनके अनुसार शिक्षक का क्या स्थान और कार्य है ? इसके बारे में रॉस (Ross) ने लिखा है :—**"यदि शिक्षक का कोई स्थान है, तो वह पर्दे के पीछे है । वह बालक के विकास का निरीक्षण करने वाला—न कि उसकी सूचनाओं, विचारों, आदर्शों और इच्छा-शक्ति को देने वाला या उसके चरित्र का निर्माण करने वाला है । बालक इन बातों को स्वयं ही कर लेगा । वह किसी भी शिक्षक की अपेक्षा यह अधिक अच्छी तरह जानता है कि उसे क्या, कब और कैसे सीखना है ? उसकी शिक्षा—उसकी रुचियों और प्रेरणाओं का स्वतन्त्र विकास है, न कि इसके लिए शिक्षक द्वारा किया गया कृत्रिम प्रयास ।"**

प्रकृतिवाद व अनुशासन
Naturalism & Discipline

प्रकृतिवादियों को बाह्य शक्तियों पर आधारित अनुशासन में विश्वास नहीं है । उसका नारा 'स्वतन्त्रता' है । रूसो का कथन है :—**"बच्चों को कभी दण्ड नहीं दिया जाना चाहिए । स्वतन्त्रता, न कि शक्ति सबसे अच्छी चीज है ।"**

'Children should never receive punishment. Freedom and not power is the greatest good."—**Rousseau.**

प्रकृतिवादियों का विश्वास है कि स्वतन्त्र वातावरण में ही बालक का स्वाभाविक विकास हो सकता है । अतः उसके लिए स्वतन्त्रता आवश्यक है । यदि प्रकृतिवादी किसी प्रकार के अनुशासन मे विश्वास करते है, तो वह है—'प्राकृतिक परिणामों द्वारा अनुशासन' । रूसो ने लिखा है :—**"अनुशासन सदैव बालकों की गलतियों के प्राकृतिक परिणामों द्वारा होना चाहिए ।"**

"Discipline should always come by the natural consequences of children's faults."—**Rousseau.**

रूसो के कथन का अभिप्राय यह है कि—अनुशासन बालक के कार्यों का प्राकृतिक परिणाम है । इस बात को स्पेंसर ने अग्रलिखित उदाहरण देकर स्पष्ट किया है :—**"जब बालक गिरता है या अपने सिर को मेज पर पटकता है, तो उसे दर्द मालूम पड़ता है । इस दर्द की याद उसको अधिक सावधान बना देती है । दर्द के इस प्रकार के बार-बार होने वाले अनुभवों के कारण वह अन्त में अपने कार्यों में अनुशासित हो जाता है ।"**

स्पेंसर ने जो कुछ लिखा है, वह सब आयु के बालकों के लिए नहीं है; उदाहरणार्थ—3 वर्ष का बच्चा इतना नासमझ होता है कि यदि आप उसे जुला

हुआ चाकू दे दें, तो वह उससे खेलने लगेगा। उसके चोट लगेगी, पर उसके लिए इसका परिणाम कुछ न होगा। अतः इस आयु के बच्चों पर प्राकृतिक परिणामों द्वारा अनुशासन का सिद्धान्त लागू नहीं होता है।

प्रकृतिवाद व विद्यालय
Naturalism & School

(प्रकृतिवादी—विद्यालय को कृत्रिम, कठोर और दृढ़ बन्धनों वाली संस्था नहीं चाहते हैं। वे इसका स्वतन्त्र संगठन चाहते हैं, जिससे बालक को अपने स्वाभाविक विकास के लिए उचित वातावरण मिले। वे विद्यालय में 'स्वशासन' का समर्थन करते हैं।) उनका कहना है कि विद्यालय के बालकों को अपने सामाजिक जीवन पर स्वयं ही शासन करना चाहिए, और उन पर ऊपर से किसी प्रकार का दबाव नहीं पड़ना चाहिए।

प्रकृतिवादियों के इन विचारों ने आधुनिक विद्यालयों पर बहुत प्रभाव डाला है। इंगलैण्ड के सभी प्रसिद्ध पब्लिक स्कूलों में 'स्वशासन' की पद्धति प्रचलित है।

प्रकृतिवाद का मूल्यांकन
Estimate of Naturalism

(अ) गुण : **Merits**—1. व्यवहारवाद का जन्म प्रकृतिवाद से माना जाता है।
2. आधुनिक शिक्षा-मनोविज्ञान और समाजशास्त्र—प्रकृतिवादी हैं।
3. प्रकृतिवाद ने शिक्षा को वैज्ञानिक और जैविकीय दृष्टिकोण दिये हैं।
4. समाज और समाजशास्त्र के वैज्ञानिक अध्ययन का जन्म प्रकृतिवाद से हुआ है।
5. प्रकृतिवाद ने शिक्षा और ज्ञान की सभी शाखाओं पर बहुत गहरा प्रभाव डाला है।
6. प्रकृतिवाद ने इस सिद्धान्त को जन्म दिया है कि—मनोविज्ञान की प्रगति पूर्णरूप से निरीक्षणात्मक और वस्तुपरक विधियों पर निर्भर है।
7. शिक्षा के जैविकीय आधार—प्रजननशास्त्र (Eugenics) और मानसिक परीक्षण (Mental Testing) प्रकृतिवादी है।

(ब) दोष : **Demerits**—1. प्रकृतिवादी शिक्षा के उद्देश्य, सतोषजनक नहीं है।
2. प्रकृतिवादी तात्कालिक उपयोगिता पर बल देता है।
3. प्रकृतिवाद, शिक्षक को गौण स्थान देकर उसकी उपेक्षा करता है।
4. 'प्राकृतिक परिणामों द्वारा अनुशासन का सिद्धान्त' बिल्कुल उचित नहीं है।
5. प्रकृतिवाद, आध्यात्मिक गुणों की अवहेलना करता है, जिसके बिना मनुष्य पशु के समान होता है।
6. प्रकृतिवाद ने बालक को पाठ्यक्रम का आधार बनाकर पाठ्यक्रम के महत्त्व को कम कर दिया है।

7. प्रकृतिवाद, बालक के केवल वर्तमान जीवन को महत्त्व देता है, और उसके भावी जीवन से कोई सरोकार नहीं रखता है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त गुण-दोषों के विवेचन से पता लगता है कि प्रकृतिवाद में अनेक कमियाँ हैं। पर इन कमियों के होते हुए भी प्रकृतिवाद ने शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये हैं। इसने शिक्षकों और शिक्षाविदों को अनेक नये दृष्टिकोण दिये हैं, जिनमें उनको अपने कार्य में बहुत सहायता और प्रोत्साहन मिला है। पाल मुनरो ने ठीक ही लिखा है :—"प्रकृतिवाद ने शिक्षा की मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्रीय और वैज्ञानिक धारणा के स्पष्ट निर्माण में प्रत्यक्ष प्रेरणा दी है।"

"Naturalism has given direct impetus to the clear formation of the psychological, sociological and scientific conception of education."—Paul Monroe.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What is "Naturalism" in education ? What has been its contribution to educational thought ?

शिक्षा में 'प्रकृतिवाद' क्या है ? शिक्षा-सिद्धान्त के लिए इसका क्या योग है ?

2. Give an account of some broad features of Naturalistic education and bring out the views of its exponents on aims, methods of teaching, curriculum, teacher and discipline.

प्रकृतिवादी शिक्षा की कुछ प्रमुख विशेषताओं की संक्षिप्त विवेचना कीजिए तथा उद्देश्यों, शिक्षण-विधियों, पाठ्यक्रम, शिक्षक तथा अनुशासन के सम्बन्ध में उनके प्रवर्तकों के विचारों को बताइये।

3. "It is in educational ideals, not in method, that Naturalism fails to satisfy." Do you agree with this statement ? If so, give reasons in support of your answer.

"प्रकृतिवाद शिक्षण-विधियों के क्षेत्र में नहीं, वरन् शैक्षिक उद्देश्यों के क्षेत्र में असफल रहता है।" क्या आप इस कथन से सहमत हैं ? यदि हाँ, तो अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दीजिए।

24

शिक्षा में प्रयोगवाद या प्रयोजनवाद
PRAGMATISM IN EDUCATION

"प्रयोजनवाद, सत्य का मापदण्ड है। मोटे तौर पर, हम कह सकते हैं कि यह वह सिद्धान्त है, जो समस्त विचार-प्रक्रिया के सत्य की जाँच उसके व्यावहारिक परिणामों से करता है। यदि व्यावहारिक परिणाम संतोषजनक हैं, तो विचार-प्रक्रिया को सत्य कहा जा सकता है।"

"Pragmatism is a criterion of truth. Speaking broadly, we may say that it is the theory that the test of the truth of all thinking is to be found in its practical consequence. If the practical consequences are satisfactory, the thinking is said to be true."

—E. S. Brightman.

प्रयोजनवाद का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Pragmatism

(1) 'Pragmatism' शब्द की उत्पत्ति : Derivation of the word 'Pragmatism'—'Pragmatism' शब्द की उत्पत्ति यूनानी शब्द 'Pragma' से हुई है, जिसका अर्थ है :—'a thing done, business, effective action'—'किया गया काम, व्यवसाय, प्रभावपूर्ण कार्य'।

कुछ विद्वानों का मत है कि इस शब्द की उत्पत्ति एक दूसरे यूनानी शब्द 'Pramitikos' से हुई है, जिसका अर्थ है : 'Practicable'—'व्यावहारिक'। इस दृष्टिकोण से 'Pragmatism' का अर्थ माना जाता है :—'Practicability'—'व्यावहारिकता'।

(2) प्रयोजनवाद का अर्थ : **Meaning of Pragmatism**—जैसा कि हम ऊपर बता चुके है, 'Pragmatism' का शाब्दिक अर्थ है—'व्यावहारिकता'। मोटे तौर पर, हम कह सकते है कि प्रयोजनवाद इस सिद्धान्त को प्रतिपादित करता है—सब मूल्यों, विचारों और निर्णयों का सत्य उनके व्यावहारिक परिणामों में पाया जाता है। यदि उनके परिणाम सन्तोषजनक है—तो वे सत्य हैं, अन्यथा नहीं।

(3) प्रयोजनवाद की परिभाषा : **Definition of Pragmatism**—हम प्रयोजनवाद के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषायें नीचे दे रहे हैं :—

1. प्रैट :—"प्रयोजनवाद हमें अर्थ का सिद्धान्त, सत्य का सिद्धान्त, ज्ञान का सिद्धान्त और वास्तविकता का सिद्धान्त देता है।"

"Pragmatism offers us a theory of meaning, a theory of truth, a theory of knowledge, and a theory of reality."—**James B. Pratt.**

2. विलियम जेम्स :—प्रयोजनवाद मस्तिष्क का स्वभाव और दृष्टिकोण है। यह सत्य और विचारों की प्रकृति का भी सिद्धान्त है। अन्तिम रूप में यह वास्तविकता का भी सिद्धान्त है।"

"Pragmatism is a temper of mind, an attitude; it is also a theory of the nature of ideas and truth; and finally it is a theory about reality."—**William James.**

3 रोजन :—"प्रयोजनवाद, सत्य तथा अर्थ के सिद्धान्त को प्रधानता देने के कारण मूलतः ज्ञानवादी विचारधारा है। इस विचारधारा के अनुसार, सत्य को केवल उसके व्यावहारिक परिणामों से जाना जा सकता है। अतः सत्य, निरपेक्ष की अपेक्षा वैयक्तिक या सामाजिक वस्तु है।"

"Pragmatism is basically an epistemological undertaking, keynoted by its theory of truth and meaning. This theory states that truth can be known only through its practical consequences, and is thus an individual or social matter rather than an absolute."

—**F. Bruce Rosen.**

प्रयोजनवाद का दार्शनिक दृष्टिकोण
Philosophical Outlook of Pragmatism

तत्त्व-दर्शन में प्रयोजनवाद : **Pragmatism in Metaphysics**—प्रयोजनवादी—मन तथा पदार्थ को पृथक् और स्वतन्त्र तत्त्वों के रूप में अस्वीकार करते हैं। वे अपने सत्ता-विज्ञान (Ontology) को अनुभव की धारणा (Concept of Experilnce) पर आधारित करते है। इस दृष्टि से, प्रयोजनवाद—प्रकृतिवाद का व्यावहारिक रूप (Sophisticated Form) है। प्रयोजनवादियों के लिए प्राकृतिक नियम की धारणा—निर्देशात्मक होने के बजाय वर्णनात्मक है। उनके विचार से इस धारणा का

उद्गम विभिन्न निरीक्षणों से हुआ है और यह अनुभव में निहित है। वे वास्तविकता को सूक्ष्म वस्तु नहीं मानते है। वे इसको कार्य-सम्पादन की प्रक्रिया समझते हैं, जिसमें दो बातें निहित है :—कार्य करना और कार्य तथा उसके परिणामों से अर्थ निकालना।

मूलतः प्रयोजनवाद—विचारों के अर्थ को निर्धारित करने वाली विधि या प्रक्रिया है। इस सम्बन्ध मे पियर्स का कथन है :—**"प्रयोजनवाद स्वयं में तत्त्व-दर्शन का सिद्धान्त नहीं है और न यह वस्तुओं के सत्य को निर्धारित करने के लिए कोई प्रयास है। यह केवल कठिन शब्दों और अमूर्त्त धारणाओं के अर्थ को निश्चित करने की विधि है।"**

"Pragmatism is, in itself, no doctrine of metaphysics, no attempt to determine any truth of things. It is merely a method of ascertaining the meanings of hard words and of abstract concepts."

—**Charles Peirce.**

ज्ञान-शास्त्र में प्रयोजनवाद : Pragmatism in Epistemology—ज्ञान—अनुभव में निहित है। अनुभव तात्कालिक या मध्यस्थ हो सकता है। तात्कालिक अनुभव, अनुभूति की वस्तु है। यह अनुभव, मनुष्य तथा उसके मन की अपने वातावरण के प्रति की जाने वाली पारस्परिक क्रिया है। इसके लिए बुद्धि के प्रयोग की आवश्यकता है, क्योंकि बुद्धि के द्वारा ही इसकी दिशा का निर्धारण किया जाता है।

प्रयोजनवादी—प्रयोगात्मक विधि को ज्ञान-प्राप्ति का मुख्य साधन मानते है। उन्होंने इस विधि के पाँच पद या स्तर निर्धारित किए हैं; यथा :—(1) क्रिया या समस्यात्मक परिस्थिति का निर्माण (Activity of Creation of the Situation); (2) समस्या (Problem); (3) सूचना या आधार-सामग्री (Information or Data); (4) परिकल्पना या सम्भव समाधान (Hypothesis or Probable Solution), और (5) परीक्षण एवं प्रयोग (Testing & Experimentation)।

प्रयोजनवादियों के अनुसार, सत्य इस पंच-पद-प्रक्रिया के द्वारा इच्छित परिणामों का प्रतिफल है। इस सम्बन्ध मे ड्यूवी का कथन है : **"जो परिकल्पना व्यावहारिक रूप में कार्य करती है, वह सत्य है, और सत्य —भाववाचक संज्ञा है, जिसका प्रयोग उन वास्तविक, पूर्व-अनुमानित और वांछित तथ्यों के संकलन के लिए किया जाता है, जिनकी अपने परिणामों द्वारा पुष्टि होती है।"**

"The hypothesis that works is the true one; and truth is an abstract noun applied to the collection of cases, actual, foreseen and desired, that receive confirmation in their consequences."—**Dewey** *Reconstruction in Philosophy*, pp. 128-129.

इस प्रकार, प्रयोजनवादी—सत्य को परिस्थितियों से सम्बन्धित या सापेक्षिक मानते है। साथ ही, वे सत्य को पूर्व-निश्चित तथा शाश्वत नही मानते है। उनके अनुसार, सत्य—मानव-निर्मित एवं परिवर्तनशील है।

मूल्य-मीमांसा में प्रयोजनवाद : Pragmatism in Axiology—नैतिक मूल्य—मानव एवं समाज के मध्य होने वाली आदान-प्रदान की प्रक्रिया के प्रतिफल हैं। सद् अथवा अच्छाई वह है, जो सर्वोत्तम ढङ्ग से अनिश्चित परिस्थितियों का समाधान करती है। इस दृष्टि से, प्रयोजनवादी—समस्याओं के समाधान में बुद्धि के प्रयोग को अच्छाई या सद् (Good) मानते हैं।

"सुन्दर क्या है ?"—इसके उत्तर में प्रयोजनवादियों का कहना है कि सुन्दर वही है, जिसे हम अपने अनुभव से सुन्दर मानते हैं। कला की जो कृति हमें अपनी ओर आकृष्ट कर सकती है और गहन रूप से अनुभूति करने के लिए तत्पर बना सकती, वही सुन्दर है।

"धर्म क्या है ?"—इसके उत्तर में ड्यूवी (Dewey) ने लिखा है :—"धर्म किसी बात की स्वीकृति है, जो पृथक् है और जिसका स्वयं के द्वारा अस्तित्व है।" "धार्मिक" (Religious) के अर्थ को स्पष्ट करते हुए, ड्यूवी (Dewey) ने लिखा है :—"इसके अन्तर्गत वे दृष्टिकोण आते हैं, जो किसी वस्तु तथा किसी निर्धारित साध्य या आदर्श के प्रति बनाए जा सकते हैं।"

"ईश्वर क्या है ?"— इसका उत्तर देते हुए, ड्यूवी ने कहा है :—"ईश्वर, आदर्श तथा वास्तविकता के मध्य सक्रिय सम्बन्ध है।"

दर्शन के रूप में प्रयोजनवाद का विकास
Growth of Pragmatism as a Philosophy

प्रयोजनवाद आधुनिक दर्शन है, पर इसका जन्म अति प्राचीन काल में हुआ था। सबसे पहले यूनान के सोफ़िस्ट दार्शनिकों ने बताया :—**"मनुष्य सब बातों का मापदण्ड है और मनुष्य ही समस्त सत्यों का निर्माण करता है।"**

"Man is the measure of all things and makes all the truth there is."—**Sophists.**

प्रयोजनवाद की झलक हमें लॉक के इस कथन में भी मिलती है :—**"हमें सब बातों का ज्ञान प्राप्त करना उतना आवश्यक नहीं है, जितना कि अपने जीवन से सम्बन्ध रखने वाली बातों का।"**

"It is not so necessary for us to acquire a knowledge of all things as of concerned with our life."—**Locke.**

प्रयोजनवाद को आधुनिक दर्शन के रूप में चार्ल्स पियर्स (Charles Peirce : 1839-1914) ने अमेरिका में जन्म दिया। उसके कार्य को विलियम जेम्स ने आगे बढ़ाया। प्रयोजनवाद का सबसे महान् प्रतिपादक जॉन ड्यूवी को माना जाता है। प्राचीन सोफिस्टों के समान आधुनिक प्रयोजनवादियों का भी कहना है कि मनुष्य ही सत्य का निर्माण करता है।

प्रयोजनवाद के रूप
Forms of Pragmatism

ब्राइटमैन (Brightman) का कथन है :—"प्रयोजनवाद, सत्य का मापदण्ड

हैं। सामान्य रूप में, यह वह सिद्धान्त है, जो समस्त विचार-प्रक्रिया के सत्य की जांच उसके व्यावहारिक परिणामों से करता है। यदि व्यावहारिक परिणाम संतोषजनक हैं, तो विचार-प्रक्रिया को सत्य कहा जा सकता है।"

उपर्युक्त कथन से यह प्रश्न उपस्थित होता है—"व्यावहारिक और सतोषजनक क्या है ?" जो कार्य उकैत को व्यावहारिक जान पड़ता है, वह पुजारी को अव्यावहारिक मालूम होता है। जो बात सर्जन के लिए सन्तोषजनक है, वह रोगी के लिए असन्तोषजनक हो सकती है। प्रयोजनवादियों में 'व्यावहारिक' और 'सन्तोषजनक' शब्दो के अर्थ के बारे मे चार मुख्य धारणाएं हैं। इन्ही को प्रयोजनवाद के रूप कहा जाता है। ये रूप निम्नलिखित चार हैं :—

1. मानवतावादी प्रयोजनवाद : **Humanistic Pragmatism**—यह प्रयोजनवाद सबसे अधिक लोकप्रिय है। इसके अनुसार—मानव-प्रकृति को पूर्ण रूप से सन्तुष्ट करने वाली बात—सत्य है। '*Humanism*' नाम हमें अंग्रेज दार्शनिक शिलर (Schiller) से मिला है। जेम्स (James) को मानवतावादी प्रयोजनवादियों की श्रेणी मे रखा जाता है। मानवतावादी का कहना है :—"**जो बात मेरे उद्देश्य को पूरा करती है, मेरी इच्छाओं को सन्तुष्ट करती है और मेरे जीवन का विकास करती है, वही सत्य है।**"

"Whatever fulfils my purpose, satisfies my desires, develops my life, is true."—**Humanist.**

2. प्रयोगवादी प्रयोजनवाद : **Experimental Pragmatism**—इस वाद का आधार—विज्ञान की 'प्रयोगशाला-विधियां' (Laboratory *Methods*) है। इस वाद का कथन है :—"**जिस बात को प्रयोग से सत्य सिद्ध किया जा सकता है, वही सत्य है, या जो बात ठीक कार्य करती है, वही सत्य है।**"

"Whatever can be experimentally verified is true, or, what works, is true."—**Experimental Pragmatism.**

सत्य की यह धारणा विभिन्न विज्ञानो द्वारा प्रयोग मे लाई जाती है। यदि हम 'प्रयोग' शब्द का विस्तृत अर्थ में प्रयोग करे, तो यह विधि प्रत्येक क्षेत्र में लागू की जा सकती है।

3. नामरूपवादी प्रयोजनवाद : **Nominalistic Pragmatism**—यह वाद प्रयोगात्मक प्रयोजनवाद का उप-रूप है। जब हम कोई प्रयोग करते हैं तब हम उसके परिणामों को देखते है। प्रयोगकर्ता का दृष्टिकोण आशावादी और खोजपूर्ण होता है। अत्र अनेक प्रयोजनवादियो का कहना है कि प्रत्येक विचार कुछ सम्भव परिणामो की ओर सकेत करता है। यदि मैं कहता हूं—"बाग के लाल गुलाब", तो इससे मेरा अभिप्राय यह है कि यदि मैं बाग़ मे जाऊं, तो मैं वहां लाल गुलाब देखूंगा। नामरूपवादी प्रयोजनवादियों का कहना है कि ये परिणाम सदैव वास्तविक होते हैं—सामान्य, सार्वभौमिक या अवास्तविक नही।

4. जीव-विज्ञानवादी प्रयोजनवाद : Biological Pragmatism—आधुनिक समय में इस वाद का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। इसका प्रमुख प्रतिनिधि, अमरीका का प्रोफ़ेसर जॉन ड्यूवी था। ड्यूवी के अनुसार :—"इस प्रयोजनवाद की जाँच मानव को अपने वातावरण से अनुकूलन करने की विचार-प्रक्रिया से की जाती है।"

"By this type the Pragmatist test is found in the function of *thought, in adapting the human organism to its environment.*"

—**John Dewey.**

जब किसी स्थिति में कठिनाइयाँ या समस्याएँ उपस्थित होती है, तब विचार ही उस स्थिति से अनुकूलन करने का साधन होता है। ब्राइटमैन (*Brightman*) ने आगे लिखे उदाहरण से इस बात को स्पष्ट किया है। हम अपने नित्य-प्रति के कार्यों से अपना दिन शुरू करते है। इन कार्यों के लिए विचार की कोई आवश्यकता नही होती है। पर मान लीजिए कि हमें सुबह की डाक से एक पत्र मिलता है, जो किसी बात पर हमारा निर्णय चाहता है। उस समय हमें यह निश्चित करना पड़ता है कि हमें क्या करना है। इसके साथ ही हमारी विचार-प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। इस विचार का सत्य उस बात से सिद्ध होगा, जो हम करेंगे।

क्योंकि यह प्रयोजनवाद विचार को 'अनुकूलन' का साधन मानता है, इसलिए इसको प्रायः 'साधनवाद' (Instrumentalism) के नाम से पुकारा जाता है। क्योंकि इस वाद को ड्यूवी ने शिकागो विश्वविद्यालय में प्रतिपादित किया था, इसलिए इसको 'शिकागो सम्प्रदाय' (Chicago School of Thought) के नाम से भी पुकारा जाता है।

प्रयोजनवाद के मुख्य सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व
Main Principles of Essential Features of Pragmatism

1. जो सिद्धान्त कार्य करते हैं, वे सत्य है।
2. मानव-प्रयासों का अत्यधिक महत्त्व है।
3. अनुभव नाना प्रकार के है और बदलते रहते है।
4. जीवन और उससे सम्बन्धित विभिन्न क्रियाएँ वास्तविक है।
5. किसी भी सिद्धान्त की सच्ची कसौटी—उसकी उपयोगिता है।
6. प्रयोजनवाद, प्रकृतिवादी सिद्धान्तों और आदर्शवादी निष्कर्षों का योग है।
7. सत्य मानव-निर्मित होता है और जीवन के मूल्य तथा सत्य बदलते रहते है।
8. मनुष्य सामाजिक प्राणी है। इसलिए उसे सामाजिक कुशलता का गुण प्राप्त करना चाहिए।
9. दर्शन का मुख्य कार्य अनुभव—विशेष रूप से मानव के समस्त अनुभवों की सम्भावनाओं को संगठित करना है।

10. अन्तिम, अपरिवर्तित और सदैव ठीक उतरने वाली पद्धति की स्थापना साधन के रूप में उसका महत्त्व नष्ट कर देती है।
11. जो बात मेरे उद्देश्यों को पूरा करती है, मेरी इच्छाओं को सतुष्ट करती है और मेरे जीवन का विकास करती है—वही सत्य है।
12. किसी भी समस्या को उस समय तक हल करने का प्रयत्न मत कीजिए जब तक आपको यह न मालूम हो कि उसका अर्थ क्या है, अन्यथा आप शब्दों के जाल में फँस जायेंगे।
13. विचारों की सभी पद्धतियों का सम्बन्ध उस स्थिति और उन व्यक्तियों से है जिसमें वे उत्पन्न होती हैं और जिसको वे सतुष्ट करती है। उनमें परिणामों द्वारा सदैव परिवर्तन होता है।
14. जीव-विज्ञान ने हमको यह सिखाया है—मनुष्य मनो-शारीरिक (Psycho-Physical) प्राणी है और विचार उस स्थिति के अनुकूलन करने का साधन है, जिसमें कठिनाइयाँ और समस्याएँ उपस्थित होती हैं।

प्रयोजनवाद व शिक्षा
Pragmatism & Education

शिक्षा के क्षेत्र में प्रयोजनवाद—परम्परागत और अनुदार ज्ञान के विरुद्ध क्रान्ति है। यह शिक्षा-शास्त्रियों को इस निर्णय पर पहुंचने के लिए बाध्य करता है कि वे परम्परावादियों और अनुदारवादियों के साथ रहें या प्रयोजनवादियों के। कारण यह है कि इसने शिक्षा की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएं बताई हैं। हम इन पर आगे प्रकाश डाल रहे हैं :—

1. **शिक्षा का सामाजिक कार्य : Social Function of Education**—प्रयोजनवादियों का कहना है कि शिक्षा की प्रमुख विशेषता—उसका सामाजिक कार्य है। वे कहते हैं कि मनुष्य सामाजिक प्राणी है। इसलिए, उसका विकास सामाजिक संदर्भ में होना चाहिए। उसे सफल लोकतन्त्रीय जीवन व्यतीत करना सीखना चाहिए। दूसरे शब्दों में, उसे सामाजिक कुशलता का गुण प्राप्त करना चाहिए। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए शिक्षा का संगठन किया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में ब्रूबेकर ने लिखा है :—"प्रयोजनवादी, सामाजिक मूल्य को बहुत अधिक महत्त्व देता है। समाज सम्मिलित रूप से प्राप्त अनुभव का ढग है। सामाजिक कार्यों में भाग लेना—सबसे महत्वपूर्ण ढगों में से एक है; जिसके द्वारा शिक्षा प्राप्त होती है।"

"The Pragmatist rates the social value very highly. Society is a mode of shared experience. Participation in society is one of the most important ways in which education takes place."—**Brubacher.**

2. **बालक का वास्तविक जीवन-अनुभव : Child's Real Life-Experience**—शिक्षा को बालक को वास्तविक जीवन-अनुभव प्रदान करना चाहिए। प्रयोजनवादी 'ज्ञान के लिए ज्ञान' प्राप्त करने को कोई महत्त्व नहीं देते है। उनके अनुसार—

सच्चा ज्ञान वही है, जो कुछ करके प्राप्त किया जाता है। दूसरे शब्दों मे, 'करके सीखना' ही वास्तविक शिक्षा है।

अतः प्रयोजनवादियों का मत है कि बालक को अपनी स्वय की क्रियाओं और अनुभवों से ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। इस प्रकार प्राप्त किया गया ज्ञान उसका स्थायी अंग बन जाता है और उसे वर्तमान तथा भावी जीवन मे सहायता देता है। वह इस प्रकार का ज्ञान तभी प्राप्त कर सकता है, जब उसके सामने जीवन की ठोस परिस्थितियों को रखा जाय। साथ ही उसे ऐसा वातावरण दिया जाय कि वह अपने मूल्यों का निर्माण कर सके।

3. बालक का महत्त्व : Importance of Child—प्रयोजनवादी शिक्षा मे बालक को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान देते है। उनके अनुसार—शिक्षा बालक के लिए है, न कि बालक शिक्षा के लिए। वे बालक को बालक ही मानते है। अतः उनका कहना है कि उसे दी जाने वाली शिक्षा—उनकी शक्तियों, रुचियों, रुझानों और आवेगों के अनुसार होनी चाहिए।

4. शिक्षा की लोकतन्त्रीय प्रक्रिया : Democratic Process of Education—प्रयोजनवादियों के अनुसार शिक्षा की प्रक्रिया लोकतन्त्रीय है। शिक्षा और लोकतन्त्र में बहुत-सी बातें एक-सी है, क्योंकि दोनों व्यक्ति और उसके गुणों पर बल देते है।

प्रयोजनवाद व शिक्षा के उद्देश्य
Pragmatism & Aim of Education

प्रयोजनवादी—शिक्षा का कोई उद्देश्य निर्धारित नही करते हैं। उनका कहना है कि शिक्षा के उद्देश्य स्थायी रूप से नही बनाये जा सकते है। उनमे समय और मनुष्य की आवश्यकताओं के अनुसार परिवर्तन किया जाना आवश्यक है। इस विषय मे ड्यूवी ने लिखा है :—"शिक्षा के उद्देश्य नहीं होते हैं। उद्देश्य केवल व्यक्तियों के होते हैं; और व्यक्तियों के उद्देश्य बहुत अधिक भिन्न होते हैं। वे विभिन्न बालकों के लिए विभिन्न होते है। जैसे-जैसे बालकों और उनके शिक्षकों का विकास होता जाता है, वैसे-वैसे उद्देश्य बदलते जाते हैं।"

"Education, as such, has no aims. Only persons have aims. And the aims of persons are indefinitely varied, differing with different children, changing as children and their teachers grow."

—**John Dewey.**

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर ड्यूवी ने शिक्षा के उत्तम उद्देश्यों की तीन विशेषताएँ बताई है :—

1. ये छात्रों का सहयोग प्राप्त करते है।
2. ये छात्रों की क्रियाओं और आवश्यकताओं पर आधारित होते हैं।

3. ये विशिष्ट और तात्कालिक (*Specific & Immediate*) होते हैं, सामान्य और अन्तिम (General & Ultimate) नहीं।

ऊपर लिखी बातों को ध्यान में रखकर प्रयोजनवाद ने शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित करने का प्रयास किया है :—

1. बालक : अपने मूल्यों व आदर्शों का निर्माता : Child a Creator of His Values & Ideals—प्रयोजनवादी कहते हैं कि बालक को स्वयं अपने मूल्यों और आदर्शों का निर्माता होना चाहिए। इस प्रकार, प्रयोजनवादी शिक्षा का यदि कोई उद्देश्य हो सकता है, तो वह यह है बालक को अपने मूल्यों और आदर्शों का निर्माण करने के योग्य बनाना। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रयोजनवादी उन परिस्थितियों का निर्माण करते हैं, जो बालक को अपने मूल्यों और आदर्शों का निर्माण करने में सहायता देती हैं।

2. गतिशील व लचीले मस्तिष्क का विकास : Cultivation of a Dynamic & Adaptable Mind – प्रयोजनवादी, बालक की आवश्यकताओं, इच्छाओं, अभिप्रायों और रुचियों को महत्त्व देते हैं। अतः इनको ठीक मार्ग पर ले जाना, शिक्षा का कार्य है। इस बारे में रॉस ने लिखा है :—"***बालक के वातावरण में उसकी इच्छाओं को पूर्ण करना शिक्षा है, न कि उसके आवेगों, रुचियों और योग्यताओं को मूल्यों की किसी निश्चित योजना की प्राप्ति की ओर ले जाना।***"

प्रयोजनवादियों की इस धारणा के अनुसार, जैसा कि रॉस ने लिखा है, शिक्षा का उद्देश्य यह है :—"***गतिशील और लचीले मस्तिष्क का विकास, जो सब परिस्थितियों में साधनपूर्ण और साहसपूर्ण हो, और जिसमें अज्ञात भविष्य के लिए मूल्यों का निर्माण करने की शक्ति हो।***"

3. छात्र का विकास : Pupil's Growth—ब्रूबेकर (Brubacher) ने लिखा है कि प्रयोजनवादियों के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य है—छात्र का विकास। इस उद्देश्य की दो कारणों से अति कटु आलोचना की गई है :—(1) इस विकास का न तो कोई अन्त है और न कोई लक्ष्य—सिवा इसके कि विकास का और अधिक विकास हो; (2) यह विकास गलत दिशा में हो सकता है। अतः प्रयोजनवादियों ने विकास की दिशा न बताकर बहुत बड़ी भूल की है।

4. गतिशील निर्देशन : Dynamic Direction—प्रयोजनवादियों के अनुसार शिक्षा का एक उद्देश्य—छात्रों का गतिशील निर्देशन करना है। पर केवल इतना कह देना ही काफी नहीं है। गतिशील निर्देशन की व्याख्या की जानी आवश्यक है। इस व्याख्या के अभाव में अमरीकी शिक्षा में कुछ दोष आ गए हैं। बॉयड बोड ने लिखा है :—"***आज की अमरीकी शिक्षा का मुख्य दोष यह है कि उसमें कार्यक्रम या निर्देशन के ज्ञान का अभाव है। इसका न तो कोई उपयुक्त कार्य-क्षेत्र है और न कोई सामाजिक सिद्धान्त।***"

"The chief defect in American education today is the lack of a programme, or sense of direction. It has no adequate mission or social gospel."—Boyd Bode.

5. सामाजिक कुशलता : Social Efficiency—प्रयोजनवादी, शिक्षा के सामाजिक कार्यों पर बल देते हैं। इस दृष्टिकोण से शिक्षा का उद्देश्य है—सामाजिक कुशलता। दूसरे शब्दों में, शिक्षा का उद्देश्य है—प्रत्येक व्यक्ति की शक्तियों और क्षमताओं को इस प्रकार विकसित करना कि वह सामाजिक रूप से कुशल व्यक्ति हो जाय। ऐसा व्यक्ति वही है जो अपनी जीविका की समस्या को हल करे, दूसरों की इच्छाओं और आवश्यकताओं का आदर करे तथा जिनमे 'सामाजिक सजगता' हो।

प्रयोजनवाद व शिक्षण-विधियाँ
Pragmatism & Methods of Teaching

प्रयोजनवाद हमें शिक्षण की विधियों में बहुत सहायता देता है, और इनकी उपयोगिता को सभी लोग स्वीकार करते है। यह परम्परागत शिक्षण-विधियों को अस्वीकार करता है। इस सम्बन्ध में रॉस ने लिखा है :—"यह हमें चेतावनी देता है **कि अब हम प्राचीन और घिसी-पिटी विचार-प्रक्रियाओं को अपने शैक्षिक व्यवहार में प्रमुख स्थान न दें, और नई दिशाओं में क़दम बढ़ाते हुए अपनी विधियों में नए प्रयोग करें।"**

1. सीखने की उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया का सिद्धान्त : Principle of Purposive Process of Learning—प्रयोजनवाद इस विचार के विरुद्ध आवाज़ उठाता है कि बालक आदर के साथ अपने गुरु के चरणों मे बैठे और जो कुछ वह पढाना चाहता है, उसे पढ़े। प्रयोजनवाद यह नही चाहता है कि बालक दूसरो के द्वारा दिये गये ज्ञान को प्राप्त करे। इसके विपरीत, यह चाहता है कि बालक स्वयं ही ज्ञान और योग्यता प्राप्त करे, जिससे कि वह वास्तविक जीवन की परिस्थितियों का सफलता-पूर्वक सामना कर सके।

अतः रॉस (Ross) के अनुसार प्रयोजनवादी शिक्षण-विधि का पहला सिद्धान्त यह हो सकता है :—**"सीखने की प्रक्रिया उद्देश्यपूर्ण होनी चाहिए।"** इसका अर्थ यह है कि बालक अपनी इच्छाओं, रुचियो और रुझानों के अनुसार किसी उद्देश्य या लक्ष्य को प्राप्त करे।

2. क्रिया या अनुभव द्वारा सीखने का सिद्धान्त : Principle of Learning by Doing or Experience—प्रयोजनवाद, विचार के बजाय कार्य पर बल देता है। यह सिद्धान्त और व्यवहार को एक-दूसरे से अलग नही मानता है। इसका कहना है कि शिक्षा का अर्थ यह नही है कि बालक को वे सब बातें पढ़ा दी जायें, जो उसको जाननी चाहिए। इसका अर्थ यह है कि उसे प्रयोग और रचनात्मक क्रिया द्वारा विभिन्न बातों को स्वयं सीखने के लिए प्रोत्साहित किया जाय। अतः रॉस

(Ross) के अनुसार प्रयोजनवादी शिक्षण-विधि का दूसरा सिद्धान्त यह हो सकता है :—**"करके सीखना" या "अनुभव द्वारा सीखना।"**

प्रत्येक बालक की शिक्षा का सर्वोत्तम भाग वह है, जो बालक स्वयं कार्य करके प्राप्त करता है। इस सिद्धान्त की सत्यता को चुनौती नहीं दी जा सकती है। पर यह आवश्यक है कि इसका अर्थ सावधानी से और ठीक-ठीक बताया जाय। *'करके सीखना'—इसका अर्थ केवल यह नहीं है कि 'व्यावहारिक कार्य' को महत्त्व दिया जाय और इसको सब विषयों की शिक्षा का आधार बनाया जाय। इसका अर्थ यह भी है कि—बालक को उन परिस्थितियों में रखा जाय, जिनका वह सामना करना चाहता है। इसके साथ ही उसे वे साधन दिये जायें, जिनकी सहायता से वह उनका सफलतापूर्वक सामना कर सके।*

3. सीखने की प्रक्रिया के एकीकरण का सिद्धान्त : Principle of Integration of Learning Process—प्रयोजनवादियों के अनुसार 'सीखना' अखण्ड होना चाहिए। उनका कहना है कि यद्यपि ज्ञान के अनेक पहलू है, फिर भी उसमें एकता है। इसलिए, ज्ञान को खण्डों से नहीं बाँटा जाना चाहिए। इसे बालक को विभिन्न सूचनाओं के रूप में खण्डों या टुकड़ों में नहीं दिया जाना चाहिए। अतः प्रयोजनवादी शिक्षण-विधि का तीसरा सिद्धान्त यह हो सकता है :—**"सीखने की प्रक्रिया का एकीकरण"** ("Integration of the Learning Process")। इसका अर्थ यह है कि बालक को जो भी विषय पढ़ाये जायें, उसका शिक्षण-विधि द्वारा *'एकीकरण और समन्वय'* किया जाय।

सिद्धान्तों का व्यावहारिक रूप : Practical Form of the Principles—हमने ऊपर जिन सिद्धान्तो का वर्णन किया है, उनको किलपैट्रिक (Kilpatrick) द्वारा प्रतिपादित 'योजना-विधि' (Project Method) मे स्थान दिया गया है। यह विधि प्राचीन विधि से बिल्कुल भिन्न है। यह प्राचीन विधि के समान निष्क्रिय नहीं है। इसमें कार्य बालक का है, न कि शिक्षक का। शिक्षक बालकों के सामने ऐसी परिस्थितियाँ रखता है, कि बालक स्वयं समस्या का अनुभव कर सकें। फिर वह उनको स्वयं प्रयोग और अनुभव करने के लिए स्वतन्त्र छोड़ देता है। बालक *समस्या के समाधान मे सक्रिय भाग लेते है, एक-दूसरे का सहयोग प्राप्त करते है, और अन्त मे कुछ निश्चित परिणामों पर पहुँचते है।*

प्रयोजनवाद व पाठ्यक्रम
Pragmatism & Curriculum

(1) उपयोगिता का सिद्धान्त : Principle of Utility—प्रयोजनवादी मनुष्य के उद्देश्यों और इच्छाओं की पूर्ति पर बल देते है। इसलिए, उनका कहना है कि पाठ्यक्रम में ऐसे विषय होने चाहिए, जो बालक को उसके वर्तमान और भावी जीवन के लिए तैयार करे। अत. उनके अनुसार पाठ्यक्रम में *भाषा, स्वास्थ्य-विज्ञान, इतिहास, भूगोल, गणित, विज्ञान और शारीरिक प्रशिक्षण* को स्थान दिया

जाना चाहिए। बालिकाओं के लिए गृह-विज्ञान होना चाहिए। इसके स्थान पर बालकों के लिए कृषि-विज्ञान होना चाहिए।

'उपयोगिता का सिद्धान्त' भविष्य के लिए किसी व्यवसाय का प्रशिक्षण आवश्यक मानता है। यह इस बात को भी मानता है कि अध्ययन के विषय इस दृष्टिकोण से चुने जायँ कि वे जीवन की वास्तविक समस्याओं का हल करने में सहायता दें। यह सिद्धान्त, ज्ञान के मुख्य उद्देश्य—मानव प्रगति की अवहेलना नही करता है।

(2) बालक की रुचि का सिद्धान्त : Principle of Child's Interest—प्रयोजनवादियों के अनुसार बालक की रुचियाँ—उसके विकास के विभिन्न स्तरो पर विभिन्न होती है। अतः पाठ्यक्रम की रचना करते समय इस बात का ध्यान रखा जाय; उदाहरणार्थ—प्रारम्भिक विद्यालय के छात्रों की खोज, रचना, कला-प्रदर्शन और बातचीत में रुचि होती है। इसलिए, प्रारम्भिक विद्यालय के पाठ्यक्रम मे अग्र-लिखित विषय रखे जाने चाहिए—पढ़ना, लिखना, गिनना, हाथ का काम, ड्राइंग और प्रकृति-अध्ययन।

(3) बालक के अनुभव का सिद्धान्त : Principle of Child's Experience—प्रयोजनवादियो का कहना है कि पाठ्यक्रम का बालक के अनुभवो, भावी व्यवसायों और क्रियाओं के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध होना चाहिए। इसका कारण यह है कि जैसे ही सम्बन्ध स्थायी हो जाता है, बालक अपनी इच्छा के द्वारा सीखने के लिए प्रेरित होता है। विद्यालय मे पढाये जाने वाले सामान्य विषयों के साथ-साथ पाठ्यक्रम में स्वतन्त्र, अर्थपूर्ण और सामाजिक क्रियाओं का भी स्थान होना चाहिए।

ड्यूवी के अनुसार :—"विद्यालय, समुदाय का अङ्ग है। इसलिए, यदि ये क्रियाएँ समुदाय की क्रियाओं का रूप ग्रहण कर लेंगी, तो ये बालक में नैतिक गुणों और पहलक़दमी तथा स्वतन्त्रता के दृष्टिकोणों का विकास करेंगी। साथ ही, ये उसे नागरिकता का प्रशिक्षण देंगी और उसके आत्म-अनुशासन को ऊँचा उठायेंगी।"

"If these activities take the character of the activities of the community of which the school is an organ, they will develop moral virtues, result in attitudes of initiative and independence and will give training in citizenship and promote self-discipline.".

—Dewey.

(4) एकीकरण का सिद्धान्त : Principle of Integration—प्रयोजनवादी बुद्धि की एकता और ज्ञान की एकता में विश्वास करते हैं। अतः उनका कहना है कि वास्तविक ज्ञान अखण्ड होना चाहिए। यही कारण है कि वे पाठ्यक्रम को विभिन्न विषयो मे बाँटने के पक्ष में नही हैं। हमारे इस कथन की पुष्टि, रॉस (Ross) के इन

शब्दों से हो जाती है :—"प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम में विषयों के परम्परागत विभाजन की निन्दा करते हैं। एक विषय को दूसरे विषय में कठोरतापूर्वक अलग करने की भावना का अन्त किया जाना चाहिए। इसका कारण यह है कि मानव-क्रियाएँ महत्त्वपूर्ण हैं, न कि विद्यालय में पढ़ाये जाने वाले विषय और उनके द्वारा सीखने के लिए दी जाने वाली सामग्री। *अलग-अलग विषय पढ़ाने के बजाय छात्र को वह सब* ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, जिसका उस क्रिया से सम्बन्ध है, जिसे वह कर रहा है।"

निष्कर्ष—निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि प्रयोजनवादी लाभप्रद, लचीला, गतिशील और सुसम्बद्ध पाठ्यक्रम चाहते हैं। ब्रूबेकर के शब्दों में, वे "क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम" (Activity Curriculum) चाहते हैं। उनका कहना है कि क्रियाएँ शिक्षा को जीवन जैसा बनाने और जीवन को सत्य की प्राप्ति के योग्य बनाने के लिए आवश्यक है।

प्रयोजनवाद व शिक्षक
Pragmatism & Teacher

प्रयोजनवादी अपनी शिक्षा में बालक और उनकी क्रियाओ, रुचियो, रुझानों आदि को प्रमुख स्थान देते है। पर इसके बावजूद भी वे शिक्षक के दायित्वों को कम नहीं करते है। उनकी शिक्षा-योजना मे अध्यापक का स्थान पथ-प्रदर्शक और सलाहकार का है। उसे 'सामाजिक वातावरण' माना जाता है। उससे यह आशा की जाती है कि वह बच्चों के साथ सहानुभूतिपूर्ण और व्यक्तिगत सम्पर्क रखे, और ऐसे सम्पर्क से उनमें सामाजिक आदतो, सामाजिक रुचियों और सामाजिक दृष्टिकोणों का विकास करे। शिक्षक का महत्त्व दो बातों में है :—

1. उसे अपने छात्रो को उचित समस्याओ वाली परिस्थितियों में रखना पड़ता है।
2. उसे उनकी रुचियों की ओर इस प्रकार प्रेरित करना पड़ता है कि वे समस्याओ को कुशलता, बुद्धिमानी और सहयोग से हल कर सकें।

प्रयोजनवाद व अनुशासन
Pragmatism & Discipline

प्रयोजनवादी—वाह्य अनुशासन, शिक्षक के श्रेष्ठ अधिकार और शारीरिक दण्ड की निन्दा करते है। दूसरे शब्दो में, वे व्यक्तिगत अनुशासन के सभी रूपों को बुरा बताते हैं। उनका कहना है कि अनुशासन—'सामाजिक समझदारी' (Social Understanding) पर आधारित होना चाहिए। उनके अनुसार, विद्यालय को बालकों के आवेगों को सहयोगी क्रियाओं द्वारा उत्तेजित करना चाहिए। ऐसी दशा में अनुशासन उचित होने के साथ-साथ सामाजिक भी होगा।

प्रयोजनवादी—अनुशासन की स्थापना के लिए बालक की रुचियों और क्रियाओं पर बल देते हैं। उनका मत है कि ये क्रियाएँ सहयोगी और सामाजिक होनी चाहिए। इस प्रकार की क्रियाएँ, आत्म-अनुशासन को जन्म देती हैं, और इस प्रकार *का अनुशासन नैतिक या चारित्रिक प्रशिक्षण की ओर अग्रसर करता है। बी० डी०* भाटिया का कथन है :—"प्रयोजनवादी, स्कूल में मिली-जुली क्रियाओं द्वारा सामाजिक अनुशासन के पक्ष में हैं।"

"Pragmatists are in favour of social discipline through the conjoint activities in the school."—**B. D. Bhatia.**

प्रयोजनवाद व विद्यालय
Pragmatism & School

प्रयोजनवादी, शिक्षा को 'सामाजिक प्रक्रिया' मानते है। उनका मत है कि शिक्षा ही समाज को नया रूप देती हैं। अतः वे शिक्षा-संस्था को सामाजिक संस्था मानते हैं। उनका कहना है कि विद्यालय—समाज का छोटा रूप है। पर यह रूप सरल, शुद्ध और विभिन्न तत्त्वों के बीच सन्तुलन स्थापित करने वाला होना चाहिए। जब विद्यालय ऐसा होगा—तभी बालक को समाज में रहना, कार्य करना और आधुनिक सामाजिक जीवन की विषमताओं के बीच अपनी क्षमताओं का उपयोग करना *सिखाया जा सकेगा। प्रयोजनवादी, विद्यालय को सामुदायिक जीवन का केन्द्र भी* बनाना चाहते हैं। ड्यूवी का कथन है :—"विद्यालय को समाज का वास्तविक प्रतिनिधि होना चाहिए।"

"School should be the true representative of the society."

—**Dewey.**

प्रयोजनवाद का मूल्यांकन
Estimate of Pragmatism

(अ) गुण : **Merits**—1. *प्रयोजनवाद, बालकों को व्यावहारिक जीवन के* लिए तैयार करता है।

2. यह सामाजिक और जनतांत्रिक शिक्षा है, क्योंकि यह स्वतन्त्रता, समानता आदि गुणों का विकास करता है।
3 इसने विचार की अपेक्षा क्रिया को प्रधानता दी है।
4. रस्क का मत है कि इसने विचार को व्यवहार के अधीन बनाया है।
5. *इसने शिक्षा को जो योगदान दिया है, उसकी अवहेलना नहीं की जा* सकती है। इसकी सबसे महत्त्वपूर्ण देन 'प्रोजेक्ट पद्धति' (Project *Method*) है।

6. इसने शिक्षा-दर्शन को कई नई बातें दी है; जैसे—नवीन शिक्षा (New Education), प्रगतिशील शिक्षा (Progressive Education), क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम (Activity Curriculum), संगठित इकाई (Integrated Unit) आदि।

(ब) दोष : **Demerits**—1. प्रयोजनवाद, आध्यात्मिक गुणों की अवहेलना करता है और केवल इसी लोक पर बल देता है।

2. यह केवल उपयोगिता और परिणामों के आधार पर सत्य का निर्धारण करता है।
3. यह पूर्व निश्चित आदर्शों और मान्यताओं को अस्वीकार करता है।
4. यह सत्य को परिवर्तनशील मानता है।
5. यह सांस्कृतिक आदर्शों की उपेक्षा करता है।
6. इसने शिक्षा का कोई निश्चित उद्देश्य नही बताया है।

निष्कर्ष

प्रयोजनवाद ने शिक्षा को अनेक नई बातें दी है, जिनके कारण शिक्षा के जगत् में क्रान्ति के युग का प्रारम्भ हुआ है और शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन हो गया है। आज के संसार में प्रयोजनवाद—शिक्षा का मुख्य आदर्श माना जाता है। यही कारण है कि शिक्षा की जो भी योजनाएँ बनाई जाती है, उनमे सबसे पहले प्रयोजनवाद का ही सहारा लिया जाता है।

प्रयोजनवाद की प्रशंसा करते हुए रस्क ने लिखा है :—"प्रयोजनवाद, नवीन आदर्शवाद के विकास में एक चरण मात्र है। यह नवीन आदर्शवाद ऐसा होगा, जो सदैव जीवन की वास्तविकता का ध्यान रखेगा और व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का समन्वय करेगा। इसके साथ ही, यह ऐसी संस्कृति का निर्माण करेगा, जो कुशलता का पुष्प होती है।"

"It is merely a stage in the development of a new Idealism that will do full justice to reality, reconcile the practical and the spiritual values, and result in a culture which is the flower of efficiency."—**Rusk.**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the essential features of the Pragmatic school of education. Bring out its views on aims of education, methods of teaching, curriculum, teacher and discipline.

शिक्षा की प्रयोजनवादी विचारधारा के प्रमुख तत्त्वों की विवेचना कीजिए। शिक्षा के उद्देश्यों, शिक्षण-विधियों, पाठ्यक्रम, शिक्षक तथा अनुशासन के सम्बन्ध में इसके विचारों को दीजिए।

2. Which school of philosophy, in your opinion, can

provide a sound basis for educational reconstruction in India today? Why?

वर्तमान भारत में शिक्षा के पुनर्निर्माण के लिए आपके मतानुसार कौन-सी दार्शनिक विचारधारा एक उचित आधार प्रदान कर सकती है ? क्यों ?

3. What is pragmatism ? How has it influenced the theory and practice of education ?

फलवाद (प्रयोजनवाद) क्या है ? शिक्षा के सिद्धान्त और कार्य-प्रणाली को इसने किस प्रकार प्रभावित किया है ?

4. How is the problem of discipline viewed according to naturalism, idealism and pragmatism in education ?

शिक्षा में प्रकृतिवाद, आदर्शवाद तथा फलवाद द्वारा अनुशासन की समस्या पर किस प्रकार विचार किया जाता है ?

5. Explain, giving examples, how far modern educational thought and practice combine the stand-points of different types of educational philosophies ?

उदाहरण देकर समझाइये कि आधुनिक शैक्षिक सिद्धान्त तथा व्यवहार मे किस सीमा तक विभिन्न शैक्षिक दर्शनो के दृष्टिकोण का समावेश है ?

आदर्शवाद, प्रकृतिवाद व प्रयोजनवाद का तुलनात्मक अध्ययन
Comparative Study of Idealism, Naturalism & Pragmatism

आदर्शवाद : Idealism	प्रकृतिवाद : Naturalism	प्रयोजनवाद : Pragmatism
1. आधारभूत सिद्धान्त : Fundamental Principles		
1. मन, विचार व आत्मा वास्तविक है।	1. प्रकृति, पदार्थ या भौतिक-जगत वास्तविक है।	1. वास्तविकता प्रक्रिया में निहित है।
2. आध्यात्मिक प्रकृति सर्वोत्तम है।	2. मनुष्य की मूल-प्रवृत्त्यात्मक प्रकृति उत्तम है।	2, मूल्य, आदर्श आदि निश्चित नहीं, वरन् परिवर्तनशील हैं।
3. सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् अमर मूल्य है।	3. विश्व—एक बड़ी मशीन है।	3. साधन को साध्य से अधिक महत्त्व देता है।
4. परमात्मा स्वभाव से मानसिक है।	4. केवल विज्ञान ही ज्ञान प्रदान करता है।	4. मानवीय प्रयत्न निर्णायक महत्त्व के है।
5. विश्व—विचार-प्रक्रिया है।	5. विश्व की वास्तविक व्याख्या केवल प्राकृतिक विज्ञानों के द्वारा की जाती है।	5. जो सिद्धान्त कार्य करते हैं, वे सत्य हैं।
6. चिन्तन का सर्वोत्तम स्वरूप—अन्तर्ज्ञान है।	6. नैतिक प्रवृत्ति, आत्म, परलोक, व्यक्तिगत अमरत्व आदि सब भ्रम हैं।	6. सत्य मानव निर्मित होता है।
7. दृष्टिकोण पूर्णतया आध्यात्मिक है।	7. दृष्टिकोण पूर्णतया भौतिक व यान्त्रिक है।	7. दृष्टिकोण पूर्णतया मानवीय है।

2. शैक्षिक सिद्धान्त : Educational Principles

1. शिक्षा : आध्यात्मिक प्रक्रिया है। 2. परमात्म तत्त्व की ओर विकास। 3. व्यक्तित्व के उन्नयन पर बल। 4. सामाजिक और नैतिक वातावरण पर बल। 5. निश्चयात्मक शिक्षा।	1. बालक की प्रकृति के अनुसार शिक्षा। 2. बालक के वर्तमान जीवन की शिक्षा का आधार बनाया जाय। 3. निषेधात्मक (Negative) शिक्षा पर बल। 4. भौतिक वातावरण पर बल। 5. निषेधात्मक शिक्षा।	1. शिक्षा : सामाजिक प्रक्रिया है। 2. बालक की क्रियाओं एवं स्वप्रयत्नों पर बल। 3. जीवन की ठोस परिस्थितियों को शिक्षा का आधार बनाया जाय। 4. सामाजिक एवं भौतिक वातावरण पर बल। 5. निश्चयात्मक शिक्षा, प्रयोग और अनुभव पर आधारित सामाजिक प्रक्रिया।

3. शिक्षा के सिद्धान्त : Aims of Education

1. आत्मानुभूति (Self-realization)। 2. चरित्र-निर्माण (Character formation) 3. सत्यम्, शिवम् एव सुन्दरम् की प्राप्ति। 4. आध्यात्मिक व्यक्तित्व का विकास। 5. पवित्र एवं पुण्य जीवन की प्राप्ति। 6. सास्कृतिक एवं आध्यात्मिक विरासत का सरक्षण एवं उसकी समृद्धि।	1. आत्माभिव्यक्ति (Self-Expression)। 2. वैयक्तिकता का विकास। 3. उचित सहज सम्बद्ध क्रियाओं का निर्माण। 4. मूल-प्रवृत्तियों का शोधन, मार्गान्तीकरण और समन्वय। 5. जीवन-संघर्ष के लिए तैयारी। 6. प्रजातीय प्रगति की प्राप्ति।	1. पूर्व निश्चित उद्देश्यों की अस्वीकृति। 2. उद्देश्य निश्चित न होकर परिवर्तनशील होते है। 3. सामाजिक कुशलता पर बल। 4. सामाजिक व्यवस्था की उन्नति। 5. गतिशील और लचीले मस्तिष्क का निर्माण। 6. नये मूल्यों और आदर्शों का निर्माण।

आदर्शवाद : Idealism	प्रकृतिवाद : Naturalism	प्रयोजनवाद : Pragmatism
	4. पाठ्यक्रम : Curriculum	
1. मनुष्य के विचारो और आदर्शों पर पाठ्यक्रम का आधारित होना । 2. शाश्वत मूल्यो अर्थात् सत्यं, शिवं और सुन्दरम् का महत्त्वपूर्ण स्थान है । 3. शारीरिक, सामाजिक और आध्यात्मिक क्रियाओ पर बल । 4. पाठ्यक्रम के मुख्य विषय—आध्यात्मवाद, धर्म, नीतिशास्त्र, कला, संगीत, दस्तकारी । 5. नीति-शास्त्र और कला (Arts) के विषयों पर बल ।	1. बालक की रुचियो, योग्यताओं, और स्वाभाविक क्रियाओ को महत्त्व । 2. बालक के विकास की विभिन्न आवश्यकताओ की पूर्ति । 3. जीवन-रक्षा सम्बन्धी विषयों की प्रधानता । 4. पाठ्यक्रम के मुख्य विषय—शरीर-विज्ञान, स्वास्थ्य-विज्ञान, भौतिक-विज्ञान, बाल-मनोविज्ञान । 5. विज्ञान पर बल ।	1. उपयोगिता का सिद्धान्त । 2. बालक की रुचि का सिद्धान्त । 3. बालक के अनुभव का सिद्धान्त । 4. सीखने की प्रक्रिया का एकीकरण । 5. पाठ्यक्रम के मुख्य विषय—स्वास्थ्य-विज्ञान, शारीरिक प्रशिक्षण, गृह-विज्ञान (बालिकाओं के लिए), विज्ञान । 6. उपयोगी विषयों पर बल ।
	5. शिक्षण-विधियाँ : Methods of Teaching	
1. कोई निश्चित विधि नहीं । 2. आदर्शवादी स्वय विधियो के निर्धारक और निर्माणकर्त्ता ।	1. करके सीखना । 2. अनुभव द्वारा सीखना ।	1. करके सीखना । 2. अनुभव द्वारा सीखना ।

(क्रमशः)

3. प्रमुख विधियाँ—वाद - विवाद विधि, प्रश्नोत्तर विधि, व्याख्यान विधि, पुस्तक-पठन विधि।	3. खेल द्वारा सीखना। 4. प्रमुख विधियाँ—डाल्टन, किंडरगार्टन, मॉन्टेसरी, ह्यूरिस्टिक।	3. सीखने की प्रक्रिया में एकीकरण। 4. प्रमुख विधि—योजना-विधि (Project Method)
6. अनुशासन : Discipline		
1. प्रभावात्मक अनुशासन। 2. नियन्त्रित स्वतन्त्रता।	1. प्राकृतिक परिणामों द्वारा अनुशासन। 2. अनियन्त्रित स्वतन्त्रता।	1. सीमित मुक्त्यात्मक अनुशासन। 2. सामाजिक अनुशासन।
7. शिक्षक : Teacher		
1. शिक्षक का महत्त्वपूर्ण स्थान। 2. शिक्षक—एक माली के रूप में।	1. प्रकृति ही उत्तम शिक्षक है। यदि शिक्षक का कोई स्थान है तो रंगमंच तैयार करने तथा पर्दे के पीछे रहने वाले के रूप में।	1. शिक्षक—सामाजिक वातावरण के रूप में।
9. विद्यालय : School		
1. मानव-क्रियाओं का आदर्श लघु रूप। 2. बाग के रूप में।	1. प्राकृतिक या स्वाभाविक वातावरण के रूप में। 2. स्वच्छन्द वातावरण।	1. समाज का लघु रूप। 2. सामुदायिक जीवन केन्द्र।

25

शिक्षा में यथार्थवाद
REALISM IN EDUCATION

"यथार्थवाद वह सिद्धान्त है जिसके अनुसार वस्तुनिष्ठ यथार्थता या भौतिक संसार, चेतन मन से स्वतन्त्र रूप में अपना अस्तित्व रखता है; उसकी प्रकृति एवं गुण उसके ज्ञान से जान लिए जाते हैं।"

"Realism is the doctrine that objective reality or the material universe exists independently of the conscious mind, its nature and properties are being affected by being known."—Carter V. Good.

विषय-प्रवेश

16वी शताब्दी के अन्त मे यथार्थवादी विचारधारा का सूत्रपात हुआ जो 17वी शताब्दी पर पहुँचते-पहुँचते एकदम स्पष्ट हो उठा। यथार्थवाद की उत्पत्ति के दो प्रमुख कारण थे : **प्रथम**—प्राचीन एवं मध्यकालीन आदर्शवादी विचारधारा 16वी शताब्दी तक इतनी आडम्बरपूर्ण और खोखली हो गयी थी कि उसके आदर्श वर्तमान जीवन के लिए महत्त्वहीन हो चुके थे। इस कारण उसमें किसी का विश्वास नही रहा था, क्योंकि आधुनिक जीवन की परिवर्तित परिस्थितियो और वैज्ञानिक अनुसन्धानों के कारण जो दृष्टिकोण और जीवन-दर्शन मे परिवर्तन हुआ, जो नये प्रश्न उत्पन्न हुए, आदर्शवाद उनका उत्तर न दे पाया और उस कोरे सिद्धान्तवाद के विरुद्ध यथार्थवाद प्रतिक्रियास्वरूप आया। यह सत्य है कि आदर्शवादी विचारधारा के ग्रहण करने से मनुष्य देवतुल्य बन सकता था, परन्तु मानव उन आदर्शों के द्वारा अपनी सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति नही कर सकता था। उन आदर्शों के द्वारा वह भले ही मानसिक विकास कर सकता था परन्तु क्रियाशीलता एवं व्यावहारिकता को

प्राप्त करने के लिए वे आदर्श अनुपयुक्त थे । इस प्रकार, समय की माँग को पूरा करने में प्राचीन एवं मध्यकालीन आदर्श असफल सिद्ध हुए । इस असफलता के परिणाम-स्वरूप यथार्थवादी विचारों का सूत्रपात हुआ ।

द्वितीय—मानवतावाद तथा सुधार-आन्दोलन के परिणामस्वरूप मनुष्य 'बुद्धि' एवं 'विवेक' में आस्था रखने लगे थे । उनके इस विश्वास को और अधिक दृढ़ विज्ञान के विकास ने किया । **विज्ञान का विकास यथार्थवाद के जन्म का दूसरा महत्त्वपूर्ण कारण था ।** नवीन खोजों एवं आविष्कारों ने मनुष्य के मस्तिष्क में क्रान्ति उत्पन्न कर दी । कोपरनिकस (Copernicus), न्यूटन (Newton), जॉन केपलर (John Capler), बेकन (Bacon), हारवेज (Harveys) आदि के अनुसंधानों के फलस्वरूप अन्ध-विश्वास एवं दृष्टिकोण की संकीर्णता समाप्त हो गई । इस प्रकार इस युग मे 'बुद्धि' और 'विवेक' को प्रधानता प्रदान करके मनुष्य का ध्यान वास्तविकता तथा यथार्थता की ओर अधिक आकर्षित हुआ । अतः भौतिक दर्शन तथा वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने यथार्थ-वाद को जन्म दिया ।

यथार्थवाद की उत्पत्ति, अर्थ व परिभाषा
Derivation, Meaning & Definition of Realism

(अ) 'यथार्थवाद' शब्द की उत्पत्ति : Derivation of the word, 'Realism'—'यथार्थवाद' अंग्रेजी भाषा के शब्द 'Realism' का हिन्दी रूपान्तर है । 'Real' शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के 'Res' में मानी जाती है जिसका अर्थ 'वस्तु' है । अतः 'Realism' का अर्थ—वस्तु सम्बन्धी विचारधारा से है ।

(ब) 'यथार्थवाद' का अर्थ : Meaning of Realism—'यथार्थवाद' वस्तु के अस्तित्व सम्बन्धी विचारों के प्रति एक दृष्टिकोण है, जो प्रत्यक्ष जगत् को सत्य मानता है । आदर्शवाद के अनुसार, सत्य का निवास—मानव-मस्तिष्क में है, पर यथार्थवाद के अनुसार, इसका आवास—भौतिक जगत् की वास्तविक वस्तुओ और घटनाओं में है । वर्षा होती है, सूर्य चमकता है, ऋतुओं में परिवर्तन होता है, पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है—ये सब घटनाएँ सत्य है, चाहे हमको इनका ज्ञान हो या नहीं । इस दृष्टि से यथार्थवाद, भौतिकवाद पर आधारित है । यही कारण है कि यथार्थवादी—विचारों एवं सिद्धान्तों की अपेक्षा वस्तुओं और घटनाओं की वास्तविकता पर बल देते हैं ।

(स) 'यथार्थवाद की परिभाषा : Definition of Realism—हम 'यथार्थ-वाद' के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ दे रहे है; यथा :—

1. स्वामी रामतीर्थ :—"यथार्थवाद का अर्थ वह विश्वास या सिद्धान्त है, जो जगत् को वैसा ही स्वीकार करता है, जैसा कि वह हमें दिखाई देता है ।"

"Realism means a belief or theory which works upon the world as it seems to us."—**Swami Ram Tirth.**

2. नेफ़ :—"यथार्थवाद, आत्मगत आदर्शवाद का प्रतीकार है, जो सत्य का

निवास, मानव-मस्तिष्क में मानता है। सब यथार्थवादी इस बात से सहमत हैं कि सत्य और वास्तविकता का अस्तित्व है और रहेगा, भले ही किसी व्यक्ति को उनके अस्तित्व का ज्ञान न हो।"

"Realism is an antidote to subjective idealism. All realists agree that truth and reality exist and that they would do so, even though no human beings had knowledge of their existence." —**Frederick C. Neff.**

3. ब्राउन :—"यथार्थवाद का मुख्य विचार यह है कि सब भौतिक वस्तुएँ या बाह्य जगत् के पदार्थ वास्तविक है और उनका अस्तित्व देखने वाले से पृथक् है। यदि उनको देखने वाले व्यक्ति न हों, तो भी उनका अस्तित्व होगा और वे वास्तविक होगे।"

"The distinguishing viewpoint of Realism is that all physical things, or objects of the external world are real in themselves, existing independently of the perceiver. If they were no human perceivers, they objects would still exist, still be real."—**L. M. Brown.**

यथार्थवाद का दार्शनिक दृष्टिकोण
Philosophical Outlook of Realim

तत्व-दर्शन में यथार्थवाद : Realism in Metaphysics—यथार्थवादी यह मानते है कि ब्रह्माण्ड गतिशील पदार्थ का बना हुआ है। जिस भौतिक जगत् मे हम निवास करते हैं, वह वास्तविकता का निर्माण करता है। हम अपने अनुभवो के आधार पर इस जगत् की उन कुछ नियमितताओं को पहिचान सकते है, जिनके सम्बन्ध मे सामान्यीकरण किया जा सकता है और नियम का स्तर प्रदान किया जा सकता है। उनका कहना है कि पदार्थ, गतिशील है, चाहे मनुष्य उससे अपना सम्बन्ध रखे या नहीं रखे।

ज्ञान-शास्त्र में यथार्थवाद : Realism in Epistemology—यथार्थवादियों का विचार है कि वास्तविक जगत् का अस्तित्व है। हम वास्तविक वस्तु को जानते है, क्योकि इसका अस्तित्व है। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते है कि कोई वस्तु इसलिए सत्य है, क्योकि उसका वास्तविक जगत् में अस्तित्व है। यथार्थवादी, विश्लेषण पर बल देते है। वे किसी भी कथन को विश्लेषित एवं परिमापित किये बिना स्वीकार नही करते हैं। उनका विचार है कि ज्ञान से पूर्व ज्ञाता और ज्ञेय का अस्तित्व विद्यमान रहता है। हम जिसे ज्ञान कहते है, उसकी सामग्री मस्तिष्क में या मस्तिष्क के समक्ष रहती है।

मूल्य-मीमांसा में यथार्थवाद : Realism in Axiology—यथार्थवादी प्राकृतिक नियमों में विश्वास करते है। उनका कहना है कि मनुष्य इन नियमो का पालन करके सद् जीवन व्यतीत कर सकता है। वे प्रकृति के व्यवस्थित व्यवहार मे सौन्दर्य

की खोज करते हैं। उनका कथन है कि सौन्दर्यपूर्ण कला-कार्य, ब्रह्माण्ड या प्रकृति की व्यवस्था तथा तर्क की प्रतिच्छाया है। अतः कला को प्रकृति की व्यवस्था को प्रतिबिम्बित या उसकी व्याख्या करनी चाहिये।

यथार्थवाद के रूप
Forms of Realism

दर्शन के दृष्टिकोण से यथार्थवाद के अधोलिखित रूप पाये जाते हैं :—

1. सरल यथार्थ : Naive Realism—यथार्थवाद का यह रूप अति प्राचीन काल से चला आ रहा है। *'मानव अपने समक्ष की वस्तुओं में विश्वास रखता है।'* यही इस रूप का प्रमुख आधार है। इसी विश्वास के आधार पर मनुष्य अपने सामाजिक एवं सास्कृतिक रीति-रिवाजों का निर्माण करता है।

2. *नव-यथार्थवाद* : Neo-Realism—*नव-यथार्थवाद का विकास* एक नियोजित दार्शनिक सम्प्रदाय के रूप में हुआ। वस्तुतः इसके विकास में विज्ञान ने बहुत सहयोग दिया। यह रूप, ज्ञान के सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है। नव-यथार्थवाद ने आदर्शवाद का खण्डन करके अपना पृथक् ज्ञान-शास्त्र बनाया।

3. *आलोचनात्मक यथार्थवाद* : Critical Realism—*यथार्थवाद के इस* रूप का विकास नव-यथार्थवाद की आलोचना के कारण हुआ। यह रूप इस बात में आस्था रखता है कि ज्ञाता का मन जब बाह्य विचारों को ग्रहण करता है, तब बाह्य वस्तुओं से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त होता है। यह भी अन्य रूपों की भाँति बाह्य वस्तुओं का *अपना स्वतन्त्र अस्तित्व मानता है। जे० पासमोर का कथन है :—"आलोचनात्मक* **यथार्थवाद सरल यथार्थवाद तथा आत्मगतवाद के बीच एक समझौता है।"**

"Critical Realism is a compromise between Naive Realism and Subjectivism."—**J. Passmore.**

यथार्थवाद के मूल सिद्धान्त
Basic Principles of Realism

1. दृश्य-जगत् ही सत्य है : Phenomenal World is True—यथार्थवादियों का सिद्धान्त है कि जगत् में हम जो कुछ देखते, सुनते या अनुभव करते हैं—वे सब हमारे समक्ष प्रत्यक्ष रूप में होते हैं। अतः जो कुछ प्रत्यक्ष है, वही सत्य है। इस जगत की सत्यता विचारों के कारण नहीं है, वरन्, उसका अस्तित्व स्वयं में है—क्योंकि वह प्रत्यक्ष है। जो प्रत्यक्ष है, उसका अस्तित्व है। मूर का कथन है :—"अस्तित्व, प्रत्यक्ष में है।"

"Esse-est percipi—Existence is perceiving,"—**Moore.**

2. आंगिक सिद्धान्त : Theory of Organism—प्रसिद्ध यथार्थवादी, ह्वाइटहैड (Whitehead) का विचार है कि संसार की चर-अचर प्रत्येक वस्तु समष्टि के एक-एक अंग (Organ) है। समस्त अवयवों में सम्मिलित रूप से तरंगित प्रक्रिया

हो रही है जिसके परिणामस्वरूप परिवर्तन दृष्टिगत होते है। इस परिवर्तनशीलता के कारण जगत् के समस्त तत्त्वों, विचारों एव नियमों में अनवरत परिवर्तन होते रहते है। इस प्रकार, इस सिद्धान्त के समर्थक वैज्ञानिक नियमों को शाश्वत नही मानते हैं, वरन् परिवर्तनशील स्वीकार करते है। यही वह विन्दु है—जहां यथार्थवाद भौतिकवाद से भिन्न हो जाता है, क्योंकि भौतिकवाद के अनुसार वैज्ञानिक नियम स्थिर एव शाश्वत माने जाते हैं। ह्वाइटहैड का कथन है :—"यथार्थता एक व्यवस्था है जो सदैव आंगिक है। इसका प्रत्येक भाग स्वयं एक सक्रिय व्यवस्था है, एक समन्वित प्रक्रिया हैं। यह केवल परिणाम नहीं, वरन् स्वयं कारण भी है। संसार, विकास की प्रक्रिया में एक तरंगित अवयव है। परिवर्तन इस तरंगित विश्व का आधारभूत गुण है। सत्य, वास्तविकता का सारतत्त्व प्रक्रिया है। मन को अवयवी के कार्य के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।"

"Reality is a system that is organic throughout, each part of it is itself an active system, a correlated process. It is not merely an affect but a Causa sui. The universe is a vibrating organism in the process of evolution. Change is the fundamental feature of this vibrating universe. The very essence of the real actuality is process. Mind must be regarded as the function of organism."

—**A. N. Whitehead.**

3. इन्द्रियां : ज्ञान के द्वार है : **Senses are the Gateways of Knowledge**—यथार्थवादियों के अनुसार, सच्चे ज्ञान की प्राप्ति केवल इन्द्रियों द्वारा ही होती है। किसी वस्तु की जानकारी हम इन्द्रियों द्वारा देखकर, सूंघकर, चखकर, या स्पर्श करके प्राप्त करते है। इस प्रकार से प्राप्त किया हुआ ज्ञान पूर्ण एव वास्तविक होता है। इन्द्रियों एवं वस्तुओं के सम्पर्क के फलस्वरूप हमें जो सवेदना (Sensation) होती है, वह सत्य वास्तविकता है। रसेल तथा ह्वाइटहैट ने सवेदना को सत्य ज्ञान का आधार माना है।

रसल का कथन है :—"पदार्थ के अन्तिम निर्माणक तत्त्व, अणु नहीं हैं, वरन् संवेदन हैं। मेरा विश्वास है कि हमारे मानसिक जीवन के रचनात्मक तत्त्व पूर्णतः संवेदनाओं और प्रतिमाओं में निहित होते हैं।"

"I contend that ultimate constituents of matter are not atoms, but sensation. I believe that the stuff of our mental life consists wholly of sensations and images."—**Bertrand Russell.**

4. वस्तु-जगत् में नियमितता : **Regularity in Objective *World***—यथार्थवादी वस्तु-जगत् में नियमितता को स्वीकार करते है। इसी कारण उनका दृष्टिकोण यात्रिक वन जाता है, जिसके परिणामस्वरूप वे मन को भी यान्त्रिक

ढग से क्रियाशील मानते हैं। यथार्थवादियों की यह धारणा इस बात पर आधारित है—'अनुभव और ज्ञान के लिए नियमितता का होना परमावश्यक है।

5. यथार्थवाद पारलौकिकता को अस्वीकार करता है : Realism does not accept Trancendentalism—यथार्थवाद प्रत्यक्ष जगत् को ही सब कुछ मानता है। इसके अनुसार इस लोक से परे कोई वस्तु नहीं हैं। इस प्रकार यह वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं वस्तुनिष्ठता (Objectivity) पर बल देता है। वस्तुतः यथार्थवाद अपनी प्रक्रिया मे वैज्ञानिक हैं।

6. मानव के वर्तमान व व्यावहारिक जीवन पर बल . Emphasis on Present & Practical Life of Man—यथार्थवादी उन आदर्शों, नियमो एव मूल्यों को कोई महत्त्व नही देते है जिनका सम्बन्ध वर्तमान एवं व्यावहारिकता से नही है। इसके साथ ही वे बौद्धिकता (Intellectualism) तथा आदर्शवादिता का विरोध करते है। रस्क का कथन है :—**"नव यथार्थवाद का उद्देश्य एक ऐसे दर्शन का प्रतिपादन करना है, जो सामान्य जीवन के तथ्यों तथा भौतिक विज्ञान के विकास के अनुकूल हो।"**

"The aim of Nea-Realism is to expound a philosophy which in not inconsistent with the facts of common life and with the developments in physical science."—**R. R. Rusk.**

यथार्थवादी शिक्षा की प्रमुख विशेषताएँ
Chief Characteristics of Realistic Education

रॉस ने लिखा है :—**"जिस प्रकार प्रकृतिवाद, शिक्षा के क्षेत्र में बनावटी प्रशिक्षण-पद्धतियों के विरोध स्वरूप उपस्थित हुआ है, उसी प्रकार यथार्थवाद उस पाठ्यक्रम के विरोध में आया है, जो पुस्तकीय अवास्तविक एवं जटिल हो गया है।"**

"Just as Naturalism comes on the educational scene as a protest against systems of training that have become *artificial*, so Realism tends to appear as a reaction against curricula consising of studies that have become bookish, sophisticated and abstruse."—**Ross.**

इससे स्पष्ट है कि यथार्थवाद ने शैक्षिक क्षेत्र में अवास्तविक एव पुस्तकीय पाठ्यक्रम का विरोध किया। शिक्षा में यथार्थवाद को समझने के लिए यथार्थवादी शिक्षा की विशेषताओं को जानना परमावश्यक है। उसकी प्रमुख विशेषताएँ निम्न-लिखित हैं :—

1. विस्तृत व व्यावहारिक पाठ्यक्रम : Broad & Practical Curricula—यथार्थवाद ने शिक्षा के पाठ्यक्रम को विस्तृत बनाया। कार्टर वी० गुड ने लिखा है :—**"विस्तृत पाठ्यक्रम, यथार्थवाद की एक प्रमुख विशेषता थी। 17वीं शताब्दी के यथार्थवादियों के हेतु यह अस्वाभाविक नहीं था कि वे 25 या 30 विषयों के अध्ययन**

का प्रस्ताव प्रस्तुत करें, जिनमें लेटिन, फ्रेंच और वर्नाक्यूलर जैसी दो या तीन भाषाएँ गणित की दो या तीन शाखाएँ, कई सामाजिक अध्ययन के विषय बहुत-से विज्ञान, दार्शनिक, सैन्य सम्बन्धी और व्यावसायिक तथा शिष्टाचार सम्बन्धी विभिन्न विषय हों।"

"A broad curriculum was one of the features of realism. It is not unusual to find seventeenth century realists proposing the study of twentyfive or thirty subjects, including two or three languages such as Latin, French, and in the Vernacular, two or three branches of mathematics, several social studies, a number of sciences; philosophical, military and vocational branches and a variety of polite accomplishment."—Carter V. Good.

यथार्थवादियों ने पाठ्यक्रम को विस्तृत ही नहीं बनाया, वरन् उसका वास्तविक जीवन से भी सम्बन्ध जोड़ा। इसने पाठ्यक्रम में विभिन्न व्यावहारिक विषयों को स्थान प्रदान करके उसे व्यावहारिक बनाने का प्रयास किया। रॉस ने लिखा है :— "शिक्षा में यथार्थवादी विचारधारा शिक्षक को शिक्षण-विधि के सम्बन्ध में ही नहीं वरन् उसकी पाठ्य-वस्तु को महत्ता एवं उसके मूल्य के हेतु सतत् चिन्तनशील रहने के लिए चुनौती देती रहती है।"

2. प्राकृतिक तत्वों व सामाजिक संस्थाओं का महत्व : **Importance of Natural Phenomenon & Social Institutions**—यथार्थवादी शिक्षा में विषयों की अपेक्षा प्राकृतिक तत्त्वों एवं सामाजिक संस्थाओं को महत्त्व प्रदान किया गया। पॉल मुनरो ने लिखा है :—"शिक्षा में यथार्थवाद उस प्रकार की शिक्षा के लिए प्रयुक्त किया जाता है, जिसमें भाषाओं और साहित्य की अपेक्षा प्राकृतिक घटनाओं और सामाजिक संस्थाओं का अध्ययन का मुख्य विषय बनाया जाता है।"

"The term realism (in education) is applied to that type of education in which natural phenomenon and social institutions rather than languages and literature are made the chief subject of study."
—Paul Monroe.

3. इन्द्रियाँ—ज्ञान के प्रमुख द्वार हैं : **Senses are the Gateways of Knowledge**—यथार्थवाद के अनुसार इन्द्रियाँ ही ज्ञान के प्रमुख द्वार हैं। इस प्रकार इसने इन्द्रियों पर बल देकर शिक्षा में सहायक सामग्री तथा दृश्य-श्रव्य साधनों के प्रयोग एवं महत्त्व को बढ़ाया।

4. उदार शिक्षा पर बल : **Emphasis on Liberal Education**—यथार्थवाद ने उदार शिक्षा पर बल दिया। मानवतावादी यथार्थवाद के समर्थक, मिल्टन ने लिखा है :—"मैं उस शिक्षा को पूर्ण एवं उदार शिक्षा कहता हूँ जो एक व्यक्ति को

न्यायोचित ढंग से, कुशलतापूर्वक तथा उदारता के साथ निजी एवं सार्वजनिक—दोनों प्रकार के सभी कार्यों को शान्ति तथा युद्ध के समय पूर्ण करने के योग्य बनाती है।"

5. व्यावसायिक शिक्षा पर बल : **Emphasis on Vocational Education**—यथार्थवाद, उदार शिक्षा के साथ-साथ व्यावसायिक शिक्षा पर भी बल देता है। डेविनपोर्ट का कथन है :—"कोई भी व्यक्ति किसी व्यवसाय के बिना शिक्षा का चयन न करे, और न बिना शिक्षा के व्यवसाय का चयन करे।"

"*No individual shall be obliged to choose between an* education without a vocation and a vocation without an education."
—**Davenport.**

शिक्षा में यथार्थवाद के रूप
Forms of Realism iu Education

शिक्षा में यथार्थवाद के तीन रूप माने जाते हैं। ये रूप अधोलिखित है :—

1—मानवतावादी यथार्थवाद : Humanistic Realism
2—सामाजिक यथार्थवाद : Social Realism
3—ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवाद : Sense Realism

कुछ विद्वानों ने यथार्थवाद का एक और रूप माना है जो वैज्ञानिक यथार्थवाद के नाम से प्रसिद्ध है।

मानवतावादी यथार्थवाद
Humanistic Realism

मानवतावादी यथार्थवादियों का कहना है कि शिक्षा, यथार्थवादी होनी चाहिए जिससे मानव जीवन सुखमय एवं समृद्ध बन सके। इस दृष्टिकोण से उन्होंने प्राचीन रोमन एवं यूनानी साहित्य के अध्ययन पर बल दिया। क्योंकि जीवन को सफल एवं समृद्ध बनाने के हेतु समस्त ज्ञान इस साहित्य में निहित है। मानवतावादी इस साहित्य के अध्ययन को व्यक्तिगत, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए आवश्यक मानते हैं। पॉल मुनरो ने लिखा है :—"मानवतावादी यथार्थवादियों का उद्देश्य—अपने जीवन की प्राकृतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों का पूर्ण अध्ययन प्राचीन व्यक्तियों के जीवन की व्यापक परिस्थितियों के माध्यम से करना था, लेकिन यह कार्य केवल ग्रीक एवं रोमन साहित्य के विस्तृत ज्ञान से पूर्ण किया जा सकता था।"

"The purpose of humanistic realist was to master his own environing life natural and social through a knowledge of the broader life of the ancients but both could be gained through a mastery of the literature of Greeks and Romans."—**Paul Monroe.**

मानवतावादी यथार्थवाद के समर्थक
Supporters of Humanistic Realism

1. इरेसमस (1446-1536) : Irasmus

इरेसमस का जन्म 1446 ई० में हालैंड मे हुआ था। इरेसमस ने सकीर्ण मानवतावादी शिक्षा का विरोध किया। इन्होंने अपनी पुस्तक 'सिस्टम ऑफ स्टडीज़' (System of Studies) में मानवतावादी यथार्थवाद का विवेचन किया। इरेसमस ने ज्ञान को दो भागों में बाँटा है। प्रथम—शब्दों का ज्ञान, तथा द्वितीय—वस्तु-ज्ञान। इरेसमस ने वस्तु-ज्ञान को अधिक महत्त्वपूर्ण माना। इरेसमस का कथन है :—"ज्ञान दो प्रकार का होता है—शब्द-ज्ञान तथा वस्तु-ज्ञान। शब्दों का ज्ञान पहले होता हैं परन्तु वस्तु-ज्ञान अधिक महत्त्वपूर्ण है। वस्तुओं को सीखने में शब्द-ज्ञान की चिन्ता नहीं करनी चाहिए, क्योंकि शब्द-ज्ञान में अनुचित परामर्श से समय की बचत करने के हेतु बहुत बड़ा अपव्यय हो जाता है।"

"Knowledge seems to be of two kinds, that of things and that of words. That of words comes first, that of things is the most important in learning things he overlooks. A care for words and ill advisedly trying to save time falls into the greatest waste."

—Irasmus.

इरेसमस ने शिक्षा के तीन प्रमुख आधार माने हैं। वे इस प्रकार हैं :—

1. बालक या सीखने वाले की प्रकृति (Child or Nature of the Learner)
2. शिक्षक का प्रशिक्षण (Training of the Teacher)
3. अभ्यास (Drill)

उपर्युक्त आधारों को देखने से स्पष्ट है कि इरेसमस शैक्षिक प्रक्रिया में शिक्षक एवं बालक—दोनों को महत्ता प्रदान करता है। वह सर्वोत्तम को सीखने के लिए सर्वोत्तम अध्यापकों की आवश्यकता का अनुभव करता है। इसी कारण वह शिक्षकों के प्रशिक्षण पर बल देता है।

2. रैबले (1483-1583) : Rabelais

रैबले, फ्रांस का निवासी था। वह एक ओर तो प्राचीन सैद्धान्तिक एवं शाब्दिक शिक्षा का विरोधी था। दूसरी ओर वह वातावरण की वस्तुओं से बालकों को शिक्षा प्रदान करने के पक्ष में था। उसने इरेसमस की भाँति उदार शिक्षा का समर्थन किया। इसी कारण रैबले ने सामाजिक, नैतिक, धार्मिक एवं शारीरिक शिक्षा को महत्त्व दिया। इस प्रकार की शिक्षा का समर्थन करने में उनका अभिप्राय यह था कि शिक्षा सर्वाङ्गीण होनी चाहिए; अर्थात् शिक्षा ऐसी हो जो बालक के व्यक्तित्व के सभी पक्षों का समुचित विकास करे।

शिक्षा का उद्देश्य : Aim of Education—रैवले के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य—बालक का सर्वाङ्गीण विकास करना था।

शिक्षण-विधि : Methods of Teaching—रैवले वैज्ञानिक एवं मनोरंजक विधियों द्वारा शिक्षा प्रदान करने के पक्ष में था। उसने पुस्तकों के उपयोग का भी समर्थन किया है।

पाठ्यक्रम : Curriculum—रैवले ने मध्यकालीन 'सात उदार कलाओं' (Seven Liberal Arts) में से अपने पाठ्यक्रम में केवल अंकगणित, रेखागणित, खगोल विद्या तथा संगीत को स्थान दिया। उसने व्याकरण, तर्क तथा साहित्य को पाठ्यक्रम में कोई स्थान नहीं दिया; क्योंकि उसके अनुसार इनमें शब्द-जाल की प्रधानता रहती है। रैवले ने पाठ्यक्रम को विस्तृत बनाने के लिए इतिहास, ग्रीक, लैटिन, हीब्रू आदि को भी पाठ्यक्रम में स्थान दिया। शारीरिक शिक्षा के लिए उसने दौड़ना, कूदना, तैरना, शारीरिक व्यायाम आदि पर बल दिया।

3. जॉन मिल्टन (1604-1674) : John Milton

मिल्टन, इङ्गलैण्ड का निवासी था। उसकी ख्याति कवि, दार्शनिक, राजनीतिज्ञ एवं शिक्षा-शास्त्री के रूप में मानी जाती है। किन्तु वह सर्वप्रथम कवि था; बाद में दार्शनिक और राजनीतिज्ञ। मिल्टन के शैक्षिक विचार 'ट्रैक्टेट ऑन एजूकेशन' (Tractest on Education) नामक पुस्तक में मिलते हैं। उसने भाषात्मक शिक्षा का विरोध किया। मिल्टन ने अन्य यथार्थवादियों की भांति उदार शिक्षा का समर्थन किया। मिल्टन का कथन है :—"मैं उस शिक्षा को पूर्ण एवं उदार शिक्षा कहता हूँ जो एक व्यक्ति को न्यायोचित ढंग से, कुशलतापूर्वक तथा उदारता के साथ निजी एवं सार्वजनिक—दोनों प्रकार के सभी कार्यों को शान्ति तथा युद्ध के समय पूर्ण करने के योग्य बनाती है।"

शिक्षा का उद्देश्य—"शिक्षा का लक्ष्य हमारे प्रथम अभिभावकों द्वारा की गई क्षतियों को ईश्वर में विश्वास करते हुए पूरा करना है और उस ज्ञान के फलस्वरूप उससे प्रेम किया जाय, सम्बन्ध स्थापित किया जाय, उसी के समान बना जाय और अपनी आत्मा में उसके सद्‌गुणों को धारण किया जाय, जिसका सम्बन्ध दैवी सौन्दर्य के साथ है और जो उच्चतम पूर्णता को प्रदान करते हैं।"

"The end of learning is to repair the ruins of our first parents by beginning to know God aright and of that knowledge to love him, to intimate him, to be like him, as we may be the nearest by possessing our souls of virtue which being united to the heavenly grace of faith makes up the highest perfection."

—John Milton.

पाठ्यक्रम—मिल्टन प्रत्येक शहर में 120 बालकों के लिए एक 'संयुक्त स्कूल' खोलना चाहता था। उसने 12 से 21 वर्ष तक के बालकों के लिए अग्रलिखित प्रकार का कार्यक्रम तैयार किया—

प्रथम वर्ष के लिए—लैटिन, व्याकरण, गणित एवं ज्यामिति।

आगामी चार वर्षों के लिए—कृषि, भौतिकशास्त्र, शिल्पकला, भूगोल, अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र तथा खगोल विद्या।

शेष वर्षों के लिए—बाइबिल, हीब्रू, यूनानी, रोमन तथा सेक्सन संविधान; अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, इतिहास, तर्कशास्त्र तथा कविताएँ।

उपर्युक्त कार्यक्रम को देखने से स्पष्ट है कि उसने पाठ्यक्रम में बौद्धिक विषयों को भर दिया है। मिल्टन ने शारीरिक शिक्षा पर भी ध्यान दिया। इनके लिए वह व्यायाम एवं उचित भोजन को महत्त्वपूर्ण मानता है। इसके साथ ही वह शारीरिक शिक्षा के लिए संगीत को महत्त्वपूर्ण स्थान देता है।

शिक्षण-विधि—मिल्टन वास्तविक वस्तुओं का ज्ञान कराने का समर्थक था। इसी कारण उसने युवकों की शिक्षा में भ्रमण या सरस्वती-यात्राओं को विशेष महत्त्व दिया। उसका मत था कि इनके द्वारा दृष्टिकोण की संकीर्णता को दूर करके उसको विस्तृत बनाया जा सकता है।

2. सामाजिक यथार्थवाद
Social Realism

यथार्थवाद के इस रूप का विकास प्राचीन परम्परावादी पुस्तकीय ज्ञान तथा विद्वता के विरोधस्वरूप हुआ। समाजवादियों का कहना है कि शिक्षा, शब्दजाल मात्र नहीं है, वरन् वह जीवन को विकास के मार्ग पर ले चलने का साधन है। कुछ यथार्थवादियों ने शिक्षा में क्रियाशीलता को स्थान दिया। यथार्थवाद के इस रूप के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य जीवन को सभ्य, सुन्दर एवं उपयोगी बनाना है। यह विद्यालय को ऐसा स्थान मानता है—जहाँ कृत्रिम ज्ञान के बजाय व्यावहारिक, सफल एवं सुखी जीवन का निर्माण होता है। यह निरीक्षण, यात्रा, पारस्परिक मिलना-जुलना आदि को शिक्षा-प्राप्ति के मुख्य साधन मानता है। सामाजिक यथार्थवाद मौखिक रटाई का विरोध करता है और इसके स्थान पर वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति के साधनों पर बल देता है। रॉस ने सामाजिक यथार्थवाद का विवेचन करते हुए लिखा है :—"सामाजिक यथार्थवादी पुस्तकीय अध्ययन को व्यर्थ समझते हैं तथा मनुष्यों एवं वस्तुओं के प्रत्यक्ष अध्ययन पर बल देते हैं, यद्यपि वे अपने मस्तिष्क में उच्च वर्ग का ही ध्यान रखते हैं। इसी कारण वे लम्बी यात्रा करने के लिए कहते हैं, जिससे वास्तविक जीवन के विभिन्न पहलुओं का यथार्थ अनुभव हो जाय।"

सामाजिक यथार्थवाद के समर्थक
Supporters of Social Realism

1. माइकेल डी-मॉण्टेन (1533-1592) : Michael de-Montaigne

फ्रांस के प्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री लार्ड माइकेल डी-मॉण्टेन ने अपने शिक्षा सम्बन्धी विचार अधोलिखित पुस्तकों में व्यक्त किए हैं :—

(अ) ऐसे ऑन पीडेण्ट्री (Essay on Pedantry)

(ब) ऐसे ऑन दि अप-ब्रिंगिंग ऑफ चिल्ड्रेन (Essay on the Up-bringing of Child); तथा

(स) ऐसे ऑन दि अफेक्शन ऑफ फादर्स टू देयर चिल्ड्रेन (Essay on the Affection of Fathers to their Children)।

मॉण्टेन ने 'ज्ञान—ज्ञान के लिए' (Knowledge for the sake of Knowledge) के सिद्धान्त की कटु आलोचना की और शिक्षा को 'व्यावहारिक ज्ञान' के रूप में ग्रहण किया।

शिक्षा के उद्देश्य—'व्यक्ति को बुद्धिमान एवं विवेकशील बनाना'—जिससे व्यक्ति, जीवन को सफल एवं उपयोगी बना सके तथा समाज की उन्नति में सहयोग दे सके।

शिक्षण-विधि—उसने शिक्षा-विधि को मौखिक या शाब्दिक नहीं माना वरन् इसको क्रियात्मक माना है। इसी कारण वह भ्रमण, निरीक्षण एवं क्रिया को शिक्षा मे सम्मिलित करता है। यह अपनी शिक्षा-विधि में स्वतन्त्रता को स्थान देता है। उसका कथन है :—**"हिंसा तथा शक्ति से बच्चे नहीं सीखते हैं, वरन् प्रेम एवं सहानुभूति से सीखते हैं।"** इस कारण वह उनको स्वतन्त्रता देना चाहता है। क्योंकि उनमें स्वतन्त्र आत्मा का निवास होता है, अतः इस आत्मा के विकास के लिए उनको स्वतन्त्रता देना आवश्यक है।

पाठ्यक्रम—मॉन्टेन, पाठ्यक्रम में भाषा, प्राकृतिक अध्ययन, काव्यशास्त्र, तर्कशास्त्र, भौतिकशास्त्र, ज्यामिति, इतिहास आदि को स्थान प्रदान करता है।

2. जॉन लॉक (1632-1704) : John Locke

जॉन लॉक, इङ्गलैंड का एक महान् राजनीतिक विचारक था। इन्होंने अपने शिक्षा-सम्बन्धी विचारों को 'Some Thoughts Concerning Education' नामक लेख में प्रस्तुत किया है। उसके शैक्षिक विचार अग्रलिखित हैं :—

शिक्षा का उद्देश्य—लॉक के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य—बालक मे सद्गुण (Virtues), बुद्धिमत्ता (Wisdom), सदाचरण (Breeding) तथा सीखने की शक्ति का विकास करना है। इसके साथ ही उसका विचार था कि शिक्षा को शरीर एवं मन—दोनों को विकसित करना चाहिए। इस प्रकार उसने बालक के सर्वाङ्गीण विकास की ओर ध्यान दिया।

शिक्षक—लॉक शिक्षक को महत्त्वपूर्ण स्थान देता है। उसके अनुसार शिक्षक को विद्वान्, सद्गुणों से युक्त, सदाचरण वाला, कुशल, योग्य एवं उत्तरदायी नागरिक, सामान्य ज्ञान का रखने वाला आदि गुणों से युक्त होना चाहिए।

बालक—लॉक, बालक के मन को खाली स्लेट (Tabula Rasa) मानता था, जिस पर अनेक प्रभाव डाले जा सकते है। उसका विचार था कि बालक का निर्माण वंश-परम्परा के द्वारा न होकर, शिक्षा द्वारा होता है।

शिक्षा-विधि—लॉक अभ्यास, व्यावहारिकता, भ्रमण, क्रिया, स्थूल सामग्री के प्रयोग आदि को शिक्षा-विधि में विशेष महत्त्व देता है।

अनुशासन—लॉक मानसिक अनुशासन पर बल देता है। लॉक का कथन है—शरीर एवं मन—दोनों को शिक्षा द्वारा नियन्त्रित एवं अनुशासित किया जाना चाहिए। शिक्षा इन पर नियन्त्रण रखकर उन्हें अनुशासित कर सकती है। इनको अनुशासित करने से समुचित विकास होगा।

पाठ्यक्रम—लॉक ने पाठ्यक्रम को विस्तृत बनाने का प्रयास किया। उसने शिक्षा के कार्यक्रम को 6 भागों में विभक्त किया—

1. अंग्रेजी पढ़ना, ड्राइंग करना, लिखना;
2. फ्रेंच, एक-दो वर्ष बाद लैटिन (अंग्रेजी सदैव साथ-साथ रहेगी);
3 अंकगणित, ज्यॉमिति, रेखागणित, भूगोल, इतिहास (विशेषतः रोमन इतिहास);
4. बाइबिल, नीतिशास्त्र, सामान्य तथा अन्तर्राष्ट्रीय कानून;
5. अंग्रेजी बोलने और लिखने की कला, तथा
6. हस्तकार्य, व्यायाम, स्वास्थ्य-रक्षा, घुड़सवारी, हथियार चलाना, नृत्य आदि।

लॉक ने अपने पाठ्यक्रम में दर्शन, संगीत, चित्रकला, विज्ञान, ग्रीक भाषा आदि को स्थान नहीं दिया था। इस कारण कुछ आलोचक उसके शैक्षिक कार्यक्रम को संकुचित कहते हैं। फिर भी विभिन्न दृष्टिकोणों से उसका पाठ्यक्रम विस्तृत माना जाता है। वस्तुतः व्यक्तिवादी होने के नाते लॉक उच्चवर्गीय व्यक्तियों को शिक्षा देने का समर्थक था।

3. ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवाद
Sense Realism

शिक्षा के क्षेत्र में यथार्थवाद के इस रूप का विकास मानवतावादी तथा सामाजिक—दोनों प्रकार के यथार्थवाद के मिश्रण तथा विज्ञान के परिणामस्वरूप हुआ। शिक्षा के क्षेत्र में ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवाद का अन्य रूपों की अपेक्षा बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। इसके अनुसार, समस्त ज्ञान का आधार ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। मुनरो ने लिखा है :—**"ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवाद उस मौलिक विश्वास से विकसित हुआ है, जो यह मानता है कि ज्ञान प्राथमिक रूप से इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त होता है।"**

"The term (Sense Realism) itelf is derived from the fundamental belief that knowledge comes primarily through senses."

—**Paul Monroe.**

ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवादी शिक्षा की विशेषताएँ (Chief Characteristics of Sense Realistic Education)—ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवादी शिक्षा की प्रमुख विशेषताएँ अग्रलिखित हैं—

1. ज्ञानेन्द्रियाँ प्रत्यक्ष ज्ञान के आधार एवं द्वार हैं।
2. ज्ञान की प्राप्ति के लिए ज्ञानेन्द्रियों को प्रशिक्षित एवं अनुशासित किया जाय।
3. साहित्यिक एवं भाषा-सम्बन्धी विषयों की अपेक्षा प्राकृतिक विज्ञानों का वर्तमान जीवन की वास्तविक स्थितियों पर बल दिया जाना चाहिए।
4. शिक्षा का माध्यम—मातृभाषा होनी चाहिए।
5. शिक्षा का संगठन विश्वव्यापी आधार पर करना चाहिए और मानवीय सभ्यता एवं संस्कृति का ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए। इस प्रकार ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवाद जनसाधारण की शिक्षा पर बल देता है।
6. प्राकृतिक नियमों के अनुसार शिक्षा-विधि का निर्माण किया जाय। इसी कारण यथार्थवादी उन विधियों पर बल देते हैं, जिनमे वैज्ञानिकता होती है।
7. बालकों के स्वाभाविक एवं क्रमिक विकास पर बल दिया जाय।
8. शिक्षा एक स्वाभाविक प्रक्रिया है जिसके द्वारा ज्ञान एवं सत्यों की खोज की जाती है।

पॉल मुनरो ने लिखा है :—"ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवादी उन खोजों से प्रभावित हुए जो प्रकृति के सम्बन्ध में की गईं और नवीन आविष्कारों ने प्राकृतिक शक्तियों से लाभ उठाने की योजना बनाई। ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवादियों ने प्रकृति को ज्ञान तथा सत्य के स्रोत के रूप में माना और उसमें अपनी रुचि को प्रकट किया। इसी कारण उन्होंने शिक्षा को एक कृत्रिम प्रक्रिया मानने की अपेक्षा एक स्वाभाविक प्रक्रिया माना है।"

"The sense realists were influenced by the new discoveries then being made in nature's processes and the new inventions contrived to take advantage of her forces. They were imbued with an interest in and a respect for the phenomena of nature as a source of knowledge and truth, and held that education itself was a natural rather than an artificial process."—**Paul Monroe.**

ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवाद के समर्थक
Supporters of Sense Realism

1. रिचार्ड मूल कास्टर (1530-1611) : Richard Mul Caster

ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवादियों में रिचार्ड मूल कास्टर का नाम सर्वप्रथम आता है। उसके शैक्षिक विचार 'दी एलीमेन्टेयर (The Elementarie) तथा 'पोजीशन्स' (Positions) नामक रचनाओं मे प्राप्त होते हैं। संक्षेप में, उसके शैक्षिक विचार अग्रलिखित है—

शिक्षा के उद्देश्य—मूल कास्टर का कथन है :—"शिक्षा का उद्देश्य न तो

बालक के साथ शक्ति का प्रयोग करना है और न उसका दमन करना, वरन् शिक्षा एवं प्रशिक्षण का ध्येय—बालक की प्रकृति को पूर्णता की प्राप्ति के लिए सहायता देना है।"

"Education should not aim either to force or to repress the child. The end of education and training is to help nature to her perfection."—**Mul Caster.**

शिक्षा का माध्यम—कास्टर का विचार है कि शिक्षा का माध्यम सदैव मातृभाषा होनी चाहिए।

बालक—कास्टर का मत है कि बालक को शिक्षा का केन्द्र बनाया जाना चाहिए।

शिक्षण-विधि—कास्टर की मान्यता है कि शिक्षण-विधि पूर्णतया मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए।

पाठ्यक्रम—कास्टर का आग्रह है कि बालक को सर्वप्रथम मातृभाषा या बोलचाल की भाषा सिखायी जानी चाहिए। इसके पश्चात्, उसकी शिक्षा के कार्यक्रम में संगीत, खेलकूद, व्यायाम, ड्राइंग, चित्रकला आदि को स्थान दिया जाना चाहिए। ग्रीक, लैटिन आदि अन्य भाषाओं का उच्च कक्षाओं में अध्ययन कराया जाना चाहिए।

मूल कास्टर ने इस सम्बन्ध में कोई विचार प्रकट नही किया कि ज्ञानेन्द्रियों का शिक्षा मे किस प्रकार प्रयोग किया जाय।

2. फ्रांसिस बेकन (1561-1626) : Francis Bacon

बेकन ने अपने शैक्षिक विचारों को 'एडवान्समेंट ऑफ लर्निंग' (Advancement of Learning) तथा 'दी न्यू एटलान्टिस' (The New Atlantis) नामक ग्रन्थों मे व्यक्त किया है। उसके शैक्षिक विचार अधोलिखित हैं—

शिक्षा का उद्देश्य—बेकन, मानव-ज्ञान के समस्त क्षेत्रों का पुनर्संङ्गठन करना चाहता था जिससे मानवीय हित की उन्नति हो सके। इस पुनर्संङ्गठन में उसने प्राचीन साहित्यिक ज्ञान के स्थान पर नवीन वैज्ञानिक ज्ञान को रखा। इस प्रकार, उसने विद्यालय का महत्त्वपूर्ण कार्य—इस नवीन ज्ञान को प्रदान करना बतलाया। बेकन का कथन है :—**"समस्त ज्ञान का उद्देश्य—व्यक्ति को प्रकृति पर आधिपत्य स्थापित करने के लिए शक्ति प्रदान करना है।"**

"The object of all knowledge is to give man power over nature."—**Bacon.**

पाठ्यक्रम—बेकन ने पाठ्यक्रम में भौतिक एवं प्राकृतिक विज्ञानों को सर्वोच्च स्थान दिया। बेकन ने भाषा एवं साहित्य को इन विज्ञानों के बाद मे स्थान दिया और दर्शन को सापेक्षिक महत्त्व की दृष्टि से पाठ्यक्रम में निम्न स्थान प्रदान किया।

शिक्षा-विधि—मुनरो ने लिखा है :—बेकन ने एक नवीन विधि का निर्माण किया जो 'नोवम ऑर्गनम' (Novum Organum) अर्थात् 'आगमन' (Induction) विधि के नाम से पुकारी जाती है। उसके अनुसार यही सच्ची विधि थी, क्योंकि इसके द्वारा सत्य की खोज की जा सकती है। उसने अरस्तू की 'आर्गनन' (Organon) अर्थात् 'निगमन' (Deduction) विधि की आलोचना की, क्योंकि इसके द्वारा बुद्धिवादिता को बल मिलता है। आगमन विधि के द्वारा व्यावहारिक समस्याओं को हल किया जा सकता है। इस प्रकार उसने शिक्षा एवं विधि—दोनों क्षेत्रों में व्यावहारिकता पर बल दिया है।

3. वूल्फगेंग रटके (1571-1635) : Wolfgang Ratke

रटके का जन्म जर्मनी में विल्सटर (Wilster) नामक स्थान पर हुआ। उसने सर्वप्रथम रॉसटॉक के विश्वविद्यालय (University of Rostock) में शिक्षा प्राप्त की और बाद में वह अध्ययन करने के लिए इंगलैण्ड गया। उस पर फ्रान्सिस बेकन की कृतियों का बहुत प्रभाव पड़ा। उसके शैक्षिक विचार 'मैथड्स नोवा' (Methods Nova) नामक पुस्तक में मिलते हैं। संक्षेप में, उसके शैक्षिक विचार अधोलिखित हैं :—

शिक्षा का उद्देश्य—रटके ने शिक्षा को एक विकास-प्रक्रिया माना है और शिक्षा का उद्देश्य—बालक की प्रकृति एवं शक्ति के अनुसार विकास करना माना है।

शिक्षा-विधि—रटके ने शिक्षा-विधि के क्षेत्र में अपना 'मैथड्स नोवा' (नवीन सिद्धान्त या विधि) दिया, जिसके अधोलिखित सूत्र हैं—

1. एक समय में केवल एक वस्तु का ज्ञान दो (One thing at a time);
2. प्रत्येक वस्तु को प्रायः दोहराना चाहिए (Each thing should be repeated);
3. सभी वस्तुओं मे पारस्परिक अनुरूपता स्थापित की जाय (Mutual conformity in all things);
4. प्रत्येक वस्तु मातृभाषा के माध्यम से दी जाय (Everything through the mother-tongue);
5. प्रकृति के क्रम का अनुसरण करो (Follow the order of Nature);
6. कोई भी वस्तु बाध्य करके न दी जाय (Everything without Compulsion);
7. कोई भी ज्ञान रटकर न सीखा जाय (Nothing should be learned by rote);
8. सभी वस्तुएँ अनुभव तथा प्रयोग द्वारा सीखी जानी चाहिए (All things through experience and investigation or experiment); तथा

9. पहले स्वयं वस्तु का ज्ञान तथा बाद में उसकी शाब्दिक व्याख्या (First the thing itself and afterwards the explanation of the thing)।

4. जॉन एमोस कॉमेनियस (1592-1670) : John Amos Comenius

ज्ञानेन्द्रिय यथार्थवादियों में कॉमेनियस का स्थान सबसे महत्त्वपूर्ण है। इसके शैक्षिक विचारों का विस्तृत विवेचन आगे एक पृथक् अध्याय में किया जायगा। यहाँ हम उसके शैक्षिक विचारो को संक्षेप मे प्रस्तुत कर रहे हैं :—

शिक्षा का उद्देश्य—कॉमेनियस का कथन है :—**"मनुष्य का अन्तिम लक्ष्य ईश्वर के साथ शाश्वत प्रसन्नता को पाना है।"**

"The ultimate end of man is eternal happiness with God."

—**Comenius.**

पॉल मुनरो ने लिखा है कि कॉमेनियस के अनुसार :—"शिक्षा का उद्देश्य इस महान् साध्य की प्राप्ति में सहायता करना था।"

"The purpose of education was to assist in attaining this great end."—**Paul Monroe.**

शिक्षा-काल—कॉमेनियस ने शिक्षा-काल को चार भागों में बाँटा है—(1) मदर स्कूल, (2) वर्नाक्यूलर स्कूल, (3) लैटिन स्कूल, तथा (4) विश्वविद्यालय।

पाठ्यक्रम—कॉमेनियस ने पाठ्यक्रम में 17वीं शताब्दी के विश्वकोशों (Encyclopaedias) को रखा; उदाहरणार्थ—हेनरी एलसटिड (Henry Alsted) का विश्वकोश केम्पनला (Campanella) का विश्वकोश आदि। इसके अतिरिक्त उसने प्राकृतिक घटनाओं के ज्ञान पर भी बल दिया।

शिक्षा-विधि—कॉमेनियस का कथन है :—**"हम ज्ञानेन्द्रियों, बुद्धि तथा दैवी प्रकाशन के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करते हैं।"**

"The three channels through which knowledge comes to us are the senses; the intellect and divine revelations."—**Comenius.**

कॉमेनियस की शिक्षा-विधि का सामान्य विचार 'प्रकृति के अनुसार' है। कॉमेनियस ने अपनी शिक्षा-विधि के अधोलिखित सिद्धान्त प्रतिपादित किए है—

(1) जो कुछ ज्ञात है, उसे पढ़ाया जाना चाहिए (Whatever is to be known must be taught);

(2) वस्तु या विचार को प्रत्यक्ष रूप से बालक को प्रदान किया जाना चाहिए (*Present the object or the idea directly to the child*);

(3) जो कुछ पढ़ाया जाय, वह प्रतिदिन के जीवन में व्यावहारिक एवं निश्चित महत्त्व रखता हो (What is taught should be taught as being of practical application in everyday life and of some definite use);

(4) जो कुछ भी पढ़ाया जाय, वह सीधे एवं सरल ढंग से पढ़ाया जाना

चाहिए (Whatever is taught should be taught straight-forwardly and not in a complicated manner);

(5) जो कुछ भी पढ़ाया जाय, वह उसकी सच्ची प्रकृति एवं उद्गम के संदर्भ में पढ़ाया जाय; अर्थात् वह उसके कारणों सहित पढ़ाया जाना चाहिए (Whatever is taught must be taught with reference to its true nature and its origin; that is to say, through its causes);

(6) यदि कोई वस्तु सीखनी है तो सर्वप्रथम सामान्य सिद्धान्तों की व्याख्या की जाय (If anything is to be learned, its general principles must first be explained);

(7) किसी वस्तु या विषय के समस्त अङ्गों को उनकी व्यवस्था, स्थिति तथा एक-दूसरे से उनके सम्बन्ध के सन्दर्भ में सीखा जाना चाहिए। (All parts of an object (or subject) must be learned with reference to their order, their position and their connection with one another);

(8) समस्त वस्तुओं को क्रमवद्ध रूप से पढ़ाना चाहिए और एक समय पर एक वस्तु से अधिक नहीं पढ़ायी जानी चाहिए (*All things must be taught in* due succession, and not more than *one* thing should be taught at one time).

(9) हमको किसी विषय को तब तक नहीं छोड़ना चाहिए, जब तक वह पूर्णतया न समझ लिया जाय (We should not leave any subject until it is thoroughly understood);

(10) वस्तुओं के बीच जो अन्तर निहित हैं, उन पर विशेष बल दिया जाना चाहिए जिससे उनके विषय में स्पष्ट एवं पृथक् ज्ञान प्राप्त हो सके (Stress should be laid on the differences which exist between things, in order that what knowledge of them is acquired may be clear and distinct.)

4. वैज्ञानिक यथार्थवाद
Scientific Realism

17वीं शताब्दी में तथा उसके बाद विज्ञान की बहुत उन्नति हुई, जिसके परिणामस्वरूप विचारों में परिवर्तन हुआ। वैज्ञानिक यथार्थवाद इसी विचार परिवर्तन का परिणाम है। यथार्थवाद की इस शाखा ने इस बात पर बल दिया कि जो कुछ भी वस्तु-रूप में सत्य है, वह तभी सत्य हो सकता है जब वह विज्ञान के सिद्धान्त पर सत्य सिद्ध हो जाय। इसके प्रभाव के परिणामस्वरूप प्रयोग, आगमन एवं निगमन आदि पद्धतियों के द्वारा सत्यों का निर्माण किया जाने लगा। शिक्षा के क्षेत्र में वैज्ञानिक यथार्थवाद के परिणामस्वरूप वैज्ञानिक विषयों को सबसे अधिक

मान्यता प्रदान की गई। इसके अतिरिक्त शिक्षा का ध्येय—जीवन को पूर्णता प्रदान करना माना गया।

वैज्ञानिक यथार्थवादी शिक्षा की विशेषताएँ
Chief Characteristics of Scientific Realistic Education

(1) वैज्ञानिक यथार्थवाद उन्ही वस्तुओं को सत्य स्वीकार करता है जिनको ज्ञानेन्द्रियों वैज्ञानिक परीक्षण, निरीक्षण एवं प्रयोग आदि के द्वारा सत्य प्रमाणित किया जा सके।

(2) यह शिक्षा को एक वैज्ञानिक क्रम मानता है।

(3) वैज्ञानिक यथार्थवादी शिक्षा का लक्ष्य—जीवन में पूर्णता एव वैज्ञानिकता लाना है।

(4) पाठ्यक्रम में विज्ञान को केन्द्र बनाया जाय। सम्भवत: वैज्ञानिक यथार्थवादी विज्ञान के माध्यम से अन्य विषयों की शिक्षा देना चाहते थे। जिस प्रकार जिलर (Ziller) ने इतिहास को केन्द्रीय विषय बनाया और उसके माध्यम से अन्य विषयों की शिक्षा प्रदान की। उसी प्रकार वैज्ञानिक यथार्थवादी हरबर्ट स्पेन्सर विज्ञान को केन्द्रीय विषय बनाना चाहता था। इसी कारण उसने पाठ्यक्रम मे विज्ञानों को सबसे अधिक महत्त्व दिया।

(5) वैज्ञानिक यथार्थवादी, बालक को जीव-विज्ञान के सिद्धान्तों से मापने का प्रयत्न करते है। इसी कारण उन्होंने इस बात पर बल दिया है कि बालक की शिक्षा जैविक नियमों के अनुसार होनी चाहिए।

(6) वैज्ञानिक यथार्थवादी शिक्षा-विधि के क्षेत्र में निरीक्षण, प्रयोग, परीक्षण, आगमन-निगमन आदि पर बल देते है।

वैज्ञानिक यथार्थवाद के समर्थक
Supporters of Scientific Realism

1. हरबर्ट स्पेन्सर (1820-1903) : Herbert Spencer

स्पेन्सर का जन्म 27 अप्रैल, 1820 ई० को इंगलैंड के डर्बी (Derby) नगर मे हुआ। वैज्ञानिक यथार्थवादी विचारधारा को विकसित एव उन्नत बनाने का श्रेय हरबर्ट स्पेन्सर को है। उसके शैक्षिक विचार 'एजूकेशन (Education), 'प्रिंसीपिल्स ऑफ बॉयलॉजी' (Principles of Biology), 'प्रिंसीपिल्स ऑफ साइकॉलॉजी' (Principles of Psychology) आदि पुस्तकों में प्राप्त होते हैं। संक्षेप में, उसके शैक्षिक विचार अधोलिखित हैं—

शिक्षा की परिभाषा—स्पेन्सर ने शिक्षा की परिभाषा इस प्रकार दी है :—
"शिक्षा—जीवन के लिए तैयारी है।"

"Education is the preparation for life."—*Spencer.*

शिक्षा का उद्देश्य—शिक्षा का उद्देश्य बताते हुए स्पेन्सर ने लिखा है :—
"शिक्षा को हमें पूर्ण जीवन के नियमों तथा ढंगों से परिचित कराना चाहिए। शिक्षा

का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य—हमें जीवन के लिए इस प्रकार तैयार करना है कि हम उचित प्रकार का व्यवहार कर सकें और शरीर, मस्तिष्क तथा आत्मा का सदुपयोग कर सकें।"

इस प्रकार स्पेन्सर "पूर्ण जीवन के उद्देश्य" (Complete Living Aim) का प्रतिपादन करता है।

पाठ्यक्रम—स्पेन्सर ने पूर्ण जीवन के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए पाठ्यक्रम का सहारा लिया। उसने पूर्ण जीवन की समस्त क्रियाओं को पाँच भागों में विभक्त किया और उनसे सम्बन्धित पाठ्य-विषय बताए। उसने इन क्रियाओं को उनके सापेक्षिक महत्त्व के अनुसार अधोलिखित क्रम में रखा—

क्रियाएँ (Activities)	पाठ्य-विषय (Subjects of Study)
1. आत्म-रक्षा की क्रिया।	1. शारीरिक विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, पदार्थ विज्ञान।
2. जीवन को परोक्ष रूप में सुरक्षित रखने से सम्बन्धित क्रियाएँ।	2. भूगोल, भाषा, गणित।
3. सन्तान-रक्षा सम्बन्धी क्रियाएँ।	3. गृह-विज्ञान, जीव-विज्ञान एवं बाल-मनोविज्ञान।
4. समाज-रक्षा सम्बन्धी क्रियाएँ।	4. इतिहास, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र।
5. अवकाश सम्बन्धी क्रियाएँ।	5. कला, संगीत और साहित्य।

शिक्षा-विधि—स्पेन्सर ने इन्द्रियों द्वारा शिक्षा प्रदान करने के लिए कहा है। उसका मत है कि शिक्षा-विधि को रोचक, लाभप्रद एवं मानसिक विकास की स्वाभाविक प्रक्रिया के अनुकूल होना चाहिए। इस ध्येय की पूर्ति के हेतु उसने 'शिक्षण के सूत्र' (Maxims of Teaching) निकाले। इस सम्बन्ध में पॉल मुनरो ने लिखा है :—"स्पेन्सर के ये सिद्धान्त पेस्टालॉजी के सिद्धान्तों का केवल विस्तरण ही है।"

स्पेन्सर द्वारा प्रतिपादित शिक्षण-सूत्र निम्नलिखित हैं—

1. सरल से जटिल की ओर बढ़ो (Proceed from Simple to Complex)
2. ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ो (Proceed from Known to Unknown)
3. स्थूल से सूक्ष्म की ओर बढ़ो (Proceed from Concrete to Abstract)
4. अनिश्चित से निश्चित की ओर बढ़ो (Proceed from Indefinite to Definite)
5. अनुभवजन्य ज्ञान से तर्कपूर्ण ज्ञान की ओर बढ़ो (Proceed from Empirical to Rational)

6. सांस्कृतिक युग-सिद्धान्त का अनुसरण करो (Follow Culture-Epoch Theory)
7. प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर बढ़ो (Proceed from Direct to Indirect)
8. स्वशिक्षा एवं आत्मविश्वास पर बल दो (Emphasize Self-learning and Self-development)

अनुशासन—स्पेन्सर ने अपने 'नैतिक शिक्षा' (Moral Education) नामक लेख में प्रकृतिवादी रूसो के समान अनुशासन सम्बन्धी धारणा प्रकट की है। उसका कथन है—"नैतिक अनुशासन के सच्चे सिद्धान्तों एवं प्रयोगों को प्रकृति सरल ढंग से प्रकट करती है।" उसने प्राकृतिक परिणामों के द्वारा अनुशासन' (Discipline by Natural Consequences) के सिद्धान्त का समर्थन किया है।

शिक्षा में यथार्थवाद के चारों रूपों को देखने के पश्चात् सामान्य रूप से यथार्थवादी शिक्षा के लक्षणों को जानना आवश्यक है। इसके लक्षणों एवं सिद्धान्तों को संक्षेप में अग्रलिखित ढंग से प्रस्तुत किया जा रहा है—

यथार्थवाद व शिक्षा
Realism & Education

क्रम-संख्या विवरण (Item)	यथार्थवादी विवेचना
1. दार्शनिक आधार (Philosophical Basis)	(i) दृश्य-जगत ही सत्य है। (ii) पारलौकिकता को अस्वीकार करता है। (iii) वस्तु-जगत् में एक नियमितता होती है। (iv) व्यावहारिकता पर बल। (v) भौतिकवादी दृष्टिकोण का समर्थन।
2. शैक्षिक सिद्धान्त (Educational Principles)	(i) इन्द्रियाँ—ज्ञान के द्वार हैं। (ii) मानव के वर्तमान एवं व्यावहारिक जीवन की महत्ता। (iii) शिक्षा—विकास की प्रक्रिया है। (iv) शिक्षा—स्वयं विकास है। (v) शिक्षा को एक ऐसी सामाजिक संस्था के रूप में स्वीकार किया है, जिसके द्वारा व्यक्ति का निर्माण होता है।
3. शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Education)	(i) वास्तविक जीवन की तैयारी। (ii) बालक की प्राकृतिक प्रवृत्तियों एवं

	क्रियाओं को स्वतन्त्र रूप से विकसित करना । (iii) जीवन को सुखी एवं सफल बनाना ।
4. पाठ्यक्रम (Curriculum)	(i) पाठ्यक्रम जीवन के समान विस्तृत होना चाहिए । (ii) उपयोगिता पर आधारित करके वैज्ञानिक विषयों को प्रमुखता प्रदान करना । (iii) पाठ्यक्रम में प्राकृतिक घटनाओं को प्रधानता । (iv) मातृभाषा को महत्त्व प्रदान करना । (v) दैनिक जीवन में काम आने वाली बातों का ज्ञान । (vi) व्यावहारिकता पर बल ।
5. शिक्षा-विधि (Method of Education)	(i) शाब्दिकता तथा आत्मगत भावना (Varbalism & Subjectivism) का विरोध । (ii) वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक विधि के प्रयोग पर बल । (iii) आगमन एवं निगमन विधियों पर बल । (iv) यात्रा, वस्तुओ, दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग । (v) स्वानुभव पर बल । (vi) निरीक्षण, परीक्षण, प्रयोग आदि पर बल ।
6. अनुशासन (Discipline)	(i) प्रेम, सहानुभूति आदि पर आधारित अनुशासन का समर्थन । (ii) सामाजिक नियमों के अनुसार अनुशासन । (iii) प्राकृतिक परिणामो के द्वारा अनुशासन ।
7. शिक्षक (Teacher)	(i) शिक्षक का महत्त्वपूर्ण स्थान । (ii) शिक्षक को यह जानना आवश्यक है कि 'किसको', 'किस समय' तथा 'कितना' पढ़ाना है । (iii) शिक्षक के प्रशिक्षण पर बल ।

8. शिक्षा के साधन (Agencies of Education)	औपचारिक साधनों—विद्यालय के साथ-साथ अनौपचारिक साधनों को भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है।
9. विद्यालय (School)	विद्यालय—मनुष्यों के वास्तविक निर्माण के स्थान हैं।
10. शैक्षिक संगठन (Educational Organization)	शिक्षा के एक विश्वव्यापी संगठन का समर्थन।
11. शिक्षा का केन्द्र-बिन्दु (Central Point of Education)	बालक का वर्तमान जीवन।
12. शिक्षा का आधार (Basis of Education)	विज्ञान।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the main features of Realism in education and give briefly the different types of Realism.

शिक्षा में यथार्थवाद की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए और संक्षेप में यथार्थवाद के रूपों को बताइए।

2. "Realism tends to appear as a reaction against curricula, consisting of studies that have become bookish, sophisticated and abstruse."—(Ross). Discuss.

"यथार्थवाद अव्यावहारिक, कृत्रिम तथा पुस्तकीय पाठ्यक्रम के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में आया हुआ प्रतीत होता है।"—(रॉस) *विवेचना कीजिए।*

3. What do you understand by Realism in education. Discuss the aims, method of education and curriculum advocated by this school.

शिक्षा में यथार्थवाद से क्या तात्पर्य है ? इसके द्वारा प्रतिपादित शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षण-विधि तथा पाठ्यक्रम की विवेचना कीजिए।

4. What are the various types of Realism in education ? Discuss their points of view with regard to the problem of methods and curriculum.

शिक्षा में यथार्थवाद के क्या-क्या विभिन्न प्रकार हैं ? शिक्षण-विधियों तथा पाठ्यक्रम की समस्या पर उनके दृष्टिकोण की व्याख्या कीजिए।

5. What is the philosophy of Realism ? How would a Realist like our educational methods and curriculum to be framed ?

यथार्थवादी दर्शन क्या है ? एक यथार्थवादी शिक्षण-विधियों तथा पाठ्यक्रम का किस प्रकार निर्माण करना चाहेगा ?

6. Describe in brief the aim and methods of education propounded by 'Realism in Education.'

यथार्थवादी शैक्षिक विचारधारा के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों तथा शिक्षण-विधियों का वर्णन कीजिए।

खण्ड पाँच

भारतीय शिक्षाशास्त्री

INDIAN EDUCATORS

"सारी शिक्षा और समस्त प्रशिक्षण का एकमेव ध्येय है—मनुष्य का विकास। वह मनुष्य, जो अपना प्रभाव सब पर डालता है, जो अपने साथियों पर जादू-सा कर देता है, शक्ति का एक महान् केन्द्र है, और जब वह मनुष्य तैयार हो जाता है, तब वह जो चाहे कर सकता है। यह व्यक्तित्व जिस वस्तु पर अपना प्रभाव डालता है, उसी वस्तु को कार्यशील बना देता है।"
—Swami Vivekananda.

- स्वामी विवेकानन्द की शैक्षिक विचारधारा
  Educational Philosophy of Swami Vivekananda
- महात्मा गांधी की शैक्षिक विचारधारा
  Educational Philosophy of Mahatma Gandhi
- रवीन्द्रनाथ टैगोर की शैक्षिक विचारधारा
  Educational Philosophy of Rabindranath Tagore
- श्री अरविन्द घोष की शैक्षिक विचारधारा
  Educational Philosophy of Shri Aurobindo Ghosh
- शंकराचार्य का वेदान्त-दर्शन व शिक्षा
  Shankaracharya's Vedanta Philosophy & Education

26

स्वामी विवेकानन्द की शैक्षिक विचारधारा
EDUCATIONAL PHILOSOPHY OF SWAMI VIVEKANANDA

"स्वामी विवेकानन्द के जीवन का लक्ष्य—समाज-सेवा, जन-शिक्षा, धार्मिक पुनरुत्थान और शिक्षा द्वारा जागृति करके मानव-जाति की सेवा करना था।"

"Vivekananda's life-mission was the service of mankind through social service, mass education, religious revival and social awakening through education."—**Jawaharlal Nehru.**

जीवन-परिचय : Swami Vivekananda's Life (1863-1902)

स्वामीजी का जन्म सन् 1863 ई० में कलकत्ता नगर में हुआ था। उनका प्रारम्भिक नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। स्वामी जी जाति के बंगाली क्षत्रिय थे। उन्होंने कॉलेज स्तर तक शिक्षा प्राप्त की थी। वे प्रारम्भ से ही प्रतिभाशाली छात्र थे। उनके विषय में उनके प्रधानाचार्य मिस्टर हेस्टी ने कहा था :—"नरेन्द्रनाथ दत्त वस्तुतः प्रतिभाशाली है। मैंने विश्व के विभिन्न देशों की यात्राएँ की है; परन्तु किशोरावस्था में ही, इसके समान योग्य एवं महान् क्षमताओं वाला युवक मुझे जर्मन विश्वविद्यालयों में भी नहीं मिला।"

इस महान् प्रतिभाशाली युवक ने अपने प्रधानाचार्य मिस्टर हेस्टी द्वारा दी गई प्रेरणा पर दक्षिणेश्वर की यात्रा की। इस मन्दिर में श्री रामकृष्ण परमहंस थे। स्वामीजी ने उनसे साक्षात्कार किया। यह साक्षात्कार उनके जीवन की अपूर्व घटना थी। स्वामीजी को श्री रामकृष्ण परमहंस के उत्तरों से सन्तोष मिला। नरेन्द्रनाथ जब दूसरी बार अपने गुरु के दर्शन करने के लिए गए, तो उन्हें दिव्य-शक्ति का अनुभव हुआ। अपने गुरु की मृत्यु के उपरान्त उन्होंने उनकी शिक्षाओं का प्रसार किया। इसके लिए वे विभिन्न स्थानों पर गए।

31 मई 1893 ई० को स्वामीजी ने अमरीका के लिए प्रस्थान किया। वहाँ जाने से पूर्व उन्होंने अपना नाम विवेकानन्द रखा। विश्वधर्म सम्मेलन में भाग लेने के लिए स्वामीजी अमरीका गए थे। वहाँ उन्होंने अपने भाषण से विश्व की जनता को प्रभावित किया। वहाँ से लौटने पर वे इङ्गलैण्ड गए। इङ्गलैण्ड के भ्रमण के बाद वे भारत आए और अपने जीवन के अन्त तक संगठन एवं प्रचार कार्य में लगे रहे। परन्तु बीच में कुछ समय के लिए उन्हें पुनः अमरीका जाना पड़ा। वहाँ से वे दिसम्बर 1900 ई० में वापस आये। इन महान् संन्यासी, शिक्षा-शास्त्री, देश-भक्त तथा समाज-सुधारक ने अल्पायु में ही निर्वाण प्राप्त किया।

जीवन-दर्शन : Philosophy of Life

महान् भारतीय सन्त और चिन्तक स्वामी विवेकानन्द का जीवन-दर्शन निश्चय ही अत्यन्त गौरवपूर्ण और प्रेरणादायक है। उनकी इस बात में अडिग आस्था थी कि भीरु, म्लान और उदासीन व्यक्ति जीवन में कोई कार्य नहीं कर सकते हैं। कार्य वही व्यक्ति कर सकते हैं—जो वीर, निर्भय और कर्मठ है। अतः प्रत्येक नर-नारी के लिए स्वामीजी का सन्देश था :—"जीवन-संग्राम में वीर बनो। कहो, सबसे कहो, कि तुम निर्भय हो। भय का त्याग करो, क्योंकि भय मृत्यु है, भय पाप है, भय अधोलोक है, भय अधार्मिकता है, भय का जीवन में कोई स्थान नहीं है।"

स्वामीजी का कहना था कि—मनुष्य के जीवन में संघर्ष की प्रधानता होनी चाहिए। जो कोई प्रकृति के विरुद्ध लड़ता है, उसमें ही चैतन्य का विकास होता है। जहाँ चेष्टा या पुरुषार्थ है, वहीं जीवन का चिह्न और चेतना का प्रकाश है। स्वामी जी ने स्वयं अतीत और वर्तमान, पूर्व और पश्चिम, स्वप्न और यथार्थ की विरोधी महाशक्तियों में समन्वय स्थापित करने के लिए आजीवन अविराम संघर्ष किया और अन्त में इसी संघर्ष में अपने जीवन की आहुति दे दी।

शिक्षा-दर्शन : Educational Philosophy

जिस प्रकार स्वामीजी का जीवन-दर्शन विस्तृत और समन्वयवादी है, उसी प्रकार उनका शिक्षा-दर्शन भी है। वे वर्तमान शिक्षा-प्रणाली के कटुतम आलोचक और व्यावहारिक शिक्षा के प्रबल समर्थक हैं। उनका कहना है कि वर्तमान शिक्षा, मनुष्य को जीवन-संग्राम के लिए कटिबद्ध नहीं करती है, वरन् उसे शक्तिहीन बनाती है। वर्तमान शिक्षा के प्रभाव से हम ऊँची जाति कहलाने वाले नीची जाति के व्यक्तियों को, उनके कार्यों को हेय दृष्टि से देखते हैं। एक अन्य स्थान पर वर्तमान शिक्षा का कलुषित चित्र प्रस्तुत करते हुए स्वामीजी ने कहा है :—"यह बाबुओं का उत्पादन करने में सक्षम एक कुशल यन्त्र के अतिरिक्त और क्या है? यदि इतना ही होता, तो भी मैं प्रभु को धन्यवाद देता। पर कहाँ? देखो न, लोग किस प्रकार श्रद्धा व विश्वास से हीन होते जा रहे हैं। वे घोषणा करते हैं कि गीता भ्रमात्मक है—एक क्षेपक मात्र है और वेद, ग्राम्य लोकगीतों से अधिक महत्त्व नहीं रखते हैं।"

प्रचलित शिक्षा के स्थान पर स्वामीजी भारत के लिए किस प्रकार की शिक्षा चाहते हैं, इस सम्बन्ध में उनके अप्रतिलिखित शब्द उल्लेखनीय है :—"हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है, जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है।" स्वामी जी सैद्धान्तिक शिक्षा की तुलना में व्यावहारिक शिक्षा पर अधिक बल देते हैं। स्वामी जी का परामर्श है :—"तुमको कार्य के सब क्षेत्रों में व्यावहारिक बनना पड़ेगा। सिद्धान्तों के ढेरों ने सम्पूर्ण देश का विनाश कर दिया है।"

शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व
Basic Principles of Essential Features of Educational Philosophy

1. शिक्षा के क्षेत्र में बालिकाओं को बालकों के समान शिक्षा दी जानी चाहिए।
2. शिक्षा को व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास में योग देना चाहिए।
3. धार्मिक शिक्षा, पुस्तकों में नहीं, वरन् व्यवहार, आचरण और संस्कारों द्वारा दी जानी चाहिए।
4. पाठ्यक्रम में लौकिक और आध्यात्मिक—दोनों प्रकार के विषयों को स्थान दिया जाना चाहिए।
5. स्त्री-शिक्षा का केन्द्र—धर्म होना चाहिए, क्योंकि स्त्रियाँ ही धर्मधारिणी और धर्मपालिका होती हैं।
6. हमें प्राविधिक शिक्षा और अन्य सब विषयों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए; जिससे हमारे देश के उद्योगों की उन्नति हो।
7. शिक्षा, गुरु के गृह में रहकर प्राप्त करनी चाहिए और शिक्षक तथा छात्र में महिमा, गरिमा और मधुरिमा का सम्बन्ध होना चाहिए।
8. जनसाधारण में शिक्षा का प्रचार करना चाहिए, क्योंकि राष्ट्र की प्रगति उसी अनुपात में होती है, जिसमें जनसाधारण को शिक्षा मिलती है।
9. उसी शिक्षा को सच्ची शिक्षा कहा जाना चाहिए, जिससे चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े, बुद्धि का विकास हो और मनुष्य स्वावलम्बी बने।
10. राष्ट्रीय और मानवीय शिक्षा, घर से प्रारम्भ होनी चाहिए, जहाँ बच्चे अपने सम्बन्धियों से प्रेम करना सीखें और बाद में समाज के सदस्य बनकर अपने छोटे से प्रेम को विश्व-प्रेम में बदल दें।

शिक्षा का अर्थ : Meaning of Education

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार :—"शिक्षा की व्याख्या, शक्ति के विकास के रूप में की जा सकती है। शिक्षा—मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।"

"Education may be described as a development of faculty-Education is the manifestation of the perfection already present in man."—Swami Vivekananda.

स्वामीजी के अनुसार :—मानव में कुछ शक्तियाँ विद्यमान रहती हैं। शिक्षा—उसकी इन्हीं शक्तियों का, उसमें उपस्थित गुणों का विकास करती है। पूर्णता बाहर से नहीं आती है, वरन् मनुष्य के भीतर छिपी रहती है। सब प्रकार का ज्ञान, मनुष्य की आत्मा में निहित रहता है। गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त अपने प्रतिपादन के लिए न्यूटन (Newton) की खोज की प्रतीक्षा नहीं कर रहा था। वह न्यूटन के मस्तिष्क में पहले से ही विद्यमान था। जब समय आया, तब न्यूटन ने केवल उसकी खोज की। अतः हम मनोवैज्ञानिक शब्दावली में कह सकते हैं—"सीखना, वास्तव में खोज करना है।" ("Learning is really discovering.")

शिक्षा के उद्देश्य : Aims of Education

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—छात्रों में देश-प्रेम की भावना का समावेश करना बताया है। स्वामीजी का कहना है :—"यदि शिक्षा—देश-प्रेम की प्रेरणा नहीं देती है, तो उसको राष्ट्रीय शिक्षा नहीं कहा जा सकता है।"

"No education can be called national unless it inspires love for the country."—Swami Vivekananda : *Education*, p. 64.

स्वामीजी के अनुसार :—शिक्षा के अन्य मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं :—

1. मनुष्य में मानव-प्रेम, समाज-सेवा, विश्व-चेतना और विश्व-बन्धुत्व के गुणों का विकास करना।
2. मनुष्य की आन्तरिक एकता को बाह्य जगत् में प्रकट करना, ताकि वह अपने-आप को भली-भाँति समझ सके।
3. मनुष्य का शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, धार्मिक, नैतिक, चारित्रिक, सामाजिक और व्यावसायिक विकास करना।
4. मनुष्य को मुक्ति के सम्बन्ध में सचेत करना और यह बताना कि उसे अपनी शक्तियों का उपयोग मुक्ति पाने के लिए करना चाहिए।
5. मनुष्य में आत्म-विश्वास, आत्म-श्रद्धा, आत्म-त्याग, आत्म-नियन्त्रण, आत्म-निर्भरता, आत्म-ज्ञान आदि अलौकिक सद्गुणों का विकास करना।

पाठ्यक्रम : Curriculum

स्वामीजी का कहना है कि दार्शनिक होने का अर्थ यह नहीं है कि जीवन के

चरम लक्ष्य के अतिरिक्त अन्य विषयो के प्रति ध्यान न दिया जाय। जीवन के चरम लक्ष्य को इसी संसार में निवास करके और इसी शरीर के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। अतः स्वामीजी ने पाठ्यक्रम के अन्तर्गत उन सब विषयों को स्थान दिया है, जिनका सम्बन्ध इस संसार से है। इस दृष्टिकोण से अपने देशवासियों के लिए स्वामीजी का परामर्श है :—"हमें अपने ज्ञान के विभिन्न अङ्गों के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा और पाश्चात्य विज्ञान का अध्ययन करने की आवश्यकता है। हमें प्राविधिक शिक्षा और उन सब विषयों का ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता है, जिनसे हमारे देश के उद्योगों का विकास हो और मनुष्य नौकरियाँ खोजने के बजाय अपने स्वयं के लिए पर्याप्त धन का अर्जन कर सकें और दुर्दिन के लिए कुछ बचा भी सके।"

इस प्रकार, स्वामीजी ने उन सभी विषयो के अध्ययन पर बल दिया है, जो मनुष्य की लौकिक समृद्धि और आध्यात्मिक पूर्णता के लिए आवश्यक है। लौकिक विषय हैं :—भाषा, विज्ञान, मनोविज्ञान, गृहविज्ञान, प्राविधिक विषय, कला, कृषि, व्यावसायिक विषय, इतिहास, भूगोल, गणित, राजनीति, अर्थशास्त्र, खेल-कूद-व्यायाम, समाज और राष्ट्र सेवा। आध्यात्मिक विषय है :—धर्म, दर्शन, पुराण, उपदेश, श्रवण, कीर्त्तन, भजन और साधु-संगति।

शिक्षण-विधि : Method of Teaching

प्रोफ़ेसर लक्ष्मीनारायण गुप्त ने अपनी पुस्तक 'महान् भारतीय शिक्षा-शास्त्री' मे लिखा है :—"शिक्षा की विधि में स्वामी विवेकानन्द का अपना एक विशिष्ट स्थान है। उनकी शिक्षा-विधि एकमात्र आध्यात्मिक कही जा सकती है, जिसका आधार धर्म है। इस विचार से उन्होंने धर्म को विशेष पद्धति को अपना कर शिक्षा देने के लिए कहा है।" इस पद्धति की प्रमुख विशेषताएँ है :—

1. योग-विधि द्वारा चित्त की वृत्तियों का निरोध करना।
2. केन्द्रीयकरण-विधि (Method of Concentration) द्वारा मन को एकाग्र करना।
3. तर्क, व्याख्यान, विचार-विमर्श, उपदेश-विधि आदि द्वारा ज्ञान का अर्जन करना।
4. अनुकरण-विधि द्वारा शिक्षक के उत्तम चरित्र, गुणों आदि का अनुकरण करना।
5. व्यक्तिगत निर्देशन और परामर्श विधि (Method of Individual Guidance & Counsellihg) द्वारा छात्र को उचित मार्ग पर अग्रसर करना।

शिक्षक का स्थान : Place of Teacher

स्वामी विवेकानन्द का कथन है :—"वास्तव में, किसी को किसी के द्वारा कभी शिक्षा नहीं दी गई है। हममें से प्रत्येक को अपने-आप को शिक्षा देनी पड़ती है।

वाह्य शिक्षक केवल ऐसे सुझाव देता है, जिनसे आत्मा कार्य करने और समझने के लिए चैतन्य हो जाती है।"

इस प्रकार, स्वामीजी ने शिक्षक को बालक के मित्र, परामर्शदाता और पथ-प्रदर्शक का स्थान दिया है। इस रूप में शिक्षक के मुख्य कार्य अग्रलिखित हैं :—

1. शिक्षक को बालक के निकट, घनिष्ठ और व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए।
2. शिक्षक को बालक की प्रवृत्तियों में अपनी पूर्ण शक्ति को आत्मसात् कर देना चाहिए।
3. शिक्षक को बालक के प्रति असीम प्रेम, अनन्त धैर्य और वास्तविक सहानुभूति रखनी चाहिए।
4. शिक्षक को बालक को संसार के प्रति उचित दृष्टिकोण का निर्माण करने में सहायता देनी चाहिए।
5. शिक्षक को बालक के ज्ञान-प्राप्ति के मार्ग में उपस्थित होने वाली सब बाधाओं को दूर करना चाहिए।
6. शिक्षक को यह कभी नहीं समझना चाहिए कि वह बालक को शिक्षा दे रहा है, क्योंकि इससे शिक्षा का उद्देश्य पूर्णतया नष्ट हो जाता है।
7. शिक्षक द्वारा बालक को इस प्रकार के सभी अवसर प्रदान किए जाने चाहिए, जिनसे वह अपने हाथों, पैरों, कानों, आँखों आदि का प्रयोग करके अपनी बुद्धि का विकास कर सके।

स्त्री-शिक्षा : Women's Education

स्वामी विवेकानन्द, स्त्री की दीनता, हीनता और पराधीनता के कट्टर विरोधी हैं। उनका कहना है कि हमारे देश के पतन के अनेक कारणों में नारी-जाति का निरादर मुख्य है। अतः स्वामीजी ने नारी के उत्थान के लिए स्त्री-शिक्षा पर बल देते हुए कहा है :—"पहले अपनी स्त्रियों को शिक्षित करो, तब वे आपको बतायेंगी कि उनके लिए कौन-से सुधार आवश्यक हैं। उनके मामलों में तुम बोलने वाले कौन हो ?"

"Educate your women first, then they will tell you what reforms are necessary for them. In matters concerning them, who are you ?"—**Swami Vivekananda :** *Our Women*, p. 38.

जन-शिक्षा : Education of Masses

देश के पुनरुत्थान के लिए जनसाधारण की शिक्षा को अनिवार्य बताते हुए स्वामी विवेकानन्द का कथन है :—"मेरे विचार से जनसाधारण की अवहेलना करना महान् राष्ट्रीय पाप और हमारे पतन का कारण है। जब तक भारत की सामान्य जनता को एक बार फिर अच्छी शिक्षा, अच्छा भोजन और अच्छी सुरक्षा नहीं प्रदान

की जायगी, तब तक अधिक से अधिक राजनीति भी व्यर्थ होगी। ये हमारी शिक्षा के लिए धन देते हैं, वे हमारे मन्दिरों का निर्माण करते हैं, पर इनके बदले में उनको ठोकरें मिलती हैं। वे हमारे दासों के समान हैं। यदि हम भारत का पुनरुत्थान करना चाहते हैं, तो हमें उनको शिक्षित करना होगा।"

स्वामीजी जनसाधारण के लिए किस प्रकार की शिक्षा और शिक्षा की व्यवस्था चाहते हैं, इस सम्बन्ध में डा० कीर्ति देवी सेठ ने अपनी पुस्तक 'भारतीय शिक्षा-दर्शन' में लिखा है :—"जनता को शिक्षित करने के लिए गाँव-गाँव, घर-घर जाकर ही शिक्षा देनी होगी। कारण यह है कि गाँव के बालकों को जीविकोपार्जन के हेतु अपने पिता के साथ खेत पर काम करने के लिए जाना पड़ता है। वे शिक्षा प्राप्त करने विद्यालय नहीं जा पाते है। इस सम्बन्ध में स्वामीजी सुझाव देते हैं कि यदि संन्यासियों में से कुछ को धर्मेतर विषयों की शिक्षा प्रदान करने के लिए संगठित कर लिया जाय, तो बड़ी सरलता से घर-घर घूमकर वे अध्यापन तथा धार्मिक शिक्षा—दोनों काम कर सकते है। कल्पना कीजिये कि दो संन्यासी कैमरा, ग्लोब और कुछ मानचित्रों के साथ संध्या समय किसी गाँव में पहुंचे। इन साधनों के द्वारा वे जनता को भूगोल, ज्योतिष आदि की शिक्षा देते है। इसी प्रकार कथा-कहानियों के द्वारा दूसरे देश के सम्बन्ध से अपरिचित जनता को वे इतनी बातें बताते हैं, जितनी वे पुस्तक द्वारा अपने जीवन-भर में भी नहीं सीख सकते हैं। क्या इन वैज्ञानिक साधनों द्वारा आज की जनता के अज्ञानमय अन्धकार को शीघ्र दूर करने का यह एक उपयुक्त सुझाव नहीं है ? क्या सन्यासी स्वय इस लोक-सेवा द्वारा अपनी आत्मा की ज्योति को अधिक प्रदीप्त नही कर सकते है ?"

शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन : Estimate of Educational Philosophy

स्वामीजी के जीवन-दर्शन के समान उनके शिक्षा-दर्शन में भी हमें समन्वय-वादी दृष्टिकोण की झलक मिलती है। शिक्षा के विभिन्न अंगो के सम्बन्ध में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए, उन्होंने यह बताने का प्रयास किया है कि चिन्तन और क्रिया में किसी प्रकार का विरोध नहीं है। दूसरे शब्दों में, ज्ञान, कर्म और भक्ति का पारस्परिक सम्बन्ध है।

स्वामीजी के शिक्षा-दर्शन से प्रभावित होकर जवाहरलाल नेहरू ने लिखा है :—'भारत के अतीत में अटल आस्था रखते हुए और भारत की विरासत पर गर्व करते हुए भी, विवेकानन्द का जीवन की समस्याओं के प्रति आधुनिक दृष्टिकोण था और वे भारत के अतीत तथा वर्तमान के बीच एक प्रकार के संयोजक थे।"

"Rooted in the past and full of pride in India's prestige, Vivekananda was yet modern in his approach to life's problems

and was a kind of bridge between the past of India and her present."—Jawaharlal Nehru.

UNIVERSITY QUESTION

1. Evaluate Swami Vivekananda's philosophy of education bringing out his views on the meaning and aims of education, curriculum, and method of teaching.

शिक्षा के अर्थ और उद्देश्यों, पाठ्यक्रम एवं शिक्षण-विधि को स्पष्ट करते हुए स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन कीजिए।

27

महात्मा गांधी की शैक्षिक विचारधारा
EDUCATIONAL PHILOSOPHY OF MAHATMA GANDHI

"राष्ट्र के लिए गांधीजी की अनेक देनों में से नवीन शिक्षा के प्रयोग की देन सबसे महान् है। यह तरुण व्यक्तियों को सहयोग, प्रेम और सत्य के आधार पर एक समुदाय के रूप में रहने की शिक्षा देकर नये समाज के लिए नागरिकों को तैयार करने का प्रयत्न करती है।"

"Of Gandhiji's many gifts to the nation, the experiment of New Education is one of the greatest. It seeks to prepare citizens for a new society by teaching young people to live together as a community on the basis of co-operation, love and truth."–Humayun **Kabir.**

जीवन-परिचय : Gandhiji's Life (1869-1948)

महान् व्यावहारिक दार्शनिक, राजनीतिज्ञ एवं शिक्षा-शास्त्री मोहनदास करमचन्द गाधी का जन्म काठियावाड़ के पोरबन्दर नामक स्थान पर 2 अक्टूबर, 1869 को हुआ। उनके पिता करमचन्द गाधी पोरबन्दर राज्य के दीवान थे। उनकी माता का नाम पुतलीबाई था जो एक साध्वी एवं निष्ठावान स्त्री थीं। उनकी व्रत, उपवास आदि में दृढ़ आस्था थी।

गांधीजी की बाल्यावस्था पोरबन्दर में व्यतीत हुई। उन्होंने वहीं प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए एक पाठशाला मे दाखिला लिया। जब गाधीजी सात वर्ष के थे, तब उनके पिता दीवान होकर राजकोट गये। उनको वहाँ एक विद्यालय में दाखिल कराया गया। गांधीजी स्वभाव से सकोची थे। अतः वे अपने सहपाठियों से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास नहीं करते थे।

जीवन-दर्शन
Philosophy of Life

गांधीजी के जीवन-दर्शन ने भारतीय जीवन और समाज में क्रान्ति को जन्म दिया। इस प्रकार का दूसरा उदाहरण मानव-जाति के इतिहास में नहीं मिलता है। रोमियाँ रोलाँ (Romian Rolland) का कथन है :—"महात्मा गांधी वे मनुष्य थे, जिन्होंने 30 करोड़ व्यक्तियों को विद्रोह करने के लिए उत्तेजित किया, जिन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ें हिला दीं; और जिन्होंने पिछले 2,000 वर्षों की मानव-राजनीति में सबसे शक्तिशाली धार्मिक पुट दिया।"

गांधीजी के जीवन-दर्शन का विश्लेषण करने पर हमको उसमें चार महत्त्वपूर्ण तत्व मिलते हैं—सत्य, अहिंसा, निर्भयता और सत्याग्रह। हम इन पर यहाँ प्रकाश डाल रहे हैं :—

1. सत्य : Thruth—गांधीजी के लिए 'सत्य' सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त है। इनमें अनेक सिद्धान्त निहित हैं। गांधीजी का सम्पूर्ण जीवन, सत्य के लिए एक प्रयोग है। उनका सत्य—पूर्ण सत्य है। उनके लिए सत्य और ईश्वर एक ही बात है। बी० जी० रे (B. G. Ray) के शब्दों में :—"जिस वास्तविकता को गांधीजी ने जाना और अनुभव किया वह सत्य है। सत्य के माध्यम से ईश्वर को जाना जा सकता है। जब कभी कोई सत्य शब्द बोला जाता है; जब कभी कोई सत्य कार्य किया जाता है और जब कभी किसी सत्य भावना का अनुभव किया जाता है, तब हम ईश्वर के अस्तित्व का अनुभव करते हैं। ईश्वर का अस्तित्व है, क्योंकि सत्य का अस्तित्व है। गांधीजी के लिए सत्य और ईश्वर एक ही हैं।"

साधारणत. सत्य का अर्थ समझा जाता है—सत्य बोलना। गांधीजी के लिए इसका अर्थ अति विस्तृत है। उन्होंने लिखा है :—"विचार में सत्य, भाषण में सत्य और कार्य में सत्य होना चाहिए।" ("There should be Truth in thought, Truth in speech, and Truth in action.")

2. अहिंसा : Non-Violence—महादेव प्रसाद (Mahadeva Prasad) का कथन है :—"गांधीजी ने सत्य के एक सिद्धान्त से एक स्वाभाविक परिणाम निकाला। वह यह कि सत्य और अहिंसा को एक-दूसरे से अलग करना प्रायः असम्भव है। ये एक सिक्के के दो पहलू हैं।"

अब प्रश्न यह उठता है कि अहिंसा का अर्थ क्या है ? इसको गांधीजी के शब्दों से ही अच्छी तरह समझा जा सकता है। उनका कहना है :—"अहिंसा समस्त जीवधारियों के प्रति बुरी भावना का अभाव है। अपनी गतिशील अवस्था में इसका अर्थ है—जान-बूझकर कष्ट सहन करना। अपने क्रियाशील रूप में यह समस्त जीवधारियों के प्रति अच्छी भावना है। यह शुद्ध प्रेम है।"

3. निर्भयता : Fearlessness—'निर्भयता' के अर्थ को स्पष्ट करते हुए गांधीजी ने लिखा है :—"निर्भयता का अर्थ है—समस्त बाह्य भय से मुक्ति; जैसे—

बीमारी का भय, शारीरिक चोट और मृत्यु का भय, सम्पत्ति विहीन होने का भय, अपने प्रियजन की मृत्यु का भय, प्रतिष्ठा खोने का भय, अनुचित कार्य करने का भय, इत्यादि।"

4. सत्याग्रह : Satyagarba—गांधीजी ने 'सत्याग्रह' के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है :– "इसका मूल अर्थ है—'सत्य-बल' का अवलम्बन। मैंने इसको 'आत्म-बल' के नाम से भी पुकारा है। सत्याग्रह के प्रयोग के प्रारम्भिक स्तरों पर मैंने यह खोज की, कि सत्य का अनुसरण इस बात की आज्ञा नहीं देता है कि कोई व्यक्ति अपने विरोधी पर बल का प्रयोग करे। इसके विपरीत, उसे धैर्य और सहानुभूति से उसको ग़लत मार्ग से हटाना चाहिए। कारण यह है कि जो बात एक व्यक्ति को सत्य मालूम होती है, वह दूसरे को असत्य मालूम हो सकती है। इस प्रकार इस सिद्धान्त (सत्याग्रह) का अर्थ है—"विरोधी को कष्ट देकर नहीं, वरन् अपने को कष्ट देकर सत्य का समर्थन करना।"

शिक्षा-दर्शन : Educational Philosophy

गाधीजी ने राजनीति, समाज-सुधार, सत्य और अहिंसा के क्षेत्रों में अति महान् सफलताएँ प्राप्त कीं। इनके कारण शिक्षा-सिद्धान्त और व्यवहार को दी जाने वाली उनकी देन बहुत ही कम याद आती है। वास्तव में शैक्षिक विचारकों में उनका स्थान अति श्रेष्ठ है। उन्होंने अपने जीवन के प्रारम्भ में ही यह अनुभव कर लिया था कि सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और नैतिक प्रगति का आधार—'शिक्षा' है।

डा० एम० एस० पटेल (*M. S. Patel*) का कथन है :—"*गांधीजी ने उन* महान् शिक्षकों और उपदेशकों की गौरवपूर्ण मण्डलों में स्थान प्राप्त किया है, जिन्होंने शिक्षा के क्षेत्र को नव-ज्योति दी है। ग्रीन का कथन था कि पेस्टालॉजी आधुनिक शिक्षा-सिद्धान्त और व्यवहार का प्रारम्भिक बिन्दु था। जहाँ तक पाश्चात्य *शिक्षा का* सम्बन्ध है, यह बात सत्य हो सकती है। गांधीजी के शिक्षा-सम्बन्धी विचारों का निष्पक्ष अध्ययन सिद्ध करता है कि वे पूर्व में शिक्षा-सिद्धान्त और *व्यवहार के* प्रारम्भिक बिन्दु हैं।"

शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व
Basic Principles or Essential Features of Education Philosophy

1. *शिक्षा को बालकों* को बेरोजगारी से एक प्रकार की सुरक्षा देनी चाहिए।
2. शिक्षा को बालक और बालिकाओं में निहित सभी मानव-गुणों का विकास करना चाहिए।
3. सम्पूर्ण राष्ट्र में सात वर्ष (7 से 14) वर्ष तक निःशुल्क और *अनिवार्य* शिक्षा दी जानी चाहिए।

4. शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होनी चाहिए और सब भाषाओं में इसका स्थान प्रथम होना चाहिए।
5. शिक्षा को बालक की आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक शक्तियों को प्रोत्साहित करना चाहिए।
6. शिक्षा को मानव व्यक्तित्व — शरीर, हृदय, मस्तिष्क और आत्मा का सामंजस्यपूर्ण विकास करना चाहिए।
7. शिक्षा को विद्यालय के प्रत्येक बालक की शक्तियों का उस समुदाय के सामान्य हित के अनुसार, जिसका कि वह सदस्य है, विकास करना चाहिए।
8. समस्त शिक्षण, जीवन की वास्तविक परिस्थितियों में किया जाना चाहिए, और उसका सम्बन्ध किसी दस्तकारी या सामाजिक और भौतिक वातावरण से होना चाहिए।
9. बालक को अपना ज्ञान सक्रिय रूप से प्राप्त करना चाहिए, और उसे उसका प्रयोग सामाजिक वातावरण को समझने और उस पर अधिक उत्तम नियन्त्रण रखने के लिए करना चाहिए।
10. बालक की शिक्षा किसी लाभप्रद दस्तकारी के शिक्षण से प्रारम्भ होनी चाहिए और जिस समय से उसका प्रशिक्षण प्रारम्भ हो, उसी समय से उसे उत्पादन करने के योग्य बनाना चाहिए।

शिक्षा का अर्थ : Meaning of Education

गांधीजी की महत्त्वपूर्ण आकांक्षाओं में से एक आकांक्षा यह थी कि भारत का प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित हो। शिक्षित होने से उनका अभिप्राय यह नहीं था कि वह साक्षर हो। वे साक्षरता को शिक्षा नहीं मानते थे। वे इसे ज्ञान या ज्ञान का माध्यम भी नहीं मानते थे। गांधीजी का कहना था :— "साक्षरता न तो शिक्षा का अन्त है और न प्रारम्भ। यह केवल एक साधन है, जिसके द्वारा पुरुष और स्त्री को शिक्षित किया जा सकता है।"

"Literacy is not the end of education nor even the beginning. It is only one of the means whereby man and woman can be educated."—Mahatma Gandhi.

इस प्रकार, शिक्षा से गांधीजी का अभिप्राय न तो साक्षरता था और न ज्ञान। तो फिर शिक्षा से उनका क्या अभिप्राय था ? हमें इसका उत्तर उन्हीं के इन शब्दों में मिलता है :—"शिक्षा से मेरा अभिप्राय है—बालक और मनुष्य के शरीर, मस्तिष्क और आत्मा में पाये जाने वाले सर्वोत्तम गुणों का चतुर्मुखी विकास।"

"By education I mean an all round drawing out of the best in child and man—body, mind and spirit.—Mahatma Gandhi.

महादेव देसाई ने गांधीजी के शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है :— "गांधीजी ने प्रायः यह बताया है कि शिक्षा को बालक और बालिका के समस्त मानव-गुणों का विकास करना चाहिए। वह शिक्षा ठीक नहीं कही जा सकती है, जो बालकों और बालिकाओं को पूर्ण मनुष्य और उपयोगी नागरिक नहीं बनाती है।"

"Education, Gandhiji has often explained, must draw the whole man out of the boy and girl, and no education could be sound that does not make useful citizens, whole men, of boys and girls."—**Mahadev Desai.**

शिक्षा के उद्देश्य : Aims of Education

गांधीजी ने शिक्षा के उद्देश्यों को दो भागों में विभाजित किया है :—तात्कालिक और अन्तिम (Immediate & Ultimate)।

(अ) **तात्कालिक उद्देश्य (Immediate Aims)—गांधीजी** के अनुसार शिक्षा के प्रमुख तात्कालिक उद्देश्य निम्नांकित हैं :—

1. बालक को बड़े होने पर जीविका-उपार्जन करने के योग्य बनाना।
2. बालक को पवित्रता प्रदान करके उसके चरित्र का निर्माण करना।
3. बालक को अपने व्यवहार में अपनी संस्कृति को व्यक्त करने का प्रशिक्षण देना।
4. बालक की शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का विकास करके उसके व्यक्तित्व का सामंजस्यपूर्ण विकास करना।
5. व्यक्ति को सब प्रकार की दासता से मुक्त करके उसकी आत्मा को उच्चतर जीवन की ओर ले जाना।

(ब) **'अन्तिम उद्देश्य (Ultimate Aim)—गांधीजी** ने शिक्षा के अन्तिम उद्देश्य को इन शब्दों में व्यक्त किया है :—"अन्तिम वास्तविकता का अनुभव, ईश्वर और आत्मानुभूति का ज्ञान।"

"Realization of the ultimate reality, a knowledge of God and self-realization."—**Mahatma Gandhi.**

पाठ्यक्रम : Curriculum

गांधीजी ने अपनी बेसिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में अग्रांकित विषयों को स्थान दिया है—

1. आधारभूत शिल्प; जैसे—कृषि, कताई बुनाई, गत्ते का काम, लकड़ी का काम, धातु का काम, चमड़े का काम आदि।
2. मातृभाषा।
3. गणित।
4. सामान्य विज्ञान—(अ) जीव-विज्ञान, (ब) वनस्पति-विज्ञान (स) शरीर-

विज्ञान, (द) रसायन-शास्त्र, (य) स्वास्थ्य-विज्ञान, (र) प्रकृति-अध्ययन, (ल) भौतिक-संस्कृति, (व) नक्षत्र-ज्ञान ।

5. कला—ड्राइङ्ग और संगीत ।
6. सामाजिक अध्ययन—इतिहास, भूगोल और नागरिकशास्त्र ।
7. हिन्दी—जहाँ यह मातृभाषा न हो ।
8. शारीरिक शिक्षा—खेल-कूद और व्यायाम ।

शिक्षण-विधि : Method of Teaching

'ज़ाकिर हुसैन समिति' के अनुसार :—"गांधीजी ने अपनी शिक्षण-विधि में सहयोगी क्रिया, नियोजन, यथार्थता, पहलक़दमी और व्यक्तिगत उत्तरदायित्व पर बल दिया है ।"

"Stress should be laid on the principles of co-operative activity, planning, accuracy, initiative and individual responsibility in learning"—**Zakir Husain Committee.**

उपर्युक्त के अतिरिक्त जिन अन्य सिद्धान्तों को गांधीजी ने अपनी शिक्षण-विधि में स्थान दिया है, वे दृष्टव्य हैं :—

1. लिखना सिखाने से पहले पढ़ना सिखाना और वर्णमाला के अक्षर सिखाने से पहले ड्राइङ्ग सिखाना ।
2. करके सीखना (Learning by Doing)
3. अनुभव द्वारा सीखना (Learning by Experience)
4. सीखने की प्रक्रिया में समन्वय (Correlation in the Process of Learning) ।

शिक्षक का स्थान : Place of Teacher

गांधीजी बाल-केन्द्रित, न कि अध्यापक-केन्द्रित शिक्षा में विश्वास करते हैं । अतः उनका कथन है कि शिक्षक को बालक का मित्र, परामर्शदाता और पथ-प्रदर्शक होना चाहिए । उसे मैत्रीपूर्ण ढंग से बालक के मनोभावों के प्रति प्रतिक्रिया करनी चाहिए । उसे बालक की चिन्ताओं के प्रति उदासीन न होकर, उसे उनसे मुक्त होने का परामर्श देना चाहिए । उसे बालक की समस्याओं को सुलझाने में पथ-प्रदर्शक का कार्य करना चाहिए । इस प्रकार गांधीजी ने जिस विद्यालय की कल्पना की है, उसमें शिक्षक के कार्य सामान्य विद्यालय के शिक्षक के कार्यों से बिल्कुल भिन्न हैं । ये कार्य क्या हो सकते हैं—इस सम्बन्ध में रंगा ने लिखा है :—"जो कार्य शिक्षक कर सकता है वह है—प्रकाश-स्तम्भ, संकेत-बोर्ड, संदर्भ-पुस्तक, शब्द-कोश, द्रावक और शिक्षा की जटिल प्रक्रिया को गति देने का कार्य ।"

"The role that a teacher can play is to be a lamp-post, a sing-board, a reference book, a dictionary, a dissolvent, a compound processor."—**N. R. Ranga.**

शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन
Estimate of Educational Philosophy

गांधीजी के शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन करते हुए डा० एम० एस० पटेल (M S. Patel) ने लिखा है :—"गांधीजी के दर्शन का सावधानी से अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि उनके शिक्षा-दर्शन में प्रकृतिवाद, आदर्शवाद और प्रयोजनवाद एक-दूसरे के विरोधी न होकर पूरक हैं।"

आदर्शवाद गांधीजी के दर्शन का आधार है और प्रकृतिवाद तथा प्रयोजनवाद केवल उसके सहायक है। गांधीजी का शिक्षा-दर्शन इस बात में प्रकृतिवादी है कि वह बालक की प्रकृति का पूरा ध्यान रखता है और उसके अध्ययन पर बल देता है। एम० एस० पटेल का कथन है :—"उनका शिक्षा-दर्शन अपनी योजना में प्रकृतिवादी, अपने उद्देश्य में आदर्शवादी और अपने कार्यक्रम और कार्य-विधि में प्रयोजनवादी है। शिक्षा-दार्शनिक के रूप में गांधीजी की वास्तविक महानता इस बात में है कि उनके दर्शन में प्रकृतिवाद, आदर्शवाद और प्रयोजनवाद की मुख्य प्रवृत्तियाँ अलग और स्वतन्त्र नहीं हैं, वरन् मिलकर एक हो गई हैं।"

"It is naturalistic in its setting, idealistic in its aim and pragmatic in its method and programme of work. The real greatness of Gandhiji as an educational philosopher consists in the fact that the dominant tendencies of naturalism, idealism and pragmatism are not separate and independent in his philosophy, but they fuse into a unity."—M. S. Patel.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Evaluate Gandhiji's philosophy of education, bringing out his views on the meaning of education, aims of education and method of teaching.

शिक्षा के अर्थ, उद्देश्य तथा शिक्षण-विधि सम्बन्धी विचारों पर प्रकाश डालते हुए गांधीजी के शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन कीजिए।

28

रवीन्द्रनाथ टैगोर की शैक्षिक विचारधारा
EDUCATIONAL PHILOSOPHY OF RABINDRANATH TAGORE

"रवीन्द्रनाथ ने किसी मौलिक दर्शन को उत्पन्न करने का दावा नहीं किया। उनका ध्येय भारतीय परम्परा का विश्लेषण करना या उस पर चिन्तन करना नहीं था। उन्होंने इसको अपनी स्वयं की शैली और आलंकारिक भाषा में व्यक्त किया और आधुनिक जीवन में उसका औचित्य बताया।"

"Rabindranath did not claim to produce an original philosophy. His aim was not to analyse or speculate about the Indian tradition. He expressed it in his own vivid phrases and homely metaphors, and showed its relevance to modern life."

— Dr. S. Radhakrishnan.

जीवन-परिचय : Tagore's Life (1861-1941)

रवीन्द्रनाथ टैगोर का जन्म बंगाल के प्रसिद्ध टैगोर वंश में 1861 ई० में कलकत्ता में हुआ था। उनके पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ टैगोर थे। टैगोर-परिवार अपनी समृद्धि, कला, विद्या एवं संगीत के लिए सम्पूर्ण बंगाल में प्रसिद्ध था। टैगोर को अपने पिता से देशभक्ति, विद्वता, धर्मप्रियता, साधुता आदि गुण उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुए। वह अपने सभी भाई-बहिनों में सबसे छोटे थे। परन्तु उन्होंने अपने यश से न केवल टैगोर परिवार वरन् सम्पूर्ण देश को गौरव प्रदान किया।

टैगोर को सर्वप्रथम ओरिएण्टल सेमेनरी स्कूल में भर्ती किया गया। परन्तु इनका यहाँ मन नहीं लगा। इस कारण उनको कुछ महीनों के बाद नार्मल स्कूल में दाखिला दिलाया गया। इस काल में उन्हें कुछ कटु अनुभव प्राप्त हुए जिनके परिणामस्वरूप आगे चलकर उन्होंने आजीवन शिक्षा-सुधार के लिए प्रयास किया

और आदर्श शिक्षा-संस्था के रूप में 'शान्ति-निकेतन' की स्थापना की जो कि आज 'विश्वभारती' विश्वविद्यालय के नाम से प्रख्यात है।

वस्तुतः उनकी प्रारम्भिक शिक्षा, विद्यालय से अधिक घर पर हुई थी। संस्कृत, बंगला, अंग्रेजी, चित्रकला, संगीत आदि की शिक्षा घर पर देने के लिए अलग-अलग अध्यापक नियुक्त किए गए। 1878 ई० में टैगोर अपने भाई के साथ उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंगलैण्ड गए। वहाँ उनको ब्राइटन स्कूल में दाखिला दिलाया गया। परन्तु टैगोर इस विद्यालय में भी अधिक दिन तक न रहे। यहाँ से लन्दन चले गए। वहाँ उन्होंने किसी विद्यालय में प्रवेश नहीं लिया। 1880 में टैगोर स्वदेश लौटे। उनको विद्यालय की शिक्षा के नाम पर कुछ भी प्राप्त न हुआ। 1881 ई० में टैगोर पुनः इंगलैण्ड गए। वे वहाँ कानून की शिक्षा प्राप्त करने के ध्येय से गये थे। परन्तु विचार-परिवर्तन के कारण फिर वापस लौट आए।

1901 में टैगोर ने बोलपुर के समीप 'शान्ति-निकेतन' की स्थापना की। उन्होंने इसमें स्वयं एक अध्यापक के रूप में कार्य किया। यह विद्यालय उदारता एवं विभिन्न संस्कृतियों के संगम-स्थल के रूप में दिन-प्रतिदिन उन्नति करता गया। आज इसको भारत के विश्वविद्यालयों में अद्वितीय स्थान प्राप्त है।

1919 ई० तक टैगोर ने राजनीति के क्षेत्र में कार्य किया। परन्तु वे इस क्षेत्र में होते हुए भी साहित्य की सेवा अनवरत रूप से करते रहे। महान् कवि एवं साहित्यकार के रूप में उनकी ख्याति देश की सीमाओं को पार कर गई। 1913 ई० में उनको 'गीतांजलि' पर नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ।

1920 से 1930 तक टैगोर ने योरोप, एशिया तथा अमरीका के विभिन्न स्थानों की यात्रा की। उन्होने वहाँ विभिन्न स्थानो पर भाषण भी दिये। *1941 ई०* में इस महान् कवि, साहित्यकार एवं शिक्षा-शास्त्री का देहान्त हो गया।

जीवन-दर्शन : Philosophy of Life

टैगोर को 'सत्यम्, शिवम्, अद्वैतम्' की धारणा में दृढ़ *विश्वास था*। उन्होंने ईश्वर को 'सर्वोच्च मानव' (Supreme Man) के रूप में माना। वे अद्वैतवादी थे। ब्रह्मसमाज से प्रभावित होने के कारण उन्होने सर्वेश्वरवादी ब्रह्मवाद (Pantheistic Monism) को स्वीकार किया। कुछ सीमा तक वे सौन्दर्यात्मक समेकित ब्रह्मवादी (Aesthetic integral monist) भी थे। वे ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते थे। कभी-कभी वे उसे मानव-शरीर वाला; पर कभी-कभी निराकार भी मानते थे। वे सृष्टि को उसके व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति समझते थे।

इस प्रकार के उच्च धार्मिक विचारों से सराबोर होते हुए भी वे पूर्ण रूप से मनुष्य थे। डा० एम० पी० वर्मा (M. P. Verma) के शब्दों में :—"वे प्रेम, सार्थीपन और सहयोग के भविष्यवक्ता थे। उन्होने मनुष्य की एकता और सामंजस्य का पाठ पढ़ाया। उन्होंने अनुभव किया कि मनुष्य का सर्वश्रेष्ठ आनन्द—प्रगति करना है। उन्होंने विभाजित करने वाले सिद्धान्त को सन्देह की दृष्टि से देखा और सम्पूर्ण मानव-

जाति को एक माना। वे ईश्वर में विश्वास करते थे, इसलिए वे मनुष्य में भी विश्वास करते थे। उनका विश्वास था कि मनुष्य परमात्मा का रूप है। ईश्वर की उपासना न केवल पवित्र नगरों के मन्दिरों और बड़े शहरों के गिरजाघरों में की जा सकती है, वरन् भूमि को जोतकर और पत्थरों को तोड़कर भी की जा सकती है।"

टैगोर के जीवन-दर्शन का सार डा० वर्मा ने इन शब्दों में दिया है :—"रवीन्द्रनाथ ने मानव-स्वभाव से संवेगों के विनाश और उनके सौन्दर्यात्मक तथा सामाजिक पक्षों के दमन को स्वीकृति नहीं दी। उन्होंने मनुष्य के व्यक्तित्व और शक्तियों के सब पहलुओं के पूर्ण और शक्तिशाली विकास के सिद्धान्त को स्वीकार किया। उन्होंने आत्मा की भव्यताओं को, पहाड़ों की अँधेरी गुफ़ाओं और जंगलों के एकान्त स्थानों में खोजना अस्वीकार किया। वे जीवन की स्वीकृति चाहते थे, उसके सभी पक्षों में—सुखों और दुःखों में, आदर्शों और सद्भावनाओं में, दुःखद घटनाओं और संकटपूर्ण परिस्थितियों में।"

शिक्षा-दर्शन : Educational Philosophy

टैगोर, शिक्षा-शास्त्री के रूप में अपने स्वयं के प्रयास से प्रकट हुए। यह उनके जीवन में अनुभव का आवश्यक परिणाम था। उनका सम्बन्ध ऐसे परिवारों से था, जो सब प्रकार के प्रगतिशील विचारों और कार्यों तथा विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक आन्दोलनों का केन्द्र था। उनके परिवार के सदस्यों में प्रायः सभी अच्छी बातों के जानकार थे; जैसे—दर्शन, विज्ञान, संस्कृति, कविता व कला, संगीत, नाटक, राष्ट्र-निर्माण, समाज-सुधार, व्यापार, व्यवसाय और आध्यात्मिक अनुभव। टैगोर में ऐसी तीव्र और विविध ग्रहण-शक्ति थी कि उन्होंने इन सभी बातों को बड़ी सरलता से ग्रहण करके अपना लिया।

उपर्युक्त गुणों के साथ-साथ टैगोर में और भी ऐसे अनेक गुण थे, जिन्होंने उनको अति महान् शिक्षा-शास्त्री बना दिया। उनकी बुद्धि इतनी तेज थी कि वे बड़ी सरलता से किसी भी ज्ञान को अपना बना सकते थे। उन्हें विज्ञानों और मानव-शास्त्रों का बहुत ज्ञान था।

उनकी अपेक्षा ड्यूवी (Dewey) को अधिक बातों में रुचि थी, पर उसमे टैगोर के समान कलात्मक विषयों में रुचि नहीं थी; जैसे—कविता, उच्च कोटि का दर्शन, संगीत की सूक्ष्म बातें और कलाएँ।

रूसो (Rousseau) और फ्रॉबेल (Froebel) के समान टैगोर प्रकृति की शक्ति और गुणों को मानते थे, पर प्रकृति से सम्पर्क रखने और इस सम्पर्क के कारण शिक्षा पर उसके प्रभावों को उन्होंने रूसो और फ्रॉबेल के बजाय कहीं अधिक अच्छी तरह समझा।

सुनीलचन्द्र सरकार ने लिखा है :—"टैगोर ने शिक्षा को जो योगदान दिया, उसमें पेस्टालॉजी और फ्रॉबेल के कार्य सम्मिलित हैं और उनके कार्यों में जो कमियां रह गई थीं, उनकी पूर्ति भी है, उदाहरणार्थ—फ्रॉबेल की किण्डरगार्टन पद्धति में

खेल, नृत्य और रचनात्मक कार्यों का विशेष स्थान है। टैगोर ने बताया कि यह पद्धति सफलतापूर्वक तभी कार्य कर सकती है, जब जीवन की कठोरता वास्तविकताओं से दूर अति सुन्दर वातावरण का निर्माण किया जाय।"

"His contribution in this respect included and supplemented what Pestalozzi and Froebel had done. The mystical element, the symbolic sound of play and dance and creative occupations in Froebel's Kindergarten could operate only in an atmosphere of fairly and cut adrift from the rude realities of life."—Sunil Chandra Sarkar.

शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त या आवश्यक तत्व
Basic Principles of Essential Features of Educational Philosophy

1. छात्रों में संगीत, अभिनय और चित्रकला की योग्यताओं का विकास किया जाना चाहिए।
2. छात्रों को भारतीय विचारधारा और भारतीय समाज की पृष्ठभूमि का स्पष्ट ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए।
3. छात्रों को उत्तम मानसिक भोजन दिया जाना चाहिए, जिससे कि विकास विचारों के पर्यावरण में हो।
4. छात्रों को नगर की गन्दगी और अनैतिकता से दूर—प्रकृति के घनिष्ठ सम्पर्क में रखकर शिक्षा दी जानी चाहिए।
5. शिक्षा राष्ट्रीय होनी चाहिए और उसे भारत के अतीत एवं भविष्य का पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।
6. शिक्षा का समुदाय के जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध होना चाहिए और उसे सजीव एवं गतिशील होने के लिए व्यापक होना चाहिए।
7. शिक्षा का माध्यम 'मातृभाषा' होनी चाहिए, क्योंकि विदेशी भाषा के द्वारा अनन्त मूल्यों को प्राप्त नहीं किया जा सकता है।
8. शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए—व्यक्ति की सब जन्मजात शक्तियों का विकास करके उसके व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण और सामंजस्यपूर्ण विकास करना।
9. जनसाधारण को शिक्षा देने के लिए देशी प्राथमिक विद्यालयों को फिर जीवित किया जाना चाहिए।
10. यथासम्भव शिक्षण-विधि का आधार—जीवन, प्रकृति और समाज की वास्तविक परिस्थितियाँ होनी चाहिए।

शिक्षा का अर्थ : Meaning of Education

टैगोर ने 'शिक्षा' शब्द का प्रयोग 'व्यापक अर्थ' (Wider Meaning) में किया

है। उन्होंने अपनी पुस्तक *"Personality"* में लिखा है :—"सर्वोच्च शिक्षा वही है, जो सम्पूर्ण सृष्टि से हमारे जीवन का सामंजस्य स्थापित करती है।"

"The highest education is that which makes our life in harmony with all existence."—Tagore.

सम्पूर्ण सृष्टि से टैगोर का अभिप्राय है—संसार की चर और अचर, जड़ और चेतन, सजीव और निर्जीव—सभी वस्तुएँ। इन वस्तुओं से हमारे जीवन का सामंजस्य तभी हो सकता है, जब हमारी समस्त शक्तियाँ पूर्ण रूप से विकसित होकर उच्चतम बिन्दु पर पहुँच जायें। इसी को टैगोर ने 'पूर्ण मनुष्यत्व' (Complete Manhood) कहा है। शिक्षा का कार्य है—हमे इस स्थिति पर पहुँचाना। इस दृष्टिकोण से टैगोर के अनुसार—शिक्षा, विकास की प्रक्रिया है। वह मनुष्य का शारीरिक, बौद्धिक, आर्थिक, व्यावसायिक, धार्मिक और आध्यात्मिक विकास करती है। अत: टैगोर के विचार में शिक्षा का रूप अत्यन्त व्यापक है।

शिक्षा के व्यापक अर्थ के अन्तर्गत टैगोर ने शिक्षा के प्राचीन भारतीय आदर्श को स्थान दिया है। यह आदर्श है—'सा विद्या या विमुक्तये' (Education is that which liberates.)। इस आदर्श के अनुसार शिक्षा—मनुष्य को आध्यात्मिक ज्ञान देकर उसे जीवन और मरण से मुक्ति प्रदान करती है। टैगोर ने शिक्षा के इस प्राचीन आदर्श को भी व्यापक रूप दिया है। उनका कहना है कि—शिक्षा न केवल आवागमन से, वरन् आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और मानसिक दासता से भी मनुष्य को मुक्ति प्रदान करती है। अतः मनुष्य को शिक्षा द्वारा उस सब ज्ञान का संग्रह करना चाहिए, जो उसके पूर्वजों द्वारा संचित किया जा चुका है। यही सच्ची शिक्षा है। स्वयं टैगोर ने लिखा है :—"सच्ची शिक्षा संग्रह किये गये लाभप्रद ज्ञान के प्रत्येक अंग के प्रयोग करने में उस अंग के वास्तविक स्वरूप को जानने में और जीवन में जीवन के लिए सच्चे आश्रय का निर्माण करने में है।"

"True education consists in knowing the use of any useful material that has been collected, to know its real nature, and to build along with life a real shelter for life."—Tagore.

शिक्षा के उद्देश्य : Aims of Education

टैगोर द्वारा निर्धारित किए जाने वाले शिक्षा के मुख्य उद्देश्य अग्रलिखित हैं :—

1. पूर्ण जीवन की प्राप्ति के लिए बालक का पूर्ण विकास करना।
2. बालक का वैयक्तिक, व्यावसायिक और सामाजिक विकास करना।
3. बालक के शरीर का स्वस्थ और स्वाभाविक विकास एवं उनके विभिन्न अंगों और इन्द्रियों को प्रशिक्षित करना।
4. बालक को वास्तविक जीवन की बातों, स्थितियों और पर्यावरण की

जानकारी देकर एवं उनसे अनुकूलन कराके, उसके मस्तिष्क का विकास करना।

5. बालक को धैर्य, शान्ति, आत्म-अनुशासन, आन्तरिक स्वतन्त्रता, आन्तरिक शक्ति और आन्तरिक ज्ञान के मूल्यों से अवगत कराके, उसका नैतिक और आध्यात्मिक विकास करना।

पाठ्यक्रम : Curriculum

टैगोर के अनुसार शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—पूर्ण जीवन की प्राप्ति के लिए मनुष्य का पूर्ण विकास करना है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर उन्होंने पाठ्यक्रम मे विभिन्न प्रकार के अनेक विषयो और क्रियाओं को स्थान देकर, उसे व्यापक रूप प्रदान किया है। पाठ्यक्रम के कुछ मुख्य विषय और क्रियाएँ हैं :—

(i) विषय—इतिहास, विज्ञान, प्रकृति-अध्ययन, भूगोल, साहित्य आदि।

(ii) क्रियाएँ—नाटक, भ्रमण, बागवानी, क्षेत्रीय अध्ययन, प्रयोगशाला-कार्य, ड्राइङ्ग, मौलिक रचना, अजायबघर के लिए विभिन्न वस्तुओं का सग्रह, आदि।

(iii) अतिरिक्त पाठ्यक्रम-क्रियाएँ—खेल-कूद, समाज-सेवा, छात्र-स्वशासन आदि।

डा० मुखर्जी का कथन है :—"इस दृष्टिकोण से टैगोर की शिक्षा-संस्थाओं में लागू किया जाने वाला पाठ्यक्रम 'क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम' रहा है।"

"From this point of view the curriculum introduced in Tagore's institutions has been 'activity curriculum'."

—H. B. Mukherjee.

शिक्षण-विधि : Methods of Teaching

टैगोर ने अपनी शिक्षण-विधि के निम्नलिखित प्रमुख सिद्धान्त बताये हैं :—

1. शिक्षण-विधि को बालक की स्वाभाविक रुचियो और आवेगों पर आधारित करना।
2. शिक्षण-विधि को जीवन की वास्तविक परिस्थितियो, प्रकृति की वास्तविक बातों और समाज के वास्तविक जीवन के अनुकूल बनाना।
3. शिक्षण-विधि में वाद-विवाद और प्रश्नोत्तर का प्रयोग करना।
4. शिक्षण-विधि में नृत्य, अभिनय, दस्तकारी आदि को स्थान देकर शारीरिक क्रिया को महत्त्व देना और इस प्रकार 'क्रिया-विधि' (Activity Method) का प्रयोग करना।
5. शिक्षण-विधि में बालक के अनुभवो और इन्द्रियों का प्रयोग करना।

शिक्षण की सर्वोत्तम विधि बताते हुए टैगोर ने लिखा है :—"भ्रमण के समय पढ़ाना, शिक्षण की सर्वोत्तम विधि है।"

"Teaching while walking is the best method of teaching."

—Tagore.

शिक्षक का स्थान : Place of Teacher

टैगोर ने शिक्षण-विधि की तुलना में शिक्षक को बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करते हुए लिखा है :—"शिक्षा केवल शिक्षक के ही द्वारा और शिक्षण-विधि के द्वारा कदापि नहीं दी जा सकती है। मनुष्य केवल मनुष्य से ही सीख सकता है।"

"Education can be imparted only by a teacher and never by a method, man can learn only from a man."

—Rabindranath Tagore.

इस प्रकार, टैगोर ने शिक्षक को शिक्षा-व्यवस्था का प्रमुख आधार माना है। इस रूप में शिक्षक के कार्य निम्नलिखित हैं :—

1. शिक्षक और बालक को समान रूप से सांस्कृतिक परम्पराओं का अनुसरण और सत्य की खोज करनी चाहिए।
2. शिक्षक को बालक के जीवन की गति, मस्तिष्क को बन्धन से मुक्ति देनी चाहिए।
3. शिक्षक को ऐसे वातावरण का निर्माण करना चाहिए, जिसमें बालक स्वानुभव द्वारा अधिक सरलता और दक्षता से सीख सके।
4. शिक्षक का कोई भी कार्य बालक की रचनात्मक शक्ति का दमन करने वाला और उसकी उल्लासवर्द्धक वृत्ति में बाधक नहीं होना चाहिए।
5. शिक्षक को शिक्षण-विधियों में विश्वास न करके जीवन के सिद्धान्तों, मानव-आत्मा की पवित्रता और व्यक्तिगत प्रेम में विश्वास करना चाहिए।
6. शिक्षक को बालक को प्रेरणादायी और शिक्षाप्रद अनुभव प्रदान करने चाहिए, न कि पुस्तकीय ज्ञान; क्योंकि ऐसा करने से वह बालक को ज्ञान का अर्जन करने की प्रेरणा नहीं दे सकता है।

शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन
Estimate of Educational Philosophy

टैगोर के शैक्षिक विचार और प्रयोग बिल्कुल नये और मौलिक जान पड़ते हैं, यद्यपि उनमें से अधिकांश को प्राचीन समय के शिक्षा-शास्त्रियों द्वारा किसी-न-किसी रूप में विकसित किया जा चुका था, और तत्कालीन शिक्षा-शास्त्रियों द्वारा कम या अधिक मात्रा में उनका प्रयोग किया जा रहा था। पर महत्त्वपूर्ण बात यह है कि 20वीं शताब्दी के प्रथम भाग के भारतीय शिक्षा-शास्त्रियों में टैगोर सबसे श्रेष्ठ थे।

टैगोर के शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन करते हुए डा० एच० बी० मुखर्जी ने लिखा है :—"टैगोर आधुनिक भारत में शैक्षिक पुनरुत्थान के सबसे महान् पैग़म्बर थे। उन्होंने अपने देश के सामने शिक्षा के सर्वोच्च आदर्शों को स्थापित रखने के लिए निरंतर संघर्ष किया। उन्होंने अपनी शिक्षा-संस्थाओं में शैक्षिक प्रयोग किये, जिन्होंने उनको आदर्श का सजीव प्रतीक बना दिया।"

"Tagore was the greatest prophet of educational renaissance in modern India. He waged a ceaseless battle to uphold the highest educational ideals before the country, and conducted educational experiments at his own institutions, which made them living symbols of what an ideal should be."—H. B. Mukherjee.

UNIVERSITY QUESTION

1. Give a critical estimate of the educational philosophy of Tagore, bringing out his views on curriculum and place of teacher.

टैगोर के शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन कीजिए, और पाठ्यक्रम एवं शिक्षक के स्थान पर उनके विचारों को स्पष्ट कीजिए।

29

श्री अरविन्द घोष की शैक्षिक विचारधारा
EDUCATIONAL PHILOSOPHY OF SHRI AUROBINDO GHOSH

"शिक्षा पर श्री अरविन्द के विचार सिद्ध करते हैं कि ये हमारे देश के सबसे प्रमुख और प्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्रियों में से हैं। उनका कथन है कि जिस प्रकार की शिक्षा की हमें अपने देश के लिए आवश्यकता है, वह भारतीय आत्मा, आवश्यकता, स्वभाव और संस्कृति के अनुकूल होनी चाहिए।"

"His views on education reveal that Shri Aurobindo is one of the most eminent and distinguished educationists of our country. He maintains that the kind of education we need in our country is an education proper to the Indian soul and need and temperament and culture."—R S. Mani.

जीवन-परिचय : Aurobindo's Life (1872-1950)

श्री अरविन्द का जन्म 15 अगस्त सन् 1857 ई० में कलकत्ता के घोष-परिवार में हुआ। उनके पिता का नाम डा० कृष्णधन घोष और माता का नाम स्वर्णलता देवी था। श्री अरविन्द की प्रारम्भिक शिक्षा दार्जिलिंग के लोरेटो कान्वेंट में हुई। उन्होंने यहाँ दो वर्ष तक शिक्षा प्राप्त की। 1879 ई० में उनको शिक्षा प्राप्त करने के लिए इङ्गलैण्ड भेजा गया। वहाँ उन्होंने ड्रिवेट दम्पत्ति की देखरेख में लैटिन का अध्ययन किया। 1885 ई० में उन्हें लन्दन के सेण्ट पॉल स्कूल में प्रवेश दिलाया गया। श्री अरविन्द उच्च शिक्षा प्राप्त करके 1893 ई० में स्वदेश आये।

भारत आकर उन्होंने बड़ौदा-राज्य की सेवा करना स्वीकार किया। यहाँ कुछ समय तक उन्होंने लगान-बन्दोबस्त, स्टाम्प और रेवेन्यू विभाग आदि में कार्य किया। इसके बाद उन्होंने बड़ौदा स्टेट कॉलिज में लेक्चरार के पद पर कार्य किया।

बड़ौदा में रहते हुए ही अरविन्द का विवाह 1901 ई० में मृणालिनी नामक कन्या से हुआ। दुर्भाग्यवश मृणालिनी देवी का देहान्त 1918 ई० में इन्फ्लुएंजा से हो गया। उन्होंने 1905 से 1910 तक सक्रिय राजनीति में भाग लिया। उन्होंने एक वर्ष का कारावास भी झेला।

श्री अरविन्द 1910 ई० में पाँण्डचेरी गए। पाँण्डचेरी पहुँच कर अरविन्द योग-साधना में तल्लीन हो गए। उनकी दीर्घ-साधना का फल 24 नवम्बर 1936 ई० को प्राप्त हुआ। इस साधना से उनको परम शक्ति के दर्शन हुए। उन्होंने अपने अन्तिम दिन पाँण्डचेरी के आश्रम में व्यतीत किए। इस महान् ऋषि, साधक तथा शिक्षा-शास्त्री ने 2 दिसम्बर 1950 को इस ससार का त्याग करके दिव्य-लोक को प्रस्थान किया।

जीवन-दर्शन : Philosophy of Life

श्री अरविन्द का दर्शन ज्ञेयवादी (Gnostic) है। वे विकास में विश्वास करते हैं। उनके अनुसार इस विकास का लक्ष्य है—जगत में व्याप्त दिव्यशक्ति का प्रगतिशील बोध। उनके विचार से इस विश्व के सब विकासशील प्राणियों का एक ही प्रयोजन और लक्ष्य है—पूर्ण और अखंड चेतना की प्राप्ति। चेतना के विकासक्रम की दो विशेषताएँ हैं; पहली—पदार्थ, प्राण, मन और बुद्धि—इनका अस्तित्व अलग-अलग नही है, बल्कि हर-एक अनुवर्ती स्तर अपने पूर्ववर्ती स्तर से जुड़ा हुआ है। दूसरी—हर-एक उच्च स्तर पर पहुँच कर विकसित चेतना, अपने पूर्ववर्ती और अनुवर्ती स्तरो को अपने ढंग से और अपने नियमों के अनुसार प्रभावित करती है; उदाहरण के लिए—प्राण और पदार्थ का समवाय रूप प्राणी है। प्राणी पदार्थ से भिन्न रूप में कार्य करता है, क्योंकि जड़-पदार्थ के समान वह कठोर यांत्रिक नियमों से शासित नहीं होता है।

श्री अरविन्द का कथन है कि विकास की यह प्रक्रिया निरन्तर आगे बढती जा रही है और विकास-क्रम में चेतना की एक ऐसी स्थिति अवश्य आएगी, जिसे वे अतिमानसिक स्तर कहते हैं। इस स्तर तक पहुँच जाने पर भूमि पर एक नवीन चेतना, एक नवीन जाति का उदय होगा। उनका कहना है कि चट्टानों और खनिजो से वनस्पति उत्पन्न हुई, वनस्पति से पशु की उत्पत्ति हुई। इसी प्रकार पशु से मानव का विकास हुआ और मानव से अतिमानव का विकास होना अवश्यम्भावी है।

चेतना की इस अति सामान्य स्थिति को प्राप्त करना मानव-चेतना के लिए असम्भव है। अतिमानसिक चेतना केवल अतिमानव के ही अधिकार की वस्तु है। यदि मनुष्य किसी प्रकार इस अतिमानसिक स्तर को प्राप्त कर लेता है, तो अज्ञान का नाश हो जाता है और फिर केवल ज्ञान या प्रकाश ही रह जाता है।

शिक्षा-दर्शन : Educational Philosophy

श्री अरविन्द का शिक्षा-दर्शन, आध्यात्मिक साधना, ब्रह्मचर्य और योग पर

आधारित है। उनका विश्वास है कि इस प्रकार की शिक्षा से मानव का पूर्ण विकास किया जा सकता है। श्री अरविन्द का कथन है :—"सच्ची और वास्तविक शिक्षा केवल वही है जो मानव की अन्तर्निहित समस्त शक्तियों को इस प्रकार विकसित करती है कि वह उनसे पूर्ण रूप से लाभान्वित होता है।"

"That alone would be a true and living education which helps to bring out to full advantage all that is in the individual man."—**Shri Aurobindo.**

श्री अरविन्द के अनुसार अन्तःकरण या मानस—शिक्षा का मुख्य अंग है। उन्होंने अन्तःकरण के चार स्तर बताए है—चित्त, मनस, बुद्धि और ज्ञान। उनके मतानुसार मानव की इन शक्तियों में क्रमिक विकास होता है। अतः शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि वह इन शक्तियों को विकसित कर सके। केवल ज्ञान की प्राप्ति ही शिक्षा नही है। सच्ची शिक्षा वही है, जिसमे मानव का पूर्ण विकास करने की क्षमता हो।

श्री अरविन्द ने अपनी शिक्षा में किसी ऐसे विषय की उपेक्षा नहीं की, जिसमें शैक्षिक अभिव्यक्ति और जीवन की क्रियाशीलता के गुण मौजूद थे। यही कारण है कि उनकी शिक्षा में राजनीति, समाज, व्यापार, साहित्य, कविता, वास्तुकला और मूर्तिकला को उचित स्थान दिया गया। उनका एकमात्र उद्देश्य था—इन सभी विषयों में जीवन का नया संचार करके उनको एक नया रूप देना। वे इनको इतना अधिक विकसित कर देना चाहते थे कि इनके माध्यम से श्रेष्ठ मानवता और आत्मा की पूर्णता का प्रकाश बिल्कुल स्पष्ट रूप से देखा जा सके। इस प्रकार, उनकी शिक्षा का चरम लक्ष्य—सम्पूर्ण मानव-जाति का सर्वाङ्गीण विकास करके आध्यात्मिक आधार पर विश्व के समस्त राष्ट्रों की स्थापना करना था।

शिक्षा-दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त या आवश्यक तत्त्व
Basic Principles or Essential Features of Educational Philosophy

1. शिक्षा का माध्यम मातृभाषा और शिक्षा का केन्द्र बालक होना चाहिए।
2. शिक्षा का मुख्य आधार—ब्रह्मचर्य और शिक्षा के विषय रोचक होने चाहिए।
3. शिक्षा, बालक की मनोवृत्तियों और मनोवैज्ञानिक परिस्थिति के अनुकूल होनी चाहिए।
4. शिक्षा में धर्म को स्थान देना चाहिए, क्योंकि ऐसा न करने से भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन मिलता है।
5. शिक्षा को व्यक्ति में निहित समस्त ज्ञान का उद्घाटन करना चाहिए।
6. शिक्षा को बालक का शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक, आध्यात्मिक और संवेगात्मक विकास करके उसे 'पूर्ण मानव' बनाना चाहिए।

7. शिक्षा को बालक की नैतिकता का विकास करना चाहिए और उसके व्यावहारिक जीवन को सफल बनाना चाहिए।
8. शिक्षा को व्यक्ति में निहित समस्त शक्तियों का इस प्रकार विकास करना चाहिए कि वह उनसे पूर्ण रूप से लाभान्वित हो।
9. शिक्षा को चेतना का विकास, संस्कार और रूपान्तर करना चाहिए, क्योंकि चेतना ही परम सत्ता और सृष्टि का आधारभूत सत्य है।
10. शिक्षा को बालक का मित्र और पथ-प्रदर्शक होना चाहिए और उसे बालक की शारीरिक शुद्धि की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए।

शिक्षा का अर्थ : Meaning of Education

श्री अरविन्द का शिक्षा के प्रति नया दृष्टिकोण है। उन्होंने घोषित किया है :—"सूचनाओं का संग्रह मात्र शिक्षा नहीं है। सूचनाएँ ज्ञान की नींव नहीं हो सकती हैं। वे अधिक से अधिक वह सामग्री हो सकती हैं, जिसके द्वारा जानने वाला अपने ज्ञान की वृद्धि कर सकता है अथवा वे वह बिन्दु है, जहाँ से ज्ञान को प्रारम्भ किया जाय या नई खोजों को निकालना शुरू किया जाय। वह शिक्षा, जो अपने को ज्ञान देने तक सीमित रखती है, शिक्षा नहीं है।"

श्री अरविन्द ने शिक्षा को अति व्यापक और गतिशील रूप दिया है। उन्होंने इसकी व्याख्या प्राचीन भारतीय परम्पराओं के आधार पर की है। श्री अरविन्द का कहना है :—"शिक्षा—मानव के मस्तिष्क और आत्मा की शक्तियों का निर्माण करती है। यह ज्ञान, चरित्र और संस्कृति का उत्कर्ष करती है।"

"Education is the building of the power of the human mind and spirit. It is the evoking of knowledge, character and culture."—**Shri Aurovindo.**

शिक्षा के उद्देश्य : Aims of Education

श्री अरविन्द ने शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य बताये है :—

1. बालक की शारीरिक शुद्धि करना और उसके शरीर का पूर्ण तथा उत्तम विकास करना।
2. बालक की चित्त-सम्बन्धी क्रियाशीलता को समुन्नत करके उनके अन्तःकरण का विकास करना।
3. बालक की स्नायु-शुद्धि, चित्त-शुद्धि और मानस-शुद्धि करके उसकी इन्द्रियों के उचित प्रयोग का विकास करना।
4. बालक की अभिरुचियों के अनुसार उसकी स्मृति, कल्पना, चिन्तन और निर्णय-शक्ति का विकास करके उसका मानसिक विकास करना।
5. बालक की प्रकृति, आदतों और भावनाओं को शुद्ध और सुन्दर बना

कर उसके हृदय का परिवर्तन करना और उसकी नैतिकता का विकास करना।

6. बालक की 'वैयक्तिक और प्रच्छन्न शक्ति' (Individuality & Potentiality) को पूर्णता की ओर अग्रसर करके उसका आध्यात्मिक विकास करना।
7. बालक को तथ्य संग्रह करने और निष्कर्ष निकालने का प्रशिक्षण देकर उसकी तर्कशक्ति का विकास करना।

पाठ्यक्रम : Curriculum

श्री अरविन्द ने बालक का नैतिक, भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास करने के लिए शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर पाठ्यक्रम के जो विषय निर्धारित किये हैं, वे इस प्रकार हैं :—

(1) प्राथमिक शिक्षा – मातृभाषा, अंग्रेजी, फ्रेंच, सामान्य विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, गणित और चित्रकला।

(2) माध्यमिक व उच्च माध्यमिक शिक्षा—मातृभाषा, अंग्रेजी, फ्रेंच, गणित, सामाजिक अध्ययन, भौतिक-शास्त्र, रसायन-शास्त्र, जीव-विज्ञान, वनस्पति-विज्ञान, स्वास्थ्य-विज्ञान, भूगर्भ-विज्ञान और चित्रकला।

(3) विश्वविद्यालय-शिक्षा—भारतीय व पाश्चात्य दर्शन, मनोविज्ञान, समाज-शास्त्र, सभ्यता का इतिहास, अंग्रेजी साहित्य, गणित, भौतिक-शास्त्र, रसायन-शास्त्र, विज्ञान का इतिहास, फ्रेंच साहित्य, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, जीवन का विज्ञान (Science of Ltfe) और विश्व-एकीकरण (World Integration)।

शिक्षण-विधि : Method of Teaching

श्री अरविन्द—'शिक्षण की क्रमिक विधि' (Successive Method of Teaching) के पक्ष में हैं। इस विधि में, जैसा कि आजकल है, बालक को एक समय में अनेक विषयों की शिक्षा नहीं दी जाती है। इसके विपरीत, उसे केवल एक या दो विषयों की शिक्षा दी जाती है। जब वह इन विषयों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लेता है, तब इसी प्रकार उसे अन्य विषयों की शिक्षा दी जाती है।

श्री अरविन्द ने अपनी 'क्रमिक शिक्षण-विधि' को निम्नलिखित शिक्षण-सिद्धान्तों पर आधारित किया है :

1. करके सीखना।
2. बालक का सहयोग।
3. बालक की स्वतन्त्रता।
4. प्रेम व सहानुभूति का प्रदर्शन।
5. बालक की रुचियों का अध्ययन।
6. शिक्षा का माध्यम—'मातृभाषा'।

7. बालक के निजी प्रयास व निजी अनुभव को प्रोत्साहन ।
8. विषयों की प्रकृति के अनुसार बालक की शक्तियों का प्रयोग ।

शिक्षक का स्थान : Place of the Teacher

श्री अरविन्द के अनुसार—शिक्षा में अध्यापक को निर्देशक, पथ-प्रदर्शक और सहायक के रूप में कार्य करना चाहिए । वह मौन रूप से बालकों की अभिरुचियों का अध्ययन करके और उन अभिरुचियों के अनुसार बालकों के लिए शिक्षा की सामग्री का संकलन तथा प्रस्तुतीकरण करे । उसे स्वयं बालकों को ज्ञान देने का प्रयास नहीं करना चाहिए और न उन पर वाह्य ज्ञान को लादना ही चाहिए । उसे तो यह प्रयत्न करना चाहिए कि बालक अपनी अभिरुचियों के अनुसार ज्ञान का अर्जन करते हुए 'स्व-शिक्षा' (Self-Education) के पथ पर अग्रसर हों । इस प्रकार, श्री अरविन्द ने अध्यापक को शिक्षा में गौण स्थान दिया है ।

श्री अरविन्द का कथन है :—"अध्यापक, निर्देशक या स्वामी नहीं है । वह *सहायक और पथ-प्रदर्शक है । उसका कार्य—सुझाव देना है, न कि ज्ञान को लादना ।* **वह वास्तव में छात्र के मस्तिष्क को प्रशिक्षित नहीं करता है । वह छात्र को केवल यह बताता है कि वह अपने ज्ञान के साधनों को किस प्रकार समृद्ध बनाये । वह छात्र को सीखने की प्रक्रिया में सहायता और प्रेरणा देता है ।** *वह छात्र को ज्ञान नहीं देता* **है । वह उसे यह बताता है कि वह अपने-आप किस प्रकार ज्ञान प्राप्त करे । वह बालक के अन्दर निहित ज्ञान को बाहर नहीं निकालता है । वह उसे केवल यह बताता है कि ज्ञान कहाँ है और उसको बाहर आने के लिए किस प्रकार अभ्यस्त किया जा** *सकता है ।"*

बालक का स्थान : Place of the Child

श्री अरविन्द ने बालक को शिक्षा में प्रमुख स्थान दिया है । उनके विचारानुसार बालक का विकास उसकी प्रकृति, अभिरुचि, स्वभाव तथा धर्म के अनुकूल ही किया जाना चाहिए । वह शिक्षा बालक के लिए निरर्थक है, जो पूर्व निर्धारित गुणों, आदर्शों, भावनाओं और विशेषताओं के अनुसार आयोजित की जाती है । कारण यह है कि प्रत्येक बालक में व्यक्तिगत क्षमताएँ और विलक्षणताएँ होती हैं । यदि इनकी अवहेलना करके एक पूर्व सूची के अनुसार बालकों में *किन्हीं गुणों और आदर्शों* को उत्पन्न करने का प्रयास किया जाता है तो यह कार्य बालक के लिए अन्यायपूर्ण और अहितकर होता है ।

शिक्षा-दर्शन का मूल्यांकन
Estimate of Educational Philosophy

श्री अरविन्द ने अपने शिक्षा-दर्शन में मानव की आध्यात्मिक उन्नति पर बहुत अधिक बल दिया है, क्योंकि उनके विचार में आज के भौतिकवादी युग में इस उन्नति की अत्यधिक आवश्यकता है । आज के मानव का दृष्टिकोण पूर्णरूप से भौतिकवादी

है। उसका ध्यान सदैव अपनी भौतिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने में लगा रहता है। फलतः वह अपने मन की शान्ति और अपने अन्तर के वास्तविक आनन्द को खो चुका है। आज जो शिक्षा-प्रणाली हमारे देश में प्रचलित है, वह व्यक्ति की आध्यात्मिक उन्नति की ओर लेश-मात्र ध्यान न देकर, उसके भौतिकवादी दृष्टिकोण को प्रोत्साहन दे रही है। परिणामतः व्यक्ति का आध्यात्मिक विकास रुक गया है और उसके अन्दर की दिव्य ज्योति बुझ गई है।

प्रचलित शिक्षा के उपयुक्त दोषों को देखकर श्री अरविन्द का हृदय क्षोभ से भर गया है। उनके क्रान्तिकारी मस्तिष्क मे इस शिक्षा के विरुद्ध प्रतिक्रिया हुई। फलतः उन्होंने नये सिद्धान्तों पर आधारित शिक्षा का एक नया रूप अपने देशवासियों के सामने प्रस्तुत किया। उन्होंने बताया कि विदेशी शिक्षा-पद्धति का अनुकरण करना भारतीय संस्कृत और परम्परा के लिए हितकर नही है। उन्होने कहा कि केवल उसी शिक्षा को प्राप्त करके भारतवासियों का कल्याण हो सकता है, जो भारत की आत्मा और उनकी वर्तमान तथा भावी आवश्यकताओं के अनुकूल हो।

अन्त, में हम कंगारली चरणपति के शब्दों में कह सकते हैं :—"श्री अरविन्द का शिक्षा-दर्शन मूलतः उनके आध्यात्मिक योग-दर्शन पर आधारित है। श्री अरविन्द ने अपनी दिव्य दृष्टि की शक्ति से मानव-जीवन के जिन गम्भीर तत्त्वों का उद्घाटन किया हैं, वे ही उसके शिक्षा-दर्शन की आधारशिला हैं। इसमें हमें समग्र मानव-जीवन व समग्र संसार के सर्वाङ्गीण रूप का आभास मिल जाता है। श्री अरविन्द ने जीवन और संसार के किसी पहलू को त्यागा नहीं है।"

UNIVERSITY QUESTION

1. Discuss Shri Aurobindo's views on :—(*i*) Aims of Education, (*ii*) Curriculum, and (*iii*) Methods of Teaching.

अग्रलिखित विषयों पर श्री अरविन्द घोष के विचारों का उल्लेख कीजिए—(i) शिक्षा के उद्देश्य, (ii) पाठ्यक्रम, और (iii) शिक्षण-विधि।

30

शंकराचार्य का वेदान्त-दर्शन व शिक्षा
SHANKARACHARYA'S VEDANTA PHILOSOPHY & EDUCATION

जिस समय से शंकराचार्य ने अपने वेदान्त-दर्शन को प्रतिष्ठित किया, उसी समय से उसने भारत के धार्मिक जीवन को रूपान्तरित करने में शक्तिशाली प्रभाव का कार्य किया।"

"Shankaracharya established his Vendanta philosophy, which from that time forth acquirted a dominant influence in moulding the religious life of India."—Dr. S. N. Das Gupta : *A History of Indian Philosophy*, Vol. I. p. 432.

जीवन-परिचय : Shankaracharya's Life (788-820)

भारतीय दर्शन ने शंकराचार्य के नाम से सम्पूर्ण विश्व में जितनी ख्याति अर्जित की है, उतनी किसी अन्य धर्माचार्य या धर्म-ग्रन्थ के नाम से नहीं की है। किन्तु, दुःख का विषय है कि शंकर का अवतार माने जाने वाले, इस अलौकिक प्रतिभा के महापुरुष के प्रादुर्भाव के विषय में विद्वानों में मतैक्यता नहीं है। किन्तु, पॉल डायसन के इस विचार से सभी विद्वान् एवं इतिहासकार सहमत हैं कि शंकराचार्य का जन्म सातवीं और आठवीं शताब्दी के मध्य केरल राज्य में मालाबार तट पर स्थित कालदी (Kaladi) नामक स्थान में हुआ था। सामान्य रूप से इनका जीवन-काल 788 ई० से 820 ई० तक माना जाता है।[1]

शंकराचार्य के पिता शिवगुरु, यजुर्वेदी ब्राह्मण थे। आठ वर्ष की अल्पायु में शंकर ने संन्यास ग्रहण कर लिया और वे नर्बदा के तट पर निवास करने वाले

1. P. L. Basudeva : *Two Hundred Great Indians*, p. 209.

प्रसिद्ध गोविन्द ऋषि के शिष्य बन गए। कुछ समय के बाद, वे वहाँ से पहले काशी और फिर बद्रिकाश्रम गए। वहाँ से लौटकर, उन्होंने काशी को अपना कर्म-क्षेत्र बनाया। कहा जाता है कि उन्होंने "ब्रह्मसूत्र" पर अपना प्रख्यात "भाष्य" 12 वर्ष की आयु में लिखा। उसके बाद उन्होंने "गीता" और दस "उपनिषदों" पर अपने "भाष्य" लिखे। इन्हीं को उनकी समुज्ज्वलतम कृतियाँ माना जाता है, पर उनके नाम से अनेक अन्य ग्रन्थों की भी रचना हुई और ये उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध है।

शंकर ने किसी नवीन दर्शन का संस्थापक होने का दावा नहीं किया। उन्होंने अद्वैतवाद का शक्तिशाली समर्थन किया। उन्होंने उपनिषदों की व्याख्या करके, जो वेदों के अंग हैं, वेदान्त-दर्शन को नवीन शक्ति प्रदान की। उन्होंने हिन्दू-धर्म मे प्रवेश करने वाली बुराइयों के विरुद्ध झंडा खड़ा किया और सम्पूर्ण देश के एक कोने से दूसरे कोने तक भ्रमण किया। उन्होंने सर्वत्र अन्य धार्मिक सम्प्रदायों के नेताओं को, जो उनके विरोधी थे, शास्त्रार्थ में पराजित करके, वेदान्त-दर्शन को प्रतिष्ठित किया।[1]

शंकराचार्य केवल महान् विचारक और व्याख्याकार ही नहीं, अपितु सुयोग्य आयोजक भी थे। इसके जीवित प्रमाण हैं, उनके द्वारा स्थापित किए जाने वाले अग्रलिखित चार मठ, जो आज भी हिन्दू-धर्म के आधार-स्तम्भ माने जाते है :—मैसूर मे श्रीनगर (Srinagar), काठियावाड़ में द्वारका, उड़ीसा में पुरी और हिमालय की हिम-आच्छादित पर्वत-शृंखलाओं में बद्रीनाथ। 32 वर्ष की अल्प आयु में इस महान् आचार्य, चिन्तक, सन्यासी और अलौकिक महापुरुष ने केदारनाथ में अपने नश्वर शरीर का परित्याग करके, अमरत्व प्राप्त किया।[2]

शंकराचार्य का दर्शन

Shankaracharya's Philosophy

शंकराचार्य के दर्शन का केन्द्रीय विषय यह है कि सम्पूर्ण सृष्टि, माया है, उसकी रचना करने वाला ब्रह्म है और केवल ब्रह्म ही अन्तिम एवं निरपेक्ष सत्य है। इस सदर्भ में डा० दास गुप्ता ने लिखा है :—"शंकर के दर्शन में मुख्य बल, ब्रह्म पर है, जो शुद्ध विचारों की पूर्णता, परमानन्द एवं परम सत्ता का स्वप्रकाशित ऐकात्म्य है।"

"The central emphasis of Shankara's philosophy is on Brahman, the self-revealed identity of pure consciousness, bliss and being."—**Dr. S. N. Das Gupta** : *A History of Indian Philosophy*, Vol, II. p. 46.

इसी केन्द्रीय विषय के आधार पर, शंकराचार्य ने अपने दार्शनिक विचारों का उद्घाटन किया है, जिनका संक्षिप्त परिचय निम्नांकित शीर्षकों के अतर्गत प्रस्तुत किया जा रहा है; यथा :—

1. **Dr. Das Gupta** : *op. cit.*; p. 432.
2. **P. L. Basudeva** : *op. cit.*, p. 211.

1. मुख्य विचार : Main Idea—शंकराचार्य के वेदान्त दर्शन का मुख्य विचार—"तत् त्वम् असि", अर्थात् "वह तू है" और "अहं ब्रह्म अस्मि", अर्थात् "मैं ब्रह्म हूँ" में निहित है। वे जीव या आत्मा और ब्रह्म में कोई भेद नहीं करते है। उनके अनुसार, ये दोनों एक है। इस प्रकार, वे अद्वैतवाद की प्रतिष्ठा करते है। उनके विचार से आत्मा या जीव—ब्रह्म का अंश या अभिव्यक्ति नही है, वरन् पूर्णतः तथा निरपेक्षतः स्वय ही नित्य एव अखण्ड ब्रह्म है।

2. ब्रह्म : Brahman—शकराचार्य ने ब्रह्म के वास्तविक स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए दो प्रकार के लक्षणो को मान्यता प्रदान की है :—(1) स्वरूप लक्षण, और (2) तटस्थ लक्षण। 'स्वरूप लक्षण' पदार्थ के सत्य तात्विक रूप से अवगत कराता है। परन्तु, 'तटस्थ लक्षण' कुछ समय तक होने वाले आकस्मिक गुणों का निर्देश देता है। तैत्तिरीयोपनिषद के अनुसार, 'सत्य, ज्ञानमनन्तं ब्रह्म' अर्थात् सत्, चित् और आनन्द रूप—ब्रह्म के स्वरूप लक्षण है। परन्तु जब यही ब्रह्म, माया से सीमित हो जाता है, तो जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय का कारण हो जाता है। ब्रह्म के ये आकस्मिक गुण ही उसके तटस्थ लक्षण है। दूसरे शब्दो मे, स्वरूप लक्षण के अनुसार ब्रह्म विशेष्य रहता है और तटस्थ लक्षण के अनुसार विशेषण बन जाता है।

इस प्रकार, आचार्य ने इन लक्षणो के आधार पर ब्रह्म के दो रूप—निर्गुण या पर ब्रह्म तथा सगुण या अपर ब्रह्म बताए है। परन्तु, ये दोनों एक ही है। इनमें केवल दृष्टिकोण की भिन्नता है।

निर्गुण या पर ब्रह्म : Nirguna Brahman—परमार्थिक दृष्टि से ब्रह्म निर्गुण है। उसके ऊपर जीव या जगत् का कोई भी गुण, उपाधि एवं विशेषण आरोपित नही किया जा सकता है। शकराचार्य के अनुसार निर्गुण ब्रह्म समस्त गुणो, विशेषणो, आकारों तथा उपाधियो से रहित है। निर्गुण ब्रह्म अदृश्य है, क्योकि वह सबकी अन्तरात्मा है। इस रूप मे वह सबसे अधिक निश्चित है और उसका किसी के द्वारा खण्डन नही किया जा सकता है।

सगुण या अपर ब्रह्म : Saguna Brahman—व्यावहारिक दृष्टि से ब्रह्म सगुण है। विशुद्ध उपाधियो के संयोग से निर्गुण या पर ब्रह्म सगुण हो जाता है। जब शास्त्र द्वारा ब्रह्म मे गुणों, आकारो तथा उपाधियो का आरोपण किया जाता है, तब वहाँ ब्रह्म सगुण या अपर ब्रह्म हो जाता है। जब हमारा प्रयोजन ज्ञान न होकर उपासना होता है, तब यही होता है, अर्थात् हम सगुण ब्रह्म की कल्पना करते है। इस प्रकार, सगुण ब्रह्म की कल्पना उपासना के निमित्त व्यावहारिक दृष्टि से की गई है। अत: इसे उपास्य ब्रह्म भी कहा जाता है।

शकराचार्य का मत है कि एक ही विषय एक समय मे निर्गुण और सगुण, साकार या निराकार नही हो सकता है। अतः ब्रह्म स्वतः निर्गुण, निराकार, निरवयव तथा निर्विशेष है। जब उपासना के अभिप्राय से अविद्या (Avidya) या माया निर्गुण ब्रह्म में उपाधियो, विशेषणो तथा आकारो को आरोपित करती है, तब वह सगुण ब्रह्म

हो जाता है। ब्रह्म, उपाधियों के अधीन नहीं है। उसको उपाधियों एवं गुणों के अधीन मानना भ्रममात्र है। अविद्या या माया द्वारा आरोपित गुणों से उसका स्वरूप विकृत नहीं होता है।

3 माया : Maya—शंकराचार्य ने माया तथा अविद्या शब्दों को समानार्थी माना है। परन्तु बाद के दार्शनिकों ने इन दोनों में अन्तर बतलाया है। शंकराचार्य का मत है :—ईश्वर की बीजशक्ति का नाम 'माया' है। मायारहित होने पर ईश्वर में प्रवृत्ति नहीं होती है और न वह जगत् की सृष्टि करता है। यह अविद्यात्मिका बीज-शक्ति अव्यक्त कही जाती है। यह ईश्वर में आश्रित होने वाली महासुप्तिरूपणी है, जिसमें अपने स्वरूप को न पहचानने वाले संसारी जीव सोते रहते हैं।[1]

माया न तो सत् (Sat) है और न असत् (Asat)। इन दोनों से विलक्षण होने के कारण शंकर ने उसे अनिर्वचनीय कहा है। 'सत्' उसे कहते हैं जो सदैव एक ही प्रकार का हो और किसी भी ज्ञान से उसका विरोध न हो। इस दृष्टि से माया सत् नहीं है, क्योंकि ब्रह्म का ज्ञान हो जाने पर माया का ज्ञान असंगत या बाधित हो जाता है। ब्रह्मज्ञानी को माया का ज्ञान कभी नहीं होता है। अज्ञानी ही माया के जाल में फँसा रहता है। जब अन्य किसी ज्ञान के द्वारा पूर्व वस्तु या पदार्थ बाधित हो जाता है और उसकी प्रतीति नहीं होती है, तब उसे असत् मानना पड़ता है। इस दृष्टि से माया असत् नहीं है, क्योंकि असत् पदार्थ की कभी प्रतीति नहीं होती, परन्तु माया की प्रतीति अवश्यम्भावी है। आचार्य के अनुसार :—"माया, ईश्वर की अव्यक्त शक्ति है, जिसकी उत्पत्ति का पता नहीं चलता है। वह तीनों गुणों से युक्त अविद्या रूपणी है। उसका पता उसके कार्यों से चलता है। वही इस जगत् को उत्पन्न करती है।"

4. विद्या : Vidya—मनुष्य का लक्ष्य— मुक्ति अर्थात् सासारिक बन्धनों का नाश है। जगत् से जीव की मुक्ति, मनुष्य की आत्मा को ब्रह्म से अभिन्न पहचानने पर ही हो सकती है। अतः विद्या का सम्पूर्ण विषय-क्षेत्र आत्मा या ब्रह्म का ज्ञान है। शंकराचार्य के अनुसार आत्मा या ब्रह्म पर्यायवाची हैं। परन्तु ब्रह्म का ज्ञान दो प्रकार का है—(1) परमज्ञान या पराविद्या, तथा (2) निम्नज्ञान या अपरा विद्या।

पराविद्या का प्रयोजन, सत्य ज्ञान या सम्यग्दर्शन है और इसका एकमात्र फल, मुक्ति है। अपराविद्या का अभिप्राय, ब्रह्म ज्ञान या सत्य ज्ञान न होकर ब्रह्म की उपासना है और इस उपासना के सोपानों के अनुसार इसका फल कुछ कर्म-समृद्धि और कुछ क्रमिक मुक्ति है। अतः पराविद्या का विषय-क्षेत्र, निर्गुण ब्रह्म या परब्रह्म है और अपरा विद्या का विषय क्षेत्र, सगुण ब्रह्म या अपर ब्रह्म है।

5. आत्मा सम्बन्धी विचार : Views About Atman—हमें अपने चारों

---

1. "अविद्यात्मिका हि बीजशक्तिरव्यक्त शब्दनिर्देश्या परमेश्वराश्रया मायामयी महासुप्तिः यस्या स्वरूपप्रतिबोधः रहितः शेरते संसारिणो जीवा.।"

(शारीरिकभाष्य 1/4.3)

ओर सम्पूर्ण सत्ता में जगत् के समस्त नामों तथा रूपों में एक अविद्यामूलक भ्रम मिलता है। परन्तु, विश्व में एक वस्तु जिस पर ये विचार लागू नहीं होते हैं, वह हमारी आत्मा है। इस आत्मा को सिद्ध नहीं किया जा सकता है, क्योंकि यह प्रत्येक प्रमाण का मूलाधार है। शंकराचार्य ने *आत्मा के सच्चे स्वरूप को बताते हुए लिखा* है कि आत्मा ब्रह्म से भिन्न नहीं है, क्योंकि ब्रह्म के अलावा कुछ भी सत् नहीं है। यह ब्रह्म का विकार भी नहीं है, क्योंकि ब्रह्म निर्विकार है। यह ब्रह्म का अंश भी नहीं है; क्योंकि ब्रह्म निरवयव है। अतः आत्मा, ब्रह्म से अभिन्न है और हम में से प्रत्येक—पूर्ण, अखण्ड तथा निर्विकार ब्रह्म ही है।

परमार्थिक दृष्टि से आत्मा स्वरूपतः शुद्ध चैतन्य है, देश-रहित है। वह सर्वज्ञ, सर्वव्यापी और सर्वशक्तिमान है। वह न तो कर्त्ता है और न भोक्ता। व्यावहारिक दृष्टि से आत्मा, *हृदय में रहती है। उसका आकार मन के बराबर है।* वह उपाधियों के संयोग से कर्त्ता और भोक्ता हो जाती है।

6. जगत सम्बन्धी विचार : Views About World—आचार्य शंकर ने जीव और जगत् के सन्दर्भ में ब्रह्म को सत्य सत्ता और जगत को मिथ्या सिद्ध करने का प्रयास किया हैं। आचार्य शंकर के अनुसार :– **"जिस रूप में जो पदार्थ निश्चित होता है, यदि वह रूप सतत् समभाव से क़ायम रहे, तो उसे सत्य कहते हैं।"**

इस दृष्टि से जगत् की कोई भी वस्तु सत्य की कोटि मे नही आ सकती है, क्योकि जगत् प्रतिक्षण-परिणामी तथा नित्य परिवर्तनशील है। शंकर का कहना है कि जगत की प्रतीति, माया के कारण होती है। आगे चलकर वह स्वय *माया को असत्* भी मान लेते है। इस प्रकार, वे माया की केवल व्यावहारिक सत्ता को स्वीकार करते है और उसे अनिर्वचनीय कहकर चुप हो जाते है।

इस दृष्टि से जगत् की *व्यावहारिक सत्ता* सिद्ध है। *जगत् व्यावहारिक दृष्टि* से उतना ही ठोस एवं वास्तव है जितना कि अन्य कोई पदार्थ। परन्तु, जगत् की परमार्थिक सत्ता नही है। शंकर उसको मिथ्या मानते हैं, क्योंकि ब्रह्मज्ञानी को जगत् के मिथ्या तत्व का अनुभव होने लगता है और उस अवस्था में वह आवागमन के बन्धन से पूर्णतया मुक्त हो जाता है।

वेदान्त-दर्शन व शिक्षा
Vedanta Philosophy & Education

डा० दास गुप्ता के शब्दों में :—**"वेदान्त की केन्द्रीय दार्शनिक समस्या, ब्रह्म की धारणा है—उसके कार्यकारण का स्वरूप और माया, दृश्य जगत् के इन्द्रिय-गोचर संसार एवं विभिन्न व्यक्तियों से उसका सम्बन्ध।"**

"The central problem of the Vedanta is the conception of Brahman—the nature of its causality, its relation with *maya* and *the phenomenal world of world-appearance,* and with individuals."
—**Dr. Das Gupta :** *op cit*, Vol. II, p. 47.

उक्त उद्धरण इस बात का स्पष्ट संकेत देता है कि वेदान्त-दर्शन मे सम्पूर्ण शिक्षा का सम्बन्ध, ब्रह्म-ज्ञान की प्राप्ति से है। अतः वेदान्त-दर्शन में शिक्षा की रूपरेखा निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त की जा सकती है :—

शिक्षा का उद्देश्य : Aim of Education

वेदान्त-दर्शन के अनुसार शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य—बालक को अज्ञान से मुक्त करके, सत्य ज्ञान की प्रतीति कराना है। इसकी प्रतीति से वह विद्या तथा अविद्या में भेद करने में समर्थ हो सकता है। साथ ही, वह सत्य एव असत्य के भेद को समझ सकता है और अपने में निहित अनन्त शक्ति या आत्मा को पहचान सकता है। वह अविद्या को दूर करके पूर्ण अवस्था या मुक्ति या ब्रह्म और आत्मा की अभिन्नता को प्राप्त कर सकता है।

शंकराचार्य के विचार से आत्मा और ब्रह्म अभिन्न है। आत्मा सर्वज्ञ, सर्वव्यापी तथा सर्वशक्तिमान है। इस दृष्टि से, हममें से प्रत्येक पूर्ण, अखण्ड, निर्विकार तथा शक्तिमान है। परन्तु, हम अविद्या के कारण स्वय को पहचान नहीं पाते है और अपने को अज्ञानी और निर्बल पाते है। इसीलिए, हम विभिन्न दुःखो एवं कष्टो को भोगते हैं। शंकर के अनुसार पराविद्या द्वारा हम अपने को पहचानने में समर्थ हो सकते हैं और ब्रह्मज्ञानी हो सकते है। साथ ही मुक्ति प्राप्त कर सकते है।

ब्रह्म-ज्ञान का अधिकारी : Claimant of Brahma-Wisdom

डा० दास गुप्ता का कथन है :—"वेदान्त का अध्ययन, अधिक आयु के वही व्यक्ति कर सकते थे, जिनकी जीवन के सामान्य सुखों में कोई रुचि नहीं थी और जो पूर्ण मुक्ति के अभिलाषी थे।"

"The study of Vedanta was reserved for advanced persons who were no longer inclined to the ordinary joys of life but wanted complete emancipation."—**Dr. Das Gupta :** *op. cit.*, Vol. I, p. 436.

प्राचीन काल में प्रतिपादित किये जाने वाले उक्त सिद्धान्त को ध्यान में रखकर, शंकराचार्य ने ब्रह्मज्ञान के जिज्ञासु अथवा अधिकारी में चार गुणों (Qualifications) का होना अनिवार्य माना है; यथा :—

(i) नित्यानित्य-वस्तु-विवेक—ब्रह्म-ज्ञान के जिज्ञासु के लिए यह आवश्यक है कि वह नित्य और अनित्य वस्तुओं के बीच विवेकपूर्ण भेद कर सके। इसके अन्तर्गत शरीर एव आत्मा का भेद, आत्मा और ब्रह्म की अभिन्नता, जगत् एवं ब्रह्म के बीच भेद आदि में विवेक का प्रयोग समाहित है।

(ii) विरक्ति—विवेकपूर्ण ज्ञान-प्राप्ति के बाद भोगों का त्याग आवश्यक है। इसके अन्तर्गत अधिकारी से लोक और परलोक में भोगों के त्याग की अपेक्षा की जाती है।

(iii) संयम—इसके अन्तर्गत अधिकारी से ६ प्रकार के संयमों की अपेक्षा की जाती है। ये संयम हैं—शम, दम, उपरति, तितिक्षा, समाधान और ज्ञान तथा ज्ञानी जनों के प्रति श्रद्धा। शम का अर्थ है—मन का संयम; दम का अर्थ है—इन्द्रियों पर नियन्त्रण; उपरति का अर्थ है—यज्ञादि विहित कर्मों का त्याग तथा तितिक्षा का अर्थ है—सर्दी-गर्मी आदि कष्टों को सहन करने के योग्य बनना।

(iv) मुमुक्षा या संकल्प—इसके अन्तर्गत अधिकारी से यह अपेक्षा की जाती है कि वह लक्ष्य या मोक्ष की प्राप्ति के लिए दृढ़ संकल्प रखे। इसके अभाव में वह लक्ष्य की प्राप्ति में सफल नहीं हो सकता है।

अन्य वेदान्तियों ने उपर्युक्त के अलावा ज्ञान-प्राप्ति के दो और साधन बताये हैं। वे हैं—(1) कर्म, तथा (2) उपासना। कर्म, ज्ञान की उत्पत्ति में सहायक नहीं है, वरन् उसकी प्राप्ति में सहयोग देते हैं। ज्ञान के साधन के रूप में कर्म अंशतः बाह्य और अंशतः निकटस्थ या प्रत्यासन्न है। जीवनपर्यन्त ही इनका प्रयोग करना चाहिये। उपासना भी ज्ञान का साधन है। यह शास्त्रों के वचनों का भक्तिपूर्ण सतत चिन्तन है।

पाठ्यक्रम : Curriculum

शंकराचार्य के वेदान्त-दर्शन में सत्ता को तीन प्रकार का माना गया है :—(1) प्रतिभासिकी सत्ता, (2) व्यावहारिकी सत्ता, (3) परमार्थिकी सत्ता।

(अ) प्रतिभासिकी सत्ता—इसका अभिप्राय उस सत्ता से है, जो प्रतीतिकाल में सत्य मालूम पड़ती है, परन्तु बाद में उसका विरोध हो जाता है। उदाहरणार्थ—अन्धकार में पड़ी रस्सी को लोग सर्प समझ लेते हैं और भय के कारण दूर हट जाते है। परन्तु दीपक के प्रकाश में वे उसकी वास्तविकता से अवगत हो जाते हैं। अतः प्रकाश के आने से पूर्व का ज्ञान बाधित हो जाता है। इस प्रकार, इसके अन्तर्गत कल्पना, भ्रम तथा स्वप्न में प्रकट होने वाले अनुभव आते हैं।

(ब) व्यावहारिकी सत्ता—इसका अभिप्राय उस सत्ता से है, जो पदार्थ या वस्तु संसार की व्यवहार-दशा में सत्य प्रतीत होती है। यह सत्ता व्यवहार रूप में दिखाई देने वाले पदार्थों में निहित रहती है। परन्तु इन पदार्थों की सत्यता ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति पर नष्ट हो जाती है, उससे पूर्व नहीं।

(स) परमार्थिकी सत्ता—यह सत्ता वास्तविक सत्ता है। ऐसी सत्ता त्रिकाल में भी बाधित नहीं होती है। परमार्थिकी सत्ता एकमात्र ब्रह्म की है।

शंकराचार्य के अनुसार शिक्षा का पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिये जिसमें इन तीनों प्रकार की सत्ताओं से सम्बन्धित विषयों का समावेश हो। यद्यपि शंकराचार्य ब्रह्मज्ञान के अतिरिक्त और किसी ज्ञान को ग्राह्य नहीं समझते हैं, तथापि वे जगत-सम्बन्धी ज्ञान को व्यावहारिक दृष्टि से सत्य मानते है। आचार्य के अनुसार :—"वह सांसारिक ज्ञान, जिसमें जगत् को समस्त विषयों का मूल माना जाता है, निश्चित ही सत्य है।

जिस प्रकार कारण रूपी ब्रह्म की सत्ता त्रिकाल में रहती है, उसी प्रकार सत्ता रूपेण जगत् भी त्रिकाल में सत्य रहता है, क्योंकि कारण-कार्य अभिन्न है।"[1]

अतः अद्वैत-वेदान्त की दृष्टि से पाठ्यक्रम में आत्मिक तथा व्यावहारिक विषयों का समावेश होना चाहिये। यदि पाठ्यक्रम की विवेचना रुचि एवं संस्कारों के अनुसार की जाय, तो भी पाठ्यक्रम में परमार्थिक तथा व्यावहारिक विषयों का समावेश आवश्यक है, क्योंकि यदि कुछ बालक बाह्य रुचि वाले होते हैं तो कुछ आन्तरिक रुचि वाले। बाह्य रुचि वालों के लिये व्यावहारिक विषय और आन्तरिक रुचि वालों के लिये परमार्थिक विषयों की आवश्यकता है।

शिक्षण-विधियाँ : Methods of Teaching

शंकराचार्य ने ज्ञानप्राप्ति की क्रिया का 'विवेक-चूड़ामणि' तथा 'उपदेश-साहस्री' में वर्णन किया है। उन्होंने ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिये शिष्य को चार गुणों से सम्पन्न होना आवश्यक माना है, जिनका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। जब शिष्य इन समस्त गुणों से युक्त हो जाता है, तब वह वेदान्त-श्रवण का अधिकारी बन जाता है। इसके उपरान्त, शिष्य ब्रह्मवेत्ता गुरु की शरण में जाकर आत्मा से सम्बन्धित प्रश्न करता है। गुरु—ब्रह्म के स्वरूप का यथार्थ ज्ञान कराने के लिये अध्यारोप तथा अपवाद विधियों का प्रयोग करता है।

(अ) अध्यारोप-विधि—इस विधि के द्वारा जगत् के भीतर से ब्रह्म के तत्व का अभ्यास कराया जाता है। इसके द्वारा शिष्य के समक्ष यह प्रस्तुत किया जाता है कि आत्मा ही शरीर है आत्मा ही मन है; आत्मा ही बुद्धि है; आत्मा ही समस्त पदार्थ हैं।

(ब) अपवाद-विधि—इसके अन्तर्गत युक्ति के आधार पर यह सिद्ध किया जाता है कि आत्मा न तो शरीर है, न मन है, न बुद्धि है। वह इन सबसे भिन्न है। इस प्रकार, अपवाद-विधि में आरोपित धर्म या गुणों या विशेषणों को धीरे-धीरे हटाया जाता है। इस प्रकार, हटाते-हटाते जो शेष रह जाता है, वही आत्मा का सच्चा या वास्तविक स्वरूप रह जाता है।

वस्तुतः ये दोनों विधियाँ एक ही विधि के दो अंग हैं। गुरु इससे शिष्य को ब्रह्म का यथार्थ ज्ञान कराता है। आज भी इस विधि का प्रयोग बीजगणित में अज्ञात-राशि के मूल्य एवं रूप को जानने के लिये किया जाता है।

बालक : Child

अद्वैत-वेदान्त के अनुसार प्रत्येक बालक अनन्त-शक्ति तथा अनन्त-ज्ञान से युक्त है। परन्तु, बालकों में जो शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक आदि विभिन्नताएँ दिखाई

---

1. "यथा च करण ब्रह्म त्रिकालेषु सत्वं न व्यभिचरति, एवं कार्यमपि जगत्त्रिषु कालेषु सत्वं न व्यभिचरति।"—ब्रह्मसूत्र २।१।१६

पड़ती है, वे कर्म-जनित फलों की परिणाम हैं। वस्तुत: ये विभिन्नताएँ उनके तटस्थ लक्षण है, न कि उनके स्वरूप लक्षण। स्वरूप लक्षण की दृष्टि से वे सब समान हैं, एक है और उनकी सभी प्रकार की विभिन्नताएँ मिथ्या हैं। परन्तु, जब तक वे इस व्यावहारिक जगत् में निवास करते है, तब तक जगत् और उनका शरीर, सत्य माना जायेगा। यदि इनको सत्य स्वीकार किया जाता है, तो बालक के व्यक्तित्व के अग्रांकित पक्षों पर ध्यान देना आवश्यक है :—

(अ) बालक का नाम-रूप शरीर।

(ब) बालक का आत्मिक अंग।

(स) जगत या भौतिक एवं सामाजिक वातावरण जिसके द्वारा बालक का शरीर एवं मन प्रभावित होता है।

शिक्षक : Teacher

अद्वैत-वेदान्त के अनुसार, शिक्षक ब्रह्मज्ञानी होना चाहिये। तभी वह बालक को ब्रह्मज्ञान प्रदान कर सकता है। इस संसार में ऐसे बहुत ही कम शिक्षक मिलेंगे, जिन्होंने ब्रह्मसत्ता की अनुभूति कर ली हो। अतः व्यावहारिक दृष्टि से ऐसे शिक्षक की आवश्यकता है, जो अपने धर्म को जानता हो और उसके निर्वाह के लिये सदैव तत्पर रहता हो। साथ ही, वह बालक के व्यक्तित्व का आदर करे और अध्ययन तथा अध्यापन में रत रहे।

अनुशासन : Discipline

वेदान्त में बाल-प्रकृति की चार अवस्थाओं—(1) क्षिप्त, (2) विक्षिप्त, (3) मुधा, तथा (4) एकाग्रता का वर्णन किया गया है। प्रथम अवस्था मे बालक पूर्णत: इन्द्रियों का दास रहता है। दूसरी अवस्था में वह सीमित रूप से इन्द्रियों को नियंत्रित करने में सफल हो जाता है। तीसरी अवस्था में उसकी एकाग्रता और बढ जाती है। चौथी अवस्था में वह स्वयं को नियामक एव नियन्ता मानने लगता है। इस अवस्था मे वह अपनी इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि पर आत्मा का नियन्त्रण कायम करने में समर्थ होता है।

शंकराचार्य, योगाभ्यास द्वारा इन्द्रियों को नियन्त्रित करने पर बल देते हैं। बालक या शिष्य इसके माध्यम से एकाग्रचित्त होकर ज्ञान की प्राप्ति करने में समर्थ होगा। साथ ही, वह नैतिक जीवन के लिये सामाजिक कर्त्तव्यों—सयम, दान, त्याग, तपस्या आदि के निर्वाह पर भी बल देते है।

उपसंहार

हमने उपरिअंकित पंक्तियों मे शंकराचार्य के वेदान्त-दर्शन और तत्सम्बन्धी शिक्षा-विषयक विचारों का विवेचन प्रस्तुत किया है। उनके दर्शन के दो मूल सिद्धान्त हैं। पहला सिद्धान्त यह है :—"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या", अर्थात् ब्रह्म ही सत्य है और

जगत् मिथ्या है। सत्य का आशय तीनों कालों में रहने वाली वस्तु है। दूसरा सिद्धान्त यह है :—ब्रह्म के दो स्वरूप है, सगुण और निर्गुण। माया विशिष्ट ब्रह्म सगुण है और यही ईश्वर है। निर्गुण ब्रह्म, माया के सम्बन्ध से रहित, व्यापक, सर्वश्रेष्ठ, अखण्ड और सच्चिदानन्द स्वरूप है। अपने इन सिद्धान्तों द्वारा शंकराचार्य ने ब्रह्म को परम और अन्तिम सत्य बताया है, जो विभिन्न व्यक्तियों में विभिन्न प्रतीत होता है। यही उनके दर्शन का आधारभूत विचार है। अपने इस दर्शन के प्रतिपादन में उनको अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई और इसलिए हिन्दू-विचार एवं धर्म पर उनका बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। इसकी पुष्टि में, डा० दास गुप्ता के अग्रांकित शब्द अवलोकनीय है :—
"शंकराचार्य को अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई। हिन्दू-विचार और धर्म पर उनका प्रभाव इतना अधिक हो गया कि उनको कुछ समय के पश्चात् दैवी शक्ति या अवतार के समान माने जाने लगा।"

"Shankararchaya achieved remarkable success. His influence on Hindu thought and religion became so great that he was regarded in later times as being almost a divine person or an incarnation."—**Dr. Das Gupta** : *op. cit.*, Vol. I, p. 437.

UNIVERSITY QUESTION

1. Evaluate Shankaracharya's Vedanta philosophy and throw light on education as revealed in this philosophy.

शंकराचार्य के वेदान्त-दर्शन का मूल्याकन कीजिए और इस दर्शन मे निहित शिक्षा पर प्रकाश डालिए।

खण्ड छः

शिक्षा के सामाजिक आधार
SOCIOLOGICAL BASES OF EDUCATION

"सम्पूर्ण शिक्षा, व्यक्ति द्वारा प्रजाति की सामाजिक चेतना में भाग लेने से प्रारम्भ होती है। यह प्रक्रिया जन्म के समय से अचेतन रूप में शुरू हो जाती है और क्रमिक रूप से व्यक्ति की शक्तियों को नवीन रूप प्रदान करने लगती है। साथ ही, यह उसकी चेतना को संतृप्त, उसकी आदतों का निर्माण, उसके विचारों को प्रशिक्षित तथा उसकी भावनाओं एवं सवेगों को जाग्रत करती है। इस अचेतन शिक्षा द्वारा व्यक्ति धीरे-धीरे मानव-जाति द्वारा सग्रहीत बौद्धिक एवं नैतिक साधनों में भाग लेने लगता है और सभ्यता की इस संग्रहीत पूँजी अर्थात् सामाजिक विरासत का उत्तराधिकारी बन जाता है। विश्व की सर्वाधिक औपचारिक तथा प्राविधिक शिक्षा इस सामान्य सामाजिक प्रक्रिया से कभी भी पृथक् नहीं हो सकती है।" —John Dewey

- शिक्षा का समाज-विज्ञान
  The Sociology of Education
- शिक्षा व समाज
  Education & Society
- शिक्षा व सामाजिक परिवर्तन
  Education & Social Change
- शिक्षा व संस्कृति
  Education & Culture
- भारतीय समाज का स्वरूप
  Nature of Indian Society
- बालक के विकास पर भारतीय समाज का प्रभाव
  Impact of Indian Society on the Development of Child
- बालक का समाजीकरण
  Socialization of Child
- विद्यालय व समुदाय
  School & Community

31

शिक्षा का समाज-विज्ञान

THE SOCIOLOGY OF EDUCATION

"शिक्षा का समाज-विज्ञान—शिक्षा के एक पहलू का बहुत-कुछ नया नाम है, जिससे शिक्षक को किसी-न-किसी रूप में सदैव प्रयोजन रहा है।"

"The sociology of education is a fairly new name for an aspect of education, which has always been the concern of the educator in one form or another."—**A. K. C. Ottaway** : *Education & Society*. p. 1.

विषय-प्रवेश

शिक्षा का अध्ययन अनेक और विभिन्न दृष्टिकोणों से किया जा सकता है। कुछ विद्वान् इसका अध्ययन समाज के दृष्टिकोण से करते है और इसके सामाजिक पहलू पर बल देते है। इस अध्ययन के लिए 'शिक्षा' और 'समाज-विज्ञान'—दोनों की सहायता ली जाती है। इन दोनों के सम्मिलित या समन्वित रूप को शिक्षा का 'समाज-विज्ञान' या 'शैक्षिक समाज-विज्ञान' कहा गया है। रोसेक ने लिखा है :— "समाज-विज्ञान और शिक्षा को सम्मिलित करके, यह नया विज्ञान बन गया है और बहुत अनेक विरोधी नामों से पुकारा जाता है; जैसे—'शिक्षा का समाज-विज्ञान', 'सामाजिक शिक्षा', 'समाज और शिक्षा' या 'नागरिक और चारित्रिक शिक्षा'।"

"It has become the new science uniting sociology and education, and is known under several often conflicting terms, such as 'The Sociology of Education', 'Social Education', 'Society and Education', or 'Civic & Character Education.'"—**Joseph S. Roucek** : *Sociological Foundations of Education*, p. 1.

उपर्युक्त नामों में सबसे अधिक प्रचलित नाम 'शैक्षिक समाज-विज्ञान' या 'शैक्षिक समाज-शास्त्र' (Educational Sociology) है। अतः छात्रों की सुविधा की दृष्टि से हम इसी नाम का प्रयोग करेंगे।

शैक्षिक समाजशास्त्र का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Educational Sociology

शैक्षिक समाजशास्त्र का जन्मदाता पेन (E. George Payne) को माना जाता है। न्यूयार्क विश्वविद्यालय के शिक्षा-विभाग में कार्य करते समय उसने 1928 में 'The Principles of Educational Sociology' नामक अपनी पुस्तक प्रकाशित की। इस पुस्तक में उसने समाजशास्त्र के सिद्धान्तों के अनुसार शैक्षिक प्रक्रिया की व्याख्या की। उसने बताया कि शिक्षा पर सामाजिक जीवन का, और सामाजिक जीवन पर शिक्षा का प्रभाव पड़ता है। मनुष्य के व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण विकास तभी हो सकता है, जब उस पर पड़ने वाले सामाजिक प्रभाव का अध्ययन किया जाय। शिक्षा में मनुष्य का सम्पूर्ण अनुभव आ जाता है और शिक्षा का मुख्य कार्य—समाज पर नियन्त्रण रखना है। सामाजिक प्रक्रिया के रूप में शिक्षा, समाज के दोषों को दूर कर सकती है और उपयोगी संस्थाओं एवं सामूहिक क्रियाओं को स्थायी रूप प्रदान करके समाज को अपने आदर्शों को प्राप्त करने में सहायता दे सकती है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर और ब्राउन (Brown) के मतानुसार, हम कह सकते हैं कि शैक्षिक समाजशास्त्र का सम्बन्ध समाज और व्यक्ति—दोनों से है। यह शास्त्र—सामाजिक संस्थाओं, सामाजिक समूहों, सामाजिक वर्गों, धार्मिक समूहों आदि का अध्ययन करता है। यह समाज की आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक परिस्थितियों का अध्ययन करता है। यह इस बात का भी अध्ययन करता है कि समाज के इन सब अंगों और परिस्थितियों का मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास, सामाजिक जीवन और सामाजिक सम्बन्धों पर क्या प्रभाव पड़ता है। इन तीनों अध्ययनों के आधार पर शैक्षिक समाजशास्त्र—शिक्षा के उद्देश्यों, विधियों, संस्थाओं, पाठ्यक्रम, प्रशासन आदि के स्वरूपों को इस प्रकार निश्चित करता है कि समाज और व्यक्ति—दोनों का अधिकतम हित और प्रगति हो सके।

हम शैक्षिक समाजशास्त्र के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ दे रहे हैं, यथा :—

1. ओटावे :—"शिक्षा के समाज-विज्ञान की परिभाषा संक्षिप्त रूप में शिक्षा और समाज के सम्बन्धों के अध्ययन के रूप में की जा सकती है।"

"The sociology of education may be defined briefly as a study of the relation between education and society."—**A. K. C. Ottaway** : *op. cit.*, pp. 1 & 2.

2. गुड :—"शैक्षिक समाजशास्त्र इस बात का अध्ययन करता है कि व्यक्ति सामाजिक समूहों में किस प्रकार रहते हैं, इन समूहों में रहकर वे किस प्रकार की

शिक्षा प्राप्त करते हैं, और इन समूहों में कुशलतापूर्वक रहने के लिए उनको किस प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता है।"

"Educational Sociology is the scientific study of how people live in social groups, especially including the study of the education that is obtained by the living in the social groups, and the education that is needed by the members to live efficiently in the social groups"—Alvin Good : *Sociology & Education*, p. 25

3. पेन :—"शैक्षिक समाज-विज्ञान से हमारा अभिप्राय उस विज्ञान से है, जो संस्थाओं, सामाजिक समूहों और सामाजिक प्रक्रियाओं का, अर्थात् उन सामाजिक सम्बन्धों का वर्णन और व्याख्या करता है, जिनमें या जिनके द्वारा व्यक्ति अपने अनुभवों को प्राप्त और संगठित करता है।"

"By Educational Sociology, we mean the science which describes and explains the institutions, social groups, and social processes, that is, the *social relationships* in which or through which the individual gains and organizes his experiences."—E. George **Payne** : *Principles of Educational Sociology—An Outline*, p. 30.

शैक्षिक समाजशास्त्र के उद्देश्य
Aims of Educational Sociology

हैरिंगटन (Herrington) के अनुसार शैक्षिक समाजशास्त्र के उद्देश्य अग्रलिखित हैं :—

1. जनतन्त्रीय विचारधाराओं को समझना।
2. पाठ्यक्रम को सामाजिक रूप प्रदान करना।
3. समाज के सन्दर्भ में शिक्षक के कार्य को समझना।
4. सामाजिक तत्त्वों और व्यक्तियों पर उनके प्रभावों को समझना।
5. विद्यालय को प्रभावित करने वाले सामाजिक तत्त्वों को समझना।
6. सामाजिक प्रगति के साधन के रूप में विद्यालय के कार्य को समझना।
7. शिक्षा के औपचारिक और अनौपचारिक साधनों के सम्बन्ध में सांस्कृतिक, आर्थिक और सामाजिक प्रवृत्तियों को समझना।
8. उपर्युक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अनुसन्धान की विधियों और तर्कपूर्ण विचारों का प्रयोग करना।

शैक्षिक समाजशास्त्र का क्षेत्र
Scope of Educational Sociology

शैक्षिक समाजशास्त्र के क्षेत्र के सम्बन्ध में दो विद्वानों के विचार अग्रलिखित हैं :—

1. रोसेक :—"शैक्षिक समाजशास्त्र के क्षेत्र में सब सामाजिक प्रक्रियाएँ आ जाती हैं।" ("Educational Sociology covers all social processes.")

2. ब्राउन :—"शैक्षिक समाजशास्त्र—समाजशास्त्र के सिद्धान्तों को शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया पर लागू करता है।" ("Educational Sociology applies sociological principles to the whole process of education.")

उपर्युक्त विचारों से स्पष्ट हो जाता है कि शैक्षिक समाजशास्त्र का क्षेत्र—व्यापक और विस्तृत है। इसके अन्तर्गत जिन विषयों का अध्ययन किया जाता है, उनमें से अधिक महत्त्वपूर्ण निम्नांकित है :—

1. समाज में शिक्षक का स्थान और महत्त्व।
2. व्यक्ति और विद्यालय पर समाज का प्रभाव।
3. समाज की माँगें, आवश्यकताएँ और परिस्थितियाँ।
4. व्यक्ति और उसके सांस्कृतिक वातावरण की अन्तःक्रिया।
5. विद्यालय और समाज का अन्य संस्थाओं से पारस्परिक सम्बन्ध।
6. विद्यालय और सामाजिक जीवन द्वारा जनतन्त्रीय भावनाओं का विकास।
7. व्यक्ति और समाज की प्रगति के लिए पाठ्यक्रम में वांछनीय परिवर्तन।
8. समाज के जीवन में प्रेस, रेडियो, फिल्म, क्लब, परिवार, पुस्तकालय आदि का स्थान।
9. शिक्षक और छात्र के पारस्परिक सम्बन्ध और उनको प्रभावित करने वाली सामाजिक भावनाएँ।
10. सामाजिक प्रगति, सामाजिक प्रक्रिया, सामाजिक संगठन, सामाजिक नियन्त्रण और सामाजिक परिवर्तन।

शैक्षिक समाजशास्त्र का योगदान
Contribution of Educational Sociology

शैक्षिक समाजशास्त्र के योगदान की जितनी सराहना की जाय, उतनी ही कम है। इसने मानव-जीवन से सम्बन्धित अनेक कार्यों की व्याख्या की है; जैसे—जीविका का उपार्जन, बालकों का पालन-पोषण, अवकाश का सदुपयोग और धार्मिक एवं सामान्य सामाजिक क्रियाओं का महत्त्व। इसने शिक्षा को न केवल उसकी सीमाएँ बताई है, वरन् यह भी बताया है कि वह समाज के साधनों का उचित प्रयोग करके किस प्रकार अधिक प्रभावपूर्ण बन सकती है। इसने शिक्षा के औपचारिक साधनों का अनौपचारिक साधनों से सम्बन्ध स्थापित किया है। इसने बालक के विकसित होने वाले व्यक्तित्व पर समाज और संस्कृति के पड़ने वाले प्रभावों का वर्णन किया है।

इतना ही नहीं, शैक्षिक समाजशास्त्र यह भी बताता है कि विद्यालय के बाहर बालक का समाजीकरण किस प्रकार होता है, व्यक्ति पर समाज का शिक्षाप्रद प्रभाव किस प्रकार पड़ता है, और शिक्षा के कौन-से औपचारिक एवं अनौपचारिक साधन सामाजिक दृष्टिकोणों का निर्माण करते हैं। यह विद्यालय का समाज की अन्य संस्थाओं से सम्बन्ध स्थापित करता है। यह बताता है कि विद्यालय की औपचारिक शिक्षा, सामाजिक क्रियाओं से किस प्रकार सबल, निर्बल और रूपान्तरित होती है। यह बताता है कि विद्यालय का स्वरूप राष्ट्र, राज्य या समाज द्वारा किस प्रकार निश्चित होता है।

शैक्षिक समाजशास्त्र का यह योगदान उसकी भावी महानता का उज्ज्वल प्रतीक है। इसीलिए, जेलानी ने लिखा है :—"आज शैक्षिक समाजशास्त्री उज्ज्वल भविष्य के ऐसे श्रेष्ठ पथ पर स्थित हैं कि वे एक नए प्रकार की शिक्षा के विकास में अपूर्व योग दे सकते हैं, ऐसी शिक्षा, जो वास्तव में ऐसे नागरिकों का निर्माण करती है, जो महत्त्वपूर्ण सामाजिक कार्यों में भाग लेना और आनन्द लेना जानते हैं, और जिनमें विरोधी समूहों के प्रति सच्ची सहानुभूति होती है।"

"Educational sociologists today stand at the head of a great road of high promise that may contribute vitally to the development of a new kind of education, an education that actually develops citizens who know how to take part and delight in vital social participation and who have a truly sympathetic understanding of divergent groups."—**Leslie B. Zeleny** : *New Directions in Educational Sociology*, p. 340.

शिक्षा : सामाजिक विज्ञान के रूप में
Education as a Social Science

रोसेक के अनुसार :—"शिक्षा एक आधारभूत सामाजिक कार्य और सामाजिक प्रक्रिया का अंग है।" ("Education is fundamentally a social matter, a phase of the social process.") उसने आगे लिखा है कि यह एक विज्ञान है, *जिसका सम्बन्ध इस बात से है कि समाज के सदस्यों को सामाजिक जीवन के* लिए किस प्रकार शिक्षित और तैयार किया जाय, ताकि वे समाज के उद्देश्यों के अनुरूप कार्य कर सकें। इसी प्रकार, ओट्टावे ने शिक्षा को सामाजिक विज्ञान स्वीकार करते हुए लिखा है :—"शिक्षा समाज में होने वाली क्रिया है और इसके उद्देश्य एवं विधियाँ उस समाज के स्वरूप के अनुरूप होती हैं, जिसमें इसकी क्रिया होती है।"

इस प्रकार, उपर्युक्त विद्वानों के अनुसार, शिक्षा एक सामाजिक विज्ञान है। इस पक्ष में अग्रलिखित तथ्य प्रस्तुत किए जा सकते हैं :—

1. व्यक्ति व समूह के व्यवहार में परिवर्तन : Change in Behaviour of Person & Group—शिक्षा की प्रक्रिया, व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक चलती रहती है। शिक्षा उसके व्यवहार को परिवर्तित करती है। समाज के दूसरे व्यक्तियों से उनकी अन्त:क्रिया होती है। इसका प्रभाव दूसरे व्यक्तियों पर भी पड़ता है। फलस्वरूप, उनके व्यवहार में भी परिवर्तन होता है। ब्राउन का कथन है :—**"शिक्षा, चैतन्य रूप में एक नियन्त्रित प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में और व्यक्ति के द्वारा समूह में परिवर्तन किए जाते हैं।"**

"Education is the consciously controlled process whereby changes in behaviour are produced in the person and through the person within the group."—**Francis J. Brown.**

2. युवकों का प्रशिक्षण : Training of Youth—चार्टर्स (W. W. Charters) के अनुसार, शिक्षा एक सामाजिक साधन है। समाज इस साधन का प्रयोग युवकों को ऐसा प्रशिक्षण देने के लिए करता है, जिससे कि वे उसके आदर्शों के अनुसार कार्य करके उसको सन्तुष्ट करें।

3. समाज की प्रगति : Progress of Society—शिक्षा वह साधन है, जिसके द्वारा समाज के मनुष्यों और स्त्रियों में विचारों, आदर्शों, आदतों और दृष्टिकोणों में परिवर्तन करके समाज की प्रगति की जाती है। एलवुड के शब्दों में :—**"शिक्षा वह मुख्य साधन है, जिससे समाज सब प्रकार की महत्त्वपूर्ण सामाजिक प्रगति की आशा कर सकता है।"**

"Education is the chief means to which society must look for all substantial social progress"—**Charles A. Ellwood :** *Sociology of Modern Social Problems*, p. 362.

4. समाज का परिवर्तन : Modification of Society—समाज के स्वरूप में निरन्तर ऐसा परिवर्तन होता रहता है, जिसका व्यक्ति और समाज के हित से कोई निश्चित सम्बन्ध नहीं होता है। इस प्रकार का सम्बन्ध स्थापित करने में केवल शिक्षा ही सहायक हो सकती है। एलवुड का कथन है :—**"समाज का सर्वोत्तम परिवर्तन, व्यक्ति के स्वभाव में परिवर्तन करके किया जा सकता है; और ऐसा करने की सर्वोत्तम विधि, शिक्षा के द्वारा है।"**

5. समाज की स्थिरता : Stability of Society—ओशिया (M. V. O'Shea) का मत है कि शिक्षा—व्यक्तियों का मानसिक, व्यावसायिक, राजनीतिक और कलात्मक विकास करके न केवल समाज की अधःपतन से रक्षा करती है, वरन् उसको स्थिरता भी प्रदान करती है।

6 सामाजिक दोषों का सुधार : Amelioration of Social Ills—रोसेक ने लिखा है कि अन्य सामाजिक विज्ञानों की अपेक्षा शिक्षा में नैतिक, चारित्रिक और दार्शनिक पक्षों की प्रधानता होती है। अतः शिक्षा के क्षेत्र में "क्या है ?" और "यह

कैसे होता है ?" (What is & How it is works ?) की व्याख्या और वर्णन से अधिक माँग की जाती है। "इसका कारण यह है कि शिक्षा से अपने सामाजिक कार्य को करने और सामाजिक दोषों का सुधार करने के आधारों को प्रस्तुत करने की आशा की जाती है।"

7. समाज की सदस्यता की तैयारी : Preparation for Membership of Society—ओटावे का कथन है कि प्रारम्भ में बालक समुदाय के सदस्य होते है, समाज के नही। वे समाज के सदस्य तभी बनते है, जब वे उनके कार्यों और पूर्ण नागरिकों के रूप में अपने अधिकारो और कर्त्तव्यों से अवगत हो जाते हैं। शिक्षा इस कार्य को सम्पन्न करके उन्हें समाज की सदस्यता के लिए तैयार करती है।

8. शिक्षा की क्रिया : Activity of Education—ओटावे ने लिखा है कि शिक्षा का कार्य केवल विद्यालयों में दी जाने वाली औपचारिक शिक्षा तक ही सीमित नहीं रहता है, वरन् समाज की अन्य संस्थाएँ भी अनौपचारिक रूप से शिक्षा देने का कार्य करती हैं; उदाहरणार्थ—समाज, बालकों को खेल, अभिनय, संगीत, कला, धर्म आदि से सम्बन्धित कार्यों में भाग लेने का अवसर देकर उनके चरित्र और व्यक्तित्व का विकास करता है। इस प्रकार, शिक्षा एक सामाजिक क्रिया होने के कारण सामाजिक विज्ञान है।

9. शिक्षा की अचेतन प्रक्रिया : Unconscious Process of Education—ओटावे का कथन है कि हम शिक्षा को चेतन प्रक्रिया कहते हैं, पर यह बात सर्व-विदित है कि प्रत्येक व्यक्ति अचेतन रूप से अनेक बातें सीखता है; उदाहरणार्थ—बालक अचेतन रूप से दूसरो के व्यवहार का अनुकरण करके सामाजिक जीवन की आदतों को, जीवन की किसी निश्चित विधि को, और कुछ मूल्यो में विश्वास करना सीखता है। जब समाज में इस प्रकार उसके व्यक्तित्व का विकास अचेतन रूप से परिवर्तित होता रहता है, तो क्या इसको उसकी शिक्षा नहीं कहा जा सकता है ? इसको शिक्षा कहा जा सकता है, पर यह शिक्षा का सामाजिक स्वरूप है; और यही स्वरूप उसे सामाजिक विज्ञान के पद पर आसीन करता है।

10. समाज के शैक्षिक प्रभाव : Educative Influences of Society—ओटावे ने लिखा है कि स्कूलो और कॉलेजों में शिक्षक—बालकों को ज्ञान प्रदान करके उनके व्यवहार मे परिवर्तन करने का प्रयास करते हैं। पर यह कार्य समाज के अन्य व्यक्तियो और संस्थाओं द्वारा भी किया जाता है; उदाहरणार्थ—माता-पिता, बालक को खाना खाना, वस्त्र पहिनना, अच्छा व्यवहार करना और अनेक अन्य लाभ-प्रद बातें सिखाकर उसे उसकी संस्कृति से परिचित कराते है। इतना ही नही, बालक एक-दूसरे को सिखाते हैं, पादरी सिखाता है, पुलिसमैन सिखाता है, रेडियो सिखाता है, सिनेमा सिखाता है, सूचना प्रदान करके सरकारी कर्मचारी सिखाता है। ओटावे ने आगे लिखा है :—"समाज, शिक्षकों से भरा हुआ है। वे सब जान-बूझकर और

चेतन रूप में व्यक्तित्व से पूर्ण विकास के व्यापक अर्थ में और निर्देश के संकुचित अर्थ में शिक्षा की प्रक्रिया को जारी रखते हैं।"

इस प्रकार, समाज में शिक्षा की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है और बालक एवं वयस्क—सभी पर समाज के शैक्षिक प्रभाव पड़ते रहते है। फलस्वरूप, वे चेतन और अचेतन रूप में समाज से कोई-न-कोई शिक्षा ग्रहण करते हैं। इसीलिए, शिक्षा को समाज की अखण्ड इकाई और सामाजिक विज्ञान माना गया है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What do you understand by the sociology of education? Point out its aims and scope.

शिक्षा के समाज-विज्ञान से आप क्या समझते है? उसके उद्देश्यों और क्षेत्र का वर्णन कीजिए।

2. Discuss education as a social science.

सामाजिक विज्ञान के रूप में शिक्षा का विवेचन कीजिए।

32

शिक्षा व समाज
EDUCATION & SOCIETY

"शिक्षा-प्रणालियों और उन सामाजिक दशाओं में, जिनमें उनका सह-अस्तित्व रहा है, सम्बन्ध न होना असम्भव है।"

"There cannot fail to be a relationship between the systems of education and the social states with which they have co-existed."—**Herbert Spencer** : *Education, Intellectual, Moral & Physical*, p. 52.

विषय-प्रवेश

मनुष्य—सामाजिक प्राणी है। उसे समाज मे सफल जीवन व्यतीत करने के लिए दूसरे व्यक्तियों से अनुकूलन करना पड़ता है। साथ ही, उसे समाज के मूल्यों और मान्यताओं के अनुसार अपने व्यवहार में परिवर्तन करना पड़ता है। इन कार्यों में शिक्षा उनकी सहायता करती है। वह जिस समाज का सदस्य होता है, वही इस शिक्षा का स्वरूप निश्चित करता है। इस प्रकार, शिक्षा और समाज का सदैव से अति घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। इस सम्बन्ध का अध्ययन करने से पूर्व, समाज के अर्थ को समझ लेना आवश्यक जान पड़ता है।

समाज का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Society

मनुष्य ने अपने लम्बे इतिहास में एक संगठन का निर्माण किया है। इस संगठन में हमें कुछ कार्यों को करने की स्वतन्त्रता है, कुछ को करने का निषेध है, कुछ हमारे कर्त्तव्य हैं, और कुछ हमारे अधिकार हैं। इस संगठन में एक व्यवस्था है, जिसमें हमें एक निश्चित प्रकार से रहना और व्यवहार करना पड़ता है। दूसरे शब्दों

में, इस संगठन में रहने वाले व्यक्तियों के एक-दूसरे के साथ व्यवहार के कुछ सम्बन्ध होते हैं। मनुष्यों के जिस संगठन में ये सम्बन्ध पाये जाते हैं, उसी को 'समाज' कहते है। अधिक स्पष्ट शब्दों में, हम कह सकते हैं कि 'समाज'—मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों का नाम है।

ओटावे ने 'समाज' का अर्थ इन शब्दों में व्यक्त किया है :—"समाज एक प्रकार का समुदाय या समुदाय का भाग है, जिसके सदस्यों को अपने जीवन की विधि की सामाजिक चेतना होती है, और जिनमें सामान्य उद्देश्यों और मूल्यों के कारण एकता होती है। वे किसी-न-किसी संगठित ढंग से एक-साथ रहने का प्रयास करते हैं। किसी भी समाज के सदस्यों को अपने बच्चों का पालन-पोषण करने और शिक्षा देने की निश्चित विधियाँ होती हैं।"

"A society is a kind of community (or a part of a community), whose members have become socially conscious of their mode of life, and are united by a common set of aims and values They attempt to live together in some kind of organized way. The members of any society have a set of techniques for bringing up and educating their children."—A. K. C. Ottaway : *Education & Society*, p. 3.

शिक्षा का समाज में स्थान
Place of Education in Society

समाज में शिक्षा का स्थान बताते हुए डा० वेंकटरायप्पा ने लिखा है :—"शिक्षा, समाज के बालकों का समाजीकरण करके उसकी सेवा करती है। इसका उद्देश्य—युवकों को सामाजिक मूल्यों, विश्वासों और समाज के प्रतिमानों को आत्मसात् करने के लिए तैयार करना और उनको समाज की क्रियाओं में भाग लेने के योग्य बनाना है।"

"Education serves a society by socialising its children. It aims at preparing the youths to absorb the social values, beliefs and norms of the society and render them fit to participate in the activities of the society."—K. N. Venkatarayappa : *Education & Society in India*, p. 23.

डा० वेंकटरायप्पा ने आगे लिखा है कि शिक्षा, समाज के सदस्यों को अपने जीवन की समस्याओं का सामना करने में सहायता देती है। यह उनको बताती है कि उचित प्रकार से जीविका का उपार्जन करने के लिए स्वस्थ रहना आवश्यक है। इसलिए, यह उनको स्वास्थ्य के नियमों से अवगत कराती है और इस बात पर बल देती है कि स्वस्थ रहना—प्रत्येक व्यक्ति का अनिवार्य कर्त्तव्य है।

इसके अतिरिक्त, शिक्षा, समाज के सदस्यों को उपयुक्त व्यवसायों का चयन करने में सहायता देती है। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए समाज विभिन्न प्रकार की व्यावसायिक संस्थाओं का संचालन करता है। इतना ही नहीं, शिक्षा—समाज के सदस्यों को घर, विद्यालय और समुदाय में एक दूसरे के प्रति उचित व्यवहार करने का प्रशिक्षण देकर उनके जीवन में अनुकूलन स्थापित करती है और इस प्रकार समाज की प्रगति में योग देती है।

संक्षेप मे, हम कह सकते हैं कि शिक्षा ही समाज की प्रगति, विकास परिवर्तन और स्थिरता का मुख्य साधन है। समाज के लिए शिक्षा की सेवा कितनी महान् और अमूल्य है, इस सम्बन्ध में हार्न ने लिखा है :—"शिक्षा अतीत का चित्र प्रस्तुत करने का उत्तम कार्य करती है, और उस चित्र को प्रस्तुत करके अतीत को सुरक्षित रखती है, यह वर्तमान समय में भूतकाल की उपलब्धियों की रक्षा करने का उत्तम कार्य करती है; यह ज्ञान और शक्ति के वर्तमान संग्रह में वृद्धि करके, और इस प्रकार भविष्य को भूत से अच्छा बनाने की सम्भावना का सर्वोत्तम कार्य करती है।"

शिक्षा व समाज का सम्बन्ध
Relation between Education & Society

ओटावे के शब्दों में :—"किसी भी समाज में दी जाने वाली शिक्षा समय-समय पर उसी प्रकार बदलती है, जिस प्रकार समाज बदलता है।"

ओटावे के इस कथन से शिक्षा और समाज के घनिष्ठ सम्बन्ध पर प्रकाश पड़ता है। जैसा समाज का स्वरूप होता है, वैसा ही स्वरूप शिक्षा का भी होता है। इसका कारण बताते हुए ओटावे ने लिखा है कि शिक्षा—समाज के जीवन की सम्पूर्ण विधि पर आश्रित रहती है। अतः इस विधि के बदल जाने पर शिक्षा का बदल जाना स्वाभाविक है। यही कारण है कि विभिन्न प्रकार के समाजों में विभिन्न प्रकार की शिक्षा प्रदान की जाती है। ओटावे के इस कथन की पुष्टि निम्नांकित उदाहरणों से की जा सकती है :—

1. प्राचीन समाज : Ancient Society—प्राचीन यूरोपीय समाज मे धर्माधिकारियों की प्रधानता थी। वे धर्म और चरित्र पर अत्यधिक बल देते थे। अतः व्यक्ति को शिक्षा इसीलिए दी जाती थी, जिससे वह धार्मिक और चरित्रवान् बने। दूसरे शब्दों में, शिक्षा का स्वरूप पूर्णतया धार्मिक था।

2. मध्यकालीन समाज : Medieval Society—मध्यकालीन यूरोपीय समाज मे रोमन कैथोलिक धर्म की प्रधानता थी। इस धर्म के सिद्धान्तों पर सभी को विश्वास करना पड़ता था और कोई भी उनके सम्बन्ध में कोई प्रश्न नही पूछ सकता था। अतः शिक्षा के क्षेत्र में भी इन्हीं बातों का अनुसरण किया जाता था। शिक्षक जो कुछ बताता था, उसे छात्रों को मौन रूप से स्वीकार करना पड़ता था और वे अपनी जिज्ञासा को सन्तुष्ट करने के लिए प्रश्न पूछने के अधिकारी नही थे।

3. आधुनिक समाज : Modern Society—आधुनिक यूरोपीय समाज में प्रोटेस्टेन्ट धर्म की प्रधानता है। इस धर्म ने व्यक्तियों को तर्क और निर्णय करने का अधिकार दिया है। अतः बालकों को तर्क पर आधारित शिक्षा दी जाती है और उन्हें यह निर्णय करने का अधिकार है कि वे किस प्रकार की शिक्षा प्राप्त करें।

4. निरंकुश समाज : Despotic Society—प्राचीन और आधुनिक समय में ऐसे समाजों के उदाहरण मिलते हैं, जिन पर एक व्यक्ति का पूर्ण आधिपत्य रहा है। ऐसे समाज का शासक, भय और शक्ति का प्रयोग करके शासन करता है और छोटे-छोटे अपराधों के लिए मृत्युदण्ड देता है। ऐसे समाज में शिक्षा, बल और आदेश द्वारा प्रदान की जाती है और बालकों को छोटी-छोटी त्रुटियों के लिए शारीरिक दण्ड दिया जाता है। मुस्लिम-कालीन भारत का उदाहरण हमारे सामने है।

इतना ही नहीं, ऐसे समाज में शिक्षा का स्वरूप स्वयं शासक निश्चित करता है; उदाहरणार्थ—नैपोलियन के आदेशानुसार, फ्रांस में बालकों को ईसाई धर्म के सिद्धान्तों और शासक के प्रति भक्ति की शिक्षा दी जाती थी। इसी प्रकार, हिटलर की आज्ञा के अनुसार, जर्मनी में देश-प्रेम और राज्य के हित के लिए सभी प्रकार का बलिदान करने की शिक्षा प्रदान दी जाती थी।

5. जनतन्त्रीय समाज : Democratic Society—जनतन्त्रीय समाज में व्यक्ति का दमन नहीं किया जाता है। उसे अनेक प्रकार की स्वतन्त्रताएँ प्राप्त हैं, उसके कार्यों पर प्रतिबन्ध लगाने वाले नियम समाप्त कर दिये गये हैं और दण्ड-व्यवस्था में सुधार कर दिया गया है। इन सब बातों ने शिक्षा के स्वरूप को परिवर्तित कर दिया है। उसमें जनतन्त्रीय सिद्धान्तों को अपनाने का प्रयास किया जाता है, बालक की स्वतन्त्रता का दमन नहीं किया जाता है और उसे अपनी रुचि के अनुसार शिक्षा ग्रहण करने की अनुमति दी जाती है।

6. प्राचीन व आधुनिक भारतीय समाज : Ancient & Modern Indian Society—प्राचीन भारतीय समाज के संगठन का आधार—जातियाँ थीं। अतः व्यक्तियों को अपनी जातियों के अनुसार ही विभिन्न व्यवसायों की शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार था। इसके अतिरिक्त, आध्यात्मिक शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता था।

आज के भारतीय समाज में ये दोनों तथ्य अनुपस्थित है। किसी भी जाति या धर्म का व्यक्ति किसी भी प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर सकता है। इस शिक्षा का रूप—आध्यात्मिक न रहकर लौकिक हो गया है। व्यक्ति और समाज के सुख और समृद्धि के लिए विभिन्न उद्योगों और व्यवसायों की स्थापना आवश्यक समझी जा रही है। अतः उनसे सम्बन्धित शिक्षा का प्रसार किया जा रहा है।

7. समुदाय का पूर्ण जीवन : Whole Life of Community—ओटावे ने शिक्षा और समाज का सम्बन्ध एक और प्रकार से व्यक्त किया है। उसका कहना है कि जब व्यक्तित्व के विकास के रूप में व्यापक अर्थ में शिक्षा की परिभाषा की जाती

है, तब वह घर और विद्यालय मे और उनके बाहर भी होने वाली क्रिया हो जाती है । इस प्रकार, शिक्षा सम्पूर्ण समुदाय की क्रिया है । अपने कथन की पुष्टि में उसने जेफ्रेज के ये शब्द उद्धृत किए हैं :—"शिक्षा, वास्तव में, समुदाय के सम्पूर्ण जीवन के अलावा और कुछ नहीं है ।"

"Education is, in fact, nothing other than the whole life of a community."—M. G. V. Jeffreys : *Glaucon*, p. 71.

हम शिक्षा और समाज के सम्बन्ध के वर्णन को स्पेन्सर के इन शब्दो से समाप्त करते हैं :—"प्राचीन शिक्षा-प्रणाली अपनी समकालीन सामाजिक पद्धतियों के अनुरूप थी; और उसी प्रकार हमारी शिक्षा की आधुनिक प्रणालियाँ हमारी अधिक उदार धार्मिक और राजनीतिक संस्थाओं के अनुरूप हैं ।"

शिक्षा का समाज पर प्रभाव
Impact of Education on Society

समाज पर शिक्षा के प्रभाव का अग्रलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत वर्णन किया जा सकता है :—

(1) सामाजिक विरासत का संरक्षण : Preservation of Cultural Heritage—शिक्षा—संस्कृति और सभ्यता का संरक्षण करती है । प्रत्येक समाज के अपने रीति-रिवाज, परम्पराएँ, नैतिकता, विश्वास, धर्म आदि होते है; जिनको उस समाज के अति प्राचीन समय से लेकर आज तक अर्जित किया है । यदि शिक्षा इस सामाजिक विरासत को आने वाली पीढियो को हस्तान्तरित न करे, तो समाज का स्थायी रहना असम्भव हो जायगा ।

प्रत्येक समाज को अपनी संस्कृति और सभ्यता पर गर्व होता है । इसीलिए, वह उनको किसी भी प्रकार से नष्ट नहीं होने देता है । यह कार्य शिक्षा द्वारा ही सम्पन्न किया जाता है । अतः हम कह सकते है कि शिक्षा सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण करके समाज के अस्तित्व को बनाए रखती है ।

(2) सामाजिक सुधार व प्रगति : Social Reform & Progress—शिक्षा, समाज के सदस्यों को इस योग्य बनाती है कि वे समाज में प्रकट होने वाले दोषों की आलोचना करते है । इतना ही नहीं, वे उसके समक्ष नवीन विचार और कार्यक्रम प्रस्तुत करके उसे प्रगति की ओर ले जाने का प्रयास करते है ।

समाज की माँगें, मान्यताएँ और आवश्यकताएँ समय के साथ बदलती रहती हैं । इन्हीं के अनुसार समाज को भी बदलना आवश्यक है, अन्यथा वह स्थिर और गतिहीन हो जाता है । शिक्षा उसकी इस स्थिति से रक्षा करके उसका सुधार करती है और प्रगति भी । ड्यूवी (Dewey) का कथन है :—"शिक्षा में अति निश्चित और अल्पतम साधनों द्वारा सामाजिक और संस्थागत उद्देश्य के साथ-साथ, समाज के कल्याण, प्रगति और सुधार में रुचि का पुष्पित होना पाया जाता है ।"

अत: हम कह सकते हैं कि शिक्षा अपने प्रभाव द्वारा समाज की प्रगति करती है। वह इस कार्य को अपनी शिक्षा-संस्थाओं द्वारा करती है। ये संस्थाएँ समाज का नेतृत्व करके उसका सुधार करती हैं और उसे प्रगति की ओर ले जाती हैं।

(3) सामाजिक नियन्त्रण : Social Control—शिक्षा, समाज के विभिन्न दोषों, कुरीतियों और कुप्रथाओं के विरुद्ध जनमत का निर्माण करके उनको फैलने से रोकती है और उनका अन्त भी करती है। इस प्रकार, शिक्षा सामाजिक नियन्त्रण के लिए एक महत्त्वपूर्ण शस्त्र का कार्य करती है। अतः हम कह सकते हैं कि शिक्षा सामाजिक अव्यवस्था को दूर करके उपयुक्त सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करती है।

(4) सामाजिक परिवर्तन : Social Change—शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन में योग देती है; उदाहरणार्थ—नाज़ी जर्मनी में शिक्षा का प्रयोग बालकों के दृष्टिकोणों में परिवर्तन करके समाज में परिवर्तन करने के लिए किया गया। इस कार्य में सफलता प्राप्त होना, इस बात का प्रमाण है कि शिक्षा को समाज मे परिवर्तन करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में ओटावे (Ottaway) ने लिखा है :—"**यह बात सन्देहरहित है कि शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण कार्य करती है, पर इसका प्रभाव मुख्य न होकर गौण होता है।**"

(5) बालक का समाजीकरण : Socialization of Child—विद्यालय—*बालक को मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक विकास के लिए प्रेरणा देता है।* विद्यालय मे ही उस सामाजिक और सांस्कृतिक आदर्शों एवं मान्यताओं की शिक्षा प्राप्त होती है। ये दोनों बातें उसके सांस्कृतीकरण में योग देती हैं।

'सांस्कृतीकरण' का ही दूसरा नाम 'समाजीकरण' है। इसकी गति उस समय तीव्र हो जाती है जब बालक, विद्यालय में दूसरे बालकों के सम्पर्क में आता है। इस प्रकार, शिक्षा—विद्यालय के माध्यम से बालक को समूह के सम्पर्क में लाकर उसका समाजीकरण करती है। रोसेक के शब्दों में :—"**बालक का समाजीकरण बालकों के समूहों में सर्वोत्तम रूप में होता है और बालक दूसरे बालकों का सर्वोत्तम शिक्षक होता है।**"

"The socialization of the child is realized best in children's groups and the child is the best educator and teacher of other children."—**Joseph H. Roucek** : *Sociological Foundations of Education*, p. 24.

समाज का शिक्षा पर प्रभाव
Impact of Society on Education

शिक्षा पर समाज के प्रभाव का अग्रलिखित शीर्षकों के *अन्तर्गत वर्णन किया* जा सकता है :—

(1) समाज के स्वरूप का प्रभाव : Influence of the Nature of Society—समाज का स्वरूप, शिक्षा के ऊपर बहुत प्रभाव डालता है। समाज का जैसा स्वरूप होता है, वैसा ही स्वरूप उसकी शिक्षा का होता है; उदाहरणार्थ—अमरीका में समाज का स्वरूप लोकतन्त्रीय है। इसके अनुसार—शिक्षा में स्वतन्त्रता, समानता आदि को स्थान दिया गया है। विद्यालयों का संगठन एवं उनका वातावरण भी लोकतन्त्रीय आदर्शों के अनुसार निर्धारित किया गया है।

यदि समाज में तानाशाही व्यवस्था है, तो वहाँ की शिक्षा में अनुशासन आज्ञाकारिता आदि पर बल दिया जाता है और शिक्षा-संस्थाओं का संगठन एवं संचालन आधिकारिक ढंग से किया जाता है। नाजी जर्मनी और फ़ासिस्ट इटली में ऐसा ही था। इस प्रकार, हम कह सकते है कि समाज का स्वरूप, शिक्षा के स्वरूप को निर्धारित करता है।

(2) लोकतन्त्रीय समाज का प्रभाव : Influence of Democratic Society—वेंकटरायप्पा ने लिखा है कि जनतन्त्रीय समाजों ने अपने सदस्यों को शिक्षा का समान अवसर देने का अधिक-से-अधिक प्रयास किया है। इस उद्देश्य से भारत में 14 वर्ष तक की आयु के बालकों के लिए शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य बना दिया गया है।

इसी उद्देश्य से इङ्गलैंड में बालकों को 16 वर्ष की आयु तक माध्यमिक विद्यालयों में रखा जाता है। संयुक्त राज्य अमरीका में इसका रूप जूनियर कॉलेजों में अधिक-से-अधिक छात्रों को उत्तीर्ण करने में पाया जाता है। इसका परिणाम बताते हुए वेंकटरायप्पा ने लिखा है :—"यह मुख्यतः जनतन्त्रीय विचारों के कारण है, जिसके फलस्वरूप शिक्षा के स्तर अनिवार्य रूप से निम्न हो गये हैं, और आजकल यह स्थिति संसार के अनेक भागों में पाई जाती है।"

(3) सामाजिक परिवर्तनों का प्रभाव : Influence of Social Changes—समाज के परिवर्तनों का शिक्षा पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। जैसे-जैसे समाज की दशा में परिवर्तन होता जाता है, वैसे-वैसे शिक्षा का स्वरूप भी बदलता जाता है; उदाहरणार्थ—आज से कुछ समय पूर्व भारतीय समाज—बाल-विवाह, अस्पृश्यता आदि सामाजिक कुरीतियो से ग्रस्त था। समय के परिवर्तन के साथ समाज मे भी परिवर्तन हुए। समाज इन कुरीतियों को घृणा की दृष्टि से देखने लगा और उसने उनको समाप्त करने के लिए आन्दोलन प्रारम्भ किये। इन आन्दोलनों का शिक्षा पर भी प्रभाव पड़ा।

परिणामस्वरूप, प्रत्येक भारतीय को जाति, लिंग, धर्म आदि के भेदभाव के बिना शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त हुआ। साथ ही, सब व्यक्तियों को शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर प्रदान किये गये। ओटावे (Ottaway) का यह कथन पूर्णतया सत्य है :—"कभी-कभी यह कहा जाता है कि शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन

का एक कारण है। इसका विपरीत अधिक सत्य है। शैक्षिक परिवर्तन अन्य सामाजिक परिवर्तनों को प्रारम्भ करने के बजाय उनका अनुगमन करता है।"

(4) राजनीतिक दशाओं का प्रभाव : **Influence of Political Conditions**—समाज की राजनीतिक दशाओं का शिक्षा पर गहरा प्रभाव पड़ता है। शिक्षा-प्रणाली की व्यवस्था राजनीतिक व्यवस्था के अनुरूप ही की जाती है। किसी देश या समाज में शिक्षा की व्यवस्था कैसी होनी चाहिए। इसका उत्तर उस देश या समाज की राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप पर निर्भर करता है; उदाहरणार्थ—प्राचीन स्पार्टा में शिक्षा पूर्णतः राज्य के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता प्रदान करती थी। नाजियों और फासिस्टों ने शिक्षा का प्रयोग राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया। साम्यवादी देशों में शिक्षा पूर्णतः साम्यवादी सिद्धान्तों पर आधारित की जाती है।

जनतन्त्रीय प्रणाली का अनुसरण करने वाले देशों में राजनीतिक विचारधारा शिक्षा को स्पष्ट रूप से प्रभावित करती है; उदाहरणार्थ—स्वतन्त्रता से पूर्व भारत की अंग्रेजी सरकार सब व्यक्तियों को शिक्षा देने के पक्ष में नहीं थी। उसका उद्देश्य—राज्य के संचालन में सहयोग देने के लिए थोड़े से व्यक्तियों को शिक्षा प्रदान करना था। यही कारण था कि उसने 'निस्यन्दन सिद्धान्त' (Downward Filtration Theory) का अनुसरण किया। कम्पनी के संचालकों का विचार था :—"शिक्षा की प्रगति उसी समय हो सकती है, जब उच्च वर्ग के उन व्यक्तियों को शिक्षा दी जाय, जिनके पास अवकाश है।"

"The *improvements* of education are those which concern the education of the higher classes of persons possessing leisure."
—*Letter of the Court of Directors of the East India Company*, dated 29th September, 1830.

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् देश में प्रजातन्त्रीय शासन की स्थापना की गई और उसे सफल बनाने के लिए देश के सब व्यक्तियों को शिक्षा प्रदान करना आवश्यक समझा गया। अतः अब भारत का लक्ष्य—सब व्यक्तियों को बिना किसी भेद-भाव के जनतन्त्रीय आदर्शों और मूल्यों के अनुरूप शिक्षा प्रदान करना है।

(5) आर्थिक दशाओं का प्रभाव : **Influence of Economic Conditions**—शिक्षा पर समाज की आर्थिक दशाओं का गहरा प्रभाव पड़ता है। यदि समाज की आर्थिक दशा अच्छी है, तो वहाँ *अधिकाधिक विद्यालय स्थापित* किये जाते हैं और इनके पाठ्यक्रम को समाज की आर्थिक व्यवस्था को ध्यान में रखकर निर्धारित किया जाता है; उदाहरणार्थ—अमरीका आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न देश है। अतः वहाँ सार्वजनिक शिक्षा-प्रणाली का रूप अति विस्तृत है। वहाँ के स्कूलों और कॉलेजों की इमारतें इतनी भव्य हैं और उनके पाठ्यक्रमों में उन सब विषयों और *क्रियाओं को स्थान दिया गया है*, जो देश की आर्थिक दशा को अधिक उन्नतशील बनाने में सहायता दे सकते हैं।

अमरीका के विपरीत, हमारा देश है, जिसकी आर्थिक दशा अच्छी नहीं है। इस दशा मे उन्नति करने के लिए देश के प्राकृतिक साधनों का अधिकतम विकास करने और देश का औद्योगीकरण करने का निश्चय किया गया है। इस निश्चय ने शिक्षा को प्रभावित किया है। इसी के परिणामस्वरूप शिक्षा के व्यावसायिक, प्राविधिक, प्रौद्योगिक, वैज्ञानिक आदि पक्षो का अधिक-से-अधिक विकास करने का प्रयास किया जा रहा है। इस प्रकार, समाज की आर्थिक दशाओं का शिक्षा पर प्रभाव स्पष्ट हो जाता है।

(6) सामाजिक आदर्शों मूल्यों व आवश्यकताओं का प्रभाव : Influence of Social Ideals, Values & Needs—शिक्षा पर सामाजिक आदर्शों, मूल्यो और आवश्यकताओं का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। यही बातें शिक्षा के उद्देश्यों, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि, शिक्षक के स्थान आदि को निर्धारित करते हैं; जैसे—समाज के उद्देश्य, आदर्श आदि होते हैं, वैसे ही शिक्षा के भी होते हैं; उदाहरणार्थ—भारतीय समाज ने जनतन्त्रीय आदर्श को स्वीकार किया है। फलस्वरूप, उसकी यह माँग है कि शिक्षा द्वारा ऐसे नागरिकों का निर्माण किया जाय, जो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नेतृत्व ग्रहण कर सकें। इस बात पर बल देते हुए 'विश्वविद्यालय शिक्षा-आयोग' ने लिखा है :—**"विश्वविद्यालयों को छात्रों को राजनीति, प्रशासन व्यवसायों, उद्योग और वाणिज्य में नेतृत्व ग्रहण करने के लिए शिक्षा देनी चाहिए।"** 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' ने भी नेतृत्व के लिए शिक्षा पर बल दिया है।

उक्त उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम मे उससे सम्बन्धित विषयों, क्रियाओं और विधियो को स्थान दिया गया है। इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि सामाजिक आदर्शों, मूल्यों और आवश्यकताओ का शिक्षा पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। वस्तुतः उनके आधार पर ही शिक्षा की रूपरेखा निश्चित की जाती है।

(7) सामाजिक दृष्टिकोण का प्रभाव : Influence of Social Attitude—समाज का दृष्टिकोण शिक्षा को स्पष्ट रूप से प्रभावित करता है; उदाहरणार्थ—*यदि समाज का दृष्टिकोण रूढ़िवादी है, तो उसके विद्यालयों का कार्य—बालकों को* औपचारिक और परम्परागत शिक्षा देना होगा। यदि समाज का दृष्टिकोण प्रगतिवादी है, तो उसके विद्यालयों का कार्य—बालकों के विचारों को प्रगतिशील बनाना होगा। यदि समाज का दृष्टिकोण तटस्थतावादी है, तो उसके विद्यालयो का कार्य—बालकों को अनन्त मूल्यों और सत्यों की शिक्षा देना होगा। इस प्रकार, समाज के दृष्टिकोण का शिक्षा पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है।

उपसंहार

उपर्युक्त वर्णन से शिक्षा और समाज का सम्बन्ध एवं एक का दूसरे पर प्रभाव स्पष्ट हो जाता है। वास्तव में, एक के बिना दूसरे का काम चलना कठिन है। समाज अपने हितो और आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए शिक्षा के स्वरूप को

निर्धारित करता है। शिक्षा, समाज के पुराने विचारों की आलोचना और नये विचारों का समर्थन करके उसके नव-निर्माण में सहायता देती है।

इस प्रकार, शिक्षा और समाज एक-दूसरे के पूरक और परस्पर सम्बन्धित हैं। वस्तुतः इनका सम्बन्ध पारस्परिक कारण और परिणाम का है, क्योंकि जैसा समाज होता है, वैसी ही शिक्षा होती है; और जैसी शिक्षा होती है, वैसा ही समाज होता है। बॉयड एच० बोड का कथन है :—"समाज और शिक्षा का एक-दूसरे से पारस्परिक कारण और परिणाम का सम्बन्ध है। किसी भी समाज का स्वरूप उसकी शिक्षा-व्यवस्था के स्वरूप को निर्धारित करता है और इस व्यवस्था का स्वरूप, समाज के स्वरूप को निर्धारित करता है।"

"Society and education stand in a relation of reciprocal cause and effect. The character of a given society determines toe character of its educational system and the character of this system, in trun, determines the character of the society."

—**Boyd H. Bode** : *Fundamenatals of Education*, p. 221.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. *Give a critical account of the relation between education and society.*

शिक्षा और समाज के सम्बन्ध का आलोचनात्मक वर्णन कीजिए।

2. "The kind of education provided is different in different kinds of society." Elucidate.

"विभिन्न प्रकार के समाजों में प्रदान की जाने वाली शिक्षा विभिन्न होती है।" इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

33

शिक्षा व सामाजिक परिवर्तन
EDUCATION & SOCIAL CHANGE

"शिक्षा को सामाजिक, आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन के शक्तिशाली साधन के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।"

"Education can be used as a powerful instrument of social, economic and political change."—*Education Commission Report*, p. 1.

विषय-प्रवेश

मानव-समाज प्राचीन काल से आज तक निरन्तर विकसित और परिवर्तित होता चला आ रहा है। प्राचीन और मध्यकाल में जब शिक्षा का प्रसार नहीं था, तब सामाजिक परिवर्तन का कार्य, समाज की विभिन्न संस्थाओं द्वारा किया जाता था। आज जब कि शिक्षा का पर्याप्त प्रसार हो गया है, इसको सामाजिक परिवर्तन का मुख्य साधन माना जाता है। डा० राधाकृष्णन् के शब्दों में :—"शिक्षा, परिवर्तन का साधन है। जो कार्य साधारण समाजों में परिवार, धर्म और सामाजिक एवं राजनीतिक संस्थाओं द्वारा किया जाता था, वह आज शिक्षा-संस्थाओं द्वारा किया जाता है।"

"Education is an agent for change. What in simpler societies was done by the family, the religious, social and political institutions has to be done by educational institutions today."—**Dr. S. Radhakrishnan** : *Occasional Speeches & Writings*, pp. 246-247.

सामाजिक परिवर्तन का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Social Change

समाज की रचना मनुष्य ने की है। समाज का आधार मनुष्य की अन्तः-क्रियाएँ (Interactions) है। ये अन्तःक्रियाएँ सदैव परिवर्तित होती रहती हैं। इसी कारण हमारा समाज भी परिवर्तित होता रहता है। हम सभी इस सामाजिक परिवर्तन का अनुभव करते हैं। इतना अवश्य है कि कुछ समाज शीघ्रता से परिवर्तित होते हैं और कुछ धीरे-धीरे। परिवर्तन के आधार पर कुछ समाजशास्त्री, समाज को स्थायी समाज (Static Society) और गत्यात्मक समाज (Dynamic Society) में विभाजित करते हैं। वे आदिम समाजों को 'स्थायी समाज' मानते हैं और आधुनिक समाजों को 'गत्यात्मक समाज'। पर इससे यह समझ लेना कि कुछ समाज स्थायी होते हैं और उनमें परिवर्तन नही होता है, बहुत बड़ी भूल है। परिवर्तन प्रत्येक समाज में स्थायी रूप से होता है। परिवर्तन, 'स्थायी समाजों' में भी होता है, परन्तु धीरे धीरे। हाँ, इतना अवश्य है कि यह परिवर्तन इतने धीरे-धीरे होता है कि हमको इसका आभास नही हो पाता है।

हम सामाजिक परिवर्तन का अर्थ स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ दे रहे हैं; यथा :—

1. किलपेट्रिक का विचार है कि सामाजिक परिवर्तन, पूर्ण या आंशिक और अच्छी या खराब—किसी भी दिशा में हो सकता है। उसके मतानुसार :— "परिवर्तन विचाराधीन बात का पूर्ण या आंशिक परिवर्तन है। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि परिवर्तन अच्छी बात के लिए है या बुरी बात के लिए।"

"Change implies alteration of the item under consideration, either in part or in whole, but, without implication as to whether the change is for better or for worse."—*W. H. Kilpatrick : Philosophy of Education*, p. 161.

2. डॉसन व गेटिस ने लिखा है :—"सांस्कृतिक परिवर्तन—सामाजिक परिवर्तन है, क्योंकि समस्त संस्कृति अपनी उत्पत्ति, अर्थ और प्रयोगों में सामाजिक है।"

"Cultural change is social change, since all culture is social in its origin, meaning and usage."—**Dawson & Gettys.**

3. मेरिल व एलड्रेज ने व्यक्तियों के कार्यों और व्यवहार में परिवर्तन को सामाजिक परिवर्तन माना है। उन्होंने लिखा है :—"सामाजिक परिवर्तन का अर्थ यह है कि बहुत बड़ी संख्या में व्यक्ति ऐसे कार्य कर रहे हैं, जो कुछ समय पहले के उनके या उनके निकट पूर्वजों के कार्यों से भिन्न हैं। जब मानव-व्यवहार में परिवर्तन हो रहा होता है, तब यह इस बात का संकेत है कि सामाजिक परिवर्तन हो रहा है।"

Social change means that large numbers of persons are

engaged in activities that differ from those which they or their immediate forefathers engaged in some time before. When human behaviour is in the process of modification, this is only another way of indicating that social change is occurring"—Merrill & Eldredge.

अन्त में, हम मैक्सवेबर (Maxweber) के शब्दों में कह सकते हैं कि सामाजिक परिवर्तन का कारण संस्कृति है। उसने विभिन्न धर्मों और आर्थिक व्यवस्थाओं की तुलना करके यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि संस्कृति में परिवर्तन होने के कारण समाज में भी परिवर्तन होते है।

शैक्षिक व सामाजिक परिवर्तन में सम्बन्ध
Relation between Educational & Social Change

शिक्षा और समाज का बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। पर शिक्षा की क्रिया, समाज की क्रिया के अन्तर्गत होती है। इसीलिए, विभिन्न समाजों मे शिक्षा का विभिन्न स्वरूप होता है। समाज ही निश्चित करता है कि उसके अन्तर्गत प्रदान की जाने वाली शिक्षा का स्वरूप कैसा होगा। यदि समाज का रूप परिवर्तित हो जाता है, तो शिक्षा का रूप भी परिवर्तित हो जाता है। दूसरे शब्दो में, हम कह सकते है कि सामाजिक परिवर्तन के कारण शैक्षिक परिवर्तन होता है। इसका विपरीत कथन भी सत्य है, अर्थात्—शिक्षा के कारण सामाजिक परिवर्तन होता है। इन दोनो परिवर्तनो के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करते हुए, ओटावे (Ottaway) ने लिखा है:—"कभी-कभी यह कहा जाता है कि शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन का एक कारण है। इसका विपरीत अधिक सत्य है। शैक्षिक परिवर्तन अन्य सामाजिक परिवर्तनों को आरम्भ करने के बजाय उनका अनुगमन करता है।" हम ओटावे के इस कथन के आधार पर शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन का एक-दूसरे पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करेंगे।

शिक्षा द्वारा सामाजिक परिवर्तन
Education Initiates Social Change

शिक्षा के द्वारा अनेक देशो और समाजो में विभिन्न प्रकार के परिवर्तन किये गये है। हम अपने इस कथन की पुष्टि मे निम्नांकित तथ्य प्रस्तुत कर सकते है:—

(1) भारत में अंग्रेजी शिक्षा के कारण सामाजिक परिवर्तन : Social Changes in India due to English Education—अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करके भारत ने कई शतियों की कुम्भकर्णी निद्रा का परित्याग किया और अपने समाज मे असाधारण धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक आदि परिवर्तन किये। धार्मिक परिवर्तन का श्रेय राजा राममोहन राय, देवेन्द्रनाथ टैगोर, केशवचन्द्र सेन, स्वामी दयानन्द आदि महापुरुषों को प्राप्त हुआ। राजनीतिक परिवर्तन के फलस्वरूप भारत को स्वतन्त्रता

दिलाने का कार्य दादाभाई नौरोजी, गोपालकृष्ण गोखले, महात्मा गांधी और जवाहर-लाल नेहरू ने किया। सती-दाह, कन्या-वध, बाल-विवाह आदि कुप्रथाओं का अन्त करके हमारे समाज ने अपनी कायापलट कर ली। इस प्रकार, भारतीय समाज मे परिवर्तन और जागरण—अंग्रेजी शिक्षा के कारण हुआ। इस सम्बन्ध में मजूमदार, रायचौधरी व दत्त ने लिखा है :—**"देश के शैक्षिक विचारों में महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के बिना आधुनिक भारत की सामान्य जागृति सम्भव नहीं होती।"**

"The general awakening of Modern India would not have been possible without significant changes in the educational Ideas." —**Majumdar, Raychaudhuri & Datta :** *An Advanced History of India*, p. 960.

(2) **भारत में विज्ञान-शिक्षा के कारण सामाजिक परिवर्तन : Social Changes in India due to Science Education**—भारतीयों ने धर्म और नैतिकता में आस्था रखने के कारण न्याय, सहयोग, सहिष्णुता और निःस्वार्थता के मूल्यों पर सदैव बल दिया था। इसके अतिरिक्त, उन्होंने आध्यात्मिक मूल्यों की तुलना मे भौतिक मूल्यो को न केवल निम्नतर स्थान दिया था, वरन् उनका परित्याग भी किया था। पर विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करके उनके इन मूल्यो और परम्परागत धारणाओ में पूर्ण परिवर्तन हो गया है।

आज वे इनका तिरस्कार करके आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक क्षेत्रों में स्वार्थ और शोषण की भावनाओ से ओत-प्रोत अपने जीवन-पथ पर बढ़ रहे हैं। वे सहयोग और सहिष्णुता को तिलाजलि देकर एवं अलगाव, द्वेष और घृणा का अवलम्बन करके भारतीय समाज का विघटन और वियोजन कर रहे है। इस प्रकार, जैसा कि सैयदैन ने लिखा है :—**"सामाजिक परिवर्तन और विघटन की इस प्रक्रिया में सबसे शक्तिशाली तत्त्व विज्ञान का विकास रहा है।"**

"The most powerful factor in this process of social change and disintegration has been the development of science."—**K. G. Saiyidain :** *Education, Culture & The Social Order*, p. 26.

(3) **जर्मनी में शिक्षा द्वारा सामाजिक परिवर्तन : Social Changes in Germany through Education**—सन् 1806 में 'जीना के युद्ध' (Battle of Jena) में नैपोलियन द्वारा धूल-धूसरित कर दिये जान के कारण जर्मन लोगों की देश-प्रेम, राष्ट्रीयता, बलिदान आदि की भावनाओ पर घातक प्रहार हुआ। इन भावनाओं का पुनर्निर्माण करके अपने समाज को पूर्व रूप में परिवर्तित करने के लिए शिक्षा का सहारा लिया गया।

अतः राजा के मन्त्री स्टेन ने घोषित किया :—**"हमे राष्ट्र को देश-प्रेम की भावना का उत्थान और उसमें फिर राष्ट्रीय सम्मान के लिए बलिदान और स्वतन्त्रता की भावना का समावेश करने के लिए आधारभूत सिद्धान्त के अनुसार कार्य करना**

चाहिए। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें बालकों की शिक्षा और निर्देश पर निर्भर होना चाहिए।" शिक्षा ने इस उद्देश्य की प्राप्ति में सहायता दी और जर्मन-समाज फिर अपने पूर्व रूप को प्राप्त करने के लिए द्रुत गति से परिवर्तित होने लगा।

शिक्षा द्वारा सामाजिक परिवर्तन का अनुगमन
Education Follows Social Change

ओटावे के इस कथन के पक्ष में, कि शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन का अनुगमन करती है, निम्नांकित तथ्य प्रस्तुत किये जा सकते हैं :—

(1) नवभारत की सामाजिक आवश्यकताओं के कारण शैक्षिक परिवर्तन : Educational Change due to Social Needs of New India—परतन्त्र भारत में शिक्षा का अर्थ था—अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार। नवभारत में धर्म-निरपेक्ष राज्य, समाजवादी समाज की स्थापना, देश के औद्योगीकरण, जन-शिक्षा आदि की मांगों को ध्यान में रखकर शिक्षा के स्वरूप को परिवर्तित करने का सतत् प्रयास किया जा रहा है। इसीलिए, निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की गई है, निरक्षर वयस्कों की शिक्षा के लिए एक विशाल कार्यक्रम तैयार किया गया है, माध्यमिक और उच्च शिक्षा का नए सिरे से पुनर्गठन किया जा रहा है, कृषि और उद्योगों के विकास के लिए वैज्ञानिक और टेकनिकल शिक्षा का तेजी से विस्तार किया जा रहा है, समाज के पिछड़े हुए वर्गों के लिए अपेक्षाकृत अधिक शैक्षिक सुविधाओं की व्यवस्था की जा रही है और बालिकाओं एवं स्त्रियों के लिए विभिन्न प्रकार की शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना की जा रही है।

इस प्रकार, भारतीय समाज में होने वाले विविध परिवर्तनों का शिक्षा द्वारा अनुगमन किया जा रहा है। सैयदैन (Saiyidain) ने ठीक ही लिखा है :—"इस समय भारत में शिक्षा बहुत नाजुक, पर रोचक अवस्था में से होकर गुजर रही है। यह स्वाभाविक है, क्योंकि समग्र रूप में राष्ट्रीय जीवन भी, जिसका शिक्षा एक अनिवार्य अंग है। ऐसी ही अवस्था में से होकर गुजर रहा है।"

(2) सांस्कृतिक अनुकूलन के कारण शैक्षिक परिवर्तन : Educational Change due to Cultural Adaptation—ऑगबर्न (Ogburn) के अनुसार, संस्कृति के दो अङ्ग हैं : (i) भौतिक संस्कृति (Material Culture), अर्थात् मानव-निर्मित मूर्त वस्तुएँ; जैसे—मकान, सड़क, इंजन, मशीनें, रेडियो आदि। (ii) अभौतिक संस्कृति (Non-Material Culture), अर्थात् मनुष्यों के सामूहिक रूप में रहने से विकसित होने वाली अमूर्त वस्तुएँ; जैसे—भाषा, धर्म, संगीत, जनरीतियाँ आदि।

कुछ विद्वान्, जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं, सांस्कृतिक परिवर्तन को सामाजिक परिवर्तन मानते है। इसी आधार पर ओटावे ने लिखा है :—"सांस्कृतिक अनुकूलन के कारण शैक्षिक परिवर्तन होता है।"

"Along with cultural adaptation goes educational change."

—A. K. C. Ottaway : *op. cit*, p. 51.

ओटावे ने अपने कथन की पुष्टि में अभौतिक संस्कृति की वस्तु, रेडियो का उदाहारण दिया है। उसका कथन है कि रेडियो हमारी संस्कृति का इतना महत्त्वपूर्ण अङ्ग बन गया है कि यदि हमारे ऊपर रेडियो सुनने पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है या उसके कार्यक्रम में किसी प्रकार की बाधा या परिवर्तन उपस्थित किया जाता है, तो हम उसे अपने अधिकारों का दमन समझ कर अत्यधिक क्रुद्ध होते हैं।

ओटावे ने आगे लिखा है कि इस अभौतिक संस्कृति (रेडियो) से अनुकूलन करने के कारण हमारी शिक्षा में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं; उदाहरणार्थ— वयस्क लोग—यात्रा, कृषि, स्वास्थ्य, नाटक, आलोचना, राजनीति से सम्बन्धित बातें सुनकर नवीन ज्ञान प्राप्त करते है। विद्यालयो में रेडियो का प्रयोग किए जाने के कारण शिक्षण की नवीन विधियो का प्रतिपादन, पाठ्यक्रम-निर्माण के सिद्धान्तों में परिवर्तन, और स्वयं रेडियो से सम्बन्धित नवीन विषय को विज्ञान-शिक्षा का अङ्ग बनाया गया है। इसके अतिरिक्त, रेडियो-उद्योग में कार्य करने के लिए कुशल व्यक्तियो की मांग की गई। इस मांग को पूरा करने के लिए विद्यालयों में टेकनिकल शिक्षा की व्यवस्था की गई और इस शिक्षा को प्रदान करने के लिए टेकनिकल विद्यालयों का भी निर्माण किया गया। इस प्रकार, ओटावे ने यह सिद्ध किया है कि सांस्कृतिक परिवर्तन या अनुकूलन के कारण शिक्षा में परिवर्तन होना आवश्यक है।

(3) सामाजिक शक्तियों के कारण शैक्षिक परिवर्तन : Educational Change due to Social Forces—ओटावे के शब्दो में :—"**किसी समय में किसी समाज द्वारा प्रदान की जाने वाली शिक्षा उस समाज में कार्य करने वाली प्रमुख सामाजिक शक्तियों द्वारा निर्धारित की जाती है।**" ये सामाजिक शक्तियाँ—व्यक्तियो के वे समूह होते है, जो समाज की आवश्यकताओ और मूल्यो के अनुसार शिक्षा में परिवर्तन करने का प्रयास करते है। हम इसका उदाहरण, भारतीय शिक्षा के इतिहास से दे सकते है।

'शिक्षा-आयोग' (1964) ने शिक्षा को भारतीय समाज के जीवन, आवश्यकताओ और आकांक्षाओं के अनुकूल बनाने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा की नवीन नीति का सुझाव दिया। इसका समर्थन भारतीय विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियो, पार्लियामेन्ट के सदस्यो, विभिन्न दलों के प्रतिनिधियो और राज्यों के शिक्षा-मन्त्रियो ने किया। अतः केन्द्रीय सरकार ने 17 जुलाई, 1968 को शिक्षा के महत्त्वपूर्ण अङ्गों, सिद्धान्तो, स्तरो और स्वरूप में परिवर्तन करने के लिए 'राष्ट्रीय शिक्षा-नीति' (National Educational Policy) का निर्माण किया।

सामाजिक परिवर्तन में शिक्षा का वास्तविक कार्य
True Role of Education in Social Change

उपर्युक्त पंक्तियों मे हमने यह प्रदर्शित किया है कि समाज द्वारा शिक्षा में, और शिक्षा द्वारा समाज में परिवर्तन किया जाता है। जहाँ तक पहली बात का

भी प्रकार की मत-विभिन्नता नहीं है, पर दूसरे के बारे
ों ने सामाजिक परिवर्तन के जितने कारण बताए है,
दिया गया है। इसका कारण यह है कि शिक्षा को
और उसी के अनुसार स्वरूप धारण करने वाली क्रिया
। कि उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है, शिक्षा—सामाजिक
ी है। पर इस योग के बावजूद भी शिक्षा का समाज
। माना जाकर गौण माना जाता है। इस सन्दर्भ में
उल्लेखनीय है :—**"शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन
जाता है। यह तो समाज पर निर्भर रहने वाली एक
देह रूप से शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण
... न होकर गौण होता है।"**

सामाजिक परिवर्तन का कारण न होकर एक
व्यक्तियों द्वारा इसका प्रयोग एक निश्चित उद्देश्य से
परिवर्तन हो जाता है, तब शिक्षा के स्वरूप में भी
तभी होता है, जब पहले उद्देश्य में परिवर्तन कर
कुछ लोग शिक्षा पर समाज को परिवर्तित करने का
... कहते हुए सुना जाता है कि यदि शिक्षा के स्वरूप
पीढ़ी के बाद सम्पूर्ण विश्व को बदल सकते है। पर
समाज को परिवर्तित करने के लिए उसकी सहायता
अपने आप को परिवर्तित कर लें। ऐसा करना
में मोड़ना होगा, जो व्यक्तिगत रूप से तो सम्भव
े कदापि नहीं। एक समाज, एक राष्ट्र के रूप में
मने है।

मने धर्म-निरपेक्ष राज्य और समाजवादी समाज की
... को प्राप्त करने के लिए हमने नए आर्थिक,
का निर्माण किया है, उनको प्राप्त करने के लिए
। है, पर हमने अपने-आप को परिवर्तित करने की
है। हम आज भी धार्मिक द्वेष, आर्थिक विषमता,
सिद्धान्त से अपना गहरा नाता जोड़े हुए हैं। यही
।, हमारे समाज के स्वरूप को निश्चित करने में
। के रूप मे कार्य कर रही है। संपर्दन का यह
हमारी शिक्षा के कार्य को कितने मार्मिक शब्दों
**े इस सामाजिक व्यवस्था को नवीन रूप प्रदान
।, उसको चाटुकार चेरी के रूप में कार्य करके**

"Education which should have taken the lead in the reshaping of this social order, has been contented to work as its subservient handmaiden."—K. G. Saiyidain : *op. cit.*, p. 32.

सैयदैन ने इन थोड़े-से शब्दों में सामाजिक परिवर्तन में शिक्षा के कार्य का कितना सजीव चित्र हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What do you understand by social change ? How far does education initiate and follow social change ?

सामाजिक परिवर्तन से आप क्या समझते हैं ? शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन को कहाँ तक प्रारम्भ और कहाँ तक उसका अनुगमन करती है ?

2. Assess the true role of education in social change.

सामाजिक परिवर्तन मे शिक्षा के वास्तविक कार्य का मूल्यांकन कीजिए।

3. What is understood by social change ? What are the forces that are bringing about social change in India ? What is the role of education in this process ?

सामाजिक परिवर्तन का क्या अभिप्राय है ? भारतवर्ष मे किन शक्तियों द्वारा सामाजिक परिवर्तन किया जा रहा है ? शिक्षा का इस प्रक्रिया में क्या स्थान है ?

34

शिक्षा व संस्कृति
EDUCATION & CULTURE

"बालक की शक्तियों का विकास केवल सामान्य संस्कृति के सन्दर्भ में ही हो सकता है।"

"The development of the child's powers can take effect only in terms of the common culture."—**Sir Fred Clarke :** *Freedom in the Education Society*, p. 34.

विषय-प्रवेश

प्रत्येक बालक का जन्म दोहरी विरासत के साथ होता है—जैवकीय और सांस्कृतिक। अपनी जैवकीय विरासत से उसे अपनी शारीरिक विशेषताएँ, मानसिक क्षमता और आधारभूत आवश्यकताएँ प्राप्त होती हैं। उसे अपनी सांस्कृतिक विरासत, उस समाज से प्राप्त होती है, जिसमें उसका जन्म और पालन-पोषण होता है। बालक की शिक्षा में उसकी सांस्कृतिक विरासत का उतना ही महत्त्वपूर्ण स्थान है, जितना कि उसकी जैवकीय विरासत का। इस पर प्रकाश डालते हुए, वेरको व अन्य ने लिखा है :—"यद्यपि समाजशास्त्रियों की खोजों ने सिद्ध कर दिया है कि संस्कृति जन्मजात न होकर सीखी जाती है, फिर भी इसके सीखने को इतना अधिक महत्त्व दिया जाता है कि इसकी अवहेलना की जा सकती है।"

"Although the investigations of social scientists have shown that culture is not innate but learned, nevertheless the pressure to acquire his learning is so strong that it is inescapable."—**D. J. A. Verco & Others :** *The Foundations of Education*, p. 72.

उपरिलिखित कथन का विवेचन करने से पूर्व संस्कृति के अर्थ, अंगों आदि का थोड़ा-सा ज्ञान प्राप्त कर लेना आवश्यक है। अतः हम निम्नांकित पंक्तियों में इन पर विचार कर रहे हैं।

संस्कृति का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Culture

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह समाज से पृथक् नहीं रह सकता है। अपने समाज के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए वह उसे पूर्ण रूप से संगठित करता है और एक निश्चित व्यवस्था को विकसित तथा स्थापित करता है। इसी निश्चित और सम्पूर्ण व्यवस्था को 'संस्कृति' कहते हैं। इसके अन्तर्गत उस समाज के, जिसमें मनुष्य रहता है, रीति-रिवाज, परम्पराएँ, मशीनें, उपकरण, नैतिकता, कला, विज्ञान, धर्म, विश्वास, सामाजिक संगठन, आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था—सभी कुछ आ जाते हैं। सारांश में, संस्कृति का अर्थ है—किसी भी समाज में रहने का ढंग (Way of Living)।

हम 'संस्कृति' के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ दे रहे हैं; यथा :—

1. टायलर :—"संस्कृति—वह जटिल पूर्णता है, जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, नियम, रिवाज और समाज के सदस्य के रूप में मनुष्य द्वारा अर्जित की जाने वाली अन्य योग्यताएँ और आदतें सम्मिलित रहती हैं।"

"Culture is that complex whole which includes knowledge, belief, art, morals, law, custom and any other capabilities and habiis acquired by man as a member of society."—**E. B. Tylor** : *Primitive Culture*, p. 1.

2. सदरलैण्ड व वुडवर्ड ने 'संस्कृति' और 'सामाजिक विरासत' को पर्यायवाची माना है और लिखा है :—"संस्कृति में कोई भी बात आ सकती है, जिसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित किया जा सकता है। किसी भी राष्ट्र की 'संस्कृति' उसकी 'सामाजिक विरासत' है।"

"Culture includes anything that can be communicated from one generation to another. The culture of a people is their social heritage."—**Sutherland & Woodward** : *Introductory Sociology*, p. 21.

3. रोसेक :—"संस्कृति की साधारण परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है—किसी विशेष समय और स्थान में निवास करने वाले विशेष व्यक्तियों के जीवन व्यतीत करने की सामूहिक विधि।"

"Culture might be defined simply as the total way of living of a particular people at a particular time and place."—**Joseph S Roucek** : *Sociological Foundations of Education*, p. 168.

भौतिक व अभौतिक संस्कृति
Material & Non-Material Culture

संस्कृति के दो मुख्य भाग है—(1) भौतिक, और (2) अभौतिक। 'भौतिक संस्कृति' के अन्तर्गत वे सब वस्तुएँ आ जाती है, जिनका स्वरूप मूर्त है और जिनका निर्माण मनुष्य ने किया है; जैसे—मकान, सड़क, आभूषण, इंजन, घडी, मशीन, टाइप-राइटर, प्रेस, रेडियो, वस्त्र आदि। 'अभौतिक संस्कृति' के अन्तर्गत वे सब बातें आती है, जिनका स्वरूप अमूर्त्त है और जिनका विकास मनुष्यों के सामूहिक रूप मे रहने से होता है; जैसे—धर्म, भाषा, कला, संगीत, साहित्य, रूढ़ियां, जनरीतियां, आचार-विचार, प्रथाएँ, संस्कार, संस्थाएँ आदि।

सांस्कृतिक उपकरण व सांस्कृतिक संकुल
Cultural Trait & Cultural Complex

संस्कृति की सबसे छोटी और सरल इकाई को 'उपकरण' कहते है। यह संस्कृति का लघुतम भाग है, जो पुनः विभाजित नहीं किया जा सकता है। 'उपकरण' भौतिक और अभौतिक—दोनों प्रकार के हो सकते हैं। हम भौतिक और अभौतिक संस्कृति के अन्तर्गत भौतिक और अभौतिक उपकरणों का उल्लेख कर चुके है। यहाँ इतना कह देना आवश्यक है कि प्रत्येक भौतिक उपकरण के साथ कोई-न-कोई अभौतिक उपकरण अवश्य सम्बद्ध रहता है। विभिन्न संस्कृतियों के विभिन्न उपकरण होते हैं। इसीलिए, उनमें विभिन्नता पाई जाती है।

सांस्कृतिक उपकरणों मे गतिशीलता होती है। एक संस्कृति दूसरी संस्कृति के उपकरणों को अपना लेती है; उदाहरण के लिए—भारतीय संस्कृति ने पाश्चात्य संस्कृति से भोजन सम्बन्धी उपकरण—कांटे और छुरी को अपना लिया है। समय की गति के साथ संस्कृति के उपकरण फूलों के गुच्छे के समान एकत्र हो जाते हैं। इसको 'सांस्कृतिक संकुल' कहते है। एक 'सांस्कृतिक संकुल' में अनेक उपकरण सम्मिलित होते हैं और सभी उपकरण एक-दूसरे पर आश्रित होते है, उदाहरण के लिए—'विवाह' एक सांस्कृतिक संकुल है, जिसमें संस्कार, प्रीतिभोज, बरात आदि उपकरण है। क्रिकेट का खेल एक सांस्कृतिक संकुल है, जिसमें गेंद, बल्ला, खेल का मैदान आदि उपकरण है। इसी प्रकार, आर्थिक, धार्मिक और राजनीतिक क्षेत्रों में भी सांस्कृतिक संकुल होते हैं।

शिक्षा व संस्कृति का सम्बन्ध
Relation between Education & Culture

शिक्षा और संस्कृति के सम्बन्ध का स्पष्टीकरण करते हुए, ब्रामेल्ड ने लिखा है :—"संस्कृति की सामग्री से ही शिक्षा का प्रत्यक्ष रूप से निर्माण होता है और यही सामग्री शिक्षा को न केवल उसके स्वयं के उपकरण, वरन् उसके अस्तित्व का कारण भी प्रदान करती है।"

"It is form the stuff of culture that education is directly created and that gives to education not only its own tools and materials but its reason for existing at all."—Theodore Brameld : *Cultural Education of Evaluation*, p. 6.

इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृति के अभाव मे शिक्षा निस्सार और निष्प्रयोजन है। यदि किसी समाज की शिक्षा में कोई विशेषता मिलती है, तो उसका एकमात्र कारण—उस समाज की संस्कृति है। वस्तुतः प्रत्येक समाज अपनी संस्कृति के अनुरूप ही शिक्षा की व्यवस्था करता है। शिक्षा अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए विविध प्रकार से संस्कृति की सेवा और सहायता करती है और अपने कार्यों को सम्पन्न करने के लिए उसका सहयोग प्राप्त करती है। अपने इस कथन की पुष्टि में हम निम्नांकित तथ्य प्रस्तुत कर रहे हैं :—

1. संस्कृति की निरन्तरता में सहायता : Help in the Continuity of Culture—संस्कृति किसी भी जाति के इतिहास का विशुद्ध सार है। यह उन रीतियों और परम्पराओं से मिलकर बनती है, जिनमें उस जाति के लम्बे समय के अनुभवों का निचोड़ होता है। अतः किसी जाति का अपनी संस्कृति से सम्बन्ध-विच्छेद होना, उसके लिए विनाशकारी सिद्ध होता है; उदाहरणार्थ—आस्ट्रेलिया और अमरीका की आदिम जातियो का यूरोप की जातियो से परास्त होने के बाद अपनी संस्कृति से सम्बन्ध-विच्छेद हो गया। परिणामस्वरूप, वे छिन्न-भिन्न होकर नष्ट हो गईं। इस प्रकार, जैसा कि हुमायूँ कबीर ने लिखा है :—**सांस्कृतिक परम्परा ही एक जाति के जीवित रहने की आवश्यक शर्त है।"**

'शिक्षा, जाति की सस्कृति या सांस्कृतिक परम्परा की निरन्तरता मे महान् योग देती है। शिक्षा ही उसकी संस्कृति को बनाए रखती है और उसका अन्त नही होने देती है। आस्ट्रेलिया और अमरीका की आदिम जातियो की सांस्कृतिक परम्परा केवल इसलिए नष्ट हो गई, क्योंकि उनमें शिक्षा का पूर्ण अभाव था। इस स्थिति से अपनी रक्षा करने के लिए सभी प्रगतिशील देशों ने विद्यालयो की स्थापना करके उनमे शिक्षा की उत्तम व्यवस्था की है और उन पर संस्कृति की निरन्तरता का दायित्व रखा है। इस सम्बन्ध मे स्पेन्स रिपोर्ट (Spens Report) में लिखा गया है :—**"विद्यालय वह साधन प्रदान करते हैं, जिनके द्वारा राष्ट्र का जीवन अखण्ड रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलता रहता है।"**

2 संस्कृति के हस्तान्तरण में सहायता : Help in the Transmission of Culture—व्यक्ति, समाज के सदस्य के रूप में संस्कृति को सीखता है और उसे अगली पीढी को हस्तान्तरित करता है। इस कार्य में शिक्षा, संस्कृति की अपूर्व सहायता करती है। यह सत्य है कि व्यक्ति अज्ञात रूप मे संस्कृति की अनेक बातें सीखता है, पर यह भी सत्य है कि उसे अनेक बातो की शिक्षा, अध्यापक द्वारा दी जाती है। वस्तुतः अध्यापक के द्वारा शिक्षा को संस्कृति को हस्तान्तरित करने का

कार्य सौंपा गया है। ओटावे (Ottaway) का कथन है :—"शिक्षा का एक कार्य—समाज के सांस्कृतिक मूल्यों और व्यवहार के प्रतिमानों को उसके तरुण और समर्थ सदस्यों को हस्तान्तरित करना है।"

3. संस्कृति के परिवर्तन में सहायता : Help in the Change of Culture—बालक जैसे-जैसे बड़ा होता जाता है, वैसे-वैसे अपनी संस्कृति के रीति-रिवाजों, आदतों, नियमों आदि को सीखता जाता है। वह इन बातों को अपने माता-पिता, परिवार के लोगो, समाज के व्यक्तियों और विद्यालय के अध्यापकों से सीखता है। फलस्वरूप, उसके व्यवहार में निरन्तर परिवर्तन होता चला जाता है। परिवर्तन का यह कार्य चेतन और अचेतन—दोनो प्रकार से होता रहता है।

जब कभी अध्यापक या कोई अन्य व्यक्ति एक निश्चित योजना बनाकर या किसी विशेष क्रिया की व्यवस्था करके बालकों को उनकी संस्कृति का ज्ञान देता है, या उनके व्यवहार को निर्देशित करता है, तभी शिक्षा का कार्य दृष्टिगोचर होता है। बट्स (Butts) के अनुसार :—"जब कभी एक व्यक्ति या समूह जान-बूझकर व्यवहार को निर्देशित करने का प्रयत्न करता है, तभी शिक्षा विद्यमान रहती है। इस प्रकार, शिक्षा उन प्रक्रियाओं में, जिनके द्वारा संस्कृति हस्तान्तरित और परिवर्तित की जाती है, बहुत ही अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य करती है।"

4. व्यक्ति के सांस्कृतिक विकास में सहायता : Help in Individual's Cultural Growth—हम भारतीयों ने आदि-काल से लेकर आज तक विभिन्न विषयों का जो भी ज्ञान संचित किया है, वह हमारी संस्कृति का अंग है। हमारी कला और साहित्य, हमारे कानून और इतिहास—सभी पर हमारी संस्कृति की गहरी छाप है, उदाहरणार्थ—हमारा इतिहास केवल तथ्यों और तिथियों, असफलताओं और अकर्मण्यताओं का संकलन नहीं है, वरन् हमारी संस्कृति की अभिव्यक्ति करने वाले महान् वीरों और उसका निर्माण करने वाले अमर योगियों की जीवनियों को अनुप्राणित करने वाला वर्णन है।

उन वीरो और योगियों की महानता की एक झलक ही हमारे सांस्कृतिक विकास के लिए बहुत काफी है। शिक्षा हमे इतिहास का अध्ययन करने का अवसर प्रदान करके हमें बार-बार उनकी महानता की झलक देती है, और इस प्रकार हमारे सांस्कृतिक विकास में अपूर्व योग देती है। अतः 'विश्वविद्यालय-शिक्षा-आयोग' का परामर्श है :—"महानता की स्वाभाविक झलक सांस्कृतिक विकास की विधि है। जिनमें स्वयं महानता नहीं है, उन्हें (इतिहास का अध्ययन करके) महान् व्यक्तियों की संगति मे रहना चाहिए।"

5. व्यक्तित्व के विकास में सहयोग : Co-operation in the Development of Personality—शिक्षा का एक मुख्य कार्य—बालक के व्यक्तित्व का विकास करना है, पर वह इस कार्य को संस्कृति के सहयोग के बिना नहीं कर सकती है। इसका कारण यह है कि उसे संस्कृति के ऐसे अनेक उपकरण प्राप्त होते हैं, जिनका

प्रयोग वह बालक के बौद्धिक, चारित्रिक, संवेगात्मक और आध्यात्मिक विकास के लिए करती है। ओटावे (Ottaway) ने ठीक ही लिखा है :—*"जिस संस्कृति में व्यक्तित्व का विकास होता है, उसके द्वारा उसका आंशिक निर्माण किया जाता है।* इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि व्यक्तित्व के विकास से सम्बन्धित होने के कारण शिक्षा, संस्कृति पर आश्रित रहती है।

6. शिक्षा में संस्कृति का समावेश : **Inclusion of Culture in Education**—सच्चे अर्थ मे शिक्षा के अन्तर्गत *कला और मानव-अभिव्यक्तियों के अन्य सांस्कृतिक रूपों* का समावेश किया जाना चाहिए। यदि शिक्षा का *अर्थ—बालक की प्रसुप्त* शक्तियों को जाग्रत करके बाहर लाना है, तो ऐसा किया जाना अनिवार्य है। अनुभव ने इस बात को सत्य सिद्ध कर दिया है। हुमायूँ कबीर के शब्दों मे :—**"यही कारण है कि आजकल यह बात सामान्य रूप से स्वीकार की जाती है कि कला, प्रसाधन या सजावट की कोई वस्तु नहीं है, वरन् बालकों के शैक्षिक विकास के लिए एक आवश्यक तत्त्व है।"**

उपसंहार

'संस्कृति' शब्द का प्रयोग समाज के सम्पूर्ण जीवन को व्यक्त करने के लिए किया जाता है। इसके अन्तर्गत उस समाज के रीति-रिवाज, रहन-सहन, आचार-विचार आदि से सम्बन्धित व्यवहार के सभी प्रतिमान आ जाते है। व्यक्ति इन प्रतिमानो को शिक्षा के औपचारिक और अनौपचारिक—दोनों प्रकार के साधनो से सीखता है।

अतः शिक्षा को संस्कृति का अभिन्न अंग माना जाता है। बट्स के शब्दो मे :—**"माता-पिता, परिवार, गिरजाघर, सरकारें, और अधिकांश प्रकार की सगठित सस्थाएँ जान-बूझकर छोटों और बड़ों के व्यवसाय को सामान रूप से प्रभावित करके शिक्षा देने का प्रयास करती हैं। इस प्रकार, शिक्षा सदैव और सर्वत्र मानव-संस्कृति का अभिन्न अंग होती है।"**

"Parents, families, churches, governments, and most forms of organized institutions deliberately attempt to educate by influencing the behaviour of young and old alike. Education is thus always an integral part of human culture everywhere,"—**R. Freeman Butts** : *op. cit.*, *p.* 2.

UNIVERSITY QUESTION

1. Examine the relation between education and culture. Which of the two depends more on the other ?

शिक्षा और संस्कृति के सम्बन्ध की समीक्षा कीजिए। इन दोनों मे से कौन दूसरे पर अधिक आश्रित है ?

35

भारतीय समाज का स्वरूप
NATURE OF INDIAN SOCIETY

"एकीकृत समुदाय—वह उपजाऊ भूमि है, जो अकेले ही समाजीकृत और संगठित व्यक्तित्व का विकास कर सकती है। शिक्षालय एवं शिक्षक—सम्पूर्ण विश्व का निर्माण नहीं कर सकते हैं और न बालक ही ऐसा कर सकते हैं। यह शेष समाज से सम्बन्धित सम्पूर्ण समुदाय का कार्य है।"

"The integrated community is the fertile soil which alone can promote the growth of a socialized, integrated personality. Schools and schoolmen cannot mark the world over. Nor can children do so. That is a job for the entire community as related to the rest of society."—**Joseph S. Roucek.**

विषय-प्रवेश

शिक्षा को जैविक, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक, दार्शनिक और सामाजिक प्रक्रिया माना जाता है। इनमे 'सामजिक प्रकिया' का व्यक्ति की शिक्षा में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। व्यक्ति सामाजिक प्राणी है। वह सामूहिक जीवन की खोज करता है और एकाकी जीवन से बचना चाहता है। यह उसकी ही नहीं, वरन् सारी मानव-जाति की प्रमुख विशेषता है। समाज के लोग आपस में मिलते-जुलते है। वे और उनके कार्य एक-दूसरे को प्रभावित करते है। ये बातें समाज को जटिल बना देती हैं। पर क्योंकि व्यक्ति को समाज में रहना है, इसलिए उसे समाज से अनुकूलन करना पड़ता है।

इस अनुकूलन में शिक्षा उसे सहायता देती है। यही कारण है कि शिक्षा का उद्देश्य—व्यक्ति को सामाजिक कुशलता प्राप्त करके सामाजिक वातावरण से अनुकूलन

करने की योग्यता देना माना गया है। जिस समाज में व्यक्ति रहता है, वही समय और परिस्थितियों के अनुसार निश्चय करता है कि व्यक्ति को किस प्रकार की शिक्षा दी जाय—जिससे कि वह अपनी और अपने समाज की आवश्यकताओं को पूरा कर सके। ये सब बातें शिक्षा के सामाजिक आधार का अध्ययन आवश्यक बना देती है।

मानव-समाज का आधार
Basis of Human Society

मानव-समाज का मुख्य आधार 'सामाजिक समूह' है। प्रत्येक व्यक्ति विभिन्न सामाजिक समूहों का सदस्य होता है। इन समूहों से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। इनमें रहकर ही उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। इन सब बातों का विस्तृत अध्ययन करने के लिए हम 'सामाजिक समूह' और 'व्यक्ति तथा सामाजिक समूह के सम्बन्ध' पर प्रकाश डालेंगे।

सामाजिक समूह : Social Gronp—मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह अकेले रहने के बजाय समाज के किसी समूह में रहकर ही अपना जीवन बिताना चाहता है। समूह में दो या दो से अधिक व्यक्ति होते है। हम में मे प्रायः सभी अपने माता-पिता, भाई-बहिनो आदि के साथ परिवार के समूह में रहते है। अनेक बालकों का विद्यालय के समूहों से सम्बन्ध होता है। उनमें से बहुत मे खेल-कूद के समूहों के सदस्य होते है। विभिन्न व्यवसायों मे लगे हुए लोग विभिन्न व्यावसायिक समूहों के सदस्य होते है। इन स्थायी समूहों के अतिरिक्त कुछ अस्थायी समूह भी होते हैं; जैसे—सौदा खरीदने वालों का समूह, गाने वालों का समूह, भाषण सुनने वालों का समूह। स्थायी और अस्थायी—दोनों समूहों के सदस्य एक-दूसरे को प्रभावित करते है।

सबसे छोटा समूह 'परिवार' है। परस्पर सम्बन्धित परिवार मिलकर एक बड़ा समूह बनाते है, जिसे 'गोत्र' (Clan) कहते हैं। अनेक 'गोत्र' मिलकर 'जन-जाति' (Taibe) का निर्माण करते हैं। इस प्रकार समूहों ने बढकर 'प्रजातियों' (*Races*) और 'राष्ट्रों' (Nations) का रूप धारण किया। सम्भव है कि भविष्य में वे एक होकर 'विश्व-समाज' (World Sciety) का निर्माण करें।

अपने सामाजिक विकास में व्यक्ति ने अनेक गुण प्राप्त किए हैं; जैसे—साथ रहने की प्रबल इच्छा, सहानुभूति, नेतृत्व और अपने कार्यों के लिए दूसरों की स्वीकृति। इन गुणों को वह समाज मे रहकर और दूसरों से सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करके ही प्राप्त कर सकता है। उसके लिए सामूहिक जीवन उतना ही आवश्यक है, जितनी कि साँस लेने के लिए वायु। उसका जन्म सामाजिक समूह मे होता है और इच्छा करने पर भी वह उससे अलग नही हो सकता है। क्योंकि वह समाज से प्रेम करने वाला व्यक्ति होता है, इसलिए वह स्वयं भी उससे अलग नही होना चाहता है। समाज मे दूर जाना और एकान्त में रहना—उसके लिए अति क्रूर दण्ड होगा।

व्यक्ति और सामाजिक समूह का सम्बन्ध : Individual & Social Group Relationship—व्यक्ति और सामाजिक समूह को एक-दूसरे से अलग और स्वतन्त्र नहीं माना जा सकता है। न तो उनका अलग अस्तित्व है, और न वे एक-दूसरे के विरोधी हैं। वे एक-दूसरे पर आधारित और एक-दूसरे के पूरक हैं। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व असम्भव है। एक पर अधिक बल देना और दूसरे की अपेक्षा करना—अन्त में हानिकारक सिद्ध होता है। यूनानी दार्शनिक प्लेटो अपने समय की व्यक्तिवादी विचारधारा को अच्छी तरह समझता था। पर उसने इस बात पर बल दिया कि व्यक्ति और सामाजिक समूह में सामंजस्य आवश्यक है। उग्र व्यक्तिवाद का परिणाम यह होता है कि व्यक्ति अपने को सब बातों का केन्द्र मानने लगता है। इससे 'अहंवाद' का जन्म होता है, जो विनाश की ओर ले जाता है। इस विनाश को रोकने लिए यह आवश्यक है कि आत्म-हित और समाज-हित में सामंजस्य स्थापित किया जाय।

सामाजिक समूह का व्यक्ति के लिए बहुत महत्त्व है। इसी समूह में उसका जन्म, पालन-पोषण और उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। यह व्यक्ति को बनी-बनाई संस्थाएँ और व्यवहार का स्तर देता है। यह व्यक्ति को पुरस्कार की आशा दिलाकर प्रतियोगिता और सहयोग के लिए प्रेरित करता है। सामाजिक समूह के योगदान के बिना व्यक्तिगत विकास असम्भव है। सामाजिक समूह से अलग व्यक्ति की कल्पना नहीं की जा सकती है। जितना व्यक्ति के लिए सामाजिक समूह आवश्यक है, उतना ही सामाजिक समूह के लिए व्यक्ति आवश्यक है। व्यक्ति के द्वारा ही सामाजिक समूह की प्रगति और सफलता सम्भव है। पर यह तभी हो सकता है, जब व्यक्ति शिक्षित हो! अशिक्षित व्यक्ति से सामाजिक समूह के किसी हित की आशा नहीं की जा सकती है। इस हित के लिए व्यक्ति का चरित्रवान् होना भी आवश्यक है।

साराश मे, व्यक्ति और सामाजिक समूह का बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। ये दो स्वतन्त्र इकाइयाँ नहीं है। सामाजिक समूह और व्यक्ति एक-दूसरे पर अवलम्बित है, एक-दूसरे के पूरक है। व्यक्तियों के अभाव में सामाजिक समूह की कल्पना नहीं की जा सकती है, और न बिना सामाजिक समूह के व्यक्ति के जीवन की। व्यक्ति सामाजिक समूह का निर्माण करता है, और सामाजिक समूह व्यक्ति का निर्माण करता है।

भारतीय समाज का स्वरूप
Nature of Indian Society

भारतीय समाज के स्वरूप के अग्रलिखित दो पहलू हैं : (i) भारतीय समाज का परम्परात्मक स्वरूप, और (ii) भारतीय समाज का आधुनिक स्वरूप।

I. भारतीय समाज का परम्परागत स्वरूप : Traditional Nature of Indian Society

भारत विविधताओं का देश है। यहाँ नाना प्रकार के सामाजिक समूह,

व्यावसायिक जातियाँ, धार्मिक समूह और सामाजिक वर्ग पाये जाते हैं। इन सभी ने शिक्षा के रूप में अपना प्रभाव डाला है और बालक के मानसिक और सांस्कृतिक विकास को किसी-न-किसी दिशा में मोड़ा है। अतः हमारे लिए इनका अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है।

हम इनका विस्तृत अध्ययन निम्नलिखित तीन शीर्षकों में करेंगे :—

1—व्यावसायिक जातियाँ (Occupational Castes)

2.—धार्मिक समूह (Religious Groups)

3—सामाजिक वर्ग (Social Classes)

(1) व्यावसायिक जातियाँ : Occupational Castes–(अ) जाति का अर्थ और विशेषताएँ : Meaning & Characteristics of Caste—'जाति' एक वर्ग (Class) है, पर यह एक ऐसा वर्ग है जिसकी सदस्यता जन्म से निश्चित होती है; तब इसे 'जाति' कहा जाता है। यह एक 'बन्द वर्ग (Closed Class) है, क्योंकि एक जाति के व्यक्ति दूसरी जाति में स्थान नहीं पा सकते है। सी० एम० केस (C. M. Case) का कथन है :—"**यद्यपि जाति के प्रमाण संसार के अनेक भागों में पाये जाते हैं, पर इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि इसका सबसे पूर्ण उदाहरण वह है, जो भारत में पाया जाता है। यहाँ पर हम एक ऐसा सामाजिक संगठन पाते हैं, जो इतने अधिक भागों में बँटा हुआ है, जितना कि पैगोडा का भवन।**"

जाति-व्यवस्था ने हिन्दू सामाजिक संगठन को सुदृढ और स्थिर बनाने में महत्त्वपूर्ण योग दिया है। एक जाति अपनी जाति के सदस्यों को मानसिक और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करती है, सामुदायिक एकता की स्थापना करती है और सामाजिक नियन्त्रण का कार्य करती है।

इन इच्छाइयों के साथ-साथ जाति में बुराइयाँ भी है। समाज में जाति का स्थान, असमानता के सिद्धान्त पर निर्मित है। जाति के बन्धन इतने कठोर है कि इसने शोषण के अनेक कार्य किए है। एक व्यक्ति का सम्मान केवल इसलिए नहीं होता है, क्योंकि वह निम्न जाति का सदस्य है। जाति ने खान-पान, विवाह और व्यवसाय पर कठोर प्रतिबन्ध लगाकर समाज में जटिल और 'भौतिक स्तरण' (Horizontal Stratification) का विकास किया है। पैतृकता के अनुसार व्यवसायों को निश्चित करके जाति ने 'सामाजिक गतिशीलता' (Social Mobility) को बहुत सीमित कर दिया है।

उपर्युक्त दोषों को देखकर जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में कहा जा सकता है :—

"**भारत में जाति प्राचीन काल में कितनी ही उपयोगी क्यों न रही हो, पर इस समय यह सब प्रकार की उन्नति के मार्ग में बड़ी भारी बाधा और रुकावट बन रही है। आज यह हमारी दया की पात्र नहीं है और किसी भी भावना के अधीन होकर हमें इसके साथ मोह नहीं करना चाहिए। हमें इसे जड़ से उखाड़ कर अपनी सामाजिक रचना दूसरे ही ढंग से करनी होगी।**"

(ब) जाति व व्यवसाय : Caste & Occupation—कुछ विद्वानों का मत है कि केवल व्यवसाय ही जाति-प्रथा की उत्पत्ति के लिए उत्तरदायी है। जी० एस० घुरे (G. S. Ghurye) ने यह अस्वीकार करते हुए लिखा है :—"जाति की उत्पत्ति का कारण व्यवसाय नहीं है।" ("Caste is not occupational in its origin.")

डा० मजूमदार का भी कथन है :—"भारत में जो थोड़े से व्यवसाय पाये जाते हैं, उनसे उन असंख्य जातियों के होने की पुष्टि नहीं होती है, जिन्हें एक व्यक्ति विशेष क्षेत्र में पाता है।"

"The few occupations followed in India do not account for the innumerable castes that one finds in any particular region."

—Majumdar.

मजूमदार का कथन पूर्णतया सत्य है, क्योंकि हम एक ही व्यवसाय में प्रायः सभी जातियों के लोगों को लगा हुआ पाते है। उदाहरण के लिए कृषि ले लीजिए। ऐसी कौन-सी जाति है, जिसका सम्बन्ध कृषि-कार्य से नहीं है ? इसी प्रकार हमें एक ही जाति के व्यक्ति विभिन्न व्यवसायों में भी मिलते हैं।

घुरे (Ghurye) का मत है कि यह धारणा 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुई कि प्रत्येक जाति का एक खास व्यवसाय है और उसको छोड़कर दूसरे व्यवसाय को अपनाना उचित नहीं है। धीरे-धीरे यह धारणा दृढ़ होती गई। इसके विरुद्ध, नेसफील्ड (Nesfield) और डालमैन (Dahlman) का मत है कि जाति-प्रथा की उत्पत्ति व्यवसायों के कारण हुई। हटन (Hutton) ने इन विद्वानों की बड़ी कठोर आलोचना की है। उसका तर्क है कि जब व्यवसाय सैकड़ों-सहस्रों थे, तब जातियाँ केवल चार ही क्यों बन सकीं ?

इस स्थिति में हमारे लिए यही उचित होगा कि हम घुरे के मत को ही स्वीकार करें। इस लेखक ने जो कहा है, वह आज के समाज में भी दिखाई देता है। एक जाति के लोग बहुत समय से जो काम करते चले आ रहे हैं, वे उसी को करना ठीक समझते है। ग्रामीण समुदायों में इस बात पर बहुत अधिक बल दिया जाता है। वहाँ की अपेक्षा नगरों में ऐसा कम है, क्योंकि शिक्षा और जीवन की बदली हुई दशाओं ने लोगों का दृष्टिकोण बदल दिया है।

(2) धार्मिक समूह : Religious Groups—मोटे तौर पर, भारत में केवल तीन धार्मिक समूह या सम्प्रदाय है—ईसाई, हिन्दू और मुसलमान। पर यदि हम थोड़ा-सा सूक्ष्म अध्ययन करें, तो हमें इन समूहों के अन्दर भी समूह मिलेंगे। ईसाइयों में प्रोटेस्टेन्ट, प्रेसबीटेरियन और रोमन कैथोलिक; मुसलमानों में शिया और सुन्नी। जहाँ तक हिन्दुओं की बात है, उनके धार्मिक समूहों की गिनती करना कठिन है।

उपर्युक्त सभी धार्मिक समूहों में गुण और अवगुण—दोनों हैं। गुण ये हैं कि वे प्रेम, श्रद्धा, आनन्द आदि मानसिक संवेगों को जन्म देते हैं। वे लोगों को किसी

महान् शक्ति से भयभीत रखते हैं, जिसके कारण वे बुरे कामों को करने से डरते हैं। एक धार्मिक समूह के लोगों में निकटता और सहानुभूति होती है। इसलिए, वे कठिनाई के समय एक-दूसरे का साथ देते हैं। वे समय-समय पर धार्मिक उत्सवों और समारोहों के लिए जमा होते है, जिनसे उनमें घनिष्टता उत्पन्न होती है। इतना ही नही, अपने समूह के धर्म से प्रेरित होकर लोग अपने परिवार और बिरादरी के नियमों का पालन करते हैं। वे उसी काम को करते है, जिसे उनका धर्म ठीक बताता है। इस प्रकार, उनमें उत्तम चरित्र का निर्माण होता है।

इन सब गुणों के बावजूद भी धार्मिक समूहो के अवगुणों को अस्वीकार नही किया जा सकता है। धर्म में आस्था रखने वाले लोग बुद्धि से काम नही लेते है। वे अपने मानसिक संवेगों के अधीन रहते हैं। वे आंख बन्द करके अपने धर्म का अनुकरण करते हैं और अपने धर्म को सबसे अच्छा मानते है। अपने धर्म की अफीम के नशे में चूर वे अन्य धार्मिक समूहों और उनके सदस्यो को अपने से तुच्छ समझते हैं। उनमें असहिष्णुता का प्रादुर्भाव होता है। फलस्वरूप, उनमें अनेक प्रकार की समाज-विरोधी प्रवृत्तियाँ और शक्तियाँ प्रोत्साहित होती हैं। अपने धर्म की सर्वोच्च शक्ति को प्रसन्न करने के लिए वे अनेक प्रकार के कुत्सित कार्य करते हैं।

धर्म के नशे में अन्धे वे किसी भी अमानवीय और निकृष्ट कार्य को करने में संकोच नही करते है। विश्व का इतिहास इसका साक्षी है। धर्म के नाम पर राजाओ ने अपनी प्रजा पर अकथनीय अत्याचार किए है। धर्म के नाम पर ब्राह्मणों ने निम्न जातियों पर प्रतिबन्ध लगाकर इनका गला घोंटा है और उन्हे अपना विकास नहीं करने दिया है। धर्म के नाम पर स्त्रियों को दहकती चिता में धकेल कर सती-प्रथा को एक लम्बे समय तक जीवित रखा गया। धर्म के नाम पर आज भी लाखों विधवाएँ नरक-तुल्य जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य की जाती हैं। धर्म के नाम पर 1947 में हिन्दू-मुस्लिम झगड़े हुए जिनमें हजारो निरपराध व्यक्तियों के प्राण चले गए और लाखो बेघरबार हो गए।

धर्म और धार्मिक समूहो के गुण-दोषों का जितना ही वर्णन किया जाय, उतना ही कम है। पर यदि हम शान्त हृदय से विचार करें, तो धर्म और धार्मिक समूहों—दोनों का होना अनिवार्य है। एक धार्मिक समूह का सदस्य दुःख और निराशा मे अपने धर्म से ही सान्त्वना प्राप्त करता है। यदि धर्म का आविष्कार न हुआ होता, तो आज उसकी दशा पशुओं के समान होती है।

(3) सामाजिक वर्ग : Social Classes—प्रत्येक समाज अनेक सामाजिक वर्गों में विभक्त दिखाई देता है। प्रत्येक सामाजिक वर्ग में सभी आयु, योनि, उद्योग-धन्धे और जाति के लोग होते हैं। प्रत्येक समाज में प्रायः तीन सामाजिक वर्ग होते हैं—उच्च, मध्य और निम्न। हम विभिन्न सामाजिक वर्गों के व्यक्तियों को उनकी वेश-भूषा, रहन-सहन, आचार-व्यवहार आदि से जान सकते हैं। इसका अर्थ यह है कि सामाजिक वर्गों का विभाजन 'प्रतिष्ठा' (Status) के आधार पर किया गया है।

इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि सामाजिक वर्ग ऐसे व्यक्तियों का एक समूह होता है, जिसका समाज में एक विशेष स्थान होता है और जिनकी प्रतिष्ठा दूसरे व्यक्तियों से भिन्न होती है। एक सामाजिक वर्ग के व्यक्ति अपनी प्रतिष्ठा के कारण अपने को दूसरे सामाजिक वर्ग के व्यक्तियों से अलग समझते हैं और उसमें 'वर्ग-भावना' (Class Consciousness) होती है। जो कुछ हमने लिखा है, उसे हम लापियरे के शब्दों में इस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं :—"सामाजिक वर्ग सांस्कृतिक रीति से परिभाषित समूह है, जिसे सम्पूर्ण जनसंख्या के अन्तर्गत एक विशेष स्थान या स्तर प्राप्त होता है।"

"A social class is a culturally defined group that is accorded a particular position or status within the population as a whole."

—Lapiere.

सामाजिक वर्गों में जो विशेषताएँ पाई जाती है, वे अग्रांकित है :—

(1) सामाजिक वर्गों के सदस्य अपने वर्ग की प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिए विवाह इत्यादि करते समय ऋण लेने या सम्पत्ति बेचने में संकोच नहीं करते हैं।

(2) प्रत्येक सामाजिक वर्ग के रीति-रिवाज, रहन-सहन और आचार-विचार आदि का एक निश्चित ढंग होता है। सभी सामाजिक वर्ग इस ढंग को स्थायी बनाने का प्रयास करते हैं।

(3) एक सामाजिक वर्ग के व्यक्ति दूसरे सामाजिक वर्गों के व्यक्तियो को अपने से ऊँचा या नीचा समझते हैं। इस भावना के फलस्वरूप सामाजिक वर्गों में पृथकता रहती है।

(4) वर्गों में स्थिरता होती है। सभी समाजो में तीन सामाजिक वर्ग सदैव से चलते चले आ रहे हैं। यदि सामाजिक वर्गों में स्थिरता न होती, तो सामाजिक व्यवस्था का अन्त हो जाता।

(5) एक सामाजिक वर्ग के व्यक्ति एक-दूसरे के प्रति समानता की भावना रखते हैं। सामाजिक व धार्मिक कृत्यों के अवसरों पर वे अपने वर्ग के व्यक्तियों का विशेष रूप से ध्यान रखते हैं।

(6) प्रत्येक सामाजिक वर्ग के द्वार सबके लिए खुले रहते हैं। अपने वैयक्तिक गुणों या धनी होने के कारण एक व्यक्ति अपने से उच्च सामाजिक वर्ग मे जा सकता है, और निर्धनता प्राप्त होने पर या अपने दुर्गुणों के कारण वह निम्न सामाजिक वर्ग में चला जाता है।

II. भारतीय समाज का आधुनिक स्वरूप : Modern Nature of Indian Society

(अ) ब्रिटिश-काल में भारतीय समाज : Indian Society in British Period—भारत का आधुनीकरण अंग्रेजो का कार्य था, जिससे भारतीय सामाजिक

जीवन का प्रत्येक पहलू प्रभावित हुआ। सर जदुनाथ सरकार का मत है :—"भारत में ब्रिटिश शासन के सम्पूर्ण कार्य पर दृष्टिपात करने से हम यह देखने में असफल नहीं रह सकते हैं कि हमारे समाज में इसके द्वारा क्रान्तिकारी परिवर्तन किया गया है।"

"Looking at the whole course of British rule in India, we cannot fail to see that *a revolutionary change has been made by it* in our society."—**Sir Jadunath Sarkar.**

जो क्रान्तिकारी परिवर्तन भारत के लिए लाभप्रद सिद्ध हुए, वे अग्रलिखित हैं :—(1) धर्म या जाति के भेदभाव के बिना सभी के लिए समानता। (2) मजदूरों और किसानों को *दासता की स्थिति से उठाकर पूर्ण नागरिकता की स्थिति* पर पहुँचाना। (3) विस्तृत और प्रभावशाली मध्य वर्ग का विकास। (4) पूँजीपति वर्ग का उत्थान। (5) स्त्रियों की हीन सामाजिक स्थिति से मुक्ति। (6) जाति-प्रथा का विघटन। (7) प्रान्तीयता, भाषा-सम्बन्धी और धार्मिक मतभेदों का धीरे-धीरे ह्रास।

(ब) नव भारत में भारतीय समाज : Indian Society in New India—नव भारत में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए है। भारतीय संविधान ने घोषणा की है :—

धारा 15 (1)—"राज्य किसी भी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, कुल या वंश, जाति, लिंग, जन्म-स्थान या इनमें से किसी एक के आधार पर अन्तर या भेद स्थापित नहीं करेगा।"

धारा 17— "अस्पृश्यता समाप्त की जाती है और इसका किसी भी रूप में व्यवहार निषिद्ध है। 'अस्पृश्यता' के कारण किसी प्रकार की अयोग्यता का प्रचलन कानून के अनुसार दण्डनीय अपराध होगा।"

धारा 38— "राज्य जन-साधारण के कल्याण को, एक सामाजिक व्यवस्था, जिसमें न्याय—सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक—राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्राणित करेगा, जहाँ तक सम्भव हो सकेगा, प्राप्त करके एव सुरक्षित करके, उन्नति का प्रयत्न करेगा।"

नव भारत ने समाज के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित कानून बनाकर उसको प्रभावित किया है; उदाहरणार्थ—'अस्पृश्यता' को समाप्त कर दिया गया है, सभी धार्मिक संस्थाओं को अछूतों के लिए खोल दिया गया है। वे किसी भी नदी, तालाब या कुएँ का प्रयोग कर सकते हैं। विवाह को 'नागरिक समझौते' (Civil Contract) का रूप दिया गया है। बहु-विवाह को समाप्त कर दिया गया है। कुछ स्थितियों में तलाक देने की आज्ञा दे दी गई है, स्त्रियों को परिवार की सम्पत्ति पर उत्तराधिकार दे दिया गया है। जागीरदारी, ताल्लुकेदारी तथा जमींदारी का अन्त करके लोगों के सामाजिक सम्बन्धों में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किए गये हैं।

उपसंहार

हमने गत पृष्ठों में भारतीय समाज के स्वरूप का वर्णन किया है। इस वर्णन से स्पष्ट हो जाता है कि यह स्वरूप आधुनिक समय में बहुत परिवर्तित हो गया है। प्राचीन समय में जातियों ने भारतीय समाज को एक निश्चित रूप प्रदान किया था, पर समय की गति के साथ जातीय बन्धन ढीले होते चले गये और परिणामस्वरूप समाज का रूप बदलता चला गया। इस रूप को बदलने में अंग्रेजों का योगदान कुछ कम नहीं रहा है। स्वतन्त्र भारत ने अपने संविधान द्वारा इसको और भी अधिक बदलने का प्रयास किया है। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते हैं कि भारतीय संविधान का उद्देश्य—भारत में 'प्रजातांत्रिक समाज' (Democratic Society) की स्थापना करना है, और भारतीय समाज इसी दिशा में धीरे-धीरे अग्रसर हो रहा है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss briefly the importance of the sociological basis of education.

शिक्षा में समाज-शास्त्रीय आधार के महत्त्व की विवेचना कीजिए।

2. How have castes, religious groups, and social classes influence the nature of the Indian society.

जातियों, धार्मिक समूहों तथा सामाजिक वर्गों ने भारतीय समाज के रूप को किस प्रकार प्रभावित किया है?

3. Discuss the general nature of Indian society and explain its meaning for education towards producing ideal citizens for the emerging democracy in the country,

भारतीय समाज के सामान्य रूप की विवेचना कीजिए और यह बताइये कि देश के विकसित होते हुए जनतंत्र के लिए आदर्श नागरिक उत्पन्न करने के हेतु शिक्षा के लिए इसका क्या तात्पर्य है?

36

बालक के विकास पर भारतीय समाज का प्रभाव

IMPACT OF INDIAN SOCIETY ON THE DEVELOPMENT OF CHILD

"भारतीय समाज अपनी जातियों, वर्गों, सामाजिक एवं धार्मिक समूहों, परम्पराओं और रीति-रिवाजों के साथ बालक के व्यक्तित्व के बौद्धिक, शारीरिक, आध्यात्मिक, संवेगात्मक और सौन्दर्यात्मक पक्षों पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव डालता है।"

"The Indian society with its castes, classes, social and religious groups, traditions and customs has a direct and indirect impact on the intellectual, physical, spiritual, emotional and aesthetic aspects of the child's personality."–**Pathak & Tyagi.**

विषय-प्रवेश

भारतीय समाज में विभिन्न जातियाँ, धर्म और वर्ग पाये जाते हैं। इन सब की अपनी परम्पराएँ, रीति-रिवाज, आचार-विचार और रहन-सहन हैं। इनके आदर्शों और मान्यताओं में भी अन्तर माना जाता है। इनके बीच में जन्म लेने और रहने वाला बालक इनसे किसी-न-किसी प्रकार प्रभावित हुए बिना नहीं बचता है। वह जान-बूझकर और अनजाने भी इन जातियों, धर्मों और वर्गों की कुछ विशेषताओं को अपनाता रहता है। समय की गति के साथ, ये विशेषताएँ उसके व्यक्तित्व पर अपनी स्थायी छाप लगा देती है।

बालक पर भारतीय समाज का प्रभाव
Impact of Indian Society on Child

भारतीय समाज का बालक के विकास पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव हितकर भी होता है और अहितकर भी। हम इस प्रभाव का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत कर रहे हैं :—

1. बालक के शारीरिक विकास पर प्रभाव : Impact on Child's Physical Development—नवीन शिक्षण-विधियों से प्रभावित होने के कारण नव-भारत बालक के शारीरिक विकास पर बहुत बल दे रहा है। प्राथमिक स्तर से विश्वविद्यालय स्तर तक किसी-न-किसी प्रकार की शारीरिक शिक्षा की व्यवस्था है। आज की शिक्षा-संस्थाओं में खेल-कूद, स्काउटिंग, गर्ल-गाइडिंग, पी० ई० सी०, एन० सी० सी० और एन० सी० सी० आर० साधारण बातें हो गई हैं। राज्य—युवक कल्याण' (Youth Welfare) और 'युवक उत्सव' (Youth Festival) को प्रोत्साहित करता है, और व्यायामशालाओं तथा नहाने के तालाबों को बनाने के लिए शिक्षा-संस्थाओं को धन देता है। इन सब बातों ने बालक को अपने शारीरिक विकास के लिए बहुत सुन्दर अवसर दिए हैं।

पर क्या हमारे छात्रों ने इन अवसरों से लाभ उठाया है ? उत्तर केवल 'नहीं' में है। एक अंग्रेजी कहावत है—"You can take the horse to water but you cannot make it drink." यही बात हमारे छात्रों के सम्बन्ध में है। शारीरिक विकास की सुविधाएँ तो है, पर वे उनसे लाभ नहीं उठाते हैं। क्यों ? इसका कारण यह है कि हमारे छात्रों मे अपने-आप को स्वस्थ बनाने की तनिक भी इच्छा नहीं है।

शारीरिक व्यायाम का अर्थ है—शारीरिक श्रम। इससे हमारे तरुण छात्र और छात्राएँ जी चुराते है। इसके लिए वे तो उत्तरदायी हैं ही, पर समाज भी कुछ कम उत्तरदायी नहीं है। समाज उनको सस्ते मनोरंजन देकर उनके शाम के समय को छीन लेता है। वे सिनेमाघरों में जाकर काल्पनिक प्रेम-कहानियाँ देख सकते है, बाजार में घूम कर लाउडस्पीकरों पर कामुक गाने सुन सकते है और रेस्टोरों मे जाकर 25 या 30 पैसे की चाय पी सकते है। आराम और मनोरंजन सभी चाहते हैं। फिर यदि हमारे नवयुवक और नवयुवतियाँ उनके पीछे दौड़ते है, तो उनका क्या दोष है ? पर उनकी हानि अवश्य है। यह हानि आप शारीरिक दुर्बलता, पीले चेहरे और अन्दर घुसी हुई आँखों में देख सकते हैं। यह है—नव भारत मे नवयुवकों और नवयुवतियों का चित्र।

2. बालक के मानसिक विकास पर प्रभाव : Impact on Child's Intellectual Development—भारतीय संविधान—जाति और धर्म का भेदभाव किये बिना सब नागरिकों को शिक्षा का समान अवसर देता है। फलतः बालक किसी भी

शिक्षा-संस्था में जाकर किसी प्रकार की भी शिक्षा प्राप्त कर सकता है। इससे उसे अपने मानसिक विकास के लिए पर्याप्त अवसर मिलता है। प्राथमिक शिक्षा नि:शुल्क और अनिवार्य होने के कारण वह इसको सरलता से प्राप्त कर सकता है। यह शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी सभी शिक्षा-संस्थाओं के द्वार उसके लिए खुले हुए हैं। इसलिए, वह अपनी इच्छानुसार प्राविधिक, मैडिकल, इंजीनियरिंग तथा अन्य कोई भी शिक्षा प्राप्त कर सकता है। सारांश में, इस विस्तृत देश के किसी भी कोने में रहने वाले बालक को किसी प्रकार की शिक्षा-सम्बन्धी असुविधा नहीं है। क़ानून द्वारा उसके मानसिक विकास को सुनिश्चित कर दिया गया है।

पर चित्र उतना उज्जवल नही है, जितना कि ऊपर अंकित किया गया है। राज्य ने बालक को अपने मानसिक विकास के लिए अवसर अवश्य दिए है, पर उस अवसर को प्राप्त करने के लिए सभी साधन नहीं जुटाए हैं। इसमें कोई संदेह नही है कि सरकार ने नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की है। पर अभी तक यह व्यवस्था देश के सब बच्चों के लिए नही हो पाई है।

ऐसी स्थिति में समाज का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह शेष बच्चो की शिक्षा का प्रबन्ध करे। समाज ऐसा कर सकता है और कर रहा है। पर जातियों, धर्मों, वर्गो और समूहों में विभाजित समाज जो भी विद्यालय स्थापित करता है, उसके द्वार सब बालकों के लिए नही खुलते है। एक जाति और धर्म द्वारा स्थापित विद्यालय मे या तो अन्य जाति और धर्म के बालक को प्रवेश नहीं दिया जाता है, और यदि किसी प्रकार दे भी दिया जाता है, तो उसके साथ उचित व्यवहार नही किया जाता है।

इसके अतिरिक्त, गैर-सरकारी स्कूलों की शिक्षा इतनी महँगी है कि गरीब किसान या मजदूर उनमें अपने बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए भेजने की बात सोच ही नही सकता है। इन सब बातों के फलस्वरूप ऐसे अनेक बच्चे हैं, जिन्हें अपने मानसिक विकास का अवसर नहीं मिलता है।

3. बालक के आध्यात्मिक विकास पर प्रभाव : Impact on Child's Spiritual Development—मनुष्य की आत्मा का पोषण—धर्म और नैतिकता करते है। इन्ही के द्वारा व्यक्ति का आध्यात्मिक विकास हो सकता है। पर आज ये दोनों ही अतीत के गर्त में धकेल दिये गये हैं। पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति के सम्पर्क मे आकर और पाश्चात्य साहित्य का अध्ययन करके हमने अपने पूर्वजों के आध्यात्मिक आदर्शों को भुला दिया है। औद्योगीकरण, यन्त्रीकरण और नगरीकरण ने हमें अपने आध्यात्मिक कर्त्तव्यों के प्रति उदासीन होने में सहायता दी है। जब हमारी स्वयं की दशा ऐसी है, तब हम अपने बच्चों के आध्यात्मिक विकास के बारे मे क्या कह सकते है। जो कुछ अब हम कह सकते है, वह केवल यह है कि आध्यात्मिक विकास के बजाय उनका बड़ी तेजी से आध्यात्मिक पतन हो रहा है।

इसके लिए जितने हम उत्तरदायी है, उतनी ही हमारी सरकार है। सरकार ने स्कूलों, कॉलिजों और विश्वविद्यालयों के छात्रों के लिए धार्मिक और नैतिक शिक्षा की कोई योजना अभी तक लागू नही की है। जब इस प्रकार की शिक्षा की कोई योजना नही है, तब बालकों के आध्यात्मिक विकास की बात सोचना केवल कल्पना होगी।

4. बालक के संवेगात्मक व सौन्दर्यात्मक विकास पर प्रभाव : Impact on Child's Emotional & Aesthetic Development—दुःख की बात है कि अभी तक भारतीय समाज ने बालक के संवेगात्मक और सौन्दर्यात्मक विकास के लिए कुछ भी नही किया है। अभी तक हमारे प्रायः सभी विद्यालय 'एकमार्गीय' (Unilateral) है। उनमें वही पुराना घिसा-पिटा पाठ्यक्रम है।

भारत में केवल 'विश्वभारती' ही एक ऐसी शिक्षा-संस्था है, जो इस बात का दावा कर सकती है कि वह बच्चों के संवेगात्मक और सौन्दर्यात्मक विकास के लिए सभी प्रकार की सुविधाएँ जुटाती है। अन्य शिक्षा-संस्थाएँ ऐसा क्यों नही करती हैं? इसके केवल दो उत्तर हो सकते है :—(1) राज्य और समाज ने अभी तक इस विकास के महत्त्व को नही समझा है; (2) यदि उन्होंने इसके महत्त्व को समझ लिया है, तो वे इस विकास के लिए इच्छुक नहीं है।

5. दरिद्रता का प्रभाव : Impact of Poverty—भारत इतना निर्धन देश है कि मुश्किल से 3 प्रतिशत जनसख्या के बारे में यह कहा जा सकता है कि उसके रहन-सहन का स्तर कुछ ठीक है। ऐसी स्थिति शायद ही किसी दूसरे देश में पायी जाती हो। हर नगर में आपको गन्दी बस्तियाँ मिलेंगी, जिनमें भारत की निर्धन जनता निवास करती है। इनके बारे में डा० आर० के० मुकर्जी ने लिखा है :—"*यहाँ मनुष्यत्व को पशुवत् बनाया जाता है, नारीत्व का अपमान किया जाता है और बाल्यावस्था को प्रारम्भ से ही दूषित बनाया जाता है।*"

"It is here that manhood is brutalised, womanhood dishonoured and childhood poisoned at its very source."

—R. K. Mukerjee.

ऐसी स्थिति में यह सोचना कि बालक का विकास उचित दिशा में होगा, केवल मन की भ्रान्ति है।

6. सांस्कृतिक वियोजन का प्रभाव : Impact of Cultural Disintegration—आधुनिक भारतीय समाज अपनी प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं को भूल चुका है। हम पर अंग्रेजियत का ऐसा रंग चढ़ गया है कि हम अपनी सस्कृति को कोई महत्त्व नहीं देते है। फलस्वरूप, उसका बड़ी तेज़ी से वियोजन हो रहा है। हमारे लिए हमारी परम्पराएँ, हमारे आदर्श, हमारे रीति-रिवाज और हमारे शिष्टाचार के नियमों का कोई मूल्य नही रह गया है।

इन सब बातों का हमारे बच्चों पर बड़ा दूषित प्रभाव पड़ रहा है। वे विलासिता और बुरी आदतों से प्रेम करते है, बड़ों की अवज्ञा करते हैं, व्यायाम के बजाय प्रेम-वार्त्ता करते है, कमरे में अपने से बड़ों को आते देखकर खड़े नहीं होते है, अपने माता-पिता का विरोध करते हैं, वयोवृद्ध लोगों के सामने मजाक करते है, भोजन करते समय भोजन के नियमों का पालन नही करते हैं और विद्यालयों में मनमाने ढग से बैठकर अध्यापकों के साथ बुरा व्यवहार करते हैं।

7. पारिवारिक विघटन का प्रभाव : **Impact of Family Disorganization**—'परिवार' बालक की शिक्षा का प्रमुख केन्द्र है। इस शिक्षा का उत्तम स्वरूप संगठित परिवार मे ही हो सकता है। आज का भारतीय परिवार अपने पुराने आदर्श को भूल चुका है। औद्योगीकरण, यन्त्रीकरण और अनेक अन्य कारणों से उसका विघटन हो रहा है। इस प्रकार के परिवार में बालक का सामाजिक चरित्र ढाला जाना असम्भव है। इसका परिणाम यह होता है कि वह बुरी बातों की ओर अग्रसर होता है, जो उसके और उसके समाज के लिए बहुत हानिकारक सिद्ध होती है।

8. अपराध का प्रभाव : **Impact of Crime**—स्वतन्त्र भारत मे एक नई बात जो विशेष रूप से दिखाई देती है, वह यह है कि अपराधों और अपराध करने वालों की संख्या दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती चली जा रही है। न केवल प्रौढ़-अपराधों में, वरन् बाल-अपराधों मे भी वृद्धि हो रही है। यदि प्रौढ़ छोटी-सी बात पर रक्त बहा देते हैं, तो विद्यालयों और कॉलिजो के छात्र छोटी-सी बात पर चाकू निकाल लेते हैं।

सह-शिक्षा, बाल-अपराध का मुख्य कारण बन गई है। छात्र केवल मजाक और अपना साहस दिखाने के लिए दूसरों के छुरा भौंक देते हैं। इस प्रकार शिक्षा-संस्थाएँ ज्ञान के पवित्र स्थान न रह कर—पाप और अपराध के घर बन गई है। उनके वातावरण का बालकों पर बड़ा बुर प्रभाव पड़ रहा है।

उपसंहार

उपर्युक्त शब्दों में हमने बालक के विकास पर भारतीय समाज के जिस प्रभाव का वर्णन किया है, उससे दो बातें पूर्णतया स्पष्ट हो जाती है : (1) भारतीय समाज का बालक के विकास पर प्रभाव अहितकर अधिक है और हितकर कम; (2) बालक पर जो अहितकर प्रभाव पड़ रहा है, उसके लिए सरकार और समाज—दोनों ही उत्तरदायी है।

खेद का विषय है कि दोनों मे से कोई भी अपने उत्तरदायित्व को पूर्ण नही कर रहा है। कारण सम्भवतः यह है कि सरकार इतनी गम्भीर समस्याओं मे उलझी हुई है कि उसे बालक के विकास के बारे में सोचने का अवकाश ही नहीं है। समाज सम्भवतः इसलिए नही सोचता है, क्योकि उसके पास वे साधन नहीं हैं, जिनको जुटा कर वह बालक के विकास को उचित दिशा प्रदान कर सके।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Give an account of the impact of modern Indian society on the development of the child.

बालक के विकास में आधुनिक भारतीय समाज के प्रभाव की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

2. What should we do to minimize the evil influences of certain special features that affect the growth of the child in our country ? Explain this in reference to the various religious groups and social classes existing in India.

अपने देश के बालकों के विकास पर कुछ सामाजिक बातों के पड़ने वाले कुप्रभाव को कम करने के लिए हमें क्या करना चाहिए ? भारत में पाये जाने वाले विभिन्न धार्मिक समुदायों और सामाजिक वर्गों के सन्दर्भ में इसे समझाइए।

37

बालक का समाजीकरण
SOCIALIZATION OF THE CHILD

"बालक का समाजीकरण बालकों के समूह में सर्वोत्तम रूप में होता है, और बालक दूसरे बालकों का सर्वोत्तम शिक्षक है।"

"The socialization of the child is realized best in children's groups, and the child is the best educator and teacher of other children."—**Joseph H. Roucek.**

समाजीकरण का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Socialization

*(अ) समाजीकरण का अर्थ : **Meaning of Socialization***—व्यक्ति अपने जन्म के समय से ही सामाजिक नहीं होता है। उस समय वह केवल पशु होता है। समाज ही उसे मानव बनाता है। समाज की संस्थाएँ और समितियाँ उसका समाजीकरण करती हैं। इस प्रक्रिया के कारण ही वह सामाजिक प्राणी बनता है। इसके *अभाव में उसका समाजीकरण नहीं हो सकता है। अवेरान (Averon) का जंगली* लड़का और अन्ना (Anna) नामक बालिका इसके उदाहरण है। समाज से अलग रहने के कारण उनका समाजीकरण न हो सका। अवेरान का जगली लड़का तो कभी भी मानव न बन सका, पर अन्ना का धीरे-धीरे समाजीकरण हो गया। सारांश यह है कि *समाज मे रहकर व्यक्ति कुछ आदतों, विश्वासों, अभिवृत्तियों आदि को सीखता है।* सीखने की इसी प्रक्रिया को 'समाजीकरण' कहते हैं। दूसरे शब्दो में, हम कह सकते है कि—समाजीकरण मानव-समाज की स्वाभाविक और एकीकरण करने वालों की सामाजिक प्रक्रिया है।

(ब) समाजीकरण की परिभाषा : Definition of Socialization— समाजीकरण का अर्थ और परिभाषा को किम्बल यंग के अग्रांकित शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है :—"समाजीकरण का अर्थ यह है कि व्यक्ति जनरीतियों, रूढ़ियों, क़ानूनों, अपनी संस्कृति की अन्य कुशलताओं और अन्य आवश्यक आदतों को सीखता है, जो समाज का क्रियाशील सदस्य बनाने में सहायता देती हैं। वह अपने आप को परिवार, पड़ोस और वर्ग के अनुकूल बनाना सीखता है। सारांश में, समाजीकरण की सम्पूर्ण प्रक्रिया, अन्त क्रिया या सामाजिक कार्य के अन्तर्गत आती है।"

"Socialization means that the individual learns the folkways, mores, laws and other features of his culture, as well as skills and other necessary habits, which enable him to become a functioning member of society. He learns to identify himself with the aims and values of his life, neighbourhood, class and community. In short, the whole process of socialization falls within the scope of interaction or the social act."—Kimball Young.

बालक का समाजीकरण करने वाले तत्व
Factors Leading to the Socialization of the Child

बालक के सास्कृतीकरण को ही समाजीकरण कहा जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि सस्कृति के विभिन्न साधन और विभिन्न रूप बालक के सामाजिक विकास को प्रभावित करते हैं। बालक में सामाजिकता का विकास करने या उसके समाजीकरण में सहायता देने वाले प्रमुख साधन या तत्त्व निम्नांकित हैं :—

1. परिवार : Family—किम्बल यंग का कथन है :—"समाज के अन्दर समाजीकरण के विभिन्न साधनों में 'परिवार' सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।"

"Of the various agencies of socialization within the society the 'family' is the most important."—Kimball Young.

कुछ विद्वानो ने 'परिवार' को समाजीकरण का सबसे अधिक स्थायी साधन माना है। व्यक्ति आजीवन परिवार में रहता है। उसके सभी सदस्यों से उसके सम्बन्ध होते हैं। ये सम्बन्ध व्यक्ति के समाजीकरण को स्थायी रूप से प्रभावित करते हैं। बालक के समाजीकरण में उसके माता-पिता का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। यदि उनका पारस्परिक व्यवहार ठीक है, तो बच्चे का समाजीकरण ठीक ढंग से हो जाता है। यदि उनमें आपस में खटपट रहती है, तो बच्चे का समाजीकरण विकृत हो जाता है। यही बात बच्चे के प्रति माता-पिता के सम्बन्ध के बारे में कही जा सकती है। यदि बच्चे को उनका प्रेम प्राप्त है, तो उसका समाजीकरण शान्तिमय रीति से होता है, अन्यथा नही।

माता-पिता से कहीं अधिक भाई-बहिन, भाई-भाई या बहिन-बहिन एक-दूसरे के सामाजिक विकास पर प्रभाव डालते हैं। सबसे बड़ा लड़का या लड़की अपने छोटे

भाई-बहिनों के प्रति अपने कुछ उत्तरदायित्व समझने लगता है। वह नेता के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है; फलतः उसमें नेता के गुणों का विकास होने लगता है। उसके छोटे भाई-बहिन उसकी आज्ञा का पालन करते हैं।

बच्चे पर उसके सम्बन्धियों का भी प्रभाव पड़ता है। जो बच्चे बचपन में ही अपने माता या पिता या दोनों को खो बैठते हैं और उनका पालन-पोषण उनके सम्बन्धियों द्वारा किया जाता है, उनका सामाजिक विकास उचित दिशा में नहीं होता है। इस प्रकार का बच्चा अपने सम्बन्धियों के पास एक अनाथ बच्चे के रूप में रहता है और उसके साथ वैसा व्यवहार नहीं किया जाता, जैसा कि सम्बन्धी अपने बच्चों के साथ करते हैं। समय-समय पर उसे डाँट या मार भी खानी पड़ती है। इसलिए उसका विकास कुण्ठित हो जाता है और उसका व्यक्तित्व विकृत हो जाता है।

2. परिवार की आर्थिक व सामाजिक स्थिति : Economic & Social Status of the Family—परिवार की आर्थिक और सामाजिक स्थिति का भी बच्चे पर प्रभाव पड़ता है। इस सम्बन्ध में प्लान्ट (J. S. Plant) ने कुछ महत्त्वपूर्ण अध्ययन किये हैं। उनके आधार पर वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि यदि परिवार आर्थिक सकट में होता है, तो बच्चे में सहनशीलता आदि गुणों का विकास होता है। बड़े होने पर ऐसे बच्चे धन जमा करने में बहुत सुख और सन्तोष का अनुभव करते हैं। इन बच्चों में आत्महीनता की भावना का उदय हो जाता है, और वे दूसरों की अपेक्षा अपने को हीन समझने लगते हैं।

शैवियाकोव (Sheviakov) के मतानुसार—इन बच्चों में आत्म-विश्वास का अभाव होता है। उन्हें किसी भी सामाजिक कार्य का उत्तरदायित्व लेने में संकोच होता है। पर यह आवश्यक नहीं है कि सब बच्चे ऐसे ही हों। आर्थिक संकट और निम्न सामाजिक स्तर के परिवारों के बालक ही बड़े होकर जाति-भेद, वर्ग-भेद और सामाजिक बुराइयों को दूर करने का बीड़ा उठाते हैं।

3. स्कूल : School—परिवार के बाद 'स्कूल' आता है, जहाँ बच्चे का समाजीकरण होता है। स्कूल ही उसे मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक विकास के लिए प्रेरणा देता है। स्कूल में ही उसे सामाजिक और सांस्कृतिक आदर्शों और मान्यताओं की शिक्षा प्राप्त होती है। बच्चा समझने लगता है कि परिवार की अपेक्षा स्कूल कहीं अधिक विस्तृत समाज है। अन्य बच्चों के सम्पर्क में आने से उसका समाजीकरण तीव्र गति से होने लगता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात जो बच्चा स्कूल में सीखता है, वह है 'प्रतियोगिता'। कक्षा में, खेल के मैदान में, परीक्षा में—सभी जगह प्रतियोगिता होती है। बच्चा इस प्रतियोगिता में आगे निकलना चाहता है, भले ही वह दूसरों को हानि पहुँचा कर ऐसा करे। इसका प्रभाव उसके आगामी जीवन पर अच्छा नहीं पड़ता है।

स्कूल में बच्चे को कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है। यदि नियम आवश्यकता से अधिक कठोर हैं, तो उनका बच्चे के समाजीकरण पर अच्छा प्रभाव

नहीं पड़ता है। यदि स्कूल का अनुशासन अच्छा नहीं है, तो बच्चा अपने व्यवहार पर नियन्त्रण करना नहीं सीख पाता है। बच्चे के समाजीकरण को निर्देशित करने वाली स्कूल की अन्य बातें हैं—परीक्षा-फल, खेलों में प्रसिद्धि, आर्थिक और सामाजिक स्तर, छात्रों की संख्या, शिक्षक और उनकी योग्यता—आदि।

4. समुदाय या समाज : Community or Society—समुदाय या समाज बच्चे के समाजीकरण को विभिन्न रूपों में प्रभावित करता है। सामाजिक मनोवैज्ञानिकों ने इस सम्बन्ध मे अनेक प्रयोग किए हैं। उनके आधार पर इन्होंने लिखा है कि समाज विभिन्न रूपों और विभिन्न विधियों से बच्चे के समाजीकरण पर प्रभाव डालता है।

समाज ऐसा जिन साधनो के द्वारा करता है, ये अग्रलिखित हैं:— (1) संस्कृति, कला, साहित्य और इतिहास; (2) धार्मिक कट्टरता या उदारता; (3) जातीय और राष्ट्रीय प्रथाएँ तथा परम्पराएँ; (4) समाज का आर्थिक और राजनीतिक संगठन; (5) जातीय पूर्वधारणाएँ; (6) वर्ग और वर्ण; (7) सामाजिक प्रथाएँ और परम्पराएँ; (8) शिक्षा के साधन और सुविधाएँ; (9) मनोरंजन के साधन और सुविधाएँ; तथा *(10) सामाजिक सुविधाएँ।*

5. जाति : Caste—'जाति' समाजीकरण का प्रमुख साधन है। प्रत्येक जाति की अपनी प्रथाएँ, परम्पराएँ और सांस्कृतिक उपलब्धियाँ होती हैं। प्रत्येक बच्चा अपनी जाति के अनुसार ही उन्हें ग्रहण करता है। इसीलिए, हर एक जाति के बच्चे का समाजीकरण भिन्न होता है; उदाहरण के लिए—ब्राह्मण बालक के समाजीकरण का रूप शुद्र बालक के समाजीकरण से बिल्कुल भिन्न होता है। इस प्रकार, जातीय विभेद बच्चे के समाजीकरण को एक विशेष दिशा प्रदान करते हैं।

6. पड़ोस : Neighbourhood—बच्चे पर पड़ोस का काफ़ी प्रभाव पड़ता है। इसलिए, अच्छे लोग किराए के लिए मकान लेते समय इस बात का आवश्यक रूप से ध्यान रखते हैं कि पड़ोस कैसा है। पड़ोस के बच्चो या बड़ों की सगति में बच्चा बिगड़ भी सकता है और सुधर भी सकता है। वास्तव में, पड़ोस एक प्रकार का बड़ा परिवार होता है। अतः परिवार के समान पडोस भी बच्चे के समाजीकरण में अत्यधिक योग देता है।

7. समूह : Groups—बच्चे के समाजीकरण को प्रभावित करने वाले समूह है—मित्र, सहपाठी, मनोरंजन के केन्द्र, धार्मिक समूह—आदि।

बालक के समाजीकरण में बाधा डालने वाले तत्त्व
Factors Impeding the Socialization of Child

मैसलो और मिटिलमैन (Maslow & Mittleman) के अनुसार अग्रलिखित तत्त्व बालक के समाजीकरण में बाधा उपस्थित करते हैं:—

1. बाल्यकालीन परिस्थितियाँ : Childhood Situations—ये वे परिस्थितियाँ हैं, जिनमें बच्चा अपने को बाल्यकाल में पाता है; उसे—माता-पिता के प्रेम

का अभाव, उनके द्वारा बच्चे की अस्वीकृति, माता-पिता में सदैव कलह, विधवा माँ, पक्षपात, असुरक्षा की भावना, एकाकीपन, दुःखपूर्ण अनुभव, अनुचित और अन्यायपूर्ण दण्ड।

2. सांस्कृतिक परिस्थितियाँ : **Cultural Situations**—इनके अन्तर्गत ये परिस्थितियाँ आती हैं—संस्कृत विरोधी तत्त्व, धर्म, वर्ग, वर्ण और जाति से सम्बन्धित पूर्व धारणाएँ, दरिद्रता, अत्यधिक बेकारी।

3. तात्कालिक परिस्थितियाँ : **Immediate Situations**—ये परिस्थितियाँ इस प्रकार हैं—निराशा, अपमान, अन्याय, अनियमितता, कठोरता, परिहास और भाई-बहिन, मित्र, पड़ोसी आदि की ईर्ष्या।

4. अन्य परिस्थितियाँ : **Other Situations**—इन परिस्थितियों में ये हैं—स्कूल की शिक्षा, आत्मनिर्भरता का अभाव, शारीरिक हीनता या न्यूनता, निरन्तर दूसरों से तुलना, असफलताएँ, पाप की भावना, सदैव छोटा समझा जाना, खेलों और साथियों की कमी।

समाजीकरण की प्रक्रिया में शिक्षक का कार्य
Teacher's Role in the Process of Socialization

बालक के समाजीकरण की प्रक्रिया में परिवार के बाद स्कूल और स्कूल में विशेष रूप से शिक्षक आता है। प्रत्येक समाज के कुछ विश्वास, दृष्टिकोण, मान्यताएँ, कुशलताएँ और परम्पराएँ होती हैं, जिनको 'संस्कृति' के नाम से पुकारा जाता है। यह संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित की जाती है और समाज के लोगों के आचरण को प्रभावित करती है। शिक्षक का सर्वश्रेष्ठ कार्य है—इस संस्कृति को बालक को प्रदान करना। यदि वह यह कार्य नहीं करता है, तो वह बालक का समाजीकरण नहीं कर सकता है।

शिक्षक, माता-पिता के साथ बालक के चरित्र और व्यक्तित्व का विकास करने में अति महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। फिर भी शिक्षक और माता-पिता एक-दूसरे से दूर रहते हैं और सम्पर्क में नहीं आते हैं। परिणाम यह होता है कि शिक्षक बालक की रुचियों, मनोवृत्तियों आदि को नहीं समझ पाता है। इसलिए, वह बालक का समाजीकरण उचित दिशा में करने में असफल होता है। इस विचार से यह अति आवश्यक है कि शिक्षक और माता-पिता एक-दूसरे के घनिष्ठ सम्पर्क में रहें और एक ही प्रकार के विश्वासों तथा दृष्टिकोणों को अपनाकर बालक का उचित दिशा में समाजीकरण करें।

कक्षा और खेल के मैदान में, साहित्यिक और सांस्कृतिक क्रियाओं में, शिक्षक सामाजिक व्यवहार के आदर्श प्रस्तुत करता है। बालक अपनी अनुकरण की मूल-प्रवृत्ति के कारण शिक्षक के ढंगों, कार्यों, आदतों और रीतियों का अनुकरण करता है। अतः शिक्षक को सदैव सतर्क रहना चाहिए। उसे कोई ऐसा अनुचित कार्य या

व्यवहार नहीं करना चाहिए, जिसका बालक के ऊपर गलत प्रभाव पड़े। जो प्रभाव वह बालक पर डालता है, वह बहुत समय तक बना रहता है। अतः उसे अपने कथनों *और कार्यों से केवल उन बातों का सुझाव देना चाहिए, जिन पर समाज की स्वीकृति* की छाप लगी हो।

सारांश में, हम कह सकते हैं कि शिक्षक बालक के समाजीकरण को प्रभावित करता है। शिक्षक के स्नेह, पक्षपात, बुरे व्यवहार, दण्ड आदि का सभी बच्चों पर कुछ-न-कुछ प्रभाव पड़ता है और उनका सामाजिक विकास उत्तम या विकृत हो जाता है। हार्ट (F. W. Hart) ने इस सम्बन्ध में परीक्षण किए हैं। यदि शिक्षक मित्रता और सहयोग में विश्वास करता है, तो बच्चों में भी इन गुणों का विकास होता है। यदि शिक्षक तनिक-तनिक-सी बातों पर बच्चों को दण्ड देता है, तो उनके समाजीकरण में संकीर्णता आ जाती है। यदि शिक्षक अपने छात्रों के प्रति सहानुभूति रखता है, तो छात्रों का समाजीकरण सामान्य रूप से होता रहता है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. How does socialization of the child take place ? Explain the role of any three principal agencies in this process.

बालक का समाजीकरण किस प्रकार होता है ? इस प्रक्रिया में किन्हीं तीनों साधनों के कार्य-भाग को स्पष्ट कीजिए।

2. Explain in short the process of socialization of the child.

बालक के समाजीकरण की प्रक्रिया की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।

3. What is meant by socialization of the child ? What is the role of the teacher in the process ?

बालक के समाजीकरण का क्या अर्थ है ? इस प्रक्रिया मे शिक्षक का क्या योगदान है ?

38

विद्यालय व समुदाय
SCHOOL & COMMUNITY

"विद्यालय, समुदाय के जीवन का प्रतिबिम्ब है और उसे ऐसा होना भी चाहिए। अतः भारत में सार्वजनिक विद्यालयों को भारतीय जीवन के ढाँचे के अधिक निकट लाया जाना चाहिए।"

"A school is and ought to be a reflection of the life of the community. The public school in India must therefore be brought nearer to the pattern of Indian life."—**Humayun Kabir.**

विषय-प्रवेश

साधारण बोलचाल की भाषा में 'समुदाय' व्यक्तियों का एक ऐसा समूह है जो मिलकर सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति तथा सामान्य जीवन व्यतीत करने के लिए एक निश्चित भू-भाग में रहते हैं। अत समुदाय के निर्माण के लिए सामान्य हित, निश्चित भू-भाग, सामान्य जीवन-स्तर तथा एकता की भावना का होना अनिवार्य है। वास्तव में, 'समुदाय' अति विस्तृत और व्यापक शब्द है और इसमे विभिन्न प्रकार के सामाजिक समूहों का समावेश होता है; उदाहरणार्थ—परिवार, धार्मिक संघ, जाति, पड़ोस, नगर, राज्य एवं राष्ट्र—समुदाय के विभिन्न रूप हैं। सभ्यता की प्रगति और इसके परिणामस्वरूप विश्व के लोगों की एक-दूसरे पर अधिक निर्भरता हो जाने के कारण समुदाय की धारणा विस्तृत हो गई। आज हम विश्व-समुदाय की धारणा को व्यावहारिक रूप प्रदान करने के लिए प्रयत्नशील हैं। अत: समुदाय मे एक वर्ग मील से कम का क्षेत्र भी हो सकता है या इसका घेरा विश्व भी हो सकता है। यह क्षेत्र या घेरा इस बात पर निर्भर करता है कि इसके सदस्यों में आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक समानताएँ हों। समुदाय के अर्थ को स्पष्ट करते हुए

ब्राउनेल ने लिखा है :—"समुदाय से मेरा अभिप्राय उस छोटे समूह से है, जिसमें विभिन्न प्रकार के व्यक्ति—युवक और वृद्ध, पुरुष और स्त्री—विभिन्न कुशलताओं और योग्यताओं से युक्त, सजातीय पड़ोसियों के समान एक साथ मिलकर रहते हैं। यह प्राथमिक समूह है, जिसमें जीवन के अनेक मुख्य कार्य समूह में ही एक-दूसरे के सहयोग से किये जाते हैं।"

"By a community I mean a small, diversified group of people, young and old, male and female, with different skills and abilities, living together as kin neighbours. It is a primary group, in which many of the major functions of life are carried on cooperatively within the group itself."—**Brownell.**

विद्यालय व समुदाय का सम्बन्ध
Relation between School & Community

विद्यालय तथा समुदाय के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। ये दोनों अपनी-अपनी उन्नति एवं स्थायित्व के लिए एक-दूसरे पर निर्भर करते हैं। विद्यालय एक सामाजिक संस्था है। समाज स्वय को जीवित रखने के लिए विभिन्न प्रकार की शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना करता है जिनके द्वारा समाज के विचारों, मान्यताओं, आदर्शों, क्रियाकलापों, मानदण्डों तथा परम्पराओं को आने वाली पीढ़ी को प्रदान किया जा सके। इस तथ्य की पुष्टि हम फ्रैंकलिन के शब्दों से कर सकते हैं :—"समाज, शिक्षा-संस्थाओं को अपने सदस्यों में ऐसे ज्ञान, कौशलों, आदतों तथा आदर्शों का प्रसार करने एवं सुरक्षित रखने के लिए स्थापित करता है जो उसके स्वयं के स्थायित्व एवं निरन्तर विकास के लिए परमावश्यक हैं।"

"Society maintains educational institutions to preserve and disseminate among its members such knowledge, skills, ideals and habits as are essential to its perpetuation and to its constant development."—**Franklin.**

विद्यालय, समुदाय के जीवन एवं उसकी प्रगति पर बहुत प्रभाव डालता है। विद्यालय अपने विचारों एवं कार्यों द्वारा समुदाय का पथ-प्रदर्शन करके उसे प्रगति की ओर ले जाता है। हम इस तथ्य की पुष्टि हावर्थ के शब्दों में कर सकते हैं :—"विद्यालय, समाज के चरित्र का सुधार करने का साधन है। यह सुधार सामाजिक उन्नति की दिशा में है या नहीं, यह विद्यालय के संचालकों के विचारों और आदर्शों पर निर्भर रहता है।"

"The school is an instrument for modifying the character of society. Whether this modification is in the direction of social improvement depends upon the ideas and ideals of those who handle the instrument."—**Howerth.**

समुदाय का विद्यालय पर प्रभाव
Effect of Community on School

"सामान्यतः लोग 'समुदाय' (Community) तथा 'समाज' (Society) का एक ही अर्थ लगाते हैं। परन्तु इनके अर्थ मे विभिन्नता है। इनके अर्थ को स्पष्ट करते हुए आर० जी० कॉलिंगवुड ने लिखा है :—"समुदाय में प्रत्येक व्यक्ति, प्रौढ़ एवं बच्चे, सामाजिक तथा असामाजिक व्यक्ति सभी आते हैं जो एक निश्चित भू-भाग पर रहकर सामान्य जीवन में भाग लेते हैं, परन्तु वे सभी उसके संगठन या अभिप्राय के प्रति सचेत या जागरूक नहीं रहते हैं। समाज एक प्रकार का समुदाय या समुदाय का अंश है जिसके सदस्य सामाजिक रूप से सचेत होकर उसके सामाजिक जीवन में भाग लेते हैं और वे समान उद्देश्यों तथा मान्यताओं के फलस्वरूप एकता में बँधे रहते हैं।"

"A community is every body, adults and children, social and non-social persons, living in a certain territory where all share a mode of life, but not all are conscious of its organization or purpose. A society is a kind of community (or a part of a community), whose members have become socially conscious of their mode of life and are united by a common set of aims and values.

—R. G. Collingwood.

शिक्षा के क्षेत्र मे इन दोनो के अर्थ की विभिन्नता को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है। बच्चे समुदाय के सदस्य हैं परन्तु उनको समाज का सदस्य नहीं कहा जा सकता है। उनको समाज का सदस्य तभी कहा जा सकता है जब वे समाज के कर्त्तव्यों को पूर्ण करने के योग्य हो जाते है। दूसरे शब्दों मे कह सकते हैं कि जब वे नागरिक के रूप में अपने कर्त्तव्यों एव दायित्वों को पूर्ण तथा अधिकारों का उपभोग करने के योग्य हो जाते है। वे समाज के सम्भावी (Potential) सदस्य हैं। अतः विद्यालय का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य यह है कि वह उनको समाज की पूर्ण सदस्यता के लिए तैयार करे। जब विद्यालय द्वारा उनको सामाजिक सदस्यता के लिए प्रशिक्षित किया जाता है तब वे 'असामाजिक समुदाय' (Non-social Community) के सदस्य होते हैं। अतः विद्यालय को 'समाज' (Society) कहना उपयुक्त नही है वरन् यह एक 'समुदाय' (Community) है; क्योंकि इसके सदस्य समाज के सभी कार्यों में भाग नही लेते हैं। के० जी० सैयदैन (K. G. Saiyidain) ने लिखा है :—"विद्यालय को सामाजिक जीवन का एक आदर्श निचोड़ होना चाहिए। उसे अपने परिवेश में समाज की सभी मुख्य उपयोगी गति-विधियों को स्थान प्रदान करना चाहिए।"

समुदाय अपनी आवश्यकताओं, आकांक्षाओं आदि की पूर्ति के लिए विद्यालयों का निर्माण करता है। इस कारण समुदाय का विद्यालय पर विभिन्न प्रकार से प्रभाव

पड़ता है। विद्यालय पर समुदाय के प्रभाव को निम्नलिखित रूपों में स्पष्ट किया जा सकता है :—

1. समुदाय के आदर्शों, मान्यताओं व आवश्यकताओं का प्रभाव : Influence of Ideals, Values & Needs of Community—प्रत्येक समुदाय के अपने आदर्श, मान्यताएँ एवं आवश्यकताएँ होती हैं। वह इनकी पूर्ति एवं स्वयं को जीवित रखने के लिए विद्यालय की स्थापना करता है। इस कारण समुदाय के आदर्शों, मान्यताओं तथा आवश्यकताओं का विद्यालय पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव शिक्षा के उद्देश्यों, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि आदि में देखने को मिलता है। समुदाय की आवश्यकताओं एवं माँगों के बदलते रहने के कारण शिक्षा के इन क्षेत्रों में भी परिवर्तन होता रहता है; उदाहरणार्थ—आधुनिक युग में भारतीय समुदाय की आवश्यकताएँ एवं माँगें परिवर्तित हो चुकी हैं। आज का भारतीय समुदाय औद्योगीकरण की माँग कर रहा है। इस कारण भारतीय समुदाय के विद्यालयों 'कार्य-अनुभव' (Work Experience) को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जा रहा है। साथ ही समुदाय विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक विद्यालयों की स्थापना कर रहा है। 'विश्वविद्यालय शिक्षा-आयोग' ने इस तथ्य को निम्न शब्दों में स्पष्ट किया है—

"विश्वविद्यालयों को छात्रों को राजनीति, प्रशासन, व्यवसायों, उद्योग और वाणिज्य में नेतृत्व ग्रहण करने के लिए शिक्षा देनी चाहिए।"

उक्त उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम में उससे सम्बन्धित विषयों, क्रियाओं व्यवसायों आदि को स्थान दिया गया है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि समुदाय के आदर्शों, मान्यताओं, आवश्यकताओं आदि का विद्यालय पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। वस्तुतः उनके आधार पर ही शिक्षा की रूपरेखा निर्धारित की जाती है।

2. समुदाय की आर्थिक दशाओं का प्रभाव : Influence of Economic Conditions of Community—समुदाय, विश्व का संक्षिप्त रूप है। यह प्रत्येक मूलभूत क्रिया के लिए अवसर प्रदान करता है चाहे वह क्रिया अतीत से सम्बन्धित हो चाहे वर्तमान से। समुदाय की छोटी-छोटी दुकानें तथा उसके लघु व्यवसाय विश्व की आर्थिक व्यवस्था के परिचायक हैं। विद्यालय पर समुदाय की आर्थिक व्यवस्था या दशा का गहरा प्रभाव पड़ता है। जिस समुदाय की जैसी आर्थिक व्यवस्था होगी उसका उसके विद्यालयों के पाठ्यक्रम पर अवश्य प्रभाव पड़ेगा; उदाहरणार्थ—भारतीय समुदाय की आर्थिक व्यवस्था कृषि-प्रधान है। इस समुदाय की शिक्षा में कृषि को महत्त्वपूर्ण स्थान देना पड़ेगा। इस कारण समुदाय ने कृषि विश्वविद्यालय, कृषि कॉलेज आदि खोलने पर बल दिया। इसके अतिरिक्त, विद्यालयों पाठ्यक्रम में कृषि को एक विषय के रूप में स्थान प्रदान किया। इसके अतिरिक्त जिन विद्यालयों में कृषि को पढ़ाने की व्यवस्था की गई उनके लिए कृषि फार्म की भी व्यवस्था की गई। समुदाय की आर्थिक दशा का विद्यालयों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अमेरिकन समुदाय में आर्थिक

दृष्टि से उन्नत एवं समृद्ध है । इस कारण वहाँ के विद्यालय भवन अति भव्य है । साथ ही पाठ्यक्रमों में उन सभी विषयों एवं क्रियाओं को स्थान प्रदान किया गया है जो देश की आर्थिक दशा को समृद्ध बनाने में सहायक हैं । हमारे देश की आर्थिक दशा उन्नत न होने के कारण विद्यालय के भवन अति निम्न श्रेणी के है । हजारों विद्यालयों पर किराए के भवन हैं । समुदाय की आर्थिक दशा को उन्नत बनाने के लिए विद्यालयों मे प्राविधिक, प्रौद्योगिक तथा वैज्ञानिक शिक्षा के अधिकाधिक विकास के लिए व्यवस्था की जा रही है । अतः समुदाय की आर्थिक दशाओं का विद्यालयों पर प्रभाव स्पष्ट हो जाता है ।

3. समुदाय की राजनीतिक दशाओं का प्रभाव : Influence of Political Conditions of Community—समुदाय की राजनीतिक दशाओं का विद्यालय पर गहरा प्रभाव पड़ता है । किसी समुदाय में शिक्षा की व्यवस्था कैसी होनी चाहिए ? इसका उत्तर उस समुदाय की राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप पर निर्भर करता है; उदाहरणार्थ—भारतीय समुदाय ने लोकतान्त्रिक प्रणाली को अपनाया है । इसकी सफलता के लिए योग्य नागरिकों की आवश्यकता है । अतः विद्यालयो का एक प्रमुख कार्य यह है—योग्य नागरिकों का निर्माण करना । इस कार्य को पूर्ण करने के लिए विद्यालय का लोकतान्त्रिक सिद्धान्तो के अनुसार संगठन एवं संचालन किया जाता है । साथ ही विद्यालय वातावरण में स्वतन्त्रता, समानता एवं भ्रातृत्व नामक मूलाधारों को स्थान प्रदान किया जाता है ।

4. समुदाय के गुणों व दोषों का प्रभाव : Influence of Merits and Demerits of Community—प्रत्येक समुदाय में गुण एव अवगुण पाए जाते है । भारतीय समुदाय विभिन्न सामाजिक बुराइयों से ग्रस्त है । इनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विद्यालयो पर प्रभाव पड़ता है । भारतीय समुदाय के साम्प्रदायिक विद्यालय (Communal Schools) इसके स्पष्ट उदाहरण है ।

विद्यालय का समुदाय पर प्रभाव
Influence of School on Community

समुदाय पर विद्यालय के प्रभाव का वर्णन अग्रलिखित शीर्षको के अन्तर्गत किया जा सकता है :—

1. समुदाय की सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण : Preservation of Cultural Heritage of the Community—प्रत्येक समुदाय के अपने रीति-रिवाज, परम्पराएँ, विश्वास, नैतिकता, नियम, साहित्य आदि होते है जिनको उस समुदाय ने प्राचीन समय से लेकर आज तक अर्जित किया है । शिक्षा समुदाय की इस सास्कृतिक विरासत को बनाये रखने तथा विकसित करने की प्रक्रिया है । विद्यालय इस सास्कृतिक विरासत को आने वाली सन्तति को प्रदान करके उसको बनाये रखते हैं । साथ ही वे जाने वाली सन्तति को इस योग्य भी बनाते हैं कि वह अपनी सर्वोत्तम क्षमता के अनुसार उस विरासत को अपना योगदान कर सकें । विद्यालयों

के अभाव में इस जटिल एवं विस्तृत तथा विशाल विरासत को थोड़े से जीवन काल में सीखना सम्भव नहीं है।

2. समुदाय की आवश्यकताओं व मांगों की पूर्ति : Satisfaction of Needs & Demands of Community—प्रत्येक समुदाय की अलग-अलग आवश्यकताएँ एवं मांगें होती हैं। विद्यालय अपनी योजना तथा कार्यक्रम में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके समुदाय की मांगों एवं आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

3. समुदाय के भावी स्वरूप का निर्धारण : Determination of Future Form of Community—विद्यालय समुदाय की आवश्यकताओं एवं मांगों की पूर्ति ही नहीं करता है वरन् उसके भावी स्वरूप का भी निर्माण करता है। समुदाय की मांगें, आवश्यकताएँ, मान्यताएँ, आदर्श आदि बदलते रहते है। इन्हीं के अनुसार समुदाय को बदलना आवश्यक है अन्यथा वह गतिहीन हो जायेगा। अतः विद्यालय समुदाय के दोषों की आलोचना करके उनके समक्ष नवीन विचार एवं कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं। साथ ही वे भावी नागरिकों का निर्माण करते है। ये भावी नागरिक समुदाय की प्रगति एवं सुधार के लिए कार्य करके उसके भावी ढाँचे का निर्माण करेंगे। अतः विद्यालय ही समुदाय की प्रगति एवं सुधार करके भावी समुदाय के स्वरूप का चित्र प्रस्तुत करते हैं; उदाहरणार्थ—भारतीय समुदाय के विद्यालय आज समाजवादी समाज के निर्माण के लिए प्रयत्नशील हैं।

4. समुदाय की व्यावसायिक व औद्योगिक प्रगति : Vocational & Industrial Progress of Community—विद्यालय समुदाय की व्यावसायिक एवं औद्योगिक प्रगति को भी प्रभावित करता है। समुदाय के व्यवसायों को पाठ्यक्रम में किसी-न-किसी रूप में स्थान मिलता है। महात्मा गांधी ने भारतीय समुदाय की आर्थिक दशा के सुधार के लिए बेसिक शिक्षा पर बल दिया था। उन्होंने बेसिक स्कूल के पाठ्यक्रम में समुदाय के प्रमुख हस्त-शिल्पों को स्थान प्रदान किया। साथ ही उन्होंने बुनियादी शिल्प पर आधारित शिक्षा की नींव डाली जिससे समुदाय के लोग स्वावलम्बी बन सकें।

विद्यालय : सामुदायिक केन्द्र के रूप में
School as a Community Centre

वस्तुतः शिक्षा एक सामाजिक समस्या है और समाज विद्यालय को यह कार्य सौंपता है कि वह युवकों का प्रशिक्षण तथा उनका पालन-पोषण इस ढंग से करे कि समाज के जिस समुदाय से वे सम्बन्ध रखते है उसके जीवन में वे प्रभावी ढंग से भाग ले सकें। स्वतः ही यह प्रश्न उठता है कि विद्यालय को ही यह कार्य क्यों सौंपा जाता है। इसके उत्तर में निम्नलिखित तथ्य प्रस्तुत किये जा सकते है :—

(1) बालकों को सामाजिक परम्पराएँ उसी प्रकार उत्तराधिकार में प्राप्त नहीं होती है, जैसे उन्हें अपने पिता की सम्पत्ति तथा जन्मजात क्षमताएँ मिल जाती है।

(2) बालकों को समाज की सांस्कृतिक विरासत जन्म के साथ नही मिलती है वरन् उसे सीखना पड़ता है।

इन कारणो की वजह से उनको पुस्तकों, कार्य तथा सामाजिक सम्पर्कों से इस सामाजिक विरासत को सीखना पड़ता है। यदि बालकों को सामाजिक विरासत एवं सांस्कृतिक निधि से अलग रखा गया तो उनके समस्त प्रयास निष्फल होंगे। साथ ही वे अँधेरे में भटकते रहेंगे। इस कारण मानव के संचित अनुभवों का ज्ञान प्रदान करने का कार्य विद्यालय को सौंपा गया।

विद्यालय अपने उक्त कर्त्तव्य का निर्वाह तभी कर सकता है जब उसका बाह्य समाज के जीवन मे सजीव सम्बन्ध हो। दूसरे शब्दों में कह सकते है कि विद्यालय के बाहर के जीवन के साथ स्कूल का सजीव सम्बन्ध होना आवश्यक है। साथ ही वह वर्तमान वास्तविकताओं की बच्चों को शिक्षा प्रदान करे। परन्तु भारतीय विद्यालय सामुदायिक जीवन से पूर्णतः पृथक् होकर अपनी शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। आज भारतीय विद्यालयों का जीवन की वास्तविकताओं से कोई सम्बन्ध नही है। इस कारण भारतीय विद्यालय सामुदायिक जीवन की प्रगति एवं सुधार के साथ के रूप में कोई कार्य नही कर रहे हैं। यदि विद्यालय को अपने इस कार्य को पूर्ण करना है तो उसे वृहत् समाज या समुदाय में एक छोटा समुदाय बनना होगा। विद्यालय को एक छोटा समुदाय बनने के लिए स्वयं को सामुदायिक जीवन के केन्द्र के रूप मे कार्य करना पड़ेगा। विद्यालय को सामुदायिक जीवन का केन्द्र बनाने के लिए अग्रलिखित उपायो का काम में लाया जा सकता है :—

(अ) समुदाय को विद्यालय के निकट लाना।

(ब) विद्यालय को समुदाय के निकट ले जाना।

(अ) समुदाय को विद्यालय के निकट लाना : Bringing the Community to School—समुदाय के विद्यालय के निकट निम्नलिखित उपायों को अपनाकर लाया जा सकता है :—

1. समुदाय के सदस्यों को निमन्त्रण : Invitation to Members of the Community—विद्यालय, सामुदायिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रो में कार्य करने वाले लोगों को आमन्त्रित करे; उदाहरणार्थ—वह सामाजिक कार्यकर्त्ता, धार्मिक कार्यकर्त्ता, डाक्टर, किसान, वकील, सम्पादक, सौदागर, व्यापारी आदि व्यक्तियों को आमन्त्रित करे। ये लोग सामाजिक तथ्यों पर प्रकाश डालकर छात्रों को सामुदायिक जीवन की वास्तविक परिस्थितियों के बारे में ज्ञान प्रदान कर सकते हैं। किसान ग्राम्य-जीवन की समस्याओ को समझाने में सहायता प्रदान कर सकता है। डाक्टर अपने पेशे से सम्बन्धित तथ्यो एवं उसकी समस्याओं से अवगत करा सकता है। इसी प्रकार विभिन्न व्यवसायों से सम्बन्धित व्यक्ति अपने-अपने व्यवसायों के विषय में छात्रों को वास्तविक एव प्रत्यक्ष ज्ञान से अवगत करा सकते हैं। सामाजिक कार्यकर्त्ता छात्रों की नागरिक समस्याओं में रुचि जाग्रत कर सकते हैं। औद्योगिक क्षेत्रों से आने वाले

व्यक्ति छात्रों को औद्योगिक समस्याओं का ज्ञान प्रदान कर सकते हैं। इस प्रकार सामुदायिक जीवन के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डाला जा सकता है।

2. अभिभावक-शिक्षक संघ : Parent-Teacher Association—समुदाय को विद्यालय में लाने के लिए अभिभावक-शिक्षक संघ महत्त्वपूर्ण कार्य-भाग अदा कर सकता है। छात्रों के माता-पिता को शिक्षण-कार्य में अधोलिखित प्रकार से सम्बद्ध किया जा सकता है।

(i) जो प्रकरण या इकाई स्थानीय समुदाय से सम्बन्धित हों, उनके प्रतिपादन के समय अभिभावकों को विद्यालय में बुलाया जाय। अभिभावक छात्रों के समक्ष प्रकरण से सम्बन्धित स्थानीय तथ्यों को प्रस्तुत करें।

(ii) विद्यालय किसी प्रकरण के सम्बन्ध में अभिभावकों से प्रश्नावली (Questionnaire) के माध्यम से सूचनाएँ प्राप्त कर सकता है।

3. फ़िल्म शो व प्रदर्शनियाँ : Film Shows & Exhibitions—फिल्मों के माध्यम से समुदाय को विद्यालय के निकट लाया जा सकता है। विभिन्न कार्यों में संलग्न व्यक्तियों की फिल्मों के माध्यम से समुदाय के सम्बन्ध में उपयोगी ज्ञान प्रदान जा किया सकता है। विद्यालय विभिन्न प्रदर्शनियों का आयोजन करके समुदाय को अपनी ओर आकृष्ट कर सकता है और उनका सहयोग प्राप्त कर सकता है।

4. मेलों, उत्सवों आदि का मनाना : Celebration of Festivals—विद्यालय में विभिन्न स्थानीय मेलों, उत्सवों एवं त्यौहारों को मनाकर समुदाय को विद्यालय के निकट लाया जा सकता है। इनमें भाग लेने तथा देखने के लिए स्थानीय समुदाय को आमन्त्रित किया जाय। इससे विद्यालय तथा समुदाय एक-दूसरे के निकट सम्पर्क में आ सकेंगे।

5. सामुदायिक जीवन की विभिन्न क्रियाओं का संगठन : Organization of Different Activities of Community Life—समुदाय को विद्यालय के निकट लाने के लिए विद्यालय में सामुदायिक जीवन की विभिन्न क्रियाओं का आयोजन किया जाए। इनके आयोजन से छात्र सामुदायिक जीवन के विभिन्न पक्षों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। इनके आयोजन एवं संचालन में, समुदाय के लोगों का सहयोग किया जाय। इस प्रकार समुदाय और विद्यालय के निकट सम्पर्क हो सकेगा।

6. सामुदायिक समस्याओं का समाधान : Solution of Community Problems—विद्यालय जिस समुदाय में स्थित है, उसे उस समुदाय की विभिन्न समस्याओं के समाधान के लिए कार्य करना चाहिए। इन सामुदायिक समस्याओं के समाधान से छात्र सामुदायिक जीवन की वास्तविकताओं का ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ हो सकेंगे; उदाहरणार्थ—यदि विद्यालय ग्रामीण क्षेत्र में स्थित है तो उसे उसकी अमुक समस्याओं की ओर ध्यान देना चाहिए—सफ़ाई की समस्या, स्वास्थ्य की समस्या, कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए क्या करना चाहिए ? लघु उद्योगों की

स्थिति को किस प्रकार सुधारा जा सकता है ? बाजार की समस्या को किस प्रकार सुलझाया जा सकता है ? आदि।

7. प्रौढ़-शिक्षा का केन्द्र : Centre of Adult Education—विद्यालय जिस समुदाय में स्थित है उसके प्रशिक्षित प्रौढ़ों को साक्षर बनाने के लिए विद्यालय को प्रौढ़ शिक्षा का केन्द्र बनाया जाय। वह विद्यालय समय के उपरान्त प्रौढ़ों को शिक्षित करने की व्यवस्था करे। इस व्यवस्था से एक तो वे साक्षर हो जायेंगे, दूसरे वे अपने अनुभवों से छात्रों को अवगत कराने में समर्थ होंगे। इस प्रकार से विद्यालय तथा समुदाय एक-दूसरे के निकट आ सकेंगे।

(ब) विद्यालय को समुदाय के निकट ले जाना : Taking the School to Community—विद्यालय को समुदाय के निकट ले जाने के लिए अधोलिखित उपायों को काम में लाया जा सकता है :

1. साक्षात्कार : Interviews—प्रत्यक्ष रूप से ज्ञान-प्राप्ति के लिए साक्षात्कार आधार का कार्य करते हैं। छात्र समुदाय के विभिन्न लोगों से साक्षात्कार करके विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ प्राप्त कर सकते है। साथ ही समुदाय के बहुत से लोग उनको प्रकाशित साहित्य तथा श्रव्य-दृश्य सामग्री प्रदान करके महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ प्रदान कर सकते हैं।

2. सामाजिक सर्वेक्षण-क्लबों का संगठन : Organization of Social Survey Clubs—**सैयदैन** के अनुसार—विद्यालय को सामाजिक सर्वेक्षण क्लब सगठित करने चाहिए जो अपने आस-पास के सामुदायिक जीवन की कुछ तात्कालिक आवश्यकताओं तथा समस्याओं के बारे मे छान-बीन करने का काम करें; उदाहरणार्थ—सड़कों की दशा, नगर या ग्राम में गन्दे पानी की नालियों की व्यवस्था, आस-पास के क्षेत्रों मे स्वास्थ्य तथा सफाई से सम्बन्धित परिस्थितियाँ, रोग फैलने के स्रोत, उस क्षेत्र के मुख्य उद्योग एवं व्यवसाय आदि। इस प्रकार की प्रत्येक छान-बीन का कार्य ऐसे छात्रों की एक छोटी-सी टोली पर हो जो उस समस्या मे रुचि रखते हों। इस दल को अध्यापक के निर्देशन में कार्य करना चाहिए। अन्त में उन्हे एक रिपोर्ट भी तैयार करनी चाहिए जिसमें उनके द्वारा दिए जाने वाले सुझाव भी हो। इस रिपोर्ट को प्रधानाचार्य के माध्यम से स्थानीय स्वशासन की संस्था के प्रधान के पास भेजा जाय। इस प्रकार के आयोजनो से छात्रों को अपने आस-पास के वातावरण का प्रत्यक्ष एवं मौलिक ज्ञान प्राप्त हो जायगा।

3. समाज-सेवा-संघों का निर्माण : Formation of Social Service Leagues—**सैयदैन** के अनुसार—हमें यह जान लेना ही काफी नही है कि हमारे चारों ओर के वातावरण में क्या दोष है। हमे इन दोषों को दूर करने में अपनी शक्ति का प्रयोग करना चाहिए। अतः विद्यालयों मे समाज-सेवा-सघो का निर्माण करना चाहिए जिससे वे आवश्यकता पडने पर अपनी सेवाएँ समुदाय के लिए अर्पित कर सकें। ये संघ बाढ के समय, महामारी फैल जाने पर, या किसी उत्सव या

जलूस के अवसर पर या इसी प्रकार के किसी अन्य अवसर पर, जहाँ अनुशासित ढंग से कार्य करने की आवश्यकता हो, आस-पास के लोगों की सहायता करेंगे। ये संघ पुस्तकें तथा छात्रवृत्तियाँ देकर गरीब और जरूरतमन्द छात्रों की सहायता करने का काम भी कर सकते है।

4. क्षेत्र-पर्यटन : Field Trips—क्षेत्र-पर्यटनों के माध्यम से छात्रों को समुदाय में ले जाया सकता है। पर्यटन का उद्देश्य मन-बहलाव के लिए विद्यालय के बाहर जाना नही होना चाहिए, वरन् विषय के स्पष्टीकरण या समस्या का समाधान खोजना होना चाहिए। पर्यटनों के माध्यम से छात्र स्थानीय स्थितियों का प्रत्यक्ष रूप से निरीक्षण करने में समर्थ होते है। विद्यालय अधोलिखित प्रकार के क्षेत्र-पर्यटनों का आयोजन करके छात्रों को आस-पास के वातावरण की वास्तविक स्थितियों से अवगत करा सकता है—

(i) लघु पर्यटन—इस प्रकार के पर्यटन सामान्यतः एक घण्टे के होते है। इस निर्धारित अवधि में छात्र कक्षा से बाहर रह कर अपने निकटस्थ वातावरण का अध्ययन कर सकते है।

(ii) सामान्य क्षेत्र-पर्यटन—इस प्रकार के पर्यटन का क्षेत्र लघु पर्यटन से व्यापक होता है। इसकी अवधि भी अधिक होती है।

(iii) वृहत् पर्यटन—इसका क्षेत्र उपर्युक्त दोनो प्रकार के पर्यटनों से अधिक विस्तृत होता है। इसमें समय भी अधिक लगता है। इसमें छात्रो को पूर्ण तैयारी के साथ बाहर जाना पड़ता है।

5. समाज-सेवा सप्ताहों का आयोजन : Arrangement of Social Service Weeks—विद्यालय को समुदाय में जाने के लिए समाज-सेवा सप्ताहों का आयोजन करना चाहिए; उदाहरणार्थ—श्रमदान सप्ताह, ग्रामोद्धार सप्ताह, स्वच्छता सप्ताह, साक्षरता सप्ताह आदि। इन अवसरों पर शिक्षको तथा छात्रों को शहर तथा ग्रामो में जाकर श्रमदान, ग्रामीणो की उन्नति, सफाई तथा निरक्षरो को साक्षर बनाना चाहिए।

6. सामाजिक शिक्षा की व्यवस्था : Arrangement of Social Education—विद्यालयों को नगरो या ग्रामो मे जाकर शिक्षाप्रद सांस्कृतिक कार्यक्रमो, नाटक, भजन, कीर्तन आदि की व्यवस्था करनी चाहिए। इससे विद्यालय समुदाय की संस्कृति से अवगत हो सकेगा।

उपर्युक्त उपायों को काम मे लाकर विद्यालय को सामुदायिक जीवन के केन्द्र में परिवर्तित किया जा सकता है, जहाँ से ज्ञान की ज्योति प्रसारित होगी और सुधार का आन्दोलन फैलेगा।

स्थानीय साधनों का उपयोग
Use of Local Resources

स्थानीय साधनों से हमारा तात्पर्य उन सभी वस्तुओं, स्थानों, संस्थाओं,

सामाजिक क्रिया-कलापों तथा समस्याओं से है जो स्थान विशेष से सम्बन्धित होते है। इन साधनों के द्वारा छात्र स्थानीय समुदाय के वास्तविक जीवन के विषय मे ज्ञान प्राप्त करता है। इस कारण इन सभी साधनो का शैक्षिक मूल्य होता है। अतः प्रत्येक विद्यालय को अपने आस-पास के समुदाय के सभी साधनो के उपयोग के लिए कार्य करना चाहिए। स्थानीय समुदाय के साधनों के सम्बन्ध मे मुफात (Moffatt) ने लिखा है :—**"प्रत्येक समुदाय अपने साधनों के सम्बन्ध में अनूठा स्थान रखता है। हमको इसके अजायबघरों, पुस्तकालयों, आर्ट गैलरियों, तीर्थ स्थानों, यातायात के केन्द्रों, मनोरंजन, व्यापार, उद्योगों, कृषि तथा विज्ञान के प्रयोगात्मक स्थलों आदि को उपयोग में लाने का प्रयास करना चाहिए।"**

प्रमुख स्थानीय साधन—हम प्रमुख स्थानीय साधनों पर निम्नलिखित पंक्तियों पर प्रकाश डाल रहे है :—

1. प्रशासकीय संस्थाएँ : Administrative Institutions—इनके अन्तर्गत वे सस्थाएँ एवं विभाग आते हैं जिनके द्वारा स्थानीय शासन सम्बन्धी कार्य किये जाते है; उदाहरणार्थ—ग्राम पचायत, टाउन एरिया, नोटिफाइड एरिया, नगर-पालिका, नगर महापालिका, केन्टूनमेण्ट बोर्ड, अन्तरिम जिला परिषद आदि। छात्रों को इन सभी संस्थाओं की कार्य-प्रणाली का प्रत्यक्ष ज्ञान कराने के लिए उनके कार्य स्थल पर ले जाना चाहिए। इनके सम्बन्ध में उनके द्वारा पुस्तकों से अर्जित सैद्धान्तिक ज्ञान को वास्तविकता में परिवर्तित किया जा सकता है।

2. लोक-सेवा संस्थाएँ : Public Service Institutions—जो संस्थाएँ जनसाधारण की सेवा के कार्यों में लगी रहती है उन्हें लोक-सेवाएँ या सार्वजनिक संस्थाएँ कहते हैं। समाज-सेवा सतत् क्रियाशील इन संस्थाओं—बैंक अस्पताल, पोस्ट ऑफिस, टेलीग्राफ आफिस, जल एवं विद्युत् विभाग आदि—के कार्य-संचालन का प्रत्यक्ष ज्ञान कराकर छात्रो के ज्ञान को वास्तविक एवं व्यावहारिक बनाया जा सकता है।

3. औद्योगिक केन्द्र : Industrial Centres—प्रत्येक समुदाय का अपना स्थानीय उद्योग एवं कला-कौशल केन्द्र होता है। जब तक वालकों को उनका निरीक्षण करने का अवसर नही दिया जायगा तब तक उनका ज्ञान अपूर्ण रहेगा। अतः छात्रो को स्थानीय समुदाय के कुटीर उद्योगो तथा अन्य बड़े-बड़े औद्योगिक केन्द्रो को दिखाना चाहिए। इन स्थानो को दिखाने के लिए विभिन्न पर्यटनों का आयोजन किया जा सकता है। इसके निरीक्षण से छात्रो को समुदाय की आर्थिक व्यवस्था के ढांचे का भी ज्ञान प्राप्त हो जायगा।

4. ऐतिहासिक स्थान व भवन : Historical Places & Buildings—प्रत्येक स्थान का अपना इतिहास होता है। उस स्थान पर स्थित विद्यालय को उस स्थान के इतिहास से अवगत होना आवश्यक है क्योंकि स्थानीय इतिहास किसी-न-किसी रूप में राष्ट्रीय इतिहास को प्रभावित करता है। यदि उस स्थान विशेष पर

कोई ऐतिहासिक भवन, वस्तु, खण्डहर आदि हो तो उसे भी छात्रों को दिखाना चाहिए। इस प्रकार दिया हुआ ज्ञान बालकों के मस्तिष्क में स्थायी रहेगा और बालक सीखने में रुचि लेंगे तथा सूक्ष्म बातों को समझने में भी समर्थ होंगे। साथ ही छात्रों को यह भी ज्ञान हो जाएगा कि उनके स्थानीय क्षेत्र ने राष्ट्रीय इतिहास के विकास में क्या योग दिया है। स्थानीय ऐतिहासिक स्थानों एवं भवनों के अतिरिक्त कभी-कभी अन्य क्षेत्रों के ऐतिहासिक स्थानों को भी दिखाना चाहिए। ई० एल० हस्लक (E. L. Hasluck) ने स्थानीय इतिहास के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है :—"स्थानीय इतिहास का अध्ययन वास्तविकता से पूर्ण है। यह उन विभिन्न ऐतिहासिक आन्दोलनों को रोचक एवं विस्तृत ढंग से स्पष्ट करता है, जिन्होंने राष्ट्रीय इतिहास को प्रभावित किया है और स्थानीय परिस्थितियों को सौन्दर्यपूर्ण एवं रोचक बनाया है।" हस्लक ने एक अन्य स्थान पर लिखा है :—"स्थानीय इतिहास, छात्र का ऐतिहासिक दृश्यों, नामों तथा भवनों आदि के साथ दिन-प्रतिदिन का सम्पर्क स्थापित करके उसके लिए एक रोचक एवं वास्तविक वातावरण का निर्माण करता है। यह बालक के विचारों को वर्तमान से हटाकर उन तथ्यों एवं वस्तुओं की ओर ले जाता है, जो गुजर चुकी हैं अर्थात् उन बातों के विषय में सोचने के लिए तत्पर बनाता है जो बीत चुकी हैं।"

"Local History helps to bring home to the pupil, by everyday contact with historical scenes, names and buildings, the sense of development which his country has undergone, and removes his thoughts from time to time away from the present to the contemplation of ages that are passed."—E. L. Hasluck.

5. संग्रहालय : Museum—संग्रहालय वह स्थान है, जहाँ विभिन्न युगों की कलाओं के नमूने, अस्त्र-शस्त्र, वस्तुएँ आदि संग्रहीत होती हैं। इन वस्तुओं के अवलोकन से छात्रों को विभिन्न युगों के समाज के विभिन्न पक्षों का ज्ञान हो जाता है। अतः छात्रों को समाज के परिवर्तित होते हुए स्वरूप से अवगत कराने के लिए संग्रहालय का अवलोकन कराना अनिवार्य है। संग्रहालय के निरीक्षण से बालकों में अपने राष्ट्र की श्रेष्ठतम कलाकृतियों एव अन्य महत्त्वपूर्ण वस्तुओं के लिए गौरव की भावना विकसित की जा सकती है।

6. स्थानीय भौगोलिक वातावरण व प्राकृतिक साधन : Local Geographical Environment & Natural Resources—प्रत्येक समुदाय अपने भौगोलिक एवं प्राकृतिक वातावरण से प्रभावित हुए बिना नहीं रहता है। इंगलैण्ड एक व्यापारिक राष्ट्र अपनी भौगोलिक परिस्थितियों के कारण ही बना। शिवाजी मराठा राज्य की नीव वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियों के कारण डाल सके। भाषा, रहन-सहन, खान-पान आदि पर भौगोलिक वातावरण की अमिट छाप पड़ती है। अतः छात्रों को स्थान विशेष के भौगोलिक वातावरण तथा उसके प्राकृतिक साधनों का प्रत्यक्ष ज्ञान

कराना आवश्यक है। छात्रों को स्थानीय नदियों, झीलों, पर्वतों, खनिज पदार्थों, धरातल आदि का वास्तविक ज्ञान कराने के लिए स्थल विशेष पर ले जाया जाय। इसके लिए विद्यालय को विभिन्न प्रकार के पर्यटनों का आयोजन करना चाहिए। इस प्रकार के पर्यटनों से छात्र इस तथ्य से भी अवगत हो सकेंगे कि हमें अपने प्राकृतिक साधनों में से किसका अधिक उपभोग करना चाहिए जिससे सम्पूर्ण समुदाय लाभान्वित हो सके।

7. सामाजिक संस्थाएँ : Social Institutions—इनके अन्तर्गत वे संस्थाएँ आती हैं जो समाज के ढांचे के निर्माण में सहायक होती हैं; उदाहरणार्थ—परिवार, विवाह, सम्पत्ति, सामाजिक रीतिरिवाज एवं परम्पराएँ। छात्रों को इन संस्थाओं का व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने के लिए उन्हें समुदाय में ले जाना चाहिए। वहाँ वे यह जानने में समर्थ होंगे कि हमारे समुदाय में पितृात्मक या मातृात्मक प्रकार के परिवारों का प्रचलन है या समुदाय में संयुक्त परिवार प्रथा या व्यक्तिगत परिवार प्रथा को ग्रहण किया जा रहा है। हमारे समुदाय में विवाह की कौन-सी पद्धति का प्रचलन है ?

विद्यालय का सामूहिक जीवन
Corporate Life of School

यद्यपि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज में ही उसका जन्म होता है, उसी में रहकर वह अपना विकास करता है तथा उसी में उसकी मृत्यु होती है; पर वह समाज के रीति-रिवाजों को एकदम जन्म लेते ही नही सीख लेता है। इनका ज्ञान वह धीरे-धीरे समाज में रहकर प्राप्त करता है। विद्यालय में बालक का समाजीकरण होता है और वहाँ उसे समाज का एक आदर्श सदस्य बनाने का प्रयास किया जाता है। विद्यालय में बालक यह सीखता है कि समाज के नियमों, रीति-रिवाजों तथा आदर्शों के अनुसार किस प्रकार व्यतीत किया जा सकता है। विद्यालय बालकों का समाजीकरण करने के लिए उनमें प्रेम, बन्धुत्व एवं सामाजिकता की भावनाओं का विकास करता है। इन भावनाओं के विकास के लिए विद्यालय का जीवन सामूहिक होना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि विद्यालय में समाज की भाँति सभी छात्र, अध्यापक तथा अन्य अधिकारी एवं कर्मचारी सहयोगी जीवन व्यतीत करें। वे लोग एक-दूसरे को सहयोग देते हुए विद्यालय रूपी समुदाय के नियमों, परम्पराओं एवं आदर्शों का पालन करें।

सामूहिक जीवन ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिसको छात्रों को एक पदार्थ के रूप में दिया जा सके। यह तो एक प्रवृत्ति है जिसका विकास किया जाता है। इस प्रवृत्ति का विकास न तो निर्धारित पाठों के द्वारा किया जा सकता है और न यह कहकर किया जा सकता है कि "बालको ! तुम एक समाज हो, तुम स्वयं को एक समाज समझना प्रारम्भ कर दो और इसी के अनुसार रहा करो।" इस प्रवृत्ति का विकास करना एक दीर्घकालीन व्यवहार है।

विद्यालय में सामूहिक जीवन विकसित करने के उपाय : Measures to Develop Corporate Life in School—विद्यालय में सामूहिक जीवन विकसित करने के लिए अग्रांकित उपायों को काम में लाया जा सकता है—

1. विद्यालय में शिक्षकों के परस्पर सहयोगी सम्बन्ध : Mutual Relations among Teachers in School—बालक, उपदेश की अपेक्षा उदाहरण से अधिक सीखता है। अतः विद्यालय में सामूहिक जीवन के विकास के लिए शिक्षकों तथा प्रधानाध्यापक द्वारा सहयोग एवं मैत्री का उदाहरण प्रस्तुत किया जाना चाहिए। शिक्षक-शिक्षक तथा शिक्षक एव प्रधानाचार्य को प्रत्येक कार्य एक 'टीम' की भावना से करना चाहिए। जिस विद्यालय के शिक्षक-शिक्षक तथा शिक्षक एवं प्रधानाध्यापक के बीच पारस्परिक सहयोग एवं मित्रता की भावना है तथा उनमें प्रेम एवं सहानुभूति है और वे पारस्परिक निर्भरता एवं उत्तरदायित्वों को समझते हुए एक साथ मिलकर कार्य करते हैं तो इसका अभिप्राय यह है कि उस विद्यालय में सामूहिक जीवन की नींव पड़ चुकी है। यदि शिक्षक-शिक्षक तथा शिक्षक एवं प्रधानाचार्य के बीच मन-मुटाव, ईर्ष्या, द्वेष आदि होगा तो वे विद्यालय की भलाई के लिए कार्य नही कर पायेंगे और इसका छात्रों पर भी बुरा प्रभाव पड़ेगा। इस प्रकार के वातावरण में छात्रों का एक साधन (Tool) के रूप में प्रयोग किया जायगा और विद्यालय शिक्षकों एवं प्रधानाचार्य की राजनीति का अखाड़ा बन जायगा। ऐसे वातावरण में विद्यालय छात्रों में सामूहिक भावना विकसित नहीं कर पायेगा। अतः शिक्षक-शिक्षक तथा शिक्षक एवं प्रधानाध्यापक के बीच सहयोगी एवं मैत्री की भावना का होना आवश्यक है।

2. शिक्षकों व छात्रों में सहयोग की भावना : Feeling of Co-operation among Teachers and Students—सामूहिक जीवन के लिए शिक्षकों तथा छात्रों में सहयोग की भावना का होना परमावश्यक है। इसके लिए शिक्षकों को छात्रों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए तथा उनकी क्षमता एवं योग्यता मे निष्ठा रखनी चाहिए। यदि शिक्षकगण अपने छात्रों को उत्तरदायित्व प्रदान करते समय उनके प्रति अविश्वास प्रकट करेंगे तो उनके बीच कटुता की भावना उत्पन्न होगी। अत. सामूहिक जीवन की प्रवृत्ति के लिए शिक्षकों तथा छात्रों में सहयोगी भावना होनी चाहिए।

3. संघ-भावना का विकास : Development of Corporate Feeling—संघ-भावना का अभिप्राय उस भावना से है जिससे विद्यालय में छात्र अपने आपको एक विशिष्ट समूह या संघ का सदस्य समझें और पारस्परिक एकता की भावना की अनुभूति करें। बालकों को इस बात का स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए कि हम सब का लक्ष्य एक ही है और सामूहिक शक्ति से ही हम उसे प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार ऐक्य की भावना (Feeling of Union) के विकास से उनका जीवन अधिक से अधिक संसृष्ट हो सकेगा। विद्यालय में बालकों में संघ-भावना के विकास के लिए अग्रलिखित कदम उठाए जा सकते है :—

(i) छात्र-परिषद : Student Union—*विद्यालय में छात्र-परिषद की स्थापना* द्वारा संघ-भावना के विकास में सहयोग दिया जा सकता है। छात्र-परिषद में सभी कक्षाओं एवं विभागों के निर्वाचित प्रतिनिधियों को प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाय। साथ ही उस पर विद्यालय के उत्सवों, सामुदायिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यों के संगठन एवं संचालन का भार डाला जाय। शिक्षक-वर्ग छात्रों की योग्यताओं एवं क्षमताओं को सन्देह की दृष्टि से न देखें वरन् उसमें विश्वास व्यक्त करे और अपने दायित्वों को पूर्ण करने के लिए उन्हें एक निश्चित सीमा तक स्वतन्त्रता प्रदान करें। इस प्रकार छात्र-परिषद के कार्यों को मिल-जुलकर करने से छात्रों में परस्पर सहयोग, सामाजिकता एवं संघबद्धता की भावना का विकास होगा जो विद्यालय के सामूहिक जीवन में विशेष रूप से सहायक होगी।

(ii) विद्यालय सभा : School Assembly—*विद्यालय सभा, विद्यालय के* सामूहिक जीवन के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। विद्यालय-कार्य प्रारम्भ होने से पूर्व विद्यालय के सभी छात्र, शिक्षक तथा प्रधानाचार्य सामूहिक प्रार्थना एवं विद्यालय-गान के लिए एक स्थान पर एकत्रित हों। इस विद्यालय सभा में सबके समक्ष प्रतिदिन एक नवीन आदर्श विचार भी प्रस्तुत किया जा सकता है, जिसको सभी छात्र उस दिन का सुविचार समझकर उससे विशेष प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार सबकी विचार धारा एक ही ध्येय की ओर प्रवाहित होकर सामूहिक जीवन या संघीय जीवन के विकास में सहायक होगी। प्रतिदिन इस प्रकार की सभा एकता एवं संघ-बद्धता की भावना के विकास में बहुत सहायक होगी।

(iii) भवन-प्रणाली : House System—विद्यालय में 'गृह-पद्धति' या भवन प्रणाली' सामूहिक जीवन के विकास के लिए बहुत सहायक सिद्ध हो सकती है। इस पद्धति के अनुसार विद्यालय के समस्त छात्रों को कुछ निश्चित (तीन या चार) भवनों में विभाजित कर सकते हैं। विभाजन करते समय इस बात का ध्यान रखा जाय कि प्रत्येक भवन में विद्यालय की सभी कक्षाओं के छात्र आ जायें। विभिन्न भवनों को महान् व्यक्तियों या आदर्श लक्ष्यों के नाम दिए जा सकते हैं; यथा—शिवाजी भवन या कीर्ति भवन। भवन के आधार पर विद्यालय की कक्षाओं के सभी छात्र एक साथ मिल-जुलकर कार्य करेंगे। इससे उनका पारस्परिक परिचय बढ़ेगा और भवन की प्रतिष्ठा एवं गौरव का दायित्व भवन के सभी सदस्यों पर रहेगा। भवन-प्रणाली से छात्रों में सामूहिकता, एकता, आत्मनिर्भरता तथा सहकारिता की नींव सरलता से डाली जा सकती है क्योंकि सम्पूर्ण विद्यालय के छात्रों की संख्या अधिक होती है और उन सबको प्रत्येक अवसर पर एकत्रित होकर कार्य करने में व्यावहारिक कठिनाइयाँ हो सकती हैं। अत: भवन जो कि छोटे समूह हैं—अधिक सरलता से संघ-बद्धता की भावना को विकसित कर सकते हैं।

(iv) विद्यालय-कार्यक्रम व योजनाएँ : School Programmes & Schemes—विद्यालय के विभिन्न कार्यक्रम एवं योजनाएँ संघ-भावना के विकास में

बहुत सहायक हो सकती है; उदाहरणार्थ—सांस्कृतिक कार्यक्रम, नाटक, श्रमदान सप्ताह, स्वच्छता-सप्ताह, साक्षरता-सप्ताह, सामाजिक शिक्षा के कार्यक्रम आदि। इनमें विद्यालय के सभी छात्र एवं शिक्षकों को मिल-जुलकर कार्य करने का अवसर प्राप्त होता है। साथ ही, ये कार्यक्रम एवं योजनाएँ विद्यालय में एकता एवं सामुदायिकता की भावना के विकास में सहायक होंगी।

(v) विद्यालय का झण्डा, आदर्श वाक्य, विद्यालय गान, विशिष्ट चिह्न व समवस्त्र : School Flag, Motto, Song, Emblem and Uniform—विद्यालय के सामूहिक जीवन को दृढ़ बनाने के लिए विद्यालय की एकता के कुछ प्रतीकों का होना आवश्यक है। वे प्रतीक ऐसे हों जिनके प्रति विद्यालय के छात्रों में अपनत्व एवं अनन्यता की भावना स्फुरित होती हो, और जब कभी वे उन प्रतीकों को देखें, हर्षोल्लास से उत्साहित हो उठें। एकता के इन प्रतीकों में विद्यालय का झण्डा, आदर्श वाक्य, विद्यालय गान, विशिष्ट चिह्न तथा समवेश होना आवश्यक है। इनके द्वारा छात्रों में ऐक्य, सामाजिकता तथा सामुदायिकता की भावना का विकास किया जाता है। जिस प्रकार से राष्ट्रीय झण्डे को देखकर तथा राष्ट्रीय गान को गाकर राष्ट्रीय भावना विकसित होती है, उसी प्रकार विद्यालय के इन प्रतीकों की छाया में विद्यालय में सामूहिक जीवन का विकास सहज में ही किया जा सकता है।

(vi) विद्यालय के खेल-कूद : School Games & Sports—विद्यालय में खेल-कूद भी छात्रों में संघ-भावना के विकास में बहुत सहायक है। इनके द्वारा छात्रों में भी टीम भावना, एकता की भावना तथा विद्यालय की प्रतिष्ठा एवं गौरव को बढ़ाने की भावना को विकसित किया जाता है।

4. विद्यालय की सामान्य चारित्रिक भावना : School Tone—विद्यालय में सामूहिक जीवन को विकसित करने में सामान्य चारित्रिक भावना का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। वस्तुतः सामान्य चारित्रिक भावना को परिभाषित करना कठिन है। प्रायः इसके निर्माण में विद्यालय की परम्पराएँ (Traditions) नियम, अनुशासन आदि तत्त्व भाग लेते हैं। यह भावना सम्पूर्ण विद्यालय पर आच्छादित रहती है। इसको विद्यालय की आत्मा कहा जा सकता है।

उपसंहार

अन्त में हम एम० पी० मुफ़ात के शब्दों में कह सकते है :—"**माध्यमिक विद्यालय एक प्रमुख सामाजिक साधन है और वह समुदाय के भविष्य के निर्धारण में महत्त्वपूर्ण कार्य करेगा। सुविज्ञ एवं क्रियाशील जनता विद्यालय तथा समुदाय दोनों की आवश्यकताओं एवं समस्याओं को हल करने में सहायता दे सकती है।**"

"The Secondary school is an important social agency and will play an even greater part in the future of community. An informed and interested public can assist in meeting the problems

and needs of both our schools and community."—M. P. Moffatt: *Social Studies Instruction*, p. 490.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Give a critical account of the relation between school and community.

विद्यालय तथा समुदाय के सम्बन्ध का आलोचनात्मक वर्णन कीजिए।

2. Explain the effect of community on school.

समुदाय के विद्यालय पर पड़ने वाले प्रभाव को स्पष्ट कीजिए।

3. Discuss briefly the influence of school on community.

विद्यालय द्वारा समुदाय पर डाले जाने वाले प्रभाव का संक्षेप में विवेचन कीजिए।

4. What steps will be taken by you to make the school as a Commun Centre ?

आप विद्यालय को सामुदायिक जीवन का केन्द्र बनाने के लिए क्या कदम उठायेंगे ?

5. How would you use the local resources for the education of the child ?

आप बालकों की शिक्षा के लिए स्थानीय साधनों का किस प्रकार प्रयोग करेंगे ?

6. What measure will be adopted by you for developing the corporate life in school ?

आप विद्यालय में सामूहिक जीवन विकसित करने के लिए किन उपायों को काम में लायेंगे ?

39

सामाजिक गतिशीलता व शिक्षा
SOCIAL MOBILITY & EDUCATION

"सामाजिक गतिशीलता का अर्थ है—व्यक्ति या मूल्य का एक सामाजिक स्थिति से दूसरी सामाजिक स्थिति में परिवर्तन।"

"Social Mobility is the change of person or value from one social position to another."—**Carter V. Good.**

विषय-प्रवेश

समाजशास्त्रियों ने समाजों के दो सामान्य भेद बतलाए हैं। प्रथम प्रकार के वे समाज हैं जो जातियों के आधार पर संगठित होते हैं। इस प्रकार का समाज वंशानुगत असमानता पर पूर्णतः आधारित होता है। इसका सबसे प्रमुख उदाहरण भारत की हिन्दू जातियाँ हैं। ये जातियाँ जन्म पर आधारित हैं। इस कारण व्यक्तिगत कार्य एवं प्रयास किसी व्यक्ति की सामाजिक स्थिति को उसके जीवन-काल में परिवर्तित नहीं कर पाते हैं। इस कारण इस प्रकार के समाज में सामाजिक गतिशीलता को बहुत कम स्थान प्राप्त है। द्वितीय प्रकार के वे समाज हैं जो अवसर की समानता (Equality of opportunity) पर आधारित हैं। इनमें व्यक्ति की स्थिति स्वयं उसके प्रयासों का परिणाम होती है। वह अपनी स्थिति को अभिभावकों की स्थिति के फलस्वरूप प्राप्त नहीं करता है। इस प्रकार के समाज में सामाजिक स्थिति के परिवर्तन के लिए पर्याप्त मात्रा में अवसर प्राप्त रहते हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि इस प्रकार के समाजों में सामाजिक गतिशीलता सम्भव है।

सामाजिक गतिशीलता का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Social Mobility

सामाजिक गतिशीलता का अर्थ : Meaning of Social Mobility— सामाजिक गतिशीलता का अर्थ है—व्यक्ति की किसी सामाजिक ढाँचे (Social Stra-

tification) में गति। इस दृष्टि से सामाजिक गतिशीलता का अर्थ है—किसी सामाजिक ढाँचे में किसी व्यक्ति के सामाजिक पद (Status) या सामाजिक स्थान में होने वाला परिवर्तन। अतः व्यक्ति की सामाजिक स्थिति या पद का उच्च या निम्न हो जाना ही सामाजिक गतिशीलता है।

सामाजिक गतिशीलता की परिभाषा : *Definition of Social Mobility*— सामाजिक गतिशीलता के अर्थ को अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ नीचे दे रहे हैं—

1. मिलर व वूक :—"सामाजिक गतिशीलता, व्यक्तियों या समूहों का एक सामाजिक ढाँचे से दूसरे ढाँचे में संचलन है।"

"Social Mobility is a movement of individuals or groups from one social class stratum to another."

—*H. L. Miller & R. R. Woock.*

2. सोरोकिन :—"सामाजिक गतिशीलता का अर्थ है—सामाजिक समूहों तथा स्तर के पुंज में किसी व्यक्ति का एक सामाजिक स्थिति से दूसरी सामाजिक स्थिति में पहुँच जाना।"

"By Social Mobility is meant any transition of an individual from one position to another in a constellation of social group and strata."—**P. Sorokin.**

सामाजिक गतिशीलता के रूप
Forms of Social Mobility

हेरोल्ड एल० हॉजकिंसन (Harold L. Hodgkinson) ने सामाजिक गतिशीलता के निम्नलिखित दो भेद बताए हैं :—

1. समतल सामाजिक गतिशीलता : Horizontal Social Mobility
2. शीर्षात्मक सामाजिक गतिशीलता : *Vertical Social Mobility*

1. समतल सामाजिक गतिशीलता : Horizontal Mobility—हॉजकिंसन ने समतल सामाजिक गतिशीलता के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है—इसमें भौगोलिक गति होती है। इस प्रकार की सामाजिक गतिशीलता में व्यक्ति के सामाजिक पद में कोई परिवर्तन नहीं होता है; उदाहरणार्थ—किसी छोटे नगर का बैंक का बाबू जब बड़े नगर के बैंक का बाबू बन जाता है तब उसके व्यवसाय में परिवर्तन न होकर केवल भौगोलिक स्थिति में परिवर्तन होता है। व्यवसाय उसका वही रहता है। परन्तु संचलन हो जाता है अर्थात् उसी व्यवसाय में उसकी स्थिति में घटत-बढ़त हो जाती है।

2. शीर्षात्मक सामाजिक गतिशीलता : Vertical Social Mobility— शीर्षात्मक गतिशीलता, समतल सामाजिक गतिशीलता से अधिक महत्वपूर्ण है। इसमें व्यक्ति एक सामाजिक पद या स्थिति से दूसरे सामाजिक पद या स्थिति पर जाता

है। इसमें स्थिति या पद का परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन उच्चता की ओर भी हो सकता है और निम्नता की ओर भी। दूसरे शब्दों मे कह सकते है कि यह पद परिवर्तन निम्न समूह से उच्च समूह की ओर भी हो सकता है या उच्च समूह से निम्न समूह की ओर भी हो सकता है। अतः उच्च से निम्न या निम्न से उच्च सामाजिक स्थिति या प्रतिष्ठा वाले सामाजिक स्तरो मे व्यक्तियों के आने-जाने को शीर्षात्मक सामाजिक गतिशीलता कहते हैं। सोरोकिन ने इसके अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है :—"शीर्षात्मक गतिशीलता से मेरा अभिप्राय उन सम्बन्धों से है जो किसी व्यक्ति (या सामाजिक वस्तु) के एक सामाजिक स्तर से दूसरे सामाजिक स्तर में जाने के कारण उत्पन्न होते हैं।"

"By Vertical Mobility I mean the relations involved in a transition of an individual (or social object) from one social stratum to another."—P. Sorokin.

सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करने वाले कारक
Factors Affecting Social Mobility

सेमूर एम० लिपसेट तथा रीनहार्ड बेनडिक्स (Seymour M. Lipset & Reinhard Bendix) के अनुसार औद्योगिक समाज मे सामाजिक गतिशीलता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने वाले अधोलिखित पाँच कारक है :—

1. किसी सामाजिक वर्ग में उपलब्ध सामाजिक पदों की संख्या में परिवर्तन : Changes in the Number of Positions available within a given Social Class—वर्तमान शताब्दी के गत दो दशकों में औद्योगिकी के क्षेत्र में कुछ परिवर्तनो ने हमारे समाज में इंजीनियरों की संख्या में महान् परिवर्तन ला दिया है। इस वृद्धि ने अन्य सामाजिक वर्गों के व्यक्तियों को इंजीनियर की स्थिति में परिवर्तित होने के लिए बहुत से अवसर प्रदान कर दिए है। इस कारण आधुनिक औद्योगिक समाज में सामाजिक गतिशीलता को बहुत प्रोत्साहन मिला।

2. प्रसवन दर की विविधता : Different Rates of Fertility—प्रायः सभी औद्योगिक देशों मे परिवारों के आकार तथा सामाजिक वर्ग-स्थिति (Social class position) में विलोम अनुपात (Inverse ratio) पाया जाता है। निम्न *वर्ग के परिवार बड़े होते जाते हैं, जब कि मध्य तथा उच्च वर्गों के परिवार आकार* में छोटे होते जाते हैं। इस प्रवृत्ति ने मध्यम वर्गीय पदों की पूर्ति करने के लिए आवश्यक मध्यम वर्गीय युवकों की संख्या में कमी कर दी अर्थात् इसके फलस्वरूप मध्यम वर्गीय युवको के अभाव मे बहुत से मध्य वर्गीय पद रिक्त रह जाते हैं, परन्तु इन पदो की पूर्ति के लिए निम्न वर्ग के लोगों को अवसर प्राप्त हो जाते है। अतः निम्न वर्ग के व्यक्तियों द्वारा मध्य वर्गीय पदों के ग्रहण करने पर सामाजिक गतिशीलता को स्थान मिल जाता है।

3. पदों की स्थिति में परिवर्तन : Change in Status of Positions—आधुनिक परिवर्तनों तथा वैज्ञानिक खोजों ने एक नवीन प्रकार की सामाजिक गतिशीलता को जन्म दिया है, जो कुछ व्यवसायों की सापेक्षिक स्थिति में हुए परिवर्तनों से सम्बन्धित है; उदाहरणार्थ—आधुनिक समाज में वैज्ञानिक तथा न्यूक्लियर भौतिकशास्त्री की स्थिति अन्य व्यवसायों की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। राजनीतिज्ञ चाहे वे केन्द्रीय स्तर के हों या राज्यीय स्तर के, उनकी स्थिति सापेक्षिक दृष्टि से निम्न हो गई है।

4. वंशानुगत सामाजिक पदों की संख्या में परिवर्तन : Changes in the Numbers of Inherited Social Positions—आधुनिक औद्योगिक समाज में वंशानुगत सामाजिक पदों की संख्या में कमी हो गई है। सम्भवतः ऐसा छोटे-छोटे व्यवसायों एवं उद्योगों की अवनति के कारण हुआ है। आधुनिक समाज में ऐसे बहुत से सामाजिक पदों का विकास हुआ जिनको वंशानुगत ढंग से एक के बाद दूसरे को हस्तान्तरित नहीं किया जा सकता है; उदाहरणार्थ—लोक-सेवा आयोग का चेयरमैन, सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश का पद, रेलवे बोर्ड का चेयरमैन आदि। इन पदों को अन्य सामाजिक स्तर के व्यक्तियों द्वारा निर्धारित योग्यताओं की पूर्ति करने पर प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु जो व्यक्ति चेयरमैन के पद को ग्रहण किए हुए है, वह अपने पुत्र या अपने सामाजिक स्तर के अन्य व्यक्ति को स्वयं प्रदान नहीं कर सकता है।

5. वैधिक व राजनीतिक प्रतिबन्धों में परिवर्तन : Changes in Legal and Political Restrictions—आज प्राचीन तथा मध्यकाल में प्रचलित बहुत-से वैधिक या विधायी तथा राजनीतिक प्रतिबन्धों को समाप्त कर दिया है। इसके फलस्वरूप सामाजिक गतिशीलता को बहुत प्रोत्साहन मिला है; उदाहरणार्थ—अंग्रेजी भारत में अल्पसंख्यकों पर बहुत-से प्रतिबन्ध थे। परन्तु स्वतन्त्र भारत में उन पर से बहुत से प्रतिबन्ध हटा लिए गए, जिसके फलस्वरूप भारतीय समाज मे पर्याप्त मात्रा मे सामाजिक गतिशीलता को प्रोत्साहन मिला। इसके फलस्वरूप समतल तथा शीर्षात्मक दोनों प्रकार की गतिशीलता देखने को मिलती है। अछूत जातियो के लोग आज उच्च वर्ग के सामाजिक पदों पर दिखाई पड़ते है। अतः हमारे समाज में इन बन्धनों के हटने से निम्न से उच्च समूह की ओर सामाजिक गतिशीलता का संचलन हुआ।

6. सामाजिक ढांचा : Structure of Society—सामाजिक गतिशीलता को सामाजिक ढाँचे के द्वारा भी प्रभावित किया जाता है। यदि समाज वंशानुगत असमानता पर आधारित है, तो उसे बन्द समाज (Closed Society) के नाम से पुकारा जाता है। इसमें सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा नही मिलता। क्योंकि इसमें समाज जातियों तथा वंशो के बन्धनो से बँधा रहता है। यदि इसके विपरीत समाज अवसर की समानता पर आधारित है तो उसमें सामाजिक गतिशीलता को प्रोत्साहन

मिलता है। इसमें व्यक्ति एक सामाजिक स्थिति या पद से दूसरी सामाजिक स्थिति में प्रवेश कर सकता है।

7. आर्थिक समृद्धि : Economic Prosperity—आर्थिक दृष्टि से समाज में तीन वर्ग—धनिक, मध्य तथा गरीब—पाए जाते हैं। इन तीनों वर्गों के खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार, सामाजिक स्तर आदि मे अन्तर पाया जाता है। आज समाज में धनिक वर्ग के व्यक्तियों को अधिक सम्मान मिलता है। इस कारण प्रत्येक व्यक्ति चाहे उसका *सम्बन्ध किसी भी वर्ग से क्यों न हो, अधिक से अधिक धन कमाने* का प्रयास करता है जिससे उसकी सामाजिक स्थिति उच्च हो जाय और वह समाज की प्रतिष्ठा का अधिकारी बन सके। इस प्रकार एक वर्ग दूसरे वर्ग मे गतिशीलता हो जाती है। अतः आर्थिक सम्पन्नता एक वर्ग से दूसरे वर्ग मे सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है।

8. व्यावसायिक प्रतिष्ठा : Occupational Prestige—समाज में सभी व्यवसायों को समान प्रतिष्ठा प्राप्त नही होती है। इस असमानता ने भी सामाजिक गतिशीलता को बहुत प्रभावित किया है; उदाहरणार्थ—आज भारत मे शिक्षण-व्यवसाय प्रशासन, सैनिक, व्यापार आदि से उच्च एव प्रतिष्ठित व्यवसाय नही माना जाता है। प्रायः यह देखा जाता है कि प्रशिक्षित शिक्षक अपने व्यवसाय को छोड़कर दूसरे व्यवसायों को ग्रहण कर लेते है। इसके सैकडो उदाहरण भारतीय समाज में देखने को मिल सकते हैं।

9. शिक्षा : Education—शिक्षा के प्रसार एव विकास ने सामाजिक गतिशीलता को बहुत प्रभावित किया है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी सामाजिक स्थिति को उन्नत बनाने के लिए शिक्षा को आवश्यक साधन स्वीकार करता है। अतः शिक्षा की प्राप्ति से प्रत्येक व्यक्ति अपनी सामाजिक स्थिति या पद की वृद्धि में संलग्न है। इस संलग्नता ने सामाजिक गतिशीलता को बहुत बढ़ावा दिया है।

10. शासन-व्यवस्था : Administrative Set-up—देश की शासन-व्यवस्था भी सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है। लोकतन्त्रीय शासन-व्यवस्था में अन्य प्रकार की शासन-प्रणालियों की अपेक्षा सामाजिक गतिशीलता को अधिक प्रोत्साहन मिलता है, क्योंकि जनतन्त्र में अवसर की समानता को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाता है। इसके अतिरिक्त लोकतन्त्र में व्यक्ति की महत्ता को स्वीकार किया जाता है। इन कारणों से व्यक्ति को अपनी सामाजिक स्थिति को परिवर्तित करने के लिए अवसर प्राप्त हो जाते हैं। इसके फलस्वरूप समाज में अधिक गतिशीलता पाई जाती है।

11. महत्त्वाकांक्षा का स्तर : Aspirational Level—मानव की आकांक्षाएँ एवं उनकी दृढता तथा उच्चता सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है। जिस समाज में जितने अधिक महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति होंगे, उस समाज में उतनी ही अधिक सामाजिक गतिशीलता होगी।

शिक्षा व सामाजिक गतिशीलता
Education & Social Mobility

आदिकालीन समाजों में लोग अपनी सामाजिक स्थिति को दैवी मानते थे। इस कारण उन्होंने प्रचलित सामाजिक ढाँचों को चुनौती नहीं दी। परन्तु आधुनिक समाज वह समाज है जिसमें प्राचीन सामाजिक स्तरों को समाप्त करके खुली गतिशीलता को स्थान प्रदान किया है। इस कारण आधुनिक समाज ने विद्यालय के परम्परागत कार्यों में परिवर्तन किया जिससे वह समाज की गतिशीलता के साथ क़दम मिला सके। इस सम्बन्ध में कार्ल वीनबर्ग ने लिखा है :—**"विद्यालय का प्रमुख कार्य, नवीन मार्ग प्रशस्त करना तथा उनको सभी के लिए खोले रखना है जिससे वह सामाजिक गतिशीलता के बदलते हुए ढाँचे के साथ क़दम मिला सके। विद्यालय इस कार्य को तभी पूरा कर सकता है। जब वह सभी प्रकार के आर्थिक स्तरों के बालकों को अपनी उन्नति करने के लिए व्यापक अवसर प्रदान करेगा।"**

"The function of the school in keeping pace with the changing structure of social mobility has been to open channels and keep them open. This is accomplished by providing widespread opportunities to children of all economic statuses to advance their position."—**Carl Weinberg.**

शिक्षा व सामाजिक गतिशीलता का सम्बन्ध : Relation between Education & Social Mobility—*शिक्षा, सामाजिक गतिशीलता से प्रत्यक्ष* रूप से सम्बन्धित है। शिक्षा शीर्षात्मक गतिशीलता को उत्पन्न करती है। आधुनिक युग में शिक्षा को सामाजिक गतिशीलता की प्रमुख धारा माना जाता है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि शिक्षा वह साधन है जिसके द्वारा सामाजिक गतिशीलता को लाया जाता है। शिक्षा और सामाजिक गतिशीलता के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए मिलर व वूक ने लिखा है :—**"औपचारिक शिक्षा, सामाजिक गतिशीलता से प्रत्यक्ष तथा कारणतः सम्बन्धित है। इस सम्बन्ध को सामान्यतः इस रूप में समझा जाता है कि शिक्षा स्वयं शीर्षात्मक सामाजिक गतिशीलता का एक प्रमुख कारण है।**

"Formal education is directly and causally related to social mobility. This relationship is generally understood to be one in which formal education itself is a cause or one of the causes of vertical social mobility."—**Miller & Woock.**

उक्त सम्बन्ध को उदाहरण द्वारा इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है। कुछ व्यवसाय; जैसे—डॉक्टरी, वकालत, शिक्षण, इन्जीनियरिंग आदि के लिए कुछ वर्षों की औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता है। इस शिक्षा के अभाव मे व्यक्ति डाक्टर

वकील, शिक्षक या इन्जीनियर नहीं बन सकता है। अतः शिक्षा व्यावसायिक स्थिति को प्राप्त करने का एक प्रमुख कारण या साधन है।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि शिक्षा, बालकों की क्षमता एवं कुशलता का विकास करके उन्हें सामाजिक गतिशीलता के लिए तैयार करती है। दूसरे शब्दो में कह सकते हैं कि शिक्षा द्वारा बालको को व्यावसायिक गतिशीलता के लिए तत्पर बनाया जाता है। अतः शिक्षा, सामाजिक गतिशीलता का एक महत्त्वपूर्ण साधन है। परन्तु शिक्षकों तथा छात्रों की गतिशीलता में अन्तर पाया जाता है। नीचे हम इन दोनों की गतिशीलता पर प्रकाश डाल रहे है :—

1. छात्रों की सामाजिक गतिशीलता : Social Mobility of Students— सामान्यतः शिक्षा को समाज मे उच्च स्तर या पद प्राप्त करने का महत्त्वपूर्ण साधन माना जाता है। अतः प्रत्येक समाज मे प्रत्येक छात्र शिक्षा इसलिए प्राप्त करता है कि वह अपनी क्षमता एवं योग्यता के अनुसार उच्च सामाजिक पद प्राप्त कर सके। परन्तु शिक्षा के विभिन्न तत्त्व उसकी सामाजिक गतिशीलता को विभिन्न रूप से प्रभावित करते हैं। इन विभिन्न तत्त्वों के प्रभाव को नीचे स्पष्ट किया जा रहा है :—

(अ) शिक्षा की मात्रा : Amount of Education—शिक्षा के ढाँचे में विभिन्न स्तरों—प्राइमरी, माध्यमिक, उच्च आदि की शिक्षा को स्थान प्रदान किया जाता है। छात्र जिस स्तर तक की शिक्षा प्राप्त करेगा, वह उस स्तर के योग्य सामाजिक पद को प्राप्त करने मे समर्थ हो सकेगा; उदाहरणार्थ—यदि किसी छात्र ने माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त की है, तो वह इस स्तर के योग्य किसी सामाजिक पद अर्थात् लोअर डिवीजनल क्लर्क, आपरेटर आदि पदों को प्राप्त कर सकता है। वह आई० पी० एस०, आई० ए० एस० आदि सामाजिक पदों को प्राप्त नही कर सकता है।

(ब) शिक्षा की पाठ्य-वस्तु : Content of Education—शिक्षा की पाठ्य-वस्तु भी सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है। शिक्षा की प्रत्येक पाठ्य-वस्तु का अलग-अलग महत्त्व है। कोई भी छात्र इंजीनियरिंग की पाठ्य-वस्तु का अध्ययन करके डाक्टर का पद नही प्राप्त कर सकता है। अतः सामाजिक गतिशीलता को निर्धारित करने में पाठ्य-क्रम, मापदण्ड के रूप में कार्य करता है। आधुनिक युग में पाठ्यक्रम की विभिन्नता ने सामाजिक गतिशीलता को बहुत बढ़ावा दिया है।

(स) विशिष्ट क्षेत्रों की उच्च शिक्षा : Higher Education in Specialized Areas—विशिष्ट क्षेत्रों की उच्च शिक्षा भी सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है; क्योंकि जो छात्र किसी विशिष्ट क्षेत्र में उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेते है, उससे उस क्षेत्र में उच्च पद प्राप्त करने की सम्भावना बढ़ जाती है।

(द) विशिष्ट कॉलेज या विश्वविद्यालय का महत्त्व : Importance of Particular College or University—किसी विशिष्ट कॉलेज या विश्वविद्यालय

द्वारा भी सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित किया जाता है। कुछ कॉलेज या विश्वविद्यालयों को अन्य की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाता है। ऐसे कॉलेजों से शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को उच्च सामाजिक पद शीघ्रता मे प्राप्त हो जाते है; उदाहरणार्थ, इलाहाबाद विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को आगरा विश्वविद्यालय के छात्रों की अपेक्षा अधिक सुविधा से उच्च सामाजिक पद प्राप्त हो जाते हैं। आज भी विश्व में इङ्गलैंड के ऑक्सफोर्ड तथा केम्ब्रिज विश्वविद्यालयों के छात्रो को वरीयता प्राप्त है।

2. शिक्षकों की सामाजिक गतिशीलता : Teachers' Social Mobility— *शिक्षक अपने सामाजिक पद को शैक्षिक समूहों के अन्तर्गत प्राप्त कर सकते हैं।* शैक्षिक समूहों के अन्तर्गत विद्यालय शिक्षक, प्रवक्ता, वरिष्ठ प्रवक्ता, रीडर, प्रोफेसर, प्रिंसीपल, उपकुलपति आदि पद आते है। शिक्षक इन्हीं पदों में से किसी पद को प्राप्त करके अपनी प्रतिष्ठा को उच्च कर सकता है। परन्तु अन्य व्यावसायिक पदों की तुलना में आज शिक्षक का पद ऊँचा नही माना जाता है। इस परिवर्तित स्थिति के निम्नलिखित कारण है :—

(i) छात्रों की बढती हुई संख्या।
(ii) शिक्षा का विस्तार।
(iii) छात्रों की अनुशासनहीनता।
(v) अन्य पदों की अपेक्षा कम वेतन।
(v) दूसरे क्षेत्रों में उच्च पद प्राप्त करने के अवसर।
(vi) सामाजिक प्रतिष्ठा एवं सम्मान का अभाव।

शिक्षा व अधोमुखी गतिशीलता
Education & Downward Mobility

जैसा कि हम ऊपर देख चुके हैं कि शिक्षा उपरिमुखी गतिशीलता (Upward Mobility) को बढावा देती है। परन्तु शिक्षा के अभाव में अधोमुखी गतिशीलता (Downward Mobility) को भी जन्म मिलता है। जो व्यक्ति उचित शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते हैं, उनकी गतिशीलता नीचे की ओर उन्मुख हो जाती है। इस दृष्टि से शिक्षाविहीन बालक, चाहे वे उच्च वर्ग से या मध्यम वर्ग से सम्बन्धित हों, उच्च पद प्राप्त करने में असमर्थ रह जाते है और उनकी गतिशीलता नीचे की ओर हो जाती है और उनके द्वारा *किए गए स्थानों को निम्न वर्ग के शिक्षित बालक ग्रहण कर* लेते हैं। भारतीय समाज में आज अधोमुखी गतिशीलता पर्याप्त मात्रा में देखने को मिल रही है।

सामाजिक गतिशीलता के गुण व दोष
Merits & Demerits of Social Mobility

(अ) सामाजिक गतिशीलता के गुण : Merits of Social Mobility—

1. समाज में उचित स्थान या पद पर उचित व्यक्ति की नियुक्ति।

2. व्यक्ति का सामंजस्यपूर्ण विकास ।
3. सामाजिक स्थिरता (Social Stability) ।
4. कुसमायोजन की समस्या का समाधान ।
5. सामाजिक प्रगति तथा सामाजिक कुशलता में वृद्धि ।
6. सन्तोष एवं समृद्धि को प्रोत्साहन ।
7. राष्ट्र की दृढ़ता एवं समृद्धि में वृद्धि ।
8. राष्ट्र की जन-शक्ति (Man Power) में वृद्धि ।
9. राष्ट्रीय आकांक्षाओं की पूर्ति ।

(ब) सामाजिक गतिशीलता के दोष : **Demerits of Social Mobility—**

1. व्यक्ति में अहम् की भावना का विकास ।
2. व्यक्ति का अपनी सामाजिक स्थिति से सदैव असन्तुष्ट रहना ।
3. व्यक्ति में व्यर्थ का दम्भ उत्पन्न होना ।
4. नगरीय एवं ग्रामीण समाजों में अव्यवस्था एवं विघटन ।

उपसंहार

अन्त में, हम मुसग्रेव के शब्दों में कह सकते है :—**"विद्यालय, बालक में अत्यधिक आर्थिक महत्त्वाकांक्षा विकसित कर सकता है। इसी प्रकार, वह सामाजिक गतिशीलता के लिए अत्यधिक महत्त्वाकांक्षा को संचालित कर सकता है।"**

"The school could inculcate excess economic ambition into a child in the same way that excess aspirations for social mobility may be generated."—**P. W. Musgrave.**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What do you understand by Social Mobility ? Discuss its forms.

आप सामाजिक गतिशीलता से क्या समझते है ? इनके विभिन्न रूपों की विवेचना कीजिए ।

2. What factors affect the Social Mobility ?

सामाजिक गतिशीलता को किन घटकों के द्वारा प्रभावित किया जाता है ?

3. Discuss the relationship between Education and Social Mobility.

शिक्षा और सामाजिक गतिशीलता के सम्बन्ध की विवेचना कीजिए ।

खण्ड सात

शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त, सूत्र, प्रणालियाँ, प्रविधियाँ व प्रक्रियाएँ

GENERAL PRINCIPLES, MAXIMS, DEVICES, TECHNIQUES & PROCEDURES OF TEACHING

"शिक्षण-कला सदैव परिवर्तित होती रहती है। एक समय में ही संसार के विभिन्न देशों में शिक्षण की विभिन्न विधियाँ होती हैं। एक देश में एक या दो पीढ़ियों में, जब समाज की रचना और आदर्श बदल जाते हैं, तब शिक्षण की विधियाँ भी बदल जाती हैं। परिणामतः शिक्षण-कला भी परिवर्तित हो जाती है।"—Gisbert Highet.

- शिक्षण के सामान्य या आधारभूत सिद्धान्त
  General or Basic Principles of Teaching
- शिक्षण-सूत्र
  Maxims of Teaching
- शिक्षण-प्रणालियाँ व प्रविधियाँ
  Devices & Techniques of Teaching
- प्रश्न पूछना
  Questioning
- उत्तर निकलवाना
  Receiving Answers
- शिक्षण-प्रक्रियाएँ
  Teaching Procedures

40

शिक्षण के सामान्य या आधारभूत सिद्धान्त

GENERAL OR BASIC PRINCIPLES OF TEACHING

"सब विचारशील शिक्षा-शास्त्री इस बात से सहमत हैं कि समस्त ज्ञान के कुछ आधारभूत सिद्धान्त होते हैं और दायित्वपूर्ण शिक्षण इनके अनुसार होना चाहिए।"

"All thoughtful educators are agreed that certain fundamental principles underlie all learning, and that responsible teaching must correspond to these."—Thomas & Lang.

विषय-प्रवेश

ह्यूजेज और ह्यूजेज का कथन है :—"यह ठीक ही कहा गया है कि 'शिक्षण' का अर्थ है—सीखने के लिए आधार प्रस्तुत करना। तब तक कुछ नहीं दिया गया है, जब तक कुछ ग्रहण नहीं किया गया है; तब तक कुछ नहीं पढ़ाया गया है, जब तक कि कुछ सीखा नहीं गया है। शिक्षण पूर्ण रूप से तैयार किए हुए व्याख्यानों को देने से बहुत अधिक है।"

"It has been well said that 'teaching' means 'causing to learn'. Nothing has been given until it has been taken, nothing has been taught until it has been learnt. Teaching is more than the efficient delivery of thoroughly prepared lectures."

—Hughes &

शिक्षण के सामान्य या आधारभूत सिद्धान्त
General or Basic Principles of Teaching

शिक्षण में सफलता प्राप्त करने के लिए सबसे आवश्यक शर्त यह है कि इस बात का ज्ञान प्राप्त किया जाय कि बच्चे किस प्रकार सीखते है। इसलिए शिक्षण के सामान्य या आधारभूत सिद्धान्तों पर विचार करना हमारे लिए लाभप्रद होगा। ये सिद्धान्त निम्नलिखित हैं :—

1. **क्रियाशीलता या करके सीखने का सिद्धान्त : Principle of Activity or Learning by Doing**—डब्ल्यू० एम० रायबर्न—क्रियाशीलता के सिद्धान्त को प्रथम और महत्त्वपूर्ण स्थान देता है, क्योंकि यह बालक की प्रकृति के अनुरूप है। इस सिद्धान्त का आधार—मनोवैज्ञानिक है। बालक स्वभाव से ही क्रियाशील होते हैं। वे हर समय कुछ-न-कुछ करते रहते है। इसलिए, वे क्रिया द्वारा अधिक सरलता और शीघ्रता से सीखते हैं। जितनी ही अधिक उनकी क्रिया होगी, उतना ही अधिक सीखने और शिक्षण की प्रक्रिया होगी। जब वे किसी कार्य को करते हैं, तब उनका ध्यान उस पर एकाग्र हो जाता है। एकाग्रता किसी भी बात को अच्छी तरह समझने में सहायता देती है। शारीरिक रूप से क्रियाशील बालक मानसिक रूप से भी सचेत होते है, और इसलिए वे किसी भी बात को अधिक अच्छी तरह सीखते है।

क्रियाशीलता के इस मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त को फ्रॉबेल ने बहुत अधिक महत्त्व दिया। इसीलिए उसने 'करके सीखने' का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। पर इसका अर्थ यह नहीं है कि बालक स्वयं ही हर प्रकार के पाठ के लिए क्रियाशील हो। इसके विपरीत, इसका अर्थ यह है कि—शिक्षक प्रत्येक प्रकार के पाठ के लिए बालक को क्रियाशील बनाये। क्रियाशीलता के बिना सीखने का काम कठिन हो जाता है; उदाहरणार्थ—यदि हम बालकों से किसी ऐतिहासिक घटना के तथ्यों और तिथियों को याद करने के लिए कहें, तो वे कठिनाई का अनुभव करते है। पर यदि वे उस घटना को नाटक के रूप में खेलते हैं, तो उनको उससे सम्बन्धित सब बातें बड़ी सरलता से याद हो जाती है। इससे सिद्ध हो जाता है कि क्रियाशीलता का सिद्धान्त बहुत लाभदायक है।

ह्यूरिस्टिक पद्धति, प्रोजेक्ट पद्धति, किण्डरगार्टन पद्धति, मॉण्टेसरी पद्धति और डाल्टन प्रणाली का आधार—यही सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त को प्रत्येक कक्षा और प्रत्येक विषय के शिक्षण में लागू किया जा सकता है। इसकी उपयोगिता शिक्षण-कार्य में ही नहीं, वरन् विद्यालय के अन्य कार्यों में भी है; उदाहरणार्थ—विद्यालय की विभिन्न समाओं, सोसाइटियों, गोष्ठियों, क्लबों आदि में क्रियाशील रहने से बालकों में अच्छे विचारों और भावनाओं का निर्माण होता है। उनमें अच्छी आदतें पड़ती हैं और उनको समाज-सेवा का प्रशिक्षण मिलता है।

tification) में गति। इस दृष्टि से सामाजिक गतिशीलता का अर्थ—किसी सामाजिक ढाँचे में किसी व्यक्ति के सामाजिक पद (Status) या सामाजिक स्थान में होने वाला परिवर्तन। अतः व्यक्ति की सामाजिक स्थिति या पद का उच्च या निम्न हो जाना ही सामाजिक गतिशीलता है।

सामाजिकता गतिशीलता की परिभाषा : Definition of Social Mobility—सामाजिक गतिशीलता के अर्थ को अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ नीचे दे रहे हैं :—

1. मिलर व वूक :—**"सामाजिक गतिशीलता, व्यक्तियों या समूहों का एक सामाजिक ढाँचे से दूसरे ढाँचे में संचलन है।"**

"Social Mobility is a movement of individuals or groups from one social class stratum to another."

—**H. L. Miller & R. R. Woock.**

2. सोरोकिन :—**"सामाजिक गतिशीलता का अर्थ है—सामाजिक समूहों तथा स्तर के पुंज में किसी व्यक्ति का एक सामाजिक स्थिति से दूसरी सामाजिक स्थिति में पहुँच जाना।"**

"By Social Mobility is meant any transition of an individual from one position to another in a constellation of social group and strata."—**P. Sorokin.**

सामाजिक गतिशीलता के रूप

Forms of Social Mobility

हेरोल्ड एल० होंडकिसन (Harold L. Hodgkinson) ने सामाजिक गतिशीलता के निम्नलिखित दो भेद बताए हैं :—

1. समतल सामाजिक गतिशीलता : Horizontal Social Mobility
2. शीर्षात्मक सामाजिक गतिशीलता : Vertical Social Mobility

1. समतल सामाजिक गतिशीलता : Horizontal Mobility—**होंडकिसन** ने समतल सामाजिक गतिशीलता के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है—इसमें भौगोलिक गति होती है। इस प्रकार की सामाजिक गतिशीलता में व्यक्ति के सामाजिक पद में कोई परिवर्तन नहीं होता है; उदाहरणार्थ—किसी छोटे नगर का बैंक का बाबू जब बड़े नगर के बैंक का बाबू बन जाता है तब उसके व्यवसाय में परिवर्तन न होकर केवल भौगोलिक स्थिति में परिवर्तन होता है। व्यवसाय उसका वही रहता है परन्तु संचलन हो जाता है अर्थात् उसी व्यवसाय में उसकी स्थिति में घटत-बढ़त हो जाती है।

2. शीर्षात्मक सामाजिक गतिशीलता : Vertical Social Mobility—शीर्षात्मक गतिशीलता, समतल सामाजिक गतिशीलता से अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसमें व्यक्ति एक सामाजिक पद या स्थिति में दूसरे सामाजिक पद या स्थिति पर जाता

है । इसमें स्थिति का पद का परिवर्तन होता है । यह परिवर्तन उच्चता की ओर भी हो सकता है और निम्नता की ओर भी । दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि यह परिवर्तन निम्न समूह से उच्च समूह की ओर भी हो सकता है या उच्च समूह से निम्न समूह की ओर भी हो सकता है । अतः उच्च से निम्न या निम्न से उच्च सामाजिक स्थिति का परिवर्तन करके सामाजिक स्तरों में व्यक्तियों के आने-जाने को शीर्षात्मक सामाजिक गतिशीलता कहते हैं । सोरोकिन ने इसके अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है :—"शीर्षात्मक गतिशीलता से मेरा अभिप्राय उन सम्बन्धों से है जो किसी व्यक्ति (या सामाजिक वस्तु) के एक सामाजिक स्तर से दूसरे सामाजिक स्तर में जाने के कारण उत्पन्न होते हैं ।"

"By Vertical Mobility I mean the relations involved in a transition of an individual (or social object) from one social stratum to another."—P. Sorokin.

सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करने वाले कारक
Factors Affecting Social Mobility

सेमूर एम॰ लिप्सेट तथा रीनहार्ड बेनडिक्स (Seymour M. Lipset & Reinhard Bendix) के अनुसार औद्योगिक समाज में सामाजिक गतिशीलता को मुख्य रूप से प्रभावित करने वाले अग्रांकित पाँच कारक हैं :—

1. किसी सामाजिक वर्ग में उपलब्ध सामाजिक पदों की संख्या में परिवर्तन : Changes in the Number of Positions available within a given Social Class—वर्तमान शताब्दी के गत दो दशकों से औद्योगिकी के क्षेत्र में हुए परिवर्तनों ने हमारे समाज में इंजीनियरों की संख्या में महान् परिवर्तन ला दिया है । इस वृद्धि के अन्य सामाजिक वर्गों के व्यक्तियों को इंजीनियर की स्थिति में परिवर्तित होने के लिए बहुत-से अवसर प्रदान कर दिए हैं । इस कारण आधुनिक औद्योगिक समाज में सामाजिक गतिशीलता को बहुत प्रोत्साहन मिला ।

2. प्रजनन दर की विविधता : Different Rates of Fertility—प्रायः सभी औद्योगिक देशों में परिवारों के आकार तथा सामाजिक वर्ग-स्थिति (Social class position) में विलोम अनुपात (Inverse ratio) पाया जाता है । निम्न वर्ग के परिवार बड़े होते जाते हैं, जब कि मध्य तथा उच्च वर्गों के परिवार आकार में छोटे होते जाते हैं । इस प्रवृत्ति ने मध्यम वर्गीय पदों की पूर्ति करने के लिए आवश्यक मध्यम वर्गीय युवकों की संख्या में कमी कर दी अर्थात् इसके फलस्वरूप मध्यम वर्गीय युवकों के अभाव में बहुत-से मध्य वर्गीय पद रिक्त रह जाते हैं, परन्तु इन पदों की पूर्ति के लिए निम्न वर्ग के लोगों को अवसर प्राप्त हो जाते हैं । अतः निम्न वर्ग के व्यक्तियों द्वारा मध्य वर्गीय पदों के ग्रहण करने पर सामाजिक गतिशीलता को स्थान मिल जाता है ।

3. पदों की स्थिति में परिवर्तन : Change in Status of Positions—आधुनिक परिवर्तनों तथा वैज्ञानिक खोजों ने एक नवीन प्रकार की सामाजिक गतिशीलता को जन्म दिया है, जो कुछ व्यवसायों की सापेक्षिक स्थिति में हुए परिवर्तनों से सम्बन्धित है; उदाहरणार्थ—आधुनिक समाज में वैज्ञानिक तथा न्यूक्लियर भौतिकशास्त्री की स्थिति अन्य व्यवसायों की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। राजनीतिज्ञ चाहे वे केन्द्रीय स्तर के हों या राजकीय स्तर के, उनकी स्थिति सापेक्षिक दृष्टि से निम्न हो गई है।

4. वंशानुगत सामाजिक पदों की संख्या में परिवर्तन : Changes in the Numbers of Inherited Social Positions—आधुनिक औद्योगिक समाज में वंशानुगत सामाजिक पदों की संख्या में कमी हो गई है। सम्भवतः ऐसा छोटे-छोटे व्यवसायों एवं उद्योगों की अवनति के कारण हुआ है। आधुनिक समाज में ऐसे बहुत-से सामाजिक पदों का विकास हुआ जिनको वंशानुगत ढङ्ग से एक के बाद दूसरे को हस्तान्तरित नहीं किया जा सकता है; उदाहरणार्थ—लोक-सेवा आयोग का चेयरमैन, सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश का पद, रेलवे बोर्ड का चेयरमैन आदि। इन पदों को अन्य सामाजिक स्तर के व्यक्तियों द्वारा निर्धारित योग्यताओं की पूर्ति करने पर प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु जो व्यक्ति चेयरमैन के पद को ग्रहण किए हुए है, वह अपने पुत्र या अपने सामाजिक स्तर के अन्य व्यक्ति को स्वयं प्रदान नहीं कर सकता है।

5. वैधिक व राजनीतिक प्रतिबन्धों में परिवर्तन : Changes in Legal and Political Restrictions—आज प्राचीन तथा मध्यकाल में प्रचलित बहुत-से वैधिक या विधायी तथा राजनीतिक प्रतिबन्धों को समाप्त कर दिया है। इसके फलस्वरूप सामाजिक गतिशीलता को बहुत प्रोत्साहन मिला है। उदाहरणार्थ—अंग्रेजी भारत में अल्पसंख्यकों पर बहुत-से प्रतिबन्ध थे। परन्तु स्वतन्त्र भारत में उन पर से बहुत-से प्रतिबन्ध हटा लिए गए, जिसके फलस्वरूप भारतीय समाज में पर्याप्त मात्रा में सामाजिक गतिशीलता को प्रोत्साहन मिला। इसके फलस्वरूप समतल तथा शीर्षात्मक दोनों प्रकार की गतिशीलता देखने को मिलती है। अछूत जातियों के लोग आज उच्च वर्ग के सामाजिक पदों पर दिखाई पड़ते हैं। अतः हमारे समाज में इन बन्धनों के हटने से निम्न से उच्च समूह की ओर सामाजिक गतिशीलता का संचलन हुआ।

6. सामाजिक ढाँचा : Structure of Society—सामाजिक गतिशीलता को सामाजिक ढाँचे के द्वारा भी प्रभावित किया जाता है। यदि समाज वंशानुगत असमानता पर आधारित है, तो उसे बन्द समाज (Closed Society) के नाम से पुकारा जाता है। इसमें सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा नहीं मिलता। क्योंकि इसमें समाज जातियों तथा वंशों के बन्धनों से बँधा रहता है। यदि इसके विपरीत समाज अवसर की समानता पर आधारित है तो उसमें सामाजिक गतिशीलता को प्रोत्साहन

मिलता है। इसमे व्यक्ति एक सामाजिक स्थिति या पद से दूसरी सामाजिक स्थिति मे प्रवेश कर सकता है।

7. आर्थिक समृद्धि : **Economic Prosperity**—आर्थिक दृष्टि से समाज मे तीन वर्ग—धनिक, मध्य तथा गरीब—पाए जाते हैं। इन तीनो वर्गों के खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार, सामाजिक स्तर आदि में अन्तर पाया जाता है। आज समाज मे धनिक वर्ग के व्यक्तियो को अधिक सम्मान मिलता है। इस कारण प्रत्येक व्यक्ति चाहे उसका सम्बन्ध किसी भी वर्ग से क्यों न हो, अधिक से अधिक धन कमाने का प्रयास करता है जिससे उसकी सामाजिक स्थिति उच्च हो जाय और वह समाज की प्रतिष्ठा का अधिकारी बन सके। इस प्रकार एक वर्ग से दूसरे वर्ग मे गतिशील हो जाती है। अतः आर्थिक सम्पन्नता एक वर्ग मे दूसरे वर्ग मे सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है।

8. व्यावसायिक प्रतिष्ठा : **Occupational Prestige**—समाज मे सभी व्यवसायों को समान प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं होती है। इस असमानता ने भी सामाजिक गतिशीलता को बहुत प्रभावित किया है; उदाहरणार्थ—आज भारत में शिक्षण-व्यवसाय प्रशासन, सैनिक, व्यापार आदि से उच्च एव प्रतिष्ठित व्यवसाय नही माना जाता है। प्रायः यह देखा जाता है कि प्रशिक्षित शिक्षक अपने व्यवसाय को छोड़कर दूसरे व्यवसायो को ग्रहण कर लेते है। इसके सैकड़ों उदाहरण भारतीय समाज मे देखने को मिल सकते हैं।

9. शिक्षा : **Education**—शिक्षा के प्रसार एव विकास ने सामाजिक गतिशीलता को बहुत प्रभावित किया है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी सामाजिक स्थिति को उन्नत बनाने के लिए शिक्षा को आवश्यक साधन स्वीकार करता है। अतः शिक्षा की प्राप्ति से प्रत्येक व्यक्ति अपनी सामाजिक स्थिति या पद की वृद्धि मे संलग्न है। इस संलग्नता ने सामाजिक गतिशीलता को बहुत बढावा दिया है।

10. शासन-व्यवस्था : **Administrative Set-up**—देश की शासन-व्यवस्था भी सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है। लोकतन्त्रीय शासन-व्यवस्था मे अन्य प्रकार की शासन-प्रणालियों की अपेक्षा सामाजिक गतिशीलता को अधिक प्रोत्साहन मिलता है, क्योंकि जनतन्त्र में अवसर की समानता को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाता है। इसके अतिरिक्त लोकतन्त्र मे व्यक्ति की महत्ता को स्वीकार किया जाता है। इन कारणों से व्यक्ति को अपनी सामाजिक स्थिति को परिवर्तित करने के लिए अवसर प्राप्त हो जाते हैं। इसके फलस्वरूप समाज मे अधिक गतिशीलता पाई जाती है।

11. महत्वाकांक्षा का स्तर : **Aspirational Level**—मानव की आकांक्षाएँ एव उनकी दृढ़ता तथा उच्चता सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है। जिस समाज में जितने अधिक महत्वाकांक्षी व्यक्ति होंगे, उस समाज मे उतनी ही अधिक सामाजिक गतिशीलता होगी।

शिक्षा व सामाजिक गतिशीलता
Education & Social Mobility

आदिकालीन समाजों में लोग अपनी सामाजिक स्थिति को दैवी मानते थे। इस कारण उन्होंने प्रचलित सामाजिक ढांचों को चुनौती नहीं दी। परन्तु आधुनिक समाज वह समाज है जिसमें प्राचीन सामाजिक स्तरों को समाप्त करके खुली गतिशीलता को स्थान प्रदान किया है। इस कारण आधुनिक समाज ने विद्यालय के परम्परागत कार्यों में परिवर्तन किया जिससे वह समाज की गतिशीलता के साथ कदम मिला सके। इस सम्बन्ध में कार्ल वीनबर्ग ने लिखा है : **"विद्यालय का प्रमुख कार्य, नवीन मार्ग प्रशस्त करना तथा उनको सभी के लिए खोले रखना है जिससे वह सामाजिक गतिशीलता के बदलते हुए ढांचे के साथ कदम मिला सके। विद्यालय इस कार्य को तभी पूरा कर सकता है जब वह सभी प्रकार के आर्थिक स्तरों के बालकों को अपनी उन्नति करने के लिए व्यापक अवसर प्रदान करेगा।"**

"The function of the school in keeping pace with the changing structure of social mobility has been to open channels and keep them open. This is accomplished by providing wide-spread opportunities to children of all economic statuses to advance their position."—**Carl Weinberg.**

शिक्षा व सामाजिक गतिशीलता का सम्बन्ध : Relation between Education & Social Mobility—शिक्षा, सामाजिक गतिशीलता से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित है। शिक्षा शीर्षात्मक गतिशीलता को उत्पन्न करती है। आधुनिक युग में शिक्षा को सामाजिक गतिशीलता की प्रमुख धारा माना जाता है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि शिक्षा वह साधन है जिसके द्वारा सामाजिक गतिशीलता को लाया जाता है। शिक्षा और सामाजिक गतिशीलता के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए मिलर व वूक ने लिखा है :—**"औपचारिक शिक्षा, सामाजिक गतिशीलता से प्रत्यक्ष तथा कारणतः सम्बन्धित है। इस सम्बन्ध को सामान्यतः इस रूप में समझा जाता है कि शिक्षा स्वयं शीर्षात्मक सामाजिक गतिशीलता का एक प्रमुख कारण है।"**

"Formal education is directly and causally related to social mobility. This relationship is generally understood to be one in which formal education itself is a cause or one of the causes of vertical social mobility."—**Miller & Woock.**

उक्त सम्बन्ध को उदाहरण द्वारा इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है। कुछ व्यवसाय; जैसे—डॉक्टरी, वकालत, शिक्षण, इन्जीनियरिंग आदि के लिए कुछ वर्षों की औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता है। इस शिक्षा के अभाव में व्यक्ति डाक्टर

वकील, शिक्षक या इंजीनियर नहीं बन सकता है। अतः शिक्षा व्यावसायिक स्थिति को प्राप्त करने का एक प्रमुख कारण या साधन है।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि शिक्षा, बालकों की क्षमता एवं कुशलता का विकास करके उन्हें सामाजिक गतिशीलता के लिए तैयार करती है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि शिक्षा द्वारा बालकों को व्यावसायिक गतिशीलता के लिए तत्पर बनाया जाता है। अतः शिक्षा, सामाजिक गतिशीलता का एक महत्त्वपूर्ण साधन है। परन्तु शिक्षकों तथा छात्रों की गतिशीलता में अन्तर पाया जाता है। नीचे हम इन दोनों की गतिशीलता पर प्रकाश डाल रहे हैं :—

1. छात्रों की सामाजिक गतिशीलता : Social Mobility of Students—सामान्यतः शिक्षा को समाज में उच्च स्तर या पद प्राप्त करने का महत्त्वपूर्ण साधन माना जाता है। अतः प्रत्येक समाज में प्रत्येक छात्र शिक्षा इसलिए प्राप्त करता है कि वह अपनी क्षमता एवं योग्यता के अनुसार उच्च सामाजिक पद प्राप्त कर सके। परन्तु शिक्षा के विभिन्न तत्त्व उसकी सामाजिक गतिशीलता को विभिन्न रूप से प्रभावित करते हैं। इन विभिन्न तत्त्वों के प्रभाव को नीचे स्पष्ट किया जा रहा है :—

(अ) शिक्षा की मात्रा : Amount of Education—शिक्षा के ढाँचे में विभिन्न स्तरों—प्राइमरी, माध्यमिक, उच्च आदि की शिक्षा को स्थान प्रदान किया जाता है। छात्र जिस स्तर तक की शिक्षा प्राप्त करेगा, वह उस स्तर के योग्य सामाजिक पद को प्राप्त करने में समर्थ हो सकेगा; उदाहरणार्थ—यदि किसी छात्र ने माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त की है, तो वह इस स्तर के योग्य किसी सामाजिक पद अर्थात् लोअर डिवीजनल क्लर्क, आपरेटर आदि पदों को प्राप्त कर सकता है। वह आई० पी० एस०, आई० ए० एस० आदि सामाजिक पदों को प्राप्त नहीं कर सकता है।

(ब) शिक्षा की पाठ्य-वस्तु : Content of Education—शिक्षा की पाठ्य-वस्तु भी सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है। शिक्षा की प्रत्येक पाठ्य-वस्तु का अलग-अलग महत्त्व है। कोई भी छात्र इंजीनियरिंग की पाठ्य-वस्तु का अध्ययन करके डाक्टर का पद नहीं प्राप्त कर सकता है। अतः सामाजिक गतिशीलता को निर्धारित करने में पाठ्यक्रम, मापदण्ड के रूप में कार्य करता है। आधुनिक युग में पाठ्यक्रम की विभिन्नता ने सामाजिक गतिशीलता को बहुत बढ़ावा दिया है।

(स) विशिष्ट क्षेत्रों की उच्च शिक्षा : Higher Education in Specialized Areas—विशिष्ट क्षेत्रों की उच्च शिक्षा भी सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है, क्योंकि जो छात्र किसी विशिष्ट क्षेत्र में उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं, उससे उस क्षेत्र में उच्च पद प्राप्त करने की सम्भावना बढ़ जाती है।

(द) विशिष्ट कॉलेज या विश्वविद्यालय का महत्त्व : Importance of Particular College or University—किसी विशिष्ट कॉलेज या विश्वविद्यालय

द्वारा भी सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित किया जाता है। कुछ कॉलेज या विश्वविद्यालयों को अन्य की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है। ऐसे कॉलेजों से शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को उच्च सामाजिक पद शीघ्रता से प्राप्त हो जाते हैं; उदाहरणार्थ, इलाहाबाद विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को आगरा विश्वविद्यालय के छात्रों की अपेक्षा अधिक सुविधा से उच्च सामाजिक पद प्राप्त हो जाता है। आज भी विश्व में इङ्गलैंड के ऑक्सफोर्ड तथा केम्ब्रिज विश्वविद्यालयों के छात्रों को वरीयता प्राप्त है।

2. शिक्षकों की सामाजिक गतिशीलता : **Teachers' Social Mobility**—शिक्षक अपने सामाजिक पदों को शैक्षिक समूहों के अन्तर्गत प्राप्त कर सकते हैं। शैक्षिक समूहों के अन्तर्गत विद्यालय शिक्षक, प्रवक्ता, वरिष्ठ प्रवक्ता, रीडर, प्रोफेसर, प्रिंसीपल, उपकुलपति आदि पद आते हैं। शिक्षक इन्हीं पदों में से किसी पद को प्राप्त करके अपनी प्रतिष्ठा को उच्च कर सकता है। परन्तु अन्य व्यावसायिक पदों की तुलना में आज शिक्षक का पद ऊँचा नहीं माना जाता है। इस परिवर्तित स्थिति के निम्नलिखित कारण हैं :—

(i) छात्रों की बढ़ती हुई संख्या।
(ii) शिक्षा का विस्तार।
(iii) छात्रों की अनुशासनहीनता।
(iv) अन्य पदों की अपेक्षा कम वेतन।
(v) दूसरे क्षेत्रों में उच्च पद प्राप्त करने के अवसर।
(vi) सामाजिक प्रतिष्ठा एवं सम्मान का अभाव।

शिक्षा व अधोमुखी गतिशीलता
Education & Downward Mobility

जैसा कि हम ऊपर देख चुके हैं कि शिक्षा उपरिमुखी गतिशीलता (Upward Mobility) को बढ़ावा देती है। परन्तु शिक्षा के अभाव में अधोमुखी गतिशीलता (Downward Mobility) को भी जन्म मिलता है। जो व्यक्ति उचित शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते हैं, उनकी गतिशीलता नीचे की ओर उन्मुख हो जाती है। इस दृष्टि से शिक्षाविहीन बालक, चाहे वे उच्च वर्ग से या मध्यम वर्ग से सम्बन्धित हों, उच्च पद प्राप्त करने में *असमर्थ रह जाते हैं और उनकी गतिशीलता नीचे की ओर हो जाती* है और उनके द्वारा रिक्त किए गए स्थानों को निम्न वर्ग के शिक्षित बालक ग्रहण कर लेते हैं। भारतीय समाज में आज अधोमुखी गतिशीलता पर्याप्त मात्रा में देखने को मिल रही है।

सामाजिक गतिशीलता के गुण व दोष
Merits & Demerits of Social Mobility

(अ) सामाजिक गतिशीलता के गुण : **Merits of Social Mobility**—

1. समाज में उचित स्थान या पद पर उचित व्यक्ति की नियुक्ति।

2. व्यक्ति का सामंजस्यपूर्ण विकास।
3. सामाजिक स्थिरता (Social Stability)।
4 कुसमायोजन की समस्या का समाधान।
5. सामाजिक प्रगति तथा सामाजिक कुशलता मे वृद्धि।
6. सन्तोष एवं समृद्धि को प्रोत्साहन।
7. राष्ट्र की दृढ़ता एवं समृद्धि में वृद्धि।
8. राष्ट्र की जन-शक्ति (Man Power) मे वृद्धि।
9. राष्ट्रीय आकांक्षाओं की पूर्ति।

(ब) सामाजिक गतिशीलता के दोष : Demerits of Social Mobility—

1. व्यक्ति में अहम् की भावना का विकास।
2. व्यक्ति का अपनी सामाजिक स्थिति से सदैव असन्तुष्ट रहना।
3. व्यक्ति में व्यर्थ का दम्भ उत्पन्न होना।
4. नगरीय एव ग्रामीण समाजों मे अव्यवस्था एव विघटन।

उपसंहार

अन्त मे, हम मुसग्रेव के शब्दों में कह सकते हैं :—**"विद्यालय, बालक में अत्यधिक आर्थिक महत्वाकांक्षा विकसित कर सकता है। इसी प्रकार, वह सामाजिक गतिशीलता के लिए अत्यधिक महत्वाकांक्षा को संचालित कर सकता है।"**

"The school could inculcate excess economic ambition into a child in the same way that excess aspirations for social mobility may be generated."—**P. W. Musgrave.**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What do you understand by Social Mobility ? Discuss its forms.

आप सामाजिक गतिशीलता से क्या समझते है ? इनके विभिन्न रूपों की विवेचना कीजिए।

2. What factors affect the Social Mobility ?

सामाजिक गतिशीलता को किन घटकों के द्वारा प्रभावित किया जाता है ?

3. Discuss the relationship between Education and Social Mobility.

शिक्षा और सामाजिक गतिशीलता के सम्बन्ध की विवेचना कीजिए।

खण्ड सात

शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त, सूत्र, प्रणालियाँ, प्रविधियाँ व प्रक्रियाएँ

GENERAL PRINCIPLES, MAXIMS, DEVICES, TECHNIQUES & PROCEDURES OF TEACHING

"शिक्षण-कला सदैव परिवर्तित होती रहती है। एक समय में ही संसार के विभिन्न देशों में शिक्षण की विभिन्न विधियाँ होती हैं। एक देश में एक या दो पीढ़ियों में, जब समाज की रचना और आदर्श बदल जाते हैं, तब शिक्षण की विधियाँ भी बदल जाती हैं। परिणामतः शिक्षण-कला भी परिवर्तित हो जाती है।"—Gisbert Highet.

- शिक्षण के सामान्य या आधारभूत सिद्धान्त
  General or Basic Principles of Teaching
- शिक्षण-सूत्र
  Maxims of Teaching
- शिक्षण-प्रणालियाँ व प्रविधियाँ
  Devices & Techniques of Teaching
- प्रश्न पूछना
  Questioning
- उत्तर निकलवाना
  Receiving Answers
- शिक्षण-प्रक्रियाएँ
  Teaching Procedures

41

शिक्षण के सामान्य या आधारभूत सिद्धान्त

GENERAL OR BASIC PRINCIPLES OF TEACHING

"सब विचारशील शिक्षा-शास्त्री इस बात से सहमत हैं कि समस्त ज्ञान के कुछ आधारभूत सिद्धान्त होते हैं और दायित्वपूर्ण शिक्षण इनके अनुसार होना चाहिए।"

"All thoughtful educators are agreed that certain fundamental principles underlie all learning, and that responsible teaching must correspond to these.''—Thomas & Lang.

विषय-प्रवेश

ह्यूजेज और ह्यूजेज का कथन है :—"यह ठीक ही कहा गया है कि 'शिक्षण' का अर्थ है—सीखने के लिए आधार प्रस्तुत करना। तब तक कुछ नहीं दिया गया है, जब तक कुछ ग्रहण नहीं किया गया है; तब तक कुछ नहीं पढ़ाया गया है, जब तक कि कुछ सीखा नहीं गया है। शिक्षण पूर्ण रूप से तैयार किए हुए व्याख्यानों को देने से बहुत अधिक है।"

"It has been well said that 'teaching' means 'causing to learn.' Nothing has been given until it has been taken, nothing has been taught until it has been learnt. Teaching is more than the efficient delivery of thoroughly prepared lectures."

—Hughes & Hughes.

शिक्षण के सामान्य या आधारभूत सिद्धान्त
General or Basic Principles of Teaching

शिक्षण में सफलता प्राप्त करने के लिए सबसे आवश्यक शर्त यह है कि इस बात का ज्ञान प्राप्त किया जाय कि बच्चे किस प्रकार सीखते हैं। इसलिए शिक्षण के सामान्य या आधारभूत सिद्धान्तों पर विचार करना हमारे लिए लाभप्रद होगा। ये सिद्धान्त निम्नलिखित हैं :—

1. क्रियाशीलता या करके सीखने का सिद्धान्त : Principle of Activity or Learning by Doing—डब्ल्यू० एम० रायबर्न—क्रियाशीलता के सिद्धान्त को प्रथम और महत्त्वपूर्ण स्थान देता है, क्योंकि यह बालक की प्रकृति के अनुरूप है। इस सिद्धान्त का आधार—मनोवैज्ञानिक है। बालक स्वभाव से ही क्रियाशील होते हैं। वे हर समय कुछ-न-कुछ करते रहते हैं, इसलिए, वे क्रिया द्वारा अधिक सरलता और शीघ्रता से सीखते हैं। जितनी ही अधिक उनकी क्रिया होगी, उतना ही अधिक सीखने और शिक्षण की प्रक्रिया होगी। जब वे किसी कार्य को करते हैं, तब उनका ध्यान उस पर एकाग्र हो जाता है। एकाग्रता किसी भी बात को अच्छी तरह समझने में सहायता देती है। शारीरिक रूप से क्रियाशील बालक मानसिक रूप से भी सचेत होते हैं, और इसलिए वे किसी भी बात को अधिक अच्छी तरह सीखते हैं।

क्रियाशीलता के इस मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त को **फ्रॉबेल** ने बहुत अधिक महत्त्व दिया। इसीलिए उसने 'करके सीखने' का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। पर इसका अर्थ यह नहीं है कि बालक स्वयं ही हर प्रकार के पाठ के लिए क्रियाशील हो। इसके विपरीत, इसका अर्थ यह है कि—शिक्षक प्रत्येक प्रकार के पाठ के लिए बालक को क्रियाशील बनाये। क्रियाशीलता के बिना सीखने का काम कठिन हो जाता है; उदाहरणार्थ—यदि हम बालकों में किसी ऐतिहासिक घटना के तथ्यों और तिथियों को याद करने के लिए कहें, तो वे कठिनाई का अनुभव करते हैं। पर यदि वे उस घटना को नाटक के रूप में खेलते हैं, तो उनको उससे सम्बन्धित सब बातें बड़ी सरलता से याद हो जाती हैं। इससे सिद्ध हो जाता है कि क्रियाशीलता का सिद्धान्त बहुत लाभदायक है।

ह्यूरिस्टिक पद्धति, प्रोजेक्ट पद्धति, किण्डरगार्डन पद्धति, मॉण्टेसरी पद्धति और डाल्टन प्रणाली का आधार—यही सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त को प्रत्येक कक्षा और प्रत्येक विषय के शिक्षण में लागू किया जा सकता है। इसकी उपयोगिता शिक्षण-कार्य में ही नहीं, वरन् विद्यालय के अन्य कार्यों में भी है; उदाहरणार्थ—विद्यालय की विभिन्न सभाओं, सोसाइटियों, गोष्ठियों, क्लबों आदि में क्रियाशील रहने से बालकों में अच्छे विचारों और भावनाओं का निर्माण होता है। उनमें अच्छी आदतें पड़ती हैं और उनको समाज-सेवा का प्रशिक्षण मिलता है।

2. प्रेरणा का सिद्धान्त : Principle of Motivation—"ज्ञान प्रदान करने वाली किसी स्थिति में रुचि उत्पन्न करने की प्रक्रिया को 'प्रेरणा' कहा जाता है।"

"The process of creating interest in any learning situation is called motivation."—**Pathak & Tyagi.**

यदि बालकों को किसी पाठ के लिए उचित रूप मे प्रेरित कर दिया जाता है, तो शिक्षक द्वारा शिक्षण का आधा युद्ध जीत लिया जाता है। कारण यह है कि प्रेरित होने पर बालकों की पाठ में रुचि उत्पन्न हो जाती है, जिससे उनको पढ़ने और उनके द्वारा सीखे जाने का कार्य बहुत सरल हो जाता है। बालकों को इस स्थिति मे पहुँचाये बिना शिक्षक के सभी प्रयास व्यर्थ हो जाते हैं। अतः उसके लिए प्रेरणा के सिद्धान्त पर चलना अति आवश्यक है।

अब प्रश्न यह उठता है कि बालकों को किस प्रकार प्रेरित किया जाना चाहिए? इसके लिए शिक्षक को बालकों की जन्मजात प्रवृत्तियों का सहारा लेना चाहिए। बालकों मे अपने वातावरण के बारे में जानने की बहुत प्रबल इच्छा या जिज्ञासा होती है। बुद्धिमान शिक्षक को इसका लाभ उठाना चाहिए। उसे अपनी विषय-वस्तु उनके सामने इस प्रकार रखनी चाहिए कि उसमें उनकी जिज्ञासा उत्पन्न हो जाय। जिज्ञासा को अनेक विधियों से उत्पन्न किया जा सकता है; उदाहरणार्थ—छात्रों को ऐतिहासिक स्थानों पर ले जाया जा सकता है। उनको देखकर बालक स्वाभाविक रूप से यह जानने के लिए उत्सुक होंगे कि इन स्थानों से सम्बन्धित कौन-कौन-सी ऐतिहासिक घटनाएँ हैं। इसी प्रकार, कारखानों और आर्ट-गैलरियों को दिखाना—विज्ञान और कला के पाठों के लिए प्रेरणा के रूप में कार्य कर सकते हैं।

कठिन विषयों को खेल के रूप में बालकों के सामने प्रस्तुत किया जा सकता है, और उनमें स्वस्थ प्रतियोगिता तथा स्पर्द्धा की भावना का विकास करके उनको प्रेरित किया जा सकता है। यह विधि, उच्चारण और शाब्दिक पाठों की नीरसता को दूर करने मे बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती है। बालकों द्वारा प्राप्त किया गया ज्ञान प्रत्यक्ष और तत्कालीन प्रेरणा के रूप में काम मे लाया जा सकता है; उदाहरणार्थ—सिक्कों और साधारण गणित का ज्ञान वस्तुओं को खरीदने के लिए सुगमता से प्रयोग मे लाया जा सकता है। यदि बालक यह जानते हैं कि उनका ज्ञान प्रयोग मे लाया जायगा, तो वे अपने पाठों मे अधिक ध्यान देते हैं।

3. जीवन से सम्बन्ध स्थापित करने का सिद्धान्त : Principle of Linking with Life—इस सिद्धान्त का अर्थ यह है कि पाठ्य-विषय का बालक के वास्तविक

जीवन से सम्बन्ध स्थापित किया जाय। जब यह सम्बन्ध स्थापित कर दिया जाता है, तब बालक विभिन्न विषयों का ज्ञान अधिक सुगमता और शीघ्रता से प्राप्त करते है। रायबर्न का कथन है :—**"जीवन एक निरन्तर अनुभव है। जो कुछ हम करते हैं, उसका अतीत और भविष्य से सम्बन्ध होता है।"**

"Life is a continuous experience. Everything we do is linked up with what has gone before and with what comes afterwards."

—**Ryburn.**

वस्तुतः हम प्रतिदिन नए अनुभव करते हैं। पर इन अनुभवों में केवल वे ही स्थायी हो पाते हैं जिनका सम्बन्ध पिछले अनुभवो से होता है। अतः यह आवश्यक है कि नए अनुभवों का पुराने अनुभवों से सम्बन्ध स्थापित किया जाय। ऐसा करने पर नया अनुभव या ज्ञान बालक के जीवन का अङ्ग बन जाता है। इसीलिए, इस सिद्धान्त को बहुत अधिक महत्त्व दिया जाता है। इसके अनुसार, शिक्षण के लिए पाठ्य-विषय का बालक के वास्तविक जीवन और वातावरण से सम्बन्ध स्थापित किया जाना चाहिए। यह सम्बन्ध बालक के सैद्धान्तिक ज्ञान और क्रियात्मकता—दोनों से होना चाहिए। ऐसा न करने पर पाठ्य-विषय का जीवन से सम्बन्ध नही हो सकता है। बालकों के समक्ष अवास्तविक समस्याएँ नही रखी जानी चाहिए, क्योकि बालकों को इनमे किसी प्रकार की रुचि नही होती है। रुचि के अभाव मे पाठ्य-विषय और जीवन से सम्बन्ध स्थापित नही हो पाता है। साथ ही बालको में गलत धारणाओ का निर्माण होता है।

4. रुचि का सिद्धान्त : Principle of Interest—रुचि के सिद्धान्त को बहुत महत्त्वपूर्ण माना गया है। शिक्षण को उपयोगी और प्रभावशाली बनाने के लिए यह आवश्यक है कि पाठ्य-विषय में बालक की रुचि उत्पन्न की जाय। जब बालक की उसमे रुचि उत्पन्न हो जाती है, तब वह बिना किसी कठिनाई के उसका पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

रुचि उत्पन्न करने की अनेक विधियाँ हैं; जैसे—(1) पाठ्य-विषय का बालक की क्रियाओं और उद्देश्यों से सम्बन्ध स्थापित करना, (2) क्रियाशीलता के सिद्धान्त का अनुसरण करना, (3) शिक्षण को बालक के सक्रिय जीवन से सम्बन्धित करना, (4) बालक की जिज्ञासा को जाग्रत करना और बालक को बताना कि वह पाठ्य-विषय के ज्ञान को किस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रयोग कर सकता है।

5. निश्चित उद्देश्य का सिद्धान्त : Principle of Definite Aim—यह बहुत आवश्यक है कि शिक्षक को प्रत्येक पाठ के उद्देश्य का पूर्ण ज्ञान हो। ऐसा न होने पर शिक्षक को अपने कार्य मे सफलता नही मिलती है। रायबर्न ने इस सिद्धान्त के लाभ पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि यह सिद्धान्त हमारे शिक्षण को स्पष्ट और निश्चित बनाकर रोचक और प्रभावपूर्ण बनाता है।

इसका कारण यह है कि हमारे उद्देश्य पर ही हमारी शिक्षण-विधि आधारित

होती है। यदि हमें कविता की अनुभूति पढ़ानी है, तो हम इस पाठ को इस पाठ से बिल्कुल भिन्न ढंग से पढ़ायेंगे, जिसमें हमारा उद्देश्य—छात्रों को कविता पढ़ने का ढंग बताना है। छात्रों को भी पाठ्य-विषय का उद्देश्य मालूम होना चाहिए। इससे हमें अपने शिक्षण-कार्य में सहायता मिलती है और साथ ही छात्रों की रुचि जाग्रत होती है। वे भी इसके बारे में उसी प्रकार सोचते है, जिस प्रकार हम सोचते हैं।

6. चयन का सिद्धान्त : Principle of Selection—पाठ्य-वस्तु के चयन का सिद्धान्त बहुत महत्त्वपूर्ण है। यदि शिक्षक में चयन करने की योग्यता है, तो वह अपने कार्य में अच्छी सफलता प्राप्त कर सकता है। जब से मनुष्य इस पृथ्वी पर आया है तब से उसने इस जटिल जगत् के बारे में बहुत ही विस्तृत ज्ञान संचित किया है। यदि शिक्षक यह आशा करता है कि वह इस सब ज्ञान को अपने छात्रों को दे सकता है, तो वह बहुत बड़ी भूल करता है। उसको यह चयन करना पड़ेगा कि किस *कक्षा को क्या और कितना पढ़ाया जाना चाहिए, उदाहरणार्थ—इतिहास का शिक्षक* किसी भी कक्षा को अकबर के विषय में सब-कुछ एक ही घण्टे में नही बता सकता है। उसे यह चयन करना पड़ेगा कि वह अकबर से सम्बन्धित किस बात को किस प्रकार और कितने दिन तक पढाए।

7. नियोजन का सिद्धान्त . Principle of Planning—चयन के बाद नियोजन का सिद्धान्त आता है। कुशल शिक्षण केवल नियोजन के माध्यम से ही सम्भव हो सकता है। शिक्षक को उन समस्याओं को देखने के योग्य होना चाहिए, जो अध्यापन करते समय उनके समक्ष आ सकती है। उसे स्वय भी उनका सामना करने के लिए पहले से तैयार होना चाहिए। यदि वह ऐसा नही करता है, तो उसको बड़ी ही संकटपूर्ण स्थिति का सामना करना पड़ता है। समस्याओं, विषय-वस्तु एवं सहायक सामग्री को ध्यान में रखकर उसे अपनी पाठ्य-वस्तु को एक निश्चित ढग से व्यवस्थित करना चाहिए। परन्तु उसको इस तथ्य को नही भूल जाना चाहिए कि पाठ-योजना उसकी स्वामिनी नही वरन् सेविका है। वह किसी भी पाठ-योजना को पढ़ाते समय भी परिस्थितियों की माँग के अनुसार बदल सकता है। अतः उसकी योजना लचीली एवं उदार होनी चाहिए।

8. वैयक्तिक विभिन्नताओं को स्वीकार करने का सिद्धान्त : Principle of Recognizing Individual Differences—मनोवैज्ञानिक अनुसन्धानों ने यह सिद्ध कर दिया है कि सब बालक योग्यता, बुद्धि, स्वभाव और रुझान में एक-से नहीं होते हैं। अतः यह आवश्यक है कि पढ़ाते समय शिक्षक, छात्रों की विभिन्नताओं का ध्यान रखे। उसे यह कभी भी नही समझ लेना चाहिए कि सब छात्र एक ही स्तर पर हैं। उसे मन्द गति से सीखने वाले बालकों पर झुँझलाना और क्रुद्ध होना नहीं चाहिए। उसे असामान्य बालकों के साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। उसे योग्य बालकों का पथ-प्रदर्शन करने के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए। साराश मे, उसे

वैयक्तिक विभिन्नताओं को स्वीकार करना चाहिए और उन्हीं के अनुसार बालकों के साथ व्यवहार करना चाहिए।

9. लोकतन्त्रीय व्यवहार का सिद्धान्त : Principle of Democratic Dealing—कक्षा में शिक्षक का दृष्टिकोण, लोकतन्त्रीय होना चाहिए, न कि तानाशाही। तानाशाही दृष्टिकोण छात्रों के व्यक्तित्व का दमन कर सकता है। अतः यह दृष्टिकोण न अपना कर शिक्षक को लोकतन्त्रीय दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। उसे अपने छात्रों को स्वतन्त्रतापूर्वक प्रश्न पूछने की आज्ञा देनी चाहिए। उसे अपने पाठ को उनकी सहायता से आगे बढ़ाना चाहिए। उसे उनको अपने विचारों को व्यक्त करने के सभी अवसर देने चाहिए। इससे छात्रों में विचार करने की आदत पड़ेगी। साथ ही उनकी आत्म-गौरव की भावना भी सन्तुष्ट होगी।

10. विभाजन का सिद्धान्त : Principle of Division—इस सिद्धान्त का अर्थ यह है कि शिक्षक को अपनी पाठ्य-सामग्री को एक निश्चित क्रम के अनुसार सोपानों में बाँट लेना चाहिए। इन सोपानों का क्रम ऐसा होना चाहिए कि पढ़ाते समय वह स्वाभाविक ढंग से एक सोपान से दूसरे पर पहुँच सके। इस प्रकार प्रस्तुत किया जाने वाला पाठ बालकों के लिए बहुत सरल हो जाता है और वे उसका ज्ञान बड़ी सुगमता से प्राप्त कर लेते है। ऐसा न करने से पाठ जटिल हो जाता है और छात्र कुछ भी नहीं समझ पाते हैं। अतः सफल शिक्षण के लिए प्रत्येक पाठ को क्रमिक सोपानों में बाँटना बहुत आवश्यक है।

11. आवृत्ति का सिद्धान्त : Principle of Revision—इस सिद्धान्त का अर्थ यह है कि पाठ्य-विषयों की बातों को बार-बार दोहराया जाय। ऐसा करने पर ही बालक उसे अच्छी प्रकार समझ पाते हैं। यह बात कठिन पाठ्य-विषय के बारे में विशेष रूप से सत्य है। यदि उसको बार-बार दोहराया नहीं जायगा, तो वह छात्रों के मस्तिष्क से निकल जायगा। इसीलिए, कुछ शिक्षाशास्त्रियों ने इस सिद्धान्त को अत्यधिक महत्त्व दिया है। पर इस सम्बन्ध में एक बात याद रखनी आवश्यक है। दोहराने की मात्रा पाठ पर निर्भर होनी चाहिए। कठिन पाठ में दोहराना अधिक और सरल मे कम होना चाहिए। इस बात का निर्णय केवल शिक्षक ही कर सकता है।

12. निर्माण व मनोरंजन का सिद्धान्त : Principle of Creation & Recreation—इस सिद्धान्त का अर्थ यह है कि छात्रों से जो क्रियाएँ करवाई जायँ, वे रचनात्मक और मनोरंजनपूर्ण हों। इससे तीन लाभ होते हैं : पहला—छात्र अपनी रचनात्मक शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं। दूसरा—उनकी स्वयं ही अध्ययन करने की इच्छा होती है। तीसरा—क्रिया मे उनकी शक्ति का क्षय होता तो अवश्य है, पर मनोरंजन के कारण उनको इस बात का अनुभव नहीं होता है। अतः यह आवश्यक है कि अध्यापक अपने शिक्षण में निर्माण और मनोरंजन के सिद्धान्त का अनुसरण करे।

उपसंहार

उपर्युक्त सभी शिक्षण-सिद्धान्त अति महत्वपूर्ण है। अपने शिक्षण-कार्य में

सफलता प्राप्त करने के लिए अध्यापक को इनमें से अधिक-से-अधिक सिद्धान्तों का अनुसरण करना चाहिए। उसे इनके प्रति कभी भी उदासीन नहीं होना चाहिए।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe briefly the general or basic principles involved in the art of teaching that a teacher should know and follow.

उन सामान्य या आधारभूत सिद्धान्तों का संक्षेप में विवेचन कीजिए जो शिक्षण-कला में निहित हैं तथा शिक्षक को उन्हें जानना एवं उनका अनुसरण करना चाहिए।

2. "Interest is the greatest word in education." Discuss this statement and describe the various methods you would adopt to arouse interest in your pupils.

"शिक्षा में रुचि बहुत ही महत्त्वपूर्ण शब्द है।" इस कथन की विवेचना कीजिए तथा उन विभिन्न ढंगों का उल्लेख कीजिए, जिनके द्वारा आप अपने छात्रों में रुचि जाग्रत करेंगे।

3. What do you understand by 'learning by doing'? For *which class can this method be useful? Illustrate your answer by* giving examples.

'करके सीखने के सिद्धान्त' से आप क्या समझते हैं? यह विधि किस कक्षा के लिए सर्वाधिक उपयोगी है? उदाहरण देकर अपना उत्तर स्पष्ट कीजिए।

42

शिक्षण-सूत्र
MAXIMS OF TEACHING

"शिक्षण के सूत्र उन विधियों को व्यक्त करते हैं, जिनमें प्रयोग को सिद्धान्त से सहायता मिलती है।"

"Maxims of teaching illustrate the ways in which theory may be expected to help practice."—T. Raymont.

विषय-प्रवेश

शिक्षण-सूत्रों का प्रयोग पढ़ाने और पढ़ने—दोनों में सहायता देता है। इनका अनुसरण करने से शिक्षक अपने कार्य में सफल होता है और छात्र भी सरलता से ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। अतः यह आवश्यक है कि प्रत्येक अध्यापक, शिक्षण के समय इनका प्रयोग करे।

शिक्षण-सूत्र
Maxims of Teaching

(1) सरल से जटिल की ओर : From Simple to Complex—इस सूत्र का अर्थ यह है कि पहले बालकों को सरल बातें बतानी चाहिए। उसके बाद ही उनको जटिल बातें बतानी चाहिए। अतः पाठ को इस प्रकार विभाजित करना चाहिए कि पहले सरल बातें आएँ और उनके बाद क्रम से जटिल बातें। इनका आधार—मनोवैज्ञानिक है। बालक सरल बातों को समझने के बाद जटिल बातों को समझ लेते हैं। यदि उनको प्रारम्भ में ही जटिल बातें बताई जाती हैं, तो वे शिक्षण

मे रुचि नही लेते है, उदाहरणार्थ—इतिहास के शिक्षण मे पहले शिवाजी जैसे नेताओं के जीवन मे सम्बन्धित सरल कहानियो को सुनाया जाना चाहिए।

इसका कारण यह है कि बालको को कहानियों मे रुचि होती है, और वे उनको सरलता से समझ भी लेते हैं। इन कहानियो के बाद दूसरे पाठो में युद्ध, सन्धियाँ, नीतियाँ आदि जटिल बातो को बताया जाना चाहिए। यदि इनको पहले ही बता दिया गया, तो शिक्षक का प्रयास व्यर्थ हो जायगा। साथ ही बालको को उनमें न तो रुचि ही आयेगी और न वे उनको भली प्रकार समझ ही सकेंगे।

यहाँ एक बात पर ध्यान देना आवश्यक है। 'सरल' बालक के दृष्टिकोण से होना चाहिए, न कि शिक्षक के। यह सम्भव है कि बातें शिक्षक को सरल जान पडती है, वे छात्रो के लिए सरल न हो।

(2) ज्ञात से अज्ञात की ओर : From Known to Unknown—यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि बालक अपने पूर्व ज्ञान का सहारा लेकर नये ज्ञान को प्राप्त करता है। अत यह स्वाभाविक है कि बालक जो कुछ जानता है, उसी पर नये ज्ञान को आधारित किया जाय। इस विधि से लाभ यह होता है कि बालक नये ज्ञान को सरलता से ग्रहण कर लेता है, और उसे अपने पूर्व-ज्ञान का भाग बना लेता है।

अत शिक्षक के लिए यह आवश्यक है कि किसी विषय को पढाने से पहले वह इस बात का पता लगा ले कि बालक को उस विषय का कितना पूर्व-ज्ञान है। शिक्षक को इस पूर्व ज्ञान पर नये ज्ञान को आधारित करना चाहिए। दूसरे शब्दों मे हम कह सकते हैं कि शिक्षक को 'ज्ञात से अज्ञात की ओर' बढना चाहिए।

प्रत्येक प्रकार के पाठ मे इस सूत्र का प्रयोग किया जाना चाहिए। ऐसा करने से बालक नये ज्ञान को अपना बना लेगा; उदाहरणार्थ—यदि बालक ताजमहल के बारे मे जानते है, तो इस ज्ञान के आधार पर उन्हे शाहजहाँ के बारे मे बताया जा सकता है। इसी प्रकार, सूती उद्योग पर भूगोल का पाठ उन वस्त्रो से प्रारम्भ होना चाहिए, जिनको बालक पहिनते हैं। इस क्रम को बदल देने से शिक्षक के सामने अनेक कठिनाइयाँ आ सकती है।

(3) स्थूल से सूक्ष्म की ओर : From Concrete to Abstract—बालक, सूक्ष्म के बारे में नही सोच सकता है। प्रारम्भ में वह वस्तुओं को स्थूल रूप मे ही जानता और समझता है। जैसे-जैसे वह बड़ा होता जाता है, वैसे-वैसे उसमे सूक्ष्म को समझने की शक्ति का विकास होता जाता है; उदाहरणार्थ—प्रारम्भ में बालक यह समझने में असमर्थ होता है कि 'दो और दो'='चार' होते हैं। उसके लिए यह एक सूक्ष्म बात है। इसलिए यदि 'दो' और 'दो' का जोड़ या गुणा बताते समय शिक्षक उससे कहे कि 'चार' हुए, तो यह बात उसकी समझ मे नही आती है। पर यदि शिक्षक उसे दो गोलियाँ दे दे और उनके बाद फिर दो गोलियाँ दे, तो उसे यह समझने मे तनिक भी कठिनाई नही होती है कि 'दो' और 'दो' का जोड़ या गुणा 'चार' होता है।

इस उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि बालक पहले स्थूल वस्तुओं को समझता है, उसके बाद उनको और उनके प्रयोग को देखकर वह सूक्ष्म बातों को समझता है। अतः शिक्षण का यह सूत्र बहुत ही महत्वपूर्ण है कि छोटे बच्चों को पढ़ाते समय प्रारम्भ में केवल स्थूल वस्तुओं का प्रयोग किया जाय, और फिर उनकी सहायता से बच्चों को सूक्ष्म बातों का ज्ञान कराया जाय। इस सम्बन्ध में स्पेंसर का यह कथन सदैव याद रखना चाहिए :—**"हमारा पाठ स्थूल वस्तुओं से प्रारम्भ होना चाहिए और सूक्ष्म बातों से समाप्त होना चाहिए।"**

"Our lesson should start from the concrete and end in the abstract."—Spencer.

(4) पूर्ण से अंश की ओर : From Whole to Part—बालक प्रारम्भ में पूर्ण वस्तुओं को ही जानता और समझता है। वह उसके अंगों को न तो जानता है, और न समझ पाता है। अवयवीवादी मनोवैज्ञानिकों (Gestalt Psychologists) ने यह बात सिद्ध कर दी है कि वस्तुओं के बारे में बालक के विचार खण्डों में नही होते हैं; उदाहरणार्थ—बालक ने मेज या कुर्सी देखी है। जब हम इसके बारे में उससे या अन्य किसी से बात करते हैं, तो मेज या कुर्सी का पूर्ण चित्र उसके सामने आ जाता है। वह उसके पूर्ण रूप के बारे मे ही सोचता है। उसके लिए मेज़ या कुर्सी के भागो के बारे मे सोचना असम्भव है। शिक्षक बालक के ज्ञान से लाभ उठाकर उसे मेज़ या कुर्सी के अन्य भागों के बारे मे बताता है। दूसरे शब्दों में, अध्यापक अपना शिक्षण पूर्ण वस्तु से प्रारम्भ करता है और फिर उसके विभिन्न भागो का बालक को ज्ञान कराता है। यही उपरिलिखित सूत्र का अर्थ है।

आधुनिक शिक्षण-विधि मे इस सूत्र का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इसने शिक्षण की पुरानी विधि को बदल दिया है। पहले बालक को अक्षरों का ज्ञान कराया जाता था और उसके बाद वाक्यों का। पर आजकल बालक को पहले वाक्य का ज्ञान कराया जाता है और उसके बाद अक्षरो का।

यहाँ यह बता देना आवश्यक है कि 'पूर्ण' शब्द की व्याख्या बालक की समझने की शक्ति के अनुसार की जानी चाहिए। यह सोचना ग़लती है कि बालक पृथ्वी को ग्लोब की सहायता से पूर्ण रूप से समझ सकता है। उसकी पूर्ण की धारणा भौतिक वातावरण तक ही सीमित होती है। इससे अधिक वह कुछ नही समझता है।

(5) अनिश्चित से निश्चित की ओर : From Indefinite to Definite—प्रारम्भ में बालक का ज्ञान अस्पष्ट और अनिश्चित होता है। शिक्षक को बालक के इसी अनिश्चित ज्ञान को अपने शिक्षक का प्रारम्भिक बिन्दु बनाना चाहिए। फिर धीरे-धीरे उसे उसको निश्चित रूप देना चाहिए, उदाहरणार्थ—गाय, कुत्ते या घोड़े के बारे में बालक की धारणा अनिश्चित होती है। इसका कारण यह है कि उसे इन पशुओं के अन्य शारीरिक भागो का कोई ज्ञान नही होता है। शिक्षक इन भागो के

बारे में बालक को ज्ञान प्रदान करता है। इस प्रकार, वह बालक के मस्तिष्क में इन पशुओं के चित्र को पूर्ण बनाता है। एक दूसरा उदाहरण ले लीजिए—बालक को एक पौधे का अनिश्चित ज्ञान होता है। शिक्षक उसके विभिन्न भागों को बताकर इस ज्ञान को निश्चित रूप प्रदान करता है।

(6) प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर : From Seen to Unseen—इस सूत्र का अर्थ यह है कि बालक को पहले उन वस्तुओं का ज्ञान दिया जाना चाहिए, जिन्हें वह देख सकता है। उसके बाद ही उसे उन बातों के बारे में बताया जाना चाहिए, जिन्हें वह देख नहीं सकता है। इस सूत्र का दूसरा अर्थ यह है कि पहले बालक को वर्तमान का ज्ञान दिया जाना चाहिए, और उसके बाद भूत और भविष्य की बातों का। जिन वस्तुओं को बालक स्वयं देख सकता है, उनका ज्ञान उसे बहुत सरलता से हो जाता है। अतः उसे प्रत्यक्ष वस्तुओं के द्वारा अप्रत्यक्ष वस्तुओं का ज्ञान दिया जाना चाहिए। शिक्षण के समय इन प्रत्यक्ष वस्तुओं का प्रयोग किया जाना चाहिए। इनको समझने के बाद बालक अप्रत्यक्ष बातों को सरलता से समझ सकता है।

(7) विशिष्ट से सामान्य की ओर : From Particular to General—इस सूत्र का अर्थ है—अनेक उदाहरणों द्वारा एक सामान्य सिद्धान्त निकलवाना। शिक्षक बालकों के सामने कुछ उदाहरण रखता है। बालक उनकी परीक्षा करके तथ्य को समझने का प्रयास करते हैं और सफल होने पर उनसे सम्बन्धित नियम निकाल लेते हैं। शिक्षक उनको यह नियम बताता नहीं है; उदाहरणार्थ—शिक्षक छात्रों से यह नियम निकलवाना चाहता है कि—"ठोस वस्तुओं को किसी द्रव में डुबाने से उनका भार कम हो जाता है।"

यह नियम निकलवाने के लिए शिक्षक विभिन्न प्रकार की ठोस वस्तुओं के प्रयोग दिखाता है। वह पहले उनका भार हवा में लेता है। उसके बाद वह उनका भार द्रव में डुबाकर लेता है। बालक दोनों प्रकार के भारों का निरीक्षण करते हैं। सुविधा होने पर वे स्वयं परीक्षण भी करते हैं। इस प्रकार, वे स्वयं नियम निकाल लेते है—"ठोस वस्तुओं को किसी द्रव में डुबाने से उनका भार कम हो जाता है।" यह सूत्र मनोवैज्ञानिक है। बालक एक कार्य को स्वयं करके देखते हैं। इससे उन्हें कार्य में रुचि हो जाती है। कार्य को स्वयं करने के कारण, वे इसको भूलते नहीं हैं और जो भी ज्ञान वे प्राप्त करते हैं, वह उनके मस्तिष्क में सदैव बना रहता है।

(8) विश्लेषण से संश्लेषण की ओर : From Analysis to Synthesis—प्रारम्भ में बालक का ज्ञान अपूर्ण और अनिश्चित होता है। उसके ज्ञान को शिक्षक ही पूर्ण और निश्चित बनाता है। वह इस कार्य को विश्लेषण प्रणाली के द्वारा करता है। इस प्रणाली में पहले सम्पूर्ण वस्तु का अध्ययन किया जाता है। फिर उसके विभिन्न भागों का अलग-अलग अध्ययन किया जाता है; उदाहरणार्थ—यदि शिक्षक भूगोल

पढाना चाहता है, तो वह पहले सम्पूर्ण पृथ्वी के बारे में बताता है। इसके बाद वह जलवायु के अनुसार विभिन्न भागों को बताता है। इसके पश्चात् वह प्रत्येक भाग के व्यक्तियों, पशुओं, वनस्पति आदि के बारे में बताता है। जो शिक्षा इस विधि से दी जाती है, उसको 'विश्लेषण प्रणाली' के नाम से पुकारा जाता है। इस प्रणाली का प्रयोग केवल उन विषयों के लिए किया जा सकता है, जिनको विभिन्न भागों में बाँटा जा सकता है; जैसे—भूगोल, रेखागणित, विज्ञान आदि।

शिक्षण में केवल विश्लेषण ही काफ़ी नहीं है। इसके बाद संश्लेषण आवश्यक हो जाता है। संश्लेषण के बिना बालकों के ज्ञान को निश्चित रूप नहीं दिया जा सकता है। कारण यह है कि संश्लेषण विभिन्न भागों को पूर्ण की ओर ले जाता है; उदाहरणार्थ—यदि हम भूगोल पढाने में संश्लेषण विधि का प्रयोग करते हैं, तो हमें विषय-सामग्री इस क्रम में लेनी पड़ती है—पहले हमें किसी विशेष स्थान के व्यक्तियों, पशुओं और वनस्पति का अध्ययन करना पड़ता है। उसके बाद जीवन पर प्रभाव डालने वाली जलवायु का। उसके पश्चात् तुलना के द्वारा अन्य स्थानों का ऐसा ही अध्ययन करना पड़ता है। अन्त में सब भागों में सामजस्य स्थापित किया जाता है, और सम्पूर्ण पृथ्वी का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार, विश्लेषण द्वारा जो भाग अलग-अलग हो जाते हैं, वे संश्लेषण द्वारा एक होकर सम्पूर्ण होते हैं। इससे बालक को सब बातों का एक साथ सम्पूर्ण ज्ञान हो जाता है। तभी उसका ज्ञान स्पष्ट और निश्चित हो पाता है। इसलिए विश्लेषण के बाद संश्लेषण की आवश्यकता का अनुभव किया जाता है।

(9) **मनोवैज्ञानिक से तर्क-सम्मत की ओर · From Psychological to Logical**—बालकों को शिक्षा देने की दो विधियाँ हैं—(1) मनोवैज्ञानिक, और (2) तर्क-सम्मत। मनोवैज्ञानिक विधि में बालकों की रुचियों, रुझानों आदि को ध्यान में रखकर विषय-वस्तु प्रस्तुत की जाती है।

तर्क-सम्मत विधि में पाठ्य-विषय को तर्कात्मक ढंग से अलग-अलग भागों में बाँटकर बालकों के सामने प्रस्तुत किया जाता है।

इन दोनों विधियों को उदाहरण देकर स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिए—शिक्षक छात्रों को भाषा की शिक्षा देना चाहता है। अब यदि वह मनोवैज्ञानिक विधि का अनुसरण करता है, तो वह अपने शिक्षण को वाक्य से प्रारम्भ करेगा। पर यदि वह तर्क-सम्मत विधि का अनुसरण करता है, तो वह वर्णों और ध्वनियों से प्रारम्भ करेगा। स्पष्ट रूप से, इस विधि में बालक रुचि नहीं लेते हैं। वर्णों और ध्वनियों की अपेक्षा उन्हें वाक्यों में अधिक आनन्द आता है। अतः छोटे बच्चों के लिए मनोवैज्ञानिक विधि को अपनाना अच्छा है। जैसे-जैसे वे बड़े होते जायें, वैसे-वैसे इसका स्थान तर्क-सम्मत विधि को दिया जाना चाहिए।

यहाँ एक बात बतानी आवश्यक है। सब कक्षाओं में सब पाठों को मनोवैज्ञानिक विधि से ही प्रारम्भ किया जाना चाहिए। बालक क्या पढ़ाना चाहते हैं? वे कौन-सी कहानी या बात सुनना अधिक पसन्द करते हैं? इनका उत्तर मनोविज्ञान ही दे सकता है।

(10) अनुभूत से युक्तियुक्त की ओर . From Empirical to Rational—इस सूत्र का अर्थ है—बालक के अनुभूत ज्ञान को युक्तियुक्त या तर्कपूर्ण बनाना। आरम्भ में बालक देखकर और अनुभव करके ज्ञान प्राप्त करता है। परन्तु उसका यह ज्ञान तर्क पर आधारित नहीं होता है। उसे ज्ञान तो होता है, पर वह उस ज्ञान को तर्क का प्रयोग करके सत्य सिद्ध नहीं कर सकता है। इसलिए, उसके अनुभूत ज्ञान को युक्तियुक्त बनाना आवश्यक है, क्योंकि तभी उसका ज्ञान निश्चित और व्यवस्थित हो सकता है।

हम एक उदाहरण देकर इस बात को स्पष्ट कर सकते हैं। बालक हर रोज़ सूर्य को निकलते और डूबते हुए देखता है। वह यह भी देखता है कि दिन के बाद रात होती है, और रात के बाद दिन। इस प्रकार उसे अनुभूत ज्ञान तो होता है, पर वह इसको सत्य सिद्ध नहीं कर सकता है। वह ऐसा सौर-मंडल (Solar-System) का ज्ञान प्राप्त करने के बाद ही कर सकता है। तब उसका ज्ञान युक्तियुक्त या तर्कपूर्ण हो जाता है। इसलिए, अनुभूति ज्ञान को युक्तियुक्त बनाना अति आवश्यक है।

(11) प्रकृति का अनुसरण : Follow Nature—इस सूत्र का तात्पर्य यह है कि बालक की शिक्षा उसकी प्रकृति के अनुसार होनी चाहिए। बालक के शारीरिक और मानसिक विकास को ध्यान में रखकर ही उसकी शिक्षा के साधनों को जुटाया जाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि बालक को जो भी ज्ञान दिया जाय, वह उसके शारीरिक और मानसिक विकास के अनुरूप होना चाहिए।

अध्यापक को बालक की प्रकृति का सदैव ध्यान रखना चाहिए। उसे बालक की प्रकृति के विरुद्ध कभी भी कुछ नहीं करना चाहिए। ऐसा करने से बालक के प्राकृतिक विकास में बाधा पड़ सकती है। अतः बालक से ऐसा कोई भी कार्य नहीं करवाना चाहिए, जो उसकी शारीरिक और मानसिक शक्ति से बाहर हो। उसे अपने प्राकृतिक विकास का पूर्ण अवसर दिया जाना चाहिए। मनोविज्ञान भी यही कहता है।

उपसंहार

शिक्षण के जिन सूत्रों का वर्णन किया गया है, वे पाठ को सफल बनाने में बहुत सहायता देते हैं। यह सम्भव नहीं है कि प्रत्येक पाठ में उनको अपनाया जाय। पर यह बात अध्यापक की योग्यता पर निर्भर है कि वह इनमें से कितने सूत्रों का प्रयोग कर सकता है। उसका ध्येय तो यही होना चाहिए कि वह अधिक से अधिक सूत्रों का प्रयोग करें।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What are the maxims of methodical procedure in the class room ? Illustrate your answer with suitable examples.

कक्षा-कक्ष में शिक्षण-प्रक्रिया के सूत्र क्या हैं ? अपने उत्तर को उपयुक्त उदाहरणों से स्पष्ट कीजिए।

2. What is the importance of a maxim of teaching ? Explain the educational and psychological basis of any two maxims of teaching.

शिक्षण-सूत्र का क्या महत्त्व है ? किन्ही दो शिक्षण-सूत्रों के शैक्षिक तथा मनोवैज्ञानिक आधारों को स्पष्ट कीजिए।

43

शिक्षण-प्रणालियाँ व प्रविधियाँ
DEVICES & TECHNIQUES OF TEACHING

"सफलतापूर्वक पढ़ाना सीखना—कार चलाना सीखने, ब्रिज या गोल्फ खेलना सीखने या किसी अन्य जटिल कार्य को सीखने के समान है, क्योंकि सीखने वाले को एक साथ बहुत-से विभिन्न कार्यों में कुशलता प्राप्त करनी पड़ती है।"

"Learning to teach successfully is like learning to drive a car, learning to play bridge, or golf, or learning any other complicated performance in that the learner must develop skill in several different operations all at once."—A. C. Miller.

विषय-प्रवेश

ए० एच० गार्लिक (A. H. Garlick) ने शिक्षण-प्रणालियों और प्रविधियों पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि शिक्षक को सबसे पहले यह निर्णय करना पड़ता है कि वह क्या पढ़ायेगा। उसके बाद वह विषय-सामग्री को व्यवस्थित करता है और यह सोचता है कि वह उसको किस प्रकार अपने छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करेगा। वह ऐसा विभिन्न प्रणालियों और प्रविधियों को अपना कर करता है।

शिक्षण की विभिन्न प्रणालियाँ व प्रविधियाँ
Various Devices & Techniques of Teaching

1. व्याख्या-प्रणाली
2. निदर्शन-प्रणाली
3. विवरण-प्रणाली
4. वर्णनात्मक-प्रणाली
5. उदाहरण-प्रणाली
6. प्रश्नोत्तर-प्रणाली

(1) **व्याख्या-प्रणाली : Device of Explanation**—इस प्रणाली का प्रयोग साहित्य और इतिहास में अधिकतर होता है। इसका तात्पर्य है—अर्थ बताना या समझाना। पढ़ाते समय अक्सर भावों की जटिलता या गुत्थी आ जाती है। इनको बालकों को सरल भाषा मे समझाना आवश्यक हो जाता है। ऐसा न करने पर भाव स्पष्ट नही हो पाते हैं। भावो की व्याख्या कर देने पर छात्र उनको समझ जाते है। इस प्रणाली का प्रयोग करते समय शिक्षक को निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिए :—

1. व्याख्या सरल, शुद्ध और स्पष्ट होनी चाहिए।
2. व्याख्या करते समय कठिन विचारों को उदाहरण देकर स्पष्ट करना चाहिए।
3. व्याख्या को उदाहरण और दृष्टान्त देकर सजीव और रोचक बनाना चाहिए।
4. व्याख्या, उपदेश के रूप मे नही होनी चाहिए, क्योंकि छात्रों को उपदेश अच्छे नही लगते हैं।
5. व्याख्या में किसी प्रकार की जटिलता नही आनी चाहिए। ऐसा होने से छात्र उसको समझ नहीं पाते है।
6. व्याख्या लम्बी नही होनी चाहिए। ऐसा करने से बालक ऊब जाते है और व्याख्या सुनने की उनकी तनिक भी रुचि नही रह जाती है।
7. व्याख्या करते समय छात्रों की रुचि बनाये रखने के लिए उनसे प्रश्न पूछने चाहिए और उन्हे भी प्रश्न पूछने का अवसर देना चाहिए।
8. बिना आवश्यकता के व्याख्या नही करनी चाहिए। इससे शक्ति और समय का अपव्यय होता है।
9. कठिन शब्दों को समान या विपरीत अर्थ बताने वाले शब्दो का प्रयोग करके स्पष्ट करना चाहिए।
10. यदि सम्भव हो, तो व्याख्या करने से पहले छात्रो को वह वस्तु दिखा देनी चाहिए, जिसकी व्याख्या की जाती है।
11. साहित्य से सम्बन्धित किसी गद्यांश या पद की व्याख्या करते समय तुलना, समानता और असमानता आदि युक्तियो (Techniques) का प्रयोग करना चाहिए।

(2) **निदर्शन या स्पष्टीकरण प्रणाली : Device of Exposition**—इस प्रणाली का प्रयोग उस समय किया जाता है, जब शिक्षक को यह मालूम होता है कि उसके छात्र उस विषय के बारे मे बहुत कम जानते हैं, जिसे वह पढ़ाना चाहता है। इस प्रणाली द्वारा नवीन ज्ञान को स्पष्ट और बोधनीय रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है। इस प्रणाली का प्रयोग करते समय अग्रलिखित बातों को ध्यान मे रखना चाहिए :—

1. *शिक्षक को पाठ का उद्देश्य और अभिप्राय छात्रों को स्पष्ट रूप से बता* देना चाहिए।
2. शिक्षक को बहुत जल्दी नहीं बोलना चाहिए। ऐसा करने से छात्र उसके विचारों को स्पष्ट रूप से नहीं समझ पाते हैं।
3. शिक्षक की भाषा सरल और छात्रों के समझने योग्य होनी चाहिए।
4. शिक्षक का निदर्शन स्पष्ट, सुबोध और निश्चित होना चाहिए।
5. शिक्षक को अपनी विषय-सामग्री पर स्पष्ट रूप से विचार-विमर्श करना चाहिए।
6. शिक्षक को अपनी विषय-वस्तु को तार्किक क्रम में प्रस्तुत करना चाहिए।
7. शिक्षक को अपना निदर्शन छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल बनाना चाहिए।
8. शिक्षक की प्रस्तावना संक्षिप्त होनी चाहिए और उसे स्पष्टीकरण में विलम्ब नहीं करना चाहिए।
9. शिक्षक को सम्पूर्ण पाठ को स्पष्ट और स्वाभाविक खण्डों में बाँट लेना चाहिए और उनका एक-दूसरे से सम्बन्ध होना चाहिए।
10. शिक्षक को विषय-वस्तु की मुख्य बातों को संक्षिप्त रूप में श्यामपट पर लिख देना चाहिए और उन पर उचित बल देना चाहिए।
11. शिक्षक को प्रत्येक पद के बाद पुनरावृत्ति करनी चाहिए।
12. शिक्षक को उन उदाहरणों और तुलनाओं का प्रचुर मात्रा में प्रयोग करना चाहिए, जिनका छात्रों को अनुभव है।
13. शिक्षक को अपना पाठ अत्यधिक सामग्री से नहीं लादना चाहिए।
14. शिक्षक को छात्रों द्वारा प्रश्न पूछे जाने के लिए पर्याप्त अवसर देना चाहिए।
15. जब शिक्षक पढ़ाना समाप्त कर दे, तब उसे यह जानने के लिए कि विषय-वस्तु छात्रों को स्पष्ट हुई है या नहीं, प्रश्न पूछने चाहिए।
16. यदि पाठ में बहुत-से उप-प्रकरण (Sub-topics) हैं, तो शिक्षक को पहला उप-प्रकरण पूर्ण रूप से बताने के बाद ही दूसरा शुरू करना चाहिए।

(3) विवरण प्रणाली : Device of Description—ए० एच० गार्लिक (A. H. Garlick) का कथन है :—"विवरण का अर्थ—वस्तु को शब्दों या चिह्नों या दोनों के द्वारा प्रस्तुत करने के कार्य से लगाया जाता है। यह शाब्दिक चित्र बनाने की प्रक्रिया है और कभी-कभी इसको शब्द-चित्रकला के नाम से भी पुकारा जाता है। यह किसी वस्तु की प्रकृति, गुणों या रूप का ब्यौरा देने का प्रयत्न करती

है, जिससे बालक उचित धारणा बना सकें। यह परिभाषा के कार्य को विस्तृत करती है और कभी-कभी इसको 'चित्रित करने वाले' के रूप में भी वर्णित किया जाता है। वस्तुतः यह निदर्शन का दूसरा रूप है।"

विवरण-प्रणाली का प्रयोग करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है :—

1. शिक्षक को 'पूर्ण से अंश की ओर' और 'ज्ञात से अज्ञात की ओर' बढ़ना चाहिए।
2. शिक्षक को उस वस्तु या व्यक्ति का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए, जिसका विवरण वह देना चाहता है।
3. विवरण, तर्कों और तथ्यों पर आधारित होना चाहिए।
4. विवरण सदैव ऐसी भाषा मे दिया जाना चाहिए, जिसे छात्र सरलता से समझ सकें।
5. विवरण क्रमबद्ध और व्यवस्थित होना चाहिए, जिससे छात्रो पर उसका प्रभाव स्थायी हो सके।
6. विवरण के समय शिक्षक को केवल शब्दों का सहारा नहीं लेना चाहिए। उसे विषय से सम्बन्धित स्थूल वस्तुएँ भी छात्रों को दिखानी चाहिए।
7. विवरण अधिक लम्बा या अधिक छोटा नही होना चाहिए। अधिक लम्बा विवरण छात्रो को भ्रम में डाल देता है और अधिक छोटा विवरण छात्रो के मस्तिष्क पर पूर्ण चित्र अंकित करने मे असफल होता है।

(4) वर्णनात्मक प्रणाली : Device of Narration—'वर्णन' कहानी कहने का एक रूप है। कभी-कभी कक्षा में ऐसी स्थिति आ जाती है, जब सभी प्रणालियाँ असफल हो जाती हैं। उस समय शिक्षक को वर्णनात्मक प्रणाली का सहारा लेना पड़ता है। मान लीजिए, पढ़ाते समय 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का जिक्र आ जाता है। इसको स्पष्ट करने का एकमात्र ढंग यही है कि इसके बारे में छोटा-सा वर्णन किया जाय, तभी छात्र इसको समझ सकेंगे। वर्णन करते समय शिक्षक को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए :—

1. वर्णन—सरल, स्पष्ट और रोचक होना चाहिए।
2. वर्णन—छात्रों की आयु और रुचि के अनुकूल होना चाहिए।
3. वर्णन करने से पूर्व शिक्षक को अपने विचार एक क्रम मे जमा लेने चाहिए, और उसी क्रम के अनुसार वर्णन करना चाहिए।
4. वर्णन की शैली रोचक और सजीव होनी चाहिए, जिससे छात्र एकाग्रचित्त होकर उसको सुनें।

5. वर्णन मे अनावश्यक बातें और घटनाएँ नही होनी चाहिए। इससे समय और शक्ति का ह्रास होता है।
6. वर्णन करते समय चित्रो, उदाहरणो और दृष्टान्तो का मुक्त रूप से प्रयोग करना चाहिए। इससे वर्णन की रोचकता बढती है।
7. वर्णन करते समय महत्त्वपूर्ण वाक्यो और वाक्यांशो को दोहराना चाहिए। इससे छात्रो का उल्लास बढ़ता है।
8. वर्णन खण्डो मे किया जाना चाहिए, पर सम्पूर्ण वर्णन तार्किक क्रम में होना चाहिए।
9. वर्णन मे जो महत्त्वपूर्ण बातें हो, उन पर प्रश्न पूछे जाने चाहिए।
10. वर्णन, नोट्स या पुस्तक से नही किया जाना चाहिए।
11. वर्णन को नाटक के रूप मे अभिनय करने के लिए छात्रों को अवसर देना चाहिए।
12. शिक्षक को संकेतो, गतियो आदि के द्वारा वर्णन से सम्बन्धित वातावरण का निर्माण करना चाहिए।

(5) उदाहरण प्रणाली : Device of Illustration—'उदाहरण' को प्रणाली या प्रविधि न कहकर 'युक्ति' कहना ही अधिक अच्छा होगा। 'उदाहरण' से किसी ऐमी बात का अभिप्राय होता है, जो पहले से मालूम होती है या उसे ज्ञानेन्द्रियो द्वारा सरलता से समझा जा सकता है। साधारणत: उदाहरण देते समय किसी स्थूल वस्तु का प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी उदाहरण से सम्बन्धित किसी विचार का भी प्रयोग किया जाता है। उदाहरण देते समय निम्नलिखित बातो को ध्यान मे रखना चाहिए :—

1. उदाहरण स्पष्ट, लाभप्रद और निश्चित होने चाहिए।
2. उदाहरण को बालको के ज्ञान को निश्चितता प्रदान करनी चाहिए।
3. उदाहरण शिक्षक को अधिक शुद्ध और पूर्ण बनाने के लिए प्रयोग मे लाने चाहिए।
4. उदाहरण देते समय चित्रों, स्थूल वस्तुओ आदि का प्रयोग करना चाहिए।
5. शुष्क और आकर्षणहीन विषय-सामग्री को उदाहरण देकर रोचक बनाना चाहिए।
6. बालकों द्वारा प्राप्त किए गए ज्ञान को उदाहरण देकर स्थायी बनाना चाहिए।

(6) प्रश्नोत्तर प्रणाली—इस प्रणाली का विस्तृत वर्णन अध्याय 43 और 44 में किया गया है।

उपसंहार

उपर्युक्त शिक्षण-प्रणालियाँ और प्रविधियाँ—वे साधन या रीतियाँ हैं, जो शिक्षण को सफल बनाने में सहायता देती हैं। इन प्रणालियों को पाठ की प्रकृति के अनुसार कक्षा में अपनाया जा सकता है। कभी-कभी एक ही पाठ में प्रायः सभी प्रणालियों का प्रयोग किया जा सकता है। किस समय कौन-सी प्रणाली का प्रयोग सबसे अधिक अच्छा सिद्ध होगा? इसका निर्णय शिक्षक के द्वारा ही किया जा सकता है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss briefly the relative importance of devices and techniques of teaching you have been using in teaching various classes.

विभिन्न कक्षाओं के शिक्षण में आप जिन प्रणालियों एवं विधियों का प्रयोग कर चुके हैं, उनके सापेक्षिक महत्त्व को स्पष्ट कीजिए।

44

प्रश्न पूछना
QUESTIONING

"शिक्षण मुख्य रूप से प्रश्नों के द्वारा होना चाहिए।"
"Teaching should be principally by means of questions."
—**Fowler.**

प्रश्नों का महत्त्व : Importance of Questions

शिक्षण मे प्रश्नो का महत्त्व बहुत अधिक है। शिक्षक द्वारा प्रश्न पूछे जाने की विधि बहुत पुरानी है। प्राचीन भारत मे गुरु अपने शिक्षण मे प्रश्नों का बहुत प्रयोग करते थे। वास्तव में, उनकी शिक्षण-विधि प्रश्नोत्तर पर आधारित थी। शिष्य भी गुरु से प्रश्न पूछकर अपनी शंकाओं को दूर करते थे। यूनानी दार्शनिक सुकरात ने शिक्षण की अन्य विधियों का बहिष्कार करके प्रश्न-विधि को अपनाया। आधुनिक शिक्षा-प्रणाली में प्रश्नों का विशेष स्थान है। शिक्षक, प्रश्न पूछ कर ही अपने पाठ को आगे बढ़ाता है और छात्रों के ज्ञान का पता लगाता है। दूसरे शब्दो मे, प्रश्नों के द्वारा ही कक्षा मे ज्ञान प्रदान किया जाता है और ज्ञान का अनुमान लगाया जाता है। किसी शिक्षक ने ठीक ही कहा है—

"I keep six honest serving men;
They taught me all I know,
Their names are What and Why and When
And How and Where and Who."

प्रश्न पूछना—एक कला है : Questioning is an Art

जिस व्यक्ति का शिक्षण से कोई सम्बन्ध नही है, उसे कक्षा मे छात्रो से प्रश्न

पूछने की बात बहुत सरल जान पड़ती है । पर ऐसा नही है । प्रश्न पूछना, एक कला है । प्रश्न तो सभी पूछ सकते है, पर प्रश्न को कुशलता से कोई-कोई ही पूछ सकता है । यह बात शिक्षक की कुशलता और प्रश्न पूछने की योग्यता पर निर्भर है । उसके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण और कठिन बात यही है कि वह अपने छात्रो से किस प्रकार कौशलपूर्ण प्रश्न पूछे । वह प्रश्न पूछने की कला में जितना ही अधिक निपुण होगा, उतने ही अधिक उत्तम प्रश्न वह पूछेगा ।

इस कला में निपुणता किसी-किसी शिक्षक मे ही होती है । इसे प्राप्त करने के लिए बहुत समय तक निरन्तर प्रयास की आवश्यकता है । वस्तुतः किसी भी शिक्षक को अपने शिक्षण मे उस समय सन्तुष्ट नही होना चाहिए, जब तक कि वह प्रश्न पूछने की कला मे दक्ष न हो जाय । रेमॉण्ट ने उचित ही लिखा है :—**"प्रश्न पूछने की अच्छी शैली की प्राप्ति तरुण शिक्षक की आवश्यक महत्त्वाकांक्षाओं में से निश्चय रूप से एक है ।"**

"The acquisition of a good style of questioning may be laid down definitely as one of the essential ambitions of a young teacher."—**Raymont.**

प्रश्न पूछने के उद्देश्य : Aims of Questioning

1. छात्रो को प्रेरित करना, जिससे उसका ध्यान पाठ्य-वस्तु की ओर आकर्षित हो ।
2. छात्रो मे रुचि और जिज्ञासा उत्पन्न करना, जिससे उनके सीखने के कार्य मे शिथिलता न आए ।
3. शिक्षक को इस बात का ज्ञान कराना कि छात्र कितना जानते हैं और उनको किन बातों में रुचि है ।
4. शिक्षक को यह बताना कि छात्र पाठ्य-वस्तु को समझ गए हैं या नही । इसी आधार पर वह या तो आगे बढता है या पढाई हुई बातो को दोहराता है ।
5. छात्रो के पुराने ज्ञान का नए ज्ञान से सम्बन्ध जोड़ना । प्रश्नो के बिना ऐसा किया जाना बहुत कठिन है ।
6. छात्रों को सोचने का अवसर देना, जिससे उनमे विचार करने की आदत का निर्माण होता है ।
7. छात्रों को कठिनाइयो को मालूम करना और शिक्षक द्वारा उनका दूर किया जाना ।
8. शिक्षक के कार्य की सफलता या असफलता बताना । यदि छात्र उसके प्रश्नों का उत्तर दे देते हैं, तो उसका पढाना सफल माना जाता है, अन्यथा नहीं ।
9. शिक्षण के समय, छात्रों के मस्तिष्क को क्रियाशील रखना ।

5. वर्णन में अनावश्यक बातें और घटनाएँ नहीं होनी चाहिए। इससे समय और शक्ति का ह्रास होता है।
6. वर्णन करते समय चित्रों, उदाहरणों और दृष्टान्तों का मुक्त रूप से प्रयोग करना चाहिए। इससे वर्णन की रोचकता बढ़ती है।
7. वर्णन करते समय महत्त्वपूर्ण वाक्यों और वाक्यांशों को दोहराना चाहिए। इससे छात्रों का उल्लास बढ़ता है।
8. वर्णन खण्डों में किया जाना चाहिए, पर सम्पूर्ण वर्णन तार्किक क्रम में होना चाहिए।
9. वर्णन में जो महत्त्वपूर्ण बातें हों, उन पर प्रश्न पूछे जाने चाहिए।
10. वर्णन, नोट्स या पुस्तक से नहीं किया जाना चाहिए।
11. वर्णन को नाटक के रूप में अभिनय करने के लिए छात्रों को अवसर देना चाहिए।
12. शिक्षक को संकेतों, गतियों आदि के द्वारा वर्णन से सम्बन्धित वातावरण का निर्माण करना चाहिए।

(5) उदाहरण प्रणाली : **Device of Illustration**—'उदाहरण' को प्रणाली या प्रविधि न कहकर 'युक्ति' कहना ही अधिक अच्छा होगा। 'उदाहरण' से किसी ऐसी बात का अभिप्राय होता है, जो पहले से मालूम होती है या उसे ज्ञानेन्द्रियों द्वारा सरलता से समझा जा सकता है। साधारणतः उदाहरण देते समय किसी स्थूल वस्तु का प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी उदाहरण से सम्बन्धित किसी विचार का भी प्रयोग किया जाता है। उदाहरण देते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए :—

1. उदाहरण स्पष्ट, लाभप्रद और निश्चित होने चाहिए।
2. उदाहरण को बालकों के ज्ञान को निश्चितता प्रदान करनी चाहिए।
3. उदाहरण शिक्षक को अधिक शुद्ध और पूर्ण बनाने के लिए प्रयोग में लाने चाहिए।
4. उदाहरण देते समय चित्रों, स्थूल वस्तुओं आदि का प्रयोग करना चाहिए।
5. शुष्क और आकर्षणहीन विषय-सामग्री को उदाहरण देकर रोचक बनाना चाहिए।
6. बालकों द्वारा प्राप्त किए गए ज्ञान को उदाहरण देकर स्थायी बनाना चाहिए।

(5) प्रश्नोत्तर प्रणाली—इस प्रणाली का विस्तृत वर्णन अध्याय 43 और 44 में किया गया है।

उपसंहार

उपर्युक्त शिक्षण-प्रणालियाँ और प्रविधियाँ—वे साधन या रीतियाँ हैं, जो शिक्षण को सफल बनाने में सहायता देती हैं। इन प्रणालियों को पाठ की प्रकृति के अनुसार कक्षा में अपनाया जा सकता है। कभी-कभी एक ही पाठ में प्रायः सभी प्रणालियों का प्रयोग किया जा सकता है। किस समय कौन-सी प्रणाली का प्रयोग सबसे अधिक अच्छा सिद्ध होगा ? इसका निर्णय शिक्षक के द्वारा ही किया जा सकता है।

UNIVERSITY QUESTION

1. Discuss briefly the relative importance of devices and techniques of *teaching you have been using in teaching various* classes.

विभिन्न कक्षाओं के शिक्षण में आप जिन प्रणालियों एवं विधियों का प्रयोग कर चुके हैं, उनके सापेक्षिक महत्त्व को स्पष्ट कीजिए।

43

प्रश्न पूछना
QUESTIONING

"शिक्षण मुख्य रूप से प्रश्नों के द्वारा होना चाहिए।"
"Teaching should be principally by means of questions."

—Fowler.

प्रश्नों का महत्त्व : Importance of Questions

शिक्षण में प्रश्नों का महत्त्व बहुत अधिक है। शिक्षक द्वारा प्रश्न पूछे जाने की विधि बहुत पुरानी है। प्राचीन भारत मे गुरु अपने शिक्षण मे प्रश्नों का बहुत प्रयोग करते थे। वास्तव में, उनकी शिक्षण-विधि प्रश्नोत्तर पर आधारित थी। शिष्य भी गुरु से प्रश्न पूछकर अपनी शंकाओं को दूर करते थे। यूनानी दार्शनिक सुकरात ने शिक्षण की अन्य विधियों का बहिष्कार करके प्रश्न-विधि को अपनाया। आधुनिक शिक्षा-प्रणाली में प्रश्नों का विशेष स्थान है। शिक्षक, प्रश्न पूछ कर ही अपने पाठ को आगे बढाता है और छात्रों के ज्ञान का पता लगाता है। दूसरे शब्दों में, प्रश्नों के द्वारा ही कक्षा में ज्ञान प्रदान किया जाता है और ज्ञान का अनुमान लगाया जाता है। किसी शिक्षक ने ठीक ही कहा है—

"I keep six honest serving men;
They taught me all I know,
Their names are What and Why and When
And How and Where and Who."

प्रश्न पूछना—एक कला है : Questioning is an Art

जिस व्यक्ति का शिक्षण से कोई सम्बन्ध नहीं है, उसे कक्षा में छात्रों से प्रश्न

पूछने की बात बहुत सरल जान पड़ती है। पर ऐसा नहीं है। प्रश्न पूछना, एक कला है। प्रश्न तो सभी पूछ सकते हैं, पर प्रश्न को कुशलता से कोई-कोई ही पूछ सकता है। यह बात शिक्षक की कुशलता और प्रश्न पूछने की योग्यता पर निर्भर है। उसके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण और कठिन बात यही है कि वह अपने छात्रों से किस प्रकार कौशलपूर्ण प्रश्न पूछे। वह प्रश्न पूछने की कला में जितना ही अधिक निपुण होगा, उतने ही अधिक उत्तम प्रश्न वह पूछेगा।

इस कला में निपुणता किसी-किसी शिक्षक में ही होती है। इसे प्राप्त करने के लिए बहुत समय तक निरन्तर प्रयास की आवश्यकता है। वस्तुतः किसी भी शिक्षक को अपने शिक्षण में उस समय सन्तुष्ट नहीं होना चाहिए, जब तक कि वह प्रश्न पूछने की कला में दक्ष न हो जाय। रेमॉण्ट ने उचित ही लिखा है :—"प्रश्न पूछने की अच्छी शैली की प्राप्ति तरुण शिक्षक की आवश्यक महत्त्वाकांक्षाओं में से निश्चय रूप से एक है।"

"The acquisition of a good style of questioning may be laid down definitely as one of the essential ambitions of a young teacher."—Raymont.

प्रश्न पूछने के उद्देश्य : Aims of Questioning

1. छात्रों को प्रेरित करना, जिससे उसका ध्यान पाठ्य-वस्तु की ओर आकर्षित हो।
2. छात्रों में रुचि और जिज्ञासा उत्पन्न करना, जिससे उनके सीखने के कार्य में शिथिलता न आए।
3. शिक्षक को इस बात का ज्ञान कराना कि छात्र कितना जानते हैं और उनको किन बातों में रुचि है।
4. शिक्षक को यह बताना कि छात्र पाठ्य-वस्तु को समझ गए हैं या नहीं। इसी आधार पर वह या तो आगे बढ़ता है या पढ़ाई हुई बातों को दोहराता है।
5. छात्रों के पुराने ज्ञान का नए ज्ञान से सम्बन्ध जोड़ना। प्रश्नों के बिना ऐसा किया जाना बहुत कठिन है।
6. छात्रों को सोचने का अवसर देना, जिससे उनमें विचार करने की आदत का निर्माण होता है।
7. छात्रों की कठिनाइयों को मालूम करना और शिक्षक द्वारा उनका दूर किया जाना।
8. शिक्षक के कार्य की सफलता या असफलता बताना। यदि छात्र उसके प्रश्नों का उत्तर दे देते हैं, तो उसका पढ़ाना सफल माना जाता है, अन्यथा नहीं।
9. शिक्षण के समय, छात्रों के मस्तिष्क को क्रियाशील रखना।

10. शिक्षक को उसके कार्य में छात्रों का सहयोग प्रदान करना।
11. छात्रों के मानसिक विकास में योग देना।
12. शिक्षक और छात्रों का ध्यान पाठ्य-वस्तु पर केन्द्रित रखना और उसको इधर-उधर न जाने देना।
13. छात्रों को अपने ज्ञान का प्रयोग और प्रदर्शन करने का अवसर देना।
14. पाठ को दोहराने में सहायता देना।

प्रश्नों के दो स्पष्ट विभेद : Two Broad Divisions of Questions

जोज़फ़ लैंडन (Joseph Landon) ने मोटे तौर पर प्रश्न दो प्रकार के बताए हैं : 1—स्मृत्यात्मक प्रश्न, 2—विचारात्मक प्रश्न।

(1) स्मृत्यात्मक प्रश्न : Testing Questions—स्मृत्यात्मक प्रश्नों के दो उद्देश्य होते हैं—(1) छात्रों के पूर्व-ज्ञान का पता लगाना, और (2) छात्रों द्वारा प्राप्त किए गए ज्ञान को दोहराना। स्मृत्यात्मक प्रश्नों में साधारणतः 'क्या', 'कब' और 'कौन' का प्रयोग होता है; जैसे :—

1. जापान में अधिक भूचाल आने के क्या कारण हैं ?
2. सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण कब किया ?
3. *आगरा के मुख्य उद्योग-धन्धे कौन-से हैं ?*

(2) विचारात्मक प्रश्न : Training Questions—विचारात्मक प्रश्नों के दो उद्देश्य होते हैं—(1) छात्रों की विचार-शक्ति का विकास करना, और (2) छात्रों को नवीन ज्ञान की खोज करने के लिए प्रेरित करना।

प्रश्नों के प्रकार
Kinds of Questions

यद्यपि सब प्रश्नों को उपर्युक्त दो भागों में विभाजित किया जा सकता है, पर शिक्षण-प्रक्रिया की जटिलता को देखकर उनको निम्नलिखित भागों मे बाँटा गया है :—

1. प्रस्तावनात्मक प्रश्न
2. विकासात्मक प्रश्न
3. विचारात्मक प्रश्न
4. समस्यात्मक प्रश्न
5. बोध प्रश्न
6. तुलनात्मक प्रश्न
7. पुनरावृति प्रश्न

(1) प्रस्तावनात्मक प्रश्न : Introductory Questions—इन प्रश्नों के द्वारा अध्यापक पाठ को प्रारम्भ करता है। इन प्रश्नों के दो उद्देश्य है। पहला—इनके द्वारा अध्यापक, छात्रों के पूर्व ज्ञान का पता लगाता है और इसके बाद उसका सम्बन्ध नए ज्ञान से जोड़ता है। दूसरा—इन प्रश्नों के द्वारा शिक्षक, छात्रों की रुचि और जिज्ञासा को नवीन पाठ को ग्रहण करने के लिये जाग्रत करता है।

प्रस्तावनात्मक प्रश्न छोटे और कम होने चाहिए। इस प्रकार के दो या तीन प्रश्न पूछे जाने काफ़ी है। शिक्षक को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ये प्रश्न शृंखलाबद्ध हों और अन्तिम प्रश्न ऐसा हो जो छात्रों के पूर्व ज्ञान का नये ज्ञान से सम्बन्ध जोड़े। साथ ही, उसे इन प्रश्नों पर अधिक समय नहीं लगाना चाहिए। एक योग्य अध्यापक अधिक से अधिक दो मिनट में इन प्रश्नों को पूछकर अपने पाठ्य-विषय पर आ जाता है।

यदि छात्रों को 'कपास की पैदावार' का पाठ पढ़ाना है, तो उनसे निम्न-लिखित प्रस्तावनात्मक प्रश्न पूछे जा सकते है :—

1. हम अपने शरीर को किस वस्तु से ढकते हैं ?
2. कपड़े किस वस्तु के बने हुए है ?
3. रुई किस पौधे से निकाली जाती है ?

(2) विकासात्मक प्रश्न : Developing Questions—इन प्रश्नों का प्रयोग पाठ का विकास करने के लिए किया जाता है। वास्तव में, इन प्रश्नों की सहायता से छात्रों के सामने नया ज्ञान प्रस्तुत किया जाता है। अध्यापक छात्रों का सहयोग प्राप्त करने के लिए ऐसे प्रश्न पूछता है, जिनसे पाठ के विकास में सहायता मिलती है। ये प्रश्न छात्रों की मानसिक क्रिया को उत्तेजित करते हैं, जिससे वे उत्तर देने के लिए अपनी बुद्धि, तर्क-शक्ति और निरीक्षण-शक्ति का प्रयोग करते है।

विकासात्मक प्रश्नों के माध्यम से शिक्षक, पाठ्य-विषय को स्पष्ट करता है। साथ ही, वह छात्रों को एक तथ्य-बिन्दु से दूसरे तथ्य-बिन्दु की ओर ले जाता है। विकासात्मक प्रश्नों के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए रेमॉन्ट (Raymont) ने लिखा है :—**"किसी पाठ के प्रारम्भ और अन्त में प्रश्नों का इतना महत्त्व है, जितना कि पाठ के क्रमिक विकास में; और इस अवस्था में इनका इतना महत्त्व है कि हम इनके आधार पर अच्छे और बुरे शिक्षक के अन्तर का निर्णय कर सकते हैं।"**

छात्रों को 'कलकत्ता बन्दरगाह का महत्त्व" नामक पाठ पढ़ाते समय शिक्षक निम्नलिखित विकासात्मक प्रश्न पूछ सकता है—

1. नक़्शे में कलकत्ता की स्थिति मालूम करो।
2. कलकत्ता का कौन-सा भाग हिंटरलैंड कहलाता है ?
3. यह भाग इतना घना बसा हुआ क्यों है ?
4. कलकत्ता से कौन-सी वस्तुएँ देश से बाहर भेजी जाती है ?
5. यहाँ से चावल बाहर क्यों नहीं भेजा जाता है ?
6. कलकत्ता मे जूट का व्यवसाय सबसे अधिक प्रसिद्ध क्यों है ?
7. जूट के कारखाने कलकत्ता में कहाँ स्थित हैं ?
8. ये कारखाने यहाँ क्यों बनाये गए है ?

(3) विचारात्मक प्रश्न : Thought-Provoking Questions—वे प्रश्न

विचारात्मक कहलाते हैं, जो छात्रों के मस्तिष्क को जाग्रत, विचारशील और क्रियाशील रखने की दृष्टि से किए जाते हैं। दूसरे शब्दों में, इन प्रश्नों का उद्देश्य—छात्रों के मस्तिष्क को विचारयुक्त और क्रियाशील बनाना है। अध्यापक को इस प्रकार के प्रश्न उस दशा में करने चाहिए, जब वह देखे कि कक्षा में छात्रों का ध्यान इधर-उधर भटक रहा है। विचारात्मक प्रश्नों के करने का मूल उद्देश्य—छात्रों के मस्तिष्क को क्रियाशील बनाने के साथ-साथ, उनके ध्यान को पाठ पर केन्द्रित करना है। इस प्रकार के प्रश्नों के लिए अध्यापक को सावधानी रखने और परिश्रम करने की आवश्यकता है। प्रश्नों की रचना करने में छात्रों की मानसिक आयु का ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिए।

"अकबर की राजपूत-नीति" पढ़ाते समय निम्नांकित विचारात्मक प्रश्न पूछे जा सकते हैं :—

1. अकबर ने राजपूतों को राज्य में उच्च पद क्यों दिए ?
2. अकबर, राजपूतों का आदर क्यों करता था ?
3. अकबर ने राजपूत राजाओं से विवाह द्वारा सम्बन्ध क्यों स्थापित किये ?
4. इसका क्या कारण था कि अकबर ने राजपूतों को अपना विश्वासपात्र बनाया ?

(4) **समस्यात्मक प्रश्न : Problematic Questions**—समस्यात्मक प्रश्नों का प्रयोग स्थिति के अनुसार पाठ के आरम्भ या मध्य, या दोनों स्थानों पर किया जा सकता है। इन प्रश्नों के द्वारा शिक्षक छात्रों के समक्ष प्रश्नों द्वारा कोई समस्या प्रस्तुत करता है, जिसका उत्तर छात्र—गम्भीर चिन्तन और मनन के बाद देते हैं। ये प्रश्न बालकों के मस्तिष्क को क्रियाशील बनाते हैं। इनका प्रयोग मुख्य रूप से गणित, विज्ञान और इतिहास के पाठों में किया जाता है।

'द्वितीय विश्व-युद्ध', पढ़ाते समय शिक्षक निम्नलिखित प्रश्न पूछकर छात्रों के समक्ष समस्याएँ प्रस्तुत कर सकता है।

1. यदि युद्ध में हिटलर विजयी हो जाता, तो आज संसार की क्या दशा होती ?
2. यदि अमरीका ने युद्ध में भाग न लिया होता, तो आज रूस, इंगलैंड और जर्मनी से उसके कैसे सम्बन्ध होते ?

(5) **बोध प्रश्न : Questions for Comprehension**—बोध-प्रश्न यह पता लगाने के लिए किए जाते हैं कि छात्र प्रदान किए गए ज्ञान को भली प्रकार समझ पाए हैं या नहीं। कक्षा में कुछ छात्र बैठे हुए शिक्षक की बातों को सुनते रहते हैं। उनका अनुमान होता है कि वे सब बातों को समझ रहे हैं। पर जब शिक्षक उनसे प्रश्न पूछता है, तब वे कोई उत्तर नहीं दे पाते हैं। ऐसी स्थिति में शिक्षक का कर्त्तव्य हो जाता है कि वह पढाई हुई बातों को फिर दोहराए। बोध-प्रश्न प्रायः सम्पूर्ण पाठ

के बाद किये जाते हैं। यदि पाठ सोपानों में बँटा हुआ है, तो ये प्रश्न प्रत्येक सोपान के अन्त में पूछे जाते हैं।

"सिकन्दर और पोरस" पाठ पढ़ा चुकने के बाद, और यदि यह सोपानो में विभक्त है, तो उनके बाद निम्नलिखित बोध-प्रश्न पूछे जा सकते हैं :—

1. सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण क्यों किया ?
2. पोरस ने उसके साथ युद्ध क्यों किया ?
3. पोरस, युद्ध में क्यों हारा ?
4. सिकन्दर ने हारे हुए पोरस के साथ कैसा व्यवहार किया ?

(6) तुलनात्मक प्रश्न : Comparison Questions—तुलनात्मक प्रश्नों का मुख्य उद्देश्य—दो तथ्यों या घटनाओं की परस्पर तुलना करना होता है। इतिहास भूगोल और विज्ञान के शिक्षण में इनका प्रयोग सफलता से किया जा सकता है। अध्यापक को चाहिए कि वह इनका प्रयोग पाठ के मध्य में ही करे। आवश्यकता पड़ने पर पाठ के प्रारम्भ या अन्त में भी इनका प्रयोग किया जा सकता है।

"मैदानो और पर्वतीय प्रदेशों का जीवन"—इस पाठ में अधोलिखित तुलनात्मक प्रश्न पूछे जा सकते है :—

1. मैदानो और पर्वतीय प्रदेशों के लोगों के वस्त्रो में आप क्या अन्तर पाते हैं ?
2. इन दोनों जगहों के निवास-स्थानों में क्या अन्तर है ?
3. इन दोनों स्थानों के आवागमन के साधनो की तुलना कीजिए।
4. इन दोनों स्थानों की जलवायु में क्या विभिन्नता पाई जाती है ?

(7) पुनरावृत्ति-प्रश्न : Recapitulatory Questions—इन प्रश्नों का प्रयोग प्राय: पाठ समाप्त होने पर किया जाता है। यदि पाठ कई सोपानो में बँटा हुआ है, तो उनके अन्त में भी ये प्रश्न पूछे जा सकते हैं। यह बात विशेष रूप से सामाजिक विषयों के बारे में लागू है। इन प्रश्नों का मुख्य उद्देश्य—पाठ को दोहराना है, जिससे पाठ के मुख्य तथ्य छात्रों के मस्तिष्क मे स्थिर हो जायें। इन प्रश्नों का आधार वही विषय होना चाहिए, जिसे शिक्षक घण्टे में पढ़ा चुका है। ये प्रश्न शृंखलाबद्ध होने चाहिए।

"जापान का मानव-जीवन"—यह पाठ पढ़ाने के बाद निम्नलिखित पुनरावृत्ति प्रश्न पूछे जा सकते है :—

1. जापान-निवासी किस प्रकार के वस्त्र पहिनते है ?
2. उनका मुख्य भोजन क्या है ?
3. वे इसी भोजन का प्रयोग क्यों करते हैं ?
4. जापान के लोगो का मुख्य व्यवसाय क्या है ?
5. इस व्यवसाय के क्या कारण हैं ?

अच्छे प्रश्नों की विशेषताएँ : Characteristics of Good Questions

(1) प्रश्न संक्षेप में पूछे जाने चाहिए, और उनकी शब्दावली निश्चित होनी चाहिए। अधिक लम्बे प्रश्न अनुचित होते हैं; उदाहरण के लिए—प्रश्न पूछने का एक ढंग यह है—"अकबर की राजपूतों के प्रति क्या नीति थी ?"—इस प्रश्न को गलत ढंग से भी पूछा जा सकता है :—"अकबर जो कि महान् सम्राट था, उसने राजपूतो के साथ किस प्रकार का व्यवहार किया—कौन-कौन उत्तर देगा ?" यह एक अनुचित प्रश्न का उदाहरण है, क्योंकि इसमें व्यर्थ की बातों को जोड़ दिया गया है।

(2) प्रश्न छात्रों की मानसिक आयु को ध्यान में रखकर पूछे जाने चाहिए। कठिन प्रश्न कुशाग्र-बुद्धि छात्रो से, और सरल प्रश्न मन्द-बुद्धि छात्रों से पूछे जाने चाहिए।

(3) प्रश्नों की भाषा सरल और सुबोध होनी चाहिए। कठिन भाषा के प्रयोग से बचना चाहिए।

(4) प्रश्न ऐसे होने चाहिए, जो छात्रों की विचार-शक्ति को उत्तेजित करें। सीधे-सीधे प्रश्नों की अपेक्षा कल्पना-शक्ति को उत्तेजित करने वाले प्रश्न पूछना कहीं अच्छा है। रेमॉण्ट (Raymont) के शब्दों में :—**"पहली बात तो यह है कि प्रश्नों से बालकों की मानसिक क्रिया जाग्रत होनी चाहिए। इनसे निरीक्षण, स्मृति और विचार-शक्ति को प्रेरणा मिलनी चाहिए।"**

(5) कक्षा में प्रश्न सभी छात्रों से पूछे जाने चाहिए। केवल कुछ छात्रों से प्रश्न पूछते रहना अनुचित है। ऐसा करने से छात्र शिक्षक को पक्षपाती मानते है। इस सम्बन्ध में रेमॉण्ट (Raymont) का कथन है :—**"प्रश्न कक्षा के सभी छात्रों से पूछे जाने चाहिए। उनको कुछ बालकों तक ही सीमित रखना उचित नहीं है। बालकों को पहले से यह भी पता नहीं होना चाहिए कि किसको उत्तर देना है। कक्षा के सब छात्रों से प्रश्न पूछने से कक्षा के वातावरण में सजीवता बनी रहती है और छात्रों का ध्यान पाठ मे लगा रहता है।"**

(6) प्रश्न जल्दी-जल्दी नही पूछे जाने चाहिए। बहुत-से शिक्षक इतनी शीघ्रता से प्रश्न पूछते है कि छात्र उनके उत्तरो को भली प्रकार सोच भी नही पाते है। प्रश्न पूछने के बाद छात्रों को विचार करने का अवसर अवश्य दिया जाना चाहिए।

(7) प्रश्नों को बार-बार नही दोहराना चाहिए। अध्यापक को प्रश्न केवल एक बार बोलना चाहिए। प्रश्न को दोहराने से छात्रो में लापरवाही आती है। वे पहली बार प्रश्न को ध्यान से सुनते ही नहीं है, क्योंकि वे जानते हैं कि अध्यापक प्रश्न को फिर दोहरायेगा। दूसरे, प्रश्नों को बार-बार दोहराने से अध्यापक अपना और छात्रो का समय नष्ट करता है।

(8) अध्यापक को ऐसे प्रश्न नही पूछने चाहिए, जिनका उत्तर 'हाँ' या "न" में समाप्त हो जाय। इस प्रकार के प्रश्नो के उत्तर छात्र अन्दाज लगाकर दे देते हैं;

उदाहरणार्थ—"क्या चाय पहाड़ों के ढालों पर पैदा होती है ?" इस प्रश्न के उत्तर में कुछ छात्र अनुमान से 'हाँ' कह देंगे।

(9) यदि कभी आवश्यकता पड़ने पर अध्यापक किसी प्रश्न को दोहराना चाहता है, तो उसे प्रश्न की भाषा नहीं बदलनी चाहिए। ऐसा करने से छात्र समझते हैं कि उनसे कोई नया प्रश्न पूछा गया है और वे घबरा जाते हैं।

(10) पूछे जाने वाले प्रश्नों का अर्थ स्पष्ट और निश्चित होना चाहिए। अनिश्चित प्रश्नों के उत्तर भी अनिश्चित होते हैं; उदाहरणार्थ—"चन्द्रगुप्त मौर्य के बारे में तुम क्या जानते हो ?" या "अकबर कैसा सम्राट् था ?" इन प्रश्नों के उत्तर अनिश्चित और अस्पष्ट ही होंगे।

(11) यथासम्भव प्रश्नों की रचना स्वयं अध्यापक द्वारा की जानी चाहिए। उसे पाठ्य-पुस्तकों में दिए हुए प्रश्नों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, उसे पाठ्य-पुस्तक में आने वाले शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि छात्र पुस्तक देखकर उनके सहारे से उत्तर दे देते हैं।

(12) प्रश्न एक-दूसरे से सम्बद्ध होने चाहिए। इस प्रकार के प्रश्न पाठ के विकास में सहायता देते है।

(13) प्रश्न, नम्रता से पूछे जाने चाहिए। डांट-डपट कर पूछना सर्वथा अनुचित है। आतंकपूर्ण वातावरण मे छात्र प्रश्नों के ठीक उत्तर नही दे पाते है।

(14) छात्रों से ऐसे प्रश्न नही पूछे जाने चाहिए, जिनके उत्तर प्रश्नों मे ही मिल जाएँ; उदाहरणार्थ—"क्या तुम नहीं जानते हो कि लन्दन इङ्गलैंड की राजधानी है ?"

(15) किसी तथ्य को पढाने के तुरन्त बाद प्रश्न नही पूछे जाने चाहिए। मान लीजिए—शिक्षक ने छात्रों को यह बताया है कि महात्मा गांधी का जन्म पोरबन्दर में हुआ था। यह बताने के तुरन्त बाद ही वह छात्रों से पूछता है—"गांधी जी का जन्म कहाँ हुआ था ?" इस प्रकार का प्रश्न पूछना सर्वथा अनुचित है।

दोषपूर्ण प्रश्न : Defective Questions

(1) **अपूर्ण प्रश्न : Incomplete Questions**—ये प्रश्न अधूरे होते हैं; जैसे—"महमूद गजनी ने आक्रमण क्यों किया ?"

(2) **द्विविधा सूचक प्रश्न : 'Yes' or 'No' Type Questions**—ऐसे प्रश्न नही पूछे जाने चाहिए, जिनका उत्तर 'हाँ' या 'नहीं'—दोनों में दिया जा सकता है; जैसे—"क्या मुहम्मद तुगलक पागल था ?" बालक इस प्रश्न का उत्तर बिना सोचे-समझे 'हाँ" या "नही" में दे सकते है।

(3) **स्वीकारोक्ति या पुष्टिकारक प्रश्न : Corroborative Questions**—ऐसे प्रश्नों द्वारा अध्यापक अपने कथन को छात्रों से स्वीकार कराता है या उनकी पुष्टि कराता है। इस प्रकार के प्रश्न छात्रों की तर्क और कल्पना-शक्ति को निर्बल बनाते

है। इन प्रश्नों के कुछ उदाहरण हैं—"ऑक्सीजन जलने में सहायता देती है न ?" "अशोक शान्तिप्रिय सम्राट् था; क्यों ठीक है न ?" "यहाँ पर 40 अंश का कोण खींच देना ठीक होगा न ?"

(4) रिक्त स्थान-पूरक प्रश्न : Elliptical Questions—इन प्रश्नों के निर्माण में सार्थक शब्द छोड़ दिया जाता है और उसकी पूर्ति छात्रों से करवाई जाती है; उदाहरणार्थ—"लन्दन इंगलैंड की.........है ?" अध्यापक को ऐसे प्रश्न नहीं पूछने चाहिए, क्योंकि छात्र को एक तो इनका उत्तर संक्षेप में देना पड़ता है और दूसरे, उसे सोचने में अधिक मानसिक प्रयास नहीं करना पड़ता है।

(5) उत्तर-सूचक या सांकेतिक प्रश्न : Leading and Suggestive Questions—इन प्रश्नों में उनके उत्तर मौजूद रहते हैं; जैसे :—"क्या चावल के लिए अधिक पानी की आवश्यकता होती है ?" "क्या इंगलैंड अमरीका का मित्र है ?" इन प्रश्नों के उत्तर सोचने में छात्रों को किसी प्रकार का मानसिक प्रयास नहीं करना पड़ता है।

(7) एक प्रश्न में अनेक प्रश्न : Many Questions in One Question—कभी-कभी अध्यापक एक प्रश्न में दो या तीन प्रश्न मिलाकर पूछते हैं; जैसे—"गेहूँ को कैसी जलवायु चाहिए, और वह भारत में कहाँ-कहाँ पैदा होता है, तथा सबसे अधिक कहाँ होता है ?" इस प्रश्न में तीन प्रश्न हैं। अतः इसके उत्तर भी तीन होंगे। इस प्रकार का प्रश्न सुनकर छात्र उलझन में पड़ जाते है।

(7) प्रतिध्वनि प्रश्न : Echo Questions—कुछ अध्यापक तथ्यों को बताने के साथ-साथ प्रश्न भी पूछते जाते हैं। इनको प्रतिध्वनि प्रश्न कहते है क्योंकि छात्र अध्यापक की कही हुई बात से ही उत्तर जान जाते हैं; जैसे—"गांधीजी की हत्या नाथूराम गोडसे ने की।"—"गांधी जी की हत्या किसने की ?" इस प्रकार के प्रश्नों छात्रों की तर्क-शक्ति और विचार-शक्ति का विकास नहीं होता है।

(8) गलत स्थान पर प्रयोग किए गये शब्दों वाले प्रश्न : Questions with Misplaced Words—प्रश्न में शब्दों का उचित स्थान पर प्रयोग किया जाना है; जैसे—"किस मुगल सम्राट् के विरुद्ध शिवाजी ने क्यों युद्ध किया ?" इस प्रश्न के शब्दों का क्रम इस प्रकार होना चाहिए—"शिवाजी ने किस मुगल-सम्राट् के विरुद्ध क्यों युद्ध किया ?"

प्रश्न पूछने की विधि : Technique of Questioning

1. प्रश्न पूरी कक्षा से पूछना चाहिए। इसके बाद किसी एक छात्र को उत्तर देने की आज्ञा देनी चाहिए। पूरी कक्षा से प्रश्न पूछने पर सब छात्रों का ध्यान उस पर केन्द्रित रहता है। साथ ही सब छात्रों को उस पर विचार करने का अवसर मिलता है।
2. प्रश्न पूछते समय एक ही छात्र को सम्बोधित नहीं करना चाहिए; जैसे—"रवि, तुम बताओ कि सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण कब किया ?" इस प्रकार का प्रश्न केवल रवि के ही ध्यान को आकर्षित करेगा, शेष छात्रों को उससे कोई प्रयोजन नहीं होगा।

3. प्रश्नों का वितरण इस प्रकार करना चाहिए कि कक्षा के सभी छात्रों को उत्तर देने का अवसर मिले। केवल थोड़े से छात्रों से या आगे की बेंच पर बैठने वालों से ही प्रश्न पूछना उचित नहीं है। इससे अन्य छात्र शिक्षक के पढ़ाने पर ध्यान नहीं देते है।
4. प्रश्न पूछने के बाद कुछ समय तक रुकना चाहिए। उसके बाद ही उत्तर पूछना चाहिए। ऐसा करने से छात्रों को उत्तर सोचने का समय मिल जाता है।
5. प्रश्नों को दोहराना नहीं चाहिए। इससे शिक्षक अपने में आत्म-विश्वास का अभाव प्रकट करता है।
6. यदि कोई छात्र उत्तर नही दे सकता है, तो इसके लिए बाध्य नहीं करना चाहिए।
7. शिक्षक को छात्रो का उत्तर दोहराना नही चाहिए। इससे व्यर्थ ही समय नष्ट होता है।
8. जब किसी छात्र का ध्यान पाठ पर केन्द्रित न हो, तब प्रश्न पूछ कर उसका ध्यान पाठ की ओर आकर्षित करना चाहिए।
9. यदि कोई छात्र ठीक उत्तर न दे पाये, तो प्रश्न दूसरे छात्र से पूछना चाहिए। उसके द्वारा दिये गये ठीक उत्तर को पहले छात्र से दोहरवाना चाहिए।
10. यदि पूरी कक्षा में से कोई भी छात्र उत्तर न दे सके, तो प्रश्न को सरल भाषा में पूछना चाहिए।
11. प्रश्न पूछते समय उसके किसी भी शब्द पर अनावश्यक बल नही देना चाहिए। दूसरे शब्दों में, प्रश्न स्वाभाविक ढंग से पूछा जाना चाहिए।
12. यदि शिक्षक को प्रश्न का ठीक उत्तर मिल जाता है, तो उसे वह प्रश्न फिर किसी अन्य छात्र से नही पूछना चाहिए।

उपसंहार

उपर्युक्त शब्दों में हमने प्रश्न पूछने से सम्बन्धित अनेक बातों का वर्णन किया है। इन सभी बातों पर शिक्षक को विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए। सत्य बात तो यह है कि उसे प्रश्न पूछने की कला मे दक्ष होने का प्रयास करना चाहिए। निरन्तर और धैर्यपूर्ण प्रयास से उसे अपने कार्य में सफलता अवश्य मिल सकती है। यह सफलता उसे कुशल अध्यापक बनाने में सहायता देगी। उसे पार्कर के इस कथन को सदैव ध्यान में रखना चाहिए :—**"प्रश्न पूछना कुशलता के स्तर की आदत से श्रेष्ठ समस्त शैक्षिक क्रियाशीलता की कुंजी है।"**

"Questioning is the key to all educational *activity above the* habit skill level."—**S. C. Parker.**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What are the qualities of a good question ? What type of questions should be asked ?

अच्छे प्रश्न के क्या गुण हैं ? किस प्रकार के प्रश्न पूछे जाने चाहिए ?

2. What are the different types of questions ? What are the essentials of good questions ? Illustrate your answer with suitable examples

प्रश्नों के विभिन्न प्रकार क्या हैं ? अच्छे प्रश्नों की क्या विशेषताएँ हैं ? अपने उत्तर को उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए ।

3. How does good questioning help the teaching-learning process ?

शिक्षण एवं सीखने की प्रक्रिया में प्रश्न पूछने की अच्छी विधि किस प्रकार सहायक है ?

4. Write a short essay on questioning as a teaching device, dwelling on their usefulness, type, and good features. Which types have you found most stimulating ?

पाठन की दृष्टि से प्रश्नों की उपादेयता, प्रकार तथा अच्छी विशेषताओं पर एक छोटा निबन्ध लिखिए । बताइये कि आपने किन प्रकारों के प्रश्नों को सबसे विचारोत्तेजक पाया है ?

44

उत्तर निकलवाना
RECEIVING ANSWERS

"उत्तर—सीखने के मार्ग में आगे बढ़ने के संकेत-चिह्न हैं।"
"Answers are the traffic signals on the highway of learning.
—Alex Kennedy

उत्तर का महत्त्व : Importance of Answers

शिक्षण-कार्य में उत्तर का महत्त्व प्रश्न से किसी प्रकार कम नहीं है। छात्रों के उत्तरों से ही शिक्षक को यह मालूम होता है कि वे पाठ्य-विषय को समझ गए हैं या नहीं। उत्तर छात्रों के मानसिक विकास, मानसिक क्रिया और मानसिक शक्ति को बताते हैं। उत्तर ही अध्यापक को छात्रों के ज्ञान को ठीक करने का अवसर देते हैं। उत्तर छात्रों की स्मृति को स्थायी बनाते हैं। उत्तर उनमें साहस और आत्मविश्वास उत्पन्न करते हैं। सारांश यह है कि छात्रों के उत्तर पर ही शिक्षक अपने पाठ का निर्माण करता है और उसे पढ़ाने में सफलता या असफलता प्राप्त करता है।

उत्तर निकलवाना : Receiving Answers

जिस प्रकार प्रश्न पूछना एक कला है, उसी प्रकार उत्तर निकलवाना भी एक कला है। जिस प्रकार सब शिक्षक अच्छे प्रश्न नहीं पूछ सकते है, उसी प्रकार सब शिक्षक सही उत्तर नहीं निकलवा सकते है। इस कार्य में दक्षता प्राप्त करने के लिए उत्तर निकलवाने के समय निम्नलिखित बातों का ध्यान में रखना आवश्यक है :—

1. उत्तरों के प्रति धैर्य : Patience for Answers—अध्यापक को चाहिए कि वह उत्तरों के प्रति धैर्य की भावना रखे। "अध्यापक को याद रखना चाहिए कि

उत्तर निकलवाना कोई यांत्रिक क्रिया नहीं है। वे मानव-बालकों को शिक्षण दे रहे जिनमें तर्क चिन्तन और कल्पना की शक्ति है; और जिनकी प्रतिक्रियाएँ प्रत्येक स्थि में एक ही प्रकार की हों—ऐसा सम्भव नहीं है। अतएव जब ठीक उत्तर नहीं मि है, तब धैर्य से काम लेना चाहिए और अपने प्रश्नों में हेर-फेर करके उपयुक्त उ प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए।" छात्रों के गलत उत्तरों से तनिक भी न घबराना चाहिए। यदि छात्र गलत उत्तर न दें, तो शिक्षक को अपने प्रश्न का स्व इस प्रकार बदल देना चाहिए कि वह इच्छित उत्तर प्राप्त कर सके।

2. उत्तरों के लिए प्रोत्साहन : Encouragement for Answers—छा से उत्तर प्राप्त करने के लिए उनको प्रोत्साहित करना आवश्यक है। छात्रों के ठी उत्तरों की प्रशंसा की जानी चाहिए। कमजोर छात्रों को उत्तर देने के लिए विशे रूप से प्रोत्साहन देना चाहिए। इस सम्बन्ध में रायबर्न (Ryburn) का कथ है :—"अध्यापक को उत्तरों के प्रति यथासम्भव प्रशंसा का दृष्टिकोण अपना चाहिए। यह सत्य है कि हर समय प्रत्येक व्यक्ति, प्रशंसक नहीं हो सकता है। उ छात्र को बताना पड़ेगा कि उसका उत्तर कहाँ पर गलत है। पर इसके साथ-सा अध्यापक जो भी प्रशंसा कर सकता है, अवश्य करे। बालक को प्रोत्साहित करने आवश्यकता है।"

3. प्रश्नों का उचित विवरण : Proper Distribution of Questions- जब प्रश्न किसी एक ही छात्र से बार-बार किये जाते हैं, तब अन्य छात्र उत्तर देने उदासीनता दिखाते हैं। अतः शिक्षक को कक्षा के सब छात्रों से बारी-बारी से प्रश्न पूछने चाहिए।

4. प्रश्न करने के बाद तुरन्त उत्तर न माँगना : No Immediate Answ after Question—प्रश्न पूछे जाने के बाद छात्रों को विचार करने के लिए सम मिलना चाहिए। प्रश्न पूछने के बाद तुरन्त उत्तर माँगना भारी भूल है क्योंकि क आयु के छात्रों का मस्तिष्क इतना परिपक्व नहीं होता है कि वे तुरन्त ही प्रश्न उत्तर सोचकर दे दें। इसलिए प्रश्न करने के बाद छात्रों को सोचने का अवस अवश्य देना चाहिए।

5. सामूहिक उत्तरों की अवहेलना : Discouragement of Collecti Answers—छात्रों को सामूहिक उत्तर देने की आज्ञा नहीं दी जानी चाहिए सामूहिक उत्तर देने से कक्षा में अनुशासनहीनता उत्पन्न होती है। साथ ही, यह मालू नहीं हो पाता है कि किस छात्र ने उत्तर दिया।

6. उत्तर देने में छात्रों को सहायता न देना : No Help to Students i Answering—शिक्षक का यह कर्त्तव्य है कि वह छात्रों को स्वयं ही उत्तर देने दे उसे अपनी ओर से उनकी सहायता नहीं करनी चाहिए। यदि छात्र उत्तर देते-दे रुक जाय, तो शिक्षक को अपनी ओर से कुछ शब्द जोड़कर उसके उत्तर को पूरा नहीं करना चाहिए। ऐसा करने से छात्र का मानसिक विकास रुक जाता है।

7. अशुद्ध उत्तरों का विश्लेषण : Analysis of Wrong Answers—यदि छात्र ठीक उत्तर न दे पा रहे हों, तो शिक्षक को उत्तरों का विश्लेषण करके उनमें संशोधन कर देना चाहिए। उसे पूछे गये तथ्य पर बहुत से प्रश्न करने चाहिए, जिससे कि छात्रों को अपनी गलती मालूम हो जाय।

8. छात्रों के उत्तरों की पुनरावृत्ति न करना : No Repetition of Students' Answers—ऐसा करने से समय नष्ट होता है और छात्रों में लापरवाही आती है। साथ ही, वे प्रथम बार दिये गए उत्तरों को ध्यान से नहीं सुनते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि अध्यापक उनको दोहरायेगा।

9. शर्मीले छात्रों को प्रोत्साहन : Encouragement to Shy Students—जो छात्र प्रश्नों का उत्तर देने मे शर्मीले हों या संकोच करते है, उन्हे शिक्षक के द्वारा प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

10. शिक्षक का सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार : Teacher's Sympathetic Attitude—यदि छात्र गलत उत्तर देते हैं, तो शिक्षक को उन्हें डाँटना-फटकारना नही चाहिए। इसके विपरीत, उसे अशुद्ध उत्तरों को प्रेम और सहानुभूति से ठीक करना चाहिए। डाँटने-फटकारने का छात्रो पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। वे उत्तर देने से मुँह छिपाने लगते है और उनकी विचार-शक्ति निर्बल हो जाती है।

11. केवल आवश्यक प्रोत्साहन : Only Necessary Encouragement—छात्रों को प्रोत्साहन देना आवश्यक है। पर उनको आवश्यकता से अधिक प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए। कुछ शिक्षक 'शाबास', 'बहुत ठीक'—आदि बातें कहने के अभ्यस्त हो जाते हैं। यह सर्वथा अनुचित है। प्रोत्साहन आवश्यकतानुसार ही दिया जाना चाहिए।

12. अशुद्ध उत्तरों का कारण बताना : Telling the Reasons of Wrong Answers—छात्रों द्वारा दिये गए गलत उत्तरों की अशुद्धता का कारण बताया जाना चाहिए। अधिकांश शिक्षक छात्रो के अशुद्ध उत्तरो का कारण बताये बिना उनको अस्वीकार कर देते हैं। इससे छात्रों के मन मे सन्देह बना रहता है, और वे अपनी ग़लतियों को नहीं समझ पाते। रॉयबर्न (Ryburn) का कथन है :—**"यदि उत्तर निश्चित रूप से अशुद्ध है, तो अध्यापक को इस कारण की भी व्याख्या करनी चाहिए कि उत्तर अशुद्ध क्यों है। जब तक शिक्षक निपुणतापूर्वक यह नहीं बतायेगा कि उत्तर क्यों ग़लत है, तब तक छात्र कभी भी शिक्षा प्राप्त नहीं करेगा। अध्यापक को सदैव व्याख्या करनी चाहिए कि कोई गलत उत्तर—ग़लत क्यों है।"**

अच्छे उत्तरों की विशेषताएँ : Characteristics of Good Answers

1. छात्रों के उत्तर, भाषा और व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध होने चाहिए। भाषा और व्याकरण सम्बन्धी गलतियों को ठीक करना केवल भाषा के शिक्षक का ही काम नहीं है, वरन् प्रत्येक शिक्षक का कर्त्तव्य है।

2. उत्तर ऐसे होने चाहिए, जिनका कुछ अर्थ निकाला जा सके। अतः उत्तर अर्थपूर्ण होना चाहिए। ऐसे उत्तर तत्त्वपूर्ण होते हैं और उनमें व्यर्थ की बातें नही होती हैं।
3. छात्रों को उत्तर इस प्रकार देना चाहिए कि कक्षा के सब विद्यार्थियों को सुनाई दे। धीमे बोलने से कक्षा के सब छात्र नही सुन पाते हैं। इसके फलस्वरूप कक्षा में कभी-कभी अनुशासनहीनता प्रकट हो जाती है। अतः शिक्षक को इस बात पर बल देना चाहिए कि छात्र उच्च स्वर से उत्तरों को बोलें।
4. उत्तर एक भाषा में होना चाहिए। कभी-कभी छात्र उत्तर देने मे दो भाषाओं का प्रयोग करते हैं। यह आदत बुरी है। खिचड़ी भाषा प्रयोग करने से छात्रों को अशुद्ध बोलने की आदत पड़ जाती है। अतः अध्यापक को एक भाषा में ही उत्तर स्वीकार करना चाहिए।
5. अच्छे उत्तर तभी दिये जाते हैं, जब छात्र भली प्रकार विचार कर लें। दूसरे शब्दों में, विचारने के बाद दिये जाने वाले उत्तर—छात्रों की मानसिक क्रिया के फल होते हैं। अतः वे अनुमान पर आधारित नहीं होते है।
6. शिक्षक को छात्रों के उत्तर पूर्ण वाक्यों में ही स्वीकार करने चाहिए। अधूरे और अपूर्ण उत्तर, छात्रों के विचारो को स्पष्ट नहीं करते है।
7. छात्रों से जितना पूछा जाय, उतना ही उत्तर उन्हें देना चाहिए। छात्रों को यह बात स्पष्ट रूप से बता देनी चाहिए कि उनके उत्तर प्रश्न की माँग को ध्यान में रखकर दिये जायँ। उत्तर में छात्रों द्वारा अपने सब ज्ञान का प्रदर्शन नहीं किया जाना चाहिए।
8. उत्तर, भाव की दृष्टि से पूर्ण होने चाहिए। अतः अध्यापक को यह देखना आवश्यक है कि उसके छात्र अपने उत्तरों में अपूर्ण भावों का प्रदर्शन न करें। अपूर्ण भावों के उत्तरों को छात्रों की सहायता से पूरा कराया जाना चाहिए। यदि यह सम्भव नही है, तो शिक्षक स्वयं ही उनको पूरा करे।

अशुद्ध उत्तरों को शुद्ध करने की विधियाँ : Ways of Correcting Wrong Answers

1. कुछ अशुद्ध उत्तरों को बिल्कुल अस्वीकार न किया जाय। उन्हे छात्रो से शुद्ध कराया जाय।
2. भाषा और व्याकरण की गलतियाँ भी छात्रो से शुद्ध करायी जायँ।
3. जो छात्र अशुद्ध उत्तर दें, उनसे शुद्ध उत्तर दोहरवाया जाय।

4. यदि कक्षा का कोई भी छात्र अध्यापक के प्रश्न का उत्तर नहीं देता है, तो उसे अपनी शैली बदल कर प्रश्न पूछना चाहिए।
5. यदि छात्रों के उत्तर अधिक शुद्ध आते हों, तो अध्यापक को उनकी अशुद्धता का कारण बताना चाहिए। साथ ही वह यह भी बताये कि गलती कहाँ की गई है।
6. किसी छात्र के उत्तर को परीक्षा के लिए समस्त कक्षा के सामने रखा जा सकता है। छात्रों को उत्तर की जाँच करने का पूरा अवसर दिया जाना चाहिए।
7. शिक्षक जिस प्रकार का उत्तर चाहता है, उस प्रकार का उत्तर मिलना बहुत कठिन होता है। अतः शिक्षक को शुद्ध भाग को स्वीकार कर लेना चाहिए और शेष भाग को छात्रों से शुद्ध करवाना चाहिए।

उपसंहार

हमने उपर्युक्त शब्दों में छात्रों से उत्तर निकलवाने की कला, अच्छे उत्तरों की विशेषताओं और गलत उत्तरों को ठीक करने की विधि पर प्रकाश डाला है। इन सभी बातों में अध्यापक को कुशल होने का प्रयास करना चाहिए। प्रायः अध्यापक को ऐसे उत्तर मिलते हैं कि उसे यह समझना कठिन हो जाता है कि वह उन उत्तरों के साथ कैसा व्यवहार करे। इसके लिए कोई विशेष नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता है।

इस सम्बन्ध में वार्ड और रॉस्को ने लिखा है :—"उत्तरों के बारे में कोई निश्चित नियम नहीं है। सब ग़लत उत्तरों को छोड़ देना उतनी ही मूर्खता है, जितनी उन सब को ठीक करने का प्रयास। कुछ उत्तरों के कारण वास्तविक ग़लत धारणा होती है, जिसको उसी समय या बाद को ठीक कर देना चाहिए। कुछ उत्तर दोषपूर्ण और अधूरे होते हैं जिनको ठीक किया जाना आवश्यक है। कुछ उत्तर बिना सोचे-विचारे दिये जाते हैं या मूर्खतापूर्ण ढंग से, जिनके प्रति या तो घृणा का व्यवहार किया जाना चाहिए या थोड़े से और जोरदार अस्वीकार-सूचक शब्द कहे जाने चाहिए, जिनका कि शिक्षक प्रयोग कर सकता है।"

"There are no rules. It is unwise to pass over all wrong answers and it is unwise to deal with all. Some are genuine misconceptions, which the teacher must clear up at the time or later on; others are imperfect and incomplete answers, which must be sounded off : others are haphazard or stupid and should be treated as contempt or else with such brief but emphatic words of unapproval as the teacher may have at command."—*Ward & Rosko.*

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What, in your opinion, are the chief characteristics of good answers ?

आपके मतानुसार अच्छे उत्तरों की क्या प्रमुख विशेषताएँ हैं ?

2. "Pupils' answers to the questions are more important than the teacher's questions." Comment.

"छात्रों के उत्तर शिक्षक के प्रश्नों से अधिक महत्वपूर्ण हैं।" विवेचना कीजिए।

45

शिक्षण-प्रक्रियाएँ
TEACHING PROCEDURES

"शिक्षण-प्रक्रिया वह प्रक्रिया है, जिसके अनुसार शिक्षक किसी अध्ययन-अध्यापन परिस्थिति में क्रमबद्ध रूप में किसी कार्य को करता है।"

"Teaching procedure is that which the teacher actually does, step by step, in any teaching-learning situation."—Carter. V. Good.

विषय-प्रवेश

कक्षा-शिक्षण की समस्या अति प्राचीन है। लॉक (Locke) से लेकर आज तक होने वाले सभी प्रसिद्ध शिक्षकों ने इस समस्या को हल करने का प्रयास किया है। रूसो (Rousseau) ने शिक्षण की परम्परागत विधियों की निन्दा करके शिक्षण को बाल-प्रकृति के अनुरूप बनाने पर बल दिया। पेस्टॉलाजी (Pestalozzi) ने रूसो से प्रेरणा प्राप्त करके इन्द्रियों द्वारा ज्ञान-प्राप्ति को शिक्षण का आधार घोषित किया। इसी आधार पर उसने स्टैंज (Stanz) के अपने विद्यालय में सभी विषयों का क्रमबद्ध पदों (Graded Steps) में शिक्षण दिया। जर्मन शिक्षक, हरबर्ट (Johann Friedrich Herbart) ने पेस्टालॉजी के कार्य को कॉनिसबर्ग (Konisberg) के अपने अभ्यास-विद्यालय में आगे बढाया। उसने रुचि के सिद्धान्त पर बल देकर शिक्षण को मनोवैज्ञानिक रूप प्रदान किया और शिक्षण की एक नई शिक्षण-प्रक्रिया का प्रतिपादन किया, जो 'हरबर्ट की पचपद प्रणाली' के नाम से विख्यात है। इसी को लेखकों ने 'हरबर्ट की शिक्षण-विधि के औपचारिक पद' (Herbart's *Formal* Steps of Method) कहा है।

हरबर्ट के क्रमबद्ध पांच पद
Herbart's Five Formal Steps

(अ) क्रमबद्ध पद क्यों : Why Formal Steps

हरबर्ट के पाँच पदों को 'Formal' कहा गया है। इस शब्द का हिन्दी रूपांतर, जैसा कि साधारणतः समझा जाता है, 'औपचारिक' नहीं है। एफ० पी० ग्रेव्ज (F. P. Graves) ने 'Formal' का प्रयोग 'Rational' के अर्थ में किया है और 'Formal Steps' को 'Logical Steps' कहा है। इस प्रकार 'Formal' का हिन्दी रूपान्तर हुआ—'तर्कपूर्ण', 'तर्क पर आधारित' या 'क्रमबद्ध'। अब प्रश्न यह है कि पद क्रमबद्ध या तर्क पर आधारित क्यों है ? ग्रेव्ज (Graves) के अनुसार वे तर्कपूर्ण या क्रमबद्ध इसलिए हैं, क्योंकि वे "मानव-मस्तिष्क के विकास और क्रिया के अनुरूप हैं।" ("They conform to the development and working of the human mind.") इसी बात को मुनरो (Monroe) ने अधिक स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया है :—"पदों को विषय-सामग्री के रूप के अनुसार नहीं, वरन् उस विधि के अनुसार निर्धारित किया गया है, जिसमें मानव मस्तिष्क कार्य करता है और मानव-चेतना विस्तृत होती है।"

"The steps are determined not by the character of the material, but by the way in which the human mind acts and human consciousness expands.—**Paul Monroe** : *op. cit.*, pp. 327-328.

(ब) पदों का आधार : Basis of Steps

पदों के आधार पर प्रकाश डालते हुए मुनरो (Monroe) ने लिखा है कि शिक्षण का प्रमुख कार्य—मस्तिष्क को विचार प्रदान करना और विचारों मे उचित सम्बन्ध स्थापित करना है। यदि मस्तिष्क को क्रियाशील बनाकर विचारों को ग्रहण करने में योग देती है। क्रियाशील होने के लिए मस्तिष्क चार सोपानों या अवस्थाओं से होकर गुज़रता है—(1) निरीक्षण (Observation), (2) आशा (Expectation), (3) माँग (Demand), क्रिया (Action)।

हरबर्ट ने इन चार सोपानों के अनुरूप कक्षा-शिक्षण के चार पदों का निर्माण किया—(1) स्पष्टता (Clearness), (2) सम्बन्ध (Association), (3) व्यवस्था (System), (4) विधि (Method)।

(स) हरबर्ट के चार पद : Herbart's Four Steps

हरबर्ट ने कक्षा-शिक्षण के लिए जिन चार पदों का प्रतिपादन किया, उनका अभिप्राय निम्नलिखित था :—

(1) स्पष्टता (Clearness)—बालक के समक्ष तथ्यों या विषय-सामग्री को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करना।

(2) सम्बन्ध (Association)—प्रस्तुत किए जाने वाले तथ्यों या नवीन ज्ञान का बालक के पूर्व ज्ञान से सम्बन्ध स्थापित करना।

(3) व्यवस्था (System)—बालक के समक्ष प्रस्तुत किए जाने वाले तथ्यों को क्रमबद्ध करके व्यवस्थित रूप देना।

(4) विधि (Method)—बालक द्वारा प्राप्त किए गए ज्ञान का व्यावहारिक जीवन में विधिपूर्वक प्रयोग करना।

(द) शिक्षण के पाँच पद : Five Steps in Teaching

हरबर्ट द्वारा प्रतिपादित चार पदों को उसके शिष्यों और अनुयायियों ने अधिक स्पष्ट और महत्त्वपूर्ण बनाने का प्रयास किया। अतः उसके शिष्य ज़िलर (Ziller) ने 'स्पष्टता' (Clearness) को दो भागों में विभाजित कर दिया—(1) प्रस्तावना (Preparation), और (2) प्रस्तुतीकरण (Presentation)। हरबर्ट के एक अन्य शिष्य रीन (Rein) ने इन दोनों पदों के बीच में एक उपपद जोड़ दिया—उद्देश्य-कथन (Statement of Aim)। इस प्रकार अब पहला पद हो गया :—

1. (अ) प्रस्तावना (Preparation or Introduction)
   (ब) उद्देश्य-कथन (Statement of Aim)
2. *प्रस्तुतीकरण (Presentation)*

कुछ समय के बाद हरबर्ट के अनुयायियों ने शेष तीन पदों के नामों में इस प्रकार परिवर्तन कर दिया :—

1. सम्बन्ध (Association) —तुलना (Comparison)
2. व्यवस्था (System) —सामान्यीकरण (Generalization)
3. विधि (Method) —प्रयोग (Application)

इस प्रकार अन्तिम रूप में शिक्षण के ये पद निम्नलिखित हैं :—

1. (अ) प्रस्तावना	1. (a) Preparation.
(ब) उद्देश्य-कथन	(b) Statement of Aim.
2. प्रस्तुतीकरण	2. Presentation.
3. तुलना	3. *Comparison.*
4. सामान्यीकरण	4. Generalization.
5. प्रयोग	5. Application.

पाँच पदों का प्रयोग
Use of the Five Steps

कक्षा-शिक्षण में हरबर्ट के पदों का किस प्रकार प्रयोग किया जाना चाहिए, इस पर हम संक्षेप में प्रकाश डाल रहे हैं :—

1. (अ) *प्रस्तावना या परिचय* : Preparation or Introduction—इस पद में छात्रों को नये पाठ का परिचय दिया जाता है और उनके मस्तिष्क

को नये ज्ञान को ग्रहण करने के लिए तैयार किया जाता है। इस तैयारी में नये ज्ञान का कोई स्थान नहीं होता है। इसके लिए छात्रों द्वारा अर्जित पूर्व ज्ञान का प्रयोग किया जाता है। इस पूर्व ज्ञान पर ही नये ज्ञान को आधारित किया जाता है। अतः जैसा कि बरनार्ड (Barnard) ने लिखा है :—**"इस पद का उद्देश्य, छात्रों को पूर्व-ज्ञान के आधार पर नये ज्ञान को ग्रहण करने के लिए तैयार करना है।"**

स्टर्ट व ओकडन (Sturt & Oakden) के अनुसार, यह पद इस मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त पर आधारित है कि हम नये अनुभवों की व्याख्या पुराने अनुभवों के आधार पर करते हैं। अतः पाठ को उन बातों से प्रारम्भ किया जाता है जिनको छात्र जानते है और उन बातों का सम्बन्ध नई बातो से स्थापित किया जाता है। ह्यू जेज व ह्यू जेज (Hughes & Hughes) के अनुसार, तीन विधियो का प्रयोग करने बालकों को नई बातें या ज्ञान को ग्रहण करने के लिए तैयार किया जा सकता है, (1) पूर्व ज्ञान पर आधारित प्रश्न पूछना, (2) श्यामपट पर आकर्षक शीर्षक लिखना, (3) पिछले पाठ का संक्षिप्त उल्लेख करना। इन विधियो मे प्रश्न पूछने की विधि को सबसे अधिक उपयोगी माना गया है।

पूछे जाने वाले प्रश्नो का उद्देश्य—बालको को पाठ की ओर लाना होना चाहिए। ये प्रश्न क्रमबद्ध होने चाहिए और एक-दूसरे के बाद स्वाभाविक रूप में आने चाहिए। अन्तिम प्रश्न 'समस्यापूर्ण' (Problematic), बालकों की रुचि और जिज्ञासा को जाग्रत करते वाला एव प्रदान किए जाने वाले ज्ञान से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित होना चाहिए, क्योंकि इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करके या न करके ही छात्रों को उद्देश्य-कथन पर लाया जा सकता है। स्टर्ट व ओकडन (Sturt & Oakden) ने प्रस्तावना के प्रश्नों के निम्न उदाहरण दिए है :—

1. मैंने कल तुमको किसके बारे में पढ़ाया था ? —(कोलम्बस)
2. उसने किस देश की खोज की ? —(अमरीका)
3. वह किस देश का निवासी था ? —(स्पेन)
4. स्पेन ने खोजे हुए देश से क्या लाभ उठाया ? —(मौन)

छात्रो का मौन रहना, उनके नये ज्ञान की अज्ञानता का सूचक है। अतः शिक्षक स्वयं प्रश्न का उत्तर देकर दूसरे पद या सोपान पर पहुँच सकता है। यदि मौन के बजाय उत्तर मिल जाता है, तो शिक्षक दूसरे सोपान पर पहुँचने के लिए उसका प्रयोग करता है।

स्टर्ट व ओकडन के प्रश्नो से स्पष्ट हो जाता है कि प्रस्तावना मे अधिक प्रश्न नहीं होने चाहिए। बिल्कुल नए पाठ के लिए 3 से 5 प्रश्न तक पूछे जा सकते हैं। यदि पाठ किसी पढ़ाए हुए पाठ का अगला भाग है, तो रायबर्न (Ryburn) के अनुसार एक या दो प्रश्न ही काफी है। प्रश्न पूछते समय शिक्षक को यह बात ध्यान मे रखनी चाहिए कि प्रस्तावना लम्बी होकर 3 या 4 मिनट से अधिक न ले ले।

1. (ब) उद्देश्य-कथन : Statement of Aim

उद्देश्य-कथन—उपपद है, पर प्रस्तावना और प्रस्तुतीकरण का संयोजक होने के कारण इसका महत्त्व किसी पद से कम नहीं है। यदि प्रस्तावना पाठ-रूपी भवन तक पहुँचने का प्रवेश-मार्ग है, तो उद्देश्य-कथन इस भवन की देहरी है। उस पर पैर रखते ही आप भवन में पहुँच जाते हैं। यहाँ बहुत सावधानी की आवश्यकता है, जिससे कि आप कहीं ठोकर खाकर गिर न पड़ें। दूसरे शब्दों में, *उद्देश्य-कथन पर आपके पाठ की सफलता बहुत-कुछ निर्भर रहती है।*

साधारणतः 'प्रस्तावना' समाप्त होते ही छात्रों को उद्देश्य-कथन का आभास हो जाता है। हम प्रस्तावना में बता चुके है कि उसका अन्तिम प्रश्न दूसरे सोपान पर पहुँचने में सहायता देता है। यदि उस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता है, तो हम कह सकते है—"आज हम यह देखेंगे कि स्पेन ने खोजे हुए देश से क्या लाभ उठाया।" यदि कोई छात्र किसी लाभ का संकेत दे देता है, तो हम कह सकते हैं—"आज हम यह देखेंगे कि स्पेन ने खोजे हुए देश से यह और दूसरे कौन-से लाभ उठाये।" उद्देश्य-कथन को प्रकरण के रूप मे श्यामपट पर लिखना पड़ता है। प्रकरण सरल और *संक्षिप्त होना चाहिए। अतः हम उद्देश्य-कथन को इस प्रकार लिखेंगे—'अमरीका से स्पेन को लाभ।'*

पाठ के उद्देश्य का ज्ञान, शिक्षक और छात्र—दोनो के लिए आवश्यक है। उद्देश्य का ज्ञान ही शिक्षक को शिक्षण-विधि और उपकरणों के चयन में सहायता देकर पाठ को सफल बनाता है। उद्देश्य जानकर ही छात्रों मे रुचि और जिज्ञासा उत्पन्न होती है, और फलस्वरूप उनका ध्यान पाठ पर केन्द्रित होता है। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षक छात्रों को पाठ का उद्देश्य बताए। उसे ऐसा सरल, सुबोध और स्पष्ट भाषा में करना चाहिए, जिससे कि छात्र उद्देश्य को पूर्ण रूप से समझ जाएँ।

2. प्रस्तुतीकरण या विषय-प्रवेश : Presentation—यह पद—उद्देश्य-कथन के बाद आता है और पाठ का मूल भाग होने के कारण पाठ-योजना में इसका प्रमुख *स्थान है। इसी पद में नए ज्ञान को छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है या पाठ* को पढ़ाया जाता है। यह ज्ञान किसी भी दशा में अधिक न्यून या अधिक मात्रा में नहीं होना चाहिए। इसको छात्र की मानसिक प्रगति और समय की अवधि को ध्यान में रखकर निर्धारित करना चाहिए।

यदि पाठ में अधिक विषय-सामग्री है या यदि उसमें विभिन्न विचार और तथ्य है, तो उसे खण्डों में बाँट लेना चाहिए। *खण्डों की संख्या दो या तीन से अधिक नहीं होनी चाहिए, अन्यथा* पाठ लम्बा हो जायगा। ये खण्ड तार्किक क्रम में होने चाहिए, और इस प्रकार व्यवस्थित किए जाने चाहिए कि अगला खण्ड पिछले पर आधारित हो, और उससे स्वाभाविक रूप से निकलता हुआ जान पड़े। प्रत्येक खण्ड स्वयं में एक पूर्ण इकाई होना चाहिए।

प्रत्येक खंड को आगे बढ़ाने के लिए और छात्रों की बोध-शक्ति एवं विचार-शक्ति का समुचित विकास करने के लिए वर्णन, विवरण, व्याख्या, तुलना आदि का प्रयोग करना चाहिए। खण्ड की विषय-सामग्री को स्पष्ट करने, प्रमाण को पुष्ट करने, तर्क और कल्पना को विकसित करने, निजी प्रयास को प्रोत्साहित करने, रुचि और जिज्ञासा को जाग्रत करने; प्रेरणा, आत्मविश्वास और आनन्द को उत्तेजित करने एवं ध्यान को केन्द्रित करने के लिए श्यामपट, नक्शे, मॉडल, चार्ट आदि सहायक सामग्री का विवेकपूर्ण प्रयोग करना चाहिए। सामग्री का प्रयोग करते समय उद्देश्य यह होना चाहिए कि छात्र अपनी अधिक से अधिक इन्द्रियों का प्रयोग करें, जिससे कि वे अर्जित ज्ञान को सरलता से स्थायी रूप प्रदान कर सकें।

खण्डों या विषय-सामग्री को पढ़ाते समय शिक्षक को अपनी ओर से कम-से-कम बताकर छात्रों की मानसिक क्रिया को उत्तेजित करने का प्रयास करना चाहिए, जिससे कि वे स्वयं सीखने के लिए प्रेरित हों। शिक्षक को हर खण्ड के बाद कुछ देर रुकना चाहिए और प्रश्न पूछकर यह परीक्षा कर लेनी चाहिए कि छात्र नई बात को समझ गए हैं या नहीं। सब खण्डों को समाप्त कर चुकने के बाद शिक्षक को पूरी विषय-सामग्री पर आधारित कुछ प्रश्न पूछने चाहिए, जिससे कि उस ज्ञान का—जिसे सुविधा के लिए खण्डों में बाँट दिया गया था, पूर्ण इकाई के रूप में उनके समक्ष आ जाय।

3. तुलना : **Comparison**—इस पद को अब अलग न मानकर 'प्रस्तुतीकरण' में सम्मिलित कर दिया गया है। इसका प्रयोग केवल उन छात्रों के लिए करना चाहिए, जो पर्याप्त ज्ञान अर्जित कर चुके हों। अतः अल्प आयु के बालकों के लिए इसका प्रयोग अनुचित है। तुलना का प्रयोग भूगोल, विज्ञान, गणित आदि के शिक्षण में विशेष रूप से लाभप्रद है।

तुलना की आवश्यकता पाठ्य-विषय को अधिक स्पष्ट करने के लिए पड़ती है। अतः शिक्षक को पाठ्य-विषय में से कुछ तथ्य, छात्रों के समक्ष रखने चाहिए और उन्हें पूर्वार्जित तथ्यों से उनकी तुलना करने का अवसर देना चाहिए। इन तथ्यों की तुलना करके या उनमें असमानता बताकर छात्रों को नया ज्ञान ग्रहण करने में सरलता हो जाती है और वे किसी निष्कर्ष पर पहुँच जाते हैं।

तुलना का अभिप्राय है—दो तथ्यों, प्रयोगों, उदाहरणों आदि में सम्बन्ध व्यक्त करना। हरबर्ट का 'तुलना' का समकक्ष पद 'सम्बन्ध' है। उसने इस बात पर बल दिया कि नये तथ्यों का पुराने तथ्यों से सम्बन्ध स्थापित करना अति आवश्यक है। उसने इस बात पर बल क्यों दिया—इसका कारण बताते हुए स्टर्ट व ओकडन ने लिखा है :—**"हरबर्ट ने बताया कि तथ्यों को केवल परस्पर सम्बन्धित करके ही याद रखा जा सकता है। नया असम्बन्धित तथ्य प्रायः उसी क्षण विस्मृत हो जाता है, जिस क्षण याद किया जाता है।"**

"Herbart pointed out that facts are only learnt in their connections. A new disconnected fact is gone almost as soon as learnt."—*Sturt & Oakden : Matter & Method in Education*, p. 145.

4. सामान्यीकरण या नियम-निरूपण : Generalization—इस पद का प्रयोजन बताते हुए स्टर्ट व ओकडन ने लिखा है :—**"इस पद में सम्पूर्ण पाठ की सामग्री संकलित की जाती है—सारांश तैयार किया जाता है, सामान्य नियम निर्धारित किया जाता है या किसी रूप में पुनरावृत्ति की जाती है।"**

सीखने के तुरन्त बाद विस्मृति की अनुपात-मात्रा सबसे अधिक होती है। यह सीखने का मनोवैज्ञानिक नियम है। पढ़ाये गए पाठ मे साधारणतः तथ्यो की संख्या इतनी अधिक होती है कि छात्रों को उनमें से अनेक को भूल जाना स्वाभाविक है। पर यदि पाठ का निष्कर्ष या सामान्य सिद्धान्त एक लघु सूत्र के रूप मे छात्र को बता दिया जाय, जो उनको पाठ का साराश स्मरण रहता है और प्रदत्त ज्ञान पर उनका अधिकार हो जाता है। अतः इस पद का उद्देश्य है—नियम, निष्कर्ष, परिणाम या सिद्धान्त का निर्धारण।

शिक्षक का प्रयास यह होना चाहिए कि वह स्वयं छात्रों से नियम निकलवाये क्योंकि जो नियम वे अपनी बुद्धि और प्रयास से निकालते है, वह व्यक्तिगत अनुभव के रूप में उनसे ज्ञान-कोष मे चिरकाल के लिए सचित हो जाता है। यदि छात्र विषय-सामग्री को भली प्रकार समझ गए है तो उन्हें नियम या निष्कर्ष निकालने में कोई कठिनाई नही होगी। यदि होती है, तो शिक्षक को मूल पाठ को संक्षिप्त रूप में फिर बताकर उन्हें नियम निकालने के लिए दूसरा अवसर देना चाहिए। उसे किसी भी दशा में, सामान्य सिद्धान्त को स्वयं नही बताना चाहिए, क्योकि यह कार्य छात्रों द्वारा ही सम्पन्न किया जाना चाहिए। पर वह इतना अवश्य कर सकता है कि यदि नियम अपूर्ण या कुछ गलत है, तो उसे ठीक प्रकार से बता दे।

विज्ञान, गणित, व्याकरण आदि के पाठों मे नियम निकलवाना सम्भव होता है, पर भाषा, भूगोल, इतिहास आदि के पाठो में नही। अतः जैसा कि **स्टर्ट व ओकडन** ने लिखा है—नियम का स्थान साराश या पुनरावृत्ति को दिया जाना चाहिए। छात्रों द्वारा पाठ के सारांश को बार-बार दोहराया जाना चाहिए। पुनरावृत्ति प्रश्नों की सहायता से की जा सकती है दोनों विधियों का उद्देश्य एक ही है—प्रदत्त ज्ञान को छात्रों के मस्तिष्क मे स्थायी बनाना।

नियम निकलवाने, पाठ के साराश को दोहराने और पुनरावृत्ति के प्रश्न पूछने मे 4-मिनट से अधिक नहीं लगाने चाहिए। *प्रश्नों की संख्या 4 से 6 तक पर्याप्त* होती है। प्रश्न पूछने और पुनरावृत्ति करने मे चित्र, मॉडल आदि की सहायता ली जा सकती है।

5. प्रयोग : Application

अर्जित ज्ञान पर पूर्ण अधिकार होने *का सबसे प्रबल प्रमाण यह है कि आवश्य-*

कता और अवसर पर उसका प्रयोग किया जा सके। यदि ऐसा नहीं किया जा सकता है, तो उसका कोई व्यावहारिक मूल्य नहीं है। हरबर्ट का अन्तिम पद सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण इसीलिए माना गया है कि यह छात्रों को नव अर्जित ज्ञान को प्रयोग करने का अवसर देता है। छात्र इस ज्ञान का प्रयोग करके न केवल इसे स्थायी बनाते हैं, वरन् जिस निष्कर्ष या सामान्य नियम पर वे पहुँचे है, उसकी यथार्थता की परीक्षा भी कर लेते हैं। प्रयोग में उनकी सफलता या असफलता अध्यापक के शिक्षण की सफलता या असफलता की कसौटी है।

शिक्षक विभिन्न विधियो को अपनाकर छात्रों को अपने अर्जित ज्ञान का प्रयोग करने का अवसर देता है। गणित, विज्ञान, व्याकरण, अनुवाद आदि में वह उनको करने के लिए 'कक्षा-कार्य (Class Work) देता है। अन्य विषयो में वह प्रयोग को 'गृह-कार्य' (Home Work) के रूप में देकर संतोष कर लेता है।

हरबर्ट की प्रणाली की आलोचना
Criticism of Herbartian Method

1. यह प्रणाली अमनोवैज्ञानिक है, क्योंकि यह छात्रों की रुचियों, रुझानो और मानसिक स्तरों की ओर कोई विशेष ध्यान नही देती है।
2. यह प्रणाली, छात्रो की तर्क-शक्ति और विचार-शक्ति का विकास न करके केवल उनकी बोध-शक्ति का विकास करती है।
3. यह प्रणाली तार्किक और उद्घाटनात्मक (Logical & Expositional) होने के कारण छात्रों को निष्क्रिय बनाती है।—(A. H. T. Glover)
4. यह प्रणाली विभिन्न विषयों में सामजस्य स्थापित न कर सकने के कारण छात्रो के विभिन्न विषयो के ज्ञान को एक-दूसरे से पृथक् रखती है। फलस्वरूप उनके मानसिक जीवन में एकता नही स्थापित हो पाती है।
5. यह प्रणाली ज्ञान के प्रस्तुतीकरण पर तो बल देती है, पर इस बात की ओर ध्यान नही देती हैं कि छात्रों में उस ज्ञान को ग्रहण करने की क्षमता है या नही।
6. यह प्रणाली सफलतापूर्वक ज्ञान प्रदान करने के कारण छात्रो को कुशल सेक्रेटरी या एकाउन्टेन्ट तो बना सकती है, पर उनमें विचार और निर्णय की स्वतन्त्रता का विकास न कर सकने के कारण उनको कुशल वैज्ञानिक या राजनीतिज्ञ नही बना सकती है। —(A. E. Griffin)
7. यह प्रणाली इस मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त पर आधारित है कि मस्तिष्क का विकास किसी दूसरे व्यक्ति के द्वारा प्रदान किए हुए विचारों की पारस्परिक प्रतिक्रिया से होता है। यह सिद्धान्त आज के युग में मान्य नहीं है। —(James Welton)
8. यह प्रणाली 'प्रस्तुतीकरण' को प्रधानता देने के कारण शिक्षक को प्रधान स्थान और छात्रों को मौन श्रोता बनाकर गौण स्थान देती है।

9. इस प्रणाली का प्रयोग केवल ज्ञान के पाठों के लिए किया जा सकता है, कौशल और रसानुभूति के पाठों के लिए नही।
10. इस प्रणाली की नियमबद्धता शिक्षक को बन्धन में बाँध देती है, जिससे उसकी मौलिकता और स्वतन्त्रता नष्ट हो जाती है।
11. इस प्रणाली का प्रयोग करके शिक्षक अधिक सक्रिय और छात्र अधिक निष्क्रिय हो जाते हैं।
12. इस प्रणाली में शिक्षक की प्रधानता होने के कारण छात्रों को 'स्वशिक्षण' (Self-Teaching) और 'करके सीखने' (Learning by Doing) की प्रेरणा नही मिलती है।
13. इस प्रणाली में लचीलेपन के बजाय कठोरता और समरूपता (Rigidity & Uniformity) है, क्योंकि यह केवल एक निश्चित विधि के अनुसार शिक्षण पर बल देती है। —(Sturt & Oakden)
14. इस प्रणाली में 'तुलना' और 'सामान्यीकरण' को 'प्रस्तुतीकरण' के बाद स्थान दिया गया है, जो सर्वथा अनुचित है। वस्तुतः तुलना और सामान्यीकरण का कार्य उसी समय किया जाना चाहिए, जिस समय ज्ञान प्रस्तुत किया जा रहा है। —(Welton)
15. इस प्रणाली के पदों का प्रयोग सीखने और सिखाने की प्रक्रियाओं के लिए अनुपयुक्त है, क्योंकि ये पद इन दोनों प्रक्रियाओं में से किसी की भी सामान्य विशेषताओं को व्यक्त नही करते हैं। —(Welton)

ग्लोवर की योजना
Glover's Scheme

हरबर्ट की 'पंचपद प्रणाली' का मुख्य दोष यह है कि वह छात्रों को निष्क्रिय बनाती है। अतः ग्लोवर (A. H. T. Glover) ने अपनी पुस्तक 'New Teaching For a New Age' में एक नवीन योजना प्रतिपादित की है, जिसमें छात्र शिक्षण में सक्रिय भाग लेते हैं। इस योजना में चार पद (Steps) हैं :—

1. प्रश्न पूछना (Questioning)
2. वाद-विवाद (Discussion)
3. खोज या अनुसंधान (Investigation)
4. अभिव्यक्ति या छात्र-कार्य (Expression or Pupil Activity)

(1) प्रश्न पूछना (Questioning)—पाठ, प्रश्न पूछकर प्रारम्भ किया जाता है। शिक्षक किसी भी प्रकार के प्रश्न पूछ सकता है—प्रस्तावनात्मक, विकासात्मक या पुनरावृत्यात्मक (Introductory, Developing or Recapitulatory)। छात्रों को भी प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इन प्रश्नों के तीन उद्देश्य हैं—(i) छात्रों के पूर्व ज्ञान का पता लगाना, (ii) उन्हें नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए उत्सुक करना, (iii) उन्हें पाठ में सक्रिय भाग लेने के लिए तैयार करना।

(2) वाद-विवाद (Discussion)—इस पद में शिक्षक छात्रों के समक्ष पाठ के प्रमुख तथ्यों को प्रस्तुत करता है और उन्हें उन पर विचार-विमर्श या वाद-विवाद करने के लिए प्रोत्साहित करता है। वह आवश्यकतानुसार कक्षा के छात्रों को दो या अधिक समूहों में विभाजित कर देता है और प्रत्येक समूह के छात्रों को अपने विचारों को स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त करने का अवसर देता है। शिक्षक वाद-विवाद के महत्त्वपूर्ण तथ्यों को एक क्रम में नियोजित करता है और छात्रों को किसी नियम, निष्कर्ष, सिद्धान्त, समस्या या विचार पर पहुँचने के लिए अग्रसर करता है।

(3) अनुसंधान (Investigation)—छात्र अपने वाद-विवाद के फलस्वरूप जिस नियम या निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, उसका पुष्टीकरण या स्पष्टीकरण करने के लिए शिक्षक उनको अनुसंधान करने का अवसर देता है। छात्र इस कार्य को वैयक्तिक या सामूहिक रूप से करते हैं।

(4) अभिव्यक्ति (Expression)—छात्र अनुसंधान के फलस्वरूप जिस निश्चित ज्ञान पर पहुँचते हैं, उसे वे विभिन्न क्रियाओं द्वारा व्यक्त करते हैं। ये क्रियाएँ चार प्रकार की हैं :—

(i) निष्क्रिय क्रियाएँ (Passive Activites)—विभिन्न उपकरणों का प्रयोग करके छात्रों को अर्जित ज्ञान या सिद्धान्त को सुनने या देखने का अवसर देना।

(ii) सक्रिय क्रियाएँ (Active Activities)—इनके अन्तर्गत हाथ का काम, लड़की का काम, डिजाइन बनाना, ड्राइंग, सिलाई आदि है।

(iii) कलात्मक या मनोरंजन क्रियाएँ (Artistic or Recreational Activities)—इनमें नृत्य, संगीत, खेल, व्यायाम, अभिनय आदि को स्थान दिया गया है।

(iv) प्रबन्धात्मक क्रियाएँ (Organizational Activities)—इनमें समितियों और वैयक्तिक या सामूहिक संगठनों का निर्माण है।

उपसंहार

यद्यपि हरबर्ट की प्रणाली में गुण की अपेक्षा दोष अधिक हैं, फिर भी इसने शिक्षण के सिद्धान्त और प्रयोग को अत्यधिक प्रभावित किया। इसने कक्षा-शिक्षण को एक नई दिशा देकर उसे स्थायी बनाने का प्रयास किया। इसीलिए इसने अपने समय की सब प्रणालियों में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया और 100 वर्ष से अधिक बीत जाने पर भी इसका प्रयोग प्रचलित है। पर आधुनिक मनोविज्ञान यह कहकर इसकी निन्दा कर रहा है कि इसके पद शिक्षक और छात्र को कठोर बन्धन में बाँधकर शिक्षण को यंत्रवत् और निष्प्राण कर देते हैं। किन्तु इस बन्धन में बँधने के लिए कोई दैवी या अटल आदेश तो है नहीं। इसीलिए कुशल और कर्मठ शिक्षक इस प्रणाली को केवल अपने पथ-प्रदर्शक के रूप में मानते हैं। वे आवश्यकतानुसार इसके कुछ या सब पदों को स्वीकार करके या रूपान्तरित करके शिक्षण का कार्य करते हैं। वे रायबर्न के इस

परामर्श को कभी नहीं भूल सकते—"इन पदों को हमारा सेवक होना चाहिए, न कि हमारा स्वामी। वे इसलिए हैं कि हम कक्षाओं, विषयों और अन्य बातों के कारण बदलने वाली परिस्थितियों को ध्यान में रखकर उनका प्रयोग करें।"

"These steps must be our servants, not our masters. They are for us to use according to circumstances which vary with classes, subjects and other things."

—**W. M. Ryburn** : *op. cit.*, p. 32.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe briefly the Herbartian steps of a lesson, giving the value of each.

पाठ में प्रयोग किये जाने वाले हरबर्ट के पदों का संक्षेप में वर्णन कीजिये और प्रत्येक का महत्त्व बताइये।

2. Discuss briefly the steps of Glover's scheme.

ग्लोवर की योजना के पदों की संक्षेप में विवेचना कीजिये।

खण्ड आठ

पाठ्यक्रम का निर्माण
CONSTRUCTION OF CURRICULUM

"विभिन्न अध्ययन, संगठित क्रियाएँ, पाठ्यक्रम, अतिरिक्त पाठ्य-क्रम क्रियाएँ, विद्यालय का सम्पूर्ण सामाजिक जीवन और वातावरण—पाठ्यक्रम में स्थान प्राप्त करते हैं। प्रत्येक को शिक्षा के अन्तिम लक्ष्यों की प्राप्ति में अपना योगदान देने के लिए संगठित किया जाता है।"

—Henry J. Otto.

- पाठ्यक्रम का अर्थ व निर्माण के सिद्धान्त
  Meaning & Principles of Curriculum Construction
- पाठ्यक्रम के प्रकार
  Types of Curriculum
- एकीकृत पाठ्यक्रम
  Integrated Curriculum

46

पाठ्यक्रम का अर्थ व निर्माण के सिद्धान्त
MEANING & PRINCIPLES OF CURRICULUM CONSTRUCTION

"पाठ्यक्रम को क्रियाओं के उन विभिन्न रूपों में देखा जाना चाहिए, जो मानव-आत्मा के भव्य-प्रदर्शन हैं, और जिनका विशाल संसार के लिए सबसे अधिक और सबसे स्थायी महत्त्व है।"

"The curriculum should be viewed as various forms of activity that are grand expression of the human spirit and that are of the greatest and most permanent significance to the wide world."

—*T. P. Nunn.*

पाठ्यक्रम का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Curriculum

(अ) **'Curriculum' शब्द की उत्पत्ति : Derivation of the Word, 'Curriculum'**—'Curriculum' शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के एक शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है—'Race-course' (दौड़ का मैदान)। **"यह दौड़ का मैदान है, जिस पर व्यक्ति लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए दौड़ता है।"** ("It is a runway, a course which one runs to reach a goal.")

हरवार्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर रॉबर्ट यूलिच (Robert Ulich) ने पाठ्यक्रम के इस अर्थ को मान्यता दी है। कारण यह है कि छात्र दौड़ते रहते हैं; अर्थात् पाठ्यक्रम का अनुसरण करते हैं, पर वे अपने लक्ष्य को शायद ही प्राप्त कर पाते हैं।

(ब) **पाठ्यक्रम का अर्थ : Meaning of Curriculum**—पाठ्यक्रम के अर्थ के

बारे में दो विचारधाराएँ हैं—प्राचीन और आधुनिक। प्राचीन धारणा के अनुसार—पाठ्यक्रम में विभिन्न प्रकार के ज्ञानों और कुशलताओं का संग्रह होता है, जो बालक के दृष्टिकोण से नहीं, वरन् किसी शिक्षा-विशेषज्ञ के दृष्टिकोण से होता है। आधुनिक धारणा के अनुसार, पाठ्यक्रम—अनुभवों, क्रियाओं या जीवन की वास्तविक परिस्थितियों का संचय है, जिनमें बालक भाग लेता है और जिनका वह सामना करता है। इस धारणा के अनुसार हम कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम—पाठ्य-पुस्तकों, विषय-वस्तु और अध्ययन के कोर्स से अधिक होता है।

(स) पाठ्यक्रम की परिभाषा : Definition of Curriculum—हम पाठ्यक्रम के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ परिभाषाएँ दे रहे हैं :—

1. फ्रॉबेल :—"पाठ्यक्रम को मानव-जाति के सम्पूर्ण ज्ञान और अनुभव का सार समझा जाना चाहिए।"

"Curriculum should be conceived as an epitome of the rounded whole of the knowledge and experience of the human race."—**Froebel.**

2. कनिंघम :—"पाठ्यक्रम शिक्षक के हाथ में एक साधन है, जिससे वह अपने विद्यालय में, अपने उद्देश्य के अनुसार, अपने छात्र को कोई भी रूप दे सकता है।"

"Curriculum is a tool in the hands of the teacher to mould his pupil according to his objective in his school."—**Cunningham.**

3. "माध्यमिक शिक्षा-आयोग" :—"पाठ्यक्रम का अर्थ केवल उन सैद्धान्तिक विषयों से नहीं है, जो विद्यालय में परम्परागत रूप से पढ़ाए जाते हैं, वरन् इसमें *अनुभवों की वह सम्पूर्णता भी सम्मिलित होती है, जिनको कि राष्ट्र—विद्यालय, कक्षा,* **पुस्तकालय, प्रयोगशाला, वर्कशॉप और खेल के मैदान तथा शिक्षकों और छात्रों के अगणित अनौपचारिक सम्पर्कों से प्राप्त करता है। इस प्रकार, विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठ्यक्रम हो जाता है, जो छात्रों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर सकता है और उनके सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास में सहायता देता है।"**

प्रचलित पाठ्यक्रम के दोष
Defects of Existing Curriculum

1. यह पुस्तकीय ज्ञान पर बहुत अधिक बल देता है।
2. इस पर परीक्षाओं का पूर्ण अधिकार और नियन्त्रण है।
3. इसका दृष्टिकोण संकुचित है।
4. इसका निर्माण विशेष रूप से शिक्षा-संस्थाओं में प्रवेश पाने के लिए किया जाता है।

प्रयोजनवाद किसी निश्चित उद्देश्य में विश्वास नहीं करता। वह यह मानकर चलता है कि शिक्षा के उद्देश्य तो रास्ते में बिखरे हैं। रास्ता तय करते चले जाओ। हर कदम पर शिक्षा का कोई न कोई उद्देश्य प्राप्त होता जायेगा।

प्रयोजनवाद शब्द अंग्रेजी में Pragmatism कहलाता है। यह एक यूनानी शब्द है और इसका अर्थ क्रिया (Action) है। प्रयोजनवाद का मूल क्रिया है और क्रिया से उत्पन्न अनुभव हैं। श्रीयुत गेद एवं शर्मा के अनुसार—'मानव के अनुभव को जो सत्य सिद्ध कर दिया, वह सत्य है, जो असत्य, वह असत्य है। मानव का अनुभव ही भला या बुरा, संगत या असंगत, न्याय या अन्याय, गुण या अवगुण, इन सबका सिद्धिकर्त्ता है।'

प्रयोगवाद के प्रवर्तकों में विलियम जेम्स तथा जॉन डीवी रहे हैं। इन्होंने समय व गति के अनुसार शिक्षा को बदलने पर जोर दिया है। इसी कारण विश्व में अनेक प्रभावशाली परिवर्तन हुए। इस विचार के विकास में शिलर (Schiller) का भी योग रहा है। इस विचार को आधार प्रदान करते हुए लॉक ने कहा है—'हमें सब वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक नहीं है जितना उनका, जिनका सम्बन्ध हमारे जीवन से है।

प्रकृतिवाद में उपयोगिता जोड़ देने से प्रयोजनवाद का जन्म हो जाता है। ब्राइटमैन के अनुसार—"प्रयोजनवाद सत्य का मापदण्ड है। मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि यह वह सिद्धान्त है जो समस्त विचार-प्रक्रिया के सत्य की जांच उसके व्यावहारिक परिणामों से करता है। यदि व्यावहारिक परिणाम संतोषजनक हैं, तो विचार प्रक्रिया को सत्य कहा जा सकता है।'

प्रयोजनवाद की परिभाषा

(Definition of Pragmatism) :

(१) विलियम जेम्स—"प्रयोजनवाद मस्तिष्क का स्वभाव और दृष्टिकोण है। यह सत्य और विचारों की प्रकृति का सिद्धान्त है। यह वास्तविकता का भी सिद्धान्त है।"

(२) प्रैट—"प्रयोजनवाद हमें अर्थ का सिद्धान्त, सत्य का सिद्धान्त, ज्ञान का सिद्धान्त और वास्तविकता का सिद्धान्त देता है।"

(३) हैंडरसन—"प्रयोजनवाद के अनुसार यदि कोई बात अनुभव में कार्य करती है तो वह उसको सत्य बनाती है, अर्थात् उसकी कार्य प्रणाली उसे सत्य का निर्माण मनुष्य करता है। किसी बात को चिरन्तर सत्य नहीं कहा जाता। सत्य परिणामों के अनुसार बदलता रहता है। केवल यही बात सत्य है, इसलिए सत्य भी बदलता रहता है जो बात आज सत्य है, वह कल असत्य हो सकती है।"

प्रयोजनवाद के प्रकार

(Forms of Pragmatism) :

इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि इसका आधार उपयोगिता है। यह तो सत्य को भी गतिशील मानता है। यह मनुष्य और प्रकृति की अविभाज्यता पर

विशेष ध्यान देता है प्रयोजनवाद मानता है कि मनुष्य ने अपने समाज का निर्माण अपने जीवन की सार्थकता तथा उपयोगिता पर आधारित करके बनाया है। प्रयोजनवाद के चार प्रमुख रूप हैं—

(१) मानवतावादी प्रयोजनवाद—प्रयोजनवाद के इस रूप के निर्माता व समर्थक शीलर एवं विलियम जेम्स हैं। मानव प्रकृति पर उनका अधिक ध्यान है।

(२) प्रयोगवाद प्रयोजनवाद—इस रूप को मानने में प्रयोगवादी विश्वास करते हैं। उनका कहना है—जिस बात को प्रयोग से सत्य सिद्ध कर दिया जाये, वही सत्य है या जो तथ्य ठीक कार्य करते हैं, वे सत्य हैं।

(३) नामरूपवादी (Mominalistic) प्रयोजनवाद—इसमें प्रयोग करने वाला आशावादी होता है। प्रत्येक विचार कुछ सम्भव परिणामों की ओर संकेत करता है। इसके परिणाम वास्तविक एवं वस्तुपरक होते हैं।

(४) जीव-विज्ञानवाद प्रयोजनवाद—जॉन डीवी ने इस रूप के बारे में कहा है—इस प्रयोजनवाद का परीक्षण मानव को अपने वातावरण से अनुकूलन करने की विचार प्रक्रिया से की जाती है।

प्रयोजनवाद की विशेषतायें
(Characteristics of Pragmatism) :

प्रयोजनवाद विश्व के शिक्षा दर्शन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसकी विशेषतायें निम्नलिखित हैं—

(१) जीवन के आदर्श देश, काल और परिस्थिति के साथ बदलते रहते हैं।
(२) सत्य की प्राप्ति, ज्ञान, अन्वेषण एवं परीक्षण के द्वारा ही सम्भव है।
(३) व्यावहारिक सिद्धान्त ही सत्य है।
(४) मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और इसे समाज के लिए उपयोगी होना चाहिए।
(५) मानव अनुभवों का संगठन ही दर्शन का मुख्य कार्य है।
(६) मनुष्य मनोदैहिक प्राणी है।
(७) सिद्धान्त कसौटी उपयोगिता है।
(८) सत्य मानव निर्मित है। जीवन के मूल्य तथा सत्य बदलते रहते हैं।

प्रयोजनवाद और शिक्षा
(Pragmatism and Education) :

प्रयोजनवादियों के अनुसार शिक्षा का कार्य समाज में वातावरण का निर्माण करना है। लोकतान्त्रिक पद्धति का विकास करना है। ब्रुबेकर के अनुसार—"प्रयोजनवादी सामाजिक मूल्य को बहुत अधिक महत्व देता है। समाज सम्मिलित रूप से प्राप्त अनुभव का ढंग है। सामाजिक कार्यों में भाग लेना सबसे महत्वपूर्ण ढंगों में से एक है, जिसके द्वारा शिक्षा प्राप्त होती है।"

ने कहा है—शिक्षा विकास की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने भौतिक, सामाजिक, अध्यात्मिक वातावरण में विभिन्न प्रकार से अनुकूलित करता है। वह जीवन है, जो वास्तव में स्वयं को ही शिक्षित करता है। एक व्यक्ति अपने व्यवसाय, गृह जीवन, मित्रता, विवाह, पितृत्व, मनोरंजन, यात्रा आदि से कुछ न कुछ सीखता ही है।'

व्यापक शिक्षा जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त चलती रहती है। बालक जन्मते ही माँ से, पिता से, कुछ बड़े होने पर समुदाय से कुछ न कुछ सीखता है। जीवन का हर क्षण व्यक्ति को कुछ न कुछ अवश्य सिखाता रहता है। लॉज के अनुसार—"व्यापक अर्थों में अनुभव ही शिक्षा प्रद है। मच्छर का काटना, तरबूज का स्वाद, प्रेम करने का अनुभव, वायुयान की सवारी, नौका का तूफान में घिरना, आदि ऐसे अनुभव हैं, जो हमें सीधे ही प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार बालक, माता-पिता को सिखाता है, शिष्य गुरु को सिखाता है।'''विस्तृत अर्थों में जीवन ही शिक्षा है और शिक्षा ही जीवन है। जो भी हमारे दृष्टिकोण को विस्तृत करे, हमारी सूझ को ग्रहण करे, हमारी प्रतिक्रियाओं को परिष्कृत करे। हमारे विचार और भावों को उत्तेजित करे, वहीं हमें शिक्षित करते हैं।"

डम्बिल ने भी इसी प्रकार के विचार प्रकट किये हैं—"शिक्षा के व्यापक अर्थ में वे सभी प्रभाव आते हैं जो व्यक्ति उनके जन्म से लेकर मृत्यु तक प्रभावित करते हैं"—

(२) शिक्षा का संकुचित (Narrow) अर्थ—शिक्षा के संकुचित अर्थ से अभिप्राय: परम्परागत लिखना, पढ़ना और गणित एवं अन्य प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने से है। इसके अन्तर्गत बालक किसी पाठशाला मे कुछ वर्षों तक कुछ अध्यापको के सान्निध्य में किन्ही विशिष्ट तत्वों का प्रशिक्षण प्राप्त करता है। अत: इस प्रकार की शिक्षा को शिक्षा (Education) न कहकर निर्देश (Instruction) कहकर पुकारा जाता है। मेकेंजी के अनुसार—संकुचित अर्थ में शिक्षा का तात्पर्य अपनी शक्तियों के विकास के लिए चेतना पूर्वक किए गए प्रयास से है।

विद्यालय मे प्राप्त किए हुए निर्देश एवं सीखे हुए व्यवहार हमारी सम्पूर्ण शिक्षा नहीं है। वे तो शिक्षा के अंग हैं। उनसे हमारा जीवन पर्यन्त कार्य तो नहीं चलता, परन्तु जीवन के लिये वह आवश्यक है। विद्यालयों मे बालक को कतिपय विशिष्ट व्यवहारों का प्रशिक्षण प्राप्त होता है।

(३) शिक्षा का वास्तविक अर्थ (The Real Meaning of Education)—वास्तविकता यह है कि शिक्षा की उपादेयता न तो उसके व्यापक अर्थों मे है और न संकुचित में ही। लोगों का यह भ्रम है कि विद्यालयों में ही शिक्षा दी जाती है। वास्तविकता यह है कि शिक्षा का अर्थ बालक की मूल प्रवृत्तियों के विकास एवं सहज प्रवृत्तियों के निर्माण से है। बाहरी ज्ञान की अपेक्षा आन्तरिक विकास कार्य आवश्यक है। यह एक गतिशील प्रक्रिया है, जिसमें बालक, शिक्षक एवं

पाठ्यक्रम की त्रिवेणी है । शिक्षा से चाहे वह विद्यालय में हो या किसी अन्य साधन से बालक का वैयक्तिक तथा सामाजिक विकास होता है ।

अतः शिक्षा व्यक्ति के पूर्ण विकास का माध्यम है । ये उसे विभिन्न परिस्थितियों में सामंजस्य करने की प्रेरणा देता है।

शिक्षा की प्रक्रिया
(Process of Education) :

विद्वानों ने शिक्षा को एक प्रक्रिया माना है । यह जीवन पर्यन्त चलते रहने वाली प्रक्रिया है जिसका आदि उस समय होता है जब बालक गर्भ में स्थित होता है और अन्त तब होता है जब वह मर जाता है । परन्तु संकुचित अथवा औपचारिक (Formal) अर्थों में एडम्स (Adams) ने शिक्षा को द्विमुखी प्रक्रिया बताया । उसके अनुसार–'शिक्षा द्विमुखी प्रक्रिया है ।' (Education is a bi-polar process —Adams.)

रॉस (Ross) ने भी एडम्स का समर्थन किया है और कहा है—चुम्बक की तरह शिक्षा के भी दो ध्रुव होने चाहिएँ । यह द्विमुखी प्रक्रिया है ।' (Like a magnet education must have two poles, it is a bi-polar process —Ross)

इसका अर्थ यह हुआ कि शिक्षा की इस प्रक्रिया में शिक्षक तथा शिष्य को एक दूसरे की पूरी जानकारी होनी चाहिए । शिक्षा में सदैव चेतना की आवश्यकता होती है । इसलिए केवल शिक्षक को ही शिक्षा की प्रक्रिया नही मान सकते ।

परन्तु इस विचार को आगे बढाने वाले जॉन डीवी (Johan Dewey) ने शिक्षा को त्रिमुखी (Tripolar) प्रक्रिया बताया है । डीवी के अनुसार—शिक्षा में शिक्षक तथा शिष्य के साथ-साथ सामाजिक शक्तियों को भी शिक्षा की तीसरी प्रक्रिया माना है । अतः सामाजिक शक्तियों के रूप में शिक्षक तथा शिष्य के मध्य पाठ्यक्रम आ जाता है, तब तक शिक्षक एव शिष्य, दोनों ही व्यर्थ बैठे रहेंगे ।

अतः शिक्षा की प्रक्रिया में त्रिमुखी प्रक्रिया को अधिक बल दिया जाता है और यह शिक्षा शास्त्रियों द्वारा मान्य भी है ।

(२) शिक्षा का स्वरुप
(Forms of Education)

प्रश्न ६—शिक्षा के स्वरूप की व्याख्या कर तथा उसके आधुनिक रूप पर विचार कीजिये ?

Q. 6. Explain the forms of education and state your views on modern form of it?

शिक्षा के बारे में विद्वानो का सदैव यही विचार रहा है कि यह जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है और बालक जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक सीखता

प्रकृतिवादियों का विश्वास है कि बालक गलती करेगा तो प्रकृति उसे दण्ड देगी। रूसो ने कहा है कि बालक को खिड़की बन्द करने के लिए मत कहो। जब उसे जुकाम होगा तो वह खुद ही बन्द कर देगा। स्पेंसर ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा है—'जब एक बालक गिरता है या मेज पर सिर पटकता है तो उसे दर्द का अनुभव होता है। इस दर्द का स्मरण उसे सावधान कर देता है। दर्द के बार-बार होने वाले अनुभवों से वह शासित होने लगता है।"

मूल्यांकन
(Evaluation) :

प्रकृतिवाद का मूल्याकन करने के लिए आवश्यक है कि हम उसके गुण-दोषों का विवेचन करें।

गुण	दोष
१. प्रकृतिवाद ने शिक्षा और ज्ञान के सभी पहलुओं को प्रभावित किया है।	१. प्रकृतिवादी शिक्षा का उद्देश्य तात्कालिक है।
२. शिक्षा मनोविज्ञान एवं समाज शास्त्र का आधार प्रकृतिवाद है।	२. यह वर्तमान में विश्वास रखता है, भविष्य में नहीं।
३. प्रकृतिवाद के निरीक्षण एवं वस्तुपरक स्थिति पर जोर दिया है।	३. उपयोगिता पर बल देता है।
४. वैज्ञानिक अध्ययन को आधार माना है।	४. आध्यात्मिक मूल्यों का अभाव है।
५. बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम पर जोर दिया है।	५. पाठ्यक्रम का महत्व नगण्य हो गया है।
६. शिक्षक का स्थान गौण है।	६. शिक्षक की उपेक्षा है।
७. अनेक नये सिद्धान्तों का जन्म हुआ है।	७. अनुशीलता का सिद्धान्त अनुचित है।

प्रकृतिवाद ने सभी अन्ध विश्वासों आदि पर प्रहार किया है, तो वैज्ञानिक चिन्तन को बढ़ावा दिया है। डाक्टर प्रेमनाथ के अनुसार—"बच्चों को प्राकृतिक वातावरण प्रदान करने के लिए सहशिक्षा की वकालत की गई है। लड़कों और लड़कियों के लिए एक परिवार में एक साथ रहना स्वाभाविक है। उनका अलगाव स्कूल में अस्वाभाविक है। सहशिक्षा से बच्चों में स्वस्थ काम प्रवृत्ति का विकास होता है जिससे यौन सम्बन्धित अनेक ग्रंथियों से उनकी रक्षा होती है। एक साथ मिलने-जुलने के लिए प्राकृतिक अवसर देकर वह स्त्री पुरुषों के पारस्परिक सम्बन्धों को सुखद बनाती है।"

यह सत्य है कि प्रकृति वाद ने शिक्षा में प्रवेश करके बालक की सत्ता की स्वतन्त्रता तथा प्रभु सत्ता की घोषणा की है। इसी वाद के कारण शिक्षा में

मनोविज्ञान का प्रवेश हुआ और मानव व्यवहार के अध्ययन को नई दिशा मिली है।

अतः यह कहा जा सकता है कि प्रकृतिवाद ने न केवल शिक्षा को ही प्रभावित किया है, उसे ज्ञान विज्ञान के सभी पहलुओं पर नया दृष्टिकोण उपस्थित किया है। ●●

(३) प्रयोजनवाद और शिक्षा

(Pragmatism in Education)

प्रश्न ४—प्रयोजनवाद क्या है ? शिक्षा के सिद्धान्त एवं कार्यप्रणाली को इसने किस प्रकार प्रभावित किया है ?

Q. 4. What is pragmatism ? How it influenced the theory and practice of education ?

आदर्शवाद तथा प्रकृतिवाद के विपरीत प्रयोजनवाद में शिक्षा उपयोगिता के रूप में आती है। प्रयोजनवादियों का कहना है कि इस नित्य बदलते युग से मानव जीवन के मूल्यों में भी परिवर्तन होता रहता है। इसी परिवर्तन के साथ-साथ मान्यतायें भी बदलती रहती हैं। इसी सन्दर्भ में ब्रूबेकर ने कहा है—"प्रगतिशील शिक्षा गतिशील नहीं है क्योंकि यह निश्चित उद्देश्य पर शिथिल हो जाती है और यह भावी विकास के प्रति अग्रसर होती रहती है।"

संकेत हैं बारह :

- ▷ भूमिका।
- ▷ परिभाषायें।
- ▷ प्रयोजनवाद के प्रकार।
- ▷ प्रयोजनवाद की विशेषतायें।
- ▷ प्रयोजनवाद और शिक्षा।
- ▷ प्रयोजनवाद और शिक्षा के उद्देश्य।
- ▷ प्रयोजनवाद और पाठ्यक्रम।
- ▷ प्रयोजनवाद और शिक्षण विधि।
- ▷ प्रयोजनवाद और विद्यालय।
- ▷ प्रयोजनवाद और अनुशासन।
- ▷ मूल्यांकन—
  - १. गुण।
  - २. दोष।
- ▷ निष्कर्ष।

रहता है। इस सम्बन्ध में अमेरिका में सेकेण्ड्री एजुकेशन कमीशन रिपोर्ट में कहा गया है—शिक्षा का उद्देश्य हर व्यक्ति में ज्ञान, रुचि, आदर्श, आदत एवं शक्तियों का विकास करना है जिससे वह उचित स्थान बना सके और उसका उपयोग वह स्वयं और समाज के आदर्श उद्देश्यों के लिये कर सके।"

संकेत हैं पाँच :

▷ भूमिका।
▷ नियमित-अनियमित।
▷ प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष।
▷ वैयक्तिक एवं सामूहिक।
▷ सामान्य एवं विशिष्ट।

१. मानव विकास।
२. व्यवहार का प्रशिक्षण।
३. जीवन निर्देशन।
४. अभिवृद्धि।

इसी प्रकार जेम्स ने भी कहा है—"शिक्षा, उन कार्यों तथा आदतों का संगठन है जो कोई व्यक्ति को उसके भौतिक तथा सामाजिक वातावरण में स्थान दिलाते हैं।"

रेमन्ट ने भी शिक्षा को जीवन-भर की प्रक्रिया माना है तथा उसी प्रकार के विचार व्यक्त किए गए है—"शिक्षा को विकास की प्रकिया के रूप में पारिभाषित किया गया है। इससे मानव विभिन्न तरीकों से अपने भौतिक सामाजिक एवं आध्यात्मिक वातावरण में अनुकूलन करता है।"

इन सभी विचारो से एक बात यह स्पष्ट होती है कि शिक्षा के दो स्वरूप हैं। एक स्वरूप अनादि है। वह सदैव समाज मे एक प्रक्रिया मे निहित रहेगा और इसका स्वरूप औपचारिक है। इन्ही स्वरूपो को शिक्षा शास्त्री विभिन्न नामो से अभिहित करते हैं, परन्तु शिक्षा का मूल एक ही है। विद्वानों ने शिक्षा के चार स्वरूपो का वर्णन किया है।

(१) नियमित एवं अनियमित शिक्षा।
(२) प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष शिक्षा।
(३) वैयक्तिक सामूहिक शिक्षा।
(४) सामान्य एवं विशिष्ट शिक्षा।

हम प्रत्येक प्रकार की शिक्षा पर विचार करते हैं।

१. नियमित तथा अनियमित शिक्षा
(Formal and Informal) :

शिक्षा के इस स्वरूप में नियमित शिक्षा में विद्यालय की शिक्षा पर ही विचार किया जाता है। नियमित शिक्षा के अन्तर्गत पूर्व योजनानुसार कार्य होता

है। बालक को निश्चित स्थान अनिश्चित समय पर निश्चित विषय की शिक्षा दी जाती है। यह शिक्षा, शिक्षा न होकर निर्देश है।

अनियमित (Informal) शिक्षा का आरम्भ गर्भ काल से ही हो जाता है। उदर-स्थित बालक के पूर्ण विकास से लेकर समाज में उचित स्थान प्राप्त करने तक यह क्रम चलता रहता है। पूर्व योजनानुसार इस अनियमित शिक्षा का नहीं चलता। व्यक्ति हर समय हर किसी से कुछ न कुछ सीखता ही रहता है। अनियमित एवं अनियमित शिक्षा के अन्तर को स्पष्ट करते हुए भाटिया ने कहा है—"शिक्षा निर्देश से अधिक श्रेष्ठ एवं उत्तम है। निर्देश का ज्ञान प्रदान करने या किसी उपयोगी कौशल को सीखने तक सीमित है। शिक्षा का क्षेत्र इससे विशाल है, यद्यपि ज्ञान का स्थान इससे भी महत्त्वपूर्ण है।"

अतः शिक्षा के दोनों स्वरूपों का अन्तर स्पष्ट है और शिक्षा के अनियमित रूप को आदर्श बताया है।

२. प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष
(Direct and Indirect) :

प्रत्यक्ष शिक्षा से तात्पर्य उन निर्देशों (Instructions) से है जो बालक को कक्षा में अध्यापक द्वारा दिये जाते हैं। अध्यापक अपने ज्ञान को छात्रों को देता है और उसके व्यावहारिक पहलू पर भी अपने विचार प्रकट करता है।

अप्रत्यक्ष शिक्षा में अध्यापक का योगदान प्रत्यक्ष नहीं होता। वह केवल वातावरण का निर्माण करता है और छात्र उस वातावरण के प्रति प्रतिक्रियायें करते हैं। छात्र अपने समूह, परिवार, समुदाय तथा खेल के समूह से अनेक प्रकार गुण-अवगुण सीखते हैं। इसीलिए राबर्टसन का विचार है—"निर्देश कक्षा में ही समाप्त हो जाता है और शिक्षा जीवन के साथ समाप्त होती है।"

अतः शिक्षा का रूप प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष, दोनों रूपों मे व्यक्ति को प्रभावित करता है।

३. वैयक्तिक एवं सामूहिक शिक्षा
(Individual and Collective) :

वैयक्तिक शिक्षा से तात्पर्य एक बालक की शिक्षा से है। प्राचीन काल में राज-दरबारों में राजा लोग अपने पुत्रों की शिक्षा वैयक्तिक रूप से कराते थे। आज भी ट्यूशन परम्परा इसी का प्रतीक है। शिक्षक एक बालक को शिक्षा देते समय इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखता है कि उसकी रूचियों, आदतों, प्रकृति एवं योग्यता का पूरा-पूरा विकास हो।

सामूहिक शिक्षा से तात्पर्य कक्षा प्रणाली से है, इसके अन्तर्गत एक आयु समूह योग्यता एवं रूचि वाले बालकों को समान रूप से समान विषयों एवं व्यवहारों में शिक्षण दिया जाता है। वास्तविकता यह है कि इस प्रकार की वैयक्तिक एवं

डाक्टर प्रेमनाथ के अनुसार—"शिशु का व्यक्तित्व शिक्षक के व्यक्तित्व से धुन्धला न होने पाये, वह स्कूल व खेल के मैदान में शिशु को अवसर प्रदान करता है। आदर्शवाद से भिन्न शिक्षक का अधिकार उपयोगितावाद की सेवा के द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया जाता है। सामाजिक रूप से बालक एवं अध्यापक दोनों का स्तर समान है।"

प्रयोजनवादियों का कहना है कि बालक को अभ्यास एवं कार्य द्वारा सीखना चाहिए। बालक का समाज मे महत्वपूर्ण स्थान है। बालक को उपयोगी बनाने के लिए शिक्षा के सभी पहलुओं पर ध्यान देना चाहिए।

प्रयोजनवाद और शिक्षा का उद्देश्य
(Pragmatism and Aims of Education) :

प्रयोजनवादी शिक्षा के निश्चित उद्देश्यों में विश्वास नहीं करते। वे तो समय और आवश्यकता के अनुसार मन चाहे उद्देश्यों को शिक्षा के माध्यम से प्राप्त कर सकते हैं। जॉन डीवी के आवश्यकता के अनुसार—"शिक्षा पुनर्निर्माण की प्रक्रिया है या अनुभवों का पुनर्गठन है, यह व्यक्ति की कुशलता को विकसित करके सामाजिक मूल्यों में अभिवृद्धि करता है।"

(Education is the process of reconstruction or reconstitution of experience, giving it a more socialised value through the medium of increased individual efficiency.)

डीवी ने शिक्षा के उद्देश्यों की तीन विशेषतायें बताई हैं—

(१) ये छात्रों की क्रियाओं और आवश्यकताओं पर निर्भर हैं।

(२) छात्रों के सहयोग से सचालित हैं।

(३) शिक्षा के उद्देश्य विशेष (Specific) एवं तत्कालिक (Immediate) होते हैं।

अतः प्रयोजनवादियों ने शिक्षा के सामान्य उद्देश्य इस प्रकार बताये हैं—

(१) बालक को अपने मूल्यों, आस्था एव विश्वासों का निर्माण करने की क्षमता उत्पन्न करना।

(२) बालक का बौद्धिक विकास करना जिससे वह उपयोगिता के विषय मे स्पष्ट हो जाय।

(३) छात्रों का हर उपयोगी दिशा मे विकास करना।

(४) शिक्षा का उद्देश्य समयानुसार आवश्यकता पूर्ति के लिए निर्देशन देना।

(५) बालकों मे सामाजिक कुशलता का विकास करना।

इस सम्बन्ध में डीवी का विचार है—"शिक्षा का आरम्भ बच्चे की रुचि, क्षमता एवं आदत में मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि से होना चाहिए, किन्तु बालक को

मूलप्रवृत्तियां तथा क्षमतायें तभी महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत कर सकती हैं जबकि उनकी सामाजिकता की ओर ध्यान दिया जाय। हम सामाजिक भूतकाल का निर्वाह करें और यह देखें कि प्रजाति का रक्षण करें। हम भविष्य में भी उसकी रक्षा करें और देखें कि उसका भविष्य क्या हो सकता है ?"

(Education must begin with a psychological insight into the childs capacities, interests and habits but the child's instincts and capacities can have full play and meaning only when we can translate them into their social equivalents. We must be able to carry them back into a social past and see them as the inheritance of previous race activities. We must also be able to protect them into the future to see what their outcome and end will be.)

कोठारी कमीशन ने शिक्षा के जिन उद्देश्यों को अपने प्रतिवेदन में प्रस्तावित किया है, वे भी प्रयोजनवाद पर आधारित हैं—

(१) शिक्षा को उत्पादन के साथ जोड़ना।

(२) शैक्षणिक कार्यक्रम के द्वारा सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकता को बल देना।

(३) सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों का विकास करना।

(४) शिक्षा के द्वारा प्रजातन्त्र को सगठित करना।

(५) जिज्ञासा, मनोवृत्ति और मूल्यों के द्वारा कौशल का विकास करते हुए समाज का आधुनिकीकरण करना।

विश्व के हर देश में शिक्षा प्रयोजनवादी होती जा रही है और उसके उद्देश्यों में उपयोगिता प्रमुख हो गई है।

प्रयोजनवाद और पाठ्यक्रम

(Pragmatism and Curriculum) :

प्रयोजनवादी, उपयोगी पाठ्यक्रम मे विश्वास करते हैं। वह क्रिया में विश्वास करता है, *परिणाम में नहीं। वह तो क्रिया को व्यवस्थित रूप से सम्पन्न करने* में विश्वास करता है। प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम के निर्माण मे चार बातों पर जोर देते है—

(१) उपयोगिता का विचार—प्रयोजनवादी पाठ्यक्रम मे इस बात का ध्यान रखते है कि वे ही विषय पढ़ाये जायें जो बालक के लिए उपयोगी हों। उनके विचार से पाठ्यक्रम में ऐसे विषय हों जो जीवन मे उपादेय हो। स्वास्थ्य विज्ञान, विज्ञान, भाषा, इतिहास, भूगोल, गणित आदि विषयों को पाठ्यक्रम में लिया जा सकता है।

(२) बालक की रुचि का विचार—प्रयोजनवादियों का विचार है कि बालक

को उसी रुचि के अनुसार पढ़ना चाहिए अर्थात् बालक को उसकी रुचि के अनुसार पढ़ाना चाहिए।

(३) अनुभव का विचार—प्रयोजनवादी करके सीखना (Learning by doing) तथा अनुभव के द्वारा सीखने (Learning by experience) में विश्वास करते हैं। उनके अनुसार बालकों को अधिकाधिक कार्य कराया जाय। डीवी के अनुसार—"यदि ये क्रियायें उस समुदाय की क्रियाओं की विशेषताओं का रूप धारण कर लें जिसमें विद्यालय स्थित है, ये नैतिक मूल्यों को विकसित करेंगी। इसका परिणाम प्रेरणा, स्वतन्त्रता, नागरिकता का प्रशिक्षण तथा अनुशासन का विकास होगा।"

(If these activities take the character of the activities of the community of which the school is an organ they will develop moral values, result in attitudes of initiative and independence and will *give training in citizenship and promote self discipline.*)

(४) एकीकरण का विचार—प्रयोजनवादियों का विचार है कि बुद्धि तथा ज्ञान की एकता बनी रहनी चाहिए। इसीलिए वे पाठ्यक्रम को विभिन्न विषयों में विभाजित करने के पक्ष में नहीं हैं। रॉस के अनुसार—"किसी विशेष विषय पर *कार्य करने की अपेक्षा उस सभी ज्ञान पर यह आधारित होना चाहिए जिसमें बालक* को लगना है।"

(Instead of working at seperate subject, the pupil is encouraged to draw truly upon all knowledge that is relevant to the activity on which he happens to be engaged.)

ब्रुबेकर के अनुसार—"प्रयोजनवादी क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम चाहते हैं। बालकों में बातचीत, खोज, सृजनात्मकता तथा कलात्मक अभिव्यक्ति को विकसित करने वाले पाठ्यक्रम पर यह बल देता है।"

प्रयोजनवाद और शिक्षक

(Pragmatism and Teacher) :

प्रयोजनवादी शिक्षक को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं। उसका काम पृष्ठ-भूमि में वातावरण का निर्माण करना है। रॉस तथा शर्मा के अनुसार—"*वातावरण का चिन्तन और बालकों के उद्देश्य पूर्ति के लिए क्रियाओं का अभ्यास, वातावरण का व्यापक अर्थ जिसमें क्रियाओं के दोनों रूप सम्मिलित हैं, इन्द्रियों द्वारा की गई तथा मानसिक शक्तियों के द्वारा की गई क्रियाओं को सम्पन्न कराने का कार्य अध्यापक* का है।"

प्रयोगवादी शिक्षा योजना में अध्यापक निर्देशक के रूप में कार्य करता है। वह अपने छात्रों को समुचित परिस्थितियों में रखकर उन्हें अनुभव प्रदान करता है। वह बालकों की रुचियों का विकास करता है।

प्रयोजनवाद और शिक्षण विधि
(Pragmatism and Teaching Method) :

प्रयोजनवाद प्रगतिशील शिक्षण पद्धति मे विश्वास करता है। प्रयोजनवाद सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए शिक्षण पद्धति चाहता है। वे शिक्षण पद्धतियाँ प्रगतिशील होनी चाहियें। शिक्षा पद्धति जीवन के अनुकूल हों। नैतिक शिक्षा के सामूहिक जीवन पर बल देता है। रॉस ने कहा है—'यह प्राचीन के प्रति चेतावनी देता है कि हमारी विधियाँ प्रयोगात्मक हों तथा अधिक समय तक शिक्षण को प्रभावी न बनायें।"

(It warns against allowing ancient and outworn modes of thought any longer to dominate our educational practice and leads us to end erprising and experimental in our methods.)

प्रयोजनवादी निम्न शिक्षण पद्धतियों का अनुसरण करता है—

(१) सीखने की उद्देश्यपूर्ण क्रिया प्रणाली।
(२) करके या अनुभव से सीखना।
(३) एकीकरण के द्वारा सीखना।

इन तीनो पद्धतियों में क्रिया पर जोर दिया गया है। इनका व्यावहारिक रूप योजना (Project Method) में परिलक्षित होता है। इसमें बालक स्वतन्त्र रूप से कार्य करता है।

प्रयोजनवाद और विद्यालय
(Pragmatism and School) :

प्रयोजनवादियों के अनुसार स्कूल समाज का रूप है। स्कूल को समाज ने अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्थापित किया है। समाज में श्रेष्ठता उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि स्कूल मे अच्छे गुणों का विकास किया जाय। डीवी के अनुसार—"विद्यालय समाज के सच्चे प्रतिनिधि हों।"

(School should be the true representative of the society.)

प्रयोजनवादी कहता है कि घर में बालक को आदर्श वातावरण प्रदान नहीं किया जा सकता, अतः विद्यालयों का दायित्व और भी बढ़ जाता है। विद्यालय बालकों में सामाजिक कुशलता का निर्माण करने मे महत्वपूर्ण योग देते हैं।

प्रयोजनवाद और अनुशासन
(Pragmatism and Discipline) :

डीवी के अनुसार—"अनुशासन का अर्थ है शासन की शक्ति, उन स्रोतों पर अधिकार जिनसे कार्य लिया जाता है। यह जानना कि व्यक्ति को क्या करना चाहिए और उसे करने के लिए क्रिया करना और उनसे अनुशासित होना, चाहे हम मस्तिष्क की बात करते हों अथवा सेना की।"

प्रयोजनवादी आत्मानुशासन पर विश्वास करते हैं। बी० डी० भाटिया के अनुसार—"प्रयोजनवादी विद्यालय में समाजिक क्रियाओं द्वारा सामाजिक अनुशासन के विकास पर बल देते हैं।"

(Pragmatists are in favour of social discipline through the conjoint activities in the school.)

ये तो सीमित मुक्त्यात्मक अनुशासन में विश्वास करते हैं। अनुशासन का कार्य बालक को दुरुपयोग से बचाना है। अनुशासन के लिए उपयुक्त वातावरण के निर्माण पर जोर देते हैं।

मूल्यांकन
(Evaluation) :

प्रयोजनवाद ने उपयोगिता का सहारा लेकर भौतिकता का विकास करने पर विशेष बल दिया है। इस वाद के जन्मदाता ने इसे दर्शन न मानकर एक विधि ही माना था। उनके अनुसार—"प्रयोजन विधि में नवीन कुछ भी नहीं है। यह एक **वैज्ञानिक अभिवृत्ति है। इसका न तो कोई सिद्धान्त है और न ही कोई आदर्श। यह तो प्रचलित परम्पराओं के सन्दर्भ में प्रत्येक धारणा की व्याख्या करता है।"**

प्रयोजनवाद भी गुण एवं दोषों से मुक्त नहीं है। इसके गुण तथा दोष निम्न प्रकार हैं—

गुण	दोष
१. प्रयोजनवाद ने योजना पद्धति को जन्म दिया है।	१. आध्यात्मिक गुणों की अवहेलना।
२. विचार के बजाय कार्य को प्रधान माना है।	२. केवल उपयोगिता और परिणाम के आधार पर सत्य निरूपण।
३. व्यवहार के अधीन विचार है।	३. पूर्व निश्चित धारणाओं की अस्वीकृति।
४. नवीन शिक्षा, प्रगतिशील शिक्षा, क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम, संगठित इकाई जैसी नवीन उपलब्धियाँ दी हैं।	४. सत्य परिवर्तनशील है।
५. व्यावहारिक जीवन की तैयारी।	५. सांस्कृतिक आदर्श की उपेक्षा।
६. सामाजिक एवं जनतान्त्रिकता को प्रश्रय देता है।	६. शिक्षा का निश्चित उद्देश्य नहीं।
७. उपयोगिता को प्रधानता देता है।	७. उपयोगिता का सर्वमान्य मापदण्ड नहीं।

डाक्टर प्रेमनाथ ने कहा है—"आलोचक लोग उपयोगितावाद को अत्यधिक आमूल परिवर्तनवादी और सन्देहवादी कहते हैं। उन्हें डर है कि यह विश्वास और अधिकारों अस्वीकार करना चाहता है, साथ ही शाश्वत् मूल्यों को भी; फलतः यह व्यक्तियों के लिए प्रसन्नता और समाज के लिए सामञ्जस्य का निषेध करता है। उपयोगितावाद का अध्ययन सम्मुख भय के लिए स्थान नहीं देता। वास्तव में, दूसरे दर्शन के माध्यम से यह प्रत्ययवाद की पूर्णतः कई समस्याओं को पूर्ण करता है। आदर्शवाद और प्रयोजनवाद का समन्वय सम्भवतः एक आदर्श दृष्टिकोण हो सकता है।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि शिक्षा की इस नई विचारधारा ने हमें एक बात दी है। यह है आँख से देखकर एवं कान से सुनकर, हाथ से करके, अपनी धारणा का निर्माण करना। कार्य, कारण तथा परिणाम पर जोर देना। इससे हमारा वास्तविक उद्देश्य पूरा होता है। रस्क ने शायद ठीक ही लिखा है—"प्रयोजनवाद नवीन आदर्शवाद के विकास का चरणमात्र है। यह यथार्थ के साथ न्याय करेगा और व्यावहारिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों में समन्वय करेगा और उस संस्कृति का निर्माण करेगा जिसमें कौशल का पुष्प विकसित होगा।"

—:०:—

३. शिक्षा और उसके कार्य
(Education and its Functions)

(१) शिक्षा क्या है ?
(What is Education ?)

प्रश्न ५—शिक्षा किसे कहते हैं ? शिक्षा के अर्थ बताते हुए इसकी प्रक्रिया का उल्लेख कीजिए ?

Q. 5. What is Education ? Explain the meaning and describe the process of education ?

आमतौर पर शिक्षा से तात्पर्य विद्यालय में जाकर विधिवत् अध्ययन करने से लिया जाता है। ऐसा विद्वानों का विचार है कि विद्यालयों में ही बालक को शिक्षा दी जाती है। यही पर रहकर वे जीवन के भविष्य का निर्माण करते हैं। यहीं पर व्यक्ति के सामान्य व्यवहार की रचना होती है और उसी के अनुरूप उसके चरित्र एवं व्यक्तित्व का विकास होता है।

शिक्षा की परिभाषायें—'प्रिसटन रिव्यू' के अनुसार—"शिक्षा सीखना नहीं है, वरन् मस्तिष्क की शक्तियों का अभ्यास और विकास है और यह ज्ञान के केन्द्र तथा जीवन के संघर्षों के माध्यम से प्राप्त होती है।"

संकेत हैं चार :

- ▷ शिक्षा की परिभाषा।
- ▷ शिक्षा का अर्थ।
  1. व्यापक।
  2. संकीर्ण।
- ▷ शिक्षा का वास्तविक अर्थ।
- ▷ शिक्षा की प्रक्रिया।
  1. द्विमुखी।
  2. त्रिमुखी।

शिक्षा के विषय को प्राचीन काल से ही विद्वान् स्पष्ट करते रहे हैं। यहाँ पर कुछ परिभाषायें प्रस्तुत हैं जिनसे शिक्षा की विषय-स्थिति का पता चलता है।

(१) प्लेटो—"शिक्षा से मेरा तात्पर्य उस प्रशिक्षण से है जो अच्छी आदतों द्वारा बच्चों में अच्छी नैतिकता का विकास करे।"

(२) अरिस्टोटल—"शिक्षा स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण करती है।"

(३) कांट—"शिक्षा व्यक्ति का वह सम्पूर्ण विकास है जिसके लिए वह पात्र है।"

(४) पेस्टालॉजी—"मानव शक्तियों का प्राकृतिक, निरन्तर एवं प्रगतिशील विकास ही शिक्षा है।"

(५) स्पेंसर—"शिक्षा में आदतों, स्मरण, आदर्श, स्वरूप, शारीरिक एवं मानसिक-कौशल, बौद्धिकता एवं रुचि, नैतिक विचार एव ज्ञान ही नही, विधियाँ भी सम्मलित हैं।"

(६) जॉनडीवी—"शिक्षा व्यक्ति की उन योग्यताओं के विकास का नाम है जो उसे उसके वातावरण पर नियन्त्रण रखना सिखाती है और उसकी सम्भावनाओं को पूर्ण करती है।"

(७) गांधी जी—"शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक एवं मनुष्य के सर्वांगीण विकास शरीर, मस्तिष्क एवं आत्मा' से है।"

शिक्षा का अर्थ
(Meaning of Education) :

उपरोक्त परिभाषाओं से दो तथ्य प्रकट होते हैं। (१) शिक्षा की प्रक्रिया निरन्तर गति से जीवन पर्यन्त चलती रहती है और मानव हर समय, हर क्षण, हर किसी से कुछ न कुछ सीखता रहता है। (२) शिक्षा केवल विद्यालय में कतिपय व्यवहार का प्रशिक्षण प्राप्त करना है। अतः इन दोनों विश्लेषणों से शिक्षा के दो अर्थ स्पष्ट होते है, एक है संकुचित अर्थ और दूसरा विस्तृत अर्थ।

शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करने के पूर्व यह आवश्यक है कि शिक्षा शब्द पर विचार किया जाय।

शिक्षा शब्द लैटिन भाषा के एडूकेटम (Educatum) शब्द से निर्मित है। इसका अर्थ है शिक्षण का कार्य (Art of Teaching)। इसी के समानान्तर एक शब्द और है एडुकेअर (Educare) और इसका अर्थ है, शिक्षित करना (To educate), उठाना (To bring up), प्रगति करना (To raise) सामने लाना (To bring forth) एवं नेतृत्व देना (To lead out) ये सभी शब्द शिक्षा की क्रिया एव कार्य की ओर सकेत करते हैं। एडम्स (Adams) एवं रॉस (Ross) इसी कारण इस शब्द को मान्यता देते है।. 'एजुकेशन' शब्द किसी प्रकार से एक अर्थ नही देता प्रत्युत यह शिक्षा को प्रक्रिया मानकर चलता है। इसी स्थिति मे शिक्षा के दो अर्थ लिए जाते हैं—विस्तृत एवं सकीर्ण।

(१) शिक्षा का व्यापक (Wider) अर्थ—शिक्षा मानव शक्तियों का विकास है। जो मानव अपनी शक्तियो के विकास की क्षमता नही कर पाता, वह जीवन में सफलता पूर्वक जी नही सकता। अतः जीवन पर्यन्त मानव, प्रकृति के अनुसार अपने शरीर व मस्तिष्क को पूर्णता देने का प्रयत्न करता है। इसीलिए टी० रेमन्ट

5. इसका निर्माण पाठ्यक्रम विशेषज्ञ अपने दृष्टिकोण से, न कि छात्रों के दृष्टिकोण से करता है।
6. इसका जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है, और यह छात्रों को जीवन के लिए तैयार नहीं करता है।
7. इसके पाठ्य-विषय—साहित्यिक और सैद्धान्तिक है।
8. इसके पाठ्य-विषय—अनावश्यक तथ्यों और महत्त्वहीन विवरणों से भरे हुए हैं।
9. इसमें तकनीकी और व्यावसायिक विषयों का अभाव है।
10. इसमें छात्रों के मनोविज्ञान, रुचियों, आवश्यकताओं और वैयक्तिक विभिन्नताओं पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है।

पाठ्यक्रम के उद्देश्य
Aims of Curriculum

1. इसे बालकों को लोकतन्त्र के लिए तैयार करना चाहिए।
2. इसे सब छात्रों के पूर्ण विकास को व्यक्त, उत्साहित, विकसित और प्रेरित करना चाहिए।
3. इसे विद्यालय के विषयों और जीवन की विभिन्न क्रियाओं के बीच के अन्तर को समाप्त करना चाहिए।
4. इसे ऐसे विद्वान् व्यक्तियों का निर्माण करना चाहिए, जो खोज और ज्ञान की सीमाओं का विस्तार कर सकें।
5. इसे विभिन्न अभिरुचियाँ, योग्यताएँ और क्षमताएँ रखने वाले सब छात्रों की आवश्यकताओं को पूर्ण करना चाहिए।
6. इसे छात्रों में ईमानदारी, निष्कपटता, मित्रता, सद्-इच्छा, निर्णय और सहयोग के गुणों का विकास करके उनके चरित्र को उन्नत बनाना चाहिए।
7. इसे ऐसे वातावरण का निर्माण करना चाहिए, जहाँ बालक विचार करना सीख सकें और अपनी विचार, तर्क तथा निरीक्षण की शक्तियों का विकास कर सकें।
8. इसे छात्रों को धर्म, कलाओं, सामाजिक विज्ञानों, प्राकृतिक विज्ञानों और मानव-शास्त्र के साथ घनिष्ठ सम्पर्क द्वारा मान्यताओं का निर्माण करने के योग्य बनाना चाहिए।

पाठ्यक्रम के आधार
Bases of Curriculum

पाठ्यक्रम के अधोलिखित आधार हैं :—

(1) दार्शनिक आधार (Philosophical Base)

(2) सामाजिक आधार (Sociological Base)
(3) मनोवैज्ञानिक आधार (Psychological Base)
(4) वैज्ञानिक आधार (Scientific Base)

(1) दार्शनिक आधार : Philosophical Base—पाठ्यक्रम का एक मुख्य आधार दर्शन है। पाठ्यक्रम का संगठन शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। शिक्षा के उद्देश्य हमें 'दर्शन' द्वारा ही प्राप्त होते हैं। इस प्रकार पाठ्यक्र की समस्या एक दार्शनिक समस्या है। विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं के अनुसार पाठ्यक्रम विभिन्न रूप से निर्धारित किया जाता है।

(i) **आदर्शवाद**—यह विचारधारा शाश्वत मूल्यों एवं आदर्शों पर बल देती है। इसलिए यह पाठ्यक्रम का मुख्य आधार मानव के विचारों तथा आदर्शों को मानता है। आदर्शवाद के अनुसार पाठ्यक्रम मे साहित्य, कला, संगीत, भाषाएँ, भूगोल, इतिहास, विज्ञान तथा गणित रखे जाने चाहिए। प्रो० हार्न के अनुसार, जो कि एक आदर्शवादी है, पाठ्यक्रम मे 'कुछ कला, कुछ विज्ञान तथा कुछ व्यवसाय' (Some art, some science and some volition) को स्थान मिलना चाहिए। रॉस (Ross) महोदय के अनुसार पाठ्यक्रम का आधार तीन प्रक्रियाओं—ज्ञानात्मक (Cognition), भावात्मक (Affection) तथा क्रियात्मक (Conation) का विकास होना चाहिए। इनके विकास के लिए भाषा, सामाजिक विषय, साहित्य, गणित, विज्ञान, कविता, संगीत, कला, पाकशास्त्र, शिल्पकला, कताई-बुनाई आदि को पाठ्यक्रम में स्थान देने के लिए बल देता है।

(ii) **प्रकृतिवाद**—यह वाद—बालक के व्यक्तित्व पर बल देता है। इस विचारधारा के अनुसार बालक के व्यक्तित्व का स्वतन्त्र विकास को शिक्षा का ध्येय माना गया है। इसके लिए वे बालक को आत्म-प्रकाशन के लिये अनियन्त्रित स्वतन्त्रता देने के पक्षपाती हैं। यह बालक को बालक मानकर चलता है। इसलिए, प्रकृतिवादी पाठ्यक्रम में उन क्रियाओं का समावेश चाहते हैं जिनके द्वारा बालक की स्वाभाविक प्रवृत्तियों का विकास हो सके। प्रकृतिवाद के अनुसार पाठ्यक्रम में व्यायाम, खेल-कूद, तैरना, भूगोल, प्राकृतिक विज्ञान आदि को स्थान मिलना चाहिए।

(iii) **प्रयोगवाद**—यह वाद भी बालक को अधिक महत्त्व करता है। इस विचारधारा के अनुसार बालक ही शिक्षा का केन्द्र माना जाता है। यह विचारधारा 'उपयोगिता' के सिद्धान्त पर बल देती है। प्रयोगवादी पाठ्यक्रम का संगठन बालक की अभिरुचियों के अनुसार करते हैं। ड्यूवी ने बालक की चार स्वाभाविक रुचियों को माना है—(1) बातचीत तथा विचारों के आदान-प्रदान की अभिरुचि (Interest in conversation and communication), (2) कौतूहल या जिज्ञासा की अभिरुचि (Inquiry), (3) रचनात्मक अभिरुचि (Interest in Construction), तथा (4) कलात्मक अभिव्यक्ति की रुचि (Interest in Artistic Expression)। ड्यूवी ने इन रुचियों को प्रारम्भिक कक्षाओं के पाठ्यक्रम का आधार बनाया।

इसलिए पाठ्यक्रम मे कला, भाषा, कताई-बुनाई, दुकानदारी, बाग़वानी, गणना, काष्ठ-कला आदि को स्थान प्रदान किया। इसके अतिरिक्त इस विचारधारा ने पाठ्यक्रम का आधार सामाजिक जीवन तथा उसकी क्रियाओं को माना। इस वाद के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य सामाजिक कुशलता माना गया। इस कारण पाठ्यक्रम में सामूहिक क्रियाओं के निर्धारण पर बल दिया गया जिससे छात्रों में सामाजिकता की भावना का विकास हो सके।

(iv) **यथार्थवाद**—यह विचारधारा पाठ्यक्रम के लिए एक महत्त्वपूर्ण आधार प्रदान करती है। इसके द्वारा जीवन की व्यावहारिकता पर बल दिया जाता है। यह पाठ्यक्रम में उन क्रियाओं को स्थान देता है, जिनके द्वारा वास्तविक जीवन की परिस्थितियों का ज्ञान प्राप्त हो सके।

(2) **सामाजिक आधार : Sociological Base**—वर्तमान युग में पाठ्यक्रम के सामाजिक आधार पर बहुत बल दिया जा रहा है। इस आधार के अनुसार पाठ्यक्रम में उन विषयों को स्थान मिलना चाहिए जिनके अध्ययन से छात्रों मे सामाजिकता की भावना का विकास हो सके। विद्यालय एक सामाजिक संस्था है। अतः उसका सम्पूर्ण वातावरण वृहद् समाज का लघु रूप होना चाहिए। शिक्षा द्वारा समाज के दो कार्यों की पूर्ति की जानी चाहिए—प्रथम, समाज की संस्कृति, अनुभवों आदि को आने वाली सन्तति को प्रदान करना, तथा द्वितीय, समाज की उन्नति एवं प्रगति। पाठ्यक्रम का निर्धारण इन दोनों कार्यों की पूर्ति के हेतु होना चाहिए। इसके लिए पाठ्यक्रम मे भाषा, इतिहास, साहित्य, समाज-शास्त्र, भूगोल, नीति-शास्त्र आदि को स्थान मिलना चाहिए।

(3) **मनोवैज्ञानिक आधार : Psychological Base**—इस आधार के अनुसार, पाठ्यक्रम का निर्धारण बालक की रुचियों, स्वाभाविक प्रवृत्तियों, आवश्यकताओं तथा शक्तियों के अनुसार होना चाहिए। यह बालक को केन्द्र मानकर पाठ्यक्रम निर्धारित करता है।

(4) **वैज्ञानिक आधार : Scientific Base**—विज्ञान की चतुर्मुखी प्रगति ने शिक्षा के किसी भी क्षेत्र को अछूता नहीं छोड़ा है। वैज्ञानिक अनुसन्धानों से प्रभावित होकर बहुत-से शिक्षा-शास्त्री पाठ्यक्रम मे वैज्ञानिक विषयों को अधिक महत्त्व प्रदान करने के पक्ष में हैं। इनमें हरबर्ट स्पेन्सर का नाम प्रमुख है। उसके अनुसार शिक्षा का मुख्य ध्येय—'पूर्ण जीवन के लिए तैयारी है।' उसने इस ध्येय की प्राप्ति के हेतु पाँच प्रकार के कार्यों को करने का सुझाव दिया है। वे कार्य इस प्रकार है :—

(i) आत्म-रक्षा में प्रत्यक्ष रूप से सहायक क्रियाएँ (Activities which directly help in the self-preservation)।

(ii) आत्म-रक्षा मे परोक्ष रूप से सहायक क्रियाएँ (Those activities, which, by securing the necessaries of life, indirectly help in the self-preservation)।

(iii) वंशवृद्धि व शिशुपालन से सम्बन्धित क्रियाएँ (Those activities which are concerned with family life and the rearing of children)।

(iv) सामाजिक व राजनीतिक क्रियाएँ (Social and Political activities)।

(v) अवकाश के समय की क्रियाएँ (Leisure activities related to the gratification of tastes and feelings)।

हर्बर्ट स्पेन्सर ने इन क्रियाओं की प्राप्ति के लिए पाठ्यक्रम में अधोलिखित विषयों के समावेश पर बल दिया :—

(1) फिजियालॉजी तथा स्वास्थ्य-विज्ञान।

(2) भाषा, गणित, भूगोल आदि।

(3) गृह-शास्त्र, शरीर-विज्ञान, बाल-मनोविज्ञान।

(4) समाज-शास्त्र, राजनीति, इतिहास तथा अर्थ-शास्त्र।

(5) साहित्य, कला, कविता, संगीत आदि।

पाठ्यक्रम-निर्माण के सिद्धान्त
Principles of Curriculum Construction

1. जीवन से सम्बन्धित होने का सिद्धान्त : *Principle of Relationship with Life*—पाठ्यक्रम मे जिन विषयो को स्थान दिया जाय, उनका वास्तविक जीवन से सम्बन्ध होना चाहिए। ऐसे विषयो का अध्ययन करके ही बालक जीवन मे प्रवेश करने के बाद सफलता प्राप्त कर सकेंगे। पुराने ढंग की पाठशालाओं और मकतबों का इसलिए लोप हो गया, क्योंकि उनमे जो विषय पढ़ाए जाते थे, उनका जीवन से कोई सम्बन्ध नही था।

2. उपयोगिता का सिद्धान्त : Principle of Utility—पाठ्यक्रम-निर्माण का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त यह है कि उसमें जिन विषयो को स्थान दिया जाय, वे बालक के भावी जीवन के लिए उपयोगी होने चाहिए। इस सम्बन्ध मे नन (Nunn) ने लिखा है :—"साधारण मनुष्य सामान्यतः यह चाहता है कि उसके बच्चे केवल ज्ञान के प्रदर्शन के लिए कुछ व्यर्थ की बातें सीखें, परन्तु समग्र रूप से वह यह चाहता है कि उनको वे बातें सिखाई जायें, जो भावी जीवन में उनके लिए उपयोगी हो।"

3. रचनात्मक कार्य का सिद्धान्त : Principle of Creative Achievement—प्रत्येक बालक मे किसी-न-किसी क्षेत्र मे रचनात्मक कार्य करने की कुछ-न-कुछ योग्यता अवश्य होती है। अतः पाठ्यक्रम को ऐसे अवसर अवश्य देने चाहिए, जिनसे रचनात्मक कार्य की यह योग्यता व्यक्त हो सके। बालक को अपनी रचनात्मक शक्तियो का प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। सम्भव है कि प्रारम्भ मे उसे अधिक सफलता न मिले। पर यदि उसे उचित निर्देशन दिया जायगा, तो उसकी रचनात्मक शक्तियों का विकास अवश्य होगा। रेमॉण्ट (Raymont) का कथन है :—"जो पाठ्यक्रम, वर्तमान और भविष्य की आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त है, उसमें निश्चित रूप से रचनात्मक विषयों के प्रति निश्चित सुझाव होना चाहिए।"

4. खेल व कार्य की क्रियाओं के अन्तर्सम्बन्ध का सिद्धान्त : Principle of Inter-Relation of Play & Work Activities—पाठ्यक्रम के निर्माण में खेल और कार्य की क्रियाओं के अन्तर्सम्बन्ध के सिद्धान्त को स्थान दिया जाना आवश्यक है। सब क्रियाओं का कुछ-न-कुछ प्रयोजन होता है। सामान्यतः खेल की क्रियाओं का प्रयोजन 'आनन्द' समझा जाता है। कार्य की क्रियाओं के बारे में यह बात लागू नहीं होती है। इस प्रकार की एक क्रिया ज्ञान प्राप्त करने का कार्य है। यह आवश्यक है कि ज्ञान प्राप्त करने की क्रियाओं को खेल के स्तर तक न पहुँचाया जाय; वरन् उनको इतना रुचिकर बनाया जाय, जिससे प्रभावशाली ज्ञान प्राप्त किया जा सके।

शिक्षा की यह नीति गलत है कि बालक को समस्त ज्ञान, खेल के समान समझने के लिए प्रोत्साहित किया जाय। ज्ञान प्राप्त करना एक कार्य है, जिसमें खेल का दृष्टिकोण सम्मिलित हो सकता है। बालक को अपने ज्ञान का अभिप्राय जानने के लिए अवसर दिया जाना चाहिए। पर इसके साथ-साथ, उसे उत्साह और आनन्द से ज्ञान प्राप्त करने की क्रिया में लगने के लिए भी सहायता दी जानी चाहिए। इस सम्बन्ध में क्रो व क्रो का कथन है :—**"जो लोग सीखने की प्रक्रिया को निर्देशित करते हैं, उनका उद्देश्य यह होना चाहिए कि वे ज्ञानात्मक क्रियाओं की ऐसी योजना बनायें, जिसमें खेल के दृष्टिकोण को स्थान प्राप्त हो।"**

"The aim of those who guide the learning process should be so to plan learning activities that the play attitude is introducted."

—*Crow & Crow.*

5. उत्तम आचरण के आदर्शों की प्राप्ति का सिद्धान्त : Principle of Achievement of Wholesome Behaviour Pattern—क्रो और क्रो (Crow & Crow) का कथन है :—**"पाठ्यक्रम का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिए, जिससे यह बालकों को उत्तम आचरण के आदर्शों को प्राप्त करने में सहायता दे।"**

यदि बालक बड़े होकर दूसरों के साथ सुखपूर्वक रहना चाहते हैं, तो उनको अपने जीवन के प्रारम्भ से ही उचित और आवश्यक आचरण का विकास करना चाहिए। यदि बालक को बड़ा होकर अधिकारों और विशेषाधिकारों का उपभोग करना है, तो उसे यह शिक्षा दी जानी चाहिए कि वह उनका प्रयोग समाज के हित के लिए करे, न कि अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए। प्रायः बालकों को वह सहायता और निर्देश नहीं मिलता है जो उनके आचरण को उनके समुदाय के लाभ के लिए उपयुक्त बनाता है।

अतः यह आवश्यक है कि बालकों को उत्तम आचरण के आदर्शों को प्राप्त करने की शिक्षा दी जाय, जिससे वे स्वार्थी और व्यक्तिवादी न बनकर अपने व्यवहार से समाज के अन्य सदस्यों के सामने सुन्दर उदाहरण रखे और उनको भी वैसा ही करने के लिए प्रेरित करें।

6. जीवन-सम्बन्धी सब क्रियाओं के समावेश का सिद्धान्त : **Principle of Inclusion of All Life-Activities**—पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय ऐसा प्रयत्न किया जाना चाहिए कि उसमें वे सब क्रियायें आ जायें, जो प्रत्येक बालक के स्वास्थ्य विचार, ज्ञान, कुशलता, मूल्यांकन, अभिव्यक्ति, चरित्र और सामाजिक तथा आर्थिक सम्बन्धों को उन्नत बनायें। क्योंकि हम लोकतन्त्र के सिद्धान्त को स्वीकार कर चुके हैं, इसलिए, पाठ्यक्रम का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिए, जिससे कि बालक प्रारम्भ से ही लोकतन्त्रीय जीवन के ढंग को धीरे-धीरे ग्रहण करते चले जायें। अतः यह आवश्यक है कि पाठ्यक्रम में ऐसी क्रियाओं को स्थान दिया जाय, जो लोकतन्त्रीय दृष्टिकोणों और धारणाओं को उन्नत बनाये।

7. विकास की सतत् प्रक्रिया का सिद्धान्त : **Principle of Continual Process of Evolution**—किसी भी पाठ्यक्रम का सदैव के लिए निर्माण नहीं किया जा सकता है। उसमें समय के साथ परिवर्तन किए जाने आवश्यक हैं। क्रो और क्रो (Crow & Crow) का कथन है :—"वैज्ञानिक प्रगति, नवीन व्यावसायिक अवसर, राष्ट्रों के अधिक विस्तृत अन्तर्सम्बन्ध, प्रगतिशील आदर्श तथा आकांक्षाएँ—यह माँग प्रस्तुत करती हैं कि शिक्षा के सिद्धान्त और व्यवहार को ज्ञान, कुशलता और दृष्टिकोण पर दिये जाने वाले विभिन्न प्रकार के बल के अनुकूल बनाया जाय।"

8. अनुभवों की पूर्णता का सिद्धान्त : **Principle of the Totality of Experiences**—शिक्षा की आधुनिक विचारधारा के अनुसार पाठ्यक्रम का अर्थ केवल सैद्धान्तिक विषयों से नहीं है, जिन्हें परम्परागत ढंग से पढ़ाया जाता है। पाठ्यक्रम में उन सब अनुभवों को भी स्थान दिया जाता है, जिनको बालक विभिन्न क्रियाओं द्वारा प्राप्त करता है। ये क्रियाएँ विद्यालय, कक्षा, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, वर्कशॉप, खेल के मैदान तथा शिक्षकों और छात्रों के अगणित अनौपचारिक सम्पर्कों में चालू रहती है। इस प्रकार, विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन ही पाठ्यक्रम है।

"माध्यमिक शिक्षा-आयोग' के अनुसार :—"यह स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि सबसे आधुनिक शैक्षिक विचारधारा के अनुसार पाठ्यक्रम का अर्थ केवल सैद्धान्तिक विषयों से नहीं लिया जाता है, वरन् इसमें अनुभवों की सम्पूर्णता निहित होती है।"

9. विविधता और लचीलेपन का सिद्धान्त : **Principle of Variety & Elasticity**—'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' का विचार है :—"पाठ्यक्रम में काफ़ी विविधता और लचीलापन होना चाहिए, जिससे कि वैयक्तिक विभिन्नताओं और वैयक्तिक आवश्यकताओं एवं रुचियों का अनुकूलन किया जा सके।"

पाठ्यक्रम में विविधता और लचीलेपन की आवश्यकता इसलिए है जिससे कि उसे छात्रों की रुचियों, विभिन्नताओं, दृष्टिकोणों, मनोवृत्तियों और आवश्यकताओं के अनुकूल बनाया जा सके। बालकों पर अनुपयुक्त विषयों को लादने का प्रयत्न नहीं किया जाना चाहिए। इससे उनमें निराशा की भावना उत्पन्न होती है। साथ ही उनके

सामान्य विकास में बाधा पड़ती है। इसके विपरीत, ज्ञान, कुशलता और मूल्यांकन के कुछ ऐसे विस्तृत क्षेत्र है, जिनके सम्पर्क में बालकों को लाया जाना चाहिए। अतः पाठ्यक्रम में इनको प्रथम स्थान दिया जाना चाहिए। पर इनको ऐसी मात्रा में रखा जाय कि वे छात्रों की शक्तियों और क्षमताओं से परे न हो जायें।

10. सामुदायिक जीवन से सम्बन्ध का सिद्धान्त : Principle of Relationship with Community Life—'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' के अनुसार :—**"पाठ्यक्रम सामुदायिक जीवन से सजीव और आंगिक रूप से सम्बन्धित होना चाहिए।"**

पाठ्यक्रम का सामुदायिक जीवन से स्पष्ट सम्बन्ध होना चाहिए। पाठ्यक्रम को इस जीवन की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं की व्याख्या करनी चाहिए और बालकों को इसकी कुछ महत्त्वपूर्ण क्रियाओं के सम्पर्क में लाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि पाठ्यक्रम में उत्पादक कार्य को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिए, क्योंकि यह कार्य व्यवस्थित मानव-जीवन का आधार है। इसके अतिरिक्त, पाठ्यक्रम स्थानीय आवश्यकताओं और परिस्थितियों को ध्यान में रखकर बनाया जाना चाहिए।

11. अवकाश के लिए प्रशिक्षण का सिद्धान्त : Principle of Training for Leisure—'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' का कथन है :—**"पाठ्यक्रम इस प्रकार नियोजित किया जाना चाहिए कि वह छात्रों को न केवल कार्य के लिए, वरन् अवकाश के लिए भी प्रशिक्षित करे।"**

इस प्रकार, पाठ्यक्रम—छात्रों को कार्य और अवकाश—दोनों के लिए प्रशिक्षित करे। इसलिए, अध्ययन के विषयों के साथ-साथ, पाठ्यक्रम में अन्य क्रियाओं को भी स्थान दिया जाय; जैसे—खेल-कूद, सामाजिक और सौन्दर्यात्मक क्रियाएँ आदि। ये क्रियाएँ बालकों को अपने अवकाश का सदुपयोग करने के लिए प्रशिक्षित करेंगी।

12. विषयों के पारस्परिक सम्बन्ध का सिद्धान्त : Principle of Interrelation of Subjects—पाठ्यक्रम को अनेक असम्बन्धित विषयों में खण्डित नहीं करना चाहिए। ऐसा पाठ्यक्रम प्रभावहीन हो जाता है। सभी विषयों का एक-दूसरे से सम्बन्ध होना चाहिए और सभी का जीवन से सम्बन्ध होना चाहिए।

उपसंहार

उपर्युक्त पंक्तियों में हमने पाठ्यक्रम के निर्माण के कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला है। सारांश में, हम कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम का निर्माण प्रत्येक छात्र की आवश्यकताओं, रुचियों, योग्यताओं, विशिष्टताओं और विभिन्नताओं को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए, जिससे सभी छात्रों के व्यक्तित्व का विकास हो सके और वे भावी जीवन के लिए तैयार हो जायें।

अतः यह आवश्यक है कि विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन—पाठ्यक्रम हो। अपने इस कथन की पुष्टि में हम 'माध्यमिक शिक्षा-आयोग' के अग्रलिखित शब्दों को अंकित कर सकते हैं :—**"विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन—पाठ्यक्रम बन जाता है, जो छात्रों के जीवन के सब पहलुओं से सम्बन्ध रख सकता है और सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास में सहायता दे सकता है।"**

"The whole life of the school becomes the curriculum, which can touch the life of the students at all points and help in the evolution and balanced personality."—**Secondary Education Commission.**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss the meaning and aims of curriculum.

पाठ्यक्रम के अर्थ एव उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।

2. What are the main bases and principles of framing a curriculum ? How far have these principles been observed in the Junior High School curriculum ?

पाठ्यक्रम निर्माण के मुख्य आधार और सिद्धान्त क्या है ? पूर्व माध्यमिक पाठ्यक्रम में उन सिद्धान्तो का कहाँ तक पालन हुआ है ?

3. What are the duties of the teacher in relation to the construction and organization of curriculum ? How can he fulfil them ?

पाठ्यक्रम के निर्माण और संगठन के सम्बन्ध में शिक्षक के क्या कर्त्तव्य है ? वह उन्हें किस प्रकार निभा सकता है ?

47

पाठ्यक्रम के प्रकार
TYPES OF CURRICULUM

"प्रत्येक पाठ्यक्रम में चाहे उसका आधार या रूप कैसा ही क्यों न हो, दो मुख्य तत्त्व—विषय-वस्तु तथा संरचना—निहित होते हैं। पाठ्यक्रम की विषय-वस्तु उन सीखे जाने वाले अनुभवों का योग है जो उनमें निहित होते है। संरचना में सीखे जाने वाले अनुभवों की व्यवस्था एवं स्वरूप निहित होता है।"

"Every curriculum, no matter what its base or type, has two essential elements, viz., content and structure. The content of the curriculum is the sum total of the learning experience which it comprises. The structure consists in the form and arrangement of these learning experiences"—James M. Lee : *'Principles & Methods of Secondary Education'*, p. 185.

विषय-प्रवेश

गत अध्याय मे हम पाठ्यक्रम के विषय-वस्तु नामक आवश्यक तत्त्व का विवेचन कर चुके है। इस अध्याय मे हमारा उद्देश्य चयन की हुई विषय-वस्तु को किन स्वरूपो में रखा जा सकता है, का विवेचन करना है। ये विभिन्न स्वरूप ही पाठ्यक्रम के प्रकार है। जेम्स एम० ली (James M. Lee) के अनुसार, पाठ्यक्रम की संरचना का निर्माण छः पृथक् तत्त्व मिलकर करते है। ये छः तत्त्व है—आयोजन (Design), क्षेत्र (Scope), अनुक्रम (Sequence), सततता (Continuity), सन्तुलन या विस्तार (Balance or Range) तथा एकीकरण (Integration)। पाठ्यक्रम का आयोजन जिस ढग से किया जाएगा, वह पाठ्यक्रम का एक स्वरूप प्रदान करेगा। अत. आयोजन के जो भेद होंगे, वे ही पाठ्यक्रम के प्रकार होंगे।

पाठ्यक्रम के प्रकार
Types of Curriculum

सेलर व विलियम ने पाठ्यक्रम-आयोजन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है :—"पाठ्यक्रम-आयोजन वह ढांचा या संरचना है जिसका विद्यालय में शैक्षिक अनुभवों को चुनने, नियोजित करने तथा कार्यान्वित करने में प्रयोग किया जाता है। अतः आयोजन वह योजना है जिसका सीखने की क्रियाओं को प्रदान करने के लिए शिक्षक द्वारा अनुसरण किया जाता है।" अतः हम संक्षेप में कह सकते हैं कि आयोजन वह ढंग है जिसको अपना कर सीखने के अनुभवो को संगठित तथा निर्मित किया जाता है।

"Curriculum design is the pattern or framework or structural organization used in selecting, planning and carrying forward educational experiences in the school. Design is thus the plan that teachers follow in providing learning activities"—**J. Galen Saylor & M. A. William** : *'Curriculum Planning for Better Teaching & Learning'*, p. 245.

जेम्स० एम० ली का कथन है कि आयोजन के दो प्रमुख भेद होते हैं; यथा :—

(अ) अंशो में विभाजित आयोजन : Fragmented Design

(ब) एकीकृत आयोजन : Unified Design।

(अ) अंशों में विभाजित आयोजन—इसमें प्रत्येक विषय को पृथक् रूप से पढ़ाया जाता है। साथ ही विषयो को अपरिवर्तनीय ढंग से पढ़ाया जाता है। इसके अनुसार शिक्षण पूर्णतः सम्पूर्ण कक्षा समूह के रूप में किया जाता है। इसमें निर्देशात्मक प्रक्रिया (Instructional Procedure) दृढ़ और परम्परागत होती है।

(ब) एकीकृत आयोजन—इसमें विषय-वस्तु की पृथकता को समाप्त करके अध्ययन की जाने वाली समस्या से विषयों को एकीकृत किया जाता है। इसमें शिक्षक-छात्र की सहयोगी क्रियाओ, नियोजन आदि को स्थान प्राप्त है। इसमे सम्पूर्ण कक्षा समूहो के अतिरिक्त वैयक्तिक अध्ययन तथा छोटे-छोटे समूहो के कार्यों को स्थान प्रदान किया जाता है। इसमे निर्देशात्मक प्रक्रिया लचीली होती है।

उक्त दोनो प्रकार के आयोजन के आधार पर पाठ्यक्रम के निम्नलिखित प्रकार निर्धारित किए गए है :—

1. विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम (Subject-Centered Curriculum)
2. शास्त्रीय पाठ्यक्रम (Classical Curriculum)
3. छात्र-केन्द्रित या बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम (Student-Centered or Child Centered Curriculum)

4. जीवन की स्थायी स्थितियों पर आधारित पाठ्यक्रम (Persistent Life Situations Curriculum)

5. कोर पाठ्यक्रम (Core Curriculum)

6. क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम (Activity Centered Curriculum)।

उपर्युक्त पाठ्यक्रम के प्रकारों में प्रथम दो खण्डित आयोजन पर आधारित है और अन्तिम चार एकीकृत आयोजन पर। इनका पृथक्-पृथक् विवेचन नीचे किया जा रहा है :—

(1) विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम—विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम में विषय को आधार मानकर पाठ्यक्रम को नियोजित किया जाता है। विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम का सूत्रपात प्राचीन ग्रीक तथा रोम के विद्यालयों में हुआ। जेम्स एम० ली का कथन है :— "विषय-केन्द्रित पाठ्यक्रम निश्चित बौद्धिक विशिष्टताओं की एक सूची है जिसका योग यथार्थता का समग्र चित्र प्रस्तुत करने का दावा करता है। इसमें छात्रों के लिए क्या अर्थपूर्ण है या वे क्या सीखना चाहते हैं? की अपेक्षा निर्धारित विषय-वस्तु पर अधिकार प्राप्त करने की आवश्यकता पर बल दिया जाता है।"

"The Subject-Centered Curriculum is a series of individualized intellectual specializations, the sum total of which is supposed to give a picture of the totality of reality. The necessity of mastering the material is given prior consideration over whether it is meaningful to the pupils or whether they wish to learn it."

—James M. Lee : *op. cit.*, p. 194.

(2) शास्त्रीय पाठ्यक्रम—यह शिक्षा के प्रति परम्परागत दृष्टिकोण रखता है। इसके द्वारा आध्यात्मिक तथा नैतिक जीवन के विकास पर बल दिया जाता है। इस प्रकार के पाठ्यक्रम का सूत्रपात प्राचीन यूनान तथा भारत के विद्यालयों में हुआ। इसमें शास्त्रीय भाषाओं, दर्शन, गणित तथा ज्योतिष-शास्त्र पर अधिक बल दिया जाता है। डा० जॅड० के० सेटरँजीवेल ने लिखा है :—"यदि छात्रों को सूचनाएँ प्रदान करना ही हमारा ध्येय है तो इस प्रकार के पाठ्यक्रम का अधिकांश भाग उपयुक्त माना जा सकता है। प्रारम्भ में यह आशा की जाती थी कि यदि बालक विषय-वस्तु में निहित सूचनाओं को ग्रहण करके उन पर आधिपत्य स्थापित कर लें तो उनमें कुछ प्रमुख आदतों तथा कुशलताओं का विकास होगा।"

"For the most part this sort of curriculum was sensible if the purpose was to provide pupils with information. It was also hoped that certain habits and skills would develop as the pupils mastered the information contained in the subject-matter."

—Z. K. Setranjiwale : '*Philosophical & Sociological Foundations of Education*, p. 29.

(3) छात्र-केन्द्रित या बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम—आधुनिक युग में शिक्षा में सबसे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ है कि विषय-केन्द्रित शिक्षा का स्थान बाल-केन्द्रित शिक्षा ने लिया है। अब पाठ्यक्रम का आयोजन बालक को केन्द्र बनाकर किया जाता है। यह पाठ्यक्रम प्रयोगवादी विचारधारा (Philosophy of Experimentalism) पर आधारित है। इस विचारधारा के प्रमुख प्रतिपादक फ्लॉम (Flaum) का मत है :—"अनुभव किसी व्यक्ति के वातावरण की भाँति स्थिर नहीं है।" इस कारण इस पाठ्यक्रम में पूर्व निर्धारित विषय-वस्तु को आधार न बनाकर छात्र की रुचियों एवं आवश्यकताओं को केन्द्र-बिन्दु बनाया जाता है। जेम्स एम० ली ने लिखा है :—"छात्र-केन्द्रित पाठ्यक्रम वह है जो पूर्णतः और समग्र रूप से सीखने वाले में निहित है।"

"Student-Centered Curriculum is one which is completely and wholly rooted in the learner."—James M. Lee.

इस प्रकार के पाठ्यक्रम में छात्र की परिवर्तित आवश्यकताओं, अभिप्रायों, संवेगों आदि को आधार बनाया जाता है। शिक्षा-जगत् इस प्रकार के पाठ्यक्रम के लिए जॉन ड्यूवी के 'लेबोरेटरी स्कूल' (Laboratory School) का ऋणी है। यह पाठ्यक्रम क्रियात्मक (Functional) होता है जो सीखने वालों को साभिप्राययुक्त अनुभव (Purposeful Learning) प्रदान करता है। यह छात्रों पर सीखने का उत्तर दायित्व डालता है।

(4) जीवन की स्थायी स्थितियों पर आधारित पाठ्यक्रम—जेम्स एम० ली ने लिखा है :—"जीवन की स्थायी स्थितियों पर आधारित पाठ्यक्रम उन जारी रहने वाली स्थितियों में निहित है जिनमें प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को अपने विकास के प्रत्येक स्तर पर समाज में पाता है।"

"The persistent life situations curriculum is rooted in those continuing situations in which every individual finds himself in a particular society at every stage of his development."

—James M. Lee.

जेम्स एम० ली ने जीवन की इन स्थितियों को निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित किया है :—

(अ) वैयक्तिक क्षमताओं (Individual capacities) के विकास से सम्बन्धित स्थितियाँ।

(ब) सामाजिक साझेदारी (Social Participation) के विकास से सम्बन्धित स्थितियाँ।

(स) वातावरण से सम्बन्धित कारकों तथा शक्तियों के प्रति प्रतिक्रिया करने की योग्यता से सम्बन्धित स्थितियाँ।

प्रथम प्रकार की स्थितियों के अन्तर्गत स्वास्थ्य, बौद्धिक शक्ति, सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति एवं मूल्यांकन (Appreciation) तथा नैतिक शक्तियों के विकास से सम्बन्धित स्थितियों को स्थान दिया जाता है। द्वितीय प्रकार की स्थितियों में व्यक्ति-व्यक्ति के सम्बन्धों, सामूहिक सम्बन्धो तथा अन्तर-सामूहिक सम्बन्धों के विकास से सम्बन्धित स्थितियों को स्थान मिलता है। तीसरे प्रकार की स्थितियों के अन्तर्गत प्राकृतिक घटनाएँ, प्रौद्योगिक साधन, तथा आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक स्थितियाँ निहित है। ये समस्त स्थितियाँ पाठ्यक्रम के आयोजन के लिए मार्गदर्शक के रूप में कार्य करती है।

इस प्रकार के पाठ्यक्रम का सूत्रपात एफ० बी० स्ट्रेटमेयर (F. B. Stratemeyer) के विचारों से हुआ। यह पाठ्यक्रम छात्रों की तात्कालिक आवश्यकताओं एवं हितों पर आधारित है। ये आवश्यकताएँ एवं हित जीवन की स्थायी स्थितियों के क्षेत्र में निहित हैं। अतः इस प्रकार का पाठ्यक्रम कुछ सीमा तक बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम से समानता रखता है।

(5) **कोर-पाठ्यक्रम**—कोर-पाठ्यक्रम विषय-केन्द्रित और बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रमों के विरुद्ध प्रतिक्रिया के फलस्वरूप विकसित हुआ। इसका प्रचलन अमेरिका के विद्यालयों में बहुत अधिक है। इसका प्रमुख कारण आधुनिक युग की सामाजिक अव्यवस्था है। यह पाठ्यक्रम इस बात पर बल देता है कि विद्यालय अधिक सामाजिक दायित्वों को ग्रहण करें और सामाजिक रूप से कुशल व्यक्तियों का निर्माण करे। हम अपने कथन की पुष्टि में निम्नलिखित विद्वानों के विचारो का उल्लेख कर सकते है—

1. **कैसवेल :—"कोर पाठ्यक्रम, छात्र की महत्त्वपूर्ण व्यक्तिगत और सामाजिक समस्याओं में निहित है।"**
   "Core curriculum is rooted in a student's significant personal and social problems."—**Casewell.**

2. **स्पीयर्स—"कोरे-पाठ्यक्रम छात्रों के सामान्य विकास पर केन्द्रित है।"**
   "Core curriculum centers on the general development of the students."—**Harold Spears.**

3. **जेम्स एम० ली :—"कोर-पाठ्यक्रम वह है जो व्यक्तिगत तथा शाश्वत दोनों प्रकार के हितों से सम्बन्धित अन्तर-अनुशासनात्मक समस्याओं में केन्द्रित होता है। इसमें विषय-वस्तु को विचाराधीन समस्या के समाधान के लिए आवश्यक होने के नाते सीखने के लिए स्थान प्रदान किया जाता है।"**
   "The Core curriculum is one which centers around inter disciplinary problem of both enternal and personal

> concern. Subject-material is brought into the learning situation as it is needed to solve the problem under consideration."—James M. Lee.

अमेरिकन शिक्षा-शास्त्रियों ने प्रारम्भ में 1920 से 1930 तक कोर-पाठ्यक्रम के विकास के लिए कार्य किया। इन्होंने 8 वर्ष के अध्ययन के पश्चात् समस्या-समाधान विधि का प्रयोग करके विषय-वस्तु को एकीकृत करने के लिए एक केन्द्रीय प्रसंग (Central Theme) का विकास किया। ग्रेस एस० राइट (Grace S. Wright) ने प्रचलित कोर-पाठ्यक्रमों का अध्ययन किया। उसने बताया कि अमेरिका के विद्यालयों में चार प्रकार के कोर-पाठ्यक्रम विकसित किये गये हैं जिनमें प्रथम दो 'Core Types' हैं, क्योंकि इनके केवल 'कोर' का प्रतिनिधित्व करने के लिए कदम उठाया गया है। अन्तिम दो 'Total Core' हैं, क्योंकि ये वास्तविक 'कोर' का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनमें विषयों का पूर्णतः एकीकरण किया गया है।

(6) क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम—क्रिया-प्रधान पाठ्यक्रम क्रिया या कार्य को आधार बनाता है। इस पाठ्यक्रम के लिए शिक्षा-जगत् डॉ० जॉन ड्यूवी (Dr. John Dewey) का ऋणी है। यह पाठ्यक्रम इस कारण भी लोकप्रिय बना, क्योंकि यह बालकों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखता है। किलपैट्रिक (Kilpatrick) ने पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में ड्यूवी के विचारों का उल्लेख करते हुए लिखा है :—"शिक्षा खण्डित एवं निर्जीव पाठ्यक्रम है, जिसमें प्रत्येक शैक्षिक स्तर के लिए विशेष विषय निहित हों, प्रदान नहीं की जा सकती है। पाठ्यक्रम में वास्तविक छात्रों, जो वास्तविक समस्याओं के समाधान में संलग्न हैं, की एकीकृत क्रियाएँ निहित होनी चाहिए। समाधान के लिए उनकी खोज उनको कुछ परम्परागत विषयों की ओर अग्रसर करेगी, परन्तु वे जीवन की क्रियाओं से स्वतन्त्र होकर ज्ञान के पृथक् समूहों के रूप में अध्ययन नहीं किए जायेंगे। अतः विद्यालय में चलने वाली प्रत्येक अर्थपूर्ण क्रिया पाठ्यक्रम का निर्माण करती है।"

ड्यूवी इस बात मे विश्वास नही करता है कि ज्ञान क्रिया का मार्ग-दर्शक है, वरन् उसके अनुसार ज्ञान क्रिया का परिणाम है। उसका कथन है कि क्रिया का कार्य ज्ञान के स्रोत है। क्रिया अनुभव से पूर्व होती है। अतः उसके अनुसार अनुभव, ज्ञान या सीखना क्रिया के परिणाम हैं। इस प्रकार ड्यूवी ज्ञान एव अनुभव में कोई विशेष अन्तर नही मानता। उसका कथन है कि ज्ञान अनुभव से प्राप्त होता है और अनुभव क्रिया द्वारा उत्पन्न होता है। इस कारण उसके इस पाठ्यक्रम को 'अनुभव-प्रधान पाठ्यक्रम' (Experience-Centered Curriculum) के नाम से भी पुकारा जाता है।

उपसंहार

अन्त में, हम एड्रियन एम० ड्यूपुयस के शब्दों में कह सकते हैं :—"विद्यालय एक लोकतन्त्रीय समुदाय है जिसमें छात्र कम-से-कम प्रतिदिन 7 घण्टे रहते हैं। इसलिए, पाठ्यक्रम जीवन-यापन का एक अनुभव होना चाहिए, न कि वयस्क जीवन के लिए मात्र तैयारी।"

"The school is a community, a democratic community, where students live for at least seven hours a day. Therefore, the curriculum should be an experience in living, not solely a preparation for adult living."—Adrian M. Dupuis : '*Philosophy of Education in Historical Retrospective*', p. 23-24.

UNIVERSITY QUESTION

1. What are the main types of Curriculum ? Discuss fully.
   पाठ्यक्रम के प्रमुख प्रकार क्या हैं ? विस्तारपूर्वक विवेचना कीजिए।

48

एकीकृत पाठ्यक्रम
INTEGRATED CURRICULUM

"वह पाठ्यक्रम जिसके विषयों के बीच कोई अवरोध नहीं होता है, प्रायः 'एकीकृत पाठ्यक्रम' के नाम से पुकारा जाता है।"

"A curriculum in which barriers between subjects are broken down is often called an integrated curriculum."

—**Stella V. Henderson.**

एकीकृत पाठ्यक्रम का अर्थ व परिभाषा
Meaning & Definition of Integrated Curriculum

1. एकीकृत पाठ्यक्रम का अर्थ : Meaning of Integrated Curriculum—*प्रत्येक पाठ्यक्रम के विषयों को दो तरीकों से निर्धारित किया जा सकता* है। पहला तरीका यह है कि पाठ्यक्रम में जितने भी विषय रखे जायें, उनका एक दूसरे से कोई सम्बन्ध न हो। दूसरा तरीका यह है कि पाठ्यक्रम में जो भी विषय हों, उनका एक-दूसरे से सम्बन्ध हो।

दूसरे प्रकार के पाठ्यक्रम मे सब विषयों मे एक प्रकार की एकता होती है, जिसके फलस्वरूप 'ज्ञान की एकता' पाई जाती है। इसी प्रकार के पाठ्यक्रम को **एकीकृत या समेकित पाठ्यक्रम** कहते है। यह पाठ्यक्रम पहले प्रकार के पाठ्यक्रम से अधिक अच्छा समझा जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि पहले प्रकार के पाठ्यक्रम में बालको को विभिन्न विषयो को जो ज्ञान होता है, वह सदैव अलग-अलग रहता है। उस ज्ञान मे एकता का अभाव होता है। फलस्वरूप, बालकों को वास्तविक ज्ञान नही प्राप्त हो पाता है। दूसरे तरीके में ज्ञान की एकता होती है, जिससे बालकों का ज्ञान वास्तविक रूप धारण करता है।

2. एकीकृत पाठ्यक्रम की परिभाषा : Definition of Integrated Curriculum—हैंडरसन (Henderson) के अनुसार, एकीकृत पाठ्यक्रम का अर्थ और परिभाषा इस प्रकार है :-"वह पाठ्यक्रम जिसके विषयों के बीच में कोई अवरोध नहीं होता है, प्रायः 'एकीकृत पाठ्यक्रम' के नाम से पुकारा जाता है। इस प्रकार का पाठ्यक्रम उन अनुभवों को देता है, जिनको एकीकरण की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के लिए सुविधाजनक समझा जाता है, और जिनसे सम्बन्धित रहकर बालक अपने अनुभव को समझने या उसका पुनर्निर्माण करने में उपयुक्त पाठ्य-वस्तु को सीखते हैं। इस प्रकार का अनुभव-प्रधान पाठ्यक्रम, विषयों को अलग-अलग रखने और उनको शीर्षकों में बाँटने का अन्त करता है तथा ऐसे विषयों को स्थान देता है, जो बालक की रुचि के केन्द्र होते हैं।"

3. प्रचलित पाठ्यक्रम में एकीकरण का अभाव : Lack of Integration in Existing Curriculum—हमारे देश में जो विभिन्न पाठ्यक्रम शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर प्रयोग किए जा रहे हैं, उनमें से किसी में एकीकरण नहीं है। सभी पाठ्यक्रम खण्डों में बँटे हुए है। प्राथमिक विद्यालयों में बालक लगभग 40 मिनट पढ़ने में, 30 मिनट अंकगणित के प्रश्न करने में, 20 मिनट लिखने और शब्दो का उच्चारण करने में, और फिर 15 मिनट सुलेख लिखने में व्यतीत करते हैं। इन सभी क्रियाओं में सामान्य रूप से कोई सम्बन्ध नही है। कोई भी विचार किसी तरह से छात्रों को एक साथ नहीं मिलता है।

माध्यमिक विद्यालयों की स्थिति भी इतनी ही खराब है। वस्तुतः वे किसी भी प्रकार के सुधार को करने में बहुत देर लगाते हैं। छात्रों को अनेक विषय पढाए जाते है और उनका एक-दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। माध्यमिक विद्यालय मे साधारणत: 10 या 12 विषय और उपविषय होते हैं। इतने विषय छात्रों को बड़ी कठिनाई में फँसा देते है। गणित का शिक्षक बीजगणित पढ़ाना है। पर यह उस गणित के बारे में कुछ भी नहीं जानता है, जिसे भौतिक-शास्त्र का शिक्षक अपने छात्रों के लिए आवश्यक समझता है। विज्ञान का शिक्षक विज्ञान पढ़ाते समय सामाजिक अध्ययन या और किसी विषय के बारे में सोचता ही नहीं है। फलतः छात्र विज्ञान की विभिन्न शाखाओ मे किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं देखते है। इसका परिणाम यह होता है कि उनको वास्तविक संसार का बहुत कम ज्ञान हो पाता है। इस परिस्थिति मे सुधार करने के लिए पाठ्यक्रम में एकीकरण किया जाना आवश्यक है।

एकीकृत पाठ्यक्रम के प्रयोग में कठिनाइयाँ
Difficulties in the Use of Integrated Curriculum

1. बालकों की रुचियों को ध्यान में रखकर एकीकरण असम्भव : Integration Impossible in View of Children's Interest—विभिन्न विषयों का एकीकरण करते समय छात्रों की रुचि को ध्यान में रखना बहुत आवश्यक है। पर यदि उनकी रुचि पर ध्यान रखा जाता है, तो एकीकरण करना असम्भव हो जाता

है। हम यह स्वीकार कर सकते हैं कि कुछ छात्र ऐसे होंगे जो अपनी रुचियों का दमन करके एकीकृत पाठ्यक्रम का स्वागत करेंगे। पर अधिकांश छात्रों के बारे में यह बात नहीं कही जा सकती है। मान लीजिए—अंग्रेजी, इतिहास, भूगोल, विज्ञान और संस्कृत का एकीकृत पाठ्यक्रम बना दिया जाय। अब यदि बालक को इनमें से एक या एक से अधिक में तनिक भी रुचि नहीं है, तो इस पाठ्यक्रम का सफल होना असम्भव है। इसलिए, एकीकृत पाठ्यक्रम के प्रयोग में कठिनाई का अनुभव किया जा रहा है।

2. सब विषयों का एकीकरण असम्भव : Integration of All Subjects Impossible—यह बात असम्भव है कि सब विषयों का एकीकरण कर दिया जाय। प्राथमिक स्तर पर विषय बहुत कम होते है। पर वहाँ भी एकीकरण करना सम्भव नहीं है; उदाहरणार्थ—अंकगणित का सामाजिक विज्ञान से और उच्चारण का बालक की क्रिया से एकीकरण नहीं किया जा सकता है। इस बात की पुष्टि कार्लटन वाशबर्न (Carlton Washburne) ने की है, जिसने अमरीका के विनेटका (Winnetka) नामक स्थान पर अनेक वर्षों तक स्कूलों के सुपरिन्टेन्डेन्ट के रूप में काम किया है। उसका सुझाव है कि—एकीकरण के प्रयास में समय नष्ट न करके, एक मूलभूत पाठ्यक्रम (Basic Course) बनाया जाय। जैसे-जैसे बालक बड़ा होता जाय, वैसे-वैसे इस पाठ्यक्रम में उसके अनुभवों और प्रशिक्षण के अनुसार परिवर्तन किया जाय। इस पाठ्यक्रम में बालक के जीवन और रुचियों से सम्बन्धित विषय ही रखे जायें।

3. हाई स्कूल स्तर पर विषयों का एकीकरण अनुचित : Integration *Undesirable at High School Level*—*हैरिसन का मत है कि* हाई स्कूल स्तर पर विषयों का एकीकरण करना बहुत बड़ी गलती होगी। यही कारण है कि अमरीका के इन स्कूलों ने एकीकृत पाठ्यक्रम बनाने का प्रयास नहीं किया है। इनके पाठ्यक्रम आधुनिक बाल-मनोविज्ञान पर आधारित है। उनमें बालकों की क्रियाओं और रुचियों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है, और वे बालकों के लिए जीवन से सम्बन्धित परिस्थितियों का निर्माण करते है। पर किसी भी हाई स्कूल ने अपने पाठ्यक्रम को पूर्णतया परिवर्तित करके नहीं बनाया है।

UNIVERSITY QUESTION

1. What do you understand by integrated curriculum ? Is it possible to introduce this curriculum at the elementary and secondary stages of education ?

आप एकीकृत पाठ्यक्रम से क्या समझते है ? क्या इस पाठ्यक्रम को शिक्षा के प्रारम्भिक तथा माध्यमिक स्तरों पर लागू करना सम्भव है ?

खण्ड नौ

शिक्षा में नवीन प्रवृत्तियाँ
NEW TENDENCIES IN EDUCATION

"मनोवैज्ञानिक आन्दोलन मुख्यतः मन (Mind) तथा उसकी कार्य-प्रणाली से सम्बन्धित है।" —**Stephen Duggan.**

- शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति
  Psychological Tendency in Education
- शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति
  Scientific Tendency in Education
- शिक्षा में समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति
  Sociological Tendency in Education
- शिक्षा में समाहारक प्रवृत्ति
  Eclectic Tendency in Education

49

शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति

PSYCHOLOGICAL TENDENCY IN EDUCATION

"मनोवैज्ञानिक आन्दोलन, बालक के अध्ययन पर आधारित था। इसने उत्तम शिक्षण-विधियों, शिक्षकों के उत्तम प्रशिक्षण तथा शैक्षिक प्रक्रिया को उत्तम ढंग से समझाने के लिए कार्य किया।"

"The psychological movement was based upon child study. It led to better methods of teaching, better training of teachers and a better understanding of the educational process."

—**Stephen Duggan.**

विषय-प्रवेश

19वीं शताब्दी की शिक्षा—मनोवैज्ञानिक, वैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय प्रवृत्तियों से प्रभावित थी। शिक्षा पर इनका प्रभाव अभी तक चला आ रहा है। इनके प्रभाव के फलस्वरूप शिक्षा को आन्तरिक विकास के रूप में देखा गया। यह विकास बालक की जन्मजात मूलप्रवृत्तियों तथा आवेगों पर आधारित था। इस कारण बालक के अध्ययन पर बल दिया गया। बाल-अध्ययन का सूत्रपात रूसो के विचारों से हुआ। अतः पॉल मुनरो (Paul Monroe) के अनुसार शिक्षा में मनोवैज्ञानिक, वैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय प्रवृत्तियों का जन्म—रूसो की प्रकृतिवादी विचारधारा के कारण हुआ। रूसो के प्रभाव के फलस्वरूप पेस्टॉलॉजी (Pestalozzi) ने शिक्षा को मनोवैज्ञानिक बनाया। वही शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का सबसे प्रमुख प्रतिपादक था। उसके द्वारा चलाये गये इस आन्दोलन को हरबर्ट (Herbart) तथा फ्रॉबेल (Froebel) से बहुत प्रोत्साहन मिला।

हम इस अध्याय में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का अर्थ, उसकी विशेषताएँ तथा उसके प्रमुख प्रतिपादक—पेस्टॉलॉजी के विचारों का अध्ययन करेंगे।

मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का अर्थ
Meaning of Psychological Tendency

रूसो ने मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के लिए आन्दोलन का सूत्रपात किया। यद्यपि वह मनोवैज्ञानिक नहीं था, फिर भी वह पहला व्यक्ति था, जिसने शिक्षाविदों के ध्यान को पाठ्यक्रम एवं शिक्षक की ओर से हटाकर बालक पर केन्द्रित किया। उसने बालक को पूर्णतः जानने पर बल दिया। रूसो का कथन है :—**"बालक एक ऐसी पुस्तक है, जिसे शिक्षक को प्रारम्भ से लेकर अन्त तक जानना चाहिए।"**

"The child is a book which the teacher has to learn from *page to page*."—**Rousseau.**

अतः रूसो ने बालक के स्वभाव, रुचि, योग्यता, क्षमता आदि के अनुसार शिक्षा देने को कहा। बालक की रुचि, प्रवृत्ति, व्यवहार, स्वभाव आदि मनोविज्ञान के अध्ययन-विषय है। अतः शिक्षा में मनोविज्ञान का प्रयोग करना आवश्यक हो गया और इसी के फलस्वरूप शिक्षा मे मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का प्रसार हुआ और यह शिक्षा का एक मुख्य आधार बन गयी।

शिक्षा मे मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का अर्थ—शिक्षा को मनोविज्ञान पर आधारित करना है, जिसके अनुसार बालक की प्रकृति, शक्तियाँ, प्रवृत्तियाँ, योग्यताएँ, इच्छाएँ, आवश्यकताएँ, रुचियाँ आदि को आधार बनाकर शिक्षा के विभिन्न अगों का स्वरूप निश्चित किया गया। शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति को सर्वप्रथम पेस्टॉलॉजी ने क्रियात्मक रूप प्रदान किया। मुनरो ने मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के अर्थ को इस प्रकार स्पष्ट किया है :—**"शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति, प्रकृतिवादी आन्दोलन को वैज्ञानिक सिद्धान्तों और व्यावहारिक कक्षा-विधियों में परिवर्तित करती है।"**

"The psychological tendency in education was the reduction of the naturalistic movement to scientific principles and to practical school-room procedures."—**Paul Monroe.**

मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताएँ
Main Characteristics of Psychological Tendency

मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के कारण शिक्षा के क्षेत्र में जो परिवर्तन हुए, उनके फलस्वरूप शिक्षा की परिभाषा, उद्देश्य, शिक्षण-विधि, पाठ्यक्रम आदि सभी ने नवीन रूप ग्रहण किया। इनके परिणामस्वरूप, इस आन्दोलन की कुछ प्रमुख विशेषताएँ प्रकट हुई, जो अग्रांकित है—

1. बालक का ज्ञान : Knowledge of Child—मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषता—बालक के लिए सहानुभूति तथा उसके विषय में पूर्ण ज्ञान प्राप्त

करना है। यह प्रवृत्ति बालक तथा उसके मन (Mind), उसकी रुचियों, क्षमताओं आदि के ज्ञान पर बल देती है। इस विशेषता के फलस्वरूप सम्पूर्ण शैक्षिक व्यवहार (Educational Practice) एव सिद्धान्त, बचपन (Childhood) के अध्ययन तथा बालक से स्थापित सम्पर्कों से प्राप्त सामग्री के आधार पर निर्मित किए गए। इसी प्रवृत्ति के फलस्वरूप आज शिक्षा बाल-केन्द्रित मानी जाती है, जिसमें बाल-प्रकृति के अनुसार पाठ्यक्रम, पाठन-विधि आदि का निर्धारण किया जाता है।

2. बालक को बालक मानकर शिक्षा देना : To Impart Education to Child as a Child—मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के सूत्रपात से पूर्व बालक को एक लघु प्रौढ़ मानकर शिक्षा प्रदान की जाती थी। परन्तु, इस प्रवृत्ति ने उक्त धारणा का विरोध किया और संसार के समक्ष यह विचार प्रस्तुत किया :—**"बालक एक छोटा मनुष्य नहीं वरन् मनुष्य बनने के मार्ग पर है।"** ("Child is not so much a little man, as a man in the making.") इसलिए, इसके प्रवर्त्तकों ने इस बात पर बल दिया कि बालक को बालक मानकर शिक्षा दी जानी चाहिए।

3. विकास की विभिन्न अवस्थाओं पर बल : Emphasis on Different Stages of Development—मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति की एक विशेषता यह है कि इसके द्वारा विकास की विभिन्न अवस्थाओं पर बल दिया जाता है। इस प्रवृत्ति के प्रवर्त्तक बालक को विकासशील प्राणी मानते है, जिसका स्वाभाविक रूप से विकास होता है और निरन्तर होता रहता है। इसी कारण विकास की अवस्थाओं का महत्त्व है। अत. विकास की प्रत्येक अवस्था पर उसकी विशेपताओ के अनुसार शिक्षा का प्रबन्ध करना चाहिए।

4. व्यक्तिगत विभिन्नताओं पर बल : Emphasis on Individual Differences—मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति व्यक्तिगत भेद के आधार पर प्रत्येक व्यक्ति की शिक्षा प्रदान करने पर बल देती है। मनोविज्ञान के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से भिन्न है। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी-अपनी योग्यता, क्षमता, रुचि, आवश्यकता, शक्ति, सीमाएँ आदि होती हैं। इनको ध्यान में रखकर प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए।

5. शिक्षा का आधार, मनोविज्ञान : Psychology the Basis of Education—शिक्षा-मनोविज्ञान पर आधारित होनी चाहिए। इसके लिए मानव-व्यवहार के सिद्धान्तों को जानना आवश्यक है। मानव-व्यवहार के सिद्धान्तो को जानने के लिए मनोविज्ञान की सहायता लेना अनिवार्य है। इसकी पुष्टि में हम नीचे कुछ विचारको के विचार प्रस्तुत कर रहे हैं :—

(1) पेस्टॉलॉजी—**"शिक्षक को बालक के मन (Mind) का ज्ञान होना आवश्यक है।"**

(2) हरबर्ट—**"शिक्षा-सिद्धान्त का आधार मनोविज्ञान होना चाहिए।"**

(3) फ्रॉबेल—**"अवस्था-विशेष के अनुभवों के आधार पर ही हमको किसी को बालक, युवक या वृद्ध कहना उपयुक्त है।"**

(4) मॉण्टेसरी—"एक शिक्षक जितना अधिक प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का ज्ञान रखता है उतना ही अधिक वह यह जानता है कि किस प्रकार पढ़ाया जाय।"

6. प्रकृतिवादी शिक्षा का विकास व स्पष्टीकरण : Clarification & Development of Naturalistic Education—मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति की एक अन्य विशेषता है—प्रकृतिवादी शिक्षा का विकास एवं स्पष्टीकरण। इस प्रवृत्ति का मूलभूत विचार यह है कि शिक्षा एक कृत्रिम प्रक्रिया नहीं है, जिसके द्वारा भाषा तथा साहित्य के विभिन्न रूपों या औपचारिक शिक्षा को प्राप्त किया जाता है, वरन् यह मानव प्रकृति में निहित गुणों या क्षमताओं का प्रकटीकरण है। मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति इन विचारों को वैज्ञानिक ढंग से रखने का प्रयास करती है और इनको विद्यालय के वास्तविक कार्यों में स्थूल रूप प्रदान करती है।

7. शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर पर ध्यान : Attention to the Elementary Stage in Education—शताब्दियों तक शिक्षा मे माध्यमिक तथा उच्च स्तरों पर ध्यान दिया गया। परन्तु, इस मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के कारण प्रारम्भिक स्तर की शिक्षा पर शिक्षा-शास्त्रियों का ध्यान गया। इसके सूत्रपात से अब तक मुख्यतः शिक्षा-सिद्धान्त एवं व्यवहार में जो विचार आये है, वे प्रारम्भिक स्तर की शिक्षा से सम्बन्धित है।

8. सार्वभौमिक शिक्षा पर बल : Emphasis on Universal Education—मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के कारण सार्वभौमिक शिक्षा की माँग की गई। रूसो के इस विचार को कि 'शिक्षा सभी के लिए हो', इस प्रवृत्ति के मुख्य प्रवर्त्तक पेस्टॉलॉजी ने आगे बढाया। उसने शिक्षा को वैयक्तिक विकास की प्रकृति माना है। परन्तु उसने वैयक्तिक विकास को सामाजिक विकास का आधार माना है। उसका मत है कि यदि शिक्षा मूलतः कृत्रिम न होकर स्वाभाविक है, तो इसके परिणाम सार्वजनिक एवं सार्वभौमिक होंगे।

मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का प्रमुख प्रवर्त्तक : पेस्टॉलॉजी
Chief Expounder of Psychological Tendency : Pestalozzi

जीवन-परिचय—जॉन हेनरिक पेस्टॉलॉजी (Johann Heinrick Pestalozzi) का जन्म स्विट्जरलैण्ड के ज्यूरिक (Zurick) नामक नगर मे 1746 ई० में हुआ था। जब वह पाँच वर्ष का था, तभी उसके पिता की मृत्यु हो गई। इसके उपरान्त, उसका लालन-पालन उसकी उदार माता द्वारा किया गया। वह माता के अतिरिक्त अपने दादा तथा बड़े भाई से भी प्रभावित हुआ। दादा के पास रहकर उसमे प्रकृति के लिए प्रेम उत्पन्न हुआ। उसने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के स्कूल मे प्राप्त की। वह स्वभाव से बड़ा ही सरल था। इस कारण उसके साथी उसे मूर्ख या भोंदू कहा करते थे। प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद उसने स्विट्जरलैण्ड के एक विश्व-विद्यालय मे प्रवेश लिया। परन्तु उसे वहाँ सफलता नही मिली।

1769 ई० में पेस्टॉलॉजी ने विवाह किया और न्यूहॉफ (Neuhof) में कृषक बनने की इच्छा से वहाँ सपरिवार रहने लगा। परन्तु, कृषक के रूप में उसे सफलता न मिली। 1769-1827 तक के उनके जीवन को निम्नलिखित कालों में विभाजित किया जा सकता है—

1. औद्योगिक शिक्षा में प्रयोग (1774-1780)

2. शैक्षिक एवं सामाजिक सुधार के लिए साहित्यिक कार्यों का युग (1780-1798)

3. प्रारम्भिक विद्यालय के विषयों के शिक्षण में सुधार लाने का युग (1798-1827)

इस महान् शिक्षा-शास्त्री की प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार है –

(i) ईवनिंग आवर ऑफ ए हर्मिट (Evening Hour of a Hermit, 1780)

(ii) लियोनार्ड एण्ड गर्ट्रूड (Leonard & Gertrude, 1781)

(iii) हाउ गर्ट्रूड टीचेज हर चिल्ड्रेन (How Gertrude Teaches Her Children, 1801)

(iv) माई एक्सपीरिएँसेज (My Experiences, 1825)

इस महान् शिक्षा-शास्त्री ने निम्नलिखित स्कूलो की स्थापना की—

(i) निर्धनों के लिए औद्योगिक स्कूल, न्यूहॉफ़ (1775-80)

(ii) अनाथों के लिए स्कूल, स्टैन्ज (Stanz) (1798)

(iii) वरडन का विद्यालय (1805-1825)

पेस्टॉलॉजी के वरडन (Yverdon) के विद्यालय में हरबर्ट (Herbart) तथा फ्रोबेल (Froebel) ने भी अध्ययन किया। इस विद्यालय को भी उसे बन्द करना पड़ा। 1927 में इस महान् शिक्षा-शास्त्री एव समाज-सुधारक की मृत्यु हो गई।

पेस्टॉलॉजी के शैक्षिक विचार
Educational Ideas of Pestalozzi

पेस्टॉलॉजी के शैक्षिक विचारों का निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत विवेचन किया जा रहा है :—

1. शिक्षा का अर्थ : Meaning of Education – पेस्टॉलॉजी का विश्वास था कि प्रत्येक व्यक्ति कुछ जन्मजात शक्तियो के साथ जन्म लेता है। अतः उसे ऐसे शिक्षा-विधान की आवश्यकता है जो इन जन्मजात शक्तियों के अनुसार उसका विकास कर सके। अतः उसने शिक्षा के अर्थ को इस दृष्टिकोण से व्यक्त किया। पेस्टॉलॉजी का कथन है—**"शिक्षा व्यक्ति का आंगिक विकास है।"**

"Education is the organic development of the individual."

—**Pestalozzi.**

पेस्टॉलॉजी ने उक्त दृष्टिकोण से शिक्षा को परम्परागत ढंग से इन शब्दों में परिभाषित किया है—"शिक्षा मानव-प्राणी की सभी शक्तियों एवं योग्यताओं का स्वाभाविक, प्रगतिशील तथा सामंजस्यपूर्ण विकास है।'

"Education is the natural, progressive, harmonious development of all the powers and faculties of the human being."

—Pestalozzi.

2. शिक्षा का उद्देश्य : Aim of Education—पेस्टॉलॉजी ने व्यक्ति के विकास तथा समाज के उत्थान के लिए शिक्षा को महत्त्वपूर्ण साधन माना है। उसने शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण इन्हीं दृष्टिकोणों से किया है। उसने शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्यों पर बल दिया है—

(i) शिक्षा का उद्देश्य—सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण से सम्बन्धित होना चाहिए।

(ii) शिक्षा का मुख्य उद्देश्य—विद्यालय में अर्जित उपलब्धियों में पूर्णता लाना नहीं है, वरन् जीवन के लिए तैयार करना है और न आंख मूंद कर आज्ञा पालन करने की आदत को ग्रहण करना है वरन् स्वतन्त्र रूप से कार्य करने की क्षमता प्रदान करना है।

(iii) सम्पूर्ण निर्देश का उद्देश्य – मानव-प्रकृति का विकास करना है। यह विकास तभी सम्भव है जब उसकी शक्तियों तथा गुणों का सामंजस्यपूर्ण विकास हो और जीवन में मनुष्यत्व को विकसित किया जाय।

"The aim of all instructions is and can be nothing but the development of human nature, by the harmonious cultivation of its powers and talents and the promotions of manliness in life."

—*Pestalozzi.*

3. पाठ्यक्रम : Curriculum—पेस्टॉलॉजी ने अपने समय के पाठ्यक्रम को संकीर्ण एवं अवास्तविक बताया। उसने पाठ्यक्रम के निर्धारण के लिए निम्नलिखित सिद्धान्तों पर बल दिया—

(i) विकास का सिद्धान्त।

(*ii*) उपयोगिता का सिद्धान्त।

(iii) वैयक्तिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं का सिद्धान्त।

इन सिद्धान्तों के अनुसार उसने पाठ्यक्रम में खेल-कूद, कृषि, भाषा, गणित, इतिहास, भूगोल, उत्पादन सम्बन्धी क्रियाएँ, आचार-शास्त्र आदि को स्थान प्रदान किया।

4. शिक्षा-संगठन : Educational Organization—पेस्टॉलॉजी ने बरडन के विद्यालय में शिक्षा को निम्न प्रकार से संगठित किया—

(*i*) प्राइमरी कक्षा—इसमें 8 वर्ष तक के बच्चे शिक्षा प्राप्त करते थे।

(ii) लोअर कक्षा—इसमें 8 से 11 वर्ष तक के बच्चे पढ़ते थे।

(iii) अपर कक्षा—यह 11 से 13 वर्ष तक के बच्चों के लिए थी।

इस प्रकार पेस्टॉलॉज़ी ने प्रारम्भिक शिक्षा को आयु के आधार पर उक्त तीन वर्गों में विभक्त किया था। उसने प्रथम वर्ग के लिए समय-तालिका का कोई बन्धन नहीं रखा। अन्य दोनों वर्गों के लिए उसने समय-तालिका निर्धारित की थी।

5. शिक्षण-विधि : Teaching Method—पेस्टॉलॉज़ी ने परम्परागत शिक्षण-विधियों का विरोध किया। वह वस्तु को बिना समझे रटने की विधि के विरुद्ध था। उसका विचार था कि बालक स्वयं ज्ञान की खोज करे। साथ ही वह बालकों को अपने पैरों पर खड़ा करना चाहता था। इस दृष्टि से उसने अग्रांकित शिक्षण-विधियों पर बल दिया—

(i) निरीक्षण-विधि (Observation Method)

(ii) क्रिया-विधि या करके सीखना (Activity Method or Learning by Doing)

(iii) आगमन विधि (Inductive Method)

उक्त विधियों के अतिरिक्त उसने एक नवीन विधि को जन्म दिया, जो आन्श्वाग (Anschaunng) के नाम से प्रसिद्ध है। इसके लिए उपयुक्त शब्द खोजना कठिन कार्य है। अंग्रेजी में आन्श्वांग के लिए जो शब्द प्रयोग में लाए जा सकते है, उनमें से निम्नलिखित अर्थपूर्ण हैं—

(i) तात्कालिक जागरूकता (Immediate Awareness)

(ii) प्रत्यक्ष परिचय (Direct Acquaintance)

(iii) प्रत्यक्ष अनुभूति (Direct Appreciation)

(iv) स्थूल अनुभव (Concrete Experience)

(v) व्यक्तिगत सम्पर्क (Personal Contact) आदि।

वस्तुतः आन्श्वाग का अर्थ है :—"इन्द्रिय अनुभव, निरीक्षण, अन्तर्ज्ञान (Intuition) प्रथम अनुभव (First-hand impression)।" पेस्टॉलॉज़ी ने इस विधि का प्रयोग आकृति (Form), संख्या (Number) तथा भाषा के अध्यापन में किया। इसी आधार पर उसने अपनी विधि के तीन पक्ष निर्धारित किए—आकृति या रूप, संख्या तथा नाम।

6. अनुशासन : Discipline—पेस्टॉलॉज़ी परम्परागत विद्यालयों में प्रचलित कड़े नियन्त्रण को देखकर बड़ा दुःखी हुआ। उसका विश्वास था कि बालक, ईश्वर का अंश है। अतः उसे प्रेम एवं सहानुभूति के साथ पथ-प्रदर्शित किया जाना चाहिए। उसको दण्डित या भयभीत न किया जाय।

7. शिक्षक का स्थान : Place of Teacher—पेस्टॉलॉज़ी का विचार था कि बालक की स्वाभाविक शक्तियों के विकास के अनुसार ही शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए। इस दृष्टि से उसने शिक्षक पर दायित्व डाला कि वह बालक के स्वभाव और

उसकी सम्भावनाओं (Potentialities) को पूर्णतः जाने। साथ ही वह उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करे। पेस्टॉलॉजी का विचार था कि शिक्षक को प्रेम द्वारा बालक का पथप्रदर्शन करना चाहिए। ऐसा वह तभी कर सकता है, जब शिक्षक तथा बालक में पिता तथा पुत्र जैसा प्रेम हो।

मोर्फ़ (Morf) ने पेस्टॉलॉजी के शिक्षा-सिद्धान्त एवं पद्धति सम्बन्धी विचारो का सार निम्न प्रकार से दिया है :—

(i) निरीक्षण—निर्देश का आधार है।
(ii) भाषा को निरीक्षण या वस्तु से सम्बन्धित किया जाना चाहिए।
(iii) सीखते समय निर्णय तथा आलोचना को अवसर प्रदान नही किया जाना चाहिए।
(iv) प्रत्येक विषय के शिक्षण को सरलतम तत्वों से प्रारम्भ करना चाहिए और धीरे-धीरे मनोवैज्ञानिक क्रम से आगे बढ़ना चाहिए।
(v) शिक्षण के समय प्रत्येक शिक्षण-बिन्दु पर छात्र का अधिकार कराने के लिए उसे समय एवं अवसर प्रदान करना चाहिए।
(vi) शिक्षण का उद्देश्य विकास से सम्बन्धित होना चाहिए।
(vii) शिक्षक को बालक की वैयक्तिकता (Individuality) का आदर करना चाहिए।
(viii) प्रारम्भिक शिक्षा का अन्तिम ध्येय—बालक की बुद्धि की शक्तियों का विकास एव वृद्धि करना है।
(ix) अनुशासन की स्थापना प्रेम के आधार पर हो।
(x) शक्ति, ज्ञान से और कौशल, सीखने से सम्बन्धित होना चाहिए।
(xi) निर्देश, शिक्षा के उच्चतर उद्देश्यों के अधीन रहना चाहिए।

उपसंहार

अन्त में, हम थॉमसन के शब्दों मे कह सकते हैं :—"पेस्टॉलॉजी ने 19वीं शताब्दी के प्रारम्भिक विद्यालयों के उद्देश्य एवं प्रयोजन निर्धारित किए। साथ ही उसने इन विद्यालयों को चर्च के उद्देश्यों को पूरा करने वाले साधन के स्थान पर समाज को पुनर्जीवन देने के लिए तथा सभी के कल्याण को आगे बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण साधन बनाया। उसने शिक्षक-प्रशिक्षण की समस्या के सम्पूर्ण स्वरूप को बदल दिया, और नार्मल स्कूलों की आवश्यकता को प्रकट किया।"

"Pestalozzi gave aim and purpose to the elementary school of the nineteenth century transforming it from an instrument of the church for church ends to an instrument of society to be used for its own regeneration and advancing the welfare of all

the changed whole face of teacher training problem and made the necessity of normal schools apparent."—Thomson.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss briefly the meaning and characteristics of the psychological tendency.

मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के अर्थ एवं उसकी विशेषताओं का संक्षेप में विवेचन कीजिए।

2. Describe the educational ideas of Pestalozzi.

पेस्टॉलॉजी के शैक्षिक विचारों का वर्णन कीजिए।

50

शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति

SCIENTIFIC TENDENCY IN EDUCATION

"19वीं शताब्दी की शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति उस आन्दोलन की प्रगति बढ़ाना है, जो 17वीं और 18वीं शताब्दियों में इन्द्रिय यथार्थवाद द्वारा चलाया गया था।"

"The scientific tendency during the nineteenth-century education is but a continuation of the movement sponsored by sense-realism of the seventeenth and eighteenth centuries."—**Paul Monroe.**

विषय-प्रवेश

विज्ञान की प्रगति 15वी शताब्दी से हो रही थी। वैज्ञानिक अनुसंधानों तथा आविष्कारो के फलस्वरूप 17वी शताब्दी में वैज्ञानिक प्रवृत्ति का विकास हुआ। वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने 17वी शताब्दी के शिक्षा-शास्त्रियो को प्रभावित किया। इस प्रवृत्ति से प्रभावित होकर शिक्षा-शास्त्रियों ने शिक्षा की विषय-वस्तु (Content of Studies) मे विज्ञान को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करने तथा 'आगमन विधि' (Inductive Method) को प्रयोग में लाने की मांग की; पर सैद्धान्तिक एवं साहित्यिक शिक्षा के समर्थकों के घोर-विरोध के कारण उनको कोई विशेष सफलता नहीं मिली। किन्तु 18वीं शताब्दी में प्रकृतिवादी एव मनोवैज्ञानिक आन्दोलनों ने वैज्ञानिक प्रवृत्ति के विकास में पर्याप्त सहयोग दिया। रूसो तथा पेस्टॉलॉजी ने इस प्रवृत्ति को आगे बढ़ाने में पर्याप्त सहायता दी। परन्तु वैज्ञानिक प्रवृत्ति 19वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विशेष रूप से फली-फूली। इस शताब्दी में *विज्ञान के अध्ययन एवं अध्यापन* पर विशेष बल दिया गया। इस प्रवृत्ति की उन्नति के प्रमुख कारण अग्रलिखित हैं :—

1. विभिन्न वैज्ञानिक आविष्कारों के परिणामस्वरूप योरोप में औद्योगिक क्रान्ति हुई जिसने विज्ञान के महत्त्व को बढ़ाया।
2. आधुनिक जीवन की तैयारी के लिए सैद्धान्तिक एवं साहित्यिक शिक्षा को अनुपयुक्त समझा गया।
3. मानव में प्रत्येक कार्य के कारण को समझने के लिए प्रबल इच्छा जाग्रत होने के फलस्वरूप रूढ़िवादिता, अज्ञान, अन्धविश्वास आदि का अन्त हो गया।
4. भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र, भूगर्भशास्त्र (Geology), शरीरशास्त्र, वनस्पति-शास्त्र आदि विज्ञानों का बहुत विकास हुआ।
5. जीव-विज्ञान के विकास-सिद्धान्त (Theory of Evolution) ने मनुष्यों के विचारों को पर्याप्त रूप से परिवर्तित कर दिया।
6. मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति विशेषतः पेस्टॉलॉजी के विचारों ने वैज्ञानिक प्रवृत्ति के विकास में पर्याप्त सहयोग दिया।

वैज्ञानिक प्रवृत्ति का अर्थ
Meaning of Scientific Tendency

विज्ञान की प्रगति ने मानव-जीवन में क्रान्ति उत्पन्न कर दी, जिसके परिणामस्वरूप लोगों ने आधुनिक जीवन की तैयारी के लिए साहित्यिक शिक्षा को अनुपयुक्त समझा और उस शिक्षा की माँग की जो व्यावहारिक जीवन में उपयोगी सिद्ध हो। इस दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप पाठ्यक्रम में वैज्ञानिक विषयों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करने पर बल दिया गया। अतः हम कह सकते हैं :—"शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति का अर्थ है—शिक्षा के पाठ्यक्रम में विज्ञानों और शिक्षा-विधि में वस्तुपरक शिक्षण (Objective Teaching), इन्द्रिय-प्रशिक्षण (Sensory Training), निरीक्षण (Observation) आदि पर बल देना जिससे बालक भविष्य में पूर्ण जीवन व्यतीत करने में सफल हो सके।"

वैज्ञानिक प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताएँ
Main Characteristics of Scientific Tendency

सामान्यतः शिक्षा में विज्ञानों का अध्ययन वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग तथा तर्क एवं प्रमाण पर आधारित करके ज्ञान को ग्रहण करना वैज्ञानिक प्रवृत्ति के द्योतक हैं। पॉल मुनरो ने लिखा है :—"शिक्षा में आधुनिक वैज्ञानिक प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताएँ प्रायः वे ही ठीक हैं जो इन्द्रिय-यथार्थवादी प्रवृत्ति की हैं। प्रथम—विषय-वस्तु के महत्त्व पर बल तथा प्रकृति की घटनाओं का ज्ञान; और द्वितीय—अध्ययन की आगमन विधि के अनुभवातीत महत्त्व को स्वीकार करना।"

"The dominant characteristics of the modern scientific tendency in education were the same as those of the sense-realistic ten-

dency. These were : first, the emphasis upon the importance of the content of studies and of the knowledge of the phenomena of nature; and, second, a recognition of the transcendent value of the inductive method of study."—**Paul Monroe** : *A Brief Course in the History of Education*, p. 350.

वैज्ञानिक प्रवृत्ति की उक्त विशेषताओं के अतिरिक्त, अन्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं :—

1. पाठ्यक्रम में वैज्ञानिक विषयों की माँग : Demand of Scientific Subjects in Curriculum—वैज्ञानिक प्रवृत्ति के समर्थकों ने यह स्पष्ट कर दिया कि मानव-जीवन में वैज्ञानिक विषयों की उपयोगिता अधिक है, क्योंकि साहित्यिक शिक्षा-मानव को भावी जीवन के लिए तैयार नहीं कर सकती है। वैज्ञानिक विषयों द्वारा व्यक्ति को व्यावहारिक जीवन के लिए तैयार किया जा सकता है। इस दृष्टि से उन्होंने वैज्ञानिक विषयों—शरीर-विज्ञान, स्वास्थ्य-विज्ञान, रसायन एवं भौतिक विज्ञान, भूगोल, गणित आदि को पाठ्यक्रम में महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करने की माँग की।

2. विषय-वस्तु पर बल : Emphasis on Content of Studies—इस प्रवृत्ति के समर्थकों ने *विषय-वस्तु पर अधिक बल दिया है। उनका मत है कि ज्ञान* की प्राप्ति तभी हो सकती है जब हम विषय-वस्तु को जान लेते हैं और विषय-वस्तु की सार्थकता एवं उपयोगिता तभी है जब हम उसे जीवन में प्रयोग में लाते है।

3. आगमन विधि पर बल : Emphasis on Inductive Method—यह प्रवृत्ति, शिक्षण में आगमन विधि के प्रयोग पर बल देती है; क्योंकि इसमें विश्लेषण, स्वयं कार्यशीलन तथा सत्यान्वेषण पर अधिक बल दिया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें सीखने वाला स्वयं निष्कर्ष निकालता है।

4. सैद्धान्तिक व साहित्यिक शिक्षा का विरोध : Opposition of Theoretical & Literary Education—इस प्रवृत्ति के समर्थकों ने सैद्धान्तिक एवं साहित्यिक शिक्षा का घोर विरोध किया और इसके विपरीत व्यावहारिक शिक्षा पर बल दिया, जिसके द्वारा भविष्य में पूर्ण जीवन को सफलतापूर्वक व्यतीत किया जा सके।

5. विज्ञान द्वारा प्रकृति का वास्तविक ज्ञान : Real Knowledge of Nature through Science—इस प्रवृत्ति के समर्थकों ने यह विचार प्रतिपादित किया है कि प्रकृति का वास्तविक ज्ञान विज्ञानों के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

6. उदार शिक्षा का नवीन अर्थ : New Meaning of Liberal Education—विज्ञान की उन्नति ने समाज की संस्कृति को परिवर्तित किया। इस परिवर्तन ने उदार शिक्षा के दृष्टिकोण को भी बदला। प्राचीन काल में ग्रीक, लैटिन, साहित्य, कला, दर्शन आदि के अध्ययन को उदार शिक्षा के नाम से पुकारा जाता था। परन्तु

वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने उसके अर्थ को नवीन रूप प्रदान किया । इस सम्बन्ध में पॉ मुनरो ने लिखा है—"उदार शिक्षा वह है जो मनुष्य को अपने पेशे के लिए, नागरि के रूप में अपने जीवन के लिए और अपने जीवन की समस्त क्रियाओं को करने योग्य बनाती है।"

वैज्ञानिक प्रवृत्ति का प्रमुख प्रवर्त्तक : हरबर्ट स्पेन्सर
Chief Expounder of Scientific Tendency : Herbert Spencer

जीवन-परिचय—महान् शिक्षाशास्त्री हरबर्ट स्पेन्सर का जन्म इंगलैण्ड के डर्बी नामक नगर में 1820 ई० में हुआ । उसके परिवार का शैक्षिक स्तर उच्च श्रेणी का था। स्पेन्सर के पितामह तथा चाचा दोनों ही विद्वान् थे । उसके पित विज्ञान के शिक्षक थे । इस कारण स्पेन्सर की भी रुचि विज्ञान में बढ़ी । उसने 17 वर्ष तक अपने चाचा की देखरेख में शिक्षा ग्रहण की। इस अवधि में उसने गणित, विज्ञान, इन्जीनियरिंग, प्रकृति अध्ययन, अर्थशास्त्र आदि विषयों का ज्ञान प्राप्त किया ।

स्पेन्सर पर तत्कालीन दार्शनिक एवं विचारक हक्सले का बड़ा प्रभाव पड़ा 1858 ई० तक उसने उनके सम्पर्क में रहकर लेखन व सम्पादन में ख्याति प्राप्त कर ली। इस महान् शिक्षाशास्त्री, राजनीतिक विचारक तथा विकासवादी का 1903 में ब्राइटन में देहान्त हो गया ।

स्पेन्सर की रचनाएँ—हरबर्ट स्पेन्सर ने 1861 ई० से लेखन-कार्य किया । उसके महत्त्वपूर्ण लेख एवं ग्रन्थ निम्नलिखित है :—

(i) What Knowledge is of Most Worth ?
(ii) Intellectual Education.
(iii) Moral Education.
(iv) Physical Education.
(v) फर्स्ट प्रिन्सिपल्स (First Principles, 1861)
(vi) दी फर्स्ट प्रिन्सिपल्स ऑफ बॉयलॉजी (The First Principles of Biology, 1864, 67)
(vii) दी प्रिंसिपल्स ऑफ ऐथिक्स (The Principles of Ethics, 1892)
(viii) दी प्रिंसिपल्स ऑफ़ सोशियालॉजी (The Principles of Sociology, 1896)
(ix) मैन वर्सेज स्टेट (Men vs. State)
(x) फैक्ट्स एण्ड कमैण्ट्स (Facts and Comments, 1902)

हरबर्ट स्पेन्सर के शैक्षिक विचार : Educational Ideas of Herbert Spencer—हरबर्ट स्पेन्सर के शैक्षिक विचारों का अग्रलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत विवेचन किया जा रहा है—

1. शिक्षा का अर्थ : Meaning of Education—स्पेन्सर का कथन है :—"शिक्षा : जीवन की तैयारी है।"("Education is the preparation of life.")।

2. शिक्षा का उद्देश्य : Aim of Education—हरबर्ट स्पेन्सर ने शिक्षा का उद्देश्य-पूर्ण जीवन (Complete living) माना है। शिक्षा के उद्देश्य को बताते हुए स्पेन्सर ने लिखा है—"शिक्षा को हमें पूर्ण जीवन के नियमों और ढंगों से परिचित कराना चाहिए। शिक्षा का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य—हमें जीवन के लिए इस प्रकार तैयार करना है कि हम उचित प्रकार का व्यवहार कर सकें और शरीर, मन तथा आत्मा का सदुपयोग कर सकें।"

स्पेन्सर ने इस बात पर बल दिया है कि हमें शिक्षा द्वारा पूर्ण जीवन के कार्यों—आत्म-रक्षा, जीविकोपार्जन, वंश-वृद्धि एवं पालन-पोषण, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक तथा अवकाश के सदुपयोग से सम्बन्धित कार्यों को करने के लिए तैयार करना चाहिए, जिससे हम जीवन का आनन्द ले सकें, नागरिक के रूप में अपने दायित्वों का निर्वाह कर सकें, अपने बच्चों की देखभाल एवं पालन-पोषण कर सकें, अपने सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सम्बन्धों को कायम रख सकें।

3. पाठ्यक्रम : Curriculum—स्पेन्सर ने पूर्ण जीवन की समस्त क्रियाओं को पाँच भागों में बाँटा है और उनसे सम्बन्धित विषयों को पाठ्यक्रम में स्थान प्रदान किया है ताकि पूर्ण जीवन के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सके।

जीवन की क्रियाएँ	पाठ्य-विषय
1. आत्म-रक्षा की क्रिया	शरीर-विज्ञान और स्वास्थ्य-विज्ञान (*Physiology and Hygiene*)
2. जीवन को परोक्ष रूप में सुरक्षित रखने की क्रियाएँ	भाषा, गणित, भूगोल, पदार्थ-विज्ञान (Language, Mathematics, Geography and Physical Science)
3. शिशु-रक्षा सम्बन्धी क्रियाएँ	गृह-शास्त्र, शरीर-विज्ञान, तथा बाल-मनोविज्ञान (Domestic Science, Physiology and Child Psychology)
4. समाज-रक्षा सम्बन्धी क्रियाएँ	इतिहास, समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र (History, Sociology and Economics)
5. अवकाश-सम्बन्धी क्रियाएँ	साहित्य, संगीत, कविता तथा ललित कलाएँ (Literature, Music, Poetry and Fine Arts)

4. शिक्षण-विधि : Method of Teaching—स्पेन्सर का विचार था कि शिक्षण-विधि को रोचक, लाभप्रद एवं मानसिक विकास की स्वाभाविक प्रक्रिया के अनुसार होना चाहिए। इस दृष्टि से उसने अग्रांकित शिक्षण-सूत्र (Maxims of Teaching) निकाले—

(i) सरल से जटिल की ओर बढ़ो (Proceed from Simple to Complex)
(ii) स्थूल से सूक्ष्म की ओर बढ़ो (Proceed from Concrete to Abstract)
(iii) ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ो (Proceed from Known to Unknown)
(iv) प्रत्यक्ष के अप्रत्यक्ष की ओर बढ़ो (Proceed from Direct to Indirect)
(v) अनिश्चित से निश्चित की ओर बढ़ो (Proceed from Indefinite to Definite)
(vi) अनुभूत से युक्तियुक्त की ओर बढ़ो (Proceed from Empirical to Rational)
(vii) स्वशिक्षा पर बल (Emphasis upon Self-education)
(viii) सास्कृतिक-युग-सिद्धान्त का अनुसरण करो (Follow Culture Epoch Theory)
(ix) शिक्षा की विधि बालक की रुचि के अनुकूल एव सुखद हो (Method of Education should be according to Child's Interest and Pleasant)

5. अनुशासन : **Discipline**—स्पेन्सर ने रूसो की भाँति स्वाभाविक परिणामों के अनुसार अनुशासन या प्राकृतिक दण्ड-व्यवस्था (Discipline by Natural Consequences) के सिद्धान्त का समर्थन किया। स्पेन्सर ने लिखा है :—"बालक को अपने आचरण के अनिवार्य परिणामों तथा अवश्यम्भावी प्रतिक्रियाओं को भोगना चाहिए जिनमे उसे उन लाभप्रद नियन्त्रणों का अनुभव होता है, जो वस्तुतः उसके शारीरिक हित से भिन्न कार्य होते हैं।"

"The child should suffer the unavoidable consequences and inevitable reactions of his conduct experiencing simply the beneficient checks to action that are essentially at variance with bodily welfare "—Spencer

6. विद्यालय : **School**—स्पेन्सर ने अपने पिता के समान परिवार को शिक्षा का सबसे अच्छा साधन बताया। उसका विचार था कि परिवार में वैयक्तिक ढंग से शिक्षा सरलता से प्रदान की जा सकती है। फिर भी स्पेन्सर ने विद्यालयों का विरोध नहीं किया। उसने विद्यालय एवं शिक्षक की आवश्यकता की अनुभूति की। उसका विचार था कि शिक्षक छात्रों को कम से कम बताने और उन्हें अधिक से अधिक स्वयं खोजने के लिए प्रेरणा दे।

7. शारीरिक शिक्षा : Physical Education—स्पेन्सर ने शारीरिक विकास पर अधिक बल दिया है। स्पेन्सर का विचार है—"बालकों को अपने समक्ष उपस्थित संघर्षों का सामना करने के लिए केवल मानसिक रूप से तैयार करने के लिए शिक्षा नहीं होनी चाहिए वरन् उन्हें शारीरिक रूप से योग्य बनाना चाहिए जिससे कि वे अत्यधिक क्षति को सहन कर सकें।" स्पेन्सर ने शारीरिक शिक्षा की उचित व्यवस्था पर बल देते हुए *अग्रांकित सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया*—

(i) बालकों को स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा दी जानी चाहिए।

(ii) विद्यालय-कार्यक्रम में व्यायाम को स्थान प्रदान किया जाना चाहिए।

(iii) बालकों के वस्त्रों पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

(iv) बालकों को खाना खाते समय डाँटना या फटकारना नहीं चाहिए।

(v) बालकों को सदैव एक ही प्रकार का भोजन नहीं देना चाहिए।

8. नैतिक शिक्षा : Moral Education—स्पेन्सर का विश्वास था कि बालक का स्वभाव बुरी प्रवृत्तियों से युक्त होता है। अतः शिक्षा द्वारा उसकी बुरी प्रवृत्तियों को परिष्कृत एवं परिमार्जित करना चाहिए। इसके लिए शिक्षा द्वारा उसमें ऐसे संस्कारों और आदतों का निर्माण करना चाहिए जो सामाजिकता एवं संस्कृति की दृष्टि से उत्तम हों। दूसरे शब्दों में कह सकते है कि शिक्षा द्वारा बालक का नैतिक विकास करना चाहिए। स्पेन्सर नैतिक विकास के लिए दण्ड का सहारा नहीं लेता। यह दण्ड का विरोध करता है। इसके स्थान पर वह प्रेम और सहानुभूति का सहारा लेता है। इनके अतिरिक्त उसके प्राकृतिक परिणामों को नैतिक शिक्षा का आधार बनाया।

उपसंहार

अन्त में, हम ग्रेव्ज के शब्दों मे कह सकते है—"हरबर्ट स्पेन्सर विज्ञान और जीवन की एक नई योजना की सिफ़ारिश करता है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति सम्बन्धित मूल्यों के अनुसार सब प्रकार के लाभों का आनन्द प्राप्त करेगा।"

"Herbert Spencer recommends the science and a new scheme of life where *every one* shall enjoy all advantages in order of the relative values."—**F. P. Graves**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. *Explain* the meaning of scientific tendency and describe its main characteristics.

वैज्ञानिक प्रवृत्ति के अर्थ को स्पष्ट कीजिए और इसकी प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

2. Discuss Herbert Spencer's *views on—(i) Aims of Education.* (ii) Curriculum, and (iii) Moral Education.

अग्रलिखित विषयों पर हरबर्ट स्पेन्सर के विचारों का उल्लेख कीजिए :—
(i) शिक्षा के उद्देश्य, *(ii) पाठ्यक्रम,* तथा *(iii) नैतिक शिक्षा।*

51

शिक्षा में समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति
SOCIOLOGICAL TENDENCY IN EDUCATION

"समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से शिक्षा, समाज की उन्नति एवं स्थायित्व को प्राप्त करने वाली प्रक्रिया है।"

"From the sociological view-point, education is the process of securing the stability and the betterment of society."

—**Paul Monroe.**

विषय-प्रवेश

यदि हम शिक्षा के इतिहास पर दृष्टिपात करें तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि शिक्षा में कभी व्यक्तिवादी विचारधारा की प्रधानता रही तो कभी समाजवादी विचारधारा की। प्राचीन स्पार्टा में समाजवादी विचारधारा की प्रधानता रही। रोम की शिक्षा में व्यक्ति और समाज का सामंजस्य देखने को मिलता है। मध्यकाल में चर्च की सत्ता रही। 17वीं तथा 18वीं शताब्दी में व्यक्तिवादी विचारधारा का बोलबाला रहा। 19वीं शताब्दी में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति के अनुसार शिक्षा में विकास हुआ। परन्तु रूसो की प्रकृतिवादी विचारधारा, मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक प्रवृत्तियों ने समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के लिए पृष्ठभूमि तैयार की। समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति का जन्म रूसो के व्यक्तिवाद की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप हुआ। इस प्रवृत्ति ने व्यक्ति को परिवर्तनशील समाज में रहने के लिए तैयार करने की आवश्यकता पर बल दिया।

समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति का अर्थ
Meaning of Social Tendency

शिक्षा में समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति का तात्पर्य—बालकों में समाजिक गुणों को विकसित करना है, जिससे वे अपना विकास करते हुए समाज की भलाई के लिए

कार्य कर सकें। इसके द्वारा व्यक्ति को उपयुक्त सामाजिक जीवन के लिए तैयार करने पर बल दिया जाता है। यह शिक्षा को सामाजिक नियन्त्रण के साधन के रूप मे स्वीकार करती है। साथ ही यह शिक्षा को सामाजिक मन (Social Mind) की प्रक्रिया के रूप में देखती है।

समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विकास के कारण
Causes of the Development of Sociological Tendency

समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विकास मे निम्नलिखित कारणो ने पर्याप्त रूप से सहयोग दिया—

1 शिक्षा के **सामाजिक उद्देश्य** ने समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विकास मे बहुत सहयोग दिया। इस उद्देश्य ने इस बात पर बल दिया कि शिक्षा सामाजिक विरासत (Social Heritage) को एक सन्तति से दूसरी सन्तति को हस्तान्तरित करे। अतः इस उद्देश्य से प्रेरित होकर लोगो का ध्यान सामाजिकता की ओर गया।

2. **प्रकृतिवादी विचारधारा** ने समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विकास में प्रत्यक्ष रूप से प्रेरणा दी। इस सम्बन्ध में **पॉल मुनरो** ने लिखा है—**"प्रकृतिवाद ने शिक्षा की मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्रीय तथा वैज्ञानिक धारणा के स्पष्ट निर्माण में प्रत्यक्ष प्रेरणा दी।"**

3. समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विकास में 19वी शताब्दी की **मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक प्रवृत्तियों** ने बहुत सहयोग दिया। पेस्टॉलॉजी की जनसाधारण तथा उपेक्षित लोगों के जीवन को सुधारने की रुचि तथा हरबर्ट स्पेन्सर की व्यक्ति को पूर्ण जीवन के लिए तैयार करने के प्रयास ने समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विकास मे बहुत सहयोग दिया।

4. समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विकास में *18वी शताब्दी की औद्योगिक* क्रान्ति ने बहुत सहयोग दिया। इस क्रान्ति ने सामाजिक तथा आर्थिक ढाँचों में महान् परिवर्तन किए। इन परिवर्तनों ने नवीन समाजो की रचना की। व्यक्ति को इन नवीन समाजों मे व्यवस्थित होने के लिए *सामाजिक शिक्षा की आवश्यकता* का अनुभव किया गया। इन समस्त परिस्थितियों ने समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति को बल प्रदान किया।

5. *लोकतन्त्रीय भावनाओं के विकास ने भी समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विकास* में महत्त्वपूर्ण योग दिया।

समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताएँ
Main Characteristics of Sociological Tendency

हम समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताओं पर निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत प्रकाश डाल रहे हैं :—

1. व्यक्तिवाद का विरोध : Opposition of Individualism—समाज-

शास्त्रीय प्रवृत्ति व्यक्तिवादी विचारधारा का विरोध करती है । यह व्यक्ति की अपेक्षा समाज पर अधिक बल देती है । यह व्यक्ति के हित से समाज के हित को उच्च मानती है । साथ ही यह व्यक्ति और समाज की विषमताओं को दूर करना चाहती है ।

2. लोकतन्त्र की समर्थक : Supporter of Democracy—यह प्रवृत्ति लोकतन्त्र का समर्थन करती है । इसके द्वारा जनसाधारण के हित पर बल दिया जाता है । इस दृष्टिकोण से इस प्रवृत्ति ने **'शिक्षा को नागरिकता की तैयारी माना है।'** (Education is a preparation for citizenship)

3. जनसाधारण की शिक्षा : Mass Education—लोकतन्त्र की सफलता शिक्षित नागरिकों पर निर्भर है । अतः इस प्रवृत्ति ने जनसाधारण की शिक्षा पर बल दिया । इस प्रवृत्ति के प्रसार एवं विकास के परिणामस्वरूप विश्व में नि.शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा (Free and Compulsory Education) के लिए माँग की गई ।

4. राज्य शिक्षा-प्रणाली : State Education System—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति लोकतन्त्र में विश्वास करती है । लोकतन्त्र की सफलता जनसाधारण की शिक्षा पर निर्भर है । अतः इस प्रवृत्ति ने सरकार से सार्वजनिक शिक्षा की व्यवस्था करने की माँग की जिसके फलस्वरूप राज्य शिक्षा-प्रणाली का सगठन हुआ और शिक्षा को सामाजिक कार्य माना गया ।

5. व्यावसायिक शिक्षा पर बल : Emphasis on Vocational Education—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति व्यावसायिक शिक्षा पर बल देती है । इसका विश्वास है कि सफल सामाजिक जीवन के लिए प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी व्यवसाय की शिक्षा प्रदान की जाय जिससे वह अपने पैरो पर खड़ा हो सके और समाज के ऊपर भार न वने । साथ ही वह उसके हित के लिए अपनी क्षमता के अनुसार कार्य कर सके ।

6. आधुनिक जीवन की जटिलताओं का ज्ञान : Understanding of Complexities of Modern Life—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति आधुनिक जीवन की जटिलताओं की ज्ञान प्रदान करती है । इस ज्ञान से बालक समाज में रहकर विभिन्न परिस्थितियों तथा सामाजिक समस्याओ को उपयुक्त ढग से समझने में समर्थ हो सकेंगे। साथ ही वे अपने मार्ग का स्वयं चयन कर सकेंगे ।

7. शिक्षा का कार्य—सामाजिक उन्नति : Function of Education—Social Betterment—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के अनुसार शिक्षा का कार्य सामाजिक हित एव उन्नति है । यह बालकों को समाज का उपयोगी एवं योग्य सदस्य बनने पर बल देती है जिससे वे समाज की भलाई एवं उन्नति के लिए कार्य कर सकें ।

8. सामाजिक जीवन के स्तर का उन्नयन : Raising the Standard of Social Life—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति इस बात पर बल देती है कि शिक्षा द्वारा सामाजिक जीवन के स्तर को उच्च बनाया जाय । इसके लिए शिक्षा समाजोपयोगी

सदस्यों के निर्माण पर बल देती है जिससे वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह एवं अधिकारों का समुचित रूप से उपभोग कर सकें।

9. समाज विज्ञानों का महत्त्व : Importance of Social Sciences—शिक्षा में समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप पाठ्यक्रम में समाज विज्ञानों को विशेष महत्त्व दिया जाने लगा है जिससे बालक सामाजिक समस्याओं तथा तथ्यों का ज्ञान प्राप्त कर सके और समाज के हित मे योगदान दे सके।

10. शिक्षा सामाजिक नियन्त्रण एवं परिवर्तन का साधन : Education as a Means of Social Control & Change—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति ने शिक्षा को सामाजिक नियन्त्रण, सामाजिक परिवर्तन तथा सामाजिक प्रगति का सबसे उत्तम साधन माना है। शिक्षा द्वारा सामाजिक परिवर्तन के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य किया जाता है।

समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति का शिक्षा पर प्रभाव
Influence of Sociological Tendency on Education

समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति का शिक्षा के विभिन्न अंगों—अर्थ, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधि, विद्यालय-संगठन आदि पर व्यापक प्रभाव पड़ा। इन क्षेत्रों पर पड़ने वाले प्रभाव को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत व्यक्त किया जा रहा है—

1. शिक्षा का अर्थ : Meaning of Education—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के फलस्वरूप शिक्षा को एक सामाजिक प्रक्रिया माना गया है जिसके द्वारा बालक का समाजीकरण किया जाता है। शिक्षा के अर्थ को निम्नलिखित रूपों में व्यक्त किया गया है—

(i) *शिक्षा नागरिकता की तैयारी है।*
(ii) शिक्षा प्रतिस्पर्धात्मक संघर्ष की तैयारी है।
(iii) शिक्षा सामाजिक मन (Social Mind) की प्रक्रिया है।
(iv) शिक्षा सामाजिक विकास (Social Evolution) की विधि है।

2. शिक्षा के उद्देश्य : Aims of Education—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के प्रभाव के कारण शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्यों पर बल दिया गया है—

(i) ज्ञान का प्रसार (Diffusion of Knowledge)
(ii) सामाजिक विरासत का संरक्षण एवं हस्तान्तरण (Preservation and Transmission of Social Heritage)
(iii) सामाजिक प्रगति (Social Progress)
(iv) सामाजिक नियन्त्रण (Social Control)
(v) *समाज-कल्याण एवं उन्नति (Welfare and Betterment of Society)*
(vi) सामाजिक भावना तथा गुणों का विकास (Development of Social Feelings and Qualities)

3. पाठ्यक्रम : Curriculum—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के प्रभाव के फल-स्वरूप पाठ्यक्रम के संगठन के लिए एक नवीन आधार मिला जो कि समाजशास्त्रीय आधार (Sociological Base) के नाम से प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त पाठ्यक्रम के निर्माण के लिए निम्नलिखित सिद्धान्त प्राप्त हुए—

(i) सामाजिक आदर्शों एवं मूल्यों का सिद्धान्त (Principle of Social Ideals & Values)

(ii) सामाजिक आवश्यकताओं एवं माँगों का सिद्धान्त (Principle of Social Needs & Demands)।

(iii) लचीलेपन का सिद्धान्त (Principle of Flexibility)

समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के प्रभाव के कारण पाठ्यक्रम मे सामाजिक विषयों तथा सामुदायिक क्रियाओं को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाने लगा है।

4. शिक्षण-विधियाँ : Methods of Teaching—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के कारण शिक्षण-विधियों में सामाजिक तत्त्वों पर बल दिया गया। साथ ही सामूहिक *प्रविधियों को जन्म मिला; उदाहरणार्थ—विचार-विमर्श प्रविधि, समिति कार्य* (Committee work), अध्ययन-गोष्ठी (Seminar) आदि। समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति ने मॉनीटर प्रणाली, कक्षा-शिक्षण या सामूहिक शिक्षण आदि के विकास में सहयोग दिया।

5. अनुशासन : Discipline—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के कारण सामाजिक क्रियाओं के द्वारा अनुशासन स्थापित करने पर बल दिया गया। इसके फलस्वरूप शिक्षा में सामाजिक अनुशासन (Social Discipline) को जन्म मिला।

6. विद्यालय-संगठन : School Organization—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के प्रभाव के कारण विद्यालय-सगठन को सामाजिक एवं लोकतन्त्रीय सिद्धान्तो पर आधारित किया गया।

7. राज्य का उत्तरदायित्व : Responsibility of State—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति ने शिक्षा को राज्य का प्रमुख उत्तरदायित्व माना जिसके फलस्वरूप राज्य शिक्षा प्रणाली (State Education System) का विकास हुआ।

8. प्रौढ़-शिक्षा-आन्दोलन : Adult Education Movement—समाज-शास्त्रीय प्रवृत्ति के फलस्वरूप लोगों मे सामाजिक जागरूकता उत्पन्न हुई। सामाजिक जागरूकता ने इस बात पर बल दिया कि समाज में कोई भी व्यक्ति अशिक्षित न हो। इस भावना ने प्रौढ़-शिक्षा आन्दोलन को प्रारम्भ में महत्त्वपूर्ण योग दिया।

9. शिशु-शिक्षा आन्दोलन : Infant Education Movement—समाज-शास्त्रीय प्रवृत्ति के कारण शिशु-शिक्षा आन्दोलन शुरू हुआ। इसके फलस्वरूप विभिन्न देशो मे शिशु-विद्यालयों की स्थापना की गई। प्रारम्भ में इन विद्यालयो मे श्रमिकों के बालकों को शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की गई। इनमे 3 से 7 वर्ष तक

के बालक शिक्षा प्राप्त करते थे। इस कार्य मे राबर्ट ओवन (Robert Owen) का महत्वपूर्ण योगदान है।

10. परोपकारी विद्यालयों की स्थापना : Establishment of Philanthropic Schools—समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के कारण परोपकारी विद्यालयो की स्थापना हुई। इस क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण योगदान बेसडो (Basedow) का है। उसने परोपकारी आन्दोलन को प्रारम्भ किया। इस आन्दोलन के द्वारा स्थापित स्कूलो को बाद मे सरकार से अनुदान दिये जाने लगे। इन विद्यालयो ने समाज की भलाई के लिए बहुत कार्य किया। इन विद्यालयो में 'सण्डे स्कूल' (Sunday School) तथा 'चैरिटी विद्यालय' (Charity School) उल्लेखनीय है। इनमे बालको को निःशुल्क शिक्षा प्रदान की जाती थी। साथ ही उन्हे मुफ़्त पुस्तकें, भोजन, वस्त्र आदि भी प्रदान किये जाते थे।

उपसंहार

अन्त मे हम पॉल मुनरो के शब्दों में कह सकते है :—"समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के विचारों के फलस्वरूप शैक्षिक सुविधाओं का स्थूल विकास स्पष्टतः पृथक् क्षेत्रों में हुआ। प्रथम— परोपकारी तथा धार्मिक दृष्टिकोण से विद्यालयों की स्थापना तथा द्वितीय—आर्थिक तथा राजनीतिक कारणों से सार्वजनिक विद्यालय-पद्धति की स्थापना।"

"The concrete development of educational facilities in response to the ideas of the sociological tendency has been through two *distinct phases : one that of schools founded from philanthopic* and religious motives, and the second that of systems of public free schools established from economic and political reasons."

—Paul Monroe.

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss the chief characteristics of sociological tendency.
समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताओ की विवेचना कीजिए।

2. Throw light upon the impact of *sociological tendency on* education.
शिक्षा पर समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति के प्रभाव पर प्रकाश डालिए।

52

शिक्षा में समाहारक प्रवृत्ति

ECLECTIC TENDENCY IN EDUCATION

"समाहारक प्रवृत्ति वह है, जो विभिन्न प्रवृत्तियों में निहित सिद्धान्तो में सामंजस्य स्थापित करती है तथा शैक्षिक व्यवहारों को विवेकयुक्त बनाती है।"

"The eclectic tendency is that which seeks the harmonization of principles underlying various tendencies of educational practices."

—Paul Monroe.

समाहारक प्रवृत्ति का अर्थ
Meaning of Eclectic Tendency

शिक्षा में समाहारक प्रवृत्ति से अभिप्राय पूर्ववर्ती विचारधाराओं एवं प्रवृत्तियो में समन्वय या सामंजस्य स्थापित करने की प्रवृत्ति से है। दूसरे शब्दों मे कह सकते हैं कि पूर्ववर्ती विचारधाराओ तथा प्रवृत्तियो की अच्छाइयो मे समन्वय स्थापित करना समाहारक प्रवृत्ति है।

समाहारक प्रवृत्ति का शिक्षा पर प्रभाव
Influence of Eclectic Tendency on Education

शिक्षा के क्षेत्र मे समाहारक प्रवृत्ति के कारण अनेक प्रचलित विवादो को समाप्त करने में सहयोग मिला। इस प्रवृत्ति के कारण निम्नलिखित क्षेत्रों के विवादों को समाप्त किया गया :—

1. व्यक्ति व समाज : Individual & Society—समाहारक प्रवृत्ति के कारण व्यक्तिवादी तथा समाजवादी विचारधाराओ में समन्वय स्थापित हुआ। व्यक्तिवादी विचारधारा ने व्यक्ति को प्रधानता प्रदान की और समाजवादी विचारधारा ने समाज को। इन दोनो में बड़ा ही उग्र विवाद उत्पन्न हो गया। परन्तु समाहारक प्रवृत्ति के कारण आधुनिक शिक्षा में व्यक्ति और समाज में सामंजस्य

दिखलाई पड़ता है। आधुनिक शिक्षा व्यक्तित्व के विकास के साथ-साथ नागरिकता के गुणों के विकास पर भी बल देती है। आधुनिक शिक्षा ने इस तथ्य को भी स्वीकार कर लिया है कि व्यक्ति का विकास शून्य में न होकर सामाजिक वातावरण में ही होता है। इस कारण व्यक्ति तथा समाज दोनों में सामंजस्य होना अनिवार्य है।

2. रुचि व प्रयास में सामंजस्य : Harmony between Interest & Effort—शिक्षा की अनुशासनवादी धारणा (Disciplinary Conception of Education) के कारण शिक्षा मे प्रयास (Effort) को प्रधानता प्रदान की गई। इसके विपरीत मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति ने शिक्षा में रुचि (Interest) पर बल दिया। इस कारण बालक में रुचियों को उत्पन्न करना अनिवार्य हो गया। इसी के फलस्वरूप हरबर्ट (Herbart) ने बहुमुखी रुचि (Manysidedness of Interest) विकसित करने का सुझाव रखा। परन्तु समाहारक प्रवृत्ति के कारण आधुनिक शिक्षा में 'प्रयास' एवं 'रुचि' दोनों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया। आज आधुनिक शिक्षण-विधियों में इन दोनों का समन्वय दिखाई पडता है। आधुनिक शिक्षा-शास्त्रियों का विश्वास है कि बालक की शिक्षा में जितना महत्त्व रुचियों का है उतना ही प्रयासों का है। केवल रुचि रखने या प्रयास करने मात्रा से ही शिक्षा प्राप्त नहीं की जा सकती है। शिक्षा की प्राप्ति के लिए रुचि एवं प्रयास दोनों का होना परमावश्यक है।

3. अनुशासन व स्वतन्त्रता : Discipline & Freedom—शिक्षा में अनुशासन तथा स्वतन्त्रता के महत्त्व को लेकर विवाद खड़ा हो गया था। समाहारक प्रवृत्ति के कारण अनुशासन तथा स्वतन्त्रता मे समन्वय स्थापित हुआ। आधुनिक शिक्षा मे आत्मानुशासन पर बल देकर स्वतन्त्रता तथा अनुशासन में सामंजस्य स्थापित किया गया।

4. विभिन्न विचारधाराओं व प्रवृत्तियों में सामंजस्य : Harmony between Different Schools of Thought & Tendencies—समाहारक प्रवृत्ति के कारण आधुनिक शिक्षा मे विभिन्न विचारधाराओं तथा प्रवृत्तियों में सामंजस्य स्थापित हुआ। प्रकृतिवाद तथा मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति ने बालक को शिक्षा का केन्द्र बनाया। समाजशास्त्रीय प्रवृत्ति ने शिक्षा में सामाजिक कारकों पर बल दिया। वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने विज्ञानों के अध्ययन पर बल दिया। आधुनिक शिक्षा में सामाजिक उद्देश्य तथा बालक के विकास के लिए मनोविज्ञान को आधार बनाकर तथा पाठ्यक्रम में अन्य सामाजिक विज्ञानों के साथ भौतिक विज्ञानों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान करके इन विभिन्न विचारधाराओं तथा प्रवृत्तियों मे समन्वय स्थापित किया गया है।

समाहारक प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताएँ
Chief Characteristics of Eclectic Tendency

1. सर्वांगीण विकास : All Round Development—समाहारक प्रवृत्ति के

फलस्वरूप आधुनिक शिक्षा का उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व का सर्वाङ्गीण विकास करना निर्धारित किया गया।

2. लचीला पाठ्यक्रम : Flexible Curriculum—समाहारक प्रवृत्ति के फलस्वरूप शिक्षा का लचीला पाठ्यक्रम बनाया गया जिसको व्यक्ति तथा समाज दोनों की मांगो के अनुसार आवश्यकतानुसार संशोधित किया जा सके।

3. शिक्षण : व्यवसाय के रूप में : Teaching as a Profession—समाहारक प्रवृत्ति के कारण शिक्षण-कार्य को एक व्यवसाय के रूप मे मान्यता प्राप्त हो गई। इसके परिणामस्वरूप शिक्षक-प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना की गई।

4. व्यावहारिक शिक्षा : Practical Education—समाहारक प्रवृत्ति के कारण विभिन्न विषयों के व्यावहारिक पक्ष पर अधिक बल दिया गया जिससे जीवन को सफल एवं उपयोगी बनाया जा सके। साथ ही विभिन्न व्यावहारिक विषयो को पाठ्यक्रम मे स्थान प्रदान करके व्यक्ति को जीवन में अधिक सफलता प्राप्त करने के योग्य बनाने पर बल दिया गया।

5. शिक्षण विधियाँ : Methodology—समाहारक प्रवृत्ति के कारण शिक्षण-पद्धतियों को अधिक वैज्ञानिक बनाने का प्रयास किया गया। साथ ही नवीनतम एवं क्रियात्मक विधियों को जन्म मिला।

6. शिक्षा में राज्य का उत्तरदायित्व : State Responsibility for Education—समाहारक प्रवृत्ति के कारण शिक्षा का भार राज्यो पर डाला गया जिससे वे सभी बालको के लिए नि.शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था कर सकें। साथ ही अपंगो की शिक्षा का भी भार राज्यों पर डाला गया।

7. प्रौद्योगिक शिक्षा : Technological Education—आधुनिक युग विज्ञान एव प्रौद्योगिकी का युग माना जाता है। समाहारक प्रवृत्ति के फलस्वरूप साहित्यिक शिक्षा के साथ-साथ प्रौद्योगिक शिक्षा की भी व्यवस्था की गई।

8. विद्यालय के कार्य : Functions of the School—समाहारक प्रवृत्ति के कारण विद्यालय के कार्यों मे भी विस्तार हुआ। अब विद्यालयो को कुछ विषयो की शिक्षा प्रदान करने का स्थान नही माना जाता है वरन् उन्हे उन स्थानों के रूप में देखा जाता है जहाँ बालको को स्थायी तथा महत्त्वपूर्ण क्रियाओ मे प्रशिक्षित किया जाता है। इस दृष्टि से उनका कार्यक्षेत्र 3 R की शिक्षा प्रदान करने तक सीमित नहीं है वरन् 4 H (Head, Heart, Health and Hand) की शिक्षा प्रदान करने से सम्बन्धित है।

उपसंहार

अन्त मे, हम पॉल मुनरो के शब्दों में कह सकते हैं—"इस प्रवृत्ति का प्रमुख अंग विद्यालय कार्यक्रम में औद्योगिक तत्त्व को स्थान प्रदान करना है।"

"The most prominent phase of this tendency is the incorporation of the industrial element in all school work."

—**Paul Monroe.**

UNIVERSITY QUESTIONS

1. *Discuss briefly the influence of eclectic* tendency on education.

शिक्षा पर समाहारक प्रवृत्ति के प्रभाव की संक्षेप में विवेचना कीजिए।

2. Give an account of the main characteristics of the eclectic tendency.

समाहारक प्रवृत्ति की प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।